❀ अथ ❀

ऋषि दयानन्द सरस्वती
के
पत्र और विज्ञापन

वैदिक वाङ्मय का इतिहास आदि ग्रन्थो के रचयिता,
बृहद् भारतवर्ष का इतिहास (१५ भाग) के
सम्पादक, विविध लुप्त संस्कृत ग्रन्थों के
उद्धारक, दयानन्द महाविद्यालय
लाहौर के भूतपूर्व अनुसन्धाना-
ध्यक्ष तथा महिला विद्या-
पीठ, लाहौर के
संस्थापक—

पं० भगवद्दत्त बी.ए.

द्वारा
सम्पादित

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट, अनारकली, लाहौर
द्वारा
प्रकाशित

मुद्रक—
सुरेन्द्र कुमार कपूर
पंचनद प्रेस लिमिटिड, लाहौर।

प्रथम संस्करण	विक्रम संवत्	
१००० प्रति	२००२	मूल्य ५।।।)

ट्रस्ट का उद्देश्य

(प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण)

रक्षा तथा प्रचार

ओ३म्

प्रकाशकीय वक्तव्य

महापुरुषो के रचित ग्रन्थ जहाँ उनकी अपूर्व योग्यता, भावना और प्राणिमात्र के लिये हितचिन्तना के परिचायक होते हैं, वहाँ उनके जीवनवृत्त उनके महापुरुषत्व तक पहुँचने के सभी उपायो का प्रकाशन करते हैं। उनके सामान्य व्यवहार तथा वार्त्तालापादि, विशेषकर उनके पत्रव्यवहार, हमे उनके व्यक्तिगत जीवन के प्रायः सभी अङ्गों के अत्यन्त समीप तक ले जाने वाले होते हैं और अपने उद्देश्य वा सिद्धान्तो की पूर्त्ति के लिये उनके द्वारा किये गये भगीरथ प्रयत्नों को जनता के समक्ष रख देते हैं। उनकी कृतियो को छोड़ कर शेष सब साधन उनके जीवन के पश्चात् ही जनता द्वारा सगृहीत हुआ करते हैं, यह एक प्रायिक नियम है। यह भी निर्विवाद है कि इन सब मे महापुरुषो की कृतिया उनके सिद्धान्तो वा धारणाओं की मुख्य प्रकाशक होती हैं। शेष सब उनके जीवनकाल के पश्चात् सगृहीत होने तथा उन सारी परिस्थितियो के ओझल हो जाने से, जिन में कि उक्त प्रयत्न जीवनवृत्त वा पत्रव्यवहारादि किये जाते हैं, गौणतया ही प्रकाशक मानने पड़ते हैं। पुनरपि उनके भावो को समझने मे ये अत्यन्त सहायक होते हैं॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती युगनिर्माता हुए, जहाँ उनकी कृतियाँ हमे प्राचीन विशुद्ध संस्कृति सभ्यता और साहित्य का वास्तविक दिग्दर्शन कराती हैं, वहाँ उनके पूना के व्याख्यान तथा पत्र व्यवहारादि से हमे मानवसमाज के हित से प्रेरित होकर किये गये उनके भगीरथ प्रयत्नो को समझने में अत्यन्त सहायता मिलती है॥

हमें उन सभी महानुभावो के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये, जिन्होने ऋषि दयानन्द के पत्रो को सुरक्षित रखा। उन्हे सगृहीत करने मे घोर प्रयत्न किये तथा प्रकाशन में लाये। ऐसे महानुभावों में धर्मवीर श्री० प० लेखराम जी तथा महात्मा मुंशीराम जी (पश्चात श्री० पू० स्वामी श्रद्धानन्द जी) मुख्य कहे जा सकते हैं, जिनके द्वारा इस कार्य का उपक्रम हुआ॥

आर्यजनता के समादरणीय वैदिकसाहित्य के अनेक अमूल्य रत्नों को भारतीय जनता के समक्ष लानेवाले, सामान्यतया पञ्जाब मे विशेषतया आर्यसमाज में वैदिक अनुसन्धान के प्रवर्त्तक वा उन्नति पर पहुँचाने वाले, प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् श्री० प० भगवद्दत्त जी ने निरन्तर अनेक वर्षों के घोर प्रयत्न से ऋषि के इन पत्रो का सग्रह किया तथा कराया। उनके इस पवित्र कार्य के लिये आर्यजनता इनकी सदा ऋणी रहेगी। इन्हो ने जहाँ अपना बहुत सा अमूल्य समय इस मे लगाया। वहा पत्रो के सग्रह में निज का धन भी बहुत सा व्यय किया। अनेक स्थानो में स्वय जा कर तथा पत्रव्यवहारादि द्वारा अनेक पत्र प्राप्त किये। श्री० प० जी की अध्यक्षता मे खतौली जिला मेरठ निवासी आर्यसमाज तथा ऋषि मे परम निष्ठावान् आर्यसज्जन म० सामराज जी ने वर्षों इन पत्रों के सग्रह करने में घोर कष्ट सहन किया। जिसके साक्षी वे ही हो सकते हैं जिन्हो ने कि इन्हे प्रत्यक्षरूप में यह कार्य करते देखा है। ऋषि के पत्रव्यवहार वा ऋषि जीवन की सामग्री प्राप्त करने में इन के हृदय मे एक प्रचण्ड अग्नि सी धधकती रहती है। यदि वे अपना जीवन इसी पवित्र कार्य में लगा सकें तो आर्यजनता का महान् उपकार हो सकता है। श्री० प० जी के सहायक रूप में इस कार्य के लिये अत्यन्त ही उपयोगी हैं॥

श्री० प० जी ने जिस योग्यता और परिश्रम से यह कार्य किया है तथा जिस गहराई से अपनी भूमिका मे ऋषि दयानन्द के भावो को जनता के समक्ष रखने का यत्न किया है (खेद है कि यह विचारधारा अधूरी रह गई), यह उन्ही का काम था। चाहे प्रकाशक उनके किन्ही सम्पादकीय विचारो के साथ सहमत न भी हो, क्योकि प्रत्येक सम्पादक अपने विचार रखने मे स्वतन्त्र होता है, तथापि हम यह कहे विना नहीं रह सकते कि प० जी के हृदय मे प्राचीन भारतीय सस्कृति सभ्यता साहित्य तथा प्राचीन मर्यादाओं की रक्षा के प्रति एक अग्नि सी धधक रही है, जिस पर कि भारत का बहुत सा भविष्य निर्भर है ॥

स० १९२९ तक ऋषि का सारा पत्रव्यवहार तथा सम्भाषण सस्कृत मे ही था। बहुत सा पत्रव्यवहार वह दूसरों को बोल कर लिखवाते वा लिखने को कह दिया करते थे और हस्ताक्षर कर देते थे, ऐसी अवस्था मे निस्संदेह इन पत्रो की प्रमाणिकता ऋषिकृत सत्यार्थ प्रकाशादि के समान नहीं हो सकती, तथापि इन मे अनेक परमावश्यक गम्भीर विषयो तथा सिद्धान्तों पर प्रकाश अवश्य पडता है, जो अत्यन्त मूल्यवान् है ॥

यह भी विदित रहे कि श्री० पं० जी इस बहुमूल्य सग्रह को कर चुके थे और इसके प्रकाशन की चिन्ता मे थे। युद्ध की परिस्थिति में कागज मिलना भी कठिन हो रहा था। ऐसी अवस्था मे श्री० प० जी की इच्छा पर ट्रस्ट ने इस बहुमूल्य ग्रन्थ को अपनी ओर से प्रकाशित करने का निश्चय किया और श्री० प० जी ने यह ग्रन्थ ट्रस्ट को दे देने की महती कृपा की। और उन्होने ऋषि के पत्रव्यवहार के सग्रह करने मे हुए, केवल मार्गव्यय वा पत्रव्यवहारादि का व्ययमात्र ही ट्रस्ट से लिया, उनकी इस सारी महती उदारता के लिये ट्रस्ट उनका अत्यन्त अनुगृहीत है ॥

श्री० प० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने विषय-सूची तय्यार करके इस ग्रन्थ की उपयोगिता को और भी बढ़ा दिया है, जिसके लिये प्रकाशक उनके अनुगृहीत हैं ॥

इन से अतिरिक्त इस पवित्र कार्य मे सहयोग देने वाले सभी महानुभावो का धन्यवाद सम्पादक महोदय अपनी भूमिका मे कर चुके हैं। ट्रस्ट की ओर से हम भी उन सब के ऋणी हैं ॥

इस प्रकार इस ग्रन्थ के प्रकाशित करने कराने मे जो ट्रस्ट का लगभग ६०००) छः सहस्र रुपया व्यय हुआ है, इस मे किसी भी अन्य व्यक्ति का किञ्चिन्मात्र भी सम्बन्ध नही ॥

अन्त में आर्यजनता से हम यही निवेदन करेंगे कि वह ऋषिदयानन्द के भावो को गहराई से जानने के लिये इस ग्रन्थ से महान् लाभ उठा सकती है ॥

इस ग्रन्थ की इतनी मांग है कि सम्भव है हमे शीघ्र ही इसका दूसरा सस्करण छपाना पड़े ॥

निवेदक—

ब्रह्मदत्त जिज्ञासुः

प्रधान रामलाल कपूर ट्रस्ट

अनारकली लाहौर

नाम-सूची

उन महानुभावों की जिन्हें पत्र लिखे गये

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पत्र पूर्णसंख्या
१	२	अङ्गद शास्त्री	शाहजहांपुर	१४४, १४५
२	९	अधिकारी वा सभासद् आर्य-समाज लाहौर लाला जीवन दास, साईंदास जी आदि	लाहौर	३६, ३९, ५९, ६०, ६१, ६९, १०९, १६१, ३०४
३	१	अन्तिम हस्ताक्षर	जोधपुर	४७२
४	१	अबोध निवारण-लेख	काशी	२००
५	१	अब्दुल्ला मौलवी	मेरठ	८६
६	३	आत्माराम जी जैन पण्डित	गुजरांवाला	२१९, २२०, २४२
७	१	आनन्दीलाल जी मन्त्री आर्य-समाज	मेरठ	५०० परिशि०
८	२	आर्यसमाजो के अधिकारी	सब स्थानों को	३०१, ३६७
९	७	आलकाट करनल साहब	अमेरीकादि	६७, ७२, १२८, १३७, १७६, १९५, २५४
१०	४	इन्द्रमणि जी मुन्शी	मुरादाबाद	१६२, २०१, २२४, २२८
११	१	ईश्वरानन्द सरस्वती	प्रयाग	३९९
१२	१	कन्हैया लाल जी चौबे	जलालाबाद	२५९
१३	१५	कालीचरण-रामचरण जी मन्त्री आर्यसमाज	फरुखाबाद	२२१, २२६, २३७, २४०, २४६, २४७, २४८, २४६, २५६, २६२, २८७, २९५, ३०५, ३१२, ३१४, ३१६, ३१८, ३२७, ३३०, ३३१, ३३४, ३४७, ३८०, ३९२, ४१३

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पत्र पूर्णसंख्या
१४	३	कालूराम जी शर्मा योगी	रामगढ़ चूरू सी० (जयपुर)	२१, ५२, ३६९
१५	१	कासगज पाठशाला के अधिकारी को	कासगंज	४
१६	१	किशनसहाय जी साहब	मेरठ	८९
१७	१	किशनलाल जी नागर प्रधान आर्यसमाज	मथुरा	२२७
१८	६	किशन (कृष्ण) सिंहजी बारट, मत्री महाराणा सज्जनसिंह उदयपुर	उदयपुर	३७६, ४२६, ४३१, ४३४, ४५१, ४६४
१९	२	केशवलाल निर्भयराम जी	मुम्बई	१७, १७७
२०	७	कृपाराम जी स्वामी जंगल-विभाग	देहरादून	११४, १२५, २०३, २२६, २५७, २९४, ३५०
२१	१	कृष्णलाल साह	अल्मोड़ा	२९२
२२	२	गणेशप्रसाद जी पण्डित	फरुखाबाद	२३२, २३३
२३	१२	गोपालरावहरि देशमुख, रायबहादुर, जज, प्रधान आर्यसमाज	अहमदाबाद पूना बुम्बई	१०, ११, १२, १३, १४, १५, ३०, ४५, ४६, ४७, १०४, ४९७
२४	५	गोपालरावहरि पण्डित, इंस्पैक्टर आफ-स्कूल्ज़	फरुखाबाद	१७५, १८४, २५२, ३३५, ३८८
२५	१	गोरक्षार्थ सही करने का पत्र	समस्त भारतवर्ष	२९०
२६	१	गंगादत्त जी चौबे पण्डित (सहपाठी श्री स्वामी जी)	मथुरा	२
२७	६	छगनलाल द्विवेदी श्रीमाली	मसूदाराज्य	२६९, ३३७, ३४४, ३८४. ४६२, ४७०
२८	१	छेदीलाल जी रायबहादुर (कानपुर निवासी)	मेरठ	२६७

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पत्र पूर्णसंख्या
४२	६	नन्दकिशोरसिंह ठाकुर सभासद राज्यपरिषद्	जयपुर	३०२, ३१०, ३८५, ४२२, ४३९, ४६१
४३	२	नारायण किशन जी मुन्शी मन्त्री आर्यसमाज	गुजरांवाला	२१८, २४१
४४	१२	नाहरसिंह जी राजाधिराज, शाहपुराधीश	शाहपुरा राज्य-मेवाड़	२९६, ३२१, ३३२, ३८२, ४०१, ४०२, ४०६, ४११, ४२३, ४२५, ४४९, ४५०
४५	२	निर्भयराम जी सेठ मारवाड़ी बिसाऊ निवासी	फरुखाबाद	२५०, २६३
४६	१	नियोग का मसविदा	मेरठ	२०२
४७	९	निवास सूचना प० स्वामी द० सरस्वती	..	२७, २९, ३१, ३५, ३७, ३८, ४२, ४३, ५३
४८	१	पत्रसूचना खण्डुआ से	...	३१९
४९	१	पत्रांश इन्दौर से	...	३२४
५०	२	पोहलो राम जी लाला मन्त्री आर्यसमाज	गुजरांवाला	६२, ६८
५१	१	प्रतापसिंह महाराजा जी मंत्री	जोधपुर	४१६
५२	२३	बखतावरसिंह मुन्शी प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय, तथा सम्पादक आर्यदर्पण शाहजहांपुर	काशी शाहजहांपुर	४७७ परि०, १८०, १८१, ४७८ परि०, १८२, ४७९ परि०, १८५, १८६, ४८० परि०, ४८१, १९१, १९२, ४८२ परि०, ४८३ परि०, ४८४ परि०, ४८५ परि०, १९९, ४८८ परि०, ४८९ परि०, २०५, ४९० परि०, २०८, ४९३ परि०
५३	१	बलदेवसिंह शर्मा (सेवक श्री स्वामी जी)	बादनवाड़ा (अजमेर)	८

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुच का स्थान	पत्र पूर्णसख्या
६७	१६	मूलराज जी एम०ए० (रायबहादुर) प्रधान आर्यसमाज लाहौर तथा परोपकारिणी सभा	गुजरात तथा लाहौर	७४, ७६, ८०, ८२, ८३, ८४, ८७, १७१, १६६, १६८, २११, २२५, २३०, २३८, २५१, २६४, २७३, २७४, ३०३
६८	१	मोहनलाल विष्णुलाल पण्डिया मंत्री परोरपकारिणी सभा	उदयपुर	३७१
६९	२	यशवन्तसिंह जी राठोर महाराज जोधपुर नरेश	जोधपुर	४३२, ४५२
७०	२	रमाबाई पडिता	कलकत्ता	१८३, १९०
७१	१	राजराणा जी झालावाड़ नरेश	झालावाड	४६३
७२	५	रामशरणदास जी सेठ प्रथम मत्री परोपकारिणी सभा	मेरठ शहर	११२, २१७, २५३, ४९८ परि०, २७६,
७३	२२	रामाधार जी वाजपेई ट्रेजरी क्लार्क	लखनऊ	१८, २२, २३, २४, २५, २८, ३२, ४०, ४८, ४६, ५०, ५१, ५४, ८५, ६४, ६६, ६६, १००, १४३, १५८, २८३, २८८,
७४	१	रामानन्द ब्रह्मचारी (लेखक श्री स्वामी जी)	फरुखाबाद	३६३
७५	१२	रूपसिंह जी सरदार ट्रेजरी क्लार्क	कोहाट गुजरांवाला	१८६, २७२, २७५, २८१, २८५, ३०७, ३२३, ३२९, ३४५, ३४९, ३६२, ४१८
७६	१	लच्छीराम पण्डित (विपक्षी पत्र अशुद्धिसशोधन)	रावलपिण्डी	४४
७७	१	लक्ष्मणदास चौधरी (स्वामी लक्ष्मणानन्द)	अमृतसर	४७६ परिशि०
७८	१	लालजी लक्ष्मण शास्त्री	मुम्बई	१६

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पत्र पूर्णसंख्या
९५	५	श्यामसुन्दर दास जी साहु	मुरादाबाद	२२३, ३५२, ३५५, ३६६, ४०६
९६	१	श्राद्ध पर-लेख	मुम्बई	१७४
९७	२	श्रीप्रसादजी बाबू मोहतमिम बन्दोबस्त	जयपुर	१६६, १७२,
९८	२	सज्जनसिंह महाराणाजी उदयपुराधीश	उदयपुर	३९०, ४३६,
९९	५३	समर्थदानजी मुन्शी प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	मुम्बई नेठवा ग्राम प्रयाग अजमेर	९७, ११८, १२०, १२१, १२२, १२३, १२६, १२९, १३०, १३१, १३४, १३५, १३९, १४०, १४१, १४२, १४६, १४७, १४८, १४९, १५०, १५४, १५५, १५६, १६०, १७५ परि०, १७३, २६०, ३२०, ३२५, ३२६, ३३८, ३३९, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४६, ३५४, ३५९, ३६५, ३७०, ३८१, ३८९, ४०४, ४१९, ४३७, ४४०, ४४२, ४४३, ४५६, ४६०, ४६८
१००	५	सुन्दरलाल जी पण्डित पोस्टमास्टर जनरल मुख्य प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	प्रयाग	२४४, २८६, २९७, ३०८, ३१३
१०१	४	सेवकलाल कृष्णदास शर्मा मत्री आर्यसमाज	मुम्बई	२१२, ४६५, परि० २७६, ३५८
१०२	२	स्वीकार पत्र	मेरठ उदयपुर	४८७, परि० ३६३
१०३	१	हरिवशलाल मुन्शी स्टार प्रेस	काशी	६
१०४	२	हरिश्चन्द्र चिन्तामणि प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य	मुम्बई	२६, ५५

सर्वयोग ५०२

ऋषि दयानन्द के स्वविरचित ग्रन्थों
के विषय में
विवरण संग्रह

(प्रसिद्ध विद्वान् प० युधिष्ठिर जी मीमांसक अजमेर द्वारा संगृहीत)

अनुभ्रमोच्छेदन–तैयार हो गया है, ज्वालादत्त के नाम से छपेगा २४५[1] (भीमसेन के नाम से छपा) ॥

अष्टाध्यायी भाष्य–बनाने और छपवाने का विज्ञापन ९८। १००० ग्राहक होने पर छपेगा १०५। तैयार होने लगा है ११६। आरम्भ हो गया है ११७। चार अध्याय अभी तैयार हुए है १५३। शीघ्र छपने वाला है १८४ ॥

आत्मचरित्र–२४। देवनागरी और अंग्रेजी में करवाकर भेजेंगे १६८। थोड़ा सा लिखकर भेजते हैं १६६। उन का समाचार [पत्र] मे छापने का समय आ गया है १६९। असभव बातें नहीं लिखीं १७४। यही एक काम होता तो लिखवाकर भिजवा देते १७८ ॥

आर्याभिविनय–बनने की तैयारी है २६। २ अध्याय बन गये ४ आगे बनने हैं ३३ ॥

आर्योद्देश्यरत्नमाला–आजकल मे तैयार हो जायगा ७५ ॥

कुरान हिन्दी–पूरा तैयार है छापा नही गया १५३। जितना शोधा जाय भेज दें १९० ॥

गोकरुणानिधि–छपगई २९०। अंग्रेजी अनुवाद के विषय में—शीघ्र भेजें २८४, विलम्ब क्यों हुआ २९७, समय निकालना चाहिये ३०८, बम्बई में और लोगों से बनवानी पड़ी ३३४ ॥

गोतम अहल्या की कथा–३७२। (सक्षेप से पृ० ४४) ॥

जालन्धर की बहस–३३९ ॥

---

१. यह सख्या पृष्ठों की समझनी चाहिये।

भाषा बनाता है, गोलमाल देवता शब्द रख दिया ४६०। पदार्थ कुछ और है और भाषा कुछ ही बनाई आदि ४८५॥

नमूने का अंक—शीघ्र निकलेगा ३८। पौष बदी ४ स० १९३३ तक छपगया ४७॥

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका—नवम्बर सन् १८७६ के मध्य तक बन गई थी (नोट) ४६। संस्कृत और हिन्दी मिलाकर ८ हजार श्लोक प्रमाण है ४६। लगभग (छपना) समाप्ति को आ रहा है ७८॥

ऋग्वेदभाष्य—माघ बदी १३ गुरु १९३४ तक १० सूक्त तक बना ९६। ८६ सूक्त ६ मन्त्र से आगे १११ मन्त्र तक भेजते हैं २७६। छठा मण्डल पूरा हो गया ४८६। बाकी १ वर्ष में पूरा हो जायगा ४८६॥

यजुर्वेदभाष्य—माघ बदी १३ गुरु १९३४ तक १ अध्याय बन गया ९६। सातवा अध्याय बनता है ५३४। ७ वें अध्याय के २३ वें मन्त्र का भाष्य हो रहा है २३७। ८ वा अध्याय पूरा होने को आया २४६। अ० १३ म० ४७—५२ जहा जहा मासभक्षण था ठीक कर दिया ४०६। कोई रह गया हो तो काट देना ४०६॥

साम, अथर्व } वेदभाष्य—१, १½ वर्ष लगेगा॥

वेद विरुद्धमतखण्डन—छप गया ३०। मया निर्मित: ११०॥

वेदान्तिध्वान्तनिवारण—मया निर्मित: ११०॥

व्यवहारभानुः—भीमसेन से शुद्धाशुद्ध पत्र लिखवा कर लगवा दो। ५२०॥ (सामान्य १९७, २०१)॥

शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण—शिक्षा की पुस्तक छपी की नहीं? १२८। गुजराती भाषा व्याख्या हो गई ३३॥

संस्कारविधि प्रथम स०—बनने की तैयारी हो रही है २९। शीघ्र बनेगी ३२, ३३। बनाने के लिये पण्डित की खोज हो रही है ३५। मांसादि का वर्णन तत्तद्ग्रन्थो का मत जताने के लिये है १००।)

संस्कारविधि द्वितीय स०—बना सोध कर भेज देंगे ४५८। अमावस्या (भाद्र १९४०) तक बन चुकेगी ४८६। छपने के लिये १—४७ पृ० भेजे हैं ५१२॥

ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के लेखकों के विषय में उन की सम्मति

भीमसेन—निष्कपट है २६८। भाषा बहुत ढीली बनाता है ३२४। भीमसेन के शोधेभये पुस्तकों मे बहुत भूल निकलती है ३४४ व्याकरण आदि शास्त्रों को पढ़ा है उतना ही पाण्डित्य है अन्यत्र बालक है ३४५। भीमसेन को अत्यन्त अयोग्यता के कारण सब दिन के लिये निकाल दिया ३९६। भीमसेन बकवृत्ति है ४०५। भीमसेन काम के अयोग्य है ४०८। आर्यसमाज मे रखने योग्य नहीं ५४४॥ दूसरे पण्डित से न्यायदर्शन पूरा करले ५२२॥

ज्वालादत्त—शोधने मे बहुत गलती रहती है ३११। ये दोनो (भीम० ज्वाला०) एकसे हैं काम चोर हैं ३७२। व्याकरण का अभ्यास कम है ३७४, ३७६। वैसा ही उस (भीम०) से विलक्षण दम्भी क्रोधी हठी और स्वार्थ साधन तत्पर ज्वालादत्त भी है। मेरी समझ मे भीमसेन का छोटा भाई ज्वालादत्त है ४०५। घर पै जाके दशगात्रादि मृतक कर्म कराके मुर्दाविधान खाया करेगा ४१९। पहिले जैसे भाषा नही बनाता ४८८। अब भाषा अच्छी नही बनाता घास काटता है पदार्थ कुछ और है भाषा बनाई कुछ और ही ४८५।

अन्य पण्डित आदि का उल्लेख—दिनेशराम २२। स्वामी पूर्णानन्द ३६। सहजानन्द ४०२। लक्ष्मण शास्त्री ३६। रामानन्द ३०७, ३१०। शिवदयालु ५८१। रामनाथ २३३, २३७, ४७०।

कतिपय आवश्यक विषयों पर ऋषि दयानन्द का लेख

थियोसोफिकल सोसाइटी—के विषय मे १०१, १०३, १०४, १०५, ११४, ११६, ११८, १४३, १५४, १५५, १५६, १७५, १८१, १८२, २१२, २१६, २५६, २६२, २८६, ३२६, ३३४, ३३६, ४६५, ४६६, ५२४, ५४४॥

संस्कृत पाठशाला—फर्रुखाबाद ४। काशी २२, २३। १४२॥

राजकुमार क्षात्रपाठशाला—३२३, ४५२, ४७८॥

शिल्प शिक्षा—के लिये जर्मनी से पत्र व्यवहार २१९, २२२, २३९, २६२॥

---

*यह सवत गुजराती पञ्चाङ्ग के अनुसार है । उत्तर भारतीय पञ्चाङ्ग के अनुसार स० १९३२ समझना चाहिये ॥

अथ

भूमिका

पत्र-संग्रह का विचार

मेरा जन्म अमृतसर के एक आर्यसामाजिक कुल में हुआ। बाल्यकाल था, और स्कूल मे पढ़ने के दिन थे। सवत् १९६४ में स्वर्गीय लाला लाजपतराय विरचित महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और उन की तालीम नामक उर्दू ग्रन्थ पढ़ा। ऋषि सम्बन्धी कुछ बातें ज्ञात हुईं। घर मे भी बहुधा ऋषि सम्बन्धी बातें होती रहती थी। सवत् १९६८ के अन्त में पण्डित लेखराम कृत ऋषि जीवन चरित पढ़ा। यह भी उर्दू भाषा मे लिखा गया था। इस के पाठ से भगवान् दयानन्द सरस्वती की महत्ता मेरे हृदय पर विशेष अङ्कित हुई। सवत् १९६९ मे मैंने ऋषि-शिष्य योगी लक्ष्मणानन्द स्वामी जी से योगमार्ग का उपदेश लिया। वे ऋषि दयानन्द सरस्वती जी की अनेक जीवन-घटनाए सुनाया करते थे। उन से मेरे मन मे ऋषि की भक्ति बहुत बढ़ी। सवत् १९७० में महात्मा मुन्शीराम जी सम्पादित ऋषि का पत्रव्यवहार पढ़ा। इस मे ऋषि के भेजे हुए पत्र अल्प सख्या मे थे और ऋषि के नाम आए पत्र अत्यधिक। ये मेरे कॉलिज-अध्ययन के दिन थे। तब तक मेरे हृदय पर यह सत्य अङ्कित हो गया था कि गत कई शताब्दियो मे इस भूतल पर ऋषि दयानन्द सरस्वती एक अलौकिक पुरुष हुए हैं। उन के लिखे एक-एक शब्द का सुरक्षित करना आवश्यक है। मेरे मन मे यह बात दृढ़ हो गई कि ऋषि के पत्रो को एकत्र करना चाहिए। इन्ही के पाठ से ऋषि-जीवन का वास्तविक स्वरूप स्फुट होगा।

पत्र-संग्रह आरम्भ हुआ

सवत् १९७२ के पूर्वभाग मे मैंने बी०ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। तब मैं व्याख्यान देना आरम्भ कर चुका था। यत्र-तत्र ऋषि जीवन की घटनाए सुनाया करता था। उन्ही दिनो लाहौर में सरदार रूपसिंह जी ने मेरे कई व्याख्यान सुने। एक व्याख्यान के पश्चात् वे स्वय मुझ से मिले। उन्होने यह हर्षप्रद समाचार दिया

कि उन के पास ऋषि के कुछ पत्र है। मेरी प्रार्थना पर उन्होने वे पत्र मुझे दे दिये।

दैवयोग की बात है। साप्ताहिक उर्दू पत्र प्रकाश के सम्पादक महाशय कृष्ण जी के पास भी कुछ ऋषि पत्र मुद्रित होने को आये। आगरे के आर्य अनाथालय के प्रवन्धकर्त्ता ने वे पत्र भेजे थे। कोई अनाथ वालक अनाथालय मे प्रविष्ट हुआ था। उस के पास एक वस्ते मे ये पत्र थे। पत्र लिखे गए थे वाबू विश्वेश्वरसिंह के नाम। वे ऋषि के भक्त थे और कभी वैदिक यन्त्रालय प्रयाग की भी सेवा करते थे। भाग्यचक्र ने उन्ही के पुत्र पौत्र या किसी सम्बन्धी वालक को उस अनाथालय मे भेजा। उस परिवार की इस आपत्ति मे भी ऋषि के पत्र सुरक्षित रहे और म० कृष्ण जी द्वारा मुझे उन की प्रतिलिपियां मिली। मथुरा मे ऋषिजन्म शताब्दी पर सवत् १९८१ में ये पत्र प्रदर्शित हुए थे। अब ये पत्र श्री नारायण स्वामी जी के सग्रह मे सुरक्षित हैं।

सभवतः सवत् १९७४ मे मेरा परिचय प्रयाग के वावू गजाधर प्रसाद जी से हुआ। वाबू जी के हृदय में आर्यसमाज के प्रति अटूट श्रद्धा थी जो अब तक वैसी ही है। उन के निमन्त्रण पर मै बरेली पहुंचा। बरेली में वे मुझे श्री विष्णुलाल एम०ए० के पास ले गये। विष्णुलाल जी ने मुझे चौधरी जालिमसिंह के पत्रो की प्रतिलिपियां करा दी।

उन दिनों मुरादाबाद आर्यसमाज के मंत्री बाबू शिवनारायण जी थे। उन्होने साहू श्यामसुन्दर जी के नाम के पत्र भेजे। प्रतिलिपिया करके मूलपत्र मैने लौटा दिये।

कोलेज दल आर्यसमाज पञ्जाब के नेता स्वर्गीय श्री लाला हसराज जी भी पत्रो के काम मे बडी रुचि रखते थे। उन्होने रावराजा तेजसिंह जी को पत्र लिख कर जोधपुर के पत्र मगवाए। प्रतिलिपि कर के वे पत्र भी लौटा दिए गए।

प्रथमभाग-प्रकाशन

उपरि-अर्जित सामग्री से ऋषि के पत्र और विज्ञापन का प्रथम भाग कार्त्तिक सवत् १९७५ अथवा अक्टूबर १९१८ मे मुद्रित किया गया। इस भाग मे ८२ पत्र और विज्ञापन थे। परन्तु पत्र सख्या ६३ और ६४ दो पत्र नही थे। अब वे पूर्ण सख्या १९५ पर एक पत्र के रूप मे छपे है। अतः इस भाग मे ८१ पत्र थे। उपर्युक्त प्रथम भाग पर निम्नलिखित वक्तव्य था—

कुछ पत्रों के सम्बन्ध में।

ये पत्र संख्या में बहुत अधिक है। अत. कई भागों में निकलेंगे। पुस्तक की भूमिका भी अन्त में ही लिखी जायगी। सम्प्रति तो आर्य्यजनता से यही निवेदन है कि वह मुझे नये पत्रों के संग्रह करने में सहायता दे। आर्य्यसमाज के कई महान् व्यक्ति और उत्साही महाशय मेरी बहुत सहायता कर रहे हैं। उन सब के परिश्रम ही का फल है कि मै इतने पत्र संग्रह कर चुका हूं। उन सब का शुभ नाम धन्यवाद पूर्वक भूमिका के अन्त में आ ही जायगा। परन्तु मै चाहता हूं कि ऐसे सज्जनों की संख्या अधिक हो। पत्रान्वेशणार्थ मेरे पत्रों का कई आर्य्य पुरुषों ने तो तत्काल उत्तर दिया है परन्तु अनेक लोग चुप भी रहे हैं। वे समझते हैं कि काम कदाचित् मेरा अपना है। यह उनकी भूल है। ऋषि के एक २ अक्षर का सुरक्षित करना सब आर्य्यों का विशेष कर्त्तव्य है। यह ऋषिऋण से उऋण होने का एक प्रकार है। मुझे पूरा पता है कि अनेक लोगों के घर में ऋषि के कई शिक्षाप्रद पत्र विद्यमान् है। उनको निःसकोच उन्हें प्रकाशित करवा देना चाहिये। आवश्यक पत्रों की प्रतिकृतियां भी मैं साथ दूंगा। पाठक ऐसी ही एक प्रतिकृति इस भाग के आरम्भ में पाएंगे। यह पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। इसके रखने से जहां अन्य बातों का प्रकाश होगा वहां ऋषि का हस्ताक्षरयुक्त लेख प्रत्येक आर्य्य घर में पहुंच जायगा। जितनी शीघ्रता से इस भाग का प्रचार होगा उतने अधिक उत्साह से आगामी काम चलेगा। इस भाग में बहुत से पूर्व प्रकाशित पत्र भी आ गये है, और संग्रह में यह आवश्यक ही था, पर आगे नवीन पत्रों की संख्या अधिक होगी। कागज़ आदि के अत्यन्त महंगा होने पर भी पुस्तक का मूल्य यथासम्भव न्यून रखा गया है। परन्तु प्रतिकृति के तय्यार कराने में व्यय अधिक आया था अत. इतना रखना पड़ा।

ऋषि के पत्रो के साथ २ मै उनकी फोटो भी एकत्र कर रहा हूं। पांच छ स्थलों पर उनकी फोटो ली गई थी। उनमें से कई एक तो छप चुकी हैं। एक सर्वथा नया चित्र मुझे रायबहादुर संसारचन्द्रजी से मिला है। दृश्य उसका अत्यन्त रोचक है। महाराज भूमि पर आसन लगाए विराजमान हैं। सामने पुस्तक पड़ा है। उसका पाठ हो रहा है, इत्यादि। ऐसे चित्रों का संग्रह करना मै आवश्यक समझता हू। अतएव यदि किसी सज्जन के पास ऋषि का यथार्थ फोटो हो तो वे मुझे सूचित करें। अमरीका वाला चित्र भी उन्हीं

रंगों में छपवाया जायगा। अगले भाग के सम्बन्ध में यह कहना शेष है कि उसमें लखनऊ के पं० रामाधार वाजपेई, दानापुर के बाबू माधोलाल, सुप्रसिद्ध राय बहादुर श्री मूलराजजी एम० ए० इत्यादि के अनेक पत्र होंगे। इत्योम्।

स्थान लाहौर
कार्त्तिक व० ५ वीर दयानन्दाब्द ३५ } भगवद्दत्त

द्वितीयभाग-प्रकाशन

दूसरा भाग सवत् १९७६ में मुद्रित हुआ। उस मे बाबू माधोलाल दानापुर, ला० मूलराज एम०ए० गुजरात तथा गुजरांवाला आदि, प० रामाधार वाजपेई लखनऊ को लिखे गये पत्र तथा कुछ फुटकल पत्र और विज्ञापन आदि छापे गये। ये पत्र सवत् १९७५ और १९७६ में एकत्र किये गये थे। इस भाग मे सख्या ८३ से १३८ तक पत्र और विज्ञापन थे। नियोग का मसव्विदा नामक लेख पर कोई सख्या नही दी गई थी। भाग प्रथम मे महाराजा श्री प्रतापसिंह जी के नाम का सख्या ५५ का पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित से लिया गया था। प० लेखराम जी ने उसकी तिथि आश्विन वदी ३ शनिवार सम्वत् १९४० (२२ सितम्बर सन् १८८३) दी थी। जीवनचरित में इस पत्र का थोडा सा भाग ही छपा था। फिर यह पूरा पत्र जोधपुर से श्री रावराजा तेजसिंह जी द्वारा प्राप्त हुआ। वह द्वितीय भाग मे सख्या ८७ पर छापा गया। मूल पत्र में तिथि आ० ब० ३ शनि स० १९४० थी। यहां आ० से आषाढ़ अभिप्रेत था। प० लेखराम जी अथवा उनके सम्पादक ने आश्विन बनाने मे भूल की।

इस प्रकार दूसरे भाग तक पत्र और विज्ञापनो की संख्या १३७ थी। इस भाग के साथ निम्नलिखित वक्तव्य छापा गया था—

कुछ पत्रों के सम्बन्ध में।

ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन प्रथम भाग में की प्रतिज्ञानुसार यह दूसरा भाग अब जनता के सामने धरा जाता है। इस में भी कई अत्यन्तोपयोगी पत्र दिये गये है। कुछ पत्रों की अङ्गरेज़ी बड़ी अशुद्ध थी। वह मूलवत् रहने दी गई है। प्रतीत होता है उन दिनों ऋषि के समीप कोई अतीव साधारण अङ्गरेजी पढा लिखा लेखक था। इन पत्रों का मैने भाषानुवाद कर दिया है।

इस भाग में तीन लेख बड़े महत्त्व के हैं । एक तो वेदभाष्य का विज्ञापन सं० १३७, दूसरा उचित वक्ता की समीक्षा सं० १३८ और तीसरा नियोग का मसव्विदा सं० १३९ । उचित वक्ता का लेख मैंने क्यो यहां छापा है ? इस का एक तो स्पष्ट उत्तर यही है कि पत्र २७ भाग प्रथमानुसार श्री महाराज ने स्वयं लिखा है "और मै भी उस प्रश्नोत्तरी के विरुद्ध विषय के उत्तर में सम्मत हूं" । अर्थात् इस लेख से वे सहमत थे । मेरे विचारानुसार तो यह उत्तर उन्होंने स्वयं लिखवाया था । इस बात को किसी अगले भाग में जब कि समस्त पत्रों की एक विस्तृत भूमिका लिखी जायगी मैं प्रमाणित करूंगा । अब रहा नियोग का मसव्विदा । पत्र १११ में श्री स्वामी जी श्री मूलराज जी एम ए को इसी के विषय में लिख रहे है । इस का मूल श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को मेरठ से मिला था । उन्हों ने इसे "प्रकाश" में छपवा दिया था । वहीं से मैंने ले लिया है । स्वामी श्रद्धानन्द जी ने मुझे कहा था कि इस के छपने में अशुद्धियां रह गई थीं, सो आशा है वह आगे कभी दूर हो जायंगी ।

नवीन पत्रों के संग्रह करने का यत्न कर रहा हूँ । पर्य्याप्त संख्या में प्राप्त कर लेने पर उन्हें भी प्रकाशित कर दूंगा । आशा है परमात्मा की कृपा से लोग ऋषि के शुद्ध हृदय का दर्शन इन पत्रों से भले प्रकार करेंगे ।

शीघ्रता के कारण छपने में कोई ५, ७ साधारण अशुद्धियां रह गई हैं, पाठक उन्हें स्वयं सुधार लें । हां पृ० २१ पर पं० ८ में "कलम्" के स्थान में "फलम्" पढ़ें ।

स्थान लाहौर
मार्गशीर्ष, शुक्ला ६ शुक्र
दयानन्दाब्द, ३७ } भगवद्दत्त

तृतीयभाग-प्रकाशन

सवत् १९७६ से १९८३ तक पत्रो की उपलब्धि का काम अत्यन्त शिथिल रहा । इस काल में और इससे पूर्व भी हम ने अनेक व्यक्तियों और आर्यसमाजो को पत्र लिखे । परन्तु सफलता के दर्शन न हुए । लगभग सब स्थानों से यही उत्तर आता था कि पत्र नही हैं । इन उत्तरों के तीन उदाहरण नीचे उद्धृत किये जाते हैं ।

१—पहला उदाहरण प० प्रभुदयाल जी के उत्तर का है। ये महाशय संवत् १९३३ मे लखनऊ मे श्री स्वामी जी से मिले थे । तदनन्तर इन्हो ने पाच दर्शनों पर भाषा-भाष्य रचे। मीमांसा-दर्शन विषयक एक पत्र इन्हों ने श्री स्वामी जी को भेजा। वह म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४०२ पर छपा है। ये तेरही ग्राम जिला बादा मे रहते थे। इनका उत्तर जो मुझे प्राप्त हुआ, निम्नलिखित है। सन् १९१७ में प्रभूतानन्द नाम धारण करके वे संन्यासी हो गए।

तेरही ता० २—१०—१७

श्रीमान् महाशय नमस्ते !

आप का पत्र ता० २—९—१७ का कल्ह यहां ता० १—१०—१७ को एक मास व्यतीत होने पर प्राप्त हुआ है।

जो पत्र मि० चै० सु० १३ स० १९४० में मैंने स्वामी दयानन्द जी महाराज की सेवा में भेजा था उसमे मैंने मीमासा मे बलिदान विषयक जो हिंसा परक लेख मिलता है उसके यथार्थ वा मिथ्या होने और मन्तव्य वा अमन्तव्य होने के विषय में प्रश्न किया था उसका उत्तर स्वामी जी ने भेजा था । जो पत्र आया था उसका पता नही लगता । पास नही है परन्तु पत्र के लेख का स्मरण है। उत्तर मे श्री स्वामी [जी ने] आशीर्वाद के अनन्तर यह लिखा था कि—

'मीमांसा के मूल शब्दो में हिंसाविधि का अर्थ नहीं है । यह भाष्यकार और वृत्तिकार की भूल है जो हिंसापरक अर्थ किया है। हम को वेदभाष्य करने आदि कार्यों से अवकाश नही मिलता। यही कारण है कि आप के पत्र का उत्तर इस समय दस बजे रात्रि को लिखता हू।'

ऐसा उत्तर संक्षेप लेख से दिया था। . . ..

आपका हितैषी

प्रभूतानन्द

२—थियोसाफिकल समाज की प्रधाना श्रीमती एनी बेसेण्ट ने निम्नलिखित उत्तर दिया –

Bombay,
21-8-18

Dear Sir,

I have no correspondence between Swamiji and Col Olcott and Mme Blavatsky I am sorry to be unable to help you

Sincerely,
ANNIE BESANT

३—तीसरा उत्तर परलोकगत न्यायाध्यक्ष श्री महादेव गोविन्द रानाडे जी की धर्मपत्नी की ओर से है—

591 Sadashiv Peth
Poona city
13-11-18

Dear Sir,

I am desired by my sister Mrs Ramabai Sahele Ranade to acknowledge receipt of your letter of the 4th Int. and to say that she regrets there are no records regarding the matter you refer to in fact there is no collection refering to that period

Yours truly,
K M Kelkar

अनेक स्थानों से मेरे पोस्ट कार्ड और लिफाफे लौट आते थे । व व्यक्ति तव इस लोक में नही थे—

कभी-कभी कही से पत्र आ जाता था कि पत्र मिल सकेंगे । इसका एक उदाहरण मेरठ से आए हुए निम्नलिखित पत्र से मिलेगा ।

श्रीमान्—

. . . ,स्वामी जी के पत्र मुखतलिफ बस्तो मे रक्खे हैं । जब आप पहले आये थे तव मैं उन बस्तो को देख कर ही चुका था और करीव १ महीने के लगा था। सो इस समय गर्मी अधिक है देखने का समय नही। एक दो खत तो एक दो बस्तो से निकाले हैं और फिर किसी वक्त जव मौका होगा निकाल रक्खू गा ॥

धनपतिराय

कई वर्ष अतिवाहित हो गए। मेरठ का यह अमूल्य सग्रह हस्तगत नही हो सका। श्री ला० धनपतिराय जी के पिता ला० रामशरण मेरठ के प्रसिद्ध रईस थे। वे परोपकारिणी सभा के प्रथम मन्त्री और ऋषि के अनन्य भक्त थे। मु० बख़तावर सिह प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय काशी ने जव हिसाव की गडवड की तो श्री स्वामी जी ने तत्सम्बन्धी सब पत्रादि उन्हे भेज दिए। ला० रामशरणदास जी का श्री स्वामी जी के काल मे ही अकस्मात निधन हो गया।[1]

---

१ देखो म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार में श्री स्वामी जी के नाम भाई जवाहरसिंह लाहौर का ११ मई १८८३ का पत्र पृ०, १३०—१३५ तक।

वे सब पत्रादि उनके घर पर रहे। उनकी सर्व सम्पत्ति कोर्ट आफ वार्ड्स मे चली गई। सब पदार्थ बन्द पड़े रहे। यह सामग्री न तो प० लेखराम जी को प्राप्त हुई और न श्री देवेन्द्र बाबू को।

संवत् १९८३ मास आषाढ़ मे महाशय मामराज जी (जिला मुजफ्फर नगर अन्तर्गत कसबा खतौली निवासी) दयानन्द कालेज लाहौर के पुस्तकालय मे मुझ से मिले। उनका मेरा परिचय संवत् १९७५ मे आर्यसमाज मन्दिर मेरठ नगर मे हुआ था। वहां मेरे साथ पण्डित रामगोपाल जी शास्त्री भी थे। म० मामराज जी की ऋषिभक्ति से मै उनकी ओर आकर्षित हो चुका था। उन्हे ही उपयुक्त व्यक्ति समझ कर मैने उनसे कहा कि वे मेरठ मे ठहर कर ला० धनपतिराय जी से पत्र लेने का पूर्ण यत्न करें। आषाढ़ शुक्ला १० संवत् १९८३ के दिन मैने उन्हे ला० धनपतराय जी के नाम पत्र दिया।

म० मामराज जी श्रावण शुक्ला ६ संवत् १९८३ को मेरठ पहुंचे। लगभग डेढ मास के अनथक परिश्रम के पश्चात् ला० धनपतराय जी ने खोजकर आश्विन कृष्णा द्वादशी को ऋषि के पत्रो का एक संग्रह उन्हे सौपा। इस पुण्यदायक महत्कार्य मे मेरठ के महाशय राजाराम, ला० दीवानसिंह, बा० बद्रीप्रसाद, बा० रत्नलाल, बा० मोतीलाल, मास्टर विश्वम्भर दयाल, बा० भैरोदयाल, चौधरी जयदेवसिंह, डा० अयोध्या प्रसाद जी आदि सज्जनो ने समय समय पर बड़ी सहायता की।

इन्ही दिनों म० मामराज ने मेरठ के मास्टर आनन्दी लाल आदि के और भी कई घर ढूढे। परन्तु पत्र-सामग्री अन्य किसी घर से भी हस्तगत न हुई। मेरठ निवासी श्री प० घासीराम जी एम० ए० के पास श्री देवेन्द्र बाबू का पर्याप्त संग्रह आ चुका था। उसी मे से उन्होंने महती कृपा करके दो मूलपत्र (पूर्ण संख्या २० और ३३) तथा १६ नवीन पत्रो की प्रतिलिपियां जो उनके पास थी, उदारता पूर्वक प्रदान की। यह सब सामग्री आश्विन शुक्ला २ संवत् १९८३ शुक्रवार को म० मामराज जी मेरे पास ले आए। जयपुर के पत्रो की प्रतिलिपि भी स्वर्गीय महामहोपाध्याय प० शिवदत्त जी दाधिमथ की प्रेरणा से ठाकुर नन्दकिशोर सिंह जी ने मेरे पास भेज दी थी।

म० मामराज जी पुनः खोज पर निकले। कर्नल आलकाट और मैडम के नाम के दो अत्यन्त आवश्यक पत्रो की प्रतिलिपियां उन्होने मुरादाबाद के ठाकुर चेतनदेव से ली। ये प्रतिलिपियां उनके पिता ठाकुर शङ्करसिंह उपनाम भूपजी

मन्त्री आ० स० मुरादाबाद के काल से उन के घर मे सुरक्षित चली आ रही थीं। इस सब सामग्री से पत्रो का तृतीय भाग, ३-१-२७ को प्रकाशित किया गया। उसकी भूमिका निम्नलिखित थी—

पाठकों से निवेदन।

ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन का यह तीसरा भाग जनता के प्रति भेंट किया जाता है। इस में जो पत्र छापे गये है, वे एक दो को छोड कर, पहली वार ही प्रकाशित किये जाते है। वहुत से पत्र श्री स्वामी जी के अनन्य भक्त सेठ रामशरणदास जी रईस मेरठ के सुपुत्र ला० धनपतिराय जी रईस मेरठ ने प्रदान किये है। कुछ पत्र पं० घासीराम जी एम० ए० ने दिये है। ये पत्र उनके पास वाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के संग्रह में आये थे। मेरठ से ये सब पत्र महाशय मामराज जी वड़े पुरुषार्थ से मेरे पास लाये थे। इन सब महानुभावों का मैं हृदय से कृतज्ञ हूं। अभी और भी पत्र मिल रहे हैं। वे चतुर्थ भाग में छापे जायेंगे। पाठक उनकी प्रतीक्षा करें। विस्तृत भूमिका अन्त में ही लिखी जायगी।

लाहौर
३-१-२७

भगवद्दत्त

तीसरे भाग मे पत्रों की सख्या १४० से १८७ तक थी। अत दो न्यून कर के सारे १८५ पत्र तव तक छापे गये थे।

चतुर्थभाग-प्रकाशन

इस के पश्चात् भक्त ईश्वरदास जी एम० ए० लाहौर ने मुझे पूर्णसख्या ४४ का एक पत्र दिया। अमृतसर मे श्री रुद्रदत्त जी ने पूर्णसंख्या ४२ का आधा फटा पत्र दिया। मार्गशीर्ष शुक्ला ३ बुधवार सवत् १९८३ को म० मामराज जी अनेक नगरो से होते हुए फरुखावाद पहुचे। फरुखावाद वह स्थान है जिससे श्री स्वामी जी का विशेष सम्बन्ध रहा। ऋषि के काल के प० गणेशप्रसाद जी तव जीवित थे। वे ही आरम्भ से आर्यसमाज के लेखक का सव काम करते थे। उन्होने अपने पास की सारी सामग्री म० मामराज जी को दिखाई और उसकी प्रतिलिपि करने की सुविधा दी। उनके पास ३८ पत्र थे। इन मे से सात पत्रों की आशिक प्रतिलिपिया हमे प० घासीराम जी से मिल चुकी

थी। इसके पश्चात् श्री कालीचरण रामचरण जी के पुत्र वावू शिवनारायण जी अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज ने समाज की सब सामग्री देखने की उन्हे पूर्ण सुविधा दी। उसमे से ऋषि के पत्र, ऋषि जीवन सम्बन्धी उपयोगी सामग्री तथा पुराने रजिस्टरों मे से पत्रो के आने जाने की तिथियां ली गई। आर्यसमाज के इतिहास के लिये भी वहुत सी आवश्यक सामग्री वहां से कई मास तक खोजने पर मिली।

फरुखाबाद के राजा दुर्गाप्रसाद जी अग्रवाल ऋषि के वड़े भक्त थे। उनके घर की खोज आवश्यक थी। म० मामराज जी ने उनके पुत्र श्री वावू भारतेन्दु जी से पत्रों की पुरानी रद्दी देखने की आज्ञा ली। एक बृहत्कोष्ठागार पचासो वर्षों के लाखो पुराने पत्रो से भरा पड़ा था। उनमे से एक एक का देखना कोई साधारण काम न था। म० मामराज जी के कई मास के परिश्रम से उसमे से अनेक उपयोगी पत्र मिले। इनमे से सात तो ऋषि के ही भेजे हुए पत्र थे। यह एक आश्चर्यजनक अन्वेषण था। म० मामराज जी के अतिरिक्त दूसरा व्यक्ति नही था, जो इतने धैर्य से यह काम करता। ऋषि-जीवन की अनेक घटनायें इन्हीं पत्रों से मिली हैं। ईश्वर ने अपनी अपार दया से इस सग्रह की रक्षा की और मामराज जी द्वारा वह अपूर्व-सग्रह ससार के सामने आया।

फरुखाबाद मे ला० जगन्नाथ जी अग्रवाल तथा वावू सूर्यप्रसाद और श्री नारायण दास जी मुख्तार के घर भी खोजे गए। परन्तु ऋषि के पत्र वहा से नही मिले। फरुखावाद के ये सब पत्र चतुर्थभाग मे सख्या १८८ से २४६ तक छपे थे।

पूर्णसख्या ७५ का ऐखवासी ठाकुर भूपालसिंह के नाम का पत्र म० मामराज जी ने प्रसिद्ध आर्य-कवि प० नाथूराम जी शर्मा शङ्कर से प्राप्त किया था। कवि जी को यह पत्र किसी पसारी की रद्दी में से मिला था। पूर्ण सख्या १६२ के पत्र की प्रतिलिपि मुरादाबाद से मुशी इन्द्रमणि जी के पौत्र ला० भगवत सहाय जी से ली गई। पूर्णसख्या २३५ का पत्र ऐतमादपुर वासी ला० द्वारका-प्रसाद जी से म० मामराज जी ने प्राप्त किया। पूर्णसख्या २४१ तथा ला० मूलराज जी एम० ए० के नाम के पत्र उन्ही के घर से हमें मिले। श्री लाला जी पुराने पत्रों के मुट्ठे मेरे सामने धर देते थे, और मैं एक-एक कार्ड और लिफाफा देखता था। वहुत दिन लगाकर मैंने वह सारा सग्रह देखा। उसमे से पांच पत्र प्राप्त हुए।

इस सव सामग्री से पत्रों का चतुर्थ भाग ६–७–२७ को प्रकाशित किया गया। उसकी भूमिका निम्नलिखित थी—

पाठको से निवेदन

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन का यह चतुर्थभाग जनता के प्रति भेंट किया जाता है। इसमें जो पत्र छापे गये है, वे एक दो को छोड़ कर, पहली वार ही प्रकाशित किये जाते है। इनमें से अधिकांश पत्र फरुखावाद से प्राप्त किये गये है। इनके प्राप्त करने का श्रेय महाशय मामराज जी को है। उन्होंने निरन्तर कई मास फरुखावाद में वास करके लाखों पुराने रद्दी पत्रों में से ये पत्र निकाले है। फरुखावाद समाज के पुराने सभासद् पं० गणेशप्रसाद जी ने भी इस कार्य में विशेष सहायता दी है। उनका मै आभारी हूं। पत्रों की खोज के लिये १२०) रु० श्रीमान् जस्टिस वखशी टेकचन्द जी ने दिये थे। उनका मै वड़ा कृतज्ञ हूं। पर पत्रों की खोज पर १२०) रु० तो क्या ५००) रु० से भी अधिक व्यय अभी तक हो चुका है। आगे भी निरन्तर हो रहा है। मेरे लिये इतना व्यय करना वड़ा कठिन है। क्या कोई आर्य इस विषय में सहायता करेंगे। पांचवां भाग शीघ्र ही अजमेर से छपेगा। विस्तृत भूमिका अन्त में ही लिखी जायगी।

लाहौर ६-७-२७ भगवद्दत्त

तदनन्तर पत्रसंग्रह की प्रगति

इसके पश्चात् पत्रसंग्रह का काम मन्थरगति से होता रहा।

शाहपुरा राज मेवाड़ से श्री राजाधिराज श्रीनाहरसिंह जी की आज्ञा से प० भगवान् स्वरूप जी ने भाद्रपद वदी ७ सवत १९८५ के अपने पत्र के साथ श्री राजाधिराज के नाम लिखे गये ११ पत्रों की प्रतिलिपिया हमे भेजी।

सवत् १९९० में म० मामराज जी ने गुरुकुल काङ्गडी से ठाकुर किशोर सिंह जी के सग्रह की और देहरादून से स्वामी कृपाराम जी के कुछ पत्रों की प्रतिलिपिया की।

अजमेर के प्रसिद्ध आर्यधर्मप्रचारक प० रामसहाय जी ने ज्येष्ठ वदी १० सवत् १९९० (सन् १९—५—३३) को अपने पत्र के साथ ३ वहुमूल्य पत्र हमारे पास भेजे (पूर्ण सख्या १६, २१, ५२)।

वहुत दिन अतीत हुए जव अद्वितीय राजनीतिज्ञ तथा सुप्रसिद्ध देशभक्त श्री भाई परमानन्द जी, एम० ए० ने मुझसे कहा था कि श्यामजी कृष्णवर्मा

के नाम लिखे गये श्री स्वामी जी के अनेक पत्र एक राना महाशय के पास फ्रांस मे सुरक्षित थे। मैंने उनकी प्राप्ति का यत्न किया पर असफल रहा। इतने में प्रयाग विश्वविद्यालय के अध्यापक श्री धीरेन्द्रवर्मा एम ए. डी. लिट ने जनवरी सन् १९३७ के साप्ताहिक आर्यमित्र मे निम्नलिखित टिप्पण छपवाया—

स्वामी जी के कुछ नये पत्र

गत वर्ष मै पढ़ाई के सिलसिले में पेरिस में था। वहां मुझे यह मालूम हुआ कि एक प्रसिद्ध गुजरानी व्यापारी राना महोदय के पास स्वर्गीय पं० श्यामजीकृष्ण वर्मा की निजी पुस्तकें आदि हैं और उनमें स्वामीजी के भी कुछ पत्र है। राना महोदय से मिलकर मैंने इन पत्रों को प्राप्त करने का यत्न किया और इसमें मुझे सफलता हुई।

सब मिलाकर ये २६ पत्र है। ये सब १८७७-७९ ईसवी के लिखे हुये हैं। इनमें तीन पत्र तो आद्योपान्त स्वामी जी के हाथ के लिखे है और शेष दूसरों के हाथ से लिखवाये हुये है। किन्तु एक को छोडकर प्रत्येक में स्वामीजी के हस्ताक्षर है। कुछ पत्रों में स्वामीजी ने एक दो पंक्तियें अपने हाथ से भी बढ़ादी है। स्वामीजी के हाथ के लिखे पत्रों में दो हिन्दी में है और एक संस्कृत में। शेष पत्रों में १५ हिन्दी में, ६ अंग्रेज़ी में तथा २ संस्कृत में है। इन पत्रों में १६ पत्र पं० श्यामजीकृष्ण वर्मा को लिखे गये हैं। १ मूलराज जी (लाहौर) को, १ वल्लभदासजी (लाहौर) को, ५ गोपालराव हरिदेशमुख जी को, २ हरिश्चन्द्रचिन्तामणि जी (बंबई) को और १ हेनरी आलकट तथा मैडम ब्लावाट्स्की को।

अधिकांश पत्र छोटे छोटे प्रबन्ध सम्बन्धी विषय वाले है जिस में प्राय. वेद-भाष्य की छपाई आदि के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। किन्तु इनसे भी स्वामीजी की इन तीन वर्षों की यात्रा क्रम का पता चलता है। दो तीन पत्रो में कुछ सिद्धान्तों का विवेचन मिलता है। उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने वाले अंश तो प्राय. प्रत्येक पत्र में मिल जाते है। फिर उनके हस्ताक्षर और हस्तलेख ऐतिहासिक महत्व रखते ही हैं।

मेरी इच्छा है कि यह अमूल्य सामग्री किसी ऐसी संस्था में रखदी जावे जहां यह सुरक्षित रह सके और साथ ही आर्य बन्धुओ तथा हिन्दी

प्रेमियों की पहुँच के अन्दर भी रहे। मै अत्यन्त वाधित होऊँगा यदि कोई सज्जन मुझे ऐसी संस्थाओं के पते भेज सकें जहां इन उद्देश्यों की पूर्ति हो सके।

८ वैक रोड,
इलाहावाद।

धीरेन्द्र वर्मा
एम ए डी लिट्
(पेरिस)

सवत् १९९२ मे स्वर्गीय पं० चमूपति जी एम ए ने ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह को गुरुकुल काङ्गड़ी हरद्वार से प्रकाशित किया। यह सग्रह भी अत्यन्त अपूर्व है। हम लिख चुके हैं कि इससे पूर्व ही अर्थात् सवत् १९९० मे म० मामराज जी श्री स्वामी जी के इन पत्रो की प्रतिलिपि कर लाए थे।

सवत् १९९६ में मैं प्रयाग गया। प० वाचस्पपति जी एम ए मेरे साथ थे। हम दोनो ने प्रो० धीरेन्द्रवर्मा जी के निवास पर जाकर उनके सग्रह के अधिकाश पत्रों की प्रतिलिपि की। सवत् २००० मे श्री महेशप्रसाद जी साधु ने उस सग्रह के शेष पत्रो की प्रतिलिपियां हमारे पास भेजी। अभी गतमास में ही पत्र पूर्णसख्या २७९ की एक और प्रतिलिपि अध्यापक धीरेन्द्रवर्मा जी ने हमारे पास भेजी।

परोपकारिणी सभा अजमेर का संग्रह

श्री स्वामी जी के देहत्याग पर परोपकारिणी सभा ने निश्चय किया कि श्री स्वामी जी का प्रामाणिक जीवनचरित सम्पादित तथा प्रकाशित कराया जाए। यह काम प० मोहनलाल विष्णुलाल पण्डिया उपमत्री सभा को सौंपा गया। उन्हों ने कुछ न कुछ तद्विषयक सामग्री उपलब्ध की।[1] हमें खोज करने पर भी उस सामग्री का कुछ पता नही लगा।

परोपकारिणी सभा के मन्त्री, ऋषिभक्त, वयोवृद्ध दीवान वहादुर श्री हरविलास जी शारदा को मैंने अनेक वार लिखा कि वे उन समस्त पत्रों की प्रतिलिपियां भेजें, जो उनके पास हैं और अभी तक प्रकाशित नही हुए। तदनुसार सन् १९४३ मास सितम्वर मे उन्हो ने ऐसे सव पत्रो की प्रतिलिपिया मेरे पास भेजी। वे सव पत्र इस सस्करण में यथास्थान छप गए हैं।

१—देखो —म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार की भूमिका पृ० ८ और ९।

कुछ और नए पत्र

अभी मास आषाढ़ सवत् २००२ मे इन पत्रों का मुद्रण समाप्त हो रहा था। म० मामराज जी गत छः मास से मेरे पास थे। मैने उनसे कई वार कहा कि मेरठ के ला० रामशरण दास जी के घर पर पडे हुए सब वस्ते एक वार उन्हे स्वय देख लेने चाहिए। सभव है कि ला० धनपतराय जी पूरे रूप से उन्हें न देख सके हों। म० मामराज जी मेरठ पहुंचे। उन्होने ३१–७–४५ को मुझे पत्र लिखा कि उसी पुराने स्थान से उन्होंने १५ पत्र और खोज लिए हैं।

हमारे सग्रह मे एक कागज पर उर्दू मे कुछ लेख था। ध्यानपूर्वक पढ़ने पर पता लगा कि श्री स्वामी जी ने उस पर कुछ पत्र लिखवाए थे। वे ही पूर्व रूप मे उर्दू मे उस पत्र पर थे। इन सव पत्रों को हम ने परिशिष्ट मे छाप दिया है।

संपूर्ण उपलब्ध पत्रों के नवीन संस्करण का आयोजन

आरम्भ मे जैसे जैसे पत्र प्राप्त होते जाते थे वैसे वैसे ही रक्षा के विचार से मुद्रित कर दिए जाते थे। अगली खोज चलती रहती थी। पर्याप्त सामग्री एकत्र हो जाने पर यह निश्चय किया गया कि ऋषि का प्रामाणिक जीवनचरित लिखने के लिए इन सब पत्रो और विज्ञापनादि का तिथि-क्रमानुसार सम्पादन अत्यावश्यक है। तदनुसार मास श्रावण सवत १९८४ से पत्रों के इस सस्करण का आयोजन आरम्भ कर दिया गया था। पुराने सब पत्र तिथि क्रम से जोड़े गए।

तिथिक्रमानुसार पत्रसम्पादन का प्रथम अपूर्वलाभ

उस समय प्रथम वार यह ज्ञात हुआ कि जीवनचरितो मे तिथियो की अनेक अशुद्धिया हो गई हैं। पत्रस्थ तिथि स्थानी ज० से जनवरी का अभिप्राय था और कई लेखकों न जून समझा।[1] इसी प्रकार आ० अर्थात् आषाढ़ को आश्विन अथवा आश्विन को आषाढ़ समझा गया।[2] मा० अर्थात् मार्गशीर्ष से माघ समझा गया अथवा इसके विपरीत।[3] ऐसी अशुद्धिया इस सस्करण की टिप्पणियो मे प्रदर्शित की गई हैं।

---

१ पत्र पूर्णसख्या २३९ पर टिप्पण २।

२ पत्र पूर्णसख्या ४१६ पर टिप्पण २।

३ पत्र पूर्णसख्या ३५९ पर टिप्पण १।

द्वितीय अपूर्व लाभ

दूसरा महान् लाभ यह हुआ कि जीवनचरितो मे दी गई श्री स्वामी जी के अनेक स्थानो पर पहुचने और वहा से प्रस्थान की तिथियां अशुद्ध प्रमाणित हुईं और यह विदित हुआ कि जीवनचरितो मे कई स्थानो पर पहुंचने का उल्लेख भी नही है। यथा—

	पत्र सख्या	पत्र की तिथि	घटना	भूल या अभाव
१	२	भा शु ६ स १९२७ =१ सि० १८७६	स्वामीजी फरुखाबाद में थे।	प लेखराम कृत जीवन-चरित म यह घटना नही है।
२	२०	पौ सु २ स १९३३ =दि १७-१८७६	देहली पहुचे।	प. लेख जी च मे दिसम्बर का अन्त है, तिथि नही है। प घासी जी मे तिथि नही
३	२२,२३	सन ६-२-७७ १३ २-७७	सन् १५-२-७७ को मेरठ से चल कर सहारनपुर पहुंचे।	प लेख और घासी जी च में ४ फरवरी को मेरठ से चलकर सहारनपुर गये।
४	२४,२५	२८-२-७७ ९-३-७७	११ मार्च को सहारन-पुर से चले।	लेख जी च मे नही। घासी जी च मे है।
५	३३	२१ जु १८७७	१२ जुलाई को लाहौर से अमृतसर पहुचे।	लेख जी च मे ५ जुलाई को पहुंचे। इसी प्रकार घासी जी च मे भी अशुद्ध है।
६	३४-नोट		१४ मई १८७७ को पजाव गवर्नर से लाहौर में मिले।	लेख जी च मे नही। घासी जी च पृ ४१४ पर अशुद्धि है।
७	४२	११-१०-१८७७	१५ अक्तूबर १८७७ को जालन्धर से अमृतसर पहुचे।	लेख जी च मे नही है। घासी जी च मे नही है। दोनों मे १७ को जालन्धर से चलना लिखा है।

	पत्र सख्या	पत्र की तिथि	घटना	भूल या अभाव
८	४८	२७ दि १८७७	२७ दि को जेहलम पहुंच।	लेख तथा घासी जी. च दोनों अशुद्ध। देखो टि पृ. ८६।
९	७०	१५ जु १८७८	१५ जुलाई को अमृतसर मे थे।	लेख जी च तथा घासी. जी. च —दोनों मे ११ जु. तक ही अमृतसर मे रहना लिखा है।
१०	९१	७ अकटू १८७८	३ अकटू. को दिल्ली पहुंचे।	लेख तथा घासी. के अनुसार ९ अकटूबर को दिल्ली पहुंचे।
११	१५३	...	२० नवम्बर १८७९ को काशी में थे।	लेख २७ नवम्बर को काशी पहुंचे। घासी. में तिथि नही
१२	२२१ २२३ २४६ २५७	...	अलीगढ़ पहुंचने का वृत्तान्त।	यह वृत्तान्त किसी जीवन चरित मे नहीं है।
१३	२७५	...	१६ दिसम्बर को इन्दौर पहुंचने की सूचना।	लेखराम (पृ ५५५) घासी (पृ ६५५)—दोनों में २१ दिसम्बर १८८१ को इन्दौर पहुचे।
१४	४०४	...	३१ मई जोधपुर पहुंचे।	लेखराम, २९ मई को जोधपुर पहुंचे।
१५	४२० ४२३	.	२६ जून १८८३ को महाराज जोधपुर श्री स्वामी जी से मिले।	लेखराम तथा घासीराम १४ जून को महाराजाउन से मिले।

अशुद्धियों की यह सक्षिप्त सी सूची है। प्रामाणिक जीवनचरित में सब अशुद्धियां स्पष्ट की जायेंगी।

तृतीय अपूर्व लाभ

अनेक पत्रों में न तिथि, न सवत् और न स्थान ही लिखा गया है। पत्रों को तिथिक्रमानुसार लगाने से ही ऐसे पत्र यथास्थान रखे जा सके हैं। प्रकरण ने भी इस विषय मे पूर्ण सहायता दी है। इस से प्रामाणिक जीवनचरित लिखने में सुविधा होगी।

चतुर्थ लाभ

अनेक पत्रों के अन्त मे लेखकों की भूल से वदी, सुदी, मास अथवा सवत् अशुद्ध लिखा गया है। ऐसी असावधानी अब भी अनेक लोगों से हो जाती है। तिथिक्रमानुसार पत्रो के छापने से ऐसी सब अशुद्धिया दूर हो गई हैं। उन के कतिपय उदाहरण नीचे दिए जाते हैं :—

	पत्र पूर्णसख्या	पत्रस्थ अशुद्ध तिथि वा सवत्	यथार्थ तिथि वा संवत्
१	१३	चैत वदी ९	ज्येष्ठ वदी ९
२	९३	३१ अकटूवर	१३ अकटूवर
३	१२३	वैशाख सुदी २	वैशाख वदी २
४	१२४	१०-४-७८	१०-४-७९
५	१८३	आपाढ सुदी ६ सवत् १९३६	आषाढ वदी ६ संवत् १९३७
६	१८५	एप्रिल	जुलाई
७	२४३	सन् १८८०	१८८१
८	२५७	सन् १८८०	१८८१
९	२५८	७ मार्च	७ एप्रिल
१०	२६९	शु० ११	सुदी १०
११	२८५, २८७, २८८ २८९, २९२, २९४ २९५, २९८, ३०७ ३७१.	सवत् १९३८	सवत् १९३९
१२	३८२, ३८४, ३८८	सवत् १९३९	सवत् १९४०

पंचम लाभ

श्री स्वामी जी कई ऐसे नगरो मे गये जिनका जीवनचरितों मे उल्लेख ही नही है। पत्रो के तिथिक्रमानुसार लगने से ही जीवनचरितों की ऐसी त्रुटियां दूर हुई हैं। प्रामाणिक जीवनचरित मे अब ऐसी भूलें नही रहेंगी।

पत्रों में अयोग्य लेखकों के कारण भाषा और लेख की अनेक अशुद्धियां

पाठक देखेंगे कि महात्मा मुशीराम जी, प० चमूपति जी और स्व सम्पादित पहले भागो के सदृश हम ने लेखकों द्वारा की गई सब अशुद्धिया इस बृहत् पत्र-सग्रह मे भी वैसी ही रहने दी हैं। श्री स्वामी जी को पत्र लिखने अथवा लिखे गये पत्रों को पूरा शोधने का समय प्रायः नही मिलता था। धनाभाव के कारण उन को श्रेष्ठ लेखक नहीं मिल सके। इस के अतिरिक्त उस युग का मतवाद भी अच्छे लेखको की प्राप्ति के मार्ग मे बाधक था। यही कारण है कि इन पत्रो मे लेख की अनेक अशुद्धियां हैं। हम ने पत्रों को मुद्रित करते हुए यत्र-तत्र विरामादि तो दे दिए हैं; परन्तु लेख मूलवत् ही रहने दिया है। श्री स्वामी जी ऐसे प्रखर पण्डित को कैसी महती कठिनता मे ऐसे अल्पबुद्धि लेखको के साथ अपना महान् कार्य करना पड़ा यह इन अशुद्धियो से ही ज्ञात हो जायगा।

कृत्रिम पत्र

जात-पात तोड़ने की आड़ मे वेदमत के नाश करने वालों का एक दल लाहौर मे है। उसके प्रमुख सदस्यों के नाम सुप्रसिद्ध हैं। उन्ही मे से किसी वा किन्ही के परामर्श से हिन्दी-प्रताप कानपुर मे ऋषि के नाम से दो पत्र छापे गए। दूसरा पत्र १९ दिसम्बर सन् १९२६ को छपवाया गया था। इन दोनो पत्रों की भाषा श्री स्वामी जी की भाषा से सर्वथा भिन्न और वर्तमान काल की भाषा है। पत्रो का विषय श्रीस्वामी जी के सिद्धान्तों से सर्वथा विपरीत है। पत्रो मे ऐतिहासिक सत्यता के विपरीत कल्पना है। यथा दूसरा पत्र १९४० विक्रमी कात्तिक वदि प्रथमा(=१७ अक्टूबर सन् १८८३, बुधवार) को अजमेर से लिखा हुआ छापा गया है। उस दिन श्री स्वामी जी महाराज अजमेर मे नही थे। उन दिनो श्री स्वामी जी की अवस्था इतनी निर्बल थी कि वे बोलते भी नही थे। इस लिए जिस दल ने ये पत्र बनाए हैं, निश्चित होता है कि श्री स्वामी जी के इतिहास के विषय में उनका ज्ञान कुछ भी नही था। पूर्वप्रदर्शित

अनेक असत्यों के कारण इस दल के लोगो की मनोवृत्ति स्वयं स्पष्ट हो जाती है। इस प्रकार के कृत्रिम पत्रों से आर्यसमाज के हितैषी महाशयो को सदा सावधान रहना चाहिए। दु ख का विषय है कि सहस्रों आर्यसमाजी इस दल के सहायक हैं।

इन कृत्रिम पत्रों को प्रथम वार छपवाने वाला एक पडित अर्जुनदेव(गढ़वाली) कहा जाता है।[1] वह व्यक्ति पडित विश्वबन्धु एम०ए० शास्त्री का कभी शिष्य रहा है। पडित विश्वबन्धु वह ही व्यक्ति है, जिस ने वैद सम्बन्धी पाश्चात्य मत की दूषित और अनृत सरणि का अवलम्बन करके अनेक भोले भाले आर्यसमाजियों को आर्यसस्कृति का विरोधी वनाया और जो दयानन्द कालिज लाहौर में से ऋषि दयानन्द सरस्वती की रही सही भावनाओ की मृत्यु का एक निमित्त वना। इन्ही महाशय को सस्कृत का पण्डित मान कर और इन के मिथ्याकथन पर विश्वास करके दयानन्द कालेज की प्रबन्धकर्तृसभा के अधिकाश सदस्य आर्यविश्वासो से च्युत हुए।

सवत् १९९० की अजमेर निर्वाण-अर्धशताब्दी के समय प० विश्वबन्धु और लाला मूलराज ने एक दशप्रश्नी पुस्तिका छपवाई थी। उस मे भी श्री स्वामी जी के विरुद्ध कई वातें लिखी गई थी। पूछे जाने पर प० विश्वबन्धु जी ने लिखा कि उनका इस पुस्तिका से कोई सम्बन्ध नही है। ईश्वर सहायता से हमने इसी पुस्तिका के सम्बन्ध में राय मूलराज जी आदि तथा पं० विश्वबन्धु जी के हाथ का लिखा हुआ पत्र प्रकाशित कर दिया। तव जनता पर प० विश्वबन्धु का घृणित असत्य प्रकट हुआ। उन्ही प० विश्वबन्धु के साथी लोग श्री स्वामी जी के नाम पर अपनी मिथ्या रचनाए करें, इस मे क्या आश्चर्य है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती का सर्वप्रथम लेख

प० लेखराम जी लिखते हैं—

"स्वामी जी सम्वत् १९२० वैशाख के अन्त में मथुरा मे शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् आगरा की ओर गए।"[2]

"लगभग दो वर्ष तक आगरा में रहे। इस काल में समय २ पर पत्र द्वारा अथवा स्वय मिल कर स्वामी विरजानन्द जी से अपने सन्देह निवृत्त कर लिया करते थे।"[3]

---

१ ७ मार्च १९२१ को हम और म० मामराज कानपुर में प्रताप-कार्यालय में गए। वहा परलोक-गत श्री गणेशशङ्कर विद्यार्थी से इन जाली पत्रों के सम्बन्ध की सारी सामग्री ले आए थे। २ जीवनचरित, पृ० २९। ३ जीवनचरित, पृ० ३१।

श्री स्वामी जी स्वय लिखते हैं—

"फिर मथुरा से आगरा नगर मे दो वर्ष तक स्थिति किई। ... 'जहा २ मुझ को शका रह जाती थी उन का स्वामी जी से उत्तर यथावत् पाया।"[1]

आर्षग्रन्थो के महत्त्व को स्थापित करने वाले प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द और स्वामी दयानन्द सरस्वती का यह पत्रव्यवहार कितना अमूल्य होगा, इस का अनुमान विज्ञ पाठक स्वय कर सकते हैं। पर दुःख है, वह पत्रव्यवहार किसी ने सुरक्षित नहीं किया।

उस के कुछ पश्चात् श्री स्वामी जी ने भागवत खण्डन आरम्भ किया। प० लेखराम जी लिखते हैं—"उसी समय का लिखा हुआ एक भडवा भागवत का पुस्तक पण्डित छगनलाल वृद्धिचन्द जी से मुझे मिला है। जिसके अन्त मे सवत १९२३ दूसरा ज्येष्ठ तिथि वदी ९ (७ जून १८६६ बृहस्पतिवार) लिखा है।"[2]

प्रतीत होता है, यही भागवत खण्डन पुस्तक फिर छपवाया गया। प० लेखराम जी के अनुसार 'हरिद्वार के कुम्भ मेला पर मध्य मार्च सन् १८६७ से सहस्रो की संख्या में वितरण भी किया गया।'[3] प० लेखराम जी पुनः लिखने हैं—

"पाखण्ड खण्डन—यह पुस्तक ७ पृष्ठ सस्कृत भाषा मे स्वामी जी ने रचा। ... "अजमेर से लौट कर सम्वत् १९२३ के अन्त मे स्थान आगरा ज्वाला प्रकाश प्रेस मे पण्डित ज्वालाप्रसाद भार्गव के प्रवन्ध से कई सहस्र प्रतिया छपवाई। और वैशाख सम्वत् १९२४ के कुम्भ पर नि शुल्क वाटा गया।"[4]

यह पुस्तक उन का सर्वप्रथम उपलब्ध लेख है। इस का आरम्भ और अन्त नीचे मुद्रित किया जाता है—

भागवत खण्डन

श्रीमद्भागवतं पुराणं किमस्ति।कुतः सन्देहः॥ द्वे भागवते श्रूयेते। एकं देवीभागवतं द्वितीयं कृष्णभागवतञ्च।[5] अतोजायते सन्देहोऽनयोः किमस्ति व्यासकृतमिति॥ देवीभागवतं श्रीमद्भागवतमस्ति व्यासकृतञ्च नान्यत॥

---

१ इसी ग्रन्थ का विज्ञापन, पूर्णसख्या ७, पृ० २८। २ जीवनचरित, पृ० ४५।

३. जीवनचरित, पृ० ५१। ४ जीवनचरित, पृ० ७९०।

५. कृष्णभागवत का खण्डन स्वामी विरजानन्द जी भी करते थे। पूना व्याख्यान में श्री स्वामी जी कहते है—"विरजानन्द स्वामी भागवत आदि पुराणों का तो बहुत ही तिरस्कार करते थे।"

कुत एतत्। शुद्धत्वाद्वेदादिभ्यः अविरुद्धत्वाच्च। अत एव देवीभागवतस्य श्रीमद्भागवतसञ्ज्ञा नान्यस्य च भागवतस्य। कुत एतदशुद्धत्वात् प्रमत्त-गीतत्वाच्च। किञ्च तत्।

.. ..

ये तु पाषण्डिमतविश्वासिनस्तेऽपि पाषण्डिनः।

पाषण्डिनो विकर्म्मस्थान् वैडालव्रतिकान् शठान्। हैतुकान् वकवृत्तींश्च वाङ्मात्रेणापि नार्चयेदित्याह मनुः॥ अत एव वाङ्मात्रेणापि पाष-ण्डिभिस्सह व्यवहारो न कर्त्तव्यः॥ **पाषाणादिमूर्त्तिपूजनं पाषण्ड-मतमेव**॥ कुत एतत्॥ वेदादिभ्यो विरोधात्, यद्वाचानभ्युदितं येन वागभ्युद्यते॥ तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते।
यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम्॥ तदेव० ॥२॥
यत्प्राणेन न प्राणते येन प्राणः प्रणीयते॥ तदेव ॥३॥

इत्यादि श्रुतिभ्यः॥ अत एव पाषाणादिकर्त्रिम [कृत्रिम]मूर्त्ति-पूजनं वृथैव॥ अव्यक्तं व्यक्तमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः॥ इति भगवद्गीता-वचनात्॥ किं बहुना लेखनेनैतावत्तैव सज्जनैर्वेदितव्यं विदित्वाचरणीयमेव॥

दयानन्दसरस्वत्याख्येन स्वामिना निर्मितमिदं पत्रं वेदि-तव्यं विद्वद्भिरिति शुभं भवतु वक्तृभ्यश्श्रोतृभ्यश्च। वेदोपवेद-वेदाङ्ग-मनुस्मृति-महाभारत-हरिवंश-पुराणानां वाल्मीकिनिर्मितस्य रामाय-णस्य चाध्यापनमध्ययनं कर्त्तव्यं कारयितव्यञ्च॥ एतेषामेव श्रवणं कर्त्त-व्यमिति॥

इस लेख का कुछ पाठ हमने स्थूलाक्षरों में मुद्रित किया है। उस से ज्ञात होता है कि संवत् १९२३ के आरम्भ से पहले ही श्री स्वामी जी मूर्तिपूजा का खण्डन करने लग पडे थे। इस विषय में उन्होंने श्री स्वामी विरजानन्द जी की सम्मति अवश्य ली होगी। वस्तुतः वे मथुरावास के दिनों में भी मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं रखते थे।[1]

---

१ श्री स्वामी जी के सहाध्यायी प० युगलकिशोर जी कहते हैं कि "एक दिन विद्यार्थी अवस्था में ही हम से स्पष्ट कह दिया कि मूर्तिपूजा, कण्ठी, तिलक, छाप सब वर्जित हैं।" जीवनचरित पृ० २७॥

इसका खुला खण्डन उन्होंने आगरा-वास से आरम्भ किया। हां संवत् १९२३ के आरम्भ तक श्रीमद्भागवत के अतिरिक्त वे दूसरे पुराणों को परम्परागत विश्वास के कारण श्रवणमात्र से ही प्रामाणिक मानते थे। पूर्वमुद्रित लेख से यह स्पष्ट ही है।

वर्तमान पुराणों का परित्याग क्यों किया गया

इस के कुछ दिन पश्चात ही श्री स्वामी जी ने वर्तमान पुराणों का खण्डन भी आरम्भ कर दिया। संवत १९२६ में प्रामाणिक ग्रन्थो का जो विज्ञापन (पूर्ण-संख्या १) कानपुर मे दिया गया उस में पुराणों का नाम नही है। इस पवित्र भारत-भूमि पर जो भी धर्माचार्य मूर्तिपूजा के खण्डन में अग्रसर होगा, उसे पुराणो का परित्याग करना ही पड़ेगा। पुराणो मे 'घुणाक्षरन्याय' से कई बातें सच्ची मान कर भी ऋषि दयानन्द सरस्वती को इन का खण्डन करना ही पडा।[1] पुराण ही मूर्तिपूजा का मूल हैं। स्वामीजी की असाधारण दृष्टि और उनके सूक्ष्म अध्ययन ने सहसा देखलिया कि मूर्तिपूजा और वेदविरुद्ध समस्त सम्प्रदायों का मूल, वर्तमान पुराण-ग्रन्थ ही हैं। उस समय श्री स्वामी जी ऋषि पदवी की ओर जा रहे थे। उन्हे यह ज्ञान बहुत आरम्भ में हो गया। उन का सब से पहला उपलब्ध लेख इसी लिए महत्त्व का है कि इस से हमे विदित होता है कि ऋषि के जीवन मे विचार-धारा का विकास कैसे हुआ।

जब श्री स्वामी जी मथुरा से पढ़ कर निकले तो वे पुराणो को मानते थे। इन पुराणों का अध्ययन करने और उनका वेद से गम्भीर सन्तोलन करने पर उन्हे पता लगा कि वर्तमान पुराण ऋषियो से प्रयुक्त किए गए पुराण शब्द के अन्तर्गत नही आ सकते। इन वर्तमान पुराणो का संकलन गत दो तीन सहस्र वर्ष में ही हुआ है। अत. इन मे अधिकांश बातें उन्हे वेदविरुद्ध दिखाई दी। उस काल मे पण्डित लोग इन वेद-विरुद्ध बातो को पुराणो से ही सिद्ध करते थे। स्वामी दयानन्द सरस्वती इस बात को नही सह सके। और उन्होंने इन पुराणों का सर्वथा परित्याग कर दिया। इस विषय में भी उनका श्री विरजानन्द जी से विचार विनिमय हुआ ही होगा, पर नही कह सकते किस रूपमे।

पत्र कितनी भाषाओं में लिखे गए

ऋषि दयानन्द सरस्वती संस्कृत और आर्यभाषा के ही पण्डित थे। गुजराती उन की मातृभाषा थी। उर्दू और अंग्रेजी से वे सर्वथा अनभिज्ञ थे। पर मिलते हैं उन के पत्र इन पांच भाषाओं में ही। उन के संस्कृत पत्र और

---

1 सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास। पुराणखण्डन प्रकरण।

विज्ञापन प्राय. शुद्ध रूप मे हैं। सवत् १९२९ तक तो उन का सारा पत्रव्यवहार और सम्भाषण निश्चित ही सस्कृत मे था। तत्पश्चात् सवत् १९३० मे कलकत्ते से आकर उन्हों ने आर्यभाषा में भी बोलना आरम्भ कर दिया। आर्यभाषा के पत्र उस समय से आरम्भ हो गए होंगे। जो लोग सस्कृत अथवा आर्यभाषा नही जानते थे, उनके पत्रों का उत्तर भी श्री स्वामी जी आर्यभाषा मे ही बोलते अथवा लिखवाते थे। फिर वह उत्तर उर्दू अथवा अग्रेजी मे अनुवादित होकर भेजा जाता था। कर्नल आल्काट तथा मैडेम ब्लेवेट्स्की के पत्र अग्रेजी में अनुवाद करा के भेजे जाते थे। गुजराती भाषा का एक ही पत्र इस सग्रह में पूर्णसख्या ३११ पर छपा है। वह पत्र श्री स्वामी जी की अनुमति से ही लिखा गया है। सभव है वह गुजराती भाषा भी श्री स्वामी जी की ही हो।

पत्र और विज्ञापनों में ऋषि के उज्ज्वल विचार

१—भारत की भाषा संस्कृत

अनेक पत्रो तथा विज्ञापनो मे यह विषय अत्यन्त स्पष्ट मिलता है। उन पत्रो का तथा उनके अन्तर्गत वचनो का क्रमश प्रदर्शन नीचे किया जाता है—

पूर्णसख्या [१] वेदों का पढ़ना द्वितीय सत्य है।

[६] इस आर्य-विद्यालय से · आर्यावर्त्त देश की उन्नति होगी।

[७] (क) सस्कृत विद्या की ऋषि मुनियो की रीति से प्रवृत्ति कराना।

(ख) सनातन सस्कृत विद्या का उद्धार।

(ग) आर्यावर्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या सस्कृत ही है। उसी से इस देश का कल्याण होगा। अन्य भाषा से नहीं।

[३०] यदि वेद का ज्ञान सारे देश में फैला दिया जाय तो भारत में से अज्ञानान्धकार एक दिन नष्ट हो जायगा।

[५५] वेदभाष्य का अनुवाद अग्रेजी अथवा प्रान्तीय भाषा मे नही होना चाहिए। 'यदि अग्रेजी अथवा उर्दू मे वेदभाष्य का अनुवाद किया जायगा तो सस्कृत पढ़ने के प्रति जनता का उत्साह मन्द हो जायगा।

[६३] (क) सस्कृत विद्या की उन्नति करनी चाहिए।

(ख) प्राचीन आर्षग्रथो के ज्ञान से विना किसी को संस्कृत विद्या का यथार्थ फल नही हो सकता।

[११३] जैसा "आर्यसमाजों के सभासद करते और कराना चाहते हैं कि संस्कृत विद्या के जानने वाले स्वदेशियों की बढ़ती के अभिलाषी "।

[११९] मुझे यह सुन कर बहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य्य-संस्कृत-पाठशाला का यत्न कर रहे हैं। १६ मार्च १८७९।

[१२०] उन्होंने (ब्लेवेट्स्की और अलकाट ने) संस्कृत पढ़ने का आरम्भ किया है वा नहीं। २६ मार्च १८७९।

[१२७] आप के संस्कृत पाठशाला खोलने का विचार सुन कर मुझे बहुत हर्ष है। २४ एप्रिल १८७९।

[१३८] कल्पना करो कि इन सब का सन्तोषजनक प्रबन्ध हो भी जाय, परन्तु इससे सब से बड़ी हानि यह होगी कि मेरे वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद के प्रकाशित होने पर भारतीय आर्य संस्कृत और भाषा को पढ़ना छोड़ देंगे जिसे कि वे आर्य वेदभाष्य को समझने के लिए आजकल उत्साह के साथ पढ़ रहे हैं। और यही मेरा मुख्य उद्देश्य है।

[२६२] इस पाठशाला में अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रहना चाहिये। और इसमें केवल लड़के ही पढ़ते हैं अथवा हमारे रईस लोगों में से भी कोई पढ़ता है?

[२६३] आप लोगों की पाठशाला में आर्यभाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अर्थात् अंग्रेजी व उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिसके लिए यह शाला खोली गई है, सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन् आपका यह हजारह मुद्रा का व्यय संस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है। " " आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्यावर्त में संस्कृतविद्या का अभाव हो रहा है, वरन् संस्कृत रूपी मातृभाषा की जगह अंग्रेजी लोगों की मातृभाषा हो चली है। ... हमारी अति प्राचीन मातृभाषा संस्कृत जिसका सहायक वर्तमान में कोई नहीं है " "।

[२६५] .. ..संस्कृत की उन्नति होनी, सो इस पर अच्छे प्रकार ध्यान रहे।

[२६६] इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उसको ही वृद्धि देना चाहिए।

[३८०] तुम्हारी पाठशाला मे अलिफ वे और कैट वैट का धर्मार है, जो कि आर्यसमाजो को विशेष कर्तव्य नही है।

[३९०] ७–सदा सनातन वेद शास्त्र, आर्यराज, राजपुरुषो की नीति पर निश्चित रह कर उनकी उन्नति तन मन धन से सदा किया करें। इन से विरुद्ध भाषाओं की प्रवृत्ति वा उन्नति न करें वा करावें। किन्तु जितना दूसरे राज्य के सम्बन्ध मे यदि वे इस भाषा को न समझ सकें, उतने ही के लिए उन भाषाओं का यत्न रखें, जो वह प्रवल राज्य हो।

पूर्वोद्धृत वचनो मे सस्कृत के प्रति ऋषि दयानन्द सरस्वती के उद्गारो का एक स्पष्ट चित्र दृष्टिगोचर होता है। श्री स्वामी जी के अनुसार—

(क) सस्कृत भारत की मातृभाषा है। अथवा आर्यावर्त की स्वाभाविक सनातन विद्या सस्कृत ही है।

(ख) सस्कृत पढ़ कर सब आर्यावर्तीय लोगों को आर्षग्रन्थों का अभ्यास करना चाहिए।

(ग) वर्तमान काल मे सस्कृत के अतिरिक्त अंग्रेजी आदि भाषाओ पर आर्यसमाज का धन व्यय नही होना चाहिए।

(घ) आर्य राजाओं को सस्कृत की ही उन्नति करनी चाहिए। उन्हे अपने राज्यों में सस्कृत से विभिन्न भाषाओ का आदर मान न करना चाहिए।

(ङ) सस्कृत से ही भारत और मनुष्य-मात्र का कल्याण होगा।

(च) अग्रेजी लोगो की मातृभाषा हो चली हं । इस का प्रतिकार करना चाहिए।

आर्यसस्कृति के इस सर्वथा विद्वेषी भयानक काल मे, आर्य-सस्कृति के अनन्य भक्त ऋषि दयानन्द सरस्वती के सस्कृतभाषा सम्बन्धी ये उद्दाम विचार अत्यन्त स्पष्ट हैं। इन विचारो मे एक अपरिमित शक्ति, एक प्रवल प्रवाह, और एक अनुपम रस है। इन्ही गम्भीर और पूर्ण सत्य विचारों की छाया ऋषि दयानन्द सरस्वती रचित ग्रन्थो मे भी दृष्टिगत होती है। भारत और भारतीय संस्कृति के उद्धार के निमित्त ये सत्य विचार वर्तमान भारत के किसी भी सुधारक या नेता को नहीं सूझे। इन विचारो को श्री मोहनदास कर्मचन्द गांधी और श्री जवाहरलाल भी प्रकट नही कर सके। वे ऐसा करें भी कैसे। वे तो सस्कृतभाषा के वैभव से अनभिज्ञ हैं, और वेद-विद्या-विहीन हैं। वे भारतीय तत्त्व को नही समझते।

श्री गान्धी जी ने एक दो स्थानो पर लिखा है कि प्रत्येक हिन्दू को सस्कृत पढ़नी चाहिए। परन्तु यह उनका कथन ही रहा है। उनका स्वीकृत किया हुआ उत्तराधिकारी श्री जवाहर लाल सस्कृत-ज्ञान-शून्य है। उनके अन्य साथी भी सस्कृत से विमुख हैं। इस के साथ यह भी विचारणीय है कि जो भापा व्यवहार मे नही आती वह मृतप्राय हो जाती है। इस लिए व्यवहार मे 'हिन्दुस्तानी भापा' को प्रचरित करने वाले श्री गान्धी जी सस्कृत को मृतप्राय ही वनावेंगे। उनका कहना कथनमात्र ही रहेगा। यदि वे सत्य से थोडा सा भी प्रेम रखते हैं तो उन्हे निज हठ छोड कर यह मानना चाहिए कि भारतीयो के लिए सस्कृत पढ़ना ही आवश्यक नहीं, प्रत्युत सस्कृत को शिष्ट-व्यवहार की भापा वनाना भी आवश्यक है। अतः श्री गान्धी जी को ऋषि दयानन्द सरस्वती का अनुकरण करना चाहिए।

ऐसी अवस्था मे अग्रेजी शिक्षा प्रभावित पाश्चात्य विचार का उच्छिष्टभोजी, भारतीय इतिहास और सस्कृति का अणुमात्र-ज्ञान न रखने वाला एक भोला भारतीय नव-युवक प्रश्न करता है—

(प्रश्न) क्या भारत की भापा कभी सस्कृत भी रही है।

(उत्तर) सतयुग, त्रेता और द्वापर मे भारत की भापा सस्कृत ही थी। गत जलप्लावन के पश्चात् और इस सतयुग के आरम्भ मे प्रथम प्रवक्ता श्री ब्रह्मा जी ने वेद और समस्त शास्त्रो का उपदेश कर दिया। शास्त्रों का उपदेश सस्कृत मे ही था। वे शास्त्र सम्पूर्ण उपयोगी ज्ञान का भण्डार थे। उनकी शब्दराशि विपुल थी। ससार की समस्त भाषाएं उसी विपुल सस्कृत शब्दराशि का अपभ्रंश हैं। ब्रह्मा जी द्वारा पढाई गई संस्कृत ही सतयुग मे मनुष्यमात्र की भापा थी। तब सारी सृष्टि ही ब्राह्मणरूप थी। अपभ्रंश भाषाए सतयुग के पश्चात् वनने लगी।[1]

द्वापरान्त अर्थात् भारतयुद्ध-काल मे भारतयुद्ध मे भाग लेने वाले राजगण भी जब वेदविद्यायुक्त थे, तब सस्कृत की बात ही क्या। देखिए—

सर्वे वेदविदः शूराः सर्वे सुचरितव्रताः। उद्योगपर्व १४९। ६॥

कलियुग के कई सौ वर्ष जाने पर भी भारत की भाषा सस्कृत ही थी। आचार्य यास्क, जो भारत युद्ध के कुछ काल पश्चात् हुआ सस्कृत को ही भाषा अर्थात् बोल चाल की भाषा लिखता है—

---

१. इस विषय का सप्रमाण विस्तृत वर्णन हमारे रचे भारतवर्ष का इतिहास भाग द्वितिय में है।

इवेति भाषायां च अन्वध्यायं च । निरुक्त १ । ४ ॥

नूनमिति विचिकित्सार्थीयो भाषायाम् । उभयम् अन्वध्यायं विचिकित्सार्थीयश्च पदपूरणश्च । निरुक्त १ । ५ ॥

आचार्य पाणिनि भी जो उन्ही दिनो हुआ, सस्कृत को ही भाषा लिखता है–

भाषायां सदवसश्रुवः । ३ । २ । १०८ ॥

सख्यशिश्वीति भाषायाम् । ४ । १ । ६२ ॥

भारत-युद्ध के लगभग १३०० वर्ष पश्चात् भारत भूमि पर तथागत बुद्ध और जैन तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी का प्रादुर्भाव हुआ । इन आचार्यों ने ही सर्व प्रथम प्राकृत का आश्रय लिया । यह बात सकारण ही थी । अधिकांश विद्वान् लोग इन की बात न सुनते थे । अत. इन आचार्यों ने निम्नश्रेणी के मूर्ख लोगो को ही अपना सन्देश देना आरम्भ किया ।[1] वह सन्देश स्वभावत. प्राकृत मे था ।[1] परन्तु इन आचार्यों के उत्तराधिकारी भी प्राकृत को सदा के लिए अपना नही सके । उन्हें भी कालान्तर मे सस्कृत का ही आश्रय लेना पड़ा । सस्कृत के इस पुनरुद्धार का युग शुङ्ग और गुप्त महाराजाओं का युग था । इन में से श्री चन्द्रगुप्त-विक्रमादित्य साहसाङ्क ने तो भारत को पुन· सस्कृतभाषा-भाषी बना दिया । इसका साक्ष्य भोजराज के निम्न-लिखित वचन में मिलता है—

काले श्रीसाहसाङ्कस्य के न संस्कृतवादिनः । सरस्वतीकण्ठाभरण अलङ्कार ।

इन सम्राटो के शिलालेख भी काव्यमयी सस्कृत में हैं । इस से प्रमाणित होता है कि तब सस्कृत का प्रचार एक बार पुन. बहुत वृद्धि को प्राप्त हो गया था ।

गुप्त सम्राटो के काल से लेकर दिल्लीपति महाराज पृथ्वीराज के काल तक के शतश ताम्रपत्र उत्तरभारत मे मिल चुके हैं । उन सब की भाषा सस्कृत ही है । गुप्तो से स्थाण्वीश्वरपति महाराज हर्षवर्धन तक संस्कृत भाषा का पूरा प्राबल्य था ।

---

१ छठी शताब्दी विक्रम के जैन आचार्य श्री हरिभद्र सूरी ने एक पुराना पद्य दशवैकालिक टीका पृ० १०१ पर उद्धृत किया है—

वाल-स्त्री-मूढ-मूर्खाणा नृणा चारित्रकाङ्क्षिणाम् ।
अनुग्रहार्थं तत्त्वज्ञै सिद्धान्तः प्राकृत स्मृत ॥

अर्थात्—वाल, स्त्री और मूढों के लिए जैन सिद्धान्त प्राकृत में दिया गया ।

अपभ्रंश भाषाएं प्रचलित तो थी, पर साम्राज्य संस्कृत का ही था। चीनी यात्री ह्यूनत्सांग को जो हर्षवर्धन के काल मे भारत-भ्रमण कर रहा था नालन्दा में रह कर संस्कृताध्ययन करना पड़ा। उसके कुछ काल पश्चात् चीनी यात्री इत्सिंग भारत मे आया। उसने तत्कालीन संस्कृत अध्ययनाध्यापन-प्रणाली का एक स्पष्ट चित्र अपने ग्रन्थ मे खींचा है। उसके चिर-अनन्तर अर्थात् पृथ्वीराज के काल तक भी संस्कृत ही भारत की भाषा रही।

फिर भारत पर मुसलमानों का आक्रमण आरम्भ हुआ। ये लोग प्रायः विद्या-द्वेषी रहे हैं। इन्हो ने ही सिकन्दरियां का योरुप-विख्यात पुस्तकालय जलाया था। इन्हो ने उत्तर भारत के अनेक पुस्तक-भण्डार नष्ट किए। उस समय भारतीय जातीयता रुग्णावस्था मे थी। कोई योग्य चिकित्सक उस रोग का निदान और औषध करने वाला नही हुआ। अत बहुत काल तक तो दिल्ली आदि का ही प्रदेश और फिर मुग़लकाल से देश का अधिकाश भाग मुसलमानो के अधीन होगया, पर आर्य-संस्कृति की थोड़ी सी रक्षा यहा के ब्राह्मण और क्षत्रिय आदि करते ही रहे। उस दयनीय काल मे फारसी का प्रचार बहुत बढ़ा। उस दु खद अवस्था को देख कर वीराग्रगण्य श्री गुरुगोविन्द सिंह जी ने भी निम्नलिखित पद मे निराशा ही प्रकट की—

म्लेच्छ भाख जब सब पढ़ गए।
सुमारग छोड़ कुमारग पए॥

गत दो सौ वर्ष से अंग्रेजी शासन भारत पर होने लगा। उसका प्रभाव दिन-दिन अधिक हुआ। मुसलमानी शासन ने तो राजनीतिक दासता ही दी थी, पर अंग्रेजी शासन ने मानसिक-दासता भी उत्पन्न की। आर्यजाति का रोग बढ़ता ही गया। ऐसी दीन-हीन दशा में अंग्रेजी-शासन-काल मे संस्कृतभाषा पर सब से अधिक कुठाराघात हुआ। इसी महान विपत्ति-काल में जिस बात को राजा राममोहन राय, श्री केशवचन्द्र सेन, श्री गोपालकृष्ण गोखले आदि भी न समझ पाए और जिसे श्री मोहनदास कर्मचन्द गान्धी और श्री जवाहर लाल अब भी अनुभव नही कर रहे, वही बात, हा भारतीय रोग की चिकित्सा का वही एक मूल-मन्त्र ईश्वर ने एक ऐसे व्यक्ति के लिए रख छोड़ा था, जिस पर अंग्रेजी भाषा का अणुमात्र प्रभाव भी नही पड़ा था। उसी महापुरुष और भारतीय सामाजिक, मानसिक और राजनीतिक दु साध्य रोग के सच्चे चिकित्सक दयानन्द सरस्वती ने पुन. यह बात जगाई,

उसी वाल ब्रह्मचारी ने पुन अपना सिंहनाद किया कि भारत की एकमात्र भापा संस्कृत ही है।

(प्रश्न) यह सव सत्य है, पर इतनी समस्या अवश्य है कि संस्कृत नाटको में देवियों के कथोपकथन प्राकृत में क्यो लिखे गए हैं। भारतयुद्ध-काल से वहुत पूर्व के भरत मुनि ने भी रूपक के वर्णन मे यही मत स्वीकार किया है।

(उत्तर) जिस प्रकार वर्तमान काल में इङ्गलेण्ड देश की साहित्यिक भापा एक विशेप प्रकार की अग्रेजी है, जिसे वहां का केवल शिष्ट-समाज ही वोलता है, और जन-साधारण की व्यवहार की भापा गोराशाही अग्रेजी कहाती है, ठीक उसी प्रकार भारत में सम्कृतभापा की दशा रही है। भारत की अधिक जनता शिष्ट ही थी अतः यहा साहित्यिक सस्कृत का वहुत प्रचार था, परन्तु निम्नश्रेणी के लोग और प्राय. देविया उच्चकोटि की शिष्ट-भापा नही वोल सकती थी। अधिकांश कन्याओ का विवाह लगभग पन्द्रह, सोलह वर्प की आयु में हो जाता था। इस कारण उनका अध्ययन थोड़ा ही रहता था। सुलभा, मैत्रेयी और गार्गी आदि सदृश अल्पसख्यक देवियां तो साहित्यिक संस्कृत ही वोलती थी। इसी लिए भारतीय नाटककारो ने उन के लिए भी स्थान रखा है। पदवाक्यप्रमाणज्ञ भवभूति-रचित उत्तर रामचरित में आत्रेयी और वासन्ती तथा उन्ही के मालतीमाधव में कामन्दकी आदि देविया सस्कृत ही वोलती हैं। परन्तु अन्य देविया साहित्यिक सस्कृत भापण मे इतनी कृतश्रमा न होती थी। अल्प अध्ययन के कारण उनका सस्कृत शब्दो का उच्चारण दोपयुक्त हो जाता था। उनकी यही अपरिमार्जित और उच्चारण-दोप-वहुला सस्कृतभापा ही प्राकृतभापा वनी। इसी लिए पुरातन नाटको में निम्नश्रेणी के लोगों की और प्रायः स्त्रियो की भापा प्राकृत ही रही है।

सस्कृत नाटकों मे स्त्रियों आदि की भापा प्राकृत होने का एक और भी कारण है। भारतीय नाटक नट और नटियों द्वारा ही खेले जाते थे। स्त्री पात्राओं का अभिनय स्त्रियां ही करती थी। नट श्रेणी की स्त्रियां अर्थात् नटिया शिष्ट संस्कृत मे कृताभ्यासा न होती थीं। वे वाल्यावस्था से ही गृहकार्य के अतिरिक्त अभिनय का काम करने लग पड़ती थी। अत: उच्च सस्कृताध्ययन की न तो उनकी रुचि रहती थी और न उन्हें उसकी सुविधा ही थी। सस्कृत-भापण करते हुए वे अशुद्धिया न करें, इस लिए भी सामान्य रूप से स्त्री-पात्राओ की भापा प्राकृत ही हो गई। जव नटियो में से आत्रेयी आदि का अभिनय करने वाली

संस्कृत-भाषा-भाषण-समर्था नटियां खोजी अथवा शिक्षित की जाती थी, तो पर्याप्त कष्ट होता था अतः सस्कृत नाटको मे आत्रेयी आदि सदृश स्त्रीपात्राए न्यून ही हैं। इतने पर भी यह निश्चित है कि जन-साधारण और देविया भी सस्कृत समझने मे पूर्ण समर्था थी। अत. भारत की एकमात्र भापा सस्कृत ही रही है, इसमे किंचित् भी सन्देह नही। इङ्गलेण्ड मे लाखो श्रमजीवी और ग्रामीण स्त्रिया गोराशाही अंग्रेजी ही वोलते है, पर इङ्गलेण्ड की भापा अंग्रेजी ही है, ऐसा कहने मे किसी को सकोच नही। फिर भारत की भापा सस्कृत थी, ऐसा कहने मे कोई सकोच क्यो करे।

(प्रश्न) भारत मे सस्कृत तथा आर्षग्रन्थ प्रचार की जो उद्दाम तरङ्ग ऋषि दयानन्द सरस्वती ने उत्पन्न की थी, उसे ऋपि-स्थापित आर्यसमाज स्थिर क्यो नही रख सका।

(उत्तर) आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल के जो कार्यकर्ता थे, उन्हे तो संस्कृत-महत्त्व का कुछ ज्ञान था। प० गोपलराव हरि देशमुख जज, प० गोपाल राव फरुखाबादी, पं० गुरुदत्त, ला० हसराज और ला० मुशीराम आदि कार्यकर्ताओं ने संस्कृत का अभ्यास किया।

इन मे से पहले दो तो सस्कृत के अच्छे पण्डित थे। पं० गुरुदत्त के संस्कृत-प्रेम की कोई सीमा न थी। ला० हसराज और ला० मुशीराम ने थोडा २ सस्कृत का अभ्यास किया। इनसे अतिरिक्त इनके कुछ उत्तरकालीन आर्य प्रचारक स्वामी अच्युतानन्द, स्वामी दर्शनानन्द, पण्डित गणपति शर्मा, पं० आर्य्यमुनि, प० शिवशंकर काव्यतीर्थ और पं० रुद्रदत्त जी आदि संस्कृत के अच्छे पण्डित थे। परन्तु ये महाशय आर्यसमाज की संस्थाओ और समाजो आदि के प्रवन्धक न थे। पञ्जाव के कालेज अथवा गुरुकुल दल मे ला० हसराज और ला० मुशीराम जी के पश्चात् जितने भी प्रवन्धक और अधिकारी हुए अथवा हैं, वे सव अंग्रेजी-प्रभाव-प्रभावित, सस्कृत-ज्ञान-शून्य धनार्थी लोग हैं। यदि इन मे कुछ दिन के लिये कभी कोई संस्कृतज्ञ, ऋषिभक्त हुआ भी है, तो उसे घुणाक्षरन्याय का फल समझना चाहिए। इन अंग्रेजी और उर्दू के उच्छिष्टभोजी लोगो को सस्कृत से क्या प्रेम हो सकता है। संयुक्त प्रान्त आदि में भी आर्यसमाज के कार्य के प्रबन्धको की प्रायः यही अवस्था है। इसी लिए दु.ख से कहना पड़ता है कि अपने अनुगामियों के विश्वास-शून्य होने के कारण ऋषि की उत्पन्न की हुई तरंग का वेग मन्द सा पड़ रहा है।

(प्रश्न) कालेज दल तो अपने अंग्रेजी स्कूलो के जाल के कारण उसी में फसा हुआ सस्कृत का प्रेम खो बैठा था, क्या गुरुकुल दल भी वैसा ही हो गया है ?

(उत्तर) हां, गुरुकुल दल भी अब वैसा ही हो रहा है। जिस प्रकार दयानन्द कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा के अनेक प्रधान और सदस्य सस्कृत न जानने के कारण संस्कृत-प्रेम से वस्तुतः रिक्त हुए हैं, वैसे ही बहुत दिन से अब गुरुकुल दल की भी अवस्था हो रही है। गुरुकुल दल में से महात्मा मुशीराम जी का धक्का समाप्त हो चुका है। गुरुकुल दल की सभा मे सस्कृत-ज्ञान रखने वाले जो दो चार सदस्य हैं, उन की बात कोई सुनता नही। इस का फल स्पष्ट है। गुरुकुल की पाठ-प्रणाली पूरी सफल नही हो सकी । गुरुकुल के अनेक सचालको को गुरुकुल में विश्वास न रहा था। उन्हो ने अपने पुत्र, पौत्र वहा नही पढ़ाए । गुरुकुल के अनेक उपाध्याय अपने पुत्रो को अंग्रेजी कालेजो में पढ़ाते रहे हैं। और अब तो ऐसे लोगो की सख्या इस दल में वृद्धि पर ही है। आचार्य रामदेव जी यद्यपि सस्कृत के पण्डित न थे, पर उनकी अटूट ऋषि-भक्ति के दिन भी अब गए। अब तो गुरुकुल दल भी अपने स्कूलो द्वारा पाश्चात्य सभ्यता की जडों को दृढ़ करने का एक साधनमात्र बन गया है।

(प्रश्न) ऐसी निराशामयी निशा मे, अन्धकार की इस घोर रात्रि मे, स्वार्थ की इस प्रवृद्धा रजनी मे क्या कही त्याग, उत्साह और ज्ञान की आशारश्मि दृष्टिगत हो सकती है ? क्या सस्कृतभाषा पुनर्जीवित हो जाएगी ?

(उत्तर) हा आशारश्मि दिखती है। पर उसके सूर्य का उदय भगीरथ प्रयत्न के अनन्तर ही होगा। सस्कृत पुनर्जीवित होगी, ऐसा हमारा अटल विश्वास है। ऋषि के चरणचिन्हों पर चलते हुए इस जन्म का गत भाग हमने इसी निमित्त अर्पण किया है। हमारा निश्चय है कि सस्कृत भारत की भाषा है, और भारत इसे अपनाएगा। दासता की शृङ्खला मे शृङ्खलित भारतीय अंग्रेजी और हिन्दुस्तानी का चाहे कितना ही पक्ष करलें, पर एक बार तो आर्य-वैभव दृष्टिगोचर होगा और शीघ्र होगा। इस के लिए निम्नलिखित उपाय करने होगे।

१ प्रत्येक आर्यसमाज के सब अधिकारी श्रेष्ठ संस्कृत-ज्ञान-युक्त होने चाहिए।

२ आर्यसमाजो का लेख आदि का सब काम सस्कृत-मिश्रित आर्यभाषा में होना चाहिए।

३. आर्यप्रतिनिधि सभाओ के समस्त सदस्यो को संस्कृत बोलने का अभ्यास होना चाहिए।

४ सार्वदेशिक सभा के सब सदस्य सस्कृत के विद्वान् होने चाहिए ।

५ आर्यसमाज का सकल उपदेशक मण्डल सस्कृत और आर्षग्रन्थो का प्रौढ पण्डित होना चाहिये ।

६ पूर्वोक्त पांच बातो को चलाने के लिये परोपकारिणी सभा अथवा सार्वदेशिक सभा को सस्कृत और आर्षविद्या की कुछ परीक्षाएं चलानी पड़ेंगी । विशेष परीक्षाओ मे उत्तीर्ण भाई ही आर्यसमाजों के अधिकारी आदि बनेंगे। इस से वृथा कलह भी थोडी सी शान्त हो जायगी और पदलिप्सु लोग आर्यसमाज के सेवक रह सकेंगे, अधिकारी नही ।

७ आर्यसमाज को वे सब सस्थाए तत्काल बन्द कर देनी चाहिएं, जो छः घण्टे के अध्यापन मे ३ या ४ घण्टे सस्कृत और आर्ष-ग्रन्थ नहीं पढ़ाती ।

८. यदि वर्तमान अधिकारी ऐसी सस्थाओ को बन्द न करें, तो किसी भी आर्य-पुरुष को ऐसी सस्था को भविष्य मे एक कौड़ी भी दान न देना चाहिए ।

९. आर्यसमाज और समस्त भारतीय आर्यों को यह राजनीतिक आन्दोलन करना चाहिए कि भारत की भाषा सस्कृत है ।

१०. परोपकारिणी सभा को वैदिक यन्त्रालय मे अन्य सब मुद्रण काम बन्द कर के आर्ष-ग्रन्थ और श्री स्वामी जी के ग्रन्थ ही छापने चाहिए । इन ग्रन्थो का मूल्य अत्यल्प रखना चाहिए ।

११ भारत मे न्यून से न्यून एक सहस्र सस्कृत पुस्तकालय स्थापित होने चाहिए। उनमे संस्कृत के समस्त ग्रन्थ सग्रहीत होने चाहिए । जो २ नए ग्रन्थ छपते जाए वे भी तत्काल वहां मगाए जाए ।

१२ आर्यसमाज और आर्यमात्र को शिक्षा के लिए केवल सस्कृत विद्यालय ही खोलने चाहिएं। पुरातन काल मे यह काम आर्य राजाओ की सहायता से होता था। उन के दान के शासनपत्र इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं । अब यह काम भारतीय जनता को करना होगा ।

१३ भारत के देशी राज्यो की जहा और त्रुटियां दूर करनी होगी वहां उन राज्यो में से अग्रेजी भाषा के प्रभुत्व का दूर कराना भी एक आवश्यक अभीष्ट हो रहा है । इन राज्यों के कार्यालयो मे सब व्यवहार सस्कृत और आर्यभाषा मे कराने चाहिए। इन मे आयुर्वेद के ही आतुरालय होने चाहिए । वहां सैकड़ो लोग आयुर्वेद पढ़ने के लिए भी सस्कृत पढ़ेंगे ।

१४. इस सतयुग के आदि मे श्री ब्रह्मा जी ने सस्कृत मे ही समस्त विद्याओं का उपदेश दिया । उन सब विद्याओं का अब भी उद्धार हो सकता है । इस के लिए

वैदिक अनुसन्धान के अनेक बृहत् केन्द्र स्थापित होने चाहिएं। उनके अध्यक्ष और कार्यकर्ता वेद, वेदाङ्ग, उपवेद, दर्शन, इतिहास, प्राचीन और नवीन भूगोल तथा पश्चिमीय लेखकों द्वारा उत्पन्न किए गए सब पूर्व-पक्षों के विशेषज्ञ होने चाहिए।

१५ लाखों रुपये व्यय करके भारत के उन घरों की खोज करनी चाहिए जहां अब भी अलभ्य हस्तलिखित संस्कृत ग्रन्थ सुरक्षित है। उन ग्रन्थों को एकत्र और सुसम्पादित करके शीघ्र मुद्रित करना चाहिए।

१६ भारतीय जनता को किसी ऐसे व्यक्ति को अपना धार्मिक या राजनीतिक नेता नहीं बनाना चाहिए जो संस्कृतविद्या-सम्पन्न आर्यशास्त्र-प्रवीण और आस्तिक अर्थात् वेद-विश्वासी न हो। ब्रह्मा जी, कपिल, सनत्कुमार, कृष्णद्वैपायन वेदव्यास, कुमारिल भट्ट, शङ्कराचार्य, दयानन्दसरस्वती आदि हमारे धार्मिक नेता हुए हैं। ब्रह्माजी, स्वायम्भव मनु, वैवस्वत मनु, इक्ष्वाकु, ययाति, मान्धाता, भरत चक्रवर्ती, दाशरथि राम, देवकीपुत्र कृष्ण, समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, और दयानन्द सरस्वती आदि हमारे राजनीतिक नेता हो चुके हैं। ये सब महात्मा, महानुभाव संस्कृत के विख्यात पण्डित थे। वे ही आर्यावर्त के यथार्थ पथ-प्रदर्शक थे।

१७ उत्तर भारत की प्रान्तीय-भाषाओं यथा—पञ्जाबी, मारवाडी, गुजराती, मराठी और बंगला आदि में जो अर्बी, फारसी और अंग्रेजी आदि के व्यर्थ शब्द सम्मिलित हो गये हैं, उन्हें प्रयोग में नहीं लाना चाहिए और अपनी प्रान्तीय भाषाओं की शुद्धि करनी चाहिए। उदाहरणार्थ—अगर, रब्ब, बरकत, काफी, बिल्कुल, मगर, लेकिन, टाईम, लैकचर आदि।

(प्रश्न) विदेशी भाषाओं के जो शब्द हमारी व्यावहारिक भाषाओं का अङ्ग बन गए हैं, उन्हें बाहर निकालना व्यर्थ है। अब तो वे हमारे हो गए हैं।

(उत्तर) जिस प्रकार नख और केश हमारे शरीर के अङ्ग सङ्ग होते हैं और हमारे शरीर में ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं, तथापि उन्हें निरर्थक समझ कर हम समय समय पर उनका छेदन कराते रहते हैं, इसी प्रकार भारतीय दासता के काल में अपनी भाषा में मिले हुए विदेशी शब्दों का बहिष्कार बुरा नहीं प्रत्युत पुण्य का कार्य है। जब हमारे पास यदि, ईश्वर, प्रथम, पर्याप्त, सर्वथा, परन्तु, समय और व्याख्यान आदि शब्द विद्यमान हैं, तो हम विदेशी अपभ्रंश शब्दों का प्रयोग क्यों करें। हां जो शब्द अभी वर्त्तमान संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध नहीं

हुए, उनके स्थान मे विदेशी शब्दो का प्रयोग कुछ काल के लिए कर लिया जाए तो इतनी हानि नही है। तनिक विचारो, यदि हम आर्य लोग संस्कृत शब्दों का अधिक प्रयोग नहीं करेंगे, तो और कौन करेगा। सस्कृत शब्दों का प्रयोग न करना तो मानव-जाति-द्रोह और भारत-देश-द्रोह करना है।

(प्रश्न) अनेक कथित आर्यसमाजी और जवाहर लाल जी आदि कांग्रेस-पक्ष वाले कहते हैं कि आर्यभाषा मे सस्कृत शब्दो की भरमार नहीं करनी चाहिए। क्या उनका कथन भी संगत नही।

(उत्तर) हां, उनका कथन भी सगत नही। उनका कथन तो भ्रान्तिपूर्ण है। उन के ऐसे कथन का कारण है उनका पाश्चात्य-शिक्षा की दासता मे पलना। क्या सस्कृत आर्यजाति की भाषा नही है, क्या सस्कृत से भारत की सब भाषाएं नहीं निकली हैं, क्या सस्कृत इस देश से सहस्रो वर्ष से सम्बद्ध नही रही है, क्या सस्कृत की इस दीन-हीन दशा में भी बीस सहस्र सस्कृत ग्रन्थ उपलब्ध नही हो रहे, क्या पुरातन रीति पर चलने वाले समस्त आर्य-परिवारों मे विवाह सम्बन्धी साहे चिट्ठी अब भी सस्कृत में नही भेजी जाती, क्या संस्कृत भाषा के स्रोत वेद-मन्त्रो द्वारा ही सब आर्यों के सस्कार आदि नहीं होते,[1] तो फिर जवाहरलाल जी आदि अंग्रेजी-मात्र पढ़े लिखे लोगों की संस्कृत से उदासीनता एक अज्ञानमात्र ही है। सस्कृत शब्द ही ससार-मात्र की भाषाओं के मूल शब्द हैं, अतः म्लेच्छ=अव्यक्त तथा अपभ्रश शब्दो के स्थान मे सस्कृत शब्दों का प्रयोग स्वर्ग का देने वाला है।

१८ व्यवहार और व्यापार में संस्कृत के उन शब्दो का जो कभी प्रयोग मे आते थे, और अब विस्मरण से हो रहे हैं, पुन. प्रयोग आरम्भ करना चाहिए। धारा १४ मे उल्लिखित अनुसन्धान केन्द्रो को ऐसे शब्दों की सूचियां समय २ पर प्रकाशित करनी चाहिएं।

इत्यादि कतिपय बातें यहां दिग्दर्शनमात्र लिख दी हैं। भारतीय उत्थान के इस अभूतपूर्व काम के लिए भगीरथ प्रयत्न करना पड़ेगा। पर प्रयत्न यदि

---

१ अभी २ गान्धी जी ने एक विवाह अपने बनाए हुए 'हिन्दुस्तानी' वचनों द्वारा करवाया है। (ट्रिब्यून, लाहौर, अगस्त २१, सन् १९४५) इस से बढ़ कर वैदिक पद्धति की अवहेलना और नहीं हो सकती। आर्य मर्यादाओं के नाश का जो काम कभी मुगल राजा औरगजेब भी न कर सका, वही काम अब गान्धी जी पूरा करना चाहते हैं। परन्तु ऐसा कदापि न हो सकेगा। वे कहते है कि "इस समय एक ही वर्ण अतिशूद्र अथवा हरिजन रहे।" (ट्रिब्यून, सितम्बर २०, १९४५)।

एक वार हो जाए, तो फल अत्यन्त श्रेष्ठ होगा। दो सौ वर्ष तक भारत पर राज्य करने के अनन्तर अंग्रेजी शासक विस्मित होंगे कि उनका शासन निष्फल कर दिया गया है। उस समय संसार कहेगा कि ऋषि दयानन्द सरस्वती के अद्वितीय धक्के ने भारत को पुनः खड़ा कर दिया।

(प्रश्न) आर्यसमाजो के सदस्य और अधिकारीवर्ग संस्कृत पढ़ें इसका कहां विधान है।

(उत्तर) पूर्व पृ० २१ पर पूर्णसंख्या २६२ के ऋषिपत्र से एक वचन दिया गया है। उसमें ऋषि पूछते हैं— पाठशाला में "हमारे रईस लोगो में से कोई पढ़ता है।" इसका स्पष्ट तात्पर्य यही है कि ऋषि चाहते थे कि आर्यसमाज के सदस्य और अधिकारी वर्ग संस्कृत अवश्य पढ़ें। इस से भी अधिक भावपूर्ण लेख उन के एक और पत्र में मिलता है—

"सन्धिविषय छप गया। अव आप लोग पढ़ने पढाने का आरम्भ क्यो नहीं करते। और नामिक भी अब छपकर आता है।" (परिशिष्ट पत्र पूर्णसंख्या ४९८)

यह पत्र परोपकारिणी सभा के प्रथम मन्त्री ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ को भेजा गया था। ऋषि दयानन्द सरस्वती की यह उत्कट इच्छा थी कि आर्यसमाजके लोग संस्कृत का पठन पाठन आरम्भ कर दें।

(प्रश्न) यह बात इस काल में असम्भव दिखाई देती है।

(उत्तर) त्याग और तपस्या के विना कोई जाति अपने अस्तित्व को स्थिर नहीं रख सकती। यदि आर्यजाति सजीव रहना चाहती है, यदि आर्य संस्कृति की संसार को अब भी आवश्यकता है यदि ईश्वरीय-ज्ञान वेद का संसार में प्रचार अभीष्ट है, यदि ऋषि-ऋण से उऋण होने का दृढ संकल्प आर्यमात्र के हृदय में निहित है तो इस कथित असम्भव को भी सम्भव करना ही होगा।

मनुष्य में आलस्य का भाव अधिक है, अत स्वय आलस्य युक्त होने के कारण वह समझता है कि अमुक कार्य असम्भव है। पर यदि आलस्य का परित्याग करके उचित और निरन्तर परिश्रम किया जायगा तो निश्चय ही सिद्धि हस्तामलकवत् होगी।

२. वेदमहत्त्व और वेदभाष्य

ऋषि दयानन्द सरस्वती वेद को ससार का सब से बड़ा निधि समझते थे। उन के काल मे वेद और वैदिक शिक्षा भारत से लुप्त सी हो रही थी। इस त्रुटि को दूर करने के लिए ऋषि ने अनेक सस्कृत पाठशालाएं स्थापित कराईं। इन मे वेदाध्यापन अनिवार्य था (पत्र पूर्णस० ६)। परन्तु उन का वेद-प्रचार का काम पाठशालाओं तक ही सीमित नही रहा।

वेदभाष्य का सूत्रपात—पत्र पूर्णसख्या १४ पूना से लिखा गया है। उस की तिथि सम्वत् १९३२ श्रावण शुक्ला ८ मगल लिखी है। इस पत्र मे सब से प्रथम वेदभाष्य का उल्लेख है। तभी श्री महादेव गोविन्द रानडे आदि सज्जनों ने वेदभाष्य के निमित्त धन एकत्र करने का प्रयास आरम्भ किया।

इस सग्रह के अनेक पत्रों से ज्ञात होगा कि श्री स्वामी जी का अधिकाश समय वेदभाष्य के ही कार्य में व्यतीत होता था। यह काम उनके जीवन का मुख्य ध्येय बन गया था।[1] इस से अधिक प्रिय और पुनीत कर्म उन की दृष्टि मे और कोई नही था। वे चाहते थे कि मनुष्यमात्र वेद के अध्ययन मे प्रवृत्त हो जाए। वेदज्ञान के सम्बन्ध मे फैलाई गई भ्रान्तिया ससार से दूर हो। विज्ञापन पूर्णसख्या १९ इसी महान् उद्देश्य से दिया गया था।

पहले ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका छपी। फिर ऋग्वेदभाष्य छपना आरम्भ हुआ। लाहौर से ६ जून १८७७ पूर्णसख्या ३० के पत्र मे श्री स्वामी जी प० गोपालरावहरि देशमुख को लिखते है—"मै आप के परामर्श के अनुकूल करने का इच्छुक हूं और जैसा आप चाहते हैं, मै शुक्ल यजुर्वेद का भाष्य आरम्भ करूगा।" १४ मई १८७७ को श्री स्वामी जी ने पजाब सरकार को वेदभाष्य की सहायता के लिए एक पत्र लिखा था।[2] यह पत्र अस्वीकार होना ही था। अगस्त मे श्री स्वामी जी ने सरकारी पत्र का खण्डन किया।

(प्रश्न) सरकार ने श्री स्वामी जी को सहायता क्यो नही दी।

(उत्तर) १ सरकार यह नही चाहती थी कि श्री स्वामी जी के मार्ग से भारत का उत्थान हो।

२ यदि श्री स्वामी जी की वेदभाष्य सरणि सत्य मान ली जाती तो इङ्गलैण्ड के अन्दर सस्कृताध्यापन का जो प्रकार चलाया जा रहा था वह असत्य

---

१ पत्र पूर्णसख्या २५७, ३२१, ३४६, ४२२,। २ पूर्णसख्या ३८, ३९।

सिद्ध होता। उस समय ससार को निश्चय हो जाता कि पाश्चात्य भाषा-विज्ञान निर्मूल है।

३ मैकाले प्रदर्शित सरकारी नीति के पोषकजन भारतीय युवको के दास बनने का जो मार्ग निकाल रहे थे, वह निष्प्रयोजन हो जाता। तब रामकृष्णगोपाल भण्डारकर, राजेन्द्रलाल मित्र आदि लोग पाश्चात्य लेखको का उच्छिष्ट खाकर भारतीय परम्परा के खण्डन मे प्रवृत्त न होते और वेद को पौरुषेय और कुछ ही सहस्र वर्ष पहले का बना हुआ न बताते।

उस काल की सरकार ने समझ लिया था कि दयानन्द सरस्वती का मार्ग, भारतीय हृदय मे आर्यगौरव का, आर्य-मान का भाव उत्पन्न कर देगा, अत सरकार ने ऋषि दयानन्द सरस्वती को कोइ सहायता न दी। परन्तु इतना धन्यवाद का स्थान है कि सरकार ने उस समय ऋषि के मार्ग में इस से अधिक कोई रोड़ा नही अटकाया।

फरुखाबाद से सहायता—वेदभाष्य के काम के लिए सरकार से सहायता प्राप्त न होने पर ऋषि निराश नही हुए। उन का काम शनै २ वृद्धि को प्राप्त हो रहा था। तीसरी और चौथी अकतूबर १८७९ को फरुखाबाद समाज ने एक सहस्र रुपया वेदभाष्य और यन्त्रालयादि की सहायता में दिया।[1] पुन फरुखाबादस्थ सज्जनों ने एक भारी सहायता वेदभाष्य के लिये दी।[2] फरुखाबादस्थ आर्य जनों की इस दूरदर्शिता के लिए विद्वन्मण्डल उन का चिरऋणि रहेगा।

लगभग २५ सितम्बर १८८० को श्री स्वामी जी लिखते हैं—

"मैं जानता हू कि बहुत घूमने मे हर्ज होगा।"[3] ऋषि अनुभव कर रहे थे कि अधिक घूमने से उन के वेदभाष्यादि के काम मे बाधा पडती है। तदनुसार ऋषि ने शीघ्र ही अपना प्रचार-क्रम बदला। वे एक २ स्थान मे अधिक दिन वास करने लगे। यदि उन का देहान्त इतना शीघ्र न होता तो सवत् १९४३ तक चारो वेदों का भाष्य पूरा हो जाता। ऋषि भाद्र वदी ५ स० १९४० को मुशी समर्थदान को लिखते हैं—

---

१ भारतसुदशाप्रवर्तक, अक्टूबर सन् १८७९, पृ० ७। तथा पत्र पूर्णसख्या १४९ तथा २४६।

२ देखो पत्र पूर्णसख्या १९१।

३ पत्र पूर्णसख्या २१०।

"परमेश्वर की कृपा से १ वर्ष मे सब ऋग्वेदभाष्य पूरा हो जायगा। और एक वा डेढ़ वर्ष साम और अथर्व में लगेगा। (पत्र पूर्णसख्या ४४२)

परन्तु ऋषि के अकस्मात् दिवगत हो जाने से यह महान् काम अधूरा ही रह गया।

(प्रश्न) आर्यसमाज का इस विषय मे अब क्या कर्तव्य है।

(उत्तर) आर्यसमाज मे तो अब घर घर मे वेदभाष्यकार हो रहे हैं। प० क्षेमकरण दास, प० तुलसीराम, प० आर्यमुनि, प० शिवशकर काव्यतीर्थ, प० राजाराम, प० हरिशङ्कर, प० जयदेव, प० द्विजेन्द्र शास्त्री और पं० बुद्धदेव जी ने वेदो अथवा वेद अंशो पर अपने २ भाष्य रचे है। मास्टर दुर्गाप्रसाद जी ने अंग्रेजी में ऋग्वेद के एक बडे भाग का अनुवाद निकाला था। इन सब के भाष्यो मे अनेक उपादेय बातें मिलती हैं। इन के परिश्रम से भावी कार्य में बहुत लाभ होगा। परन्तु पूर्ण सुविधाए न होने से इन सब ही के काम मे त्रुटियां भी भारी रही हैं। इन महानुभावो का पहला काम यह था कि वेदों तथा ऋषि दयानन्द सरस्वती की भाष्यशैली पर जो आक्षेप पाश्चात्य पद्धति के लेखको ने किए हैं, उनका परिहार करते। ऐसा करते हुए इन की विद्या परिमार्जित हो जाती। तब इन का परिश्रम भी अधिक मूल्यवान् होता। इन महाशयो ने वैदिक वाङ्मय का पूरा अवगाहन भी नहीं किया। आर्यसमाज ने इन्हे पूरी आर्थिक सहायता नहीं दी।

अब आर्यसमाज का यही मुख्य कर्तव्य है कि लाखो रुपये एकत्र कर के अपने अनुसन्धालयो द्वारा वेदों पर किए गए नूतन आक्षेपो के उत्तर दिलवाए। उस के पश्चात् ऋषि के भाष्य की पूर्ति हो सकेगी। दु:ख से कहना पड़ता है कि पूर्ण विद्वान् वेदभाष्य कर सकने वाले पण्डितो की प्राप्ति के लिये भी आज विज्ञापन दिये जाते हैं। पुष्प अपनी सुगन्धि से स्वय पहचाना जाता है। पुष्प के पास लोग चलकर जाते हैं। इस प्रकार वेदभाष्य कर सकने वाले के पास लोगों को स्वय जाना पड़ेगा। परन्तु अभी भारतीयों की मनोवृत्ति ऐसी नही बनी है। यही कारण है कि इस काम मे यथार्थ सफलता नही हो रही।

वेद-प्रचार—वेद का प्रचार तो पहले की अपेक्षा अब कुछ अधिक हो रहा है, परन्तु ध्येय बहुत दूर है। हम उस से लाखो कोस परे हैं। मूल वेद और ऋषिकृत वेदभाष्य की लाखो प्रतियां प्रतिवर्ष भारत मे बिकनी चाहिए। अभी तक तो एक वर्ष मे मूल वेद की तीन चार सहस्र प्रतियां भी भारत मे नही बिकती

हैं। लोग अन्य सब पदार्थों पर धन व्यय कर सकते हैं, पर वेद पर धन व्यय नही करते। ऋषि दयानन्द सरस्वती प्रणीत सत्यार्थप्रकाश की लाखो प्रतियां अब तक बिक चुकी हैं, परन्तु ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका की, जो ऋषि की एक अपूर्व रचना है, बीस सहस्र से अधिक प्रतियां आज तक नही बिकी। आर्यसमाज के लिए यह भी गम्भीर विचार का एक विषय है।

(प्रश्न) श्री गांधी जी लिखते हैं—"मै केवल वेद को ही अपौरुषेय नही मानता हू। मैं तो बाइबल, कुरान और जिन्दावस्ता को भी वेदो की तरह ईश्वर-प्रेरणा का फल मानता हूं।" (नवजीवन, ७ अक्तूबर सन् १९२९ सत्यनिर्णय, पृ० ५१ पर उद्धृत।)

(उत्तर) श्री गांधी जी तो अपने अन्दर भी हजरत मुहम्मद और हजरत ईसा ऐसी ईश्वर-प्रेरणा मानते हैं। वे भले ही ऐसा मानें और बाइबल और कुरान को ईश्वर-प्रेरणा का फल अथवा अपने को ईश्वर-दूत समझें, परन्तु वैदिक विद्वान् ऐसा नही मान सकते। गान्धी जी की अनुभव की हुई ईश्वर-प्रेरणाए प्राय. परस्पर विरुद्ध और प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सर्वथा विपरीत पड़ती हैं। पीछे से वे कह देते हैं कि उन से हिमालय-सदृश महती भूल हुई। यह अच्छी ईश्वर-प्रेरणा है कि उस में स्पष्ट ही विरोध और भूल हो। यह भी स्पष्ट है कि बाइबल, कुरान और गांधी जी के विचारो मे शतश परस्पर विरुद्ध बातें हैं। अत' वे सब ईश्वर-प्रेरणा नही हो सकती हैं। इतनी बात से ही पाठक समझ सकते हैं कि श्री गांधी जी को इस विषय का कुछ भी ज्ञान नही है। यदि उन्हे ज्ञान होता तो वे ऐसी असम्बद्ध बातें न करते। देखो वेद ससार की किसी भी और कभी भी बोली जाने वाली भाषा मे नही हैं। तद्विपरीत बाइबल, कुरान और गाधी जी के उपदेश सब लोक-भाषाओ मे हैं। उनकी वेद से क्या तुलना हो सकती है। इसलिए ससार में जो वेद का स्थान है वह अन्य किसी ज्ञान का नही है। गाधी जी का वेद सम्बन्धी यह विचार बाललीलामात्र ही है।

(प्रश्न) क्या गान्धी जी अपने को पैगम्बर अथवा ईश्वर-दूत समझते हैं।

(उत्तर) स्पष्ट तो वे ऐसा नहीं कहते, पर जब वे बहुधा ऐसा लिखते हैं कि उनको ईश्वर-प्रेरणा होती है, तो अन्दर से वे अपने को पैगम्बर ही समझते है। वे अपने को वेदों से बहुत ऊचा समझते हैं और इसीलिए वैदिक आज्ञाओ का तिरस्कार करते हैं।

(प्रश्न) पाश्चात्य भाषा-शास्त्री तो सिद्ध करते हैं कि वेद भी एक बोली गई भाषा में हैं।

(उत्तर) वे भी कोरी निराधार कल्पना ही करते हैं। उन्हें आर्य इतिहास का ज्ञान नहीं है। यदि उन्हें सहस्रों वर्ष के आर्य इतिहास का ज्ञान होता, तो वे ऐसी असत्य कल्पनाएं न करते।

यह विषय अत्यन्त जटिल और विस्तृत है, अतः इसका यहां वर्णन नहीं हो सकता। परन्तु इस विषय का विस्तृत उल्लेख हमने अपने भारतवर्ष के इतिहास में कर दिया है।

३. आर्ष-ग्रन्थ और आर्य-संस्कृति

आर्ष-ग्रन्थों के सम्बन्ध में तो आर्यसमाज बहुत ही उदासीन है। आर्यसमाज ने अनेक गुरुकुल चलाए, पर आर्ष-ग्रन्थों द्वारा साङ्गोपाङ्ग वेद-शिक्षा का प्रबन्ध कहीं भी नहीं किया। यह सत्य है कि आर्ष-ग्रन्थों के श्रेष्ठ अध्यापकों का इस समय अभाव सा है, परन्तु श्रेष्ठ अध्यापक विपुल धन-व्यय से ही बनेंगे। उन्हें, यदि वे गृहस्थ हैं, और सारा जीवन वेद के अध्ययन में अर्पण कर रहे हैं तो वेतन भी ३०० या ४०० रुपये मासिक से न्यून नहीं देना होगा। फिर उन्हें स्वतन्त्र स्वाध्याय के लिये समय भी बहुत मिलना चाहिए। वे तो सारे दिन में दो घण्टे ही अध्यापन कार्य करेंगे।

(प्रश्न) इतना धन कहां से आएगा।

(उत्तर) हम पहले ही लिख चुके हैं कि आर्यसमाज को प्रधानता से अंग्रेजी शिक्षा देने वाली सब संस्थाएं बन्द करनी पड़ेंगी। उनका सारा रुपया अथवा जिस शक्ति से उनके लिए रुपया आता था, वह रुपया और वह शक्ति संस्कृत विद्यालयों के सञ्चालन में लगानी होगी। ऐसे विद्यालय एक-एक प्रान्त में एक दो से अधिक नहीं होने चाहियें। फिर सब काम चल सकेगा। वेद और आर्ष-ग्रन्थों का भूरि प्रचार होगा।

(प्रश्न) प्रत्येक नगर या ग्राम के आर्य-समाज की यह इच्छा होती है कि उनके अधिकार में भी कोई संस्था रहे।

(उत्तर) यह इच्छा स्वार्थवश हुई है। अनेक लोग उन संस्थाओं के सञ्चालक बन कर अपना स्वार्थ पूरा करते हैं। उनको ऋषि दयानन्द सरस्वती के ध्येय का कोई ध्यान नहीं। और कई भोले लोग तो देखा देखी ऐसा कर रहे हैं। उन का दोष अधिक नहीं। आर्य-समाज को अपनी पूर्ण रुचि वेदादि शास्त्रों की ओर ही करनी पड़ेगी।

ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने स्वीकारपत्र मे यह स्पष्ट लिखा है कि परोपकारिणी सभा को आर्ष-ग्रन्थो का प्रकाशन करना चाहिए।[1] इस विषय में इस सभा ने अभी तक कोई स्तुत्य कार्य नही किया। ऋषि दयानन्द सरस्वती सदा आर्ष-ग्रन्थो को पढ़ते रहते थे। उन्हे उनकी आवश्यकता प्रतीत होती थी। पर परोपकारिणी सभा के अधिकांश सदस्य इस विषय मे कोरे हैं, उन्हे अब कौन समझाए।

(प्रश्न) सस्कृति किसे कहते हैं।

(उत्तर) किसी जाति के सर्वोच्च और दिव्य-पुरुषो के सर्वपुनीत और श्रेष्ठतम विचार वा उन का ज्ञान-समूह जब मनुष्यों में व्यवहार में आता है तो उसे सस्कृति कहते हैं। ससार और आर्यजाति का श्रेष्ठतम ज्ञान वेद है। वह ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क की उपज नही। वह सर्वज्ञ सर्वात्मा ईश्वर का ज्ञान है और शब्द, अर्थ, सम्बन्ध रूप से अनादि है। उसका मान प्रत्येक मनुष्य को होना चाहिए। इस समय उस ज्ञान की प्रतिनिधि आर्यजाति है।

वेद ज्ञान से उतर कर आर्ष-ज्ञान का स्थान है। ऋषि अर्थात् 'क्रान्तदर्शी' त्रिकालज्ञ लोग ईश्वर तो नही, पर मनुष्यों से सर्वथा ऊपर होते हैं। वात्स्यायन मुनि न्यायभाष्य मे लिखते हैं—

ऋष्यार्यम्लेच्छानां

अर्थात ऋषि, आर्य और म्लेच्छों का। इससे ज्ञात होता है कि इस भूतल पर ऋषि एक पृथक् ही श्रेणी हैं। वे आर्य और म्लेच्छों से बहुत उच्च हैं। ऐसे ऋषि ब्रह्मा, सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, स्वायम्भव मनु, कपिल और हिरण्यगर्भ आदि इस सतयुग के आरम्भ से होते आए हैं। उन्होने भी वेद से ही सारे ज्ञान लिए। उनकी योगज शक्ति उनकी सहायक थी। उन ऋषियो ने वेद के आश्रय पर जो ज्ञान और व्यवहार मनुष्यमात्र को सिखाया, वही वस्तुत ससार की वास्तविक सस्कृति है।' उसी सस्कृति का पुनरुद्धार करने वाले भगवान् दयानन्द सरस्वती थे।

(प्रश्न) श्री जवाहरलाल जी कहते हैं—अब पुरानी बातों को, पुरानी सस्कृति को छोडो। अब एक नई सस्कृति उत्पन्न की जाएगी।

(उत्तर) वे अपने अल्पज्ञान के कारण ही ऐसा कहते है। उन्होने केवल पाश्चात्य-विचार का ही थोड़ा सा अध्ययन किया है। प्राचीन भारतीय इतिहास

---

१ तथा देखो, पत्र पूर्णसख्या ४३६, उप'श ५।

जो यहां की सस्कृति का परिचायक है, उन्होने नही पढ़ा। वे तो आर्यों को भारत का आदि वासी ही नही समझते। उन्हे वेद के महत्त्व का अणुमात्र भी ज्ञान नहीं है। अत उनका ऐसा कथन विद्वानो के सम्मुख उपहासास्पद है। जवाहरलाल जी ने आज तक एक भी स्वोपज्ञ विचार प्रकट नही किया। उन्हो ने तो सोवियट रूस आदि का ही अनुकरण करके कुछ बातें कही हैं। मौलिक विचार रखने के अभाव में वे नवीन सस्कृति उत्पन्न करने का स्वप्नमात्र लेते हैं।

वस्तुतः सस्कृति वैदिक ही है और शेष नाममात्र की संस्कृतियां अथवा उस का अपभ्रंश हैं।

जवाहरलाल जी ने तो अपनी कन्या को भी इङ्गलैंड मे रखकर केवल अङ्गरेजी का ही अधिक अभ्यास कराया है। न वे आप सस्कृत पढ़े और न उन्होंने अपनी एकमात्र कन्या को सस्कृत पढ़ाई। वे सस्कृत के प्रति अपने कर्तव्य को अथवा संस्कृत के आनन्द को क्या जान सकते हैं। मनु ने सत्य कहा है—

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते॥

यह पुरानी भारतीय सस्कृति ही है जो ससार को फिर शान्ति दे सकती है, जो मानव के शरीर और मन को नीरोग कर सकती है, तथा जो वास्तविक दासता से मनुष्य को निकाल सकती है। जिन लोगों का मन कलुषित पाश्चात्य विचारों की दासता में पड़ा हुआ है, वे प्राचीन भारतीय सस्कृति को क्या समझेंगे।

(प्रश्न) आर्य सस्कृति यदि ससार-उपकारिणी होती, तो उसका ह्रास क्यो होता। प्रतीत होता है कि इस सस्कृति की कोई उपादेयता नही थी, अत. यह क्षीण हो गई। अब यह जाग्रत नही होगी।

(उत्तर) यह बात हास्यास्पद है। क्या तुम कभी रोगी नही हुए। क्या स्वास्थ्य अनुपकारी होता है कि रोग आ जाता है। नही। हम किसी ज्ञात अथवा अज्ञात भूल से स्वास्थ्य खो बैठते हैं। परन्तु रोगी होने पर हम चिकित्सा अवश्य करते हैं। क्या तुम रोगी होने पर अपनी चिकित्सा नही करते। इसी प्रकार सत्य समझो कि अनेक कारणो से आर्यसंस्कृति रोगग्रस्त हो गई थी। इसका रोग साध्य है असाध्य नही। अतः इस सस्कृति के समझने वालों का यह प्रधान कर्तव्य है कि वे इस संस्कृति को रोगमुक्त करें। ऋषि दयानन्द सरस्वती का जन्म ही इस बात के लिए हुआ था। यदि इस अज्ञानान्धकार के युग मे ऋषि ऐसा

एक सतयुगीन पुरुष जन्म धारण कर सकता है, तो निश्चय है कि उसके चलाए हुए मार्ग को समझ कर और सहस्रों व्यक्ति भी उसी काम मे लगेंगे। ऋषि की कृपा से सैकड़ो लोग इस काम मे लग रहे हैं। अत. यह सस्कृति निश्चित ही फिर फैलेगी। इसी बात का परिणाम है कि गान्धी जी और जवाहरलाल जी की निर्मूल बातो का खण्डन करने के लिए हम कृत-सकल्प हुए हैं।

(प्रश्न) आर्य सस्कृति मे आर्षग्रन्थो का इतना आदर क्यों है।

(उत्तर) ऋषियो का ज्ञान बाह्य इन्द्रियो की सीमाओं से परे हो जाता है। वे क्रान्तदर्शी और प्राय. त्रिकालज्ञ हो जाते हैं। उनका सारा उपदेश मानव के हितार्थ होता है। वह वेद का व्याख्यानमात्र ही होता है। उस मे भ्रान्ति नही होती। वह इस लोक और परलोक से सम्बन्ध रखता है। वर्तमान मनुष्य का विचार अनुभव और प्रयोग का फल है। इसी लिए उसमे पदे पदे भ्रान्ति है। परन्तु ऋषि इससे ऊपर हैं। जो कोई आर्य सस्कृति को पहचानेगा, उसे ऋषि दयानन्द सरस्वती के कथन की सत्यता ज्ञात हो जाएगी। ऋषियो के पश्चात् मुनियो के ग्रन्थ हैं। मुनियो के ग्रन्थ उपादेय तो होते हैं परन्तु उनमे यत्रतत्र भूल रह सकती है। वे क्रान्तदर्शी नही होते। इसके पश्चात् मनुष्य-रचित ग्रन्थो का स्थान है। वर्तमान सारा संसार केवल इन्ही के आश्रय पर चलता है, अत. दुःख पा रहा है।

(प्रश्न) वेद और आर्ष-ग्रन्थो का मान गत २० वर्ष मे भारत मे बहुत ही न्यून हो गया है। इस का क्या कारण है।

(उत्तर) इस का एक कारण अंग्रेजी शिक्षा है। आज भाषा साहित्य पर भी अंग्रेजी की गहरी छाप पड चुकी है। अंग्रेजी अथवा भाषा का कोई ग्रन्थ उठाओ, उस में आप को कहीं न कहीं यह भाव अवश्य मिलेगा कि मनुष्य उन्नति कर रहा है। वह पहले युगों मे थोड़ा उन्नत था और अब दिन दिन अधिक उन्नति कर रहा है। प्रारम्भ से इस विचार मे पले हुए लोग सत्य से बहुत दूर हो गए हैं। इसी लिए उन के हृदय मे पुरातन ज्ञान का आदर न्यून हो रहा है।

इस का दूसरा कारण है गान्धी-वाद। आर्यजाति सदा से शब्दप्रमाण को मानने वाली रही है। गान्धी जी ने अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित होने के कारण शब्द-प्रमाण की अवहेलना की है। गान्धी जी विकास-सिद्धान्त को मानने वाले हैं। वे लिखते है—

सम्पूर्ण अन्य बातों की तरह महजहबी विचार भी उसी विकास-सिद्धान्त के अधीन हैं, जो कि इस सृष्टि की हर एक वस्तु पर लागू है।
(यङ्ग इण्डिया, ४ सितम्बर सन् १९२४।) इस असत्य को मानने के कारण ही

गान्धी जी ने अनेक भूलें की है। सामूहिक रूप से तो ससार वस्तुतः ह्रास की ओर ही जा रहा है। गत दो सौ वर्ष मे जो कतिपय यन्त्र वने हैं, ये पुरातन-ज्ञान का एक अंशमात्र भी नही है। इन्हे देख सुन कर केवल पाश्चात्य शिक्षा मे पला व्यक्ति आश्चर्य-चकित हो जाता है। वह विकास-सिद्धान्त को मानने लगता है। उसे ससार के सहस्रों वर्ष पुराने ज्ञान का पता ही नही है। वह युग युग के ह्रास से सर्वथा अपरिचित है। यही हेतु है कि प्राचीन ज्ञान को न जानने के कारण गान्धी जी ने उसकी प्रामाणिकता नष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया है। जब आर्य लोग आर्ष इतिहास को भले प्रकार पढ़ेंगे, तो उन्हे गान्धी जी का मत सर्वथा निःसार प्रतीत होगा। वे समझेंगे कि गान्धी जी ने यह भारी अनिष्ट किया था। साधारण व्यवहार तो मनुष्यबुद्धि से चल सकता है, पर उच्च सत्य के जानने मे मनुष्यबुद्धि प्रमाण नही है। वह तो वेद और आर्षज्ञान द्वारा ही जाना जा सकता है।

शब्द-प्रमाण को मानने का भाव आर्यसमाज मे भी कुछ अल्प हुआ है। उसका कारण है श्री विश्वबन्धु जी ऐसे व्यक्तियां का आर्यसमाज की संस्थाओ मे घुसे रहना। अपनी बुद्धि को ही प्रमाण मानने वाले बाबू लोग आर्यसाज की निर्बलता का कारण बने हुए हैं। ऋषि दयानन्द सरस्वती के आदर्श को समझने पाले व्यक्तियो को इन से सावधान रहना चाहिए।

४. अंग्रेजी शिक्षा की शालाएं खोलने के विरोधी ऋषि दयानन्द सरस्वती

पूर्वमुद्रित वचनों मे पूर्णसख्या २६३ तथा ३८० के कतिपय वाक्य ध्यान देने योग्य हैं। इन के साथ निम्नलिखित वचनों पर भी ध्यान देना चाहिए—

[२६३] अग्रेजी का प्रचार तौ जगह २ सम्राट की ओर से जिन की यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है। अब इस की वृद्धि मे हम तुम को इतनी आवश्यकता नही दीखती। और न सम्राट् के समान कुछ कर सकते हैं।

[२६६] जैसे मिशन स्कूलों मे लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिए बाईबल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नही देते वैसे जो सस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा।

अग्रेजी शिक्षा की शालाओं का इस से अधिक बलवत्तर विरोध और क्या होगा। आर्यसामाजिक लोगो को इस पर ध्यान देना चाहिए।

(प्रश्न) जिस प्रकार की शिक्षा के ऋषि दयानन्द सरस्वती इतने विरोधी थे वही शिक्षा आर्यसमाज ने क्यों अपनाई।

(उत्तर) यह दुर्भाग्य का विषय है कि ऋषि के निधन के पश्चात् उनकी पवित्र स्मृति मे आर्यसमाज लाहौर, पञ्जाब ने वही काम किया, कि जिसका विरोध ऋषि

तीव्र शब्दों मे करते रहे। उसी कुकल्पना का फल आज प्रत्यक्ष दिखाई देता है। ऋषि दयानन्द सरस्वती की स्मृति मे स्थापित की गई सस्था मे ही वेद और आर्ष-ग्रन्थो के अनेक विरोधी काम करते हैं। जब कोई सच्चा आर्यपुरुष इस पर आपत्ति उठाता है, तो अनेक कथित-आर्यसमाजी जो प्रच्छन्न बौद्ध हैं और जो प्रबन्धक बने बैठे हैं, उसका मुख बन्द करने का यत्न करते हैं।

(प्रश्न) क्या भारत की भावी शिक्षा सस्कृत माध्यम द्वारा होगी।

हा, होगी पर इस के लिये आर्यों को सारी राजनीतिक शक्ति अपने हाथो मे लेनी होगी। उन्हे "इण्डियन नैशनल कांग्रेस" को या तो समाप्त करना पड़ेगा या इस की मनोवृत्ति भारतीय बनानी होगी।

(प्रश्न) क्या कांग्रेस की मनोवृत्ति भारतीय नही है।

(उत्तर) नही है, सर्वथा नही है। कांग्रेस वालों ने ही "नैशनल" शिक्षा के नाम से अंग्रेजी शिक्षा की शालाए खोली थी। श्री गान्धी जी विद्यामन्दिर योजना की आड मे साक्षात् अर्बी फारसी का प्रचार कर रहे हैं। सन् १९४२ में प० जवाहरलाल ने एक विदेशी पत्रकार से कहा था कि भारत मे अंग्रेजी तो बनी ही रहेगी। ये बातें प्रमाणित करती हैं कि जब कांग्रेस के नेताओं की नीति अभारतीय है, तो कांग्रेस की नीति भी वैसी ही होगी।

(प्रश्न) अब तो भारत मे ये स्कूल ही चलेंगे। छात्र और छात्राओं मे जो विलासिता का भाव इस वर्तमान शिक्षा ने, कार्लमार्क्स के सिद्धान्तो ने और पश्चिम तथा विशेष कर रूस के ससर्ग ने उत्पन्न कर दिया है वह ही प्रबल रहेगा।

(उत्तर) यह सत्य है कि इस शिक्षा ने युवक और युवतियों को विलासिता के कराल गाल मे अत्यधिक धकेला है। हम देखते हैं कि इसी बात के परिणाम स्वरूप अनेक बी०ए०, एम०ए० युवतिया प्रतिवर्ष आत्मघात कर रही हैं। परन्तु यह तो सब कोई जानता है कि यह मार्ग मृत्यु का मार्ग है। आर्यसमाज को तो इस मार्ग से बहुत परे रहना चाहिए। कन्याओं के स्कूल और कालेज खोल कर, जहा आधे से अधिक अध्यापकवर्ग कार्लमार्क्सवादी कम्यूनिस्टो का है, आर्यसमाज ने एक अकथनीय अघ किया है। वह ऋषिमार्ग से पतित हुआ है।

(प्रश्न) ऋषि दयानन्द सरस्वती वर्तमान स्कूलों के सम्बन्ध में क्या आदेश करते।

(उत्तर) ऋषि के भाव उन के एक पत्र से जाने जा सकते हैं। वे पत्र पूर्णसख्या ३५१ में लिखते हैं—

"पाठशाला मे सस्कृत पढ़ के कितने विद्यार्थी समर्थ हुए। अथवा अंग्रेजी

फारसी मे ही व्यर्थ धन जाता है। सो लिखो। **जो व्यर्थ ही हो तो क्यों पाठशाला रखी जाय।**" पृ० ३८६।

इस पत्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि ऋषि प्रधानतया अंग्रेजी शिक्षा देने वाली शालाए खोलने के घोर विरोधी थे। ऋषि वर्तमान समस्त स्कूलो और कालेजों को बन्द करा देते। श्रेष्ठ फल के अभाव मे जब ऋषि ने अपनी खोली या खुलवाई अनेक शालाए वन्द कर दी, तो वे इन स्कूलो के वन्द कराने मे लेश भर भी सकोच न करते। आर्यसमाज उन के मार्ग से सर्वथा विपरीत जा रहा है।

(प्रश्न) स्कूल और कालेज सचालक आर्यसमाजी तो वड़े २ लम्बे व्याख्यान देते हैं कि स्कूलों द्वारा आर्यसमाज का वडा प्रचार हुआ है। क्या यह सत्य नहीं।

(उत्तर) इन स्कूलों और कालजो मे से घुणाक्षरन्याय से कभी २ कोई अच्छा संस्कृत विद्वान् तथा आर्यसस्कृति का अनन्य सेवक उत्पन्न हुआ है। अधिकांश लोग तो पाश्चात्य विचारो के दास ही उत्पन्न हुए हैं। अत. इन स्कूलो की प्रशंसा में व्याख्यान देना अपनी दास मनोवृत्ति का प्रकाशन करना है।

प्यारे भारतीयो, ऋषियों की सन्तानो, राम और कृष्ण के नाम लेवाओ, मत इधर उधर भटको। मार्ग तो एक ऋषि दयानन्द सरस्वती का ही वताया हुआ है। यह मार्ग यद्यपि कठिन, अंग्रेजी शासन के वन्दी-गृहो में जाने की अपेक्षा शतगुण अधिक कठिन है पर है यही एक मार्ग। इसके लिए कटिवद्ध होना पड़ेगा।

९. ऋषि दयानन्द सरस्वती और देशी रियासतें

ऋषि दयानन्द सरस्वती जान चुके थे कि अंग्रेजी शिक्षा के कुप्रभावो के कारण देशी राज्यो मे से आर्य आदर्श लुप्त हो चुके हैं। वे रियासतों के प्रवन्धकों की त्रुटियों को वहुत भले प्रकार जानते थे पर वे चाहते थे कि—

(क) आर्य राजा सस्कृत पढ़कर प्राचीन आदर्श को पुनर्जीवित करें।

(ख) आर्य राजाओं के समस्त राज्य-सचालक संस्कृत पठित और इसी आदर्श के मानने वाले हों।

(ग) राज वर्ग के वालक आरम्भ से आर्ष शिक्षा प्राप्त करें और अंग्रेजी आदर्श न सीखें।

(घ) रियासतो में मनु का धर्मशास्त्र प्रचलित हो और नया कानून न चले।

(ङ) रियासतें आर्य सस्कृति की रक्षक वनें।

(च) रियासतें नष्ट न हो जायें। उन का अस्तित्व बना रहे। उन में प्रजा-तन्त्र का वर्तमान निकृष्ट रूप प्रचलित न हो प्रत्युत मनु-प्रदर्शित राज-नियम ही चलें।

(छ) राजवर्ग व्यसनी न हो और पितृवत् प्रजा पालन करें।

(ज) रियासतों में गोरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाए। रियासतों का सब कार्य संस्कृत और आर्यभाषा मे हो।

(झ) क्षत्रियवर्ग में प्राचीन क्षात्र आदर्श स्थिर रहे और यज्ञ याग बहुत हों।

इत्यादि अनेक बातें हैं जो इन पत्रों से जानी जा सकती हैं। आर्यसमाज ने इस ओर अणुमात्र भी ध्यान नहीं दिया।

८. ऋषि दयानन्द सरस्वती और राज्य व्यवस्था

भारत की गहरी निद्रा के पश्चात् ऋषि दयानन्द सरस्वती पहले पुरुष थे जिन्हें भारत में देशोन्नति और स्वराज्य का यथार्थ ध्यान आया। उन के प्रत्येक तीसरे चौथे पत्र में देशोन्नति का शब्द दिखाई देता है। स्वराज्य का शब्द भी पहले पहल उन्होंने ही प्रयुक्त किया। उन्होंने स्वराज्य का उपाय भी आरम्भ किया। उन का स्वराज्य संसार पर सांस्कृतिक विजय द्वारा आता। वे इस विजय में अटल विश्वास रखते थे। वे इस महान् कार्य के योग्य थे। भारत का स्वराज्य लाकर ऋषि संसार की राज्य व्यवस्था को ठीक करते। उन के देहान्त को आज ६२ वर्ष हो गए। आर्यसंस्कृति को सजीव रूप में जानने वाला अभी दूसरा व्यक्ति भारत में नहीं जन्मा। आर्यसमाज ऋषि के इस काम को नहीं चला सका। आर्यसमाज संसार का सांस्कृतिक विजय तो क्या करता, उस के अपने अन्दर ऐसे बहुसंख्यक लोग हो गए हैं जिन पर अंग्रेजी शिक्षा के कारण वर्तमान संस्कृतियों का गहरा प्रभाव पड़ चुका है। आर्यसमाज के लिये यह विषय विचारणीय है।

इसी प्रकार पत्रों में ऋषि ने और अनेक उज्ज्वल विचार लिखे हैं। पाठक उन से स्वयं लाभ उठाए। समयाभाव से हम उन पर प्रकाश नहीं डाल सके।

पत्रों के प्रकाशन में श्री मामराज जी का पूरा सहयोग रहा है। मेरे पुत्र श्री सत्यश्रवा एम०ए० ने कई वर्ष तक इस काम में सहायता दी है। श्री गुरुदेव जी विद्यालङ्कार ने प्रेस कापी के कई स्थान लिखे हैं। श्री पूज्य हरविलास जी सारडा मन्त्री परोपकारिणी सभा ने तो बहुत ही सहायता की है और परामर्श दिए हैं। श्री प० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु और श्री पण्डित युधिष्ठिर जी ने भी असा-धारण सहायता की है। परिशिष्ट के पत्रो के लिए मेरठ निवासी ला० रामशरण दास के पौत्रो ने विशेष सहायता की है। उनमें से ला० परमात्माशरण जी ने

बहुत समय लगा कर पुराने कागज ढूढे हैं। अनेक महानुभावो ने गत तीस वर्ष मे समय समय पर इस कार्य मे सहायता दी है। उन मे से अनेक के नाम पहले लिखे जा चुके हैं। इन सव मित्रों और महानुभावो का मै हार्दिक कृतज्ञ हूं। मैं उन्हे शतश. धन्यवाद देता हूं। उन की सहायता के विना यह महान् कार्य इस रूप मे कभी प्रकाशित न होता।

श्री प्रो० धीरेन्द्र वर्मा एम०ए० प्रयाग, श्री प्रो० महेशप्रसाद जी साधु वनारस, श्री पं० वाचस्पति एम०ए० लाहौर तथा श्री कविराज सूरमचन्द वी०ए० लाहौर का धन्यवाद करता हूं जिन्हो ने पत्रों की प्रतिलिपियो के प्रदान मे अथवा सशोधन में भारी सहायता की है। तथा वावू ओमप्रकाश वी०ए० खातौली निवासी और ला० उग्रसेन जी ने भी श्री मामराज को वहुत सुविधाएं दी हैं। उन का भी वहुत २ धन्यवाद है।

इन सव के साथ श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट के प्रवन्धक श्री वावू रूपलाल जी श्री ला० ज्ञानचन्द जी और श्री ला० हंसराज जीने तो सहायता और उदारता में कोई न्यूनता नही रहने दी। ला० हसराज जी ने प्रेस की ओर से मुद्रण में असाधारण सावधानता दिखाई है। इन महानुभावों का मै जितना धन्यवाद करू थोड़ा है। युद्ध के गत महर्घ दिनो में सहस्रों रुपय का व्यय कर के इस ग्रन्थ को मुद्रण कराना इन्हीं का स्तुत्य काम था।

ईडर राज्य के दीवान, वेदभक्त, स्वाध्यायशील, आर्य हृदय रखने वाले श्री ला० जगन्नाथ जी भण्डारी, एम०ए० हमे अत्यधिक सहायता दे रहे हैं। उन की आर्थिक सहायता के विना हमारा अनुसन्धान कार्य मन्थर गति से चलता। यदि गत दो वर्ष मे हम अधिक कार्य कर पाए हैं, तो यह उन्ही की उदार सहायता का फल है। हम उन के वहुत ऋणी हैं। यह ग्रन्थ उन्ही को समर्पित है।

आश्चर्य का विषय है कि श्री दीवान जी उसी राज्य के प्रधान मन्त्री हैं, जो शूरवीर ऋषिभक्त महाराजा श्री प्रतापसिह जी के कुल मे हैं।

ईश्वर करे अज्ञान मे पड़ा ससार इस ग्रन्थ से लाभ उठाए।

माडल टाऊन (लाहौर)

९ दिसम्बर १९४५
रविवार

भगवद्दत्त

* ओम् *

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन

[१] विज्ञापनपत्रम्[1] [१]

श्रीरस्तु ॥ ऋग्वेदः १ यजुर्वेदः २ सामवेदः ३ अथर्ववेदः ४ । एतेषु चतुर्षु वेदेषु कर्मोपासनाज्ञानकाण्डानां निश्चयोस्ति ॥ तत्र संध्यावन्दनादिरश्वमेधान्त. कर्मकाण्डो वेदितव्यः । यमादिः समाध्यन्त उपासनाकाण्डश्च वोद्धव्यः ॥ निष्कर्मादिः परब्रह्मसाक्षात्कारांतो ज्ञानकाण्डो ज्ञातव्यः ॥

आयुर्वेद· ५ तत्र चिकित्सा विद्यास्ति ॥ तत्र चरकसुश्रुतौ द्वौ ग्रंथौ सत्यौ विज्ञातव्यौ ॥

धनुर्वेदः ६ तत्र शस्त्रास्त्रविद्यास्ति ॥

गांधर्ववेदः ७ तत्र गानविद्यास्ति ॥

अर्थवेदः ८ तत्र शिल्पविद्यास्ति ॥

एते चत्वारो वेदानामुपवेदा यथासख्य वेदितव्याः ॥

शिक्षा वेदस्था ९ तत्र वर्णोच्चारणविधिरस्ति ॥

कल्पः १० तत्र वेदमन्त्राणामनुष्ठानविधिरस्ति ॥

---

१ प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ५९७-५९८ पर उद्धृत। इस से पहले जीवन चरित में निम्नलिखित पक्तिया हैं—

"प० हृदय नारायण वकील ने वयान किया कि एक विज्ञापन स्वामी जी की आज्ञा से मैं ने प्रामाणिक पुस्तकों का सस्कृत में छपवाया था। यह सस्कृत में स्वय स्वामी जी ने लिख कर दिया था। जव छप कर आया तो उस की छापे की अशुद्धियों को स्वामी जी ने स्वय शोधा था। और कहा कि देखो मूर्ख ने छापने में कितनी अशुद्धिया कर दीं। एक प्रति स्वामी जी की शोधी हुई हमारे पास विद्यमान है। शेष उस समय वाट दी थीं। वह आप को देता हू," इति।

व्याकरणम् ११ तत्र शब्दार्थसम्बन्धाना निश्चयोस्ति। तत्र द्वौ ग्रन्थावष्टाध्यायी-व्याकरणमहाभाष्याख्यौ सत्यौ वेदितव्यौ ॥

निरुक्तम् १२ तत्र वेदमन्त्राणां निरुक्तयः सन्ति ॥ छन्दः १३ तत्र गायत्र्यादि-छन्दसां लक्षणानि सन्ति । ज्योतिषम् १४ तत्र भूतभविष्यद्वर्तमानानां ज्ञानमस्ति। तत्रैका भृगुसंहिता सत्या वेदितव्या ॥

एतानि षट् वेदाङ्गानि वेदितव्यानि ॥ इमाश्चतुर्दशविद्याश्च ॥

ईशकेनकठप्रश्नमुण्डकमाण्डूक्य तैत्तिरी[य] ऐतरेय छान्दोग्य बृहदारण्यकश्वेता-श्वतरकैवल्योपनिषदो द्वादश १५ अत्र ब्रह्मविद्यैवास्ति ॥

शारीरकसूत्राणि १६ तत्रोपनिषन्मन्त्राणां व्याख्यानमस्ति ॥ कात्यायनादी-निसूत्राणि १७ तत्र निषेकादिश्मशानान्तानां संस्काराणां व्याख्यानमस्ति ॥

योगभाष्यम्१८ तत्रोपासनाया ज्ञानस्य च साधनानि सन्ति ॥ वाकोवाक्यमेको ग्रन्थः १९ तत्र वेदानुकूला तर्कविद्यास्ति ॥ मनुस्मृतिः २० तत्र वर्णाश्रमधर्माणा व्याख्यानमस्ति ॥ वर्णसंकरधर्माणाञ्च ।

महाभारतम् २१ तत्र शिष्टानां जनानां लक्षणानि सन्ति ॥ दुष्टाना जनानाञ्च । एतान्येकविंशति शास्त्राणि सत्यानि वेदितव्यानि ॥ एतेष्वेकविंशति शास्त्रेष्वपि व्याकरण-वेद-शिष्टाचारविरुद्धम् यद्वचनं तदप्यसत्। एतेभ्य एकविंशतिशास्त्रेभ्यो ये भिन्ना ग्रन्थाः सन्ति ते सर्वे गप्पाष्टकाख्या वेदितव्या । गपृ मिथ्यापरिभाषणे। तस्मात्पः प्रत्ययः ॥ गपयते यत्तद्गप्पम् ।

> अष्टौ गप्पानि यत्र स्युर्गप्पाष्टक तद्विदुर्बुधाः ।
> अष्टौ सत्यानि यत्रैव तत्सत्याष्टकमुच्यते ।

कान्यष्टौ गप्पानीत्यत्राह—

मनुष्यकृताः सर्वे ब्रह्मवैवर्तपुराणादयो ग्रन्थाः प्रथम गप्पम् १ ।
पाषाणादिपूजनं देवबुद्ध्या द्वितीयं गप्पम् २ ।
शैवशाक्तवैष्णवगाणपत्यादयः संप्रदायास्तृतीय गप्पम् ३ ।
तन्त्रग्रन्थोक्तो वाममार्गश्चतुर्थं गप्पम् ४ ।
भंगादि नशाकरणं पंचमं गप्पम् ५ ।
परस्त्रीगमनं षष्ठं गप्पम् ६ ।
चौरीति सप्तमं गप्पम् ७ ।
कपटच्छलाभिमानानृतभाषणमष्टमं गप्पम् [८] ।

एतान्यष्टौ गप्पानि त्यक्तव्यानि । कान्यष्टौ सत्यानीत्याह ॥ ऋग्वेदादीन्येक-विंशति शास्त्राणि परमेश्वरर्षिरचितानि प्रथम सत्यम् १ ॥

ब्रह्मचर्याश्रमेण गुरुसेवास्वधर्मानुष्ठानपूर्वक वेदाना पठन द्वितीय सत्यम् २ ॥
वेदोक्तवर्णाश्रमस्वधर्मसन्ध्यावन्दनाग्निहोत्राद्यनुष्ठान तृतीय सत्यम् ३ ॥

यथोक्तदारादिगमन पचमहायज्ञानुष्ठानमृतुकालस्वदारोपगमन श्रौतस्मार्ताचाराद्यनुष्ठान चतुर्थं सत्यम् ४ ॥

शमदमतपश्चरणयमादि समाध्यन्तोपासनासत्सगपूर्वक वानप्रस्थाश्रमानुष्ठानं पचम सत्यम् ५ ॥

विचारविवेकवैराग्यपराविद्याभ्याससन्यासग्रहणपूर्वक सर्वकर्मफलत्यागाद्यनुष्ठान षष्ठ सत्यम् ६ ॥

ज्ञानविज्ञानाभ्या सर्वानर्थजन्ममरणहर्षशोककामक्रोधलोभमोहसगदोषत्यागानुष्ठान सप्तमं सत्यम् ॥ ७ ॥

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशतमो रजः सत्त्वसर्वक्लेशनिवृत्तिः पचमहाभूतातीतमोक्षस्वरूपस्वराज्यप्राप्ति. अष्टम सत्यम् ॥ ८ ॥

ऐतान्यष्टौ सत्यानि गृहीतव्यानि ॥ इति ॥

दयानन्दसरस्वत्याख्येनेदम्पत्र रचितम तदेतत्सज्जनैर्वेदितव्यम् ॥

शोलेतूर में छपा ।'

---

१ यह विज्ञापन कानपुर में दिया गया था । वहीं के शोलेतूर यन्त्रालय में छपा ।

इस विज्ञापन का उल्लेख कानपुर के समाचार पत्र शोलेतूर के २७ जुलाई १८६९ के अक १०, सख्या ३० में है । इस से ज्ञात होता है कि यह विज्ञापन २० जुलाई के समीप अथवा आषाढ़ १९२६ के अन्त में छपा होगा ।

काशी का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ इस विज्ञापन के पश्चात् मगलवार १६ नवम्बर सन् १८६९ में हुआ । छल कपट दर्पण के कर्ता ने अशुद्ध विज्ञापन छाप कर अपने स्वभावानुकूल ऋषि पर अनेक मिथ्या कटाक्ष किए हैं ।

प्रामाणिक ग्रन्थों की जो सूची इस विज्ञापन में दी गई है, ठीक उसी प्रकार की एक सूची ऋषि दयानन्द सरस्वती ने बनारस सस्कृत कालेज के प्रिंसिपल डाक्टर रुडल्फ हार्नले को काशी शास्त्रार्थ से कुछ दिन पहले अपने हाथ से लिख कर दी थी । देखो The Arya Samaj, by L. Lajpat Rai दूसरा सस्करण, लाहौर, पृ० ४६ ।

[१] **श्रीरस्तु**[1] [२]

स्वस्ति श्री श्रेष्ठोपमायोग्यस्य गङ्गादत्तशर्म्मणे दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशीर्वादो विदितो भवत्वत्र शं वर्त्तते तत्राप्यस्तु । भवत्पत्रमागतं तत्रस्थो वृत्तान्तोऽपि विदितः ॥ भवान् बुद्धिमान् भूत्वा पत्रं तु प्रेषितवान् परन्तु स्वयं च पत्र-प्रेषणवन्नागत इदम्महदाश्चर्यम् ॥ इदम्पत्रं दृष्ट्वैव शीघ्रमागन्तव्यमागत्य यस्मिन्दिने भवानत्र पाठशालायाम्पाठनारम्भं करिष्यति तस्मिन्नेव दिने एकमासस्य विचारितस्य तु प्रेषणं गृहम्प्रति कार्यमिति निश्चयो वेदितव्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ इयं शङ्कापि भवता न कार्या जीविका तत्र भवेद्वा नेति ॥ इदानीन्तु प्रतिदिनम्मुद्रैका जीविकास्त्यत्र परन्तु यदा यदा भवतो गुणप्रकाशो भविष्यति तदा तदाधिकाधिका जीविका निश्चिता भविष्यतीति विज्ञेयम् ॥ इदानीन्तु भवतात्रैव स्थितिः कार्या पुनरन्यत्र वात्रैवाजीविका निश्चिता स्थास्यति, न जाने भवेदाजीविका न वेति गमने कृते सति मयीति भवतो ह् शङ्कापि मा भूत् ॥ अत्रागमने कृते सति भवति सर्वं शोभनं भविष्यति ॥ परन्तु भवतात्रागमने क्षणमात्रोपि विलम्बो न कार्यः । किम्बहुना लेखेनाभिज्ञेषु ॥ संवत् १९२७ भाद्रपद शुक्लपक्षषष्ठ्यां बृहस्पतिवासरे[2] लिखितमिदम्पत्रं विदितम्भवतु ।[3]

---

१. मथुरा निवासी प० गङ्गादत्त चौबे श्री स्वामी जी का सहाध्यायी था । इस पत्र द्वारा श्री स्वामी जी ने फरूखाबादस्थ ला० पन्नीलाल वाली पाठशाला में पढाने के लिए उसे बुलाया है। इस पत्र का सकेत प० लेखराम कृत महर्षि दयानन्द के उर्दू जीवनचरित के पृ० २१६ पक्ति २ में है।

२. १ सितम्बर १८७० । यह पत्र फरूखाबाद से मथुरा भेजा गया ।

३. प० गङ्गादत्त के पौत्र प० विदुरदत्त तान्त्रिक मथुरा में रहते हैं। उन के घर में यह मूल पत्र अब भी सुरक्षित है । उसी मूल पत्र से श्री महाशय मामराज जी ने भाद्र वदी १२ सवत् १९८५ को अपनी लेखनी से इस की प्रतिलिपि की ।

प० गङ्गादत्त को श्री स्वामी जी ने मार्ग व्यय के लिए रुपये भी भेजे थे । जब प० गङ्गादत्त फरुखाबाद न गया, तो उसने १०) रु० वनमाली पण्डित को लौटा दिए । उनकी रसीद ला० मामराज जी को प० गङ्गादत्त के वस्तों में से मिली । वह निम्नलिखित है—

"जो दयानन्द सरस्वती स्वामी ने दश रुपा १०) भेजे गङ्गादत्त जी के रस्ता खर्च को सो नयनसुख के मारफत युगल जी की चिठी को लिखो देख, गङ्गादत्त जी से भर पाए, कलाधर तथा वनमाली नै ।

अत्र साक्षी दामोदर. "॥

[२] **विज्ञापनपत्रमिदम्**[1] [३]

एक पण्डित ताराचरण तर्करत्न नामक भाटपाड़ा ग्राम के निवासी हैं। जो कि ग्राम हुगली के पार है। उस ग्राम में उनकी जन्मभूमि है, परन्तु आज-

---

१ यह विज्ञापनपत्र प्रतिमा पूजन विचार के नाम से १८×२२ के आठ पृष्ठ वाले आकार के २८ पृष्ठों पर श्री स्वामी जी ने स्वय छपवा दिया था। इस के आरम्भ के १३ पृष्ठों पर हुगली शास्त्रार्थ छपा है और उस मे आगे प्रतिमा पूजन पर विचार किया है। उसका मुख्य पृष्ठ निम्नलिखित प्रकार का है—

प्रतिमा पूजन विचार ॥

श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामी और ताराचरण तर्करत्न का शास्त्रार्थ जोकि हुगली में हुआ था।

उसे बाबू हरिश्चन्द्र की आज्ञा से बनारस लाइट छापेखाने में गोपीनाथ पाठकने मुद्रित किया सम्वत् १९३० ॥

Benares

Printed At "The Light Press"

1873

इस विज्ञापन का पूर्वांश अर्थात् हुगली शास्त्रार्थ प० लेखराम कृत जीवनचरित के पृ० २०१—२०८ पर तथा देवेन्द्र बाबू और प० घासीराम रचित जीवन चरित के पृ० २३६—२३८ पर छपा है। दोनों स्थानों में यह विज्ञापन अपने शुद्ध रूप में नहीं है। दोनों ने इस का सक्षेप दिया है। प० लेखराम ने देवेन्द्र बाबू की अपेक्षा मूल का अधिक रक्षण किया है। इसकी मूल मुद्रित प्रति म० मामराज फरूखाबाद से सम्वत् १९८३ में लाए थे। वह मूल प्रति अब हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

हम ने विराम आदि चिह्न तो दिए हैं, परन्तु मूल पाठ सुरक्षित रखा है। हा मुद्रण में रही मात्रा आदि की अशुद्धि दूर कर दी है।

इस हुगली शास्त्रार्थ की पुस्तक अथवा विज्ञापन पर प० लेखराम जी का निम्नलिखित विवरण है—

सवत् १९२९ में यह शास्त्रार्थ सस्कृत भाषा में हुआ। उसी समय उसका अनुवाद बगला भाषा में मुद्रित किया गया। और बहुत ही शीघ्र सवत् १९३० लाइट प्रेस बनारस में १८ [२८] पृष्ठ का बा० हरिश्चन्द्र एक मूर्तिपूजक हिन्दू ने जो कि गोकुलिया गोस्वामी मत में था, उसे शब्दश आर्यभाषा में छपवा कर मुद्रित किया। आज तक पाच बार छप चुका है, परन्तु पृथक् पुस्तक [अर्थात् हुगली शास्त्रार्थ] विक्रयार्थ नहीं मिलता।

जीवनचरित पृ० ७९१।

काल श्रीयुक्त काशीराज महाराज के पास रहते हैं। सम्वत् १९२९ मे वे अपनी जन्मभूमि मे गये थे। वहां से कलिकाता मे भी गये थे और किसी स्थान मे ठहरे थे।

जिन के स्थान मे मै ठहरा था उनका नाम श्रीयुक्त राजा ज्योतीन्द्र मोहन-ठाकुर तथा श्रीयुक्त राजा शौरिन्द्र मोहन ठाकुर है। उनके पास तीन वार जा जा के ताराचरण ने प्रतिज्ञा की थी कि हम आज अवश्य शास्त्रार्थ करने को चलेंगे। ऐसे ही तीन दिन तक कहते रहे, परन्तु एक वेर भी न आये। इस्से बुद्धिमान् लोगो ने उनकी बात झूठी ही जान ली। मैं कलिकाता से हुगली मे आया और श्रीयुक्त वृन्दावनचन्द्र मण्डल जी के बाग मे ठहरा था। सो एक दिन उन्होने अपने स्थान मे सभा की। उसमे मै भी वक्तृत्व करने के वास्ते गया था तथा बहुत पुरुष सुनने को आये थे। उनसे मै अपना अभिप्राय कहता था। वे सब लोग सुनते थे। उसी समय मे ताराचरण पण्डित जी भी वहाँ आये। तब उन से वृन्दावन-चन्द्रादिको ने कहा कि आप सभा मे आइये जो इच्छा हो सो कहिये, परन्तु सभा के बीच मे पण्डि ताराचरण नहीं आये किन्तु ऊपर जाकर दूर से गर्जते थे।

वहाँ भी उन्होने जान लिया कि पण्डित जी कहते तो है परन्तु समीप क्यो नहीं जाते। इस्से जैसे वे ताराचरण जी थे वैसे ही उन्होने जान लिये। फिर जब नव घण्टा बज गया तब लोगो ने मेरे से कहा कि अब समय दश घण्टा का है। उठना चाहिये। बहुत रात आगई।

फिर मैं और सब सभास्थ लोग उठे। उठके अपने अपने स्थान मे चले गये। फिर मैं बाग मे चला आया। उसके दूसरे दिन वृन्दावनचन्द्र मण्डल जी ने मेरे से कहा कि उस वक्त ताराचरण भी आये थे। तब मैंने उनसे कहा कि सभा मे क्यो नहीं आये। उन्होने कहा कि वे तो बड़ा अभिमान करते हैं। तब मैंने उनसे कहा जो अभिमान कर्ता है सो पण्डित नहीं होता किंतु वह काम मूर्ख का ही है। और जो पडित होता है सो तो कभी अपने मुख से अपनी बड़ाई नही कर्ता। जो ताराचरण पण्डित जी अभिमान मे डूबे ही जाते होवै तब तो उनको मेरे पास एक वार ले आइये। फिर वे अभिमानसमुद्र मे डूबने से बच जांय तो अच्छा हो। तब वृन्दावनचन्द्रादिको ने कहा कि आप बाग मे चलिये और जैसी आप की इच्छा हो वैसा शास्त्रार्थ कीजिये। पण्डित जी की कुछ इच्छा न देखी। तब वृन्दावनचन्द्र से मैंने कहा कि आप उनसे कहें कि कुछ चिन्ता आप न करें। स्वामी जीने हमसे कह दिया है कि पण्डितजी प्रसन्नता से आवैं। मै किसी से विरोध नहीं रक्खता। तब तो पण्डित जी ने कहा कि हम चलेंगे।

सो मङ्गलवार की सध्या समय मे वहुत लोग नगर से शास्त्रार्थ सुनने को आये।[1]

वृन्दावन चन्द्र भी वहुत लोगो के साथ आये। तथा पाठशालाओ के अध्यक्ष श्री भूदेव मुकुर्ज्या आये। तथा श्री हरिहर तर्कसिद्धान्त पण्डित भी आये। उसके पीछे पण्डित ताराचरण जी सशिष्य तथा अपने ग्राम निवासिओ के साथ आये (जोकि उनके पक्षपाती थे।) ये सव लोग आके सभा के स्थान मे इकट्ठे भये। तव मैं भी उस स्थान मे आया। फिर सव यथायोग्य वैठे। तव ताराचरणजी ने प्रतिज्ञा की कि हम प्रतिमा का स्थापनपक्ष लेते हैं। फिर मैंने कहा कि जो आपकी इच्छा हो सो लीजिये मै तो इस वात का खण्डन ही करूगा।

तव उन्ने मुझ से कहा कि इस सवाद मे वाद होना ठीक है वा जल्प अथवा वितण्डा। उनसे मैंने कहा कि वाद ही होना उचित है। क्योकि जल्प और वितण्डा सज्जनो को करना कभी उचित नहीं। वाद गोतमोक्त लेना। तव उनो ने भी स्वीकार किया। फिर दूसरी यह प्रतिज्ञा उस समय मे की गई कि ४ चार वेद तथा ४ चार उपवेद, ६ छ॰ वेदो के अङ्ग और छ. दर्शन मुनियो के किये तथा मुनि और ऋषियो के किये छ॰ शास्त्रो.के व्याख्यान उन्हो के वचन प्रमाण से ही कहना। अन्य कोई का प्रमाण नहीं, अर्थात् जो कुछ खण्डन वा मण्डन करना सो उन्हीं के अक्षरो से ही करना अन्यथा नहीं। तव उन ने भी स्वीकार किया। मैंने भी।

(जहाँ २ तर्करत्न शब्द आवै वहाँ २ ताराचरण पण्डित जी को जान लेना। और जहां २ स्वामी शब्द आवै वहाँ २ दयानन्द सरस्वती स्वामी जी को जान लेना)।

तर्करत्न—पातञ्जल सूत्रम् (चित्तस्य आलम्वने स्थूल आभोगो वितर्कः इति व्यासवचनम्) तर्करत्न के हाथ में पुस्तक भी थी। उस को देखा तव भी मिथ्या ही उन्ने लिखा, क्योकि योगशास्त्र पढा होय तव उस शास्त्र को जान सक्ता है। तर्करत्न ने पढ़ा तो था नहीं। इस्से उन्ने अशुद्ध लिखा। जो पढ़ा भया होता है सो ऐसा भ्रष्ट कभी नहीं लिखता।

देखना चाहिये कि ऐसा पातञ्जल शास्त्र मे सूत्र ही नहीं है। किन्तु ऐसा सूत्र तो है—

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनस.स्थितिनिवन्धनी इति। सो इससूत्र के व्याख्यान मे नासिकाग्रे धारयत इत्यादिक वहाँ लिखा है। यह तो उन ने जाना भी नहीं। इस से उन का लिखना भ्रष्ट है। फिर लिखते हैं कि इति व्यासवचनम। इस प्रकार का वचन व्यास जी ने कहीं योगशास्त्र की व्याख्या मे नहीं लिखा। इस्से यह भी उनका वचन भ्रष्ट ही है। फिर यह लिखा कि—

(स्वरूपे साक्षाद्वती प्रज्ञा आभोग स च स्थूलविषयत्वात् स्थूल इत्यादि)

[1] चैत्र सु० ११ सम्वत् १९३०। ८ एप्रिल १८७३।

यह भी उनका लिखना अशुद्ध ही है, क्योकि प्रतिज्ञा तो ऐसी पूर्व की गई थी कि वेदादिक शास्त्र वचनो से ही प्रतिमापूजन का स्थापन हम करेगे और वचन फिर लिखा वाचस्पति का। इस्से तर्करत्न की प्रतिज्ञाहानि हो गई। प्रतिज्ञा की हानि होने से उनका पराजय हो गया। क्योकि—प्रतिज्ञाहानिः प्रतिज्ञान्तरमित्यादिक निग्रहस्थान होते हैं। यद्यपि हम को जय तथा पराजय की इच्छा कभी नहीं है तथापि गोतम मुनि जी ने इस प्रकार के २६ निग्रहस्थान लिखे हैं।

निग्रहस्थान सब पराजय के स्थान ही होते हैं। और पहिले प्रतिज्ञा की थी कि जल्प और वितण्डा न करेंगे। फिर जाति-साधन से प्रतिमा का स्थापन करने लगे, क्योकि प्रतिमा भी स्थूल साधर्म्य से आती है।

स्वामी—यावान् जागरितावस्थाविषयः तावान् सर्वः स्थूलः कुत इत्यादि। मैंने उनको ज्ञापक से जना दिया कि ये गृहस्थ हैं इन की अप्रतिष्ठा न हो जाय। तदपि उन ने कुछ भी नहीं जाना। जानैं तो तब जब कुछ शास्त्र पढा हो अथवा बुद्धि शुद्ध हो। साधर्म्यवैधर्म्योत्कर्षापकर्षेत्यादिक २४ चौबीस प्रकार का शास्त्रार्थ जाति के विषय मे गोतम मुनि जी ने लिखा है। इसके नहीं जानने से जल्प और वितण्डा तर्करत्न ने किये क्योकि—

यथोक्तोपपन्नश्छलजातिनिग्रहस्थानसाधनोपालम्भो जल्पः ॥ १ ॥ सप्रतिपक्षस्थापना हीनो वितण्डा। २ ॥ जैसा कि इन सूत्रो का अभिप्राय है वैसा ही तर्करत्न जी ने प्रतिमापूजन का स्थापन करने मे जल्प और वितण्डा ही किया।

इस्से दूसरी वेर प्रतिज्ञा हानि उनने की। द्वितीय पराजय उनका हुआ॥ यदुक्तं भवता तेनैव प्रतिमापूजनमेव सिध्यत्येव तस्याः स्थूलत्वात्, इस मे तीन वेर एव शब्द लिखने से यह जाना गया कि ताराचरण जी को सस्कृत का यथावत् बोध भी नहीं है। इस्से तर्करत्न जी अभिमान मे डूबे जाते हैं क्योकि हम बड़े पण्डित है। इस प्रकार का जो स्वमुख से कहना है सोई विद्याहीनता को जनाता है। फिर लोकान्त[र]स्थ शब्द से मैंने उन को जनाया कि जो चतुर्भुज को आप लेते हो सो तो वैकुण्ठ मे सुने जाते हैं। उप अर्थात् समीप आसना अर्थात् स्थिति सो मनुष्य लोक मे रहने वाला कैसे कर सकेगा। कभी नहीं। और जो पाषाणादिक की मूर्ति शिल्पी की रची भई सो तो विष्णु है नहीं, तब भी पडित जी कुछ नहीं समझे। क्योकि जो कुछ विद्या पढ़ी होती अथवा सत्पुरुषो का सग किया होता तो समझ जाते। सो तो कभी किया नहीं। इस्से ताराचरण जी उस बात को न समझ सके।

फिर एक कहीं से सुनी सुनाई ब्राह्मण की श्रुति विना प्रसग से पढ़ी। सो यह है—(अथ स यदा पितॄनावाहयति पितृलोकेन तेन सम्पन्नो महीयते) इस

श्रुति से लोकान्तरस्थ की भी उपासना आती है, इस अभिप्राय से देखना चाहिये। इस श्रुति मे उपासना लेशमात्र नहीं आती, क्योकि यह श्रुति जिस योगी को अणिमादिक सिद्धि हो गई हैं वह सिद्ध जिस २ लोक मे जाने की इच्छा कर्त्ता है उस २ लोक को उसी समय प्राप्त होता है। सो जब पितृलोक मे जाने की इच्छा कर्त्ता है, पितृलोक को प्राप्त होके आनन्द कर्त्ता है। क्योकि (तेन पितृ-लोकेन महीयते) इत्युक्तत्वात् । ऐसे इच्छामात्र से ही ब्रह्मलोकादिक मे विहार कर्त्ता है। इस्से इस श्रुति मे मर कर उस लोक मे जाता है अथवा पितरो की उपासना इस लोक मे कर्त्ता है इस अभिप्राय के नहीं होने से ताराचरण जी का कहना मिथ्या ही है। इस्से क्या आया कि अर्थान्तर का जो कहना है सो निग्रहस्थान ही है। निग्रहस्थान के होने से पराजय हो गया।

स्वामी–सर्वः स्थूल इत्यनेनेत्यादि देहान्तरगतस्य प्राप्तित्वादिति दिव्ययोग देहप्राप्तिस्वाद्योगिनो न तु प्राकृतदेहस्य माहात्म्यमिदमित्यर्थस्य जागरूक-त्वात् देहान्तर अर्थात् जो दिव्ययोग सिद्धियो से प्राप्त होता है। उस देह से यह बात होती है। और जो अयोगी का देह नाम शरीर उस्से कभी यह बात नहीं होती।

तर्करत्न.—प्रथमत. अस्माभिरित्यादि दूषण अथवा भूषण का ज्ञान तो विद्या होने से होता है। अन्यथा नहीं। क्योकि दूषण तो आपके वचनो मे है। परन्तु आपने नहीं जाने। यह आपके बुद्धि का दोष है। जो आपने प्रत्यक्ष दिखाये दूषणो को भी नहीं जाना, ऐसे दूषणों को तो बालक भी जान सक्ता है। तन्मध्ये प्रतिमापि वर्त्तते इत्येवेत्यादि। आप देख लीजिये कि हम वाद ही करेंगे जल्प और वितण्डा कभी नहीं। फिर बार बार स्थूलत्व साधर्म्य से ही प्रतिमापूजन स्थापन किया चाहते हो। सो अपनी प्रतिज्ञा को आप ही नाश कर्ते हैं। और फिर चाहते हो कि हमारा विजय होवै। सो कभी नहीं हो सक्ता है। क्योकि विजय तो पूर्ण विद्या और सत्य भाषण कहने से होता है। सो आप में एक भी नहीं। इससे आप विजय की इच्छा कभी मत करो। किन्तु आप को अपने पराजय की इच्छा करनी उचित है। किञ्च जो आप लोगो की इच्छा होवै तो वेदादिक सत्य शास्त्रों को अर्थ ज्ञान सहित पढ़ना चाहिये। जब आप लोग यथावत् सत्यशास्त्रो को पढ़ेंगे तथा पढ़ावेंगे तब फिर आप लोगो का पराजय कभी न होगा। किंतु सर्वत्र विजय ही होगा। अन्यथा नहीं। दृष्टान्तत्वेनेत्यादि छान्दोग्य दहरविद्यायामित्यादि चेति। उस श्रुति का एक अंश भी दार्ष्टान्त में नहीं मिलने से वह आप का कहना मिथ्या ही है। सो मैंने कह दिया पहिले उससे जान लेना। यह किसने कहा कि जीवता पुरुष को उपासना का अधिकार नहीं है। सो यह आपका कहना मिथ्या ही

है। क्योंकि ब्रह्मविद्या का और पाषाणादिक मूर्ति पूजन का क्या प्रसङ्ग है। कुछ भी नहीं। इस्से वह भी अर्थान्तर है। अर्थान्तर के होने से निग्रहस्थान अर्थात पराजय स्थान आप का है। सो आप यथावत् विचार करके जान लेवैं।

(तर्करत्नः)—प्रथमतः अस्माभिः यत् भवत्पक्ष इत्यादि तत्र प्रतिमापि वर्त्तेते इत्येवेति। आप जान लेवैं कि साधर्म्य हेतु प्रमाण से ही बोलते हैं।

इससे आपके कहे जितने दूषण हैं वे सब आप के ऊपर ही आ गये। क्योंकि आप अपनी प्रतिज्ञा अर्थात् वाद ही हम करेंगे ऐसी प्रथमतः कह चुके हैं। फिर जल्प और वितण्डा ही वारवार करते हैं। इससे अपना पराजय आप ही कर चुके। क्योंकि आप को जो विद्या और बुद्धि होती तो कभी ऐसी भ्रष्ट बात न कर्त्ते। और निग्रहस्थान मे वारंवार न आते। आपको संस्कृतभाषण करने का भी यथावत् ज्ञान नहीं है। क्योंकि प्रथमतः अस्माभिः यत् ऐसा भ्रष्ट असंबद्ध भाषण कभी न कर्त्ते। किञ्च प्रथमतो स्माभिर्यत् ऐसा श्रेष्ठ और संबद्ध संस्कृत ही कहते। दृष्टान्ते सर्वविषयाणां साम्यप्रयोजनं नास्तीति। यह भी आप का कहना भ्रष्ट ही है। क्योंकि मैंने कब ऐसा कहा था कि सब प्रकार से दृष्टान्त मिलता है। वह श्रुति एक अंश से आप के अभिप्राय मे मिलती नहीं। इससे मैंने कहा कि इस श्रुति का पढ़ना आपका मिथ्या ही है ऐसा ही आप का कहना सब भ्रष्ट है।

(स्वामी)—तच्चेत्यादि तत्र प्रतिमापि वर्त्तते यह आप का जो कहना है सो प्रतिज्ञान्तर ही है। क्योंकि स्थूलत्व तुल्य जो प्रतिमा मे और गर्दभादिको मे है। इस हेतु से ही प्रतिमा पूजन का स्थापन करा चाहते हो। सो फिर भी जल्प और वितण्डा ही आती है। वाद नहीं इससे वार वार आप का पराजय होता गया। फिर भी आप को बुद्धि वा लज्जा न आई। यह बड़ा आश्चर्य जानना चाहिये कि अभिमान तो पण्डितता का करै और काम करै अपण्डित का।

(तर्करत्नः)—प्रतिमापि वर्त्तते इत्यादि अयं तु प्रकृतविषयस्य साधक न तु प्रतिज्ञान्तर इत्यादि। प्रकृत विषय यही है कि प्रतिमा पूजन का स्थापन, सो स्थापन वाद से और वेदादिक सत्य शास्त्रो के प्रमाण से ही करना। फिर उस प्रतिज्ञा को छोड़ के जल्प तथा वितण्डा और मिथ्या कल्पित वचन ये वाचस्पत्यादिको के उनसे स्थापन करने मे लग गये। अहो इत्याश्चर्य कि ताराचरण जी की बुद्धि विद्या के बिना बहुत छोटी है। जो प्रतिज्ञा करके शीघ्र ही भूल जाती है। यह आपका दोष नहीं किन्तु आपकी बुद्धि का दोष है। और आपके काम क्रोध अविद्या लोभ मोह भय विषयासक्त्यादिक दोषो का दोष है। तर्करत्न जी यह आप देख

लीजिये कि कितने वड़े २ दोप आप मे हैं। प्रथम तो प्रतिमापूजन का स्थापन पक्ष लेके फिर जब कुछ भी स्थापन न हो सका तब उपासनामात्रमेव भ्रममूलम् अपने आप ही खडन प्रतिमापूजन का करने लगे कि भ्रम मूल अर्थात् प्रतिमापूजन मिथ्या ही है। इस से आपके पक्ष का आपने ही खण्डन कर दिया। फिर मिथ्या ग्रन्थ जो पञ्चदशी उस के प्रमाण देने लग गये। और जो प्रथम वेदादिक जो २० वीस सनातन ऋषि मुनियो के किये मूल और व्याख्यान तथा परमेश्वर के किये ४ चार वेद इन के प्रमाण से वोलेंगे सो आपकी प्रतिज्ञा मिथ्या हो गयी। प्रतिज्ञा के मिथ्या होने से आप का पराजय भी हो गया। फिर भ्रान्तिरस्माक न दूपणीया यह भी पहले आपका कहना है सो कोई भी पण्डित न कहेगा कि भ्रान्ति भूपण होता है। यह तो आपकी भ्रान्त वुद्धि का ही वैभव है। और जे सज्जन लोग हैं वे तो भ्रान्ति को दूपण ही जानते हैं। तथा भ्रम' खलु द्विविधः इत्यादि यह पञ्चदशी का वचन है यह भी प्रतिज्ञा से विरुद्ध ही है क्योकि वेदादिक शास्त्रो मे इस की गणना नहीं है। पापाणादिक की रचित मूर्त्ति मे देववुद्धि का जो कर्त्ता है सो दीप प्रभा मे मणि भ्रम की नाई ही है क्योकि दीप तो कभी मणि न होगा और मणि तो सदा मणि ही रहेगा। सो आपने मुख से तो कहा परन्तु हृदय मे शून्यता के होने से कुछ भी नहीं जाना। ऐसा ही आपका सव कथन भ्रष्ट है। आपको जो कुछ भी ज्ञान होय तब तो जान सकते अन्यथा नहीं। तर्करत्न जी ने आगे २ जो २ कुछ कहा है सो २ सव भ्रष्ट ही है। वुद्धिमान् लोग विचार लेवैं। ताराचरण जी इस प्रकार के मनुष्य हैं कि कोई वुद्धिमान् सामने जैसा वालक। और भापण वा श्रवण करने के योग्य भी नहीं क्योकि जिस को वुद्धि और विद्या होती है सोई कहने वा श्रवण मे समर्थ होता है। सो तर्करत्नजी [मे] न वुद्धि है और न कुछ विद्या है। इस्से न कहने और सुनने मे समर्थ हो सकते हैं। इन का नाम जो तर्करत्न कोई ने रक्खा है सो अयोग्य ही रक्खा है। क्योंकि अविज्ञाते तत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तितस्तत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः यह गौतम मुनि जी का सूत्र है। इस का यह अभिप्राय है कि जिस पदार्थ का तत्त्वज्ञान अर्थात जिस का यथावत् स्वरूप ज्ञान न होवै उस के ज्ञान के वास्ते कारण अर्थात् हेतु और प्रत्यक्षादि प्रमाणो की उपपत्ति अर्थात यथावत् युक्ति से ऊह नाम वितर्क अर्थात् विविध विचार और युक्तिपूर्वक विविध वाक्य कहना विनय पूर्वक श्रेष्ठों से उसको कहते हैं तर्क,सो इस का लेशमात्र सम्बन्ध भी ताराचरण जी मे नहीं होने से तर्करत्न तो नाम अनर्थक है। किन्तु इनके कथन मे थोड़े से दोप मैंने देखाये हैं। जैसा कि समुद्र के आगे एक विन्दु। किन्तु उनके भापण मे केवल दोप ही हैं गुण एक भी नहीं। सो विद्वान् लोग विचार कर लेवैं। वेई ये ताराचरणजी हैं कि जव काशी नगर के पण्डितो से आनन्द वाग मे सभा भई थी उसमे वहुत विशुद्धानन्द स्वामी तथा

वाल शास्त्री इत्यादिक पण्डित आये थे उनके सामने डेढ़ पहर तक एक वात मे मौन करके बैठे रहे थे। दूसरी वात भी मुख से नहीं निकली थी। और जो उन का कुछ भी सामर्थ्य होता तो अन्य पण्डित लोग क्यो शास्त्रार्थ कर्त्ते। जव उनने उपासना मात्रमेव भ्रममूलम् [कहा तव] उसी वक्त श्री भूदेव मुख्यर्ज्या आदिक श्रेष्ठ लोग उठ गये कि पण्डित आये तो प्रतिमा पूजन का स्थापन करने को किन्तु वह अपना आप खण्डन कर चुके। ये पण्डित कुछ भी नहीं जानते हैं ऐसा कह के उठ के चले गये। फिर अन्य पुरुषो से उन्होने कहा कि पण्डित हार गया।

स्वामी—श्रीमत्कथनेनैव प्रतिमापूजनविघातो जात एवेति शिष्टा विचारयन्तु। ताराचरण जी से मैंने कहा कि आपके कहने से ही प्रतिमा पूजन का विघात अर्थात खण्डन हो गया और मैं तो खण्डन कर्ता ही हूं।

फिर पण्डित जी चुप होके ऊपर के स्थान मे चले गये। उसके पीछे मैं भी ऊपर जाने को चला। तव पण्डित सीढ़ि मे मिले। मैंने उनका हाथ पकड़ लिया और कहा कि ऊपर आओ। फिर ऊपर जाके सव वृन्दावनचन्द्रादिको के सामने उन पण्डित ताराचरण से मैंने कहा कि आप ऐसा वखेड़ा क्यो करते फिरते हैं। तव वे वोले कि मै तो काकभाषा का खण्डन करता हूं और सत्य शास्त्र पढ़ने तथा पढ़ाने का उपदेश भी करता हूं और पाषाणादिक मूर्त्ति पूजन भी मिथ्या ही जानता हूं परन्तु मैं जो सत्य सत्य कहूं तो मेरी आजीविका नष्ट हो जाय तथा काशीराज महाराज जो सुनैं तो मुझ को निकाल वाहर कर देवै। इस्से मै सत्य सत्य नहीं कह सकता हूं। जैसे कि आप सत्य सत्य कहते हैं। देखना चाहिए कि इस प्रकार के मनुष्यो से जगत् का उपकार तो कुछ नहीं वनता किन्तु अनुपकार ही सदा वनता है। विना सत्य सत्य उपदेश के उपकार कभी नहीं हो सकता। इतना मेरे को अवकाश नहीं है कि मिथ्या वादि पुरुषो के साथ सम्भाषण किया करै। जो जो मैंने लिखा है इस में इसी से सज्जन लोग जान लेवै।[१]

इस के आगे जिन शब्दो के अर्थ के नहीं जानने से टीकाकारो को भ्रम हो गया है तथा नवीन ग्रन्थ वनाने वाले और कहने वाले तथा सुनने वाले को भी भ्रम होता है उन शब्दो का शास्त्र रीति तथा प्रमाण और युक्ति से जो ठीक ठीक अर्थ हैं उन्हो का प्रकाश संक्षेप से लिखा जाता है। प्रथम तो एक प्रतिमा शब्द है। प्रतिमीयते यया सा प्रतिमा। अर्थात् प्रतिमानम् जिस्से प्रमाण अर्थात् परिमाण किया जाय उस को कहना प्रतिमा, जैसे कि छटांक आधपाव पावसेर सेर पसेरी

---

१ यहा पर शास्त्रार्थ समाप्त हो जाता है। इससे आगे प्रतिमापूजन की विस्तृत आलोचना है।

इत्यादिक और यज्ञ के चमसादिक पात्र, क्योकि इन से पदार्थों के परिमाण किये जाते हैं। इस्से इन्हो का ही नाम है प्रतिमा। यही अर्थ मनु भगवान ने मनुस्मृति में लिखा है—

तुलामानं प्रतीमानं सर्वं च स्यात् सुलक्षितम्।
पट्सु पट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत्॥

पक्ष पक्ष मे वा मास मास मे अथवा छटवें २ मास तुला की राजा परीक्षा करै। क्योकि तराजू की दण्डी मे भीतर छिद्र कर के पारा उस में डाल देते हैं। जब कोई पदार्थ को तौल के लेने लगते हैं तब ढडी को पीछे नमा देते हैं। फिर पारा पीछे जाने से चीज़ अधिक आती है। और जब देने के समय मे ढडी आगे नमा देने हैं उस्से चीज थोडी जाती है। इस्से तुला की परीक्षा अवश्य करनी चाहिए तथा प्रतिमान अर्थात् प्रतिमा की भी परीक्षा अवश्य करै राजा, जिस्से कि अधिक न्यून प्रतिमा अर्थात् दुकान के वांट जितने हैं उन्हो का ही नाम है प्रतिमा, इसी वास्ते प्रतिमा के भेद[क] अर्थात् घाट वाढ़ तौलने वाले के ऊपर दण्ड लिखा है—

संक्रमध्वजयष्टीनां प्रतिमानां च भेदक ।
प्रतिकुर्याच्च तत्सर्वं पंच दद्याच्छतानि च॥

यह मनु जी का श्लोक है। इस का अभिप्राय है कि सक्रम अर्थात् रथ,उस रथ के ध्वजा की यष्टि जिस के ऊपर ध्वजा बान्धी जाती है और प्रतिमा छटाक आदिक वटखरे इन तीनो को तोड डालै वा अधिक न्यून कर देवै उन को उस्से राजा वनवा लेवै और जैसा जिस का ऐश्वर्य उस के योग्य दण्ड करै। जो दरिद्र होवै तो उस्से ५०० पाच सै पैसा राजा दण्ड लेवै। जो कुछ धनाढ्य होवै तो ५०० सै रुपैया उस्से दण्ड लेवै। और जो बहुत धनाढ्य होवै उस्से ५०० सै अशर्फी दंड लेवै रथादिकों को उसी के हाथ सें वनवा लेवै। इस्से सज्जन लोग वटखरा तथा चमसादिक यज्ञ के पात्र उन्हो को ही प्रतिमा शब्द से निश्चित जानैं।

दूसरा पुराण शब्द है पुराभव पुराभवा वा पुराभवश्च इति पुराण पुराणी पुराण। जो पुराणा पदार्थ होवै उस को कहते हैं पुराण। सो सदा विशेषण वाची ही रहता है तथा पुरातन प्राचीन और प्राक्तन आदिक शब्द सब हैं। तथा इनो के विरोधी विशेषण वाची नूतन नवीन अद्यतन अर्वाचीन आदिक शब्द हैं। जे विशेषण वाची शब्द होते है वे सब परस्पर व्यावर्तक होते हैं, जैसे कि यह चीज़ पुरानी है तथा यह चीज नवीन है। पुराण शब्द जो है सो नवीन शब्द की व्यावृत्ति कर देता है यह पदार्थ पुराना है अर्थात् नया नहीं और यह पदार्थ नया है अर्थात् पुराना नहीं। जहां जहां वेदादिको में पुराणादिक शब्द आते हैं वहां वहां इन अर्थों

के वाचक ही आते हैं अन्यथा नहीं। ऐसा ही अर्थ गौतम मुनि जी के किये सूत्रों के ऊपर जो वात्स्यायन मुनि का किया भाष्य उसमे लिखा है—

वहां ब्राह्मण पुस्तक जे शतपथादिक उनो का ही नाम पुराण हैं। तथा शंकराचार्य जी ने भी शारीरक भाष्य मे और उपनिषद् भाष्य मे ब्राह्मण और ब्रह्मविद्या का ही पुराण शब्द से ग्रहण किया है। जो देखा चाहे सो उन शास्त्रो मे देख लेवै। वह इस प्रकारसे कहा है कि जहां जहां प्रश्न और उत्तर पूर्वक कथा होवै उसका नाम इतिहास है और जहां जहां वंश कथा होवै ब्राह्मण पुस्तको मे उसका नाम पुराण है। और ऐसे जो कहते हैं कि १८ अठारह ग्रन्थो का नाम पुराण हैं, यह बात तो अत्यन्त अयुक्त है। क्योकि उस बात का वेदादिक सत्यशास्त्रो मे प्रमाण कहीं नहीं है और कथा भी इनो मे अयुक्त ही है। इनो का नाम कोई पुराण रक्खै तो इनों से पूछना चाहिए कि वेद क्या नवीन हो सकते हैं। सब ग्रन्थो से वेद ही पुराने हैं और यह बात कहते है कि अश्वमेध की जो पूर्ति हो जाय उसके १० में दिन पुराण की कथा यजमान सुनै। सो तो ठीक ठीक है कि ब्राह्मण पुस्तक की कथा सुनै। और जो ऐसा कहे कि ब्रह्म वैवर्तादिको की क्यो नहीं सुनै इनसे पूछना चाहिए कि सत्ययुग त्रेता और द्वापर मे जब जब अश्वमेध भये थे तब तब किस की कथा सुनी थी। क्योकि उस वक्त व्यास जी का जन्म भी नहीं भया था। तब पुराण कहां थे। और जो ऐसा कहै कि व्यास जी युग युग मे थे। यह बात भी उसकी मिथ्या है क्योंकि अब तक युधिष्ठिरादिको का निशान दिल्ली आदिको मे देख पड़ता है। उसी वक्त व्यास जी और व्यास जी की माता आदिक वर्तमान थे। इस्से यह भी उसका कहना मिथ्या ही है। पुराण जितने हैं ब्रह्मवैवर्त्तादिक वे सब सम्प्रदायी लोगो ने अपने २ मतलब के वास्ते बना लिए हैं। व्यास जी का वा अन्य ऋषि मुनियो का किया एक भी पुराण नहीं है। क्योकि वे बड़े विद्वान् थे और धर्मात्मा। उनका वचन सत्य ही है। तथा छः दर्शनो में उनो के सत्य वचन देखने मे आते हैं मिथ्या एक भी नहीं और पुराणो में मिथ्या कथा तथा परस्पर विरोध ही है और जैसे वे सम्प्रदायी लोग हैं वैसे ही उनके बनाये पुराण भी सब नष्ट हैं। सो सज्जनों को ऐसा ही जानना उचित है अन्यथा नहीं।

तीसरा देवालय और चौथा देव पूजा शब्द है। देवालय, देवायतन, देवागार तथा देवमन्दिर इत्यादिक सब नाम यज्ञशालाओ के ही है क्योकि जिस स्थान मे देवपूजा होवै उसके नाम हैं देवालयादिक। और देव संज्ञा है परमेश्वर की तथा परमेश्वर की आज्ञा जो वेद उसके मन्त्रो की भी देव सज्ञा है। देव जो होता है सोई देवता है। यह बात पूर्वमीमांसा शास्त्र मे विस्तार से लिखी है। जिस को देखने

की इच्छा हो वह उस शास्त्र में देख ले। विस्तार से लिखी है। जो कि शास्त्र कर्मकांड के ऊपर है वे जैमिनि मुनि के किये सूत्र हैं। यहां तक उसमे लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु महादेवादिक देव जे देवलोक मे रहते हैं उनका भी पूजन कभी न करना चाहिए एक परमेश्वर के विना। सो उस में इस प्रकार से निषेध किया है कि (यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्) यह यजुर्वेद की श्रुति है ब्रह्मादिक जे देव वे जव यज्ञ कर्त्ते हैं तव उनो से अन्य कौन देव हैं जे कि उन के यज्ञो मे आके भाग लेवै। सो उनो से आगे कोई देव नहीं है। और जो कोई मानेगा तो उस के मत मे अनवस्था दोष आवेगा। इस्से परमेश्वर और वेदो के मन्त्र उनो को ही देव और देवता मानना उचित है अन्य कोई को नहीं। अग्निर्देवतेत्यादिक जो यजुर्वेद में लिखा है सो अग्नि आदिक सव नाम परमेश्वर के ही हैं क्योकि देवता शब्द के विशेषण देने से इसमें मनुस्मृति का प्रमाण है —

आत्मैव देवता. सर्वाः सर्वमात्मन्यवस्थितम्।
आत्मा हि जनयत्येषां कर्मयोगं शरीरिणाम् ॥१॥
प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि।
रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥२॥
एतमग्निं वदन्त्येके मनुमेके प्रजापतिम्।
इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥३॥

इन श्लोको से आत्मा जो परमेश्वर उसी का देवता नाम है। और अग्न्यादिक जितने नाम हैं, वे भी परमेश्वर के ही हैं। परन्तु जहां जहां ऐसा प्रकरण हो कि उपासना स्तुति प्रार्थना तथा इस प्रकार के विशेषण वहा २ परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्यत्र नहीं। किन्तु सर्वमात्मन्यवस्थितम् सिवाय परमेश्वर के कोई मे सव जगत् नहीं ठहर सक्ता और प्रशासितारं सर्वेषामित्यादिक विशेषणो से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्य का नहीं। क्योकि सवका शासन करने वाला विना परमेश्वर से कोई नहीं। तथा सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म और पर पुरुष परमेश्वर से भिन्न ऐसा कोई नहीं हो सकता है। निरुक्त मे भी यह लिखा है कि (यत्र देवतोच्यते तत्र तल्लिङ्गो मन्त्र.) जहा जहां देवता शब्द आवै तहां तहा उस नाम वाले मन्त्र को ही लेना। जैसे कि अग्निर्देवता इसमे अग्नि शब्द आया सो जिस मन्त्र में अग्नि शब्द होवै उस मन्त्र का ही ग्रहण करना। अग्निमीळे पुरोहितमिति यह मन्त्र ही देवता है अन्य कोई नहीं। इस्से क्या आया कि परमेश्वर और वेदो के मन्त्र तो देव और देवता हैं। जिस स्थान मे होम, परमेश्वर का विचार ध्यान और समाधि करै उसके नाम हैं देवालयादिक। इसमें मनुस्मृति का प्रमाण भी है—

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।

होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञो ऽतिथिसेवनम् ॥१॥
स्वाध्यायेनार्चयेतर्षीन् होमैर्देवान्यथाविधि ।
पितॄन् श्राद्धैर्नृनन्नैर्भूतानि बलिकर्म्मणा ॥

इन श्लोको से क्या आया कि होम जो है सोई देवपूजा है अन्य कोई नहीं । और होमस्थान जितने है वे ही देवालयादिक शब्दो से लिये जाते हैं । पूजा नाम सत्कार क्योकि अतिथिपूजनम् होमैर्देवानर्चयेत् अतिथियो का पूजन नाम सत्कार करना तथा देव परमेश्वर और मन्त्र इन्हो का सत्कार इसका नाम है पूजा अन्य का नही । और पाषाणादि मूर्त्ति स्थान देवालयादिक शब्दो से कभी नहीं लेना । तथा घण्टा नादादि पूजा शब्द से कभी नही लेना । देवल और देवलक शब्द का यह अर्थ है कि—

यद्वित्तं यज्ञशीलानां देवस्वं तद्विदुर्बुधाः ।
अयज्वनां तु यद्वित्तमासुरस्वं प्रचक्षते ॥१॥

यह मनु का श्लोक है । इसका यह अभिप्राय है कि जिन्हो का यज्ञ करने का शील अर्थात् स्वभाव होवै उसका सब धन यज्ञ के वास्ते ही होता है अर्थात् देवार्थ धन है । (यद्दैवं तदेव देवस्वम्) अर्थात् होम के लिये जो धन होवै उसका नाम देवस्व है सो भिक्षा अथवा प्रतिग्रह करके यज्ञ के नाम से धन लेके यज्ञ तो करै नहीं और उस धन से अपना व्यवहार करै इसका नाम है देवल । सो इसकी शास्त्र मे निन्दा लिखी है । देव पितृकार्य मे उसको निमन्त्रण कभी न करना चाहिये । ऐसा उसका निषेध लिखा है । और जो यज्ञ के धन की चोरी कर्त्ता है वह होता है देवलक (कुत्सितो देवलो देवलक कुत्सिते इत्यनेन कन् प्रतत्य.) देवलक तो अत्यन्त निन्दित है ।

एक यह अन्धकार लोगो का देखना चाहिये कि विद्वान् भोजनीयः,सत्कर्त्त-व्यश्चेति विद्वान् को भोजन कराना चाहिये और उसका सत्कार भी करना चाहिये । इस्से कोई की ऐसी बुद्धि न होगी कि पाषाणादिक मूर्ति को भोजन कराना वा उसका सत्कार करना चाहिये । वह भी बात ऐसी ही है । एक बात वे लोग कहते हैं कि पाषाणादिक तो देव नहीं हैं, परन्तु भाव से वे देव हो जाते हैं । उनसे पूछना चाहिये कि भाव सत्य होता है वा मिथ्या । जो वे कहे कि भाव सत्य होता है फिर उन से पूछना चाहिये कि कोई भी मनुष्य दुःख का भाव नहीं कर्त्ता फिर उसको क्यो दुःख होता है और सुख का भाव सब मनुष्य सदा चाहते हैं फिर उनको सुख सदा क्यो नहीं होता । फिर वे कहते हैं कि यह बात तो कर्म से होती है । अच्छा तो आपका भाव कुछ भी नहीं ठहरा अर्थात् मिथ्या ही हुआ सत्य नही हुआ । आप से मै पूछता हू कि अग्नि मे जल का भाव करके हाथ डाले तो क्या वह न जल जायगा किन्तु जल

ही जायगा। इससे क्या आया कि पाषाण को पाषाण ही मानना और देव को देव मानना चाहिये अन्यथा नही। इससे जो जैसा पदार्थ है वैसा ही उसको सज्जन लोग मानै। काश्यादिक स्थान, गगादिक तीर्थ, एकादशी आदिक व्रत,राम शिव कृष्णादिक नामस्मरण तथा तोवा शब्द वा यीसू के विश्वास से पापों का छूटना और मुक्ति का होना, तिलक छाप माला धारण तथा शैव शाक्त गाणपत्य वैष्णव क्रिश्चन और महम्मदी और नान्हक कवीर आदिक सम्प्रदाय इन्हो से पाप सव छूट जाते हैं और मुक्ति भी होती है, यह अन्यथा बुद्धि ही है। क्योकि इस प्रकार के सुनने और मिथ्या निश्चय के होने से सव लोग पापो मे प्रवृत्त होजाते हैं, कोई न भी होगा, कभी कोई मनुष्य पाप करने मे भय नहीं करते हैं जैसे—

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं काशीक्षत्र विनश्यति।
काशीक्षेत्रे कृतं पापं पंचक्रोश्यां विनश्यति ॥१॥
पंचक्रोश्यां कृतं पापमन्तर्गृह्यां विनश्यति।
अन्तर्गृह्यां कृतं पापमविमुक्ते विनश्यति ॥२॥
अविमुक्ते कृतं पापं स्मरणादेव नश्यति।
काश्यां तु मरणान्मुक्तिर्नात्र कार्या विचारणा ॥३॥

इत्यादिक श्लोक काशीखण्डादिको में लिखे हैं। काश्यां मरणान्मुक्तिः कोई पुरुष इसको श्रुति कहता है। सो यह वचन उसका मिथ्या ही है, क्योकि चारो वेदो के वीच में कहीं नहीं है। कोई ने मिथ्या जावालोपनिषद् रच लिया है किन्तु अथर्व वेद के सहिता में तथा कोई वेद के ब्राह्मण मे इस प्रकार की श्रुति है नहीं। इस्से यह श्रुति तो कभी नहीं हो सक्ती किन्तु कोई ने मिथ्या कल्पना करली है। जैसे कि अन्यक्षेत्रे कृतं पापं इत्यादि श्लोक मिथ्या वना लिये हैं। इस प्रकार के श्लोको को सुनने से मनुष्यो की बुद्धि भ्रष्ट होने से सदा पाप मे प्रवृत्त हो जाते हैं। इस्से सव सज्जन लोगो को निश्चित जानना चाहिये कि जितने जितने इस प्रकार के माहात्म्य लिखे हैं वे सव मिथ्या ही हैं। इनो से मनुष्यो का वड़ा अनुपकार होता है। जो कोई धर्मात्मा बुद्धिमान् राजा होवै तो इन पुस्तको का पठन पाठन सुनना सुनाना वन्द करदे और वेदादि सत्य शास्त्रो की यथावत् प्रवृत्ति करा देवै। तव इस उपद्रव की यथावत् शाति होने से सव मनुष्य शिष्ट हो जायें अन्यथा नहीं।

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिवन्धनी॥ [यो० समा० ३५]

इस सूत्र के भाष्य में लिखा है कि एतेन चन्द्रादित्यग्रहमणिप्रदीपरत्नादिषु प्रवृत्तिरुत्पन्ना विषयवत्येव वेदितव्येति। इससे प्रतिमा पूजन कभी नहीं आसक्ता क्योकि इनो में देवबुद्धि करना नहीं लिखा। किन्तु जैसे वे जड़ हैं वैसे ही योगी लोग उनको जानते हैं और वाह्यमुख जो वृत्ति उसको भीतर मुख करने के वास्ते योगशास्त्र

की प्रवृत्ति है। वाहर के पदार्थ का ध्यान करना योगी लोग को नहीं लिखा। क्योंकि जितने सावयव पदार्थ हैं उनमे कभी चित्त की स्थिरता नहीं होती ' और जो होवै तो मूर्त्तिमान् धन पुत्र दारादिक के ध्यान मे सव संसार लगा ही हैं परन्तु चित्त की स्थिरता कोई की भी नहीं होती। इस वास्ते यह सूत्र लिखा—

'विशोका वा ज्योतिष्मती [यो० समा० ३६] इसका यह भाष्य है—

प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनस स्थितिनिवन्धनीत्यनुवर्त्तते। हृदयपुण्डरीके धारयतो या वुद्धिसंवित् वुद्धिसत्त्वं हि भास्वरमाकाशकल्पन्तत्र स्थितिवैशारद्यात् प्रवृत्तिः सूर्येन्दुग्रहमणिप्रभारूपाकारेण विकल्पते। तथास्मितायां समापन्नं चित्तं निस्तरङ्गमहोदधिकल्पं शान्तमनन्तमस्मितामात्रं भवति। यत्रेदमुक्तम्—तमणुमात्रमात्मानमनुविद्यास्मीति एवं तावत् संप्रजानीत इति। एषा द्वयी विशोका विषयवती, अस्मितामात्रा च प्रवृत्तिर्ज्योतिष्मतीत्युच्यते यया योगिनश्चित्तं स्थितिपदं लभत इति॥

इसमें देखना चाहिये कि हृदय मे धारणा चित्त की लिखी। इससे निर्मल प्रकाशस्वरूप चित्त होता है। जैसा सूक्ष्म विभु आकाश है वैसी ही योगी की वुद्धि होती है। तत्र नाम अपने हृदय मे विशाल स्थिति के होने से वुद्धि की जो शुद्ध प्रवृत्ति सोई वुद्धि सूर्य चन्द्र ग्रह मणि इनो की जैसी प्रभा वैसे ही योगी की वुद्धि समाधि मे होती है। तथा अस्मिता मात्रा अर्थात् यही मेरा स्वरूप है ऐसा साक्षात्कार स्वरूप का ज्ञान वुद्धि को जव होता है, तव चित्त निस्तरग अर्थात् निष्कम्प समुद्र की नाईं एक रस व्यापक होता है। तथा शान्त निरुपद्रव अनन्त अर्थात् जिसकी सीमा न होवै यही मेरा स्वरूप है अर्थात् मेरा आत्मा है सो विगत अर्थात् शोक रहित जो प्रवृत्ति वही विषयवती प्रवृत्ति कहाती है। उसी को अस्मितामात्र प्रवृत्ति कहते हैं। तथा ज्योतिष्मती भी उसी को कहते हैं। योगी का जो चित्त है सोई चन्द्रादित्य आदिक स्वरूप हो जाता है।

सू० स्वप्ननिद्राज्ञानालम्वनं वा॥ [यो० समा० ३८]

भाष्य०—स्वप्नज्ञानालम्वनं निद्राज्ञानालम्वनं वा तदाकारं योगिनश्चित्त स्थितिपदं लभत इति। जैसे स्वप्नावस्था मे चित्त ज्ञानस्वरूप होके पूर्वानुभूत् सस्कारो को यथावत् देखता है तथा निद्रा अर्थात् सुषुप्ति मे आनन्दस्वरूप ज्ञानवान् चित्त होता है ऐसा ही जागृतावस्था में जव योगी ध्यान कर्त्ता है, इस प्रकार आलम्व से तव योगी का चित्त स्थिर हो जाता है। सू० यथाभिमतध्यानाद्वा॥ [यो० समा० ३९]

भाष्य०—यदेवाभिमतं तदेव ध्यायेत् तत्र लब्धस्थितिकमन्यत्रापि स्थितिपदं लभत इति। नासिकाग्रे धारयतो या गन्धसंवित्। इससे लेके निद्राज्ञानालम्वन वा यहां तक शरीर मे जितने चित्त के स्थिर करने के वास्ते स्थान लिखे हैं इनो मे से कोई स्थान मे योगी चित्त को धारण करै।

जिस स्थान में अपनी अभिमति उस मे चित्त को ठहरावै ।

सू० देशवन्धश्चित्तस्य धारणा । [योग० विभू० १]

भाष्य०—नाभिचक्रे हृदयपुण्डरीके मूर्ध्नि ज्योतिषि नासिकाग्रे जिह्वाग्र इत्येवमादिषु देशेषु वाह्ये वा विषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेण वन्ध इति । वन्धो धारणा नाभि हृदय मूर्द्धा ज्योति अर्थात् नेत्र नासिकाग्र जिह्वाग्र इत्यादिक देशो के वीच मे चित्त को योगी धारण करै तथा वाह्य विपय जैसाकि ओङ्कार वा गायत्री मन्त्र इनमें चित्त लगावे हृदय से। क्योकि तज्जपस्तदर्थभावनम् । [स० पाद २८] यह सूत्र है योगका। इसका योगी जप अर्थात् चित्त से पुनः पुन. आवृत्ति करै और इसका अर्थ जो ईश्वर उसको हृदय में विचारै। सू० तस्य वाचकः प्रणव.। [स० २७] ओङ्कार का वाच्य ईश्वर है और उस का वाचक ओङ्कार है। वाह्य विषय से इनको ही लेना और कोई को नहीं। क्योकि अन्य का प्रमाण कहीं नहीं।

सू० तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् [योग० विभू० २] भाष्य-तस्मिन्देशे ध्येयालम्वनस्य प्रत्ययस्यैकतानता सदृश प्रवाहः प्रत्ययान्तरेणापरामृष्टो ध्यानम्।

तिन देशो मे अर्थात् नाभि आदिको मे ध्येय जो आत्मा उस आलम्वन की और चित्त की एकतानता अर्थात् परस्पर दोनो की एकता चित्त आत्मा से भिन्न न रहै तथा आत्मा चित्त से पृथक् न रहैं उसका नाम है सदृशप्रवाह, जव चित्त प्रत्येकचेतन से ही युक्त रहै अन्य प्रत्यय कोई पदार्थान्तर का स्मरण न रहै तव जानना कि ध्यान ठीक हुवा।

सू० तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः। [यो० विभू० ३]

जव ध्याता ध्यान और ध्येय इन तीनो का पृथक् भाव न रहै तव जानना कि समाधि सिद्ध हो गई।

सू० त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः। [यो० वि० ७]

यमादिक पाच अङ्गो से धारणा ध्यान और समाधि ये तीन अन्तरङ्ग हैं और यमादिक वहिरङ्ग हैं।

सू० भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्। [विभू० २६]

चन्द्रे ताराव्यूहज्ञानम् ॥ २७ ॥

ध्रुवे तद्गतिज्ञानम् ॥ २८ ॥

नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम् ॥२९॥

मूर्द्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम् ॥३२॥

प्रातिभाद्वा सर्वम् ॥३३॥

इत्यादिक सूत्रो से यह प्रसिद्ध जाना जाता है कि धारणादिक तीन अङ्ग आभ्यन्तर के हैं सो हृदय में ही योगी परमाणु पर्यन्त [जितने] पदार्थ हैं उनको योग

ज्ञान से योगी जानता है। बाहर के पदार्थों से किंचिन्मात्र भी ध्यान मे सम्बन्ध योगी नहीं रखता। किन्तु आत्मा से ही ध्यानका सम्बन्ध है और से नहीं। इस विषय में जो कोई अन्यथा कहै सो उसका कहना सब सज्जन लोग मिथ्या ही जानें क्योंकि—

सू० योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥ [समा० २] ॥

तदा द्रष्टुस्वरूपेऽवस्थानम् ॥ [समा० ३] ॥

जब योगी चित्तवृत्तियो को निरोध कर्त्ता हैं बाहर और भीतर से उसी वक्त द्रष्टा जो आत्मा उस चेतन स्वरूप मे ही स्थित हो जाती है अन्यत्र नहीं।

सू० विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥समा० ८॥

विपरीत ज्ञान जो होता है उसी को मिथ्या-ज्ञान कहते हैं। उसको तो योगी छोड के ही होता है अन्यथा कभी नही। इससे क्या आया कि कोई योगशास्त्र से पाषाणादिक मूर्त्ति का पूजन कहे सो मिथ्या ही कहता है इसमे कुछ भी सन्देह नहीं।

श्लोक :-

दयाया आनन्दो विलसति परः स्वात्मविदित.
　　सरस्वत्यस्यान्ते निवसति मुदा सत्यवचना।
तदाख्यातिर्यस्य प्रकटितगुणा राष्ट्रिशरणा
　　स को दान्तः शान्तो विदितविदितो वेद्यविदित. ॥१॥

श्रीदयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचितमिदमिति विज्ञेयम् ॥[1]

---

१ हुगली शास्त्रार्थ तथा प्रतिमापूजन विचार का एक संक्षिप्त रूप आर्यदर्पण के निम्न-लिखित अङ्कों में छपा है—फरवरी १८८०, पृ० ३५—४२। मार्च १८८० पृ० ५०—५३। जून १८८० पृ० १२५—१२७।

[१] # पत्रांश[1]—(२) [४]

विशुद्धानन्द निकल गया। इस मे जो सत्य सत्य कारण होय सो शीघ्र लिख भेजना। वृन्दावन सेठ जी के बाग मे पूर्व निकट मलूकदास जी का बाग ठिकाना लिफाफा के ऊपर लिख दीजिए। हम को अनुमान से ज्ञात है कि युगल किशोर से पढ़ाया नहीं गया होगा। अथवा और कुछ कारण हुआ होगा। जो ऐसे ऐसे विद्यार्थी चले जाएगे तो पढ़ाने वाले की त्रुटि गिनी जायगी। इसका हाल शीघ्र लिखो। और कौन क्या क्या पढ़ता है सो भी लिखना, जो जैसा वर्तमान होय। संवत् १९३०।[2]

[चैत्र वदी ४ शनि सवत् १९३०]

---

१. नहीं कह सकते कि यह पत्र किस को लिखा गया था, और मूल सस्कृत में था अथवा आर्यभाषा में। जीवनचरित से इतना निश्चित होता है कि पत्र में कासगज जिला ऐटा की पाठशाला का उल्लेख है। अत. वहीं के किसी अधिकारी को लिखा गया होगा।

२. प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ७८४ पर उद्धृत। इस के सम्बन्ध में पत्र से पहले प० लेखराम जी ने लिखा है—

"इस पाठशाला के सम्बन्ध में स्वामी जी की ७ मार्च १८७४ की चिट्ठी वृन्दावन से लिखी हुई थी। उस का सक्षिप्त अभिप्राय नीचे है।" इति।

[१] पत्र (३) [५]

स्वामी दयानन्द की आशीष पहुंचे। आगे सुदी ७ का लिखा पत्र पहुँचा। समाचार भी विदित हुआ। यहां एक मास तक तो हमारी स्थिति होगी। सो जानना। यहां की पाठशाला का प्रवन्ध वहुत अच्छा है। एक छः शास्त्रों का पढ़ाने वाला वहुत उत्तम अध्यापक रक्खा गया है। वैसा ही एक वैयाकरण-स्थापन किया गया है। दशाश्वमेध पर स्थान लिया गया है, वहुत उत्तम। इसमें पाठशाला पूर्णमासी के पीछे वैठेगी। केदारघाट का स्थान अच्छा नहीं था। इससे अव हमारे पास वाग[१] मे पाठशाला है। अच्छे २ विद्यार्थी भी पढ़ते हैं। सो जानना। आगे तुम पत्र देखते ही रुपया और पुस्तक जल्दी भेजदो। विलम्ब क्षण मात्र भी मत करना। और दिनेशराम को एक महाभाष्य पुस्तक देकर और सव पुस्तक यहा भेजदो। और जो दिनेशराम न दे तो फिर देखा जायगा। तुम अपने पास के पुस्तक और रुपया यह हुण्डी कराके शीघ्र भेजदो। आगे गोपाल वा अन्य को पढ़ने की इच्छा होवे सो चला आवे। ब्रह्मचारी लक्ष्मीनारायण यहा अव तक नहीं आया। और न कोई तुम्हारा पुत्र। किन्तु पत्र आया इसका यह उत्तर जानना। और सव यहा आनन्द मंगल है। और पं० युगलकिशोर मेहता गोपालदत्त और दिनेशराम आदि को भी हमारा प्रत्यभिवादन कह देना।

संवत् १९३१ मिति ज्येष्ठ सुदी १३ शुक्रवार। [२९ मई १८७४' काशी]

———

१ सर्यू प्रसाद बनिया का वाग। देखो प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ७८७ साधु ज्वाहरदास जी का कथन।

यह पत्र कानपुर निवासी वावू शिवसहाय गौड ब्राह्मण को लिखा गया था। यह व्यक्ति श्री स्वामी जी का प्रमाण पत्र लेकर काशी की पाठशाला के लिए भिन्न २ नगरों में धन एकत्र कर रहा था। जब वह फरुखावाद में था, तव उसे यह पत्र लिखा गया। देखो प० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० ७८७।

सवत् १९३६ तदनुसार सन् १८८० में यही श्री शिवसहाय मिश्र जी आर्य समाज कानपुर के मन्त्री थे। देखो भारत सुदशा प्रवर्तक मार्च १८८० पृ० ८।

[३] **विज्ञापन पत्र**[1] [६]

एक समाचार सबको विदित हो कि आप का आर्य्य-विद्यालय काशीमे संवत् १९३० पौष मास तदनुसार दिसम्बर सन १८७३ मे केदारघाट पर जिसका आरम्भ हुआ था वही अब मित्रपुर भैरवी मुहल्ला, मिश्र दुर्गाप्रसाद के स्थान मे संवत् १९३१ मिति आषाढ़ सुदी ५ शुक्रवार १९ जून सन् १८७४ प्रात काल ७ बजे से उपरान्त आरम्भ होगा। इसका प्रबन्ध अब अच्छे प्रकार होगा। प्रातः सात बजे से पठन और पाठन होगा दस ग्यारह तक और फिर एक बजे से पाँच बजे तक। इसमे अध्यापक गणेश श्रोत्रियजी रहेंगे। सो पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, पातञ्जल, सांख्य, वेदान्त दर्शन, ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक दश उपनिषद्, मनुस्मृति, कात्यायन और पारस्कर कृत गृह्यसूत्र, इनको पढ़ाया जायगा। थोड़े समय के पीछे चार वेद, चार उपवेद तथा ज्योतिष के ग्रन्थ भी पढ़ाये जायेंगे और एक उपवैयाकरण रहेगा। वह अष्टाध्यायी, धातुपाठ, गण[पाठ] आदिगण, शिक्षा और प्रातिपदिक गणपाठ यह पाँच पाणिनि मुनिकृत और पतञ्जलि मुनिकृत भाष्य, पिङ्गलमुनिकृत छन्दोग्रन्थ यास्कमुनिकृत निरुक्त, निघण्टु और काव्यालकार सूत्रभाष्य इन सब को पढ़ना होगा। जिनको पढ़ने की इच्छा होवे सो आकर पढ़ें। जो विद्या और श्रेष्ठाचार की परीक्षा मे उत्तम होगा उसकी परीक्षा के पीछे पारितोषिक यथायोग्य मिलेगा। सो परीक्षा मास मास मे होगी। इसमे ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य सब पढ़ेगे वेद पर्य्यन्त। और शूद्र मन्त्रभाग को छोड़के सब शास्त्र पढ़ेगे। फिर जब जब इस आर्य विद्यालय के लिये अधिकाधिक चन्दा होगा तब तब अध्यापक और विद्यार्थी लोगो को भी बढ़ाया जायगा। इस की रक्षा और वृद्धि के लिये एक आर्यसभा स्थापित हुई है और एक आर्य-प्रकाश पत्र भी निकलेगा मास मास मे। इन तीनो बातो की प्रवृत्ति के लिये बहुत भद्र लोग प्रवृत्त हुए हैं और बहुत प्रवृत्त होगे। इससे ही आर्यावर्त्त देश की उन्नति होगी। इस विद्यालय मे यथावत् शिक्षा दी जावेगी जिससे कि सब उत्तम व्यवहार युक्त होवें।

हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

१ कविवचन सुधा आषाढ सुदी ६ शनि संवत् १९३१ तदनुसार २० जून १८७४ में प्रथम मुद्रित हुआ। वहां से विहारबन्धु भाग २ अङ्क २१ आषाढ सुदी १४ संवत् १९३१ तदनुसार २८ जून १८७४ में छपा। विहारबन्धु से पं० लेखराम जी ने लिया। जीवन चरित पृ० ७८८, ७८९। पं० लेखराम कृत जीवन चरित में अंग्रेजी तिथि के देने में जो अशुद्धि हुई है, वह हमने दूर कर दी है। पं० घासीरामकृत जीवन चरित पृ० २७१ पर भी तिथि की थोडी सी अशुद्धि रही है, पाठक उसे ठीक करलें।

[४] **[विज्ञापन]** [७]

इससे यह मेरा विज्ञापन है[1] आर्यावर्त्त देश का राजा इगरेज वहादुर से कि सस्कृत विद्या की ऋषि मुनियो की रीति से प्रवृत्ति करावै। इससे राजा और प्रजा को अनन्त सुख लाभ होगा। और जितने आर्यावर्त्त वासी सज्जन लोग हैं उनसे भी मेरा यह कहना है कि इस सनातन सस्कृत विद्या का उद्धार अवश्य करें ऋषि मुनियो की रीति से तो अत्यन्त आनन्द होगा। और जो यह सस्कृत विद्या लोप हो जायगी तो सव मनुष्यो की वहुत हानि होगी। इसमे कुछ सन्देह नहीं।

मैंने अपने घर मे कुछ वेद का पाठ और विद्या भी पढ़ी। फिर नर्मदा तट मे दर्शन शास्त्रो को पढ़ा। फिर मथुरा मे श्री स्वामी विरजानन्द सरस्वती दण्डी जी से पूर्ण व्याकरणादिक विद्याभ्यास किया जो कि वडे विद्वान थे। उनके पास रह के सब शका समाधान किये। फिर मथुरा से आगरा नगर मे दो वर्ष तक स्थिति किई। वहां ऋषि मुनियो के सनातन पुस्तक और नवीन पुस्तक भी वहुत मिले। उनको विचारा। फिर ग्वालेर मे स्थिति किई। वहां भी जो २ पुस्तक मिला उनका विचार किया। ऐसे ही देश देशान्तर मे भ्रमण किया। जहां २ जो २ पुस्तक मिला उनका विचार किया। जहां २ मुझ को शका रह जाती थी उनका स्वामी जी से उत्तर यथावत् पाया। फिर पुस्तको को देख के एकान्त मे जाके विचार किया। अपने हृदय मे शका और समाधान किये। सो यह ठीक २ निश्चय हृदय मे भया कि वेद और सनातन ऋषि मुनियो के शास्त्र सत्य हैं। क्योकि—इन मे कोई असभव वा अयुक्त कथा नही है। जो कुछ है उन शास्त्रो मे सो सत्य पदार्थ विद्या और सव मनुष्यो के वास्ते हितोपदेश हैं। और इनके पढ़ने से विना मनुष्य को सत्य २ ज्ञान कभी न होगा। इससे इनको अवश्य सव मनुष्यो को पढ़ना चाहिये। और जिनको दूर छोड़ने कहा कि न इनको पढ़े न पढ़ावें न इनको देखे क्योकि इनको देखने से वा सुनने से मनुष्य की वुद्धि विगड़ जाती है। इससे इन ग्रन्थो को ससार मे रहने भी न दें तो वहुत उपकार होय। सव मनुष्यो को यह व्यवहार करना उचित है कि पहर रात्रि रहे तव उठे। उठके शौचादिक

---

१ राजा जयकृष्णदास जी ने सत्यार्थ प्रकाश का पहला सस्करण मुद्रित कराया था। यद्यपि श्री स्वामी जी ने १४ समुल्लास ही लिखवाए थे, तथापि छपे केवल १२ समुल्लास ही थे। उपर्युक्त लेख हस्तलिखित प्रति के चौदहवें समुल्लास के अन्त में है।

क्रिया करे। फिर कुछ भ्रमण शुद्ध देश में करे। जहा २ शुद्ध वायु हो एकान्त में जाके गायत्री मन्त्रादिकों के अर्थ से परमेश्वर की स्तुति करे। फिर प्रार्थना करे कि हे परमेश्वर आप की कृपा से हम पवित्र होके और धर्म में तथा अच्छे गुण ग्रहणो में तत्पर होवैं। परन्तु आपकी कृपा से ही जो अच्छा होता है सो होता है। सो आप ऐसी सब जीवो पर कृपा कीजिये कि सब जीव आपकी आज्ञा सद्गुण ग्रहण और आपके स्वरूप मे ही विश्वासादि गुण युक्त होके स्थिर होवैं। फिर उपासना कि—सब इन्द्रिय प्राण और जीवात्मा को एकत्र स्थिर करके परमेश्वर में स्थिर समाधिस्थ होके अनन्त जो परमेश्वर का आनन्द उसमें मग्न हो जाय। फिर चिरकाल ऐसे परमे वर का ध्यान [करें।]

. .. .

परन्तु आर्यावर्त्त देश पर मुझ को वहुत पश्चात्ताप है क्योकि इस देश मे प्रथम वहुत सुखो और विद्याओ की उन्नति थी। वहुत ऋषि मुनि वडे २ विद्वान् इस देश मे भये थे जिन के अच्छे २ काम और अच्छे २ विद्यापुस्तक अव तक चले आते हैं। और अच्छे २ राजधर्म के चलाने वाले राजा भी हुए हैं जिनो ने कभी पक्षपात कोई का नहीं किया है किन्तु सदा धर्म न्याय मे ही प्रवृत्त भये हैं। सो देश इस वक्त ऐसा विगड़ा है कि इतना विगाड़ कोई देश मे नहीं देखने मे आता है। सो हमारी प्रार्थना सव आर्यावर्त्त वासी राजा और प्रजा से है कि उक्त वुरे कामो को छोड के अच्छे कामो मे प्रवृत्त होवैं। और जो कोई अन्य देशीय राजा आर्यावर्त्त मे है उस्से भी मेरी प्रार्थना यह है कि इस देश में सनातन ऋषि मुनियो के किये उक्त ग्रन्थ और ऋषि मुनियो की कई वेदो की व्याख्या उसी रीति से वेदो का यथावत् अर्थ ज्ञान और उनमे उक्त जे व्यवहारो के नियम उनकी प्रवृत्ति यथावत् करावै। इसी से ही यह देश सुधरेगा अन्यथा नही। और भी यह है सत्य विद्या और सत्य व्यवहार सव देशो मे प्रवृत्त होना चाहिये। परन्तु आर्यावर्त्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या सस्कृत ही है जो कि उक्त प्रकार से प्रथम कही उसी से इस देश का कल्याण होगा। अन्य देश भाषा से नहीं। अन्य देश भाषा तो जितना प्रयोजन, उतनी ही पढ़नी चाहिये। और विद्या स्थान मे सस्कृत ही रखना चाहिये। राजा का मूर्ख होना तो वहुत वुरा है परन्तु प्रजा का भी मूर्ख रहना वुरा है। किन्तु मूर्खों के ऊपर राज्य करने से राजा की शोभा नहीं। किन्तु प्रजा को विद्या युक्त धर्मात्मा और चतुर करके उन पर राज्य करने में राजा और प्रजा की शोभा और सुखो की उन्नति होती है। ऐसा कानून राजा और प्रजाको चलाना और मानना चाहिये जिस्से द्यूत चोरी परस्त्रीगमन और मिथ्या साक्षी वाल्यावस्था मे विवाह और विद्या का लोप न होने पावे। फिर राजा और प्रजा उस कानून को धर्म माने और उस पर ही सव चलैं। परन्तु ऐसा वह कानून न होय

जिस्से यह लोक और परलोक दोनो शुद्ध होवै। वह कानून धर्म से कुछ भी विरुद्ध न होवे क्योकि धर्म नाम है न्याय का और न्याय नाम है पक्षपात का छोड़ना उनका उनका ज्ञान सब मनुष्यो को यथावत् होना चाहिये। धर्म का रक्षक विद्या ही है क्योकि विद्या से ही धर्म और अधर्म का वोध होता है। उन से सब मनुष्यो को हिताहित का वोध होता है अन्यथा नहीं। सो मैं परमेश्वर से अत्यन्त प्रार्थना कर्ता हू कि हे परमेश्वर हे सच्चिदानन्द अनन्त स्वरूप हे नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव हे न्यायकारिन् हे सर्व शक्तिमन् हे अज हे अमृत हे अन्तर्यामिन् हे सर्व जगदुत्पादक हे सर्व जगद्धारक हे करूणानिधे सब जगत् के ऊपर ऐसी कृपा करें जिस्से कि सम्पूर्ण विद्या का लाभ वेदादिक सत्य शास्त्रो का ऋषि मुनियो की रीति से होगा। परन्तु सर्वत्र धर्म व्यवहार मे परमेश्वर की प्रार्थना सब को करनी उचित है। इसी से सब उत्तम ला[भ] मनुष्यो को होते हैं।[1]

ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इन्द्रो बृहस्पति शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥ नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्॥ ऋतमवादिषं सत्यमवादिषं तन्मामावीत्तद्वक्तारमावी-दावीन् मामावीद् वक्तारम्॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषा-
विरचिते चतुर्दशस्समुल्लासस्सम्पूर्णः॥१४॥[2]

---

१ प्रथम सस्करण के सत्यार्थ प्रकाश के लिए जो प्रेस कापी लिखी गई थी, उस में १३वा समुल्लास कुरानमत समीक्षा का था और १४वा समुल्लास ईसाई मत अथवा "गौरण्डमत" समीक्षा का था। ईसाई मत समीक्षा के अन्त में यह उपर्युक्त विज्ञापन था। उस का कुछ अत्यन्त उपयोगी अश हम ने यहा छाप दिया है।

कुरान मत समीक्षा और बाइबिल समीक्षा दोनों लिखी जा चुकी थीं, इस का उल्लेख पत्र सख्या ९ में देखिए। वह पत्र २३ जनवरी सन् १८७५ का है।

तेरहवें समुल्लास अर्थात् कुरान मत समीक्षा के सम्बन्ध में श्री स्वामी जी का लिखवाया हुआ निम्नलिखित विवरण है। इसे अत्युपयोगी और ऐतिहासिक दृष्टि से बहुमूल्य समझ कर आगे देते हैं—

"जितना हमने लिखा इसका यथावत् सज्जन लोग विचार करैं, पक्षपात छोड के तो जैसा हमने लिखा वैसा ही उनको निश्चय होगा। यह कुरान के विषय में जो लिखा गया है सो पटना शहर ठिकाना गुड हट्टा में रहने वाले मुन्शी मनोहर लाल जो कि अरबी में भी पण्डित हैं उनके सहाय से और निश्चय करके कुरान के विषय में हमने लिखा है।" इति।

२ यह सारा लेख सम्वत् १९३१ के मध्य अथवा सितम्बर १८७४ में लिखाया गया।

[१] पत्र (४) [८]

वलदेवसिंह शर्मा

आजकल दयानन्द स्वामी यहा पर ठहरे हैं। उनको तुम्हारी बडी जरूरत है और तुम्हारे विना इनको वहुत क्लेश है। इसलिये स्वामी जी की आज्ञानुसार तथा राजा साहव की सम्मति से तुमको लिखा जाता है कि तुम इस पत्र को देखते ही जल्द चले आओ। और कुछ विलम्ब मत करो। क्योंकि स्वामी जी दो चार दिनमे दक्षिण मे जायेंगे।

ता० २६ सितम्बर सन् १८७४ }
असूज वदी १ शनिवार सम्वत १९३१ वि०।[२] } ज्वाला प्रसाद (प्रयाग)[१]

---

[१] पत्र (५) [९]

स्वस्तिश्रीमच्छ्रेष्ठोपमायोग्य लाला हरिवंशलाल आदि को दयानन्द सरस्वती स्वामी की आशिष पहुंचे। या आगे मडनराम पण्डित और वलदेवदत्त स्वामी जी के शिष्य का आशीर्वाद यथोचित पहुँचे। यहाँ कुशल आनन्द है। आप लोगो का कुशल आनन्द चाहिये। आगे पौष वदि ५ सम्वत् १९३१ (२८ दिसम्बर सन् १८७४) को अहमदावाद से राजकोट काठियावाड़ में गये। वहाँ दस वारह वक्तृत्व भये। लोग सुन के वडे प्रसन्न भये। राजकोट मे एक राजकुमार पाठशाला है। सो इसमे राजकुमार लोग पढ़ते हैं। कई राजकुमार वक्तृत्व मे आते रहे। सुन के वहुत प्रसन्न भये। एक दिन मास्टर लोग स्वामी जी को राजकुमार पाठशाला

---

१ श्री ज्वालाप्रसाद जी राजा जयकृष्णदास जी के पुत्र थे। श्री स्वामी जी की आज्ञा से ही यह पत्र लिखा गया था। पत्र किस स्थान को लिखा, गया, यह ज्ञात नहीं हो सका।

२. पं० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० २२३ से लिया गया।

मे ले गये। स्वामी जी ने वहाँ भी वक्तृत्व किया। राजकुमार लोग सब बहुत प्रसन्न भये। फिर स्वामी जी ने राजकुमार लोगो को बहुत शिक्षा की। फिर राजकुमार पाठशाला के प्रिन्सिपल साहब ने स्वामी जी से कई बातें पूछीं। स्वामी जी ने सब का उत्तर दिया। साहिब भी बहुत प्रसन्न हुए। स्वामी जी को दो जिल्द ऋग्वेद के पुस्तक नज़र किये।

पौष सुदि ११ सवत् १९३१ सोमवार (१८ जनवरी १८७५) को राजकोट से अहमदाबाद को चले। पूर्णमासी बृहस्पतिवार (२१ जनवरी सन् १८७५) को अहमदाबाद मे आये। पांच सात दिन रहेंगे। फिर मुम्बई की तरफ जायेंगे। बड़ोदा मे नहीं जायेंगे। बड़ोदा मे गडबड मची है। अंग्रेज लोग फौज लेके चढ़ गये, राजा को कैद कर लिया। राजा के ऊपर विष का फरेब लगा के।

आगे सत्यार्थ-प्रकाश कितने अध्याय तक छपा? जितना छपा हो तितना राजा जयकृष्णदास के पास भेज दो। जल्दी छापो, यहां बहुत से लोग लेने को कहते हैं। इसके बिना बहुत हरकत है। और शिक्षा की पुस्तक छपी कि नहीं।[1] आगे शुभ हो।

संवत् १९३१ मिति माघ वदि २ शनिवार (२३ जनवरी सन् १८७५) आगे मुरादाबाद मे कुरान के खण्डन का अध्याय शोधने के वास्ते गया रहा। सो शोध के आप के पास आया कि नहीं? जो न आया हो तो राजा जयकृष्णदास जी को ख़त लिखो। जल्दी छापने के वास्ते भेज देवें, और बायबिल का अध्याय सब शोध करके छाप दो महीने मे छापने के वास्ते जो आपने लिखा है, सो दो महीने मे सब पुस्तक छाप दो। शुद्ध करके, अशुद्ध न होने पाये। और पाठशाला की व्यवस्था आप लोगो के ऊपर है? जैसे चले वैसे चलाये जाओ। हम लोग और स्वामी जी अति प्रसन्न हैं। स्वामी जी का आशीर्वाद सब लोगो से कह देना। जवाब इस पता से लिखना।

मुम्बई मे ठिकाना बालकेश्वर के समीप ठाकुर श्रीनारायण जी के नाम से भेज देना। हम को मिल जायेगा।[2]

---

१ शिक्षापत्री सवत् १९३१ सहस्य=पौष मास वद्य ११, रविवार को समाप्त हुई। (३ जनवरी १८७५)

२ यह पत्र प० लेखराम कृत उर्दू जीवन चरित पृ० २३३।२३४ से देवनागरी मे प्रतिलिपि किया गया है। मूल पत्र प० लेखराम जी के सग्रह से नष्ट हो गया प्रतीत होता है। उर्दू प्रतिलिपि में दो चार शब्द ही बदले गए है, शेष पत्र मूलवत् ही है।

यह हरिवशलाल बनारस के स्टार प्रेस में प्रथमावृत्ति का सत्यार्थप्रकाश छाप रहा था।

[१][1] पत्र (६) [१०]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यो गोपालरावहरिदेशमुखाभिधेभ्यो दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम । शमिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम् । अग्रे भाषया वृत्तम् । आगे आपने जो दवाइत और छतरी भेजा सो हमारे पास आगई । और प्रार्थनासमाज मे जो गान की चोपड़ी[2] है सो हमारे पास नहीं आई । आगे यहां वक्तृत्व भी होने वाला है । वक्तृत्व के वास्ते स्थान भी वन रहा है । और आर्य्यसमाज का भी प्रयत्न अच्छा हो रहा है । आप अहमदावाद मे आर्य्यसमाज का ढील न करैं । उसका यत्न किहीं रहैं । और आपके पुत्र के हाथ ४ पुस्तक सत्यार्थ-प्रकाश के १२० पृष्ठ तक छप गये हैं सो आपके पास भेजे हैं । पहुँचे कि नहीं । १ आपके वास्ते । १ भोलानाथ जी के वास्ते । १ महीपतिराम जी के वास्ते । १ वेचरभाई के वास्ते । जो न पहुंचे होंय तो पत्र भेज के मगा लीजिये । अव तक आप लोगो ने आर्य्यसमाज का प्रारम्भ किया[वा]नहीं । जो न किया होय तो जल्दी करै । और अच्छे काम मे देर नहीं लगाना चाहिये । और देखिये कि आर्य्यसमाज नाम रखने से उस पर किसी प्रकार का दोष नहीं आता । क्योकि उसमे ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना और सव उत्तम व्यवहार करने मे आवैंगे । सो आर्य्य नाम श्रेष्ठ का जो समाज । और प्रार्थनासमाज नाम रखने से अनेक दोष आने है । प्रार्थना क्रिया, उसका समाज क्या होगा । तथा स्तुति उपासना और सदुप-देशादि व्यवहार भी किये जाते हैं सो नामार्थ से विरुद्ध होता है । इस्से हम लोग कू नाम ऐसा रखना चाहिये कि जिस्से दोष न आवै । सो आर्य्यसमाज ही नाम रखना उचित है । प्रार्थनासमाजादि नहीं । सो आर्य्यसमाज प्रारम्भ होने का विलम्ब करना उचित नहीं । जल्दी करना चाहिये । इसीसे सवका हित होगा अन्यथा नहीं । आप कुछ फिकिर न करै । यहा निषेकादि अन्त्येष्टी पर्यंत सस्कार की चोपडी वनाने की तयारी हो रही है । और स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने के वास्ते वेदमन्त्रो से चोपड़ी वनने की तयारी है ।[3] और नियमो की भी और संध्या

---

१ गोपालराव हरिदेशमुख जज अहमदावाद के नाम लिखे गए १–६ पत्रो की प्रतिलिपि श्री मामराज जी मेरठ निवासी प० घासीराम एम ए के पास से अक्टूबर सन् २६ मे लाये थे । प०जी के पास ये प्रतिलिपिया ऋषि भक्त श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के सग्रह में आई थीं।

२ गुजराती भाषा में चोपडी शब्द पुस्तक का वाचक है ।

३ अर्थात् आर्याभिविनय ।

भाष्य की पुस्तक छप के तय्यार होने चहै है। दो चार दिन मे तयार हो जायगा। सो आपके वास्ते भेज देवैगे। मण्डनराम बलदेवदत्त का नमस्कार यथोचित पहुँचे। आगे वेदविरुद्धमतखण्डन[1] की पुस्तक जितनी मगानी होय उतनी मगा लीजिये। फिर नहीं मिलैगी। और सत्यार्थप्रकाश का भाग अभी एक २ रुपये मिलता है। सो जितना मगाना होय मगा लीजिये। और वहा का हाल सब लिखना। गान की चोपड़ी हमारे पास भेज दीजियेगा। इस पत्र का प्रत्युत्तर जलदी भेज दीजियेगा।

सं० १९३१ मिति फाल्गुन वद्य २ इतुवार।[2]

---

[२] पत्र (७) [११]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्य. श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुखाभिधेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुंस्तमाम। शर्मिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम। आगे पत्र आपका आया। समाचार सब मालूम भया। गान आदि पुस्तक ४, छाना १ दवात १ सब हमारे पास पहुंच गये। आगे मुम्बई मे कोट के मैदान मे सद्गृहस्थ लोगो ने मण्डप रचा है। उसमे एकान्तरे वक्तृत्व प्रश्नोत्तर की सभा होती है। मुबई के पण्डित लोगो ने कहा कि स्वामी जी को व्याकरण मे अच्छा अभ्यास नहीं है। इस बात को सुनके एक दिन व्याकरण की सभा किया। उसमे पण्डित लोग आये। व्याकरण मे प्रश्नोत्तर होने लगा। पण्डितो की धूड उड गयी। पण्डित लोग चुप हो गये। फिर सभा के लोगो ने पण्डितो से कबूल करा लिया। पण्डित लोगो ने कबूल कर लिया कि स्वामी जी को बहुत अच्छा व्याकरण आता है। फिर पण्डित लोगो से कहा कि व्याकरण का २ प्रश्न हम आप लोगो को लिखा देते है। उसका प्रमाण पूर्वक उत्तर लिख ल्याइये। उस दिन से सब लोगों को

---

१ वेदविरुद्धमतखण्डन के अन्त में उसका रचना-काल निम्नलिखित है—

शशिरामाङ्कचन्द्रेब्दे कार्तिकस्यासिते दले।
अमाया भौमवारे च ग्रन्थोऽयम्पूर्तिमागतः॥ १॥

अर्थात् सवत् १९३१ कार्तिक वद्य १५ मगलवार। (१० नवम्बर १८७४)। १० नवम्बर मगलवार को शुक्लपक्ष की प्रतिपदा भी थी।

२ २२ फरवरी १८७५।

बहुत विश्वास हो गया है। मुबई मे आर्यसमाज होने की तयारी है। और इन्दु-प्रकाश के सम्पादक विष्णुशास्त्री के पास आप लोगो मे से कोई ने "आकृष्णेनेति" मन्त्र के अर्थ हमारा उनके पर निश्चय के अर्थ पत्र भेजा होगा। उस पर उसने जो कुछ लिखा, सो सब मिथ्या ही है। और यह विष्णु शास्त्री धूर्त्त विद्याहीन हठी दुराग्रही मिथ्याचारी है। इसमें सन्देह नही। क्योकि उस विष्णु शास्त्री के विषय एक बानगी लिखते हैं कि ऐसी मूर्खता कोई विद्यार्थी भी नहीं करेगा। "ऋ गतिप्रापणयो।" इस धातु से रथ शब्द सिद्ध हुआ है। "रमु क्रीडायाम्" इस धातु से नहीं। इस्से यह अर्थ निर्युक्तिक और निर्मूल है। इस अधा की भीतर और बाहर की दोनो फूट गई आंख। पाणिनिमुनि रचित उणादिगणसूत्र प्रमाण हनिकुषिनीरमिकाशिभ्य. क्थन्।[1] हथ.। कुष्ठ॰। नीथः। रथ.। काष्ठम्॥ यास्को निरुक्तकारः-"रथो रहतेर्गतिकर्मण.।"[2] इत्यत्र "रममाणोऽस्मिंस्तिष्ठतीति वेति।" इस से रमु धातु से ही रथ शब्द सिद्ध होने से 'रमणीयो रथो रमतेऽस्मिन्निति वा' अत एव विष्णुशास्त्री का कहना व्यर्थ ही हुआ। और उसको सभा के लिये निमत्रण भी दिला है। परन्तु वहा काय को आवेगा। वह तो झूठा झूठा घर से बैठा बकेगा। जिसने उसके पास पत्र भेजा सो भी व्यर्थ किया। क्योकि ऐसे मिथ्यावादी मूर्ख के कहने का क्या ठिकाना। इसका खण्डन सभा मे हमने सब को सुना दिया तथा लिख भी दिया है। परन्तु वह धूर्त्त अपने पत्र मे छापेगा नहीं। और जो छापेगा तो उसका आप लोग लिखना कि हमारा किया समाधान और उनका खण्डन छापै। जो विष्णु शास्त्री न छापेंगे तो फेर अन्यत्र छपाया जायगा। आप लोग इन नष्ट बुद्धि वाले पक्षपातियो को पूछते हो निश्चय करने को, सो सायणाचार्यादिको को ही यथावत् वेदार्थ का बोध नहीं है तो उसके पीछे चलने वालो का यथावत् ज्ञान कहा से होगा। इसी लिये इन धूर्त्तों को मध्यस्थ हम नहीं करते। क्योकि इन पण्डितो की बुद्धि अविद्या लोभादि दोषो से नष्ट हो गई है। और सब अहमदाबाद के पण्डितो से उन्नीस वा बीस तथा वैसे ही सब पण्डितो का स्वभाव जानना। तथा हमारा नाम सुनने ही विपरीत उलटे चलते हैं। सो जिस पण्डित से पूछोगे वह झूठा ही कहैगा। इन पण्डितो को वेदार्थ ज्ञान का लेशमात्र भी ज्ञान नहीं है। पुस्तक आपने भेजे। सो आगये। आर्यसमाज का स्थापन शीघ्र करोगे तो अच्छा है।

सम्वत् १९३१ मिति फाल्गुन शुद्ध ९ मगलवार।[3]

---

१ २।२॥ २ निरुक्त ९।११॥ ३ १६ मार्च १८७५

[३] पत्र (८) [१२]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्य. श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुखादिभ्यो दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम् । शमिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम् । आगे मुम्बई मे चैत्र शुद्ध ५ शनिवार के दिन सध्या के साढ़े पाच वजते आर्य-समाज का आनन्द पूर्वक आरभ हुआ। ईश्वरानुग्रह से वहुत अच्छा हुआ। आप लोग भी वहा आरम्भ कर दीजिये । विलम्व मत कीजिये । नासिक मे भी होने वाला है। अव आर्य्य-समाजार्थ और सस्कारविधान का पुस्तक वेदमन्त्रो से बनेगा शीघ्र। इन्दुप्रकाश वाले विष्णुशास्त्री सुधारे वाला तो नहीं, किंतु कुधारे वाला मालूम पड़ता है । उसका प्रत्युत्तर करके उसके पास भेजा था, परन्तु उसने नहीं छापा । इससे पक्षपाती भी दीखता है । अव वह अन्यत्र छपवाया जायगा । सध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञविधान का भाष्य सहित पुस्तक यहां छपवाया गया है । सो १० पुस्तक आपके पास भेजा जाता है। यथायोग्य उत्तम पुरुषो को वांट देना। उन नियमो मे दो नियम वढ़े हैं। सो एक विवाहादि उत्साह किंवा मृत्यु, अथवा प्रसन्नता समय जो कुछ दान पुण्य करना उसमे से श्रद्धानुकूल आर्य्यसमाज के लिये अवश्य देना चाहिये । और दूसरा नियम यह है, जव तक नौकरी करने वाला तथा नौकर रखने वाला आर्य्यसमाजस्थ मिले तब तक अन्य को [न] रखना और न राखना। और यथायोग्य व्यवहार दोनो रखें। प्रीतिपूर्वक काम करें और करावै । डाकतर माणिकजी ने आर्य्यसमाज होने के लिए स्थान दिया है, परतु सकुचित है। सो अव वहुत वढ़ेंगे मिंवर। तव दूसरा नया बनेगा, किंवा कोई ले लिया जायगा। अत्यन्त आनन्द की वात है कि आप लोगोके ध्यान मे स्वदेशहित की वात निश्चित हुई है। परमात्मा के अनुग्रह से उन्नति नित्य इसकी होय।

सवत् १९३१ मिति चैत्र शुद्ध ६ रविवार ।[1]

आपके पुत्र के हाथ संध्यादि भाष्य के पुस्तक १० ।

———

१ ११ एप्रिल, १८७५ ।

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्य श्रीयुतगोपालरावदेशमुख-भोलानाथमहीपति-रामशर्मभ्यो हि श्रीयुतबैचराख्यादिभ्यश्च दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम् । शमिहास्ति तत्रत्य चाशास्महे । आगे आपका पत्र आया । देख के अत्यानन्द हुआ । यहा के आर्य्यसमाज अच्छी तरह चलता है । प्रतिदिन उन्नति ही होती जाती है । और ईश्वरकृपा से नित्य नित्य वढ़ता ही जायगा ।

आर्याभिविनय के २ अध्याय तो वन गये । और चार आगे वनने के है । आगे सस्कारविधान पुस्तक भी अवश्य शीघ्र ही वनेगा । आर्यसमाज के नियम और उसकी व्याख्या पुस्तक छपता है । फिर आपके पास भी भेजेंगे । सत्यार्थप्रकाश के भी १३ फार्म छप के आगये हैं । आपके पुत्र के हाथ भेजे जांयगे । ज्येष्ठ वद्य १५ के पूर्व वा पश्चात् पूना को हमारा जाने का विचार है । सो जिसको लिखने का योग्य होय, उसको आप लिखना । वडोदे को जब आप लिखेंगे, तब आवेंगे । वहा भी आप लोगो को आर्यसमाज उस समाज का नाम प्रसिद्ध चलाना चाहिये । उसमे वडा फायदा है । विचार से यही ठीक दिखता है । फिर जैसी इच्छा होय वैसा करो । परन्तु स्वदेशादि सब मनुष्यो का निर्विघ्न हित आर्यसमाज से यथार्थ होगा । अग्रेऽस्त्यत्रातीवानन्दस्तत्रत्योऽप्येवमेवास्त्वीश्वरानुग्रहेणेति । किं वहुना लेखेन वहुज्ञेषु ।

सवत् १९३२ मिति चैत्र वद्य ९ शनिवार ।[1]

और शिक्षापत्रिके खण्डन पुस्तक की गुजराती भाषा व्याख्या भी होगई है । उसके तीन वा चार फार्म होगे । १५ वा १६ रुपैये फार्म के हिसाव से ५० वा ६० रुपैये लगेंगे । सो वहा छपाओगे वा मुम्बई मे । परन्तु जो मुम्बई मे छपेगा तो अच्छा होगा । इसका उत्तर शीघ्र भेज देना ।

---

१ चैत्रवद्य ९ को बुधवार था । वैशाखवद्य ९ को शुक्रवार था । ज्येष्ठ वद्य ९ को शनिवार था अर्थात् २९ मई १८७५ । उसके पश्चात् श्रीस्वामी जी पूना गए । अत इस पत्र की प्रतिलिपिमें ज्येष्ठ के स्थान में चैत्र भूल मे लिखा गया है । आर्याभिविनय ग्रन्थ सवत १९३२ चैत्र सुदी १० गुरुवार तदनुसार १५ एप्रिल १८७५ को वनना आरम्भ हुआ । यह पत्र उसके पश्चात् ही लिखा गया है । इस पत्र में ज्येष्ठ १५ के समीप पूना को प्रस्थान करने का विचार प्रकट किया गया है । अत इस पत्र की ज्येष्ठ तिथि ही ठीक है ।

[५] पत्र (१०) [१४]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुख-भोलानाथ-महीपतिराम-बैचरभायाख्यादिभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्रत्यं नित्यमाशास्महे। आगे पूना मे महादेव गोविन्द रानडे, माधवराव मोरेश्वर कुटे तथा लस्कर मे गंगाराम भाऊ आदि पुरुषो ने अच्छी प्रकार व्याख्यानादि प्रवन्ध पूर्वक कराये। और व्याख्यान छपवाते भी हैं।[1] तथा वेदभाष्य बनवाने के लिये पण्डित रखने के वास्ते कुछ फड जमा किया है। और कुछ करने का भी है। तथा आर्यसमाज स्थापन अवश्य करना। इस लिये दो वक्त सभा होके व्यवस्थापक मण्डली निश्चित हो गई है। और एक सभा करने वाले है। उसमे प्रधान मन्त्री और कोषाध्यक्षादिक निश्चित करके आर्यसमाज का आरम्भ करने वाले हैं। सो शीघ्र ही होगा ऐसा मालूम पडता है। अन्य सब वर्त्तमान "ज्ञानप्रकाश" समाचार से आप लोगो ने देखा ही होगा। आगे हम यहा से सतारे को जाने वाले हैं दो एक दिन में। अथवा वडोदे की ओर आने वाले है। सो जब यहां से वा सतारे को जाके मुबई की ओर चलेंगे तब एक आद दिन दादरे के रेलघ[र] पर ठहर के उधर आने का विचार है। सो दादरे से आपके पास तार द्वारा खबर देने मे आवेगी। फेर जैसी आप खबर देंगे कि प्रथम वडोदे को ही आना किंवा सुरत और भरूच को होके वडोदे को आना, वैसा किया जायेगा। आगे एक पण्डित रखने के लिये महादेव गोविन्द आदि ने ५० रुपैयो का निश्चय किया है। तथा मथुरादास लौजी और छबिलदास लल्लू भाई आदि आर्यसमाज के सभासदों ने भी वेदभाष्य होने के लिये २०००० रुपैये जमा करने के लिये सेर १०० रुपैयो का खडा करके १०००० रुपैये तक तो सेर भरगये हैं। और बहुत शीघ्र वे लोग बीस हजार ही रुपैये जमा कर लेंगे, ऐसा मालूम पड़ता है। एक पण्डित के लिए राजा जयकृष्णदास जी ने स्वीकार किया ही है। तथा यहां महादेव गोविन्द आदि की तथा हमारी भी इच्छा है कि एक पण्डित के रखने के लिए ५० रुपैयो का प्रवन्ध आप लोगो की ओर से होय तो अच्छा है। फेर जैसी आप लोगो की इच्छा होय वै[सा] कीजिये। आगे

---

१ आर्यभाषा में केवल १५ व्याख्यान ही मिलते है परन्तु देवेन्द्र बाबू और प० घासीराम कृत जीवनचरितानुसार ५० व्याख्यान छपे थे।

हम वहुत आनन्द मे हैं ईश्वरानुग्रह से। तथा आप लोग अत्यन्त आनन्द में रहना। आगे अन्य सब लोगो से हमारा आशीर्वाद कह देना।

सवत् १९३२ श्रावण शुद्ध ८ मगल।[1]

यहां के पण्डित लोग सामने तो कोई भी नहीं आये किन्तु दूर से वड वड़ किया और करने भी हैं सो जानना।

---

[६] पत्र (११) [१५]

श्रीयुक्तास्सन्तु।

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावदेशमुखशर्म्मभ्यो दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्रत्य च नित्यमाशास्महे। आगे पूना और सातारा का वर्त्तमान वर्तमान पत्रो से सुन लिया होगा। एक नवीन वात यह है कि पूना में आर्य्यसमाज स्थापन होगया है। आगे आर्य्यसमाज स्थापनार्थ दो सभा पूना मे हुई थी। सो तो समाचार पत्रो से जाना होगा। परन्तु हम सतारे से आये तव यह निश्चित हुआ कि महादेव गोविंद रानडे प्रधान, केशवराव गोडवोले मन्त्री। जितने प्रार्थनासमाज के सभासद थे वे सब और अन्य वावा गोकुले तथा काशिनाथ गाडगील एव गगाराम भाऊ आदि लस्करस्थ ६० वा ७० सव सभासद हुवे हैं। और अन्य भी वहुत होने वाले हैं। तथा सतारे से भी कल्याणराव खजांची हेडमास्तर आदि तथा कृष्णराव विट्ठल विंचुरकर जज आदि उसी वक्त मेरे सामने आरम्भ करने वाले थे। परन्तु हमने कहा कि शीघ्रता मत करो। सो कुछ दिन के पीछे करने वाले हैं। आगे राणी का पुत्र[2] आ के जव तक कलकत्ते की ओर न जायगा, तव तक मुम्वई मे रहने का विचार है।[3] फेर सुरत, भरूच, वडोदे की ओर आने का विचार है। मुम्वई के समाज की अच्छी प्रकार उन्नति होती जाती है। तथा पाच हजार रुपैये पर्यंत वेदभाष्य वनाने के लिये इकट्ठा कर लिये हैं। और आगे होते जाते हैं। सो २०००० वा २५,००० करने वाले हैं। सो मालूम होता है कि कर लेंगे। एक पण्डित का खोज हो रहा है सस्कार की पुस्तक वनाने के लिये। सो अव तक

---

१ १० अगस्त १८७५ शुक्ला ८ को सोमवार है। अत मूल में शुक्ला ९ चाहिए।

२ एडवर्ड सप्तम।

३ यह पत्र मुम्वई मे लिखा गया है।

मिला नहीं है। सो वहा कोई ऐसा पण्डित होय तो भेज देओ। ४०, ५० वा ३० पर्य्यन्त मासिक का बने तो भेज देना। आगे आप लोगो को ईश्वर प्रसन्न रक्खे। हम भी तदनुग्रह से प्रसन्न हैं। आगे भोलानाथ साराभाई, वैचरदास अम्बाईदास तथा महीपतराम आदि को हमारा अशीर्वाद कहना।

सवत् १९३२ मिति आश्विन वद्य २ शनि।[1]

---

[१] पत्र (१२) [१६]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमा-

युक्तेभ्य श्रीयुतलालजी लक्ष्मणशास्त्रि पूर्णानन्द नाथुरामादिभ्यो दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुरत[माम् श] मिहास्ति तत्र भवदीय च नित्य[माशा] स्महे [चि] ठी मैंने भेजी है एक · · [दू]सरी केशवलाल नि[र्भय-राम] ·· [ती]सरी हरिश्चन्द्र चिन्ता[मणि] और यह चौथी चिठी भेजी जाती है। सब ग्रन्थो का हिसाब एक के पास रहना अच्छा है। सेठ हनुमतराम पित्ती जी के पास से रु० ७५) वा १५०) ले के लक्ष्मणशास्त्री जी को आर्य्याभिविनय की छपाई मे दिये होगे तथा लिखे प्रमाणे केशवलाल निर्भयराम जी के पास पुस्तक १००० रख दिये होगे। जो अब तक यह काम न किया होय तो पत्र देखते ही शीघ्र करना पीछे दूसरा काम करना। आगे आर्य्याभिविनय के पुस्तक ५०० प्रयाग मे पण्डित सुन्दर लाल जी के पास पोस[त]मास्तर जनरल की कचेरी के ठिकाने से केशवलाल जी से कहके शीघ्र भेजवा देना। और जो लक्ष्मणशास्त्री जी ने अब तक पुस्तक वहा न रक्खे होय तो आप श्रम करके केश[व] ला० पास पु० १००० · अ रु० १५०) हनुमत[राम पित्ती] ·तथा केशवला० को ··· [प्र]याग मे उक्त ठिकाने पुस्तक [आ]र्याभि० भेजवा देना। इतना काम [शी]घ्र करना क्यो[कि] इस देश मे उसके गाहक बहु[त हैं]—इस्से विलंब करने मे हानि है। शीघ्र यह काम करने में लाभ है। सब आर्य्य-समाज के सभासदो को मेरा आशीर्वाद अति प्रेम से कहना। यहा परमानन्द है।

स०[१९३३]आषाढ वद ९ शुक्रवार।[2]

---

१ १६ अकतूबर १८७५। २ १६ जून १८७६। उस समय श्री स्वामी जी काशी में थे।

२ राजस्थान प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक श्री प० रामसहाय जी ने यह मूल पत्र हमें भेजा था। प० कालूराम जी के शिष्य स्वामी स्वरूपानन्द जी से उन्हें यह हस्तगत हुआ। अब यह हमारे सग्रह में सख्या १ पर सुरक्षित है। पीले रंग के कागज पर दोनो ओर श्री स्वामी जी के हाथ का लिखा हुआ है। फटे हुए स्थानों पर हम ने बिन्दु दे दिए है।

[१] **[पत्र सूचना १]**[1] [१७]

[केशवलाल निर्भयराम मुम्बई]

सस्कारविधि के मुद्रण सम्बन्ध मे

१ नवम्बर १८७६ ।

---

[१] पत्र (१३) [१८]

Bareilly
18 Nov 1876

FROM

Dayanand Saraswati
Bareilly

To

Babu Ramadhara Bajpai
Hd Clerk Govt Tele Office
Lucknow

Dear Sir,

The first copy of the Veda Bhashya will shortly issue so you must try with your whole heart and soul to secure as many subscribers as you can in your town

My Babu will start for Benares on Monday to have the tract published atonce and distribute among the subscribers.— On his way down he will stop at your town for a day I have instructed to take his quarters at the *Patshala* if Gangesh Swami is there, please inform him about it

---

१ लखनऊ अथवा शाहजहापुर से मुम्बई को भेजा गया ।

इस पत्र के सकेत के लिए केशोलाल निर्भयराम का श्री स्वामी जी के नाम लिखा गया ता० ६ नवम्बर १८७६ का एक पत्र परिशिष्ट सख्या० २ में देखो ।

As for my doings here and at Shajahanpur, I think, you have already heard from Gangesh Swami, the rest you can hear from my Babu. I don't think there is any necessity of detailing it here

Hoping you are in the enjoyment of perfect health

My blessings to all of you

Yours ffly

दयानन्द सरस्वती[1]

[भाषानुवाद]

बरेली १८ नव० १८७६

दयानन्द सरस्वती बरेली से

बाबू रामाधार बाजपई
हेड क्लर्क सरकारी तार घर लखनऊ।

प्रिय महाशय !

वेदभाष्य का प्रथमाङ्क शीघ्र निकलेगा, सो आप को अपने नगर मे जितने ग्राहक आप बना सकते हैं, बनाने के लिये पूर्ण तन, मन से यत्न करना चाहिये।

ट्रैक्ट को तत्काल छपवाने और ग्राहको मे बटवाने के लिये मेरा बाबू सोमवार को बनारस की ओर चलेगा।[2] और नीचे को जाते हुए वह आप के नगर में एक दिन के लिये ठहरेगा। मैंने उसे कह दिया है कि यदि गगेश स्वामी[3] वहीं हो तो वह पाठशाला में उतरे। कृपया उन्हे यह कह दें।

शाहजहांपुर और यहां के मेरे कार्य के सम्बन्ध में, मेरा विचार है, आप पहले ही गगेश स्वामी से सुन चुके होगे। शेष आप मेरे बाबू से सुन सकते है। मेरा विचार है कि उस के यहां विस्तार करने की कोई आवश्यकता नहीं।

आशा है आप पूर्ण स्वास्थ्य का आनन्द ले रहे होगे।

मेरा आप सब को आशीर्वाद।

आपका विश्वसनीय
दयानन्द सरस्वती

---

१ मूल पत्र से प्रतिलिपि किया गया। वह मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह मे सुरक्षित है। यह सग्रह में श्री० प० रामविहारी जी तिवारी प्रधान आर्यसमाज की कृपा से सन् १९१८ में हमें प्रतिलिपि करने के लिए प्राप्त हुआ था।

२ अर्थात् २० नवम्बर १८७६ मार्गशीर्ष शुक्ला ४ स० १९३३।

३ ये महाशय एक वृद्ध सूक्ष्म-काय सन्यासी थे। लखनऊ में इन्हों ने एक सस्कृत पाठशाला खुलवा रखी थी। थे ये अच्छे विद्वान्। श्री स्वामी जी से इन का प्रेम हो गया था। श्री स्वामी जी के देहावसान के पीछे भी लग भग दो वर्ष तक जीते रहे।

ओम् नम. सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय

॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

॥ श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिकृतम ॥

॥ वेदभाष्यप्रचारार्थं विज्ञेयम् ॥

इदं वेदभाष्यं संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां भूषितं क्रियते ।

कालरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे भाद्रमासे सिते दले ।

प्रतिपद्यादित्यवारे भाष्यारम्भः कृतो मया ॥ १ ॥[1]

तदिदमिदानी पर्य्यन्तं दशसहस्रश्लोकप्रमितं तु सिद्धं जातम् । तच्चेदं प्रत्यहमग्रेग्रे न्यूनान्न्यूनं पंचाशच्छ्लोकप्रमितं नवीनं रच्यत-एवमधिकादधिक शतश्लोकप्रमाणं च । तच्च वाराणस्यां लाजरसकंपन्याख्यस्य यंत्रालये प्रतिमासं मासिकपुस्तकवद्यन्त्रितं कार्य्यते मासिकस्य मूल्यमेतावत् ।-) इदं द्वादशमासानां मिलित्वैतावद्भवति ३।।।) इदं राजमार्गवेतनदानेन सहैतावन्मात्रं ४।।) वार्षिकं जायते । अस्य वेदभाष्यस्य ग्रहणेच्छा यस्य भवेत् स लाजरसकंपन्याख्यस्य वा भाष्यकर्त्तुः श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः समीपं वार्षिकं धनं ४।।) प्रेषयेत्तस्य समीपमेकवर्षपर्य्यन्तं प्रतिमासं मासिकपुस्तकं पोष्टाख्यराजमार्गप्रबन्धेनावश्य-मागमिष्यति ॥ पुनर्ग्राहकैर्वार्षिकं देयं चैवमेव पुनःपुनर्ज्ञेयम् । योस्य वार्षिकं मूल्यं प्रेषयिष्यति तन्नामलेखपूर्वकं मासिकपुस्तकपृष्ठोपरि यन्त्रयित्वैकवारं प्रसिद्धं भविष्यतीदमेव तस्य विश्वासार्थं भविष्यति मद्धनं तेन भाष्यकर्त्रा वा यन्त्रणकर्त्रा प्राप्तं चेति ॥ अत्रान्यथा यः कुर्यात्तस्य समाधाता स एव भविष्यति ॥ सर्वशक्तिमदीश्वरानुग्रहेणात्र व्यत्ययः कदाचिन्नैव भविष्यतीति विज्ञायतेऽस्माभिः । एकरौप्यमुद्रया श्लोकसहस्रद्वयप्रमितं न्यूनान्न्यूनमुत्तमपत्राक्षरललितदर्शनं हृद्यं पुस्तकं ग्राहकाः प्राप्स्यंत्येव । इदं वेदभाष्यमपूर्वं भवति । कुतः । महाविदुषामार्य्याणां पूर्वजानां यथावद्वेदार्थविदामाप्तानामात्मकामानां धर्म्मात्मनां सर्वलोकोपकार-

---

१ २० अगस्त १८७६ को वेदभाष्य बनना आरम्भ हुआ ।

बुद्धीनां श्रोत्रियाणां ब्रह्मनिष्ठानां परमयोगिनां ब्रह्मादिव्यासपर्य्यन्तानां मुन्यृषीणामेषां कृतीनां सनातनानां वेदाङ्गानामैतरेयशतपथसामगोपथब्राह्मणपूर्वमीमांसादिशास्त्रोपवेदोपनिषच्छाखान्तरमूलवेदादिसत्यशास्त्राणां वचनप्रमाणसंग्रहलेखयोजनेन प्रत्यक्षादिप्रमाणयुक्त्या च सहैव रच्यते ह्यतः। वेदानां यः सत्यार्थः सोनेन भाष्येण सर्वेषां सज्जनानां मनुष्याणामात्मसु सम्यक् प्रकाशीभविष्यति। पुनरनर्थव्याख्यानानि यानि वेदानामुपरि वर्त्तन्ते तन्निवृत्तिरनेन च तत्प्रयुक्तभ्रमजालोपि लयं गमिष्यत्यवश्यमतश्च। ततो सत्यव्यवहारत्यागात् सत्याचारग्रहणप्रवृत्तिभ्यां मनुष्याणां महान सुखलाभो निश्चितो भविष्यति वेदेश्वरयोः सत्यार्थसाम्राज्यप्रकाशश्चातः॥ सत्यधर्मार्थकाममोक्षाणां यथावत् सिद्धेश्चेत्यादयोस्य भाष्यस्यापूर्वत्वे हेतवो विज्ञेयाः॥ एतदर्थं सत्यविद्याप्रियैर्विद्वद्भिः सत्यार्थजिज्ञासुभिर्मनुष्योपकारसत्यविद्योन्नतिं चिकीर्षुभीराजादिनृवर्य्यैरस्मिन्महति सर्वोपकारके कार्ये मासिकपुस्तकग्रहणेनान्यप्रकारेण च सर्वैर्यथाशक्त्या सहायः कार्य इति विज्ञाप्यते॥

॥ विज्ञापनपत्र ॥

॥ भाषार्थ ॥

सो यह दयानन्द सरस्वती स्वामी जी ने प्रसिद्ध किया है। इस का यह प्रयोजन है कि चारों वेदो का भाष्य करने का आरम्भ मैंने किया है। सो सब सज्जन लोगो को विदित हो कि यह भाष्य सस्कृत और आर्य भाषा जो कि काशी प्रयाग आदि मध्य देश की है, इन दोनो भाषाओ मे बनाया जाता है। इस मे सस्कृत भाषा भी सुगम रीति की लिखी जाती है। और वैसी आर्य भाषा भी सुगम लिखी जाती है। सस्कृत ऐसा सरल है कि जिसको साधारण सस्कृत को पढ़ने वाला भी वेदो का अर्थ समझ ले। तथा भाषा का पढ़ने वाला भी सहज मे समझ लेगा। सवत् १९३३ भाद्रमास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के दिन इस भाष्य का आरम्भ किया है। सो सवत् १९३३ मार्गशिर शुक्ल पौर्णमासी[1] पर्यन्त दश हजार श्लोको के प्रमाण भाष्य बन गया है। और कम से कम ५० श्लोक और अधिक से अधिक १०० श्लोक पर्य्यन्त प्रति दिन भाष्य को रचते जाते हैं। इस भाष्य को काशी जी मे लाजरस कम्पनी के छापेखाने मे छपवाते हैं। सो छापने का प्रबन्ध इस प्रकार से किया है कि मासिक पुस्तक की नाईं

१ प्रथम दिसम्बर १८७६।

छपता जायगा। इस का मासिक जो एक अक होता है उस का मूल्य ।~) पांच आना है। सो बारह महिनों का मिलके ३।॥) पौनेचार रुपैये होते हैं। सो डाक का खर्च महिने महिने में ~) एक आने का टिकट लगेगा सो मिल के एक वर्ष का ४॥) साढे चार रुपये होते हैं। सो जिस किसी को इस पुस्तक के लेने की इच्छा हो वह लाजरस कम्पनी के पास एक वर्ष का मूल्य भेज दे अथवा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास भेज दे। उस के पास महिने महिने में एक वर्ष पर्यन्त पोष्ट मार्ग से अर्थात् सरकारी डाक के प्रबन्ध से मासिक पुस्तक अवश्य पहुंचेगा। पुनः एक वर्ष के पीछे फिर भी दूसरे वर्ष का इसी प्रकार जमा करना होगा। और गाहको के पास इसी प्रकार से मास मास में पुस्तक पहुचा करेगा। सो जिस महिने में जो गाहक मूल्य भेजेगा उस महिने के अथवा दूसरे महिने के अक मे उस का नाम लेख पूर्वक उस धन की पहुंच मासिक पुस्तक के पृष्ठ के ऊपर छपा के उस लेख द्वारा सर्वत्र प्रसिद्ध कर दिया जायगा। सो एक वर्ष मे एक का नाम एक वार ही छपेगा। पुनः दूसरे वर्ष मे भी इसी प्रकार से होगा। उस लेख को गाहक लोग अपने पास रख लें। और यह निश्चय जान लें कि मेरा धन उस के पास पहुच गया। और जो पुस्तक देने वाला वा गाहक इस में अन्यथा करेगा वह इस वात को पूरी करने वाला होगा। सो हम लोग निश्चय जानते हैं कि जो सर्वशक्तिमान् परमात्मा है उस की कृपा से इस काम में विपरीतता कभी न होगी। सो गाहक लोगो को एक रुपैये में २००० दो हजार श्लोक मिलेंगे। सो इस में कागज और अक्षर अच्छे रहेंगे जो वाचने वाले और देखने वाले जिसको देख और वाच के प्रसन्न हों। सो यह वेदभाष्य अपूर्व होता है। अर्थात् अत्यन्त उत्तम वनता है क्योंकि इस मे अप्रमाण वा कपोल कल्पित लेख नहीं होता। जे वडे विद्वान् आर्यावर्त्तवासी प्रथम हो गये हैं, जे वेदो के अर्थ को यथावत् जानते थे, जे कि सत्यवादी जितेन्द्रिय और धर्मात्मा थे तथा जिन की बुद्धि में सब लोगो का उपकार करना ही रहता था, जे कि वेदो में परम विद्वान् थे और जिनकी निष्ठा एक अद्वितीय ब्रह्म में थी, जे ब्रह्मा से लेके व्यास जी पर्यन्त मुनि जे कि मननशील थे, और ऋषि जे कि वेद मन्त्रो के अर्थों को यथावत् जानने वाले थे, उनके किये सनातन जे ग्रन्थ हैं शिक्षा कल्प व्याकरण निघण्टु निरुक्त छन्द और ज्योतिष ए वेदो के छः अङ्ग कहाते हैं तथा ऐतरेय शतपथ साम और गोपथ ए चारों वेदो के चार ब्राह्मण कहाते हैं तथा पूर्वमीमांसा वैशेषिक न्याय योग सांख्य और वेदान्त ए छः शास्त्र कहाते हैं और चार उपवेद हैं आयुर्वेद जो वैद्यक शास्त्र है धनुर्वेद जो राजविद्या है गान्धर्व वेद जो गान शास्त्र है और अर्थ वेद जो शिल्पशास्त्र है ए चार उपवेद कहाते हैं तथा केन कठ प्रश्न मुण्डक

माण्डूक्य तैत्तिरीय ऐतरेय¹ और मैत्रेयी ए दश उपनिषद् कहाती हैं। ११२७ ग्यारह सै सत्ताईस वेदो की शाखा जे कि वेदो के ऊपर मुनि और ऋषियो के किये व्याख्यान हैं इनमे से जितनी शाखा मिलती हैं और मूल वेद जे ऋक् यजुः साम और अथर्व वेद इनकी जे चार मन्त्र सहिता हैं ए ईश्वर कृत सनातन चार वेद कहाते हैं शिक्षा से लेके शाखान्तर पर्यन्त वेद के जे सत्यार्थ युक्त व्याख्यान हैं जे कि ब्रह्मा से लेके व्यास जी पर्यन्त ऋषि और मुनियो के किये हैं उन सनातन सत्य ग्रन्थो के वचनो का लेख प्रमाण से सहित और मूल वेदो के भी प्रमाणो से सहित यह वेद भाष्य रचा जाता है। और प्रत्यक्षादि प्रमाणो की योजना भी इस मे लिखी जाती है। इस कारण से यह वेद भाष्य अपूर्व होता है। और इस वेद भाष्य से वेदो का जो सत्य अर्थ वह सब सज्जन लोगों के आत्माओ मे यथावत प्रकाशित होगा। तथा वेदो के ऊपर लोगो ने मिथ्या जे व्याख्यान किये है उन की निवृत्ति भी इस भाष्य से अवश्य होगी। और जो उन व्याख्यानो के देखने से मिथ्या जाल जगत् मे प्रवर्त्तमान है सो भी इस भाष्य से नष्ट अवश्य हो जायगा। इस कारण से भी यह वेदभाष्य अपूर्व होता है क्योंकि जब वेदो का सत्य अर्थ सब को विदित होगा तब मनुष्य लोग असत्य व्यवहार को छोड के सत्य का ग्रहण और सत्य मे ही प्रवृत्त होगे। इस के होने से मनुष्यो को सुख की प्राप्ति अवश्य होगी। तथा वेद का सत्य अर्थ रूप जो राज्य और परमेश्वर का यथावत प्रकाश रूप जो अखंड राज्य है सो भी इस भाष्य के होने से जगत् मे यथावत प्रकाशित होगा। इस निमित्त से भी यह वेदभाष्य परमोत्तम होता है। और जब इस वेदभाष्य को यथावत् विचार के उस के कहे प्रमाण से जे मनुष्य आचरण करेंगे उन को सत्य धर्म सत्य अर्थ सत्य काम और नित्य सुख रूप जो मोक्ष इन चारो पदार्थों की सिद्धि यथावत प्राप्त होगी। इस मे कुछ सन्देह नहीं। बहुत लिखना बुद्धिमानो के लिये अवश्य नहीं किन्तु इस वेदभाष्य को जब देखेंगे तब उनको ए सब बात देखने मे आवेंहीगी। और वेदो की भूमिका जो बनाई है उस को भी देखने से सज्जन लोगो के हृदयकमल अत्यन्त आनन्दित होगे। जिस से इन की प्रवृत्ति यथावत् हो इसलिये यह विज्ञापन किया जाता है कि जे सत्य विद्या के प्रेमी विद्वान् हैं तथा जे सत्य अर्थ के जानने की इच्छा करने वाले है तथा सब मनुष्यो को सत्य विद्या से सुख प्राप्त हो और सब मनुष्यो की बढ़ती हो इस उपकार की इच्छा करने वाले जे मनुष्य है उन राजाओ से लेके जे भृत्य पर्यन्त और जे ऐश्वर्य युक्त और उत्तम मनुष्य हैं जो सब मनुष्यों का उपकार

---

१. यहा बृहदारण्यक और छान्दोग्य स्पष्ट ही रह गई प्रतीत होती है।

करने वाला वेदभाष्य का होना यह बड़ा कृत्य है इस में जितना जिस का सामर्थ्य हो उतना सहाय करना सब को उचित है। सो सहाय दो प्रकार से होगा एक तो मासिक पुस्तकों के ग्रहण करने से और दूसरा इस के बनने और छपवाने में धन और पण्डितों के रखने मे सहाय देने से होगा। यही सब सज्जनों से विज्ञापन है कि अत्यन्त प्रीति से इस कार्य मे दो प्रकार का सहाय सदा करें ॥

भाष्यस्यापूर्वत्वे दृष्टान्ताः संक्षेपतोऽन्येपि लिख्यन्ते । तत्र सर्वेष्वार्षेषु सनातनग्रन्थेषु रूपकाद्यलङ्कारेण सत्यविद्याप्रकाशिकाः प्रमाणयुक्तिसिद्धा अनुत्तमा वह्व्यः कथा लिखिताः सन्ति। तासां मध्यादिग्दर्शनवत्काश्चित्कथा अत्र वेदभाष्यभूमिकायां मयोल्लिखिताः। यासामज्ञानादाधुनिकपुराणग्रन्थेषु भ्रान्त्या मनुष्यैस्ता अन्यथैव लिखिता उपदिश्यन्ते श्रूयन्ते च। तत्परीक्षार्थं संक्षेपतोऽत्र विज्ञापनपत्रेपि काश्चिल्लिख्यन्ते। तद्यथा । प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरमभ्यध्यायद्दिवमित्यन्य आहुरुषसमित्यन्ये तामृश्यो भूत्वा रोहितं भूतामभ्यैत्तस्य यद्रेतसः प्रथममुददीप्यत तदसावादित्योऽभवत् । एतरेयब्रा० पंचिका ३ अध्याय ३ ॥ प्रजापतिः सविता । शतप० काण्डे १० अध्याय २ ॥ तत्र पिता दुहितुर्गर्भं दधाति पर्जन्यः पृथिव्याः ॥ निरु० अध्याय ४ खं० २१ ॥ द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्र वन्धुर्मे माता पृथिवी महीयम्। उत्तानयोश्चम्वो ३ र्योनिरन्तरत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात् ॥ निरु० अध्याय ४ खंड २१॥ शासद्वह्निर्दुहितुर्नप्त्यङ्गाद्विद्वां ऋतस्य दीधितिं सपर्यन् ॥ पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन्त्सं शग्म्येन मनसा दधन्वे ॥ ऋग्मंत्रद्वयमिदम् ॥ ज्योतिर्भाग आदित्यः ॥ निरु० । अ० १२ । खंड १ ॥

भाषार्थ

इस भाष्य के अपूर्व होने मे तीन कथा दृष्टान्त के लिये इस विज्ञापन पत्र में सक्षेप से लिखते हैं। उनमें से एक यह कथा है कि जिसको श्रीमद्भागवतादि नवीन ग्रन्थो मे बहुत विपरीत करके लिखी है। जिस कथा को वेद विरोधी मत वाले नहीं जानके लोगो को मिथ्या बहका के अपने चेले कर लेते हैं। और जो वेद मत वाले हैं वे भी सत्य कथाओ के नहीं जानने से और मिथ्या कथाओ को

सुनके भ्रान्त होके उनके चेले हो जाते हैं। सो देखो चित्त देके कि कितना बड़ा भ्रम मनुष्यो को अज्ञान से हुआ है। (प्रजापतिर्वै०) प्रजापति नाम है सूर्य का क्योंकि सब प्रजा का जो पालन होना उसका मुख्य हेतु सूर्य ही हैं। उसकी दो कन्या हैं। एक द्यौः अर्थात प्रकाश और दूसरी उषा जो चार घड़ी रात्रि रहने से प्रातः काल पूर्व दिशा मे किंचित्प्रकाश होता है क्योंकि जो जिससे उत्पन्न होता है वह उसका सन्तान कहाता है। सो इन दोनो का पिता की नाईं सूर्य हैं। और उन दोनो को सूर्य की कन्या की नाईं समझना उषा जो सूर्य की कन्या उस मे पिता जो सूर्य उसने अपना किरण रूप वीर्य को डाला। उन दोनो के समागम से यह जो आदित्य अर्थात् प्रकाशमय दिन है यह एक पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ तथा इसी प्रकार से पर्ज्जन्य जो मेघ है सो पिता स्थानी है और पृथिवी उसकी कन्या स्थानी है क्योंकि जल से पृथिवी की उत्पत्ति होती है। इस से ए दोनो पिता पुत्रवत् हैं सो अपनी कन्या जो पृथिवी उसमे मेघ जो पिता वह वृष्टिद्वारा जल रूप वीर्य को डालता है। इन दोनो के परस्पर समागम से गर्भ धारण होने से अन्न ओषधि और वृक्षादि अनेक पुत्र उत्पन्न होते हैं। यह पिता और दुहिता की रूपकालकार कथा से उत्तम विद्या का अत्यन्त प्रकाश होता है। इस उत्तम कथा को विगाड़ के अज्ञानी लोगो ने बुरी प्रकार से लिखी है ॥२॥ दूसरी यह कथा है जिसको वहुत प्रकार से लोगो ने पुराणो में विगाड़ के लिखी है ॥

इन्द्रागच्छेति गौरावस्कन्दिन्नहल्यायै जारेति तद्यान्येवास्य चरणानि तैरेवैनमेतत्प्रमुमोदयिषति । रेतः सोमः । शतपथ० कांड ३ अ० ३ ॥ रात्रिरादित्यस्यादित्योदयेन्तर्धीयते नि० अ० १२ खं० ११ ॥ सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्व इत्यपि निगमो भवति। सोपि गौरुच्यते । नि० अ० २ खं० ६ ॥ जार आ भगम् । जार इव भगमादित्योत्र जार उच्यते। रात्रेर्जरयिता। नि० अ० ३ खं० १६ ॥ एष एवेन्द्रो य एष तपति। श० कां० १ अ० ६ ॥

॥ भाषार्थ ॥

इसको इस प्रकार से विगाड़ी है। इन्द्र जो देव लोक का राजा था वह गोतम ऋषि की अहल्या जो स्त्री उससे व्यभिचार करता था। इस वात को गोतम ने जब जाना तब इन्द्र को शाप दिया कि तेरे शरीर मे हजार भग हो और अहल्या को शाप दिया कि तू शिला हो जा। इस शाप का मोक्षण राम के पांव की धूल के स्पर्श से होगा। सो इसी कथा को विद्याहीन लोगो ने इस प्रकार से विगाड़ी है। यह ऐसी कथा है कि इन्द्र नाम है सूर्य का तथा चन्द्रमा का नाम

गोतम है और रात्रि का नाम अहल्या है क्योंकि अहर् नाम है दिन का सो लय होता है जिसमें इस कारण से रात्री का नाम अहल्या है। जैसे स्त्री और पुरुष का जोड़ा होता है इसी प्रकार रात्रि और चन्द्रमा का रूपकालकार किया है। इस रात्री का जार सूर्य है क्योकि जिस देश में रात्रि है उसमे सूर्य का किरण रूप जो वीर्य है वहा उसके गिरने से रात्रि अन्तर्धान अर्थात् निवृत्त हो जाती है। इससे सूर्य का नाम अहल्या का जार है। रात्रि की उमर को सूर्य ही विगाडता है। अर्थात उसकी हानि कर्त्ता है इससे सूर्य्य रात्रि का जार कहाता है। और चन्द्रमा अपनी स्त्री जो रात्रि है उससे सब ससार को आनन्द करता है। इस अत्यन्त श्रेष्ठ कथा को लोगो ने विगाड़ के अन्यथा ही लिखी है ॥२॥ तथा तीसरी यह कथा है जो इन्द्र और वृत्रासुर के युद्ध की कहानी है ॥

तद्यथा ॥ अहन्नहिं पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष ॥ वाश्रा इव धेनवः स्यन्दमाना अंजः समुद्रमवजग्मुरापः। ऋग्वेद अष्टक १ अध्याय २ वर्ग ३७। इत्यादय एतद्विषया वेदेषु बहवो मंत्राः सन्ति। अद्रिरित्यादिषु मेघस्य त्रिंशन्नामसु—वराहः। अहिः। वृत्रः। असुर इति चत्वारि नामानि यास्कमुनिकृतनिघंटोः प्रथमाध्याये लिखितानि॥ इन्द्रशत्रुरिन्द्रोस्य शमयिता वा शातयिता वा तस्मादिन्द्रशत्रुस्तत्को वृत्रो मेघ इति नैरुक्तास्त्वाष्ट्रोऽसुर इत्यैतिहासिकाः। वृत्रं जघ्निवानपववार तद्वृत्रो वृणोतेर्वा वर्त्ततेर्वा वर्द्धतेर्वा। यदवृणोत्तद्वृत्रस्य वृत्रत्वमिति विज्ञायते। निरुक्त अध्याय २ खंड १६, १७।

वृत्रो ह वा इदꣳ सर्वं वृत्वा शिश्ये। यदिदमन्तरेण द्यावापृथिवी स यदिदꣳ सर्वं वृत्वा शिश्ये तस्माद्वृत्रो नाम ॥४॥ तमिन्द्रो जघान स हतः पूतिः सर्वत एवापोभिप्र सुस्राव सर्वत इव ह्ययꣳ समुद्रस्तस्मादु हैका आपो बीभत्सां चक्रिरे ता उपर्युपर्येति पुप्लुविरे त इमे दर्भास्ता हैता अनापूयिता आपोस्ति वा इतरासु सꣳसृष्टमिव यदेना वृत्रः पूतिरभिप्रास्रवत्तदेवासामेताभ्यां पवित्राभ्यामपहन्त्यथ मेध्याभिरेवाद्भिः प्रोक्षति तस्माद्वा एताभ्यामुत्पुनाति शतपथ कांड १ अ०१ तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः। अग्निः पृथिवी-स्थानो वायुर्वेन्द्रो वान्तरिक्षस्थानः सूर्यो द्युस्थान इति निरु० अ०७ खंड ५।

॥ भापार्थ ॥

(अहन्नहिं०) यह ऋग्वेद का मन्त्र है इत्यादि इस विद्या के निरूपण करने वाले और भी वहुत मन्त्र हैं। इन्द्र नाम है सूर्य का सो निघटु मे लिखे हैं। इन दोनो का रूपकालकार से युद्ध की नाईं वर्णन किया है। जव त्वष्टा जो सूर्य है अर्थात मेघ और सव चीजो का काटने वाला है वह जव मेघ को अपनी किरण रूप वज्र से काटता है तव वह वृत्रासुर जो मेघ है सो पर्वत और भूमि का आश्रय लेता है। पुन उसका शरीर रूप जो जल है सो समुद्र को प्राप्त होता है। पुनरपि सूर्य की किरण से उसके शरीर का खड २ होता है। सो वायु के साथ आकाश मे ऊपर चढ़ता है। फिर भी वादल रूप सेना को जोड़ के सूर्य की सेना जो किरण रूप है उसको रोकता है। पुनः सूर्य भी अपनी किरण रूप सेना से उसका हनन कर्त्ता है। पुनः वह मेघ पृथिवी मे गिर पड़ता है। पुनरपि उठ के इसी प्रकार युद्ध कर्त्ता है (इन्द्रशत्रु) इन्द्र शत्रु है जिसका ऐसा जो मेघ उसका छेदन करने वाला सूर्य ही है। इससे सूर्य का नाम त्वष्टा है। उसके पुत्र की नाईं मेघ है क्योकि मेघ की उत्पत्ति सूर्य के निमित्त से ही होती है। इससे मेघ का नाम त्वष्टा है और असुर भी नाम है। वृत्र नाम मेघ का इस कारण से है कि सूर्य के प्रकाश को आवरण कर्त्ता है और सूर्य से ही वृद्धि को प्राप्त होता है। यही मेघ मे वृत्रपना है। सो जव आकाश मे वृद्धि को प्राप्त होता है तव सव को आवरण करके आकाश और पृथिवी के वीच मे सोता है। पुनः जव सूर्य इस मेघ को हनन करके पृथिवी मे गिरा देता है तव पृथिवी को आच्छादित करके पृथिवी मे सोता है। पुनरपि उसी प्रकार ऊपर को चढ़ता है। इसी प्रकार से सूर्य और मेघ के रूपकालकार से परमोत्तम जो मेघ विद्या है उसका इस कथा से परमेश्वर ने इसके अनुसार मुनि और ऋषियो ने भी उपदेश किया है। इसको यथावत नहीं जान के वालकों की नाईं विपरीत कथा मनुष्यो ने रच लीं हैं। ऐसी अनेक कथा रूपकादि अलंकारो से वेदादि सत्य शास्त्रो मे लिखी हैं। उन मे से कई एक कथा वेद की भूमिका मे सज्जनो को जानने के लिये लिखी है। तथा वेदो की उत्पत्ति किस प्रकार से है, वेद नित्य हैं वा अनित्य हैं, वेद ईश्वर ने वनाये हैं वा अन्य ने, वेदो मे सव विद्या हैं वा नहीं इत्यादि वहुत कथा भूमिका मे लिखी हैं। जव भूमिका छपके सज्जनो के दृष्टि गोचर होगी तव वेद शास्त्र का महत्त्व जो वड़ापन तथा सत्यपना भी सव मनुष्यो को यथावत् विदित हो जायगा। सो भूमिका[1] के श्लोक न्यून से न्यून सस्कृत और आर्यभाषा के मिल के आठ ८ हजार हुये हैं। इसमे सव विषय विस्तार पूर्वक लिखे हैं। सो इस

---

१ अर्थात् नवम्बर १८७६ के मध्य तक भूमिका वन चुकी थी। इस से ज्ञात होता है कि भूमिका के बनने में लगभग पौने तीन मास लगे।

को छपवा के हम लोग प्रसिद्ध किया चाहते हैं। इसलिये सब सज्जन लोगो को यही विज्ञापन है कि अत्यन्त उत्साह से पूर्वोक्त दो प्रकार का सहाय इस उत्तम काम में यथावत् देवें ॥ ओं नम. सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय ॥ यही परमेश्वर स्वकृपा से सब का सहायक हो ॥

---

[१] पत्र (१४) [२०]

ओम्

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमा० वनमालीसिंह योग्य इतो स्वामी दया० आशीर्वाद। पौष शुदी २ रविवार को हम दिल्ली फैंश गये हैं। सो आपको लिखा जाता है कि विज्ञापनपत्र हजार १००० और वेदभाष्य पुस्तक १००० चिट्ठी देखते ही भेजो। और वाकी पुस्तक लाजरस कम्पिनी मैं रहनै दो। भ्वां सैं उठाना नहीं। पत्र देखते ही २००० पुस्तक और चिट्ठियां देशावर सैं हमारे नाम की आई थी, और जो वेदभाष्य देखकर सूचीपत्र वनाया था, उस को वी लेते आना क्योंकि तुम को हमारे पास रहना होगा। और जो कुछ किराया रेल का होगा सो इहां सै दे दीया जाइगा। अगर जो पुस्तक लाजरस कम्पिनी ने रमाने करि दी हो तो वी आपु हमारे पास चले आना। अग्रे किमधिकम्।

पौष शुदी ४ भौमे स० १९३३।'

---

१ १९ दिसम्बर सन् १८७६। यह पत्र देहली से काशी को लिखा गया था। मूल पत्र गुलावी रग के वारीक कागज पर लिखा हुआ है।

यह पत्र श्री देवेन्द्र वाबू के सग्रह में था। इस पर उन की सख्या C 74 पडी है। श्री प० घासीराम जी मेरठ निवासी से म० मामराज जी अक्तूबर १९२६ में मूल पत्र ले आए थे। अब यह हमारे सग्रह में सख्या ७ पर सुरक्षित है।

वनमालीसिंह श्री स्वामी जी का बाबू अर्थात् अंग्रेजी आदि लिखने वाला क्लर्क प्रतीत होता है।

[१] पत्र (१५) [२१]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायोग्येभ्यः श्रीयुतपण्डितकालूराम शर्म्मभ्यो[1] दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमत्रास्ति तत्र भवदीय च नित्यमाशास्महे ॥ आगे प्रेत की गिनती जिस समय प्राण छूटे उसी समय से मानना और अद्यतन शब्द से आगामिनी अर्द्धरात्रि पर्यंत काल का ग्रहण होता है। इसी रीति अर्द्धरात्रि से दिवसारंभ जानना। और वेदोक्त मार्ग को कितने पुरुष स्वीकार करते है सो इसका परिगणन नहीं कर सक्ते। असख्यो मे से दो चार लिख देते हैं जैसे महाराज इन्दोर के और बडोदा के और कपूर्थला के विक्रमासिंह महाराज, राजा जयकृष्णदास, ठाकर मुकुदसिंह तथा लाला लक्ष्मी नारायण बरेली के इत्यादि बहुत जान लेना ॥ और मैं अब नहीं आ सक्ता परंतु कधी अनोदक होगा तो जरूर आऊगा। अनुमान है कि यहां से मेरठ की ओर जाना होगा।

सवत् १९३३ माघ कृष्ण ४ बुधवार।[2]

---

१ प० कालूराम जी रामगढ (सीकर) रियासत जयपुर निवासी थे। इनकी योग में अच्छी गति थी। इन को तन्द्रावस्था में श्री स्वामी जी के दर्शन हुए। उसी समय से इन्होंने श्री स्वामी जी को गुरु धारण कर लिया। बहुत काल पश्चात् फिर श्री स्वामी जी के दर्शन को गए। इन्ही के उपदेश से रामगढ के आस पास के लोग आर्य धर्म में श्रद्धावान हुए। इन्हीं के कारण मु० समर्थदान ऐसा भक्त श्री स्वामी जी की सेवकाई करने लगा। ज्येष्ठ सु० १० सवत् १९५७ को अपनी इच्छा से शरीर त्याग गए।

२ ३ जनवरी १८७७ को देहली से भेजा गया। मूल पत्र हमारे पास श्री० प० राम सहाय जी ने भेजा था। प० कालूराम जी के शिष्य स्वामी स्वरूपानन्द जी से उन्हें यह पत्र मिला था। यह गुलाबी रग के बारीक हाथी मार्का कागज पर लिखा हुआ है। अब यह पत्र हमारे सग्रह में सख्या ३ पर सुरक्षित है।

[२] पत्र (१६) [२२]

Meerutt,
6/2/77

My deai Sir,

I am very happy to acknowledge the receipt of your letter date unknown, and feel much pleasure to learn from your writing that you have procured good many subscribe Veda Bhasya Please inform all those subscribers *who are ready to buy monthly tract, to send their subscription money to Benares to the address of Messrs E J* Lazarus & Co Medical Hall Press Benares *The Bigyapan Pattra's or notices are not intended to be sold for price, but only to improve the number of subscribers for Veda-Bhasya*, so please *show and give* them to all of your friends and neighbours who are expected to be subscribers for Veda-Bhasya E J Lazarus & Co will acknowledge receipt for the money which is to be sent to him, but all subscribers must send their respective *correct addresses for receiving their copies from him* (Messrs E J Lazarus & Co)

I hope you will keep continue trying your utmost in increasing the No of subscribers Hoping you are alright with your family I am to stay here up to 15th inst and then will leave this for Saharanpore An early answer will ever oblige Annual subscription for Veda-Bhasya is 4/8/- only

Yours well wisher
Swami Dayanand Saraswati
(Sd) दयानन्द सरस्वती

Please let me know *the total No of subscribers* already collected by you in Lucknow I have written five copies in my

list against your name for furnish You with five copies and others can get more on advancing their annual subscription Rs. 4/8/- only'

Sd Swamee D Nand Sarusswatti

दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

मेरठ

६-२-७७

मेरे प्रिय महाशय!

आप के अज्ञात तारीख के पत्र की रसीद की स्वीकृति बताने मे मुझे बड़ा आनन्द है, और आप के लेख से यह जान कर बडा हर्ष है कि आपने वेदभाष्य के लिये बहुत से ग्राहक बना लिये है। कृपया उन सब ग्राहको को जो मासिक अक खरीदना चाहते हैं यह बता दें कि वे अपना चन्दा बनारस मे मैसर्ज ई० जे० लजारस और कम्पनी, मैडिकल हाल प्रेस, बनारस के पते पर भेज दें। विज्ञापन पत्र मूल्य पर वेचने के लिये नहीं हैं, परन्तु वेदभाष्य की ग्राहक सख्या बढ़ाने मात्र के लिये हैं। सो अपने उन मित्रो और पडोसियो को दिखा वा दे दें कि जिन के वेदभाष्य के ग्राहक बनने की सम्भावना है। ई० जे० लजारस और कम्पनी, जो रुपया उन्हे भेजा जायगा, उस की रसीद भेजेंगे। परन्तु सब ग्राहको को उन से (मैसर्ज ई० जे० लजारस और को से) अक प्राप्त करने के लिये अपना २ शुद्ध पता भेजना चाहिये।

मै आशा करता हूँ कि ग्राहक सख्या बढ़ाने मे आप अपना पूर्ण यत्न करते रहेगे। आशा है आप सपरिवार आनन्द मे होगे। मै यहां १५ तारीख तक रहूगा और फिर यहां से सहारनपुर को जाऊंगा। शीघ्र उत्तर कृतार्थ करेगा। वेदभाष्य का वार्षिक चन्दा ४॥) मात्र है।

आपका शुभचिन्तक

ह० दयानन्द सरस्वती

कृपया कुल ग्राहक सख्या जो आप ने लखनऊ से अभी तक एकत्र की है मुझे लिखें। मैने अपनी सूची मे आपके नाम पर भेजने को पाच प्रतियां लिखी हैं और अन्य लोग वार्षिक चन्दा ४॥) भेजने पर और ले सकने हैं।

दयानन्द सरस्वती

१ पूर्व पत्र के साथ ही यह पुनर्लेख मिलता है। यह पत्र प० रामाधार वाजपेयी लखनऊ को लिखा गया था। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह मे सुरक्षित है।

[३] पत्र (१७) [२३]

Meerutt
13/2/77

My dear Sir,[१]

I reced —yours dated 9th inst and in its reply I feel much pleasure to send you herewith ten more copies of Bigiapan-Patters as you wished to be distributed there.

Well done, my dear, why you not do so? Let Sanskar-Biddhee come from Bombay, as soon expected, and then not only one, but ten or fifteen copies will be sent to you without fail.

I will leave Meerutt on the 15th of this month for Saharanpore and so your answer should reach me there and not here. Hoping you are well with your family.

Yours well wisher
Swamee Dayanand Sarusswatti
(Sd) दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

मेरठ, १३-२-७७

मेरे प्रिय महाशय!

आप का पत्र तारीख ९ का मिला। उसके उत्तर में, जैसा आप ने वहां वाटने को चाहा था, मैं विज्ञापन पत्र की १० दश और प्रतिया भेजने में वहुत प्रसन्न हू।

मेरे प्रिय आपने वहुत अच्छा किया, भला आप ऐसा क्यो न करेंगे? जैसा कि शीघ्र आशा है, सस्कारविधि मुम्बई से आ जाय और तव एक नहीं, परन्तु दश या पन्द्रह प्रतिया विना देरी आप को भेजी जायेंगी।

मैं इस मास की १५ तारीख को मेरठ से सहारनपुर जाऊगा और इस लिये आप का पत्र मुझे वहा मिलना चाहिये और यहा नहीं। आशा है आप सपरिवार आनन्द मे होंगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

१ यह पत्र प० रामाधार वाजपेयी लखनऊ को लिखा गया था। मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

[४] पत्र (१८) [२४]

Saharun-pore.
28/2/77

My dear Pundit

I am very glad to inform you that I will now visit the Chanda-pore Religious Fair situating in Rohelcund Shajahanpore District, where, I have been repeatedly invited by the Fair-Proprietors and others The fair has been founded for assembling and collecting all the Religious Philosophers of India to enquire from, what is the God's true Religion to be followed for Salvation. I will leave Saharanpore by the 11th March and reach the fair-place on the 15th and so you are expected to join the Fair which will stop for a week (being postponed from 3 days to a week) with all your friends, who wish to come there The fair will be most interesting and worthy to be seen and a great many Pundits, Moulvees and Padrees from all parts of India will attend and beautify it indeed Hoping you are well with your children Have you now recd./full required copies from Benares. An early answer will ever oblige.[1]

Yours well wisher
Swami Dayanand Sarusswati.
(Sd) दयानन्द सरस्वती

To

Pdt. Ramadhar Bajpayee,
Lucknow.

[भाषानुवाद]

सहारनपुर
२८–२–७७

मेरे प्रिय पण्डित !

मै आपको यह बताने मे बडा प्रसन्न हूं कि मै अब चान्दापुर धार्मिक मेले मे जाऊंगा, जो कि रुहेलखण्ड जिला शाहजहांपुर मे है, और जहा कि मेले के अध्यक्षो और दूसरो से मै बारम्बार निमन्त्रित किया गया हू।

---

१ मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

यह मेला आर्य्यावर्त के सब धार्मिक दार्शनिकों को एकत्र करने के लिये बुलाया गया है, और उन से पूछा जायगा कि मुक्ति प्राप्त करने के लिये परमात्मा का सत्य धर्म्म कौन सा है? मैं ११ मार्च को सहारनपुर से चलूंगा और मेला स्थान पर १५ को पहुंचूंगा और इसलिये आप को भी अपने सब मित्रो के साथ जो आना चाहते हैं मेले मे आना चाहिये जो कि एक सप्ताह तक रहेगा (३ दिन से एक सप्ताह के लिये हो गया है)। मेला वडा रुचिकर और देखने योग्य होगा और बहुत से पण्डित, मौलवी और पादरी भारत के सब भागो से आयेंगे और निश्चय ही इसे सुशोभित करेंगे। आशा है आप स्वसन्तान सहित आनन्द में होंगे। क्या आप को अब वनारस से अभीष्ट प्रतिया मिल गई हैं? शीघ्र उत्तर कृतार्थ करेगा।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[५] पत्र (१९) [२८]

Saharan-pore
9/3/77

My dear Pundit,

I am in receipt of your letter D/6/3/77 and in its reply I am happy to inform you that the five more copies of Veda-Bhashya have been sent to you with my permission and Messrs E J Lazarus is not in mistake this while Please distribute them among the subscribers about whom you had written to me some days ago I will reach Chanda-pur Fair on the 15th inst which will now continue to stop for a whole week from 19th inst Please let me know how many Sanskar Biddhis you require and address me after the 11th Chandapore Fair and not Saharunpore which I will leave for, on the said date. Please accept best Asheer-bad, and see the Fair, if possible

Yours well wisher
(Sd) Swami Dayanand Sarusswati
दयानन्द सरस्वती

---

१ मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

P. S. You can send the subscription money for the five more copies you *recd.* twice to the Medical Hall Press Benares, with addresses.

[भाषानुवाद]

सहारनपुर
९-३-७७

मेरे प्रिय पण्डित !

आप का ६-३-७७ का पत्र मिला और उसके उत्तर मे मैं यह प्रसन्नता से लिखता हू कि आप को वेदभाष्य की पांच और प्रतियां भेज दी गई हैं और अब के मैसर्ज इ० जे० लजारस ने अशुद्धि नहीं की। कृपया उन्हें उन ग्राहकों मे बांट दीजिये जिन के विषय मे आपने कुछ दिन पहले मुझे लिखा था। मै इस मास की १५ तारीख को चांदापुर पहुंचूगा जो कि अब १९ तारीख से लेकर पूरा एक सप्ताह रहेगा। कृपया लिखें कि आप को कितनी संस्कारविधियो की आवश्यकता है और ११ के पीछे मुझे चांदापुर मेले के पते से लिखें और सहारनपुर नहीं, जहां से मै उक्त तारीख को चला जाऊंगा। कृपया मेरा हार्दिक आशीर्वाद स्वीकार करें और यदि सम्भव हो तो मेला देखें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

पु० नि० जो पांच अधिक प्रतिया आप को दुबारा पहुंच गई हैं उनका चन्दा पता सहित मैडिकल हाल प्रेस बनारस को भेज दें।

[१] पत्र (२०) [२६]

Loodhiana
16th April 1877 [1]

My dear Baboo,

I am extremely happy to read yours of the 12th inst and am over [glad][2] to learn the delightful intention of Mr. Shamji to visit England for three ye[ars] In my opinion this is the exampled opportunity for him [to][3] grasp it without fail which will prove mutually best indeed for both countrymen for their success in many ways Your inducement to him in this respect will be considered as first rate and he will be crowned with high honours by all educated people both in England and India for his such a praiseworthy attempt, when returned successfully Will he take his wife with him ? Why his father-in-law Saith Chhabil Dass does not coincide with, and join your common opinion ? Please give me further information again on this matter and I am very glad to express my best opinion this time that Mr Shamji would not be considered a wise man if he turned his foot backward from this illustrious undertaking.

Now I will leave Loodhiana for Lahore on 19th of April 77 and will stop there in the garden of Ratun Chand Darhiwala. Please send all your letters to the above address till further information

Accept my best ashirbad

Swami Dayanand Saraswati.
Sd. दयानन्द सरस्वती

To Baboo Harish Chander Chintamani Bombay [4]

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।
वैशाख शुक्ल ३, सोमवार संवत् १९३४।

२ कोष्ठगत पाठ फटा हुआ है।

३ यह शब्द मूल में नहीं है।

४ बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि मुम्बई आर्यसमाज के प्रधान तथा वेदभाष्य के प्रबन्धक थे।

[१] **निवास सूचना-विज्ञापन** [२७]

विदित हो कि सं० १९३४ वैशाख महिने मे देश पजाब लुधियाना वा अमृतसर मे स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे ।[१]

---

[६] पत्र (२१) [२८]

Lahore
15th May 1877[२]

My dear Pundit,[3]

I duly received your both letters and understood all the particulars stated therein The reason I could not answer you was that the books required by you were not ready in my hand to despatch and so I waited to receive them all the while till this date

I have got now some of them, however, though in very limited number and can send you a few copies whatever I have with me, on your informing me how many books of *Suttharth- Perkash* and *Aryabhi-Binoi*[४] etc will suffice you, to be sold for ready payment because I also stand in need of money in my visiting places and at least fifty copies are required for Lahore and Amritsar

Please send me an estimate of books, necessarily required for your *Sabha* and then I will send you some copies indeed

---

१ ऋ० भाष्य भूमिका, अंक (१) संवत् १९-४।

२. ज्येष्ठ शुक्ल २, मंगल, संवत् १९३४।

३ श्री स्वामी जी के मूल भाषा पत्र का अंग्रेजी उलथा करने वाला अवश्य ही कोई बंगाली था। मूल अंग्रेजी पत्र लखनऊ आ० स० के संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र बा० रामाधार वाजपेई, लखनऊ को लिखा गया था।

४ इस प्रकार का लेख भी अंग्रेजी उलथाकार की बंगला मनोवृत्ति को प्रकट करता है।

May *Permatma* bless youı object of establıshıng *Satya-Nıroopan-Sabha*, whıch ıs expected to brıng forth good fruıt for the publıc Hopıng you are well wıth yoır frıends. Accept my Asheerbad

Yours well wısher
Pundıt Swamı Dayanand Sarusswattı
Sd/ दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

लाहौर
१५ मई, १८७७

मेरे प्रिय पण्डित !

मुझे आप के दोनो पत्र समय पर प्राप्त हुए और उन मे लिखा सब समाचार विदित हुआ। मेरे उत्तर न देने का कारण यह है कि आप से मागी गई पुस्तकें मेरे पास भेजने को तय्यार न थी और इस लिये मैं आज तक उनकी प्राप्ति की प्रतीक्षा मे रहा।

मुझे अब उन में से कुछ मिल गई हैं। आप का पता आने पर कि सत्यार्थप्रकाश और आर्याभिविनय की कितनी पुस्तकें आप के लिये पर्याप्त होगी, मैं उन्हीं मे से कुछ प्रतिया आप को भेज सकता हू। आप उन का मूल्य तत्काल प्राप्त करें क्योकि मुझे भी नये स्थानो मे जाने के लिये धन की आवश्यकता है और न्यून से न्यून लाहौर और अमृतसर के लिये पचास प्रतिया चाहियें।

कृपया जितनी पुस्तकें आप की सभा के लिये अत्यावश्यक हैं उन की गणना का अनुमान मुझे भेजें और तब निस्सन्देह मै आप को कुछ प्रतिया भेजूगा।

परमात्मा आप के सत्य-निरूपण-सभा के स्थापन के उद्देश्य को फलीभूत करें। इससे जनता के बड़े लाभ की आशा है। आशा है आप स्वमित्रो सहित आनन्द मे होगे। मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[२] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [२९]

विदित हो कि स० १९३४ ज्येष्ठ महिने मे पजाव देश के लाहौर नगर मे पंडित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[1]

---

[७] पत्रम (२२) [३०]

Lahore 6th June 1877[2]

Dear Sir,

I am exceedingly glad to read yours of the 30th ult which refreshed my soul very much Your boldness in virtuous path is beyond measure and your exertions in Indian's welfare are unspeakable By the laws of nature you are deserving good reward from heaven, your prosperity will grow higher and higher rapidly

I am willing to follow your advice, and ready to translate white Yajur Veda as you wish[3] But in this case I will stand in need of two Pandits more and the printing charges will also get increased for the double issue of the work every month Therefore you can yourself think over the matter properly and inform me then of your final opinion on the matter so that I may employ two writers more and begin to translate the work with certainity I have every reason to believe that the darkness of ignorant India—which has reduced the people to such low condition in which they seem and still careless will one day be banished away, if the sun of civilization shone over and the true knowledge of Vedas, diffused over the country

---

१ ऋ० भाष्य भूमिका, अक (७) सवत् १९३४।

२ मूल पत्र प्रो० वीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।
यह पत्र प० गोपालरावहरि देशमुख जी को लिखा गया था।
ज्येष्ठ द्वि० वदी १०, बुध, सवत् १९३४।

३ इस पत्र से प्रतीत होता है कि ऋग्वेद भाष्य के मुद्रण के साथ २ शुक्ल यजुर्वेद भाष्य का मुद्रण प० गोपालरावहरि देशमुख के प्रस्ताव से ही हुआ था।

Noble and high spirited person like you and your companion only can be expected to undertake this mighty work for the public good and though such souls are few in number but their rarity is better than their abundance

I wish that Shamji Krishna Varma should come to me for some time before starting for Oxford I wish to give him some of the most important hints on Vedas which are necessarily required for him He must not care for his expenses or anything else and I will furnish him with all necessities indeed. In my opinion his going to England is very useful for him but let me know what is your opinion about the matters I will also write directly to him I have got no copy of Maha Nirwana Tantra with me but it is procurable from Calcutta. Hoping you are well Please let me know Shamji K. Varmas answer about my enquiry and accept my Asheerbad

Yours well wisher
Pandit S Dayanand Saraswati.

---

[३] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [३१]

विदित हो कि स० १९३४ दूसरे ज्येष्ठ महिने में पजाव देश के लाहौर नगर मे पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[1]

---

[७] पत्र (२३) [३२]

Lahore
8th June 1877[2]

My dear Pundit

Please let me know whether you require some more copies of *Sanskar-Biddhi* or *Sutharth-Parkash* for your *Sabha* as

---

१ ऋ० भाष्य भूमिका, अक (३) सवत् १९३४।

२ ज्येष्ठ द्वि० वदी १२, शुक्र सवत् १९३४।

यह मूल पत्र लखनऊ आर्य समाज के सग्रह में सुरक्षित हैं। पण्डित रामाधार वाजपेई को लिखा गया।

you requested once befoɪe Have you recovered the prıce of twenty *Sanskar-Bıddhıs* and have you sold all of them to the people ?

The other books are not ready wıth me but when come to hand, you wıll be ınformed atonce Successful lectures are goıng on here eveɪyday and wıth good consequence. Hoping you are well wıth your chıldren Accept my *Asheerbad*

Yours well wısher
Pundıt Swamı Dayanand Sarusswattı
Sd/ दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

लाहौर
८ जून १८७७

मेरे प्रिय पण्डित !

कृपया मुझे बताएं कि जैसा आप ने पूर्व एक बार लिखा था, क्या आप अपनी सभा के लिये सस्कारविधि या सत्यार्थप्रकाश की कुछ और प्रतियां चाहते हैं ? क्या आपने बीस सस्कार-विधियो का मूल्य प्राप्त कर लिया है और क्या आप ने वे सब लोगो को बेच दी हैं।

दूसरे पुस्तक मेरे पास तय्यार नही हैं, पर जब आ जायेंगे, तो आप को तत्काल सूचना दी जायगी। यहां प्रति दिन व्याख्यान बड़ी सफलता से हो रहे है । उनका परिणाम अच्छा होगा। आशा है आप स्वसन्तान सहित अच्छे हैं। मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

[१] पत्र (२४) [३३]

Umrıtsur 21st July 1877.

My dear Baboo

Your letter of the 17th ınstant duly come to hand I was really glad to learn from ıt that by the mercy of Supreme Beıng you are ın enjoyment of perfect health According to your request and wıshes I herewıth send a pattern of the Veda's monthly commentarıes also a copy of prospectus of the same for your ınformatıon The subscrıptıon for the current year has been fixed Rs 4-8-0 only ıncludıng postage, but for the future years, the amount of subscrıptıon wıll be ıncreased or decreased accordıng to the sıze of the work I'll be very glad to ınform you now and then all about my gradual progress ın my undertakıngs and regular movements from place to place wıthout faıl Hopıng you are well and rejoıcıng. Please accept my best *asheerbad* I have ıntended to stop at Umrıtsur up to the end of August, and have arrıved here sınce the 12th ınst from Lahore [२]

Your well wısher

Pandıt Swamı Dayanund Sarusswattı,

Sd दयानन्द सरस्वती

P S

Address me Umrıtsur ın the garden of Mohomed Jan Raees of the statıon.

---

१ आषाढ शुक्र ११ शनि सवत् १९३४।

२ प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३२१ और देवेन्द्र बाबू तथा पं० घासीराम कृत जीवन चरित पृ० ४२९ पर लिखा है कि श्री स्वामी जी ५ जुलाई को अमृतसर पहुचे। इस पत्र से ज्ञात होता है कि श्री स्वामी जी १२ जुलाई को अमृतसर पहुचे।

Five parts for the five past months have already been published up to the end of June, and the year for the work commences from February 1877.

To

Baboo Deena Nauth Gangooly,
Darjeeling.

---

१ श्री देवेन्द्र बाबू के संग्रह में यह मूलपत्र विद्यमान था। म० मामराज अक्तूबर सन् १९२६ में यह मूल पत्र प० घासीराम जी से लाये थे। हम ने उसी से इस की प्रतिलिपि स्वयं की थी।

मूल पत्र अब हमारे संग्रह में संख्या ४ पर सुरक्षित है।

२ बाबू दीना नाथ का पूरा पता ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका प्रथमावृत्ति अंक ९ संवत् १९३४ के हरे रंग के अन्तिम पृष्ठ पर ग्राहक संख्या ४९५ पर इस प्रकार है—

इंजिनियर इन चीफस आफिस एन. बी स्टेट रेल्वे। सैदपुर, बाया [via] राजमहल और पार्वतीपुर।

[१] पत्र (२५) [३४]

[वेद्भाष्य सम्बन्धी पत्र]

मन्त्री आर्य समाज लाहौर की ओर से[1]

डाक्टर जी. डबल्यू लाइटनर एम ए बार ऐट ला

रजिस्ट्रार पञ्जाब यूनिवर्सिटी कालेज,

सिमला को

श्रीमन्

पञ्जाब सरकार ने आपके यूनिवर्सिटी कालेज की सैनेट को पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य के गुणो को जानने के लिये एक पत्र भेजा था। उसका परिणाम जानने के लिए दक्षिण मे मुम्बई और पूना की, पश्चिमोत्तर प्रान्त मे मुरादावाद और शाहजहापुर की और पञ्जाव मे लाहौर और अमृतसर की आर्य समाजें अत्यधिक उत्सुक थी। ज्यूही मैसर्ज ग्रिफिथ और टानि तथा लाहौर के कुछ पण्डितो की दी हुई सम्मतिया प्रकाश मे आईं, तभी आर्य समाज लाहौर ने, अभिमानी समझे जाने के भय मे पड कर भी, अपना यह कर्तव्य समझा कि आप को ऐसी सूचना दी जाए, जैसी इसकी सम्मति मे, सैनेट ऐसी

---

१. १४ मई १८७७ सोमवार को लगभग १० बजे श्री स्वामी जी पजाव के लैफटिनैण्ट गवर्नर से मिले। देखो लैफटिनैण्ट गवर्नर के निजी मन्त्री मि० जे ग्रिफिथ का १२ मई का श्री स्वामी जी के नाम का पत्र, (परिशिष्ट में)। उसी दिन गवर्नर से वार्तालाप के अनन्तर स्वामी जी ने अपने वेदभाष्य के सहायतार्थ पजाव सरकार को एक पत्र लिखा था। पत्र के साथ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका और वेदभाष्य का नमूना भी भेजा गया था।

पजाव सरकार ने वे ग्रन्थ सम्मति के लिए यूनिवर्सिटी कालेज की सैनेट के पास भेज दिए। तव पजाव यूनिवर्सिटी कालेज के रजिस्ट्रार ने स्वामी जी के भाष्य पर कुछ भारतीय और कुछ अग्रेज अध्यापकों की सम्मतिया मगाई। वे सम्मतिया स्वभावत श्री स्वामी जी के विपरीत थी। उन सम्मतियो की आलोचना करने वाला यह उपरिलिखित पत्र जो अग्रेजी से हमारे द्वारा भाषा में किया गया है लाहौर समाज की ओर से रजिस्ट्रार महोदय को लिखा गया। इस पत्र के साथ श्री स्वामी जी का लिखा हुआ उत्तर भाषा में भी था। उसका भावानुवाद भी अग्रेजी में भेजा गया। वह आगे अक ३५ पर छपा है।

यह पत्र प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८०२–८०५ पर उर्दू में छपा है। हमने यह भाषानुवाद मूल अग्रेजी पत्र से किया है। वह मूल पत्र निम्नलिखित पुस्तक में छपा है—Essays on Swami Dayanand Saraswati and The Arya Samaj, compiled and Edited by Lala Jiwan Das Pensioner, Lahore, 1902 यह पुस्तक हमारे सग्रह मे सुरक्षित है।

विद्वत् सभा को अधिक ठीक और परिपक्व निर्णय पर पहुंचने के योग्य बना दे। वह विद्वत्सभा वह सब कुछ सुन ले, जो उस भावी कार्य के अनुकूल या विरुद्ध कहा जा सकता है।

स्वामी दयानन्द ने स्वयं भी इस विषय पर एक लेख लिखा है। समाज उसे स्वामी दयानन्द सरस्वती के आलोचकों के समस्त आक्षेपों का सन्तोषदायक उत्तर समझता है। वह मूल लेख भी साथ ही भेजा जाता है।

प्रतीत होता है कि महाभारत-काल से पहले, जिसे यूरोपियन काल-गणना के अनुसार तथा बहुत न्यून गिनती से भी ईसा के सवत् से ६०० या ७०० वर्ष पहले सरलता से धरा जा सकता है, भारत में वेदों का पठन पाठन नियम से होता था और उन पर भाष्य रचे जाते थे। उस समय ऐसे गुरुकुल वा विद्यालय थे, जिन में केवल वेद ही अध्ययनाध्यापन में आते थे, और भाष्य, कोष तथा व्याकरण लिखे जाते थे। ये ग्रन्थ इस लिए रचे जाते थे कि वेदमन्त्रों का व्याख्यान और स्पष्टीकरण हो। इन में से कई ग्रन्थ, काल के अनेक विनाशों के होने पर भी हम तक पहुंच पाए हैं। ये ग्रन्थ यद्यपि अलभ्य हैं, पर सर्वथा अप्राप्य नहीं हुए। इन में सब से अग्रणी ब्राह्मण, निरुक्त, निघण्टु और पाणिनि का व्याकरण आदि हैं। अत एव यही ग्रन्थ वेदों के सब से पुरातन और विश्वसनीय भाष्य और व्याकरण हैं। क्योकि जब महाभारत का महा संग्राम हुआ तो उसने हिन्दू समाज को उसकी जड तक हिला दिया। उस समय अध्ययन की अपेक्षा लोगों को अपने प्राणों की चिन्ता अधिक थी। उस युद्ध में सारा उत्तर भारत एक अथवा दूसरे पक्ष की ओर हुआ।

तब न केवल युद्ध के काल में प्रत्युत उस के शताब्दियां पश्चात् वेद घोर लुप्तावस्था में रहे। अधिक शान्तिप्रद कालों के लौटने पर वैदिक विद्या पुनर्जीवित हुई। नए विद्यालय उठे और नए भाष्य निकल पडे। इन्होंने पुराने ऋषियों की व्याख्याओं को तिलाञ्जलि दी और अपने युग की प्रवृत्तियों के अधिक अनुकूल व्याख्याएं की। तथापि इस से निकृष्ट समय भी आने वाला था। बौद्ध धर्म भारत में सर्वोपरि हो गया। वेदों के विद्वान् पकड़े और मारे जाते थे। उन की धार्मिक पुस्तकें जलाई जाती थीं और नष्ट की जाती थीं। ब्राह्मणों ने अभी बौद्धों को देश से निकाला ही था, अभी उन्होंने अपना प्रभुत्व पुन. प्राप्त किया ही था, जब उन्हें एक अधिक भयानक शत्रु से सामना करना पड़ा। महाभारत के युद्ध ने और बौद्ध धर्म के विस्तार ने जो बात आंशिक रूप में की थी, देश पर मुसलमानों के अधिकार ने वह सर्वथा पूर्ण कर दी। सारी विद्या, सारा वाङ्मय और सारी सच्ची वैदिक विद्वत्ता समाप्त हो गई। इन्हीं उत्तर समयों

में सायण, महीधर, उव्वट और रावण के भाष्य हुए। इन से लाभ के स्थान में हानि अधिक हुई। सर्व साधारण लोगो पर इनके भाष्यो का इतना प्रभाव हो गया है कि पुराने भाष्यो को निरर्थक समझा जाता है और उन्हे कभी ही कोई देखता है।

तथापि कुछ दूरी पर एक उज्ज्वल भविष्य होने वाला था। गत शताब्दी [ईसा] के अन्तिम दिनो मे सस्कृत भाषा और वाङ्मय ने कोलब्रुक, जोन्स और कारी (Carey) ऐसे प्रसिद्ध विद्वानो के ध्यान को पुनः अपनी ओर खेंचा। उनके दिए हुए धक्के ने भाषा-विज्ञान मे ही आश्चर्य नही किया, वाप्प, वर्नफ, श्लेगल, विलसन, वेवर, और मैक्समूलर सदृश चमकते हुए प्राच्य विद्या विशारदो की एक विशेष पंक्ति को ही उत्पन्न नही किया, और हमे एक राजेन्द्रलाल मित्र ही नही दिया, परन्तु हम आशा करते हैं, वह धक्का अवश्य ही स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य के रूप मे परिणत होगा। परन्तु इस बात का बड़ा शोक है कि योरोपियन विद्वानो को अपनी अत्यधिक सामग्री के लिये एतद्देशीय पण्डितो पर आश्रित रहना पड़ता है। ये पण्डित ऐसे हैं जिनका अधिक से अधिक ज्ञान भी गहरा नही है और इन में से भी जो सब से अधिक ज्ञानवान् हैं, सायण और महीधर से अधिक बड़े नाम नही जानते। यही कारण है कि वैदिक विद्वत्ता ने अपेक्षाकृत धीमी उन्नति की है और योरोप में वेदो की शिक्षा के सम्बन्ध में अशुद्ध विचार फैले हुए हैं।

प्रति वर्ष, प्रति मास, और दिन दिन हमारे महान् देश के प्राचीन साहित्य और सभ्यता पर निस्सन्देह अधिक प्रकाश पड़ रहा है। यद्यपि इस साहित्य के लिये योरोप मे प्राच्य-विद्या के विद्वानो के सम्मिलित यत्नो द्वारा बहुत कुछ पहले ही किया गया है, परन्तु इससे भी अधिक अभी किया जाना शेष है। हमें विश्वास है, एक समय आयगा जब उपस्थित वेदभाष्य वैदिक विद्वत्ता के प्रासाद का मूलाधार समझा जायगा। वेदो की उलटी व्याख्या करने वाले भाष्यकारो द्वारा योरोपियन विद्वान् जिस प्रकार उलटा समझे हैं, उससे यह सर्वथा आश्चर्य नही होता कि वे कुछ काल के लिये इस विचार की अवहेलना करें कि वेद एक ही सद्ब्रह्म की उपासना सिखाते हैं। परन्तु हमारी धारणा है कि स्वामी दयानन्द ने जो धक्का अब दिया है, वह अधिक गम्भीर अन्वेषण को प्रोत्साहन देगा और सत्य को प्रकाश में लायगा। तथापि इस देश के पण्डितो की अपेक्षा योरोपियन विद्वानों से अधिक आशाएं की जाती हैं। पण्डितों का यह स्वार्थ है कि जब तक वे कर सकें तब तक मूर्तिपूजा और

उसकी विधियों को स्थिर रक्खें। समाज इस समय ऐसी ही आशा कर सकता है कि बढ़ता हुआ प्रकाश किसी दिन अन्धकार को दूर करेगा और सब को सचेत करेगा।

योरोप मे वैदिक विद्वत्ता सम्प्रति भी थोड़ी है, इसके अधिक प्रमाण अपेक्षित नही। योरोप के सब से बड़े वैदिक विद्वान् दृढ़ता से कहते हैं कि अब भी अनेक मन्त्र हैं कि जिनका कोई अर्थ नही निकलता। योरोप मे अब तक जितना हुआ है वह शब्दो के अर्थों का अनुमान मात्र करने से अधिक नही है। इन से कोई सुसम्बद्ध विचार (मन्त्रो से) नही निकाले जा सकते। योरोप के सात प्रमुख प्राच्य विद्या-विशारदो के एक एक मन्त्र के निम्नलिखित अनुवाद जो मूलार्थ से अत्यधिक भिन्न हैं उच्चस्वर से प्रमाणित करते हैं कि योरोप मे वेदार्थ ज्ञान अभी स्थूल रूप मे ही है।

उत ब्रुवन्तु नो निदो निरन्यतश्चिदारत।
दधाना इन्द्र इद्दुवः ॥ ५ ॥
उत नः सुभगां अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टयः
स्यामेन्द्रस्य शर्मणि ॥ ६ ॥[1]

देखो-ऋग्वेद सहिता की मैक्समूलर की भूमिका पृ० २२–२४।

१. चाहे हमारे शत्रु कहते हैं, किसी और स्थान को चले जाओ तुम जो केवल इन्द्र की पूजा करते हो—

२ अथवा चाहे हे बलशालिन्, सारे लोग हमे भाग्यवान् कहे, हम सदा इन्द्र की रक्षा मे रहे।

इन मन्त्रो के सामान्य भाव के सम्बन्ध मे मैंने विचारा कि कोई सन्देह ही नही हो सकता। यद्यपि इस मे एक शब्द अर्थात् 'अरिः' व्याख्या योग्य है। फिर भी अनेक प्रकार की व्याख्याएं जो विविध विद्वानो ने की हैं, विलक्षण हैं। प्रथम यदि हम **सायण** को देखें, तो वह अर्थ करता है—

१. हमारे पुरोहित इन्द्र की स्तुति करें। हे शत्रुओ, इस स्थान से चले जाओ और दूसरे स्थान से भी। हमारे पुरोहित (इन्द्र की स्तुति करें) वही जो सदा इन्द्र की स्तुति करते रहते हैं।

२. हे शत्रुओ के नाशक, शत्रु हमे धनवान् कहे, कितना अधिक मित्र लोग! हम इन्द्र की प्रसन्नता मे हो।

---

१ ऋग्वेद १।४।५, ६॥

प्रोफेसर विलसन ने सायण का पूरा अनुकरण नही किया। परन्तु उसने अनुवाद किया —

१ हमारा पुरोहित उत्सुकता से उस की स्तुति करता हुआ बोले, ऐ गालिया निकालने वालो यहां से चले जाओ और प्रत्येक दूसरे स्थान से (जहां वह पूजा जाता है)।

हे शत्रुओ के नाशक, हमारे शत्रु कहे कि हम समृद्ध हैं। लोग हमे (बधाई दें)। हम सदा उस आनन्द मे वास करें जो इन्द्र की (अनुकूलता से मिलता है।)

लैंगलाएस ने अनुवाद किया—[1]

स्टीवन्सन ने अनुवाद किया—

१ इन्द्र की स्तुति मे सब लोग पुन सम्मिलित हो जायें। तुम दुष्ट और घृणा करने वाले सब यहां से चले जाओ और प्रत्येक दूसरे स्थान से, जब कि हम इन्द्र सम्बन्धी कृत्य को करते हैं।

२ हे शत्रु-नाशक (तेरी कृपा से) हमारे शत्रु भी हमारे साथ जो हम धनो के स्वामी हैं शान्ति से बोलें। तब क्या आश्चर्य है कि यदि दूसरे आदमी ऐसा करते हैं। हम सदा उस आनन्द को भोगें जो इन्द्र के आशीर्वाद से उपजता है।

प्रोफेसर बैनफी अनुवाद करता है—

१ और घृणा करने वाले कहे, वे हर एक दूसरे से अस्वीकृत किये गये हैं, अत वे इन्द्र का उत्सव करते हैं।

२ और शत्रु और द्वेश हमे प्रसन्न घोषित करें, हे नाशक यदि हम केवल इन्द्र की रक्षा मे हैं।

प्रोफेसर राथ ने अन्यत. का ठीक अर्थ लिया है अर्थात् भिन्न स्थान को। और इस लिये उसने उस वचन का यही अर्थ किया होगा किसी दूसरे स्थान को गति करो अर्थात् उसी अर्थ मे, जैसा भाव मैंने लिया है। तथापि कुछ काल पश्चात् S V ar उस ने अपने आप को ठीक किया, और उन्ही शब्दों का यह अनुवाद प्रस्तावित किया—तुम किसी अन्य पदार्थ को भुला दो।"

प्रोफेसर बोल्लेनसन (ओरियण्ट एण्ड आक्सिडेण्ट वाल्यूम १, पृ० ४६२) ने किसी सीमा तक प्रोफेसर राथ के दूसरे अनुवाद का अनुसरण किया और

---

[1] लैटिन भाषा में होने के कारण इस का अनुवाद नहीं दिया गया।

प्रोफेसर बैनफी के अनुवाद को ठीक न समझ कर यह दिखाने का यत्न किया कि "वह अन्य पदार्थ जो भुलाया गया है" कुछ अनिश्चित पदार्थ नही है, परन्तु इन्द्र के अतिरिक्त दूसरे सारे देवताओं की पूजा है।

यह है वेदार्थ की [योरुप मे] अनिश्चित अवस्था जिसने प्रोफेसर मैक्समूलर को ऋग्वेद-सहिता के प्राक्कथन मे यह लिखने पर विवश किया है कि उसका अनुवाद अनेक स्थानों में शुद्धि योग्य है और शीघ्र या कालान्तर मे इस का स्थान एक नए अनुवाद को लेना पड़ेगा।

और कि भारत में वैदिक विद्वत्ता इस से भी अधिक स्वल्प है, यह इसी बात से जाना जा सकता है कि स्वामी दयानन्द के वारवार के आह्वानों पर भी एक पण्डित भी अभी तक ऐसा प्रकट नहीं हुआ जो वेदों से यह सिद्ध करे कि उन मे मूर्ति पूजा पाई जाती है, यद्यपि वे सब इस बात को कह तो देते हैं। ऐसी अवस्था का यही कारण कहा जा सकता है कि इस देश मे वेद अपितु उन के थोड़े २ भाग ही अर्थज्ञान के विना कण्ठस्थमात्र किए जाते हैं। इस के विपरीत स्वामी दयानन्द न केवल अपनी वाग्मिता से, न केवल अपने तर्क के असाधारण वल से अपने श्रोता गणों के मनों मे विश्वास उत्पन्न करा देता है, प्रत्युत अपने वेदभाष्य मे शब्दों के इतिहास को खोलता है, प्रत्येक बात की व्याख्या करता है कि जिस से वह अपने अर्थ पर पहुंचा है और शब्दों के जो अर्थ करता है उनकी पुष्टि में वेदों, ब्राह्मणों, निघण्टु और पाणिनि के व्याकरण से प्रमाण देता है। संक्षेप मे कह सकते हैं कि अपनी महती विद्वत्ता की योग्यता से, अपनी धैर्य युक्त गवेषणा से, अपने काम के लिए असीम प्रेम के द्वारा वह मानव-पुस्तकालय के इस सब से पुराने ग्रन्थ मे जीवन-प्राण का संचार कर रहा है। वह उन कठिनाइयों को प्रकट करता है, जिन्हों ने अब तक उस [वेद] की स्वतन्त्र उन्नति को रोक रखा है। वह भाषा विज्ञान की सामान्य रूप से और भारतीय भाषा-विज्ञान की विशेष रूप से अचिन्त्य सेवा कर रहा है। उस के वेदभाष्य के एक हजार से ऊपर ग्राहक अब तक बन गए हैं। और ग्राहकों की संख्या प्रति दिन उन्नति पर है। इन बातों का विचार करके और इस बात को जान कर, जैसा कि पंजाब सरकार और भारत मे दूसरी प्रान्तीय सरकारें जानती हैं कि वेदों ने भारतीय इतिहास के सब उत्तरवर्ती युगों पर कैसा प्रबल प्रभाव डाला है, और उन का भारतीय वाङ्मय की प्रत्येक शाखा के साथ कैसा घनिष्ठ सम्बन्ध है, और उन के धार्मिक और सदाचार के विचारों ने भारतीय

जाति के हृदयों में कितनी गहरी जड़ पकड़ी है, तथा उन के सनातन प्रमाणों से भारतीय जीवन के जनता सम्बन्धी और व्यक्तिगत सब काम नियमित किए जाते हैं, यह सब जान कर समाज विश्वास रखता है कि सरकार ऐसे महाशयों की दी हुई सम्मतियों के अनुकूल नही चलेगी कि जो अन्य गुणों के रखते हुए भी, समाज की नम्र दृष्टि मे, वैदिक विद्वान् होने की प्रतिष्ठा नही रखते।

अन्तत, समाज आज्ञा चाहता है कि उन मुख्य कारणों को सक्षेप से दोहराए कि जिन के आधार पर वह स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य की पजाब सरकार द्वारा सरक्षकता चाहता है, और आशा प्रकट करता है कि सरकार देश की दूसरी सब प्रान्तीय सरकारों को प्रेरित करे कि वे भी एक महान् सुधारक और विद्वान् के इस पुण्य और परोपकारयुक्त उद्देश्य के प्रोत्साहन मे इस के साथ सम्मिलित हों।

(१) कि भारतीय भाषा-विज्ञान यदि यह स्वाभाविक गति पर चले, तो अवश्य ही वेदों के स्वाध्याय से प्रारम्भ होगा। अत, उन के ज्ञान का प्रचार अत्यधिक अभीष्ट है।

(२) कि इस वेदभाष्य के प्रकाश ने गवेषणा का भाव उत्पन्न कर दिया है। इस को प्रोत्साहन देना श्रेष्ठ है।

(३) कि आशा की जाती है कि वेदों के सच्चे ज्ञान के प्रचार द्वारा हिन्दू मन मिथ्या विश्वास और गहरे गड़े हुए पक्षपात से मुक्त होगा।

(४) कि स्वामी दयानन्द का भाष्य उन सब से अधिक विश्वसनीय प्रमाणों पर समाधारित है कि जिन को योरोपीय विद्वान भी प्रामाणिक स्वीकार करते हैं परन्तु जिन्हे वे अभी तक पूर्णतया प्रयोग मे नही लाए।

(५) कि वर्तमान परिस्थितियों में स्वार्थी ब्राह्मणों अथवा भ्रान्त समझने वाले योरोपियनों से निष्पक्ष सम्मतियों की आशा नही हो सकती।

अत पूरा अवसर मिलना चाहिए।

लाहौर
२५ अगस्त १८७७

मैं हूँ . . ..
जीवनदास[1]
मन्त्री आर्यसमाज

---

१ प० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ८०५ पर इस के स्थान में यह लिखा है—

हम हैं . . . .

जीवन दास वा सारदा प्रसाद भट्टाचार्य इत्यादि।

[१] पत्र (२६)[1] [३५]

मुझे वकील हिन्द और यूनीवर्स्टी कालिज पंजाब के [प्रकाशित][2] पत्रों से ज्ञात हुआ कि कई एक साहबों ने मद्रचित वेद भाष्य पर प्रतिकूल अनुमति दी है। इसलिए मैं उनकी शंकाओं का उत्तर क्रम से निवेदन करता हूँ।

प्रथम उन शंकाओं का उत्तर है जो मिस्टर आर ग्रिफिथ एम ए. प्रिंसिपल बनारस कालिज ने की है। पांच हजार वर्ष के लगभग से वेद विद्या जाती रही। महाभारत से पहले इस देश में सब विद्या ठीक २ प्रचरित थी। परन्तु पीछे से पढ़ने पढ़ाने के ग्रन्थ और रीति बिल्कुल बदल गई। जब से अब तक वही अशुद्ध प्रणाली प्रचरित है। यद्यपि कहीं २ के लोग वेदादिक सत्य ग्रन्थों को कंठ कर लेते हैं परन्तु उस के शब्दार्थ को कोई भी नहीं जानता। न ऐसे कोई व्याकरणादिक ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़ाये जाते हैं जिन से वेदों का अर्थ हो सके। आधुनिक जो महीधर आदि के बनाए हुए वेद भाष्य देखने में आते हैं वे महाभ्रष्ट और अन्धकार के बढ़ाने वाले है। उनके देखने वालों को मद्रचित भाष्य ठीक समझ में नहीं आता। मेरा भाष्य शुद्ध वेदार्थ बोधक और प्राचीन भाष्यों के ठीक अनुकूल है। वह तभी समझ में आवेगा जब लोग प्राचीन भाष्यादिक ग्रन्थों की सहायता स्वीकार करेंगे। मैंने प्रत्येक मन्त्र का अर्थ सत्य प्रतीत होने के अर्थ बहु प्राचीन आप्त व्याख्यानकारों का प्रमाण बहुत स्पष्ट पतेवार लिख दिया है। यदि ग्रिफिथ साहब ने प्राचीन भाष्य वा मेरे लिखे प्रमाणों और उदाहरणों को पढ़ा होता तो कभी उन की ऐसी विरुद्ध सम्मति न होती जैसी कि उन्हों ने हाल में दी है। उवट सायण महीधर रावण आदि के रचे हुए भाष्य प्राचीन भाष्यों से सर्वथा विपरीत हैं। केवल इन्हीं भाष्यों का उलथा अंगरेजी में विलसन् और माक्स मूलर आदि प्रोफेसरों ने किया है। इसलिए मैं इन के भाष्यों को भी शुद्ध और न्यायकारी नहीं कह सकता। इन्हीं ग्रन्थों के कारण ग्रिफिथ साहब आदि लोग भी सन्देह मार्ग में पड़े है और मुझ

---

१ हमने यह पत्र दयानन्द दिग्विजयार्क, द्वितीयाङ्क पृ० ८२—८८ से लिया है। प्रतीत होता है दिग्विजयार्क के रचयिता प० गोपाल शास्त्री ने इसका अंग्रेजी से ही भाषा में उलथा किया था। हम ने इस की अंग्रेजी अनुवाद से कुछ तुलना कर ली है। कहीं २ हमने अनुवाद में शोधन भी किया है। शोक है कि श्री स्वामी जी का मूल पत्र लाहौर आर्यसमाज की असावधानी के कारण नष्ट हो गया।

२ कोष्ठगत पाठ अंग्रेजी अनुवाद से लिया गया है।

को यह कह कर दूषित करते हैं कि स्वामी जी ने अर्थ पलट कर अपने प्रयोजन के सिद्धार्थ दूसरे ही अर्थ नियत किये हैं। परन्तु उनका यह तर्क सर्वथा निर्मूल है। मैंने सर्वत्र ऐतरेय और शतपथ नामक ब्राह्मण ग्रन्थ और निरुक्त तथा पाणिनीय व्याकरणादिक सत्य ग्रन्थों का प्रमाण देकर प्रत्येक मन्त्र का सत्य २ अर्थ लिखा है। यदि ग्रिफिथ साहिब उस को देखते तो कभी ऐसा न लिखते। विचार करता हूँ कि उनने मेरा भाष्य विना ही देखे भाले अपनी मनमानी अनुमति प्रकाशित कर दी है।

मैं नहीं समझ सकता हूँ कि ग्रिफिथ साहब मेरा श्रम वृथा क्यो समझते हैं जब कि मेरे भाष्य के लेने वाले हजार से अधिक बड़े २ सत्पुरुष है और प्रत्यह नवीन जनों के निवेदन पत्र मेरी पुस्तक लेने के विषय में बराबर चले आते हैं। मेरे ग्राहको मे से बहुत से अच्छे २ संस्कृतज्ञ और बहुतेरे अंगरेजी और संस्कृत मे पूरे २ विद्वान् हैं। ग्रिफिथ साहब का यह अंतिम लेख कि वेदो की ऋचाओ से बहुत से देवताओ के नाम प्रकाशित होते हैं सो उन की यह बात मुझ को तब प्यारी लगे और विद्वानो के समीप प्रामाणिक ठहरे जब वे उस मतलब की कोई ऋचा मुझ को लिख भेजें—

पूर्वलिखित की पुष्टि मे निम्नलिखित उद्धरण दिये जाते हैं—

(a) ऐच. टी कोलब्रुक रचित 'दी वेदाज़' से'

---

१. यद्यपि वेदों को शीघ्र दृष्टि से देखने से देवताओं के नाम उतने दीख पडते है जितने कि स्तुति करने वालों के हैं परन्तु पुराने व्याख्यान ग्रन्थों के अनुसार कि जो ठीक आर्य धर्म के विषयक हैं वे अनेक नाम देवता वा मनुष्यों और वस्तुओं के नहीं ठहर सकते अर्थात् वे सब तीन देवताओं ही के नाम से सम्बन्ध रखते हैं और फिर वे तीनों नामों की देवता भी पृथक् २ नहीं हैं अर्थात् वे तीनों नाम एक ही परमेश्वर के हैं। निघण्टु अर्थात् वेदों के शब्दकोष के अन्त में तीन नामावली देवताओं की हैं। उनमें से पहिली में अग्नि के, दूसरी में वायु के, तीसरी में सूर्य्य के पर्याय वाची नाम हैं।

निरुक्त के अन्त भाग में जिस में केवल देवताओं का वृत्तान्त है, यह दो बार कथन किया गया है कि देवता केवल तीन हैं (तिस्र एव देवता) इन से अधिकतर अनुमान सिद्धान्त यह निकलता है कि केवल एक ही देवता है। यह बात वेद के अनेक वाक्यों से भी सिद्ध होती है और यही आशय निरुक्त और वेद के प्रमाण के अनुसार अति सुगम और संक्षेप रीति मे ऋग्वेद के सूची पत्र में वर्णन किया है। इस से यह निर्णय होता है कि आर्यों के पुराने धर्म मार्ग की पुस्तकें केवल एक ही ब्रह्म को गाती हैं और सूत्रों से भी ऐसा ही सिद्ध होता है।

(b) चार्ल्स कोलमैन रचित "माईथालोजी आफ दी हिन्दूज" से[1]
(c) पादरी गैरट के अनूदित "भगवद्गीता" के परिशिष्ट से[2]
(d) मैक्स मूलर रचित "हिस्टरी आफ ऐन्शएट सस्कृत लिटरेचर" पृ० ५६७ से[3]

ऋग्वेद में जो प्रथम मत्र है उसमे अग्नि शब्द आया है । उसका उल्था सी. एच टानी साहब एम. ए. प्रिन्सिपिल प्रेसीडेन्सी कालिज कलकत्ता ने आग के अर्थ में अपने उस प्रथमोक्त ध्यान से किया है कि अग्नि भी एक पदार्थ प्रतिष्ठा का वेद मे है परन्तु अग्नि को तत्त्व मान कर किसी प्राचीन ऋषि मुनि ने पूजन वा आवाहन नही किया और अग्नि शब्द का जो स्वाभाविक अर्थ आग का है वह केवल उन वाक्यो मे लिया जाता है जिन मे लौकिक सम्बन्धी बातें हैं परन्तु ऐसे वाक्यो मे जहां ईश्वर की स्तुति प्रार्थना निवेदन आदि का प्रसंग होता है वहां अग्नि शब्द का अर्थ परमेश्वर का घटित किया जाता है यह अर्थ कुछ मैंने मिथ्या कल्पित नही किया। इस प्रकार के युक्तार्थ ब्राह्मण और निरुक्त नामी ग्रन्थो मे बराबर वर्णन हो आये हैं ।

---

१. वेदों से ज्ञात होता है कि आर्य ऋषियों का धर्म मार्ग केवल एक बडे ब्रह्म के पूजन और श्रद्धा वा भक्ति में था जिस को वे सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ और सर्वव्यापक जानते थे और जिसके सम्बन्धी गुणों को वे अत्यन्त पूजनीय वाक्यों में प्रगट करते थे और वे सम्बन्धित गुण उस की तीन प्रकार की शक्तिया हैं । उनमें से प्रथम उत्पादक, दूसरी पालक, तीसरी सहारक नाम से वर्णन की जाती हैं ॥

२ इन अति सत्य ध्यानों से हमें पूर्ण विश्वास होता है कि चारों वेद एक ब्रह्म को गाते हैं जो सर्वशक्तिमान् अनन्त चिर स्थायी स्वयभू ससार का द्योतक और पालक है । मैं इसके सग एक और ऋचा लिखता हूँ। जिससे एक ही ब्रह्म निश्चित होता है। इस से हम आपकी शका निवृत्ति करते हैं जानिये कि आर्य लोग स्वाभाविक बुद्धि से सदैव अद्वैत सेवी अर्थात् केवल एक ईश्वर ही को मानते थे ॥

३. उसी उक्त ऋचा का एक चरण यह है जिससे निस्सन्देह केवल एक ही ब्रह्म का निरूपण होता है—यद्यपि हम उस को अनेक नाम से आवाहन करते हैं। ऋग्वेद की पहिली और १६४ और ४६ वीं ऋचा को देखो स्पष्ट लिखा है कि उसी एक परब्रह्म को ज्ञानवान् इन्द्र मित्र वरुण और अग्नि के नाम से पुकारते है। कोई कहते हैं कि वह आकाश में सपक्ष गरुत्मान् है और कोई २ बुद्धिमान् उसी के अग्नि यम मातरिश्वा आदि अनेक नाम मानते हैं ॥

अन्त पर टानी साहब की जो यह सम्मति है कि मैने जो भाष्य बनाया है वह इस कारण से रचा है कि सायरण और अगरेजी उल्थाकारो के भाष्य कट जावें अर्थात् अशुद्ध ठहरें सो इस विषय मे मै कभी दूषित नही हो सकता हूँ। यदि सायरण ने भूल की है और अगरेजों ने उसको अपना मार्ग प्रदर्शक जान कर अगीकार कर लिया तो भले ही करें परन्तु मै जान बूझ कर कभी भूल का काम नही कर सकता। परन्तु मिथ्या मत बहुत काल तक नहीं ठहर सकता केवल सत्य ही ठहरता है और असत्य सत्यता के सन्मुख शीघ्र धुमैला हो जाता है। पण्डित गुरुप्रसाद हेड पण्डित ओरियटल कालिज लाहौर ने यह बात कह कर कि स्वामी जी के भाष्य मे कोई अशुद्धि छापे की कहे सो नहीं है, मेरे प्रत्येक आशय को दूषित ठहराया है। तथापि मै उन को धन्यवाद देता हूँ। उनने मेरे भाष्य के छापने वाले का विश्वास माना यह क्या थोडी बात है। परन्तु मैं कहता हूँ कि उसका भी दोष वे मेरा ही जानें परन्तु थोड़ा मुह खोल कर कहे तो कैफियत् खुले नहीं तो क्या जान पडे। और जो वे मुझे दूसरे स्थल पर यह दोष लगाते हैं कि अपने ही पथ का प्रचार किया चाहता है सो मै ऐसी बातो को सुन अति पश्चात्ताप से कहता और समझता हू कि वे वेद विद्या से नितान्त अजान हैं। यदि उन्होने प्राचीन भाष्यो का अवलोकन किया होता तो कभी ऐसा न कहते।

और तीसरा कलक जो वे मुझे यह लगाते हैं कि इन्द्र मित्र और त्वष्टा आदि शब्दों के अर्थ स्वामी जी ने अपनी ओर से गढ़े हैं सो उनकी इस शका के उत्तर मे मैं उनको वेदभाष्य के विज्ञापन का प्रमाण देता हूँ और एक प्रति साथ ही इस उत्तर के ऐसी लगाये देता हू कि जिस मे उन शब्दों का यथावत् वर्णन है। फिर भी इन सब बातो के परिणाम में मुझे निस्सन्देह हो यही कहना पडता है कि उन में पुरातन सस्कृत विद्या अत्यन्त ही कम है।

चौथा दोष जो वे मेरे व्याकरण मे यह आरोपण करते हैं कि परस्मैपद के स्थान में आत्मनेपद लिया है सो अब मै इस बात का निश्चय कराने को कि स्वय पण्डितजी व्याकरण का ज्ञान नही रखते कैयट [के भाष्य प्रदीप] और नागेश, रामाश्रम आचार्य, अनुभूति सरूप आचार्य आदि के ग्रन्थो के कई एक प्रामाणिक उदाहरण पृथक् लिखता हूं।[1] वे मेरे विदधीमहि[2] के प्रयोग को सर्वथा युक्त समझते हैं। वदामहे[3] के शुद्ध

१ इससे आगे का कुछ पाठ दयानन्द दिग्विजयार्क में छूट गया है।

२ वेदाना यथार्थ भाष्य वय विदधीमहि—ऋग्वेदा० भा० भूमिका ईश्वर प्रार्थनाविषय।

३. एव प्राप्ते वदामहे—ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका वेदोत्पत्तिविषय।

प्रयोग के लिये मैंने पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के तीसरे पाद के ४७ वें सूत्र का प्रमाण दिया है। और उन स्थलो की नकल भी हूवहू उन को भेज सकता हू जिस से मेरा किया प्रयोग कैसा शुद्ध है यह प्रतीत यथेच्छ हो जावेगी। परन्तु विना व्याकरण वोध क्योकर उनके समझ मे आवे।

[सब प्रमाण मूल भाषा लेख के साथ नष्ट हो गए।]

पांचवी शका उनको मेरे एक छद के प्रयोग पर उपस्थित हुई है। वह अत्यन्त हास्यजनक है। जो मै उसका इस सक्षिप्त उत्तर में कुछ वर्णन करूं तो असार विस्तार होगा। रहा उनका समाधान सो उसके लिए पैङ्गल सूत्र और उसके भाष्यकार हलायुधभट्ट का एक स्पष्ट प्रमाण पृथक् लिखता हू। उसे देख शान्त होवें।

[वह प्रमाण मूल भाषा लेख के साथ ही नष्ट हो गया।]

ज्ञात होता है कि पण्डित हृषीकेश भट्टाचार्य द्वितीय पण्डित ओरियटल कालिज लाहौर सर्वत्र पण्डित गुरुप्रसाद जी के ही अनुगामी हुए हैं। इस से उन की शकाओ का उत्तर वही समझना चाहिए जो पीछे लिख आए हैं। (उप चक्रे)[1] शब्द मे उनकी शका एक पृथक् है। सो उन्हे यह वात सुझाने को कि मेरा अर्थ वहुत ही निर्मल है मै उन्हे केवल पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के तीसरे पाद के ३२ वें सूत्र का प्रमाण देता हू। उसको देख तुष्ट होवें।

अव रहे पण्डित भगवान दास असिस्टेन्ट प्रोफेसर सस्कृत गवर्नमेन्ट कालिज लाहौर। सो उनकी कोई नवीन शका नही है। इसलिए जो कुछ मैंने ऊपर कहा वही वहुत है। वे भी तुष्ट होवें इति।

अन्त[2] मे मुझे प्रतीत होता है कि इन विरुद्ध लेखो का सारा वल देश के विद्यालयो मे मेरे वेदभाष्य के लगाए जाने के विपरीत है। परन्तु मेरे आलोचक भारी भूल कर रहे हैं। मेरा वेदभाष्य महाभारत के पूर्व के भाष्यों के प्रमाणो को देने के कारण और योरोपीय विद्वानो के विचारो के विरुद्ध होने के कारण गवेषणा का एक ऐसा भाव उत्पन्न कर देगा कि जिससे सत्य प्रकट हो जायगा और हमारे विद्यालयो में सदाचार के भाव को उन्नत करेगा। और इसी कारण सरकार की संरक्षकता का अधिकारी है।

---

१ यथा पिता स्वसन्तति सर्वमनुष्यार्थं वेदोपदेशमुपचक्रे—ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका वेदोत्पत्तिविषय।

२ यहा से अन्त तक का पाठ दिग्विजयार्क में नहीं है। हम ने इस का अंग्रेजी से अनुवाद किया है।

[४,५] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [३५]

विदित हो कि स० १९३४ आधे आषाढ से श्रावण मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के अमृतसर नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[1]

---

[१] पत्र (२७) [३६]

आर्य्यसमाज[2] के सब सभासदों को स्वामी जी का आशीर्वाद पहुँचे। आगे सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से प्रतिदिन अमृतसर आर्य्यसमाज का उत्साह वृद्धि को प्राप्त होता जाता है। १०० नियम का पुस्तक, (आर्य्योद्देश्य-रत्नमाला) भी आज कल छप के जिल्द बन्ध के तैयार हो जावेगा। पाच सौ पुस्तक लाहौर और पचास पुस्तक गुरुदासपुर को भेजे जावेंगे। और सम्वत् १९३४ भाद्रपद सुदी ६, गुरुवार ता० १३ सितम्बर सन् १८७७ प्रात.काल ९½ की रेल मे जालन्धर को जाना होगा, सो जानना। जो वेदभाष्य पर विरुद्ध सम्मति के उत्तर के पत्र छपवा कर मुम्बई आदि मे भेज दिये जावेंगे, तथा समाचार पत्रो मे छपवा दिये जांय, तो बहुत अच्छी बात होगी।[3] आगे आप लोगो की जैसी इच्छा हो वैसा कीजियेगा। स० १९३४, मिति भाद्रपद सुदी ३, सोमवार, ता० १० सितम्बर सन १८७७।[4]

दयानन्द सरस्वती

---

[६] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [३७]

विदित हो कि स० १९३४ भाद्र मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के जलधर नगर मे पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[5]

---

१. ऋ० भाष्यभूमिका, अक (४, ५) सम्वत् १९३४।

२ आर्य्यसमाज लाहौर।

३ इस का अग्रेजी से भाषा में किया, हमारा अनुवाद स० ३३,३४ पर छपा है।

४. प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३२६ पर उद्धृत। मूलपत्र लुप्त हो चुका है।

५. ऋ० भाष्यभूमिका, अक (६) सम्वत् १९३४।

[७] निवास-सूचना-विज्ञापन [३८]

विदित हो कि स० १९३४ आश्विन मास के अन्त पर्यन्त पजाब देश के लाहौर वा रावलपिंडी नगर मे पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[१]

---

(२) पत्र (२८) [३९]

आर्य्यसमाज लाहौर के सब सभासदो को नमस्ते विदित हो।[२] आगे अमृतसर से जाकर जालन्धर मे पहुंच गये। सरदार सुचेतसिंह जी के बाग मे ठहरा हू।[३] आगे जो जो विशेष व्यवहार होगा सो लिखा जायगा। आगे सरदार विक्रमासिंह जी बहुत अच्छे पुरुष हैं।[३] वेदभाष्य का छटा अक आ गया वा नही। मोहर लगाकर मोहर को अमृतसर भेज देना। सम्वत् १९३४ मिति भाद्र सुदी[४] शनिवार, ता० १५ सितम्बर सन् १८७७।

जालन्धर दयानन्द सरस्वती

---

१ ऋ० भाष्य भूमिका, अक (७) सवत् १९३४।

२ प० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० ३४१ पर उद्धृत।
मूल पत्र अब लुप्त हो चुका है।

३ इनका वश-वृक्ष निम्नलिखित है

महाराज निहालसिंह (कपूरथला रियासत के राजा)

एक माता — राजा रणधीरसिंह → राजा खडकसिंह → राजा जगजीतसिंह

दूसरी माता — स० सुचेतसिंह (दोनों भाई) स० विक्रमासिंह → टिक्का प्रतापसिंह → टिक्का जगजीतसिंह → कवर मनजीतसिंह

कपूरथला की राजगद्दी राजा रणवीरसिंह के कुल में रही। स० सुचेतसिंह और स० विक्रमासिंह दोनों भाई दूसरी माता के पुत्र थे। वे भी पीछे राजा की उपाधि से युक्त हुए। श्री स्वामी जी उन्हीं के पास जालन्धर में ठहरे थे।

४ सुदी ८ चाहिए। प० लेखरामकृत जीवनचरित में सुदी नहीं है।

(८)   पत्र (२९)   [४०]

Jullundher
2nd October 1877

My dear Pandit[1]

I believe you might have received one hundred copies of Aryodesh Ratun Malla from Umrit-Sar which according to my permission had been sent to your address by Munsookh Rai of Arya Samaj.

Please acknowledge them, if received duly and inform me of your sound health

Daily lectures are given here and hope they will end with fair result I will stop here about 9 or 10 days more and then visit next place or perhaps Lahore once more.

You can address me Jullundher city to the care of Sirdar Bikraman Singh of Kapoorthala wala Please accept my *Asheerbad.* The said copies are to be sold at one and half annas each

Yours well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswatti
Sd दयानन्द सरस्वती

Vedas Bhomika has now come to its end nearly and the text is to be commenced soon

---

१. मूलपत्र लखनऊ आर्यसमाज में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

जालन्धर
२ अक्तूबर १८७७

मेरे प्रिय पण्डित !

मैं विश्वास करता हूं कि अमृतसर से आर्य्योद्देश्यरत्नमाला की एक सौ प्रतियां आप ने प्राप्त की होगी जो कि मेरी आज्ञानुसार आर्य्य समाज के मनसुखराय ने आप के पते पर भेजी हैं।

कृपया उन्हे स्वीकार करें, यदि वे समय पर मिलें और अपने अच्छे स्वास्थ्य से मुझे सूचित करें।

यहां व्याख्यान प्रतिदिन होते हैं और आशा है कि अच्छे परिणाम के साथ समाप्त होगें। मै यहां ९ या १० दिन तक और ठहरूंगा और पुन. अगला स्थान देखूगा या कदाचित् फिर लाहौर जाऊ।

आप मुझे कपूरथला के सरदार विक्रमासिंह द्वारा जालन्धर नगर के पते से लिख सकते हैं। कृपया मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें। पूर्वोक्त प्रतिया प्रति पुस्तक डेढ़ आना के दर से वेचनी हैं।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

वेदभाष्यभूमिका अब लगभग समाप्ति को आ रही है और वेद शीघ्र ही आरम्भ किया जायगा।

---

(१) पत्र (३०) [४१]

[विनय माधव जी आनन्द रहो]

१२ सितम्बर से यहा हैं' . .

५ अक्तूबर १८७७ जालन्धर

---

१. प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३४१ पर यही अभिप्राय लिखा है। महाशय विनयमाधव कौन थे, इस का हमें ज्ञान नहीं हो सका।

[१] पत्र (३१) [४२]

[उर्दू पत्र][1]

लाला मनसुख र[ाय जी आनन्दित रहो]
बाद आशीर्वाद के वाज़े हो [कि यहा खैरीयत है]
हाल यह है कि अब हम तार [के द्वारा सूचना नही देंगे]
पीर[2] को प्रात काल यानी सुबह को [७½ चलकर १०½ बजे]
अमृतसर के स्टेशन पर पहुं[चेंगे। और अगले]
रोज़ यानी तारीख़ १६ माह हाल [को की तरफ]
रवाना हो जावेंगे । अगर मौक[ा मिला तो एक]
व्याख्यान भी दे देंगे । व [ ]
जो कुछ हाल किताबों की निसबत को[ ]
ज़ुबानी कह दिया जावेगा । अ[ौर]
से गलती से बाबा नारायणसिंह जी [ ]
मे[3] भूल हुई है और नारा[यण सिंह जी]के नाम
का [ ] आ गया हो तो हुआ के साथ
असौल होता है । मकान का बन्दोबस्त वास्ते एक
शब और निस्फ रोज अव्वल के कर लेना
[चा] हिये । एक रोज से ज्या [दा]
...

[ ][4] वगेरा की गुफ्तगू ज़ुबानी होगी । सब
[सभासदों से आशी]र्वाद कह देना । बाकी खैरीयत है । ज्यादा
आशीर्वाद ।

---

१ अमृतसर निवासी प० रुद्रदत्त जी ने यह पत्र अक्तूबर १९२६ में हमें दिया था । इस का आधा भाग लुप्त हो चुका था । शेष भी बहुत जीर्णावस्था में है । हम ने इस के जीर्णभाग जोड दिये हैं । इस के एक ओर उर्दू और दूसरी ओर उर्दू और अंगरेजी दोनों है । उर्दू भाग हाशियों पर भी लिखा हुआ है । लुप्त अंश की पूर्त्ति कहीं २ कोष्ठों में की गई है ।

२ सोमवार

३ यहां से पृष्ठ की दूसरी ओर का लेख आरम्भ होता है । इस पंक्ति का पूर्वार्ध पत्र फट जाने से लुप्त हो चुका है । यह पत्र जालन्धर से अमृतसर को लिखा गया है ।

४ यहा से आगे का लेख हाशिये पर है ।

११ अकतूवर १८७७ सन् ईस्वी[1]

राकम

[स्वामी]जी महाराज

[अंग्रेजी भाग]

I wıll start foı Umr[ıtsar on]
the 15th ınst by m[ornıng tıaın]
at 7–30 A M and [will reach there]
at about 10–30 [A, M ·]
Please keep a h[ouse theıe for]
my short stay of [a nıght and half day]
[sure]ly, for the occ[assıon Accept]
my best ashee[rbad]

Sd दयानन्द स[रस्वती][2]

———

[८]　　निवास-सूचना-विज्ञापन　　[४२]

विदित हो कि सं० १९३४ आश्विन मास के अन्त पर्य्यन्त पञ्जाव देश के लाहौर वा रावलपिण्डी नगर मे पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

———

१ आश्विन शुक्र ५, वृहस्पतिवार म० १९३४। १५ अक्तूवर आश्विन शुक्र ९ सोमवार को अमृतसर पहुचे। प० लेखराम जी ने विजयदशमी से अगले दिन अर्थात् १७ अक्तूवर १८७७ को लाहौर पहुचना लिखा है (पृ० ३१७)। प० घासी राम जी ने एक अशुद्धि अधिक की है। वे लिखते है—"जालन्धर से १७ अक्टूवर सन् १८७७ ई० को महाराज लाहौर पधारे।" इस पत्र से और जीवनचरितों के लेख से निश्चित होता है कि १५ का आधा दिन, १६ और १७ की प्रात तक श्री स्वामी जी अमृतसर रहे।

२ जीर्ण आधा मूलपत्र अव हमारे सग्रह में सख्या ५ पर सुरक्षित है।

३ ऋ० भाष्य भूमिका, अक (८) सवत् १९३४।

[२] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [४३]

विदित हो कि स० १९३४ कातिक मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाव देश के लाहौर वा रावलपिंडी नगर में पडित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे ।'

[१] **(विपक्षी-पत्र अशुद्धि-संशोधन)** [४४]

ओम्†

ओ श्रीगणेशाय नम. । अथार्झमतभञ्जनं प्रारभ्यते ।
रावलपिंड्यधिवासी लक्षीरामाभिधो द्विज. कश्चित् ।
द्विजो विद्वान् ।
नत्वा गणपत्यादीनजमतस्य खंडनं कुरुते ॥१॥

तावन्मध्यस्थस्वामिसंपद्गिरिसंमत्या सम्मुखमस्मद्विवादो भवतानंगीकृतोतः पत्रोल्लेखने वयं प्रवृत्ताः स्म । हे विद्वन् यत्त्वयोक्तं शतपथब्राह्मणादिभाग. पुराणमुच्यतेतो अष्टादशपुराणानि पुराणशब्दाभिधेयानि इति । तदसत् । प्रमाणाभावात् । यत' पूर्वमीमांसायामुक्तं—"वेदेषु ब्राह्मणं विध्यर्थवादभूतं, मन्त्रस्तु कर्माङ्गभूतद्रव्यदेवता स्मारक इत्यत्र ब्राह्मणस्य वेदत्वमवसीयते । अत एव शतपथादीनां बहुषु वाक्येषु "अनुस्वारस्य ꣳ छन्दसीति, सूत्रेणꣳकारादेशो दृश्यते । तथा च छन्द'शब्देन वेद एवोच्यते तत्रैव तद्दर्शनात् नान्यत्र ।

---

१. ऋ० भाष्य भूमिका, अक (९) सम्वत, १९३८ ।

†संवत् १९३४ के मध्य में स्वामी दयानन्द सरस्वती रावलपिण्डी म थे । वहा एक पण्डित लखिराम रहता था । उस ने स्वामी जी को नीले रग के फुल्सकेप के पूरे ६ पृष्ठों पर एक पत्र शास्त्रार्थ के लिए लिखा । श्री स्वामी जी ने उसी पत्र पर स्वलेखनी से उस की अशुद्धिया आदि निकालीं । कहीं २ उत्तर के लिए उपयोगी टिप्पणी भी लिख दी । वह सशोधित मूल पत्र भक्त ईश्वरदास जी एम० ए० ने मुझे दिया था । मैंने उसी मूल पत्र का कुछ भाग ऊपर छाप दिया है । नीचे श्री स्वामी जी का सशोधन है ।

तुलना करो प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३४६, ३४७ ।

(१) [श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का संशोधन] (४४)

१ असभ्यकथन । २ अय से अशुद्ध । ३ लक्षि० । ४ एकमात्रा अधिक होने से श्लोक शुद्ध नहीं । २७ मात्रा होने में २८ मात्रा करना अशुद्ध है । ५ सपत्‌गिरि जी का मध्यस्थ होना असम्भव है, विद्या कम होने से । ६ यत्त्वयोक्त । ७ इस की टीका में । ८ वेदव्याख्यानत्वम् । ९ अपाणिनीयम् । १० शब्देन । ११ अशुद्ध है एवकार होने से ।

वेदे तु छन्दो लक्षणाभावेनापि छन्दः शब्दप्रयोगात् । तथा च पूर्वमीमांसासूत्रम् "स्यांदाम्नायधर्मित्वाच्छन्दसि नियमः, इति । छन्दोवंत् सूत्राणि इति च । छंदां ७ सि जज्ञिरे तस्मादिति श्रुतेश्च ॥

· 'ओंकारादिषु छन्दोलक्षणाभावे पि............वेद एव ७कोरप्रयोगः नतु छन्दोमात्रे अथ च अष्टाध्यायीसूत्रमें 'हृग्रहो-भेश्छन्दसीति सूत्रे छन्दो वेद एवोच्यते · "ब्राह्मणानितिहासान्...

अथर्वसहितायां इतिहासश्चे पुराणश्च ऋर्चः सामानि छन्दांसि पुराणम् 'चतुर्थमितिहासः पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं.........अत्र पुराणशब्दस्य नपुंसकत्वेनं नो इतिहासादीनां विशेषणत्वं.........इतिहास-पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् ' अधीयंते पुराणं ये धर्मशास्त्राण्यथेति चेति... आख्यानानितिहासांश्च पुराणान्यखिलानि चेति' ' भेषजमितिश्रुते मनुस्मृते प्रामाण्यं 'अर्धजरतिन्यांयस्याप्रामाण्यात्' " अन्यच्च नारायणोपनिषदि पाषाणमणिसुवर्णमयविग्रहेषु पूजा पुनर्भोगकरीति स्पष्टार्थः............के ते पितरः । सोम्यासः सोम्याः सोमपां इत्यर्थः ।

---

[७] पत्र (३२) [४५]

Rawalpindi
28th November, 1877.

Dear Pandit

The accompanying is a specimen of my Veda Bhashya (which is to be commenced and published soon) showing the style and made of dividing the interpretations of the texts into peculiar ways for the fecility of its readers. I will do my best to disclose all the most difficult points into plain Sanskrit and devanagari so that even the boys of insufficient knowledge will be able to understand them without any help

---

१२ पडित इन का अर्थ नहीं जानते । १३ पि । १४ अशुद्ध है । १५ नहीं है । हृग्रहोर्भश्छन्दसीति । १६ पडित इन का अर्थ नहीं जानते । १७ ब्राह्मणानीतिहा० । १८ पडितों ने इस का, और इस का अर्थ नहीं जाना है । १९ पंडितों ने इसका भी अर्थ नहीं जाना है । २० यह बात अशुद्ध है । २१ — — । २२ पडितों ने इन सब का अर्थ नही जाना है । २३ —नीति० । २४ —णानि खि– । २५ श्रुते । २६—स्मृते । २७ —जरतीयन्या० । २८ इसमें कहीं नही है । २९ पाषाणलोहमणिमृन्मया । ३० सोम्या ।

इस का मूल अब हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

Please see it yourself first and then circulate it in Ahmedabad and Bombay etc , for approval of the people

I hope you loose no time in doing so and in communicating your final opinion to me either to keep the style or change into another better one

The work of text Bhashya has been set up and is under my pen every day so the delay in answer expressive of your and others opinions like that of Moreshwar Kunte is not advisable. Address me Rawalpindi to the care of Post Master only. I have also given a notice on my Veda's Bhoomika Part No 9 for the present month regarding the two issues of Rig and Yaju from the next year 1878 for learning the subscribers wishes for their acceptance and another notice for fixing subscription etc , and as settled will be published again in the next month Please reply my other letter too and accept my best Asheerbad. I am very glad to hear that you visit Bombay A Samaj every fortnight and deliver a beautiful lecture there on different subjects with the view of public interest. Hoping you are well and rejoicing

Your well wisher,
Pt. Swami Dayanand Saraswatti.

दयानन्द सरस्वती

To

R R Gopal Rao, Hari,
D Mukh, Torman [1]

---

[८] पत्र (३३) [४६]

Rawalpindi
6th December, 1877.

Dear Pandit,

Yours of the 30th ultimo, is to hand To correct Proof-sheets in Hindi must be considered my own duty, and I will do that twice or thrice with my own hand every month.

You will have no difficulty at all in conducting this part of the business but do other things which are performable by you only I think Baboo H Chinta Mani is well qualified and clever enough to superintend the work, but tell me first,

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है।

what you like to do in this case I have not given contract of the work to Dr. Lazauras for any fixed length of period, but his charges have been settled as follow—

(Monthly account for 3100 copies)

He charges for printing and paper at Rs 6/11/6 per page .. ...Rs 161/14/-

For printing the covers including folding and stitching at Rs 15/-/- the 1000 Rs 46/8/-

For office allowance and agency Rs. 30/-/- per month.

The list of subscriptions paid and unpaid with full particulars you will get afterwards at the close of the current year.

I will issue Yajoor Yeda too, if God wished. At what rate per ream the papers like that of my Sanskar Vidhi is procurable in Bombay? Hoping you are well and rejoicing. My asheerbad to you Address me still Rawalpindi.

Yours Well Wisher,
Pt Swami Dayananda Sarswatti.
Sd. दयानन्द सरस्वती

To

R B Gopal H Desh Mookh Saima [1]

P. S.

What will be the printing rate of such size of copies in equal number, as Dr Lazauras prints at present, in Bombay, if I supply paper on my own cost separately.

If you find the printing cheaper done by contract, let the work be published in Bombay and there is no objection at all from my side.

---

[१] पत्र (३४) [४७]

Rawalpindi
13th December, 1877.

Dear Pandit Ji,

In continuation of my yesterdays letter, I again inform you about something more which I remembered afterwards.

---

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के सग्रह में सुरक्षित है।

I want to have a sample of the paper which is to be used and selected for the Veda-Bhashya and also you should bear in mind that the said Bhashya must be published in three different types according to my Ms i.e., M large, round and small bands.

Please write to Baroda subscribers to pay up their subscriptions without further delay

Yours Well Wisher,
Pt. Swami Dayanand Sarswatti
दयानन्द सरस्वती

To
R B Gopal Rao H Desh Mookh, Sarma [1]

---

[९]   पत्र (३५)   [४८]

Jehlum
27th Decr 1877

Dear Pandit jee

I recd/ your delightful letter of the 22nd inst, this morning and am extremely glad to read all the particulars stated therein

I have arrived at Jehlum to-day the 27th current and intend to stop here about a fortnight at least. You can remit the money to me freely according to my above shown address, remarking to the care of Post Master only but please don't send me tickets as you did before, because I find some difficulty in changing or getting money for them Better

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है।

send curreney Notes or Money-ordeı, which are both safest ways indeed. Hopıng you are well and ıejoicing—

Yours well wisher
Pandıt Swamı Dayanand Sarusswati.
Sd दयानन्द सरस्वती

[भापानुवाद]

जेहलम
२७ दिसम्बर १८७७

प्रिय पण्डित जी !

आप का २२ तारीख का आनन्ददायक पत्र आज प्रातः काल मिला और उसकी सब बातो को पढ़कर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ।

मैं आज २७ तारीख को जेहलम पहुंचा हूं और कम से कम यहां पन्द्रह दिन तक रहने का विचार रखता हूं।[2] आप मुझे उपरिलिखित पते पर केवल पोस्ट मास्टर द्वारा लिख कर खुले तौर पर रुपया भेज सकते हैं, परन्तु पूर्ववत् मुझे टिकट न भेजें, क्योंकि उनके बदलवाने या उनके स्थान में रुपया लेने मे मुझे कष्ट होता है। अच्छा है कि कर्रन्सी नोट या मनीआर्डर भेजें जो निश्चय ही दोनो अत्यन्त सुरक्षित प्रकार हैं। आशा है, आप अच्छे और प्रसन्न होगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

[पौष वदी ८, बृहस्पति सवत् १९३४ ।]

---

१ मूल पत्र आ० समाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।
पण्डित रामाधार वाजपेई को लिखा गया।

२. प० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३४९ पर लिखा है कि श्री स्वामी जी ३० दिसम्बर को जेहलम पहुचे। इसी का अनुकरण करते हुए प० घासीराम जी ने महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र पृ० ४५० पर लिखा है कि "३० दिसम्बर १८७७ को महाराज रावलपिण्डी से गुजरात जाने के विचार से शिकरम पर सवार होकर ३१ दिसम्बर को जेहलम रेल्वे स्टेशन पर पहुचे।" प० लेखराम जी तो सामग्री के अभाव से ठीक तिथि नहीं जान सके, परन्तु इस पत्र के मुद्रित हो जाने पर भी प० घासीराम जी ने इस का प्रयोग करके तिथि को ठीक नहीं किया।

[१०] # पत्र (३६) [४९]

Jhelum
28/12/77

Dear Pandit jee,[1]

Please tell me how many copies of Sandhio-Pasan you wish to have for sale in Lucknow ? These are the best copies with good translation in *Deva-Nagri Bhashya* paragraph by paragraph one after the other orderly in improved and enlarged edition The average price per copy has not been fixed as yet, because the said book is still under Press, but on its coming out, every thing will be settled and decided with good will

However I can suggest you so much that the price would be under half rupee per copy And this would be an excellent work for the Arya-people indeed

It is raining here since yesterday evening, so heavily that in the *Kothi* where I am sitting now and writing this letter to you, is all leaking over, except a few hands of floor inside

Hoping you are well and rejoicing

Yours well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswatti

Sd/ दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

जेहलम
२८-१२-७७

प्रिय पण्डित जी !

कृपया मुझे बताएं कि लखनऊ मे विक्री के लिये आप सन्ध्योपासन की कितनी प्रतियां चाहते हैं ? यह सर्वोत्तम प्रतियां हैं। अनुवाद अच्छा है। और एक के पीछे प्रत्येक दूसरे वाक्य का क्रमशः देवनागरी मे भाष्य है। यह सस्करण संशोधित और परिवर्धित है।

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

प्रति पुस्तक का अनुमान से मूल्य अभी नहीं रखा गया, क्योंकि पूर्वोक्त पुस्तक अभी यन्त्रालय मे है, पर इस के निकलने पर प्रत्येक बात शुभ भाव से स्थिर और निश्चित की जायगी।

फिर भी मैं आप को इतना बता सकता हूं कि मूल्य प्रति पुस्तक आठ आने से न्यून होगा, और यह निस्सन्देह आर्यों के लिये अत्युत्तम पुस्तक होगा। कल्ल सायंकाल से यहां इतने वेग से वर्षा हो रही है कि जिस कोठी मे मैं अब बैठा हूं और आप को यह पत्र लिख रहा हू, अन्दर दो चार हाथ छोड़ कर सब स्थानो से चो रही है।

आशा है आप अच्छे और प्रसन्न होगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[११] पत्र (३७) [५०]

Jhelum
4th January 1878

Dear Pandit jee[1]

The Sandhio Pasan Panch Maha Juggya Bidhi with easy transltion in Bhasha, is now ready in its completion for use and you will, soon get 100, one hundred copies of it from Benares Press within a short time

The price per copy has been published on their covers and if you wish to have more of them, you can be furnished with, in required number on your further request I believe you would have recd/ my other letters also in due time Hoping you are with your children and family

Yours wellwisher
Pandit Swami Dd Sarusswatti
Sd/ दयानन्द सरस्वती

Address me Jhelum city to the care of Post Master only.

---

१. मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

जेहलम
४ जनवरी, १८७८

प्रिय पण्डित जी !

सन्ध्योपासन पञ्चमहायज्ञविधि भाषा मे सरलार्थ युक्त अब काम आने के लिये तय्यार हो गई है, और आप को इस की १०० एक सौ प्रति शीघ्र ही बनारस प्रेस से पहुंचेगी।

मूल्य प्रति पुस्तक का उस के मुखपृष्ठ पर छाप दिया गया है, और यदि आप को अधिक की आवश्यकता हो, तो आगे पत्र आने पर अभीष्ट सख्या मे भेजी जा सकती है। मैं विश्वास करता हू कि मेरे दूसरे पत्र भी आप को उचित समय पर मिल गये होगे। आशा है आप सपरिवार कुशल सहित होगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

मुझे केवल इस पते से लिखें—पोस्टमास्टर द्वारा जेहलम नगर।

---

[१२] पत्र (३८) [५१]

Jhelum
6th January 1878

Dear Pandit jee[1]

Received your letter of the 3rd inst enclosing a currency Note for Rs 10-ten only which I accepted with thanks Nothing is new here worthy to be stated, but I hope sincerely that an Arya-Samaj will also be made here within a short time Hoping you are well with your children Please accept my best *Asheerbad*

Yours well wisher
Pandit Swami Dd Saruswatti
Sd दयानन्द सरस्वती

---

१ प० रामाधार वाजपेई को लिखा गया मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

आदि को आशीर्वाद पहुंचे। इति० मि० पौ० शु० ४। ता० ७ जनवरी स० ७८ ई०।[1]

द० दयानन्द सरस्वती

पता—जेहलम वा गुजरात के डाक खाने की मार्फत स्वामी जी के पास पहुंचे। इतना ही लिखना काफी होगा।[2]

---

[१] **निवास-सूचना-विज्ञापन** [५३]

विदित हो कि स० १९३४ पौष मास के अन्त पर्यन्त पजाब देश के वजीराबाद नगर में पडित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

---

[१३] पत्र (४०) [५४]

Gujrat[4]
14 January 1878

Dear Pandit Jee

Your welcome note of the 9th inst duly came to hand and I understood all what you stated therein

Your good wishes for learning the Veda Bhashya's subscription for the current year will soon be fulfilled The only delay is that with the consent of the Bombay people I am now making some better arrangements for the Bhasya's publication

---

१ सवत् १९३४ जेहलम से।

२ यह पत्र हमारी प्रार्थना पर प० राम सहाय जी महोपदेशक आ० प्र० स० अजमेर ने ता० २२-५-३३ को दो और पत्रों सहित हमारे पास भेजा था। मूलपत्र अब हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

३. ऋ० भाष्य भूमिका, अक (९) सवत् १९३४,

४ प० रामाधार वाजपेयी को लिखा गया मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

both in paper and type All this will soon be finished with united efforts of us and a notice will be given in the 11th or 12th part of the Veda Bhashya for the public information on the matter The subscription for this year is surely to be fixed with some reduction and the people would be able to buy one or both numbers of the Rig and Yaju easily.

I dare say, that all the subscribers for this year would be fully satisfied to find good paper and fine order of interpretation, which are very necessarily required to discover the real sense of the Mantras On my returning from the Punjab, I will tell you whether and what time I will be able to visit Lucknow but it would be done so sooner or later once again certainly Hoping you are well and rejoicing Accept my best *Asheerbad* and believe me your ever well wisher

Pandit Swami Dd Sarusswati

Sd/ दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

गुजरात

१४ जनवरी, १८७८

प्रिय पण्डित जी !

आपका ९ तारीख का शुभ समाचार उचित समय पर मिला और आपका लिखा सब विषय समझा।

प्रचलित वर्ष के लिये वेदभाष्य का चन्दा जानने की आपकी शुद्ध भावना शीघ्र पूर्ण की जायगी। देरी केवल इस बात की है कि मुम्बई के लोगो की सम्मति से मै अब भाष्य के छपने का, कागज और टाइप दोनो की दृष्टि से, अच्छा प्रबन्ध कर रहा हूं। हम सब के इकट्ठे परिश्रम से यह सब शीघ्र समाप्त होगा, और इस विषय पर जनता के ज्ञान के लिये वेदभाष्य के ११ वें वा १२ वें अक मे एक विज्ञापन दिया जायगा। इस वर्ष का चन्दा निस्सन्देह कुछ घटा कर रखा जायगा, और लोग सरलता से ऋग् या यजुः के एक या दो अक खरीद सकेंगे।

मैं निश्चय से कहता हूं कि इस वर्ष के सब ग्राहक अच्छा कागज और भाष्य का सुन्दर क्रम देख कर, जो मन्त्रो के यथार्थ अर्थ जानने के लिये बडा आवश्यक है, पूर्ण सन्तुष्ट होंगे। पजाब से लौट कर मैं आप को लिखूगा कि क्या मैं लखनऊ देख सकूगा और कब देख सकूगा, पर यह आगे या पीछे एक वार फिर निश्चय

ही होगा। आशा है आप अच्छे और आनन्द में होंगे। मेरा हार्दिक आशीर्वाद स्वीकार करें और मुझे जानें—

अपना शुभचिन्तक
द० दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (४१) [५५]

Gujrat,
16th January, 1878.

Dear Baboo,

With the consent and united opinion of Moonshi Inder Mani (a famous learned of Arabic and Persian) and other experienced persons of N W Provinces, I feel necessity to inform you that the Veda-Bhashya must not be translated into English or Vernacular before reaching its completion because if translated into English or Urdu then it will weaken the hearts of the people to study Sanskrit, thinking that they would be able to gain their object either by English or Urdu without caring for Sanskrit and Bhasha Under such circumstances, we need not try to translate the work into English or Urdu which instead of producing any good result, will bring forth something bad in the end

Let the Bhashya first be reached its completion in pure Sanskrit and Bhasha only, afterwards, if it would be thought proper to translate into other languages, you all would get liberty to work according to your wishes with the view of public benefit in the world

Now better bookshop to send me sample of paper selected and suggested by Mr Sham ji Krishna Verma some time ago to be procurable at Rs 16 per ream in Bombay Settle the matter soon get agreement of the printers for working according to their words and mutual fixed terms which all should be entered on the stamped paper without longer delay

If Sham Ji Krishna Verma can work for me, I am very glad to engage him in my work even on extra pay and with-

out caring for Rs 10 or Rs. 15 more or less in the monthly account Ask him if he likes to do so and hold a committee of your friends for proposing some better scheme about the Veda Bhashya's publication if possible

The first year ended and the 2nd is to be commenced from February, so I wish to fix subscription on receipt of your settlement with the printers etc , and tell me what subscription should be kept for both the Vedas according to their printing expenses The buyers will be unwilling to pay high subscription if the translation be added and enlarged along with the Sanskrit one

Gujrat, Futtehgurh and Wazeerabad have been blessed with Arya Samajees in December last and January 1878. Address me Gujrat city to the care of Post Master only and accept my Asheerbad

Yours Well Wisher
Pt Swami Dayanand Saraswatti
दयानन्द सरस्वती

To

B.H Chinta Mani,
Bombay

— — —

[१] पत्र (४२) [५६]

[माधोलाल][२]

पजाब के हाता मे बहुत से शहरो मे समाज कायम हो चुका है। और बराबर तादाद बढ़ती हुई चली जायगी। मेरा आशीर्वाद ग्रहण करो और अपनी हालत से हमेशा वाकिफ रक्खो।

गुजरात
२० जनवरी १८७८।

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

२. प० लेखरामकृत जीवन चरित्र पृष्ठ० ३५७, ३५८ पर इतना अश उद्धृत है।

[२] पत्र (४३) [५७]

[माधोलाल][1]

पजाव से लौट कर जव मै वगाल हाता मे आऊगा तुम्हारी मुलाकात से जरूर खुशी उठाऊगा। तुम्हारी कोशिश और इच्छा अपने देसी भाइयो की उन्नति में देख कर मै वहुत प्रसन्न हुआ। सकल सृष्टि का कर्ता आप को स्वस्थ और हरा भरा रखे। तुम्हारी यह इच्छा देख कर कि तुम अपने देश की अवस्था उत्तम करने का यत्न करते हो मुझे ऐसा आनन्द हुआ कि वर्णन नहीं कर सकता। इस मे कुछ सन्देह नही कि तुम इस जीवन मे इसके फल को चखोगे। तुम सव को मेरा आशीर्वाद।

दयानन्द सरस्वती

गुजरात

२८ जनवरी १८७८[2]

---

[६] विज्ञापन[3] [५८]

सव सज्जनो को विदित हो कि आगे भूमिका के अक नम्वर १२।१३ और १४ छपने को वाकी रहे हैं। सो फाल्गुण चैत्र और वैशाख मे छप चुकेंगे। इस के आगे ज्येष्ठ महीने से लेकर अक १ ऋग् और अक १ यजुर्वेद के मन्त्रभाष्य के छपा करेंगे। इसमे एक २ अङ्क का एक वर्ष मे रुपैये डाक महसूल सहित ४) चार २ रहेंगे। जो एक ऋग्वेद का अक लिया चाहें सो ४) रु० लाजरस कपनी काशी वा स्वामी दयानद सरस्वती जी के पास भेज देवें और जो कोई यजुर्वेद का ही १ अक लिया चाहें सो ४) रु० गत वर्ष के और ४) रु० अगले वर्ष के भेज देवें। उनको आरम्भ से आज पर्यन्त और विक्रम के सवत् १९३५ के माघ पर्यन्त प्रति मास एक २ अक मिलता जायगा। और जो दोनो वेद को लिया चाहें वे ८) रु० भेज देवें। परन्तु जो ऋग्वेद का अक लेते हैं और दूसरे यजुर्वेद का भी भूमिका सहित

---

१ पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३७८ पर इतना अश छपा है। उस में लिखा है कि पत्र के पूर्व भाग में "पुस्तकें भेजने का उल्लेख है।"

२ पौष वदी १० सोम, सवत् १९३४। यही पत्र स्वामी सत्यानन्द जी कृत जीवन चरित पर भी कुछ आगे पीछे करके छापा गया है। वहा पौष सु० १५ स० १९३४ तिथि दी है। यह तिथि अशुद्ध दी गई है। हमने विक्रम सवत् की ठीक तिथि दी है।

३ ऋ० भाष्य भूमिका अक ९ के अन्त में छपा।

लिया चाहे वे १२) रु० आगे के वर्ष के भेज देवें। ऐसे ही जो २ एक वेद के नवीन ग्राहक हो वे भी ८) रु० दोनो वर्ष के भेजें। और जो भूमिका एक तथा मन्त्रभाष्य दोनों लेवें, वे ११) रु० भेज देवें। और जो दो भूमिका सहित दोनो अक लिया चाहे वे दोनो वर्ष के १६) रु० भेजे। और जो केवल भूमिका मात्र लिया चाहे वे ४॥।–) रु० देकर लेवें।

ऋग्वेद के १० सूक्त पर्यन्त और यजुर्वेद के १ अध्याय पर्यन्त का भाष्य संवत् १९३४ मि० माघ वदि १३ गुरुवार तक वन चुका है।[1] और भूमिका भी वन कर तैयार हो गई। आगे प्रतिदिन मन्त्रभाष्य वनाया जाता है।[2]

दूसरा विज्ञापन

जिन ग्राहको ने पुस्तक लेके अब तक दाम नही भेजे हैं उन को उचित है कि शीघ्र भेज देवें। नहीं तो उन के पास दाम लेने के लिये पत्र वा मनुष्य भेज के लिया जायगा। और उसका मार्ग खर्च भी उन से लिया जायगा। इससे उचित है कि वे शीघ्र भेज देवे। आगे जैसा कागज भाष्य मे अब लगाया जाता है, इस से भी उत्तम मन्त्रभाष्य मे लगाया जायगा।

---

[१] पत्र (४४) [५९]

[ला० जीवनदास][3]

आज की तारीख मुलतान से भी एक चिट्ठी डाक्टर जसवन्त राय साहब की आ गई है। उस ओर जरूर जाना पडेगा।

गुजरांवाला
९ फरवरी १८७८

---

१ ३१ जनवरी १८७८। तुलना करो पृ० ४०।
इस और अगले विज्ञापन का सकेत पत्र सख्या ५४ में है।

२ यह अन्तिम भाग छपने को पीछे भेजा गया होगा।

३. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६५।

[२] पत्र (४५) [६०]

लाला जीवनदास[1] ....

इस स्थान मे प्रतिदिन व्याख्यान होता है अभी तक कोई विशेष बात लिखने योग्य नज़र नहीं आती है। फिर थोडे काल मे लिखा जावेगा। आज ६ बजे से पादरी लोगों से बहस होगी।

१९ फरवरी १८७८ — दयानन्द सरस्वती
गुजरावाला

---

[३] पत्र (४६) [६१]

श्रीयुत मूलराज, जीवनदास, साईंदास, बलराम जी आनन्द रहो। आगे रामरखा से पत्र मिल सकेंगे तो भेज दिये जायेंगे वा नवीन लिखवा कर भेज देंगे। परन्तु जैसे आज पर्य्यन्त नही छपे, वैसे हो तो परिश्रम व्यर्थ है। जैसी अन्तरंग सभा के नियमो का झमेला आज तक पूरा नही हुआ है, ऐसा न हो। इस लिखने का प्रयोजन यह है कि जो काम जिस समय करना चाहिये, वह उस समय मे होने से सफल हो जाता है, इसलिये समय पर काम करना बुद्धिमानो का लक्षण है। यहां बहुत आनन्द मे हम लोग हैं। आशा है कि आप लोग भी आनन्द मे होगे।

एक काम यह आवश्यक है कि इस मुन्शी से यह काम ठीक २ नही हो सकता। इस लिये एक मुन्शी अगरेजी, फारसी और नागरी भाषा का पढ़ा हुआ, हिसाब नकशा निकालना भी जानता हो, जो ऐसा न मिल सके तो अग्रेजी, फारसी, उर्दू तो ठीक जानता हो कि चिट्ठी पत्र ठीक २ पढ़ और लिख सके, वह आलसी न हो और जिसका स्वभाव किसी प्रकार बुरा न हो, उसका मासिक २५) रु० से अधिक न होना चाहिये। उस को आप चारो जने ध्यान से २५) रु० और वीस दोनो के वीच में निश्चित करके मुझ को लिखिये। यहा व्याख्यान नित्य होते हैं। समाज होने का भी कुछ २ सम्भव है। मिति चैत्र ११ सम्वत् १९३४, शनिवार, ता० २४ मार्च १८७८।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६२ पर उद्धृत।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३७० पर उद्धृत।

[१] पत्रांश[1] (४७) [६२]

लाला पोहलो राम जी...... ....

... .

मुलतान मे समाज होने वाला है। सो जानोगे। व्याख्यान प्रतिदिन हुआ करता है। नवीन समाचार कुछ नही है। सब सभासदो को नमस्ते।

२९ मार्च १८७८ — दयानन्द सरस्वती

---

[७] **विज्ञापनपत्र** [६३]

आगे यह विचार किया जाता है कि, संस्कृत विद्या की उन्नति करनी चाहिये; सो बिना व्याकरण के नहीं होसकती जो आज कल कौमुदी, चन्द्रिका, सारस्वत, मुग्धबोध और आशुबोध आदि ग्रथ प्रचलित हैं. इनसे न तो ठीक ठीक बोध और न वैदिक विषय का ज्ञान यथावत होता है, वेद और प्राचीन आर्ष ग्रथों के ज्ञान से विना किसी को सस्कृत विद्याका यथार्थ फल नही हो सकता, और इसके विना मनुष्यजन्म का साफल्य होना दुर्घट है ॥ इसलिये जो सनातन प्रतिष्ठित पाणिनीय अष्टाध्यायी महाभाष्यनामक व्याकरण है, उसमे अष्टाध्यायी सुगम संस्कृत और आर्यभाषा मे वृत्ति बनाने की इच्छा है; जैसे वेदभाष्य प्रतिमास २४ पृष्ठो मे १ अंक छपावता है, इसी प्रकार ४९ पृष्ठ का अक मुम्बई मे छपवाया जाय तो बहुत सुगमता से सब लोगो को महालाभ हो सकता है, इस मे हजारों रुपये का खर्च और बड़ा भारी परिश्रम है ॥ इसका मासिक मूल्य जो प्रथम दें उनसे ।।=) आने के हिसाब से ७॥) रुपये लिये जायें उधार लेने वालों से ॥।=) के हिसाब से ११।) लिये जायें, विद्योत्साही सब सज्जनों की सम्मति प्रथम मैं जाना चाहता हूं, सो सब लोग अपना अपना अभिप्राय जनावें इति ॥[2]

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६९ पर उद्धृत। यह पत्र-गुजरावाला के मन्त्री लाला पोहलो राम के नाम है।

२ यह विज्ञापन ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका अक १५, १६ के अन्तिम पृष्ठों पर छपा है और सभवतः चैत्र सवत् १९३५ के अन्त में लिखा गया था। तब स्वामी दयानन्द सरस्वती लाहौर में थे। पजाब छोडने के अनन्तर उन्हों ने वृत्ति बनानी आरभ कर दी थी। वृत्ति की समाप्ति अनुमानत. स० १९३६ तक हो गई। परन्तु ग्राहकों के अभाव से यह अब तक अप्रकाशित पडी है। हमने इसका अधिकाश भाग पढा है, और कह सकते है कि ग्रन्थ अपूर्व है। इसी के आधार पर पीछे वेदागप्रकाश बना। इस वृत्ति का सम्पादन हम ने आरम्भ किया था। तदुपरान्त डा० रघुवीर एम ए. ने इस के दो अध्याय सम्पादित किए। तीसरे अध्याय का सम्पादन प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी ने किया। चतुर्थ अध्याय भी जिज्ञासु जी शोध रहे हैं। प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी ने वृत्ति के चार अध्याय ही शोधे थे।

[३] पत्र (४८) [६४]

बाबू माधोलाल जी आनन्द रहो[1]

आपका कुशलपत्र तारीख २४ वी गत मास का उचित समय पर हमारे पास पहुंचा विषय लिखा सो प्रकट हुआ। आप के इच्छा के अनुसार कल्ल की तारीख ३१ मार्च को दो छपे हुए आर्य्यसमाज के मुख्य दश उद्देश्य अर्थात् नियमो के भेज चुके हैं और आज एक कापी उक्त समाज के उपनियमो की भी भेजते है सो निश्चय होता है कि दोनो कापियां नियम और उपनियमो की आप के पास अवश्य पहुंचेंगी। रसीद शीघ्र भेज दीजिये। और इन नियमो को ठीक २ समझ कर वेद की आज्ञानुसार सब के हित में प्रवर्त्त होना चाहिये विशेष करके अपने आर्य्यावर्त्त देश के सुधारने मे अत्यन्त श्रद्धा और प्रेम भक्ति सब के परस्पर सुख के अर्थ तथा उनके क्लेशो के मेटने में सत्य व्यवहार और उत्कण्ठा के साथ अपने ही शरीर के सुख दुःखों के समान जान कर सर्वाङ्ग यत्न और उपाय करना चाहिये। सब के साथ हित करने का ही नाम परमधर्म्म है। इसी प्रकार वेद में बराबर आज्ञा पाई जाती है जिस का हमारे प्राचीन ऋषि मुनि आदि यथावत पालन करते और अपनी संतानों को विद्या और धर्म के अनुकूल सत्य उपदेश से अनेक प्रकार के सुखो की वृद्धि अर्थात् उन्नति करते चले आये हैं केवल इसी देश से विद्या और सुख सारे भूगोल में फैला है क्योकि वेद ईश्वर की सब सत्य विद्याओं का कोश और अनादि है। बाकी सब व्यवहार तथा ईश्वर की उपासना आदि के विषय हमारी पुस्तकों और उपनियम आदि के देखने से समझ लेना उचित है। आपको हिन्दूसत्सभा के स्थान में आर्य्य समाज नाम रखना चाहिये क्योंकि आर्य्य नाम हमारा और आर्य्यावर्त्त नाम हमारे देश का सनातन वेदोक्त है।

आर्य्य के अर्थ श्रेष्ठ और विद्वान् धर्मात्मा को हिन्दू शब्द यवन आदि ईर्शक लोगों का बिगाड़ा और बदला हुआ है जिस का अर्थ गुलाम काफर और काला आदमी आदि विचार कर नाम अपनी सभा का आर्य्य समाज दानापुर रख कर वेदोक्त धर्मो पर और सब सभासदो मे परस्पर नमस्ते कहना चाहिए सलाम वा बदगी नही। इति। ता १ अप्रैल सन १८७८ ई०।

द. दयानन्द सरस्वती

---

१ यह पत्र प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६९ पर पूरा छपा है। हम ने इसे मूल पत्र से छापा है। यह मूल पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित है। इस से प्रतीत होता है कि प० लेखराम जी ने अनेक मूल पत्रों की प्रतिलिपिया ही ली थीं। मूल पत्र अपने लिए वे अपने साथ नही ला सके होंगे।

हमारा पाठ मूल के सर्वथा अनुकूल है।

[४] पत्र (४९) [६५]

बाबू माधोलाल जी आनन्द रहो।

पत्र आप का ता: ७ अप्रैल का पास हमारे पहुंचा। विषय मालूम हुआ नीचे लिखी हुई पुस्तकें आपके पास भेजी जाती हैं। इनको क्रमपूर्वक समझ कर रसीद हमारे पास शीघ्र भेजिये लाहौर के पते से—

१—सत्यार्थप्रकाश	२॥)	१—आर्य्योद्देश्य रत्नमाला	~)॥
१—संस्कारविधि	१॥=)	१—मेले चांदापुर की उर्दू में	~)।
१—आर्य्याभिविनय	॥)	१—प्रश्नोत्तर हलधर	_~)
१—सन्ध्योपासन	।=)		
७—कुल्ल दाम पुस्तक	५≡)॥।		
डाकमहसूल	।~)॥		

महसूल डाक सहित कुल्ल दाम ५॥~)॥।

पांच रुपये नौ आने और नौ पाई हुए। बड़ी प्रसन्नता[1] की बात हुई कि आप अपनी सभा का नाम आर्य्यसमाज रक्खा है। अब आप की दृष्टि देश के सुधार पर होनी चाहिये।[1] अग्रे किमधिकम्। इति। ता० १२ अप्रैल सन् १८७८ ई०।

ह: दयानन्द सरस्वती

---

[८] ॥ विज्ञापनम् ॥ [६६]

सबको विदित हो कि जो जो बातें वेदो की और उनके अनुकूल हैं उनको मैं मानता हूं विरुद्ध बातो को नही॥ इससे जो जो मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश वा संस्कारविधि आदि ग्रंथो मे गृह्यसूत्र वा मनुस्मृति आदि पुस्तको के वचन बहुत से लिखे है॥ वे उन उन ग्रंथों के मतों को जनाने के लिये लिखे है उनमे से वेदार्थ के अनुकूल का साक्षिवत् प्रमाण और विरुद्ध का अप्रमाण मानता हूं जो जो बात वेदार्थ से निकलती है उन सब को प्रमाण करता हूं क्योंकि वेद ईश्वर वाक्य होने से सर्वथा मुझको मान्य है॥ और जो जो ब्रह्माजी से लेकर जैमिनि मुनिपर्य्यंत महात्माओ के बनाये वेदार्थानुकूल ग्रंथ हैं, उनको भी मैं साक्षी के समान मानता हूं। और जो सत्यार्थप्रकाश के ४२ पृष्ठ और २५ पंक्ति मे पित्रादिकों मे से जो कोई जीता हो उसका तर्पण न करै और जितने मर गये हैं उनका तो अवश्य करे॥ तथा पृष्ठ ४७ पंक्ति २१ मरे भये पित्रादिकों का तर्पण और श्राद्ध करता है इत्यादि तर्पण और

---

१ प्रसन्नता—से ले कर चाहिये तक भाग प० लेखरामकृत जीवन चरित के पृ० ३७० पर छपा है। प० लेखरामजी ने मूल पत्र की प्रतिलिपि दी की होगी। मूल पत्र दानापुर समाज के संग्रह में अब भी सुरक्षित है। वहीं से लेकर हम ने इसे छापा था।

श्राद्ध के विषय में जो छापा गया है सो लिखने और शोधने वालो की भूल से छप गया है। इस के स्थान मे ऐसा समझना चाहिये कि जीवितो की श्रद्धा से सेवा करके नित्य तृप्त करते रहना यह पुत्रादि का परम धर्म है और जो जो मर गये हो उनका नही करना क्योंकि न तो कोई मनुष्य मरे हुए जीव के पास किसी पदार्थ को पहुंचा सकता और न मरा हुआ जीव पुत्रादि के दिये पदार्थों को ग्रहण कर सकता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि जीते पिता आदि की प्रीति से सेवा करने का नाम तर्पण और श्राद्ध है अन्य नहीं। इस विषय मे वेदमत्रादि का प्रमाण भूमिका के ११ अक के पृष्ठ २५१ से लेके १० अक के २६७ पृष्ठ तक छपा है वहां देख लेना ॥[१]

---

[१] पत्र (५०) [६७]

स्वस्ति श्रीयुतानवद्यगुणालङ्कृतेभ्य सनातनसत्यधर्म्मप्रियेभ्य पाखण्डमत-निवृत्तचित्तेभ्योऽद्वैतेश्वरोपासनमिच्छुभ्यो बन्धुवर्गेभ्यो महाशयेभ्य. श्रीयुतहेनरी एस् ओलकाटाख्यप्रधानादिभ्य. श्रीमन्मेडम एच् पी बिलावस्टक्याख्यमन्त्रिसहितेभ्य, थीयोसोफीकल सोसाइट्याख्यसभासद्भ्यो दयानन्दसरस्वतिस्वामिन आशिषो भवन्तुतमाम् ॥

शमत्रास्ति तत्र भवदीय च नित्यमाशासे ॥

यच्छ्रीमद्भिः श्रीमन्महाशयमूलजीठाकरशीहरिश्चन्द्रचिन्तामणितुलसीरामयादवज्याभिधानाना द्वारा पत्रं मन्निकटे सम्प्रेपितं तद्दृष्ट्वाऽत्यन्त आनन्दो जातः ॥

अहो अनन्तधन्यवादार्हस्य सर्वशक्तिमत सर्वत्रैकरसव्यापकस्य सच्चिदानन्दानन्ताखण्डाजनिविकाराविनाशन्यायदयाविज्ञानादिगुणाकरस्य सृष्टिस्थितिप्रलय-मुख्यनिमित्तस्य सत्यगुणकर्म्मस्वभावस्य निर्भ्रमाखिलविद्यस्य जगदीश्वरस्य कृपया पञ्चसहस्रावधिसवत्सरप्रमितव्यतीतान् कालान्महाभाग्योदयेनासमच्चव्यवहाराणाम-स्मत्प्रियाणा पातालदेशे निवसता युष्माकमार्य्यावर्त्तनिवासिनामस्माकं च पुन. परस्पर प्रीत्युद्भवोपकारपत्रव्यवहारप्रश्नोत्तरकरणसमय आगत । मया श्रीमद्भि सहातिप्रेम्णा पत्रव्यवहार कर्तुं स्वीक्रियते । अतः परं भवद्भिर्यथेष्ट पत्रप्रेषणं श्रीयुतमूलजी ठाकरश्याख्यहरिश्चन्द्रचिन्तामण्यादिद्वारा मन्निकटे कार्य्यम् । अहमपि तद्द्वारा श्रीमता समीपे प्रत्युत्तरपत्र प्रेपयिष्यामि । यावन्मम सामर्थ्यमस्ति तावदह साहाय्यमपि दास्यामि । भवता यादृशं कृश्चीनाख्यादिसम्प्रदायेपु मत वर्त्तते तत्र ममापि

---

१. यह विज्ञापन ऋग् और यजुर्वेद भाष्य के अक १ और २ के टाइटल के पृष्ठ पर छपा है। इस से यही विदित होता है कि ऋषि ने इसे स० १९३५ मास श्रावण में लिखा होगा॥

तादृशमेवास्ति । यथेश्वर एकोऽस्ति तथा सर्वैर्मनुष्यैरेकेनैव मतेन भवितव्यम् । तच्चैकेश्वरोपासनाकरणाज्ञापालनसर्वोपकार सनातनवेदविद्याप्रतिपादितमाप्तविद्वन्सेवित प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्ध सृष्टिक्रमाविरुद्ध न्यायपक्षपातरहितधर्म्मयुक्तमात्मप्रीतिकर सर्वमताविरुद्ध सत्यभाषणादिलक्षणोज्ज्वल सर्वेषां सुखद सर्वमनुष्यै. सेवनीय विज्ञेयम् ॥ अतो भिन्नानि यानि क्षुद्राशयछलाविद्यास्वार्थसाधनाधर्म्मयुक्तैर्मनुष्यैरीश्वरजन्ममृतकजीवनकुष्ठादिरोगनिवारणपर्वतोत्स्थापनचन्द्रखण्डकरणादि चरित्रसहितानि प्रचारितानि सन्ति तानि सर्वाण्यधर्म्ममयानि परस्पर विरोधोपयोगेन सर्वसुखनाशकत्वात् सकलदु.खोत्पादकानि सन्तीति निश्चयो मे । कदैव परमेश्वरस्य कृपया मनुष्याणा प्रयत्नेनैषा नाशो भूत्वाऽऽर्य्यैः परम्परया सेवितमेक सत्यधर्म्ममतं सर्वेषां मनुष्याणां मध्ये निश्चित भविष्यतीति परमात्मानं प्रार्थयामि । यदा श्रीमतां पत्रमागत तदाहं पञ्चालदेशमध्यवर्त्तिलवपुरं न्यवात्सम् ॥ अत्राप्यार्य्यसमाजस्था बहवो विद्वांस: श्रीमता पत्रमवलोक्यातीवाऽऽनन्दिता जाता. । नाहं सततमेकस्मिन् स्थाने निवसामि तस्मात् पूर्वोक्तद्वारैव पत्रप्रेषणेन भद्रं भविष्यति ॥ यद्यपि बहुकार्य्यवशान्ममावकाशो न विद्यते तथापि भवादृशाना सत्यधर्म्मवर्धने प्रवर्त्तितशरीरात्ममनसां सर्वप्रियकरणे कृतैकनिष्ठानां सत्यधर्म्मोन्नत्या सर्वमनुष्यप्रियस्य कर्तॄणा दृढोत्साहयुक्तानां श्रीमतामभीष्टकरणाय मयावश्यं समयो रक्षणीय इति निश्चित्य परोपकाराय भवन्तो मया सहाह च श्रीमद्भिः सह सुखेन पत्रव्यवहारं कुर्य्यामित्यलमतिविस्तरलेखेन बुद्धिमद्वरेषु ॥

श्रीमन्महाराजविक्रमस्य पञ्चत्रिंशदुत्तरे एकोनविंशतितमे १९३५ संवत्सरे वैशाख-कृष्णपक्षपञ्चम्यामादित्यवासरे पत्रमिद लिखितमिति वेदितव्यम् ॥[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१] पत्र (५१) [६८]

मन्त्री और सभासद आनन्द रहो।

प्रकट हो कि अब हम ११ जुलाई सन् १८७८ बृहस्पतिवार को यहा से पूर्व की ओर प्रस्थान करेंगे, और जालन्धर, लुध्याना आदि नगरों मे मिलते हुए आगे को चले जावेंगे। सम्भव है कि दो चार दिन के लिये अम्बाला ठहर जावें। अब हमारा और आप लोगों का मिलाप केवल पत्र द्वारा ही हो सकेगा। इसलिये आप सदा पत्र भेजते रहना, तथा हम भी भेजा करेंगे। अब आप को लिखते है कि प्रतिदिन समाज की उन्नति करते रहो क्योकि यह बड़ा काम आप लोगो ने

---

१. हैनरी एस अल्काट ने अपना पहला पत्र १८ फरवरी सन् १८७८ को अमरीका से लिखा। उसी का उत्तर इस पत्र में है । २१ एप्रिल १८७८ ।

उठा लिया है, इसके परिणाम पर्य्यन्त पहुचाने ही में सुख और लाभ है। यहां का समाज प्रतिदिन उन्नति पर है और कई प्रतिष्ठित पुरुष सभासद हो गये हैं। यहां के पण्डितो ने शास्त्रार्थ के लिये सलाह की थी, सो वे सभा मे न तो कुछ बोले न कुछ बात का उत्तर दिया। केवल मुख दिखला कर चले गये। और यहां के लोगो ने जो कई पोपो की ओर थे, हाकिम से आर्य्यसमाज की चुगली खाई थी, जिसका परिणाम सत्य के प्रताप से यह हुआ कि अब कोई आर्य्यसमाज की ओर आंख उठाकर भी नही देखता। सब सभासदो को नमस्ते।

२६ जून सन् १८७८।

दयानन्द सरस्वती अमृतसर।

---

[४] पत्र (५२) [६९]

ला० मोहनलाल प्रधान वा ला० साईंदास मन्त्री आनन्दित रहो।[२] विदित हो कि परसो कई चिट्ठिया अमरीका की आई हैं। जिन मे ६ चिट्ठियां पढ़ी गईं। एक दाखला, एक नमूना, एक डिप्लोमा है। इस लिये कि जितने समाजो मे प्रधान मन्त्री आदि हैं सब की सख्या लिखी जावे। सख्या ४ की चिट्ठी आर्य्य लोगो के नाम है। जिस का विषय यह है कि आर्यसमाज थियासोफिकल सोसायटी के साथ लगाया गया। और इस का यह नाम स्थिर हुआ है कि "थियासोफिकल सोसायटी आफ आर्य समाज आफ दि इण्डिया"। और यहां यह नाम रखा जावे कि आर्यवर्तीय आर्य-समाज आफ थियासोफिकल सोसायटी और मुहर भी समाज की खुदवानी चाहिये। अच्छे होश्यार मन्त्री और प्रधान लिख कर डिप्लोमा मे लिखना चाहिये। और सोसायटी के नियमादि भी आने हैं। और सब समाजो मे पत्र लिख भेजो कि सब अच्छे २ बुद्धिमान् प्रधान और मन्त्री की सख्या लिख भेजें। और यदि कोई अङ्गरेजी वाला बाबू कमलनयन साहब अब के शनि को आवें तो सब की नकल कर ले जावें। अभी हम १५ ता तक और ठहरेंगे। और ला० मूलराज जी पर यह भी प्रकट हो कि दिन परीक्षा के निकट हैं। बहुत इस ओर ध्यान न दें। परीक्षा मे यत्न करें। और ४ हजार वर्ष के पश्चात् अमरीका से आज सम्बन्ध हुआ है इस को धन्य समझो। और धन्य है। और खूब यत्न करो। जिस से समाज में विघ्न हो उस को रखने से कुछ लाभ नही है।

९ जुलाई ७८ अमृतसर। आषाढ सुदी १० सवत १९३५।

दयानन्द सरस्वती

---

१. यह पत्र मन्त्री आर्य्यसमाज गुजरावाला को लिखा गया था। हमने इसे श्रीमान् प० लेखरामजी रचित ऋषिजीवन के पृष्ठ ३३४ से लिया है।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३८५ पर उद्धृत।

[१] पत्र (५३) [७०]

श्री श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो[१]

विदित हो कि हमने सुना है कि आपका इराद संस्कृत पढ़ाने के लिये इङ्गलैण्ड जाने का है सो यह विचार बहुत अच्छा है परन्तु आपको पहिले भी लिखा था और अब भी लिखते हैं कि जो हमारे पास रह कर वेद और शास्त्र के मुख्य २ विषय देख लेते तो अच्छा होता। अब आपको उचित है कि जब वहां जावें, जो आपने अध्ययन किया है उसी में वार्तालाप करें और कह देवें कि मैं कुल वेद शास्त्र नहीं पढ़ा, किन्तु मैं तो आर्य्यावर्त देश का एक छोटा विद्यार्थी हूँ, और कोई बात का काम ऐसा न हो कि जिससे अपने देश का हास होवे, क्योंकि वे लोग संस्कृत पढ़ाने वाले की अत्यन्त इच्छा रखते हैं। इसलिये आपके पास सब तरह के पुरुष मिलने और बातचीत करने के कारण आवेंगे सो जो कुछ उन के मध्य में आप कहैं, समझ कर कहवें, और इस चिट्ठी का उत्तर हमारे पास भेज देवें, और भी मोहन लाल विष्णु लाल पंडित जी को हमारा आशीर्वाद कह दीजिये. हम बहुत आनन्द मे हैं।

१५ जुलाइ १८७८[२]	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती अमृतसर

और पाद्री लोगों से भी बचे रहे और अमरीका की चिट्ठी का नागरी में तर्जमा करके भेजा करें। इससे काम जल्दी चलेगा और उनके पास आर्य्य समाज बम्बई और पंजाब के नियमोपनियम का अंग्रेजी में तर्जमा करके भेज दीजिये। जो कुछ आप बदलना मुनासिब समझें, बदल भी देवें और हम को इत्तला दे दें॥

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्म्मा जी के पास है।

२. श्रावण वदी १ सोम सं० १९३५।

पं० लेखरामजी (पृ० ३२१) तथा उनका अनुसरण करने वाले पं० घासीराम जी (पृ० ४८०) ने ११ जुलाई तक ही अमृतसर में ठहरना लिखा है। इस पत्र से निश्चित होता है कि श्री स्वामी जी १५ जुलाई तक तो अमृतसर में ही थे।

[९] पत्र (५४) [७१]

न० २१६[1]

बाबू माधव लाल जी आनन्द रहो।

विदित हो कि चिट्ठी आपकी आई बहुत हर्ष हुआ। आप पाणिनीयाष्टाध्यायी भाष्य के ग्राहको का सूचीपत्र बना कर भेज दीजिये, क्योंकि जो इस मे खर्च होगा वह तो आप को ज्ञात ही होगा। १७०० ग्राहक जब हो जायेंगे तब आरम्भ करेंगे। सब सभासदो को नमस्ते ॥

रुडकी जिले सहारनपुर २५ जुलाई ७८

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (५५) [७२]

स्वस्तिश्रीमदार्य्यगुणाढ्येभ्यः सर्वहित चिकीर्षुभ्यो विद्वदाचारसहितेभ्य एकेश्वरोपासनातत्परेभ्यस्तेनोक्तवेदविद्याप्रीत्युत्पन्नेभ्यः प्रियवरेभ्यः पातालदेशनिवासिभ्योऽस्मद्बन्धुवर्गेभ्य आर्य्यसमाजैकसिद्धांतप्रकाशथियोसोफीकलाख्यसभापतिभ्य श्रीयुतहेनरी एस औलकौटसज्ञकप्रधानादिभ्यस्तत्रत्यसर्वसभासद्भ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भवन्तुतमाम्। अत्रत्य शमीश्वरानुग्रहतो वर्त्तते तत्र भवदीय च नित्यमाशासे ॥ मया श्रीमत्प्रेपितानि पत्राणि सर्वाण्यार्य्यसमाजप्रधानश्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामणिद्वारा प्राप्तानि तत्रत्य वृत्तान्त विदित्वा मत्रात्रत्यानामार्य्यसमाजप्रधानमन्त्रीसभासदां चात्यन्त आह्लादो जात इति। एतदुत्तमकार्यप्रवृत्तावीश्वराय सहस्रशो धन्यवादा देयाः। येनाद्वितीयेन सर्वशक्तिमताऽखिलजगत्स्वामिना सर्वजगज्जनकधारकेन परमात्मना बहुकालात्पाखण्डमतदुष्टोपदेशभावितपरस्परावरोधान्धकारसहितमनसा भवदादीनामस्मदादीना च भूगोलस्थानां सर्वेषा मनुष्याणामुपरि पूर्णकृपान्यायौ विधाय पुनस्तद्दुःखनिमित्तकपटारूढमतविच्छेदनाय स्वोक्तेषु सर्वसत्यविद्याकोशेषु वेदेषु प्रीतिरुत्पादिताऽतो वय सर्वे भाग्यशालिन स्म इति निश्चित विज्ञाय सकृपाकटाक्षेणास्माकमिद सर्वहितसम्पादिकृत्य प्रतिक्षणमुन्नत करिष्यतीति प्रार्थयामहे।

१—यच्छ्रीमत्प्रेपितसभाप्रतिष्ठापत्रस्योपरि मया स्वहस्ताक्षराणि मुद्रित च कृत्वा श्रीमत प्रति पुन प्रेषित तद्भवन्तः सद्य प्राप्स्यन्ति। यच्च श्रीमद्भिर्लिखितमा-

---

१. इस ग्रन्थ में छपे हुए सब पत्रो में से यह पहला पत्र है जिस पर पत्र-सख्या लिखी हुई है। यह सख्या कब से लिखी जानी आरम्भ हुई, इसका जानना अभीष्ट है।

मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

र्य्यावर्त्तीयार्य्यसमाजशाखाथियोसोफीकलसुसायटीति नाम रचित तदस्माभिरपि स्वीकृतमिति विजानीत ॥

२—सर्वैर्मनुष्यैर्यथेश्वरोपासना चतुर्वेदभूमिकाया प्रतिपादिता तथैवानुष्ठेयेति। तत्रोक्तस्याथ सक्षेप.। सर्वमनुष्यैः शुद्धदेशस्थिति कृत्वात्ममन प्राणेन्द्रियाणि समाधाय सगुणनिर्गुणविधानाभ्यामीश्वर उपासनीयः। एतस्या उपासनायास्त्रयोऽवयवा:। स्तुतिः प्रार्थनोपासना चेति। एतेषामेकैकस्य द्वौ द्वौ भेदौ स्त:। तत्र यथा तदीयगुणकीर्त्तनेन सहेश्वर: स्तूयते सा सगुणा स्तुति.॥ तद्यथा।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर शुद्धमपापविद्धम। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

य० अ० ४०। म० ८॥

(स पर्य्यगात) यः परितः सर्वतोऽगाद्व्याप्तवानस्ति (शुक्रम्) सद्य सर्वजगत्कर्त्ताऽनन्तवीर्य्यवान् (शुद्धम्) न्यायसकलविद्यादिसत्यगुणसहितत्वात् पवित्रः (कविः) सर्वज्ञ (मनीषी) सर्वात्मनां साक्षी (परिभू) सर्वतः सामर्थ्ययोगेन सर्वोपरि विराजमानः (स्वयम्भूः) सदा स्वसामर्थ्ययोगैकरसत्वाभ्या वर्त्तमानः (शाश्वतीभ्य, समाभ्य.) सर्वदैकरसवर्त्तमानाभ्यो जीवरूपाभ्य. प्रजाभ्य. (याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात्) वेदोपदेशेन यथावदर्थानुपदिष्टवानस्ति। एवमादिना स सगुणरीत्या सर्वैः स्तोतव्य। यत्र यत्र क्रियया सह सामानाधिकरण्येनेश्वरगुणा स्तूयन्ते सा सा सगुणा स्तुतिरिति मन्तव्यम्। अथ निर्गुणा। (अकायम) अर्थाद्यो न कदाचिज्जन्मशरीरधारणेन साऽवयवो भवति (अव्रणम्) नाऽस्य कर्हिचिच्छेदो भवति (अपापविद्धम्) यो न कदाचित्पापकारित्वेनान्यायकारी भवति॥

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते ॥१॥

न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ॥२॥

नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ॥३॥

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥४॥

अथर्व० कां० १३। अनु० ४। म० १६। १७। १८। २०॥

अत्र नवभिर्नकारैर्द्वितीयत्वसख्यावाच्यमारभ्य नवत्वसख्यावाच्यपर्य्यन्तस्य भिन्नस्येश्वरस्य निषेध कृत्वैकमेवेश्वर वेदोऽवधारयति यथा। सर्वे पदार्था स्वगुणै सगुणा. स्वविरुद्धगुणैर्निर्गुणा. सन्ति तथेश्वरोऽपि स्वगुणै. सगुण. स्वविरुद्धगुणैर्निर्गुणश्चेति। एवमादिना यया नेति निषेधसामानाधिकरण्येन सहेश्वर. स्तूयते सा निर्गुणा स्तुतिर्विज्ञेया॥

अथ प्रार्थना ॥

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ यजु० अ० ३२ । म० १४ ॥

हे अग्ने सर्वप्रकाशकेश्वर कृपया त्व या मेधा देवगणा विद्वत्समूहाः पितरो विज्ञानिनश्चोपासते स्वीकुर्वन्ति तया मेधया स्वाहया सत्यविद्यान्वितया भाषया चान्वित मामद्य कुरु सपादय । येन मनुष्येण विद्यावुद्धिर्याचिता तेन सर्वशुभगुण-समूहो याचित इत्येवमादिसगुणरीत्या पर ब्रह्म प्रार्थनीयम ।

अथ निर्गुणा । मा नो वधीरिन्द्र मा परादा मा न प्रिया भोजनानि प्रमोषी. । आण्डा मा नो मघवञ्छक्र निर्भेन्मा न पात्राभेत्सहजानुषाणि ॥१॥ ऋ० १।१०४।८ । मा नो महान्तमुत मा नो अर्भक मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । मा नो वधी पितर मोत मातर मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिष. ॥२॥ मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिष' । वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्त सदमित्त्वा हवामहे ॥ ३ ॥ ऋ० १ । ११४ । ७ । ८ ॥

हे रुद्र दुष्टरोगदोषपापिजननिवारकेश्वर स्वकरुणया त्व नोऽस्मान् मा वधी. । स्वस्वरूपानन्दविज्ञानप्रेमाज्ञापालनशुद्धस्वभावात्कदाचिद्दूरे मा प्रक्षिप त्वं च मा परादा दूरे मा तिष्ठ नोऽस्माक प्रियाणि भोजनान्यभीष्टान् भोगान् मा प्रमोषी पृथङ् मा कुरु । हे शक्र सर्वशक्तिमँस्त्व नोऽस्माकमाण्डा गर्भान् मा निर्भेद्भयुक्तान् मा कुरु । हे भगवन् नोऽस्माक सहजानुषाणि सहजेनानुषङ्गीणि पात्राणि सुखसाधनानि मा निर्भेन्मा विदीर्णानि कुरु ॥ १ ॥ हे रुद्र सर्वदुष्टकर्मशीलाना जीवाना तत्तत्फलदानेन रोदयितरीश्वर त्व नोऽस्माक महान्त विद्यावयोवृद्ध जन मा वधीर्मा हिंसय । उतापि नोऽस्माकमर्भक क्षुद्र जन मा वधीर्मा वियोजय । हे भगवन् नोऽस्माकमुक्षन्त विद्यावीर्यसेचनसमर्थं मा वधी । उतापि नोऽस्माकमुक्षित विद्यावीर्यसिक्त जन सद्गुणसम्पन्न वस्त्वन्तर वा मा वधी. । नोऽस्माक पितर पालयितार जनकमध्यापक वोत मातर मान्यकर्त्री जनयित्री विद्या वा मा रीरिषो मा विनाशय । नोऽस्माक प्रियास्तन्व सुखरूपलावण्यगुणसहितानि शरीराणि मा रीरिषो मा हिंसय ॥ २ ॥ हे रुद्र सर्वरोगविदारकेश्वर त्व कृपया नोऽस्माक स्तोके ह्रस्वे तनये मा रीरिष । नोऽस्माकमायौ मा रीरिष । नोऽस्माक गोषु पशुष्विन्द्रियेषु मा रीरिष' । नोऽस्माक-मश्वेष्वग्न्यादिवेगवत्पदार्थेषु मा रीरिष । त्व भामित पापानुष्ठानेनाऽस्माभि' क्रोधितो नोऽस्माक वीरान मा वधी । हे रुद्र हविष्मन्तो वय सद ज्ञानस्वरूप त्वामिदेव हवामहे गृह्णीम इत्येवमादिना निर्गुणरीत्या प्रार्थनीय इति ॥

अथ सगुणोपासना ।।

न्यायकृपाज्ञानसर्वप्रकाशकत्वादिगुणै. सह वर्त्तमान सर्वत्र व्याप्तमन्तर्यामिण यथास्तुत यथाप्रार्थित परमेश्वर निश्चित्य तत्रात्ममन इन्द्रियाणि स्थिरीकृत्य दृढा स्थितिस्तदाज्ञायां च सदावर्त्तमानमिति सगुणोपासनम् ।।

।। अथ निर्गुणोपासना ।।

सर्वक्लेशद्वेषनाशनिरोधजन्ममरणशीतोष्णक्षुत्तृट्शोकमोहमदमात्सर्य्यरूपरस-गन्धस्पर्शादिरहित परमेश्वर ज्ञात्वा स सर्वज्ञतयाऽस्माक सर्वाणि कर्माणि पश्यतीति भीत्वा सर्वथा पापाननुष्ठानमित्येवमादिना निर्गुणोपासना कार्या । एव स्तुतिप्रार्थनो-पासना भेदैस्त्रिधारूपां सगुणनिर्गुणलक्षणान्वितां मानसीं क्रियां कृत्वेश्वरोपासन कार्य्यमिति ।।

३—अथार्य्यशब्दार्थः—यो विद्याशिक्षासर्वोपकारधर्म्माचरणसमन्वितत्वाज्जनै र्ज्ञातु सगन्तु प्राप्तुमर्हः स आर्य्यः । आर्य्यो ब्राह्मणकुमारयो' ।। अ० ६ । २ । ५८ ।। वेदेश्वरयोर्वेदितृत्वेन तदाज्ञानुष्ठातृत्व ब्राह्मणत्वम । अष्टम वर्षमारभ्याष्टचत्वारिं-शद्वर्षपर्य्यन्ते समये सुनियमजितेन्द्रियत्वविद्वत्सगसुविचारैर्वेदार्थश्रवणमननिदिध्या-सनपुर.सर सकलविद्याग्रहणाय ब्रह्मचर्यसेवन पश्चादृतुकाले स्वस्त्र्यभिगमन परस्त्री-त्यागश्च कुमारत्वमेतदर्थवाचिनो परस्थितयोरेतयो सामानाधिकरण्येन पूर्वस्थित-स्यार्य्यशब्दस्य प्रकृतिस्वरत्वशासनादेतस्यैतदर्थवाचित्व सिद्धमिति विज्ञेयम ।

विजानीह्यार्य्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान् ।।

ऋ० १ । ५१ । ८ ।।

वेदविद्भिर्वेदेष्वार्य्यशब्दार्थं दृष्ट्वोत्तमपुरुषाणामार्येति सञ्ज्ञा रचिता । यदा सृष्टिवेदौ प्रादुर्भूतौ तदा नाम रक्षणचिकीर्षाभूत् । पुनर्ऋषिभिः श्रेष्ठदुष्टयोर्द्वयोर्मनुष्य-विभागयोर्वेदोक्तानुसारेण द्वे नाम्नी रचिते श्रेष्ठानामार्येति दुष्टाना दस्य्विति । अस्मिन् मन्त्रे मनुष्यायेश्वरेणाज्ञा दत्ता हे मनुष्य ! त्व बर्हिष्मत उत्तमगुणकर्म्मस्वभावविज्ञान-प्राप्तये श्रेष्ठगुणस्वभावकर्म्माचरणपरोपकारयुक्तान् विदुष आर्यान् विजानीहि । ये च तद्विरुद्धा दस्यव. सन्ति तानपि दुष्टगुणस्वभावकर्म्माचरणान् परहानिकरणतत्परान् दस्यूँश्च विजानीहि । एतान् सव्रतान्सत्याचरणादियुक्तानार्यान् रन्धय ससाधय विद्याशिक्षाभ्यां च शासत् शाधि । एवमव्रतान् सत्यानुष्ठानाद्विरुद्धाचरणान् रन्धय हिन्धि दण्डेन शासत् शाधि ताडय । अनेन स्पष्ट गम्यते आर्यस्वभावविरुद्धा दस्यवो दस्युस्वभावविरुद्धा आर्या इति ।।

यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्रा ।
अभि दस्युं बकुरेणाधमन्तोरुज्योतिश्चक्रथुरार्याय ॥ २ ॥

ऋ० १ । ११७ । २१ ॥

अश्विनावध्वर्यू दस्यु दुष्ट मनुष्यमभिधमन्तौ मनुपायार्यायोरु बहुविध विद्याशिक्षासिद्ध ज्योतिश्चक्रथु. कुर्याताम् । अत्रापि मनुष्यनाम्नी आर्यदस्यू इति वेद्यम् । एते नाम्नी प्राङ्मनुष्यसृष्टिसमये किञ्चित्कालानन्तर वेदाज्ञानुसारेण विद्वद्भी रचिते । हिमालयप्रान्त आद्या सृष्टिरभूत् । यदा तत्र मनुष्याणां वृद्ध्या महान् समुदायो वभूव तदा श्रेष्ठमनुष्याणामेकः पक्षोऽश्रेष्ठाना च द्वितीयो जातः । तत्र स्वभावभेदादेतयोर्विरोधो वभूव पुनर्य आर्यास्त एतद्देशमाजग्मु· पुनस्तत्संगेनास्या भूमेरार्य्यावर्त्तेति सञ्ज्ञा जाता । आर्य्याणामावर्त्तः समन्ताद्वर्त्तन यस्मिन् स आर्य्यावर्त्तो देशः । तद्यथा—

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ।
तं देवनिर्मितं देशमार्य्यावर्त्तं प्रचक्षते ॥ १ ॥
आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्य्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः ॥ २ ॥

मनु० अ० २ । श्लो० १७ । २२ ॥

देवनद्योर्देवाना विदुपा सगसहितयोः सरस्वतीदृषद्वत्योर्या पश्चिमप्रान्ते वर्त्तमानोत्तरदेशाद्दक्षिणदेशस्थ सागरमभिगच्छन्ती सिन्धुनद्यस्ति तस्याः सरस्वतीति सञ्ज्ञा । या प्राक्प्रान्तवर्त्तमानोत्तरदेशाद्दक्षिणदेशस्थित समुद्रमभिगच्छन्ती ब्रह्मपुत्रनाम्ना प्रसिद्धा नद्यस्ति तस्या दृषद्वतीति संज्ञा एतयोर्मध्ये वर्त्तमानं देवैर्विद्वद्भिरार्य्यैर्मर्य्यादीकृतं देशमार्य्यावर्त्तं विजानीत ॥ १ ॥ तथा च यः पूर्वसमुद्र मर्य्यादीकृत्य पश्चिमसमुद्रपर्य्यन्ते विद्यमानो हिमालयविन्ध्याचलयोरुत्तरदक्षिणप्रान्तस्थितयोर्मध्ये देशोऽस्ति तमार्य्यावर्त्तं वुधा विदुः । आर्य्याणा समाजो या सभा स आर्य्यसमाज । दस्युभावत्यागायार्य्यगुणग्रहणाय च या सभा साप्यार्य्यसमाजसञ्ज्ञा लभते । अतः किमागत सर्वासां शिष्टसभानामार्य्यसमाजनामरक्षण परम भूषणमस्ति । नात्र काचित् क्षतिरिति विजानीमः ॥

॥ ४ ॥ स्वय सत्यशिक्षाविद्यान्यायपुरुषार्थसौजन्यपरोपकाराद्याचरणे वर्त्तेत तत्रैव प्रयत्नतो वन्धुजनानपि वर्त्तयेत् । इति सक्षेपत उत्तरम् । एतस्य

विस्तरविज्ञानन्तु खलु वेदादिशास्त्राध्ययनश्रवणाभ्यामेव वेदितु योग्यमस्ति । ये च मया वेदभाष्यसन्ध्योपासनार्य्याभिविनयवेदविरुद्धमतखण्डनवेदान्तिध्वान्तनिवारणसत्यार्थप्रकाशसस्कारविध्यार्य्योद्देश्यरत्नमालाद्याख्या ग्रन्था निर्मितास्तद्दर्शनेनापि वेदोद्देश्यविज्ञान भवितुमर्हतीति विजानीत ॥

॥ ५ ॥ यच्चेतनवत्त्व तज्जीवत्वम् । जीवस्तु खलु चेतनस्वभावः । अस्येच्छादयो धर्म्मास्तु निराकारोऽविनाश्यनादिश्च वर्त्तते । नाय कदाचिदुत्पन्नो न विनश्यति । एतस्य विचारो वेदेष्वार्य्यकृतग्रन्थेषु च वहुभिर्हेतुभि कृतोऽस्ति । अत्र खलु विस्तरलेखावकाशाभावात् स्वल्प प्रकाश्यते ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः ॥ यजु० अ० ४० । मं० २।

कुर्वन्नेवेह कर्म्माणीति जीवस्य शतवर्षपर्य्यन्त प्रयत्नकरण धर्म्म. । जिजीविषेत् जीवितुमिच्छेदितीच्छाधर्म्मः ॥

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु ।
दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥१॥
यजुः अ० ६ । २२ ॥

सुमित्रिया न आप ओषधय. सन्त्विति सुखेच्छाकरणात् सुखं धर्म्म. । दुर्मित्रियास्तस्मै सन्त्विति दु खत्यागेच्छाकरणाद् दु.खं धर्म्मः । योस्मान् द्वेष्टि यं च वय द्विष्म इति द्वेषो धर्म्मः । वेदाहमेत पुरुषम् । यजु अ० ३१ । म० १८ । इति ज्ञान धर्म्मः । जीवश्चेतनस्वरूपत्वाद्यद्यदनुकूल तत्तत्सुखमिति विदित्वा सदेच्छति । यद्यत् प्रतिकूल तत्तद् दु.खमिति ज्ञात्वा सदा द्वेष्टि सुखप्राप्तये दु·खहानये च सदा प्रयतते । एतदन्तर्गता. सूक्ष्मा वहवोऽन्येऽपि जीवस्य धर्म्माः सन्तीति वेद्यम् । इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदु.खज्ञानान्यात्मनो लिंगमिति ॥ न्याय० अ० १ । सू० १० । जीवस्यैतानि लिंगानि धर्म्मलक्षणानि सन्तीति ज्ञातव्यम् । प्राणापाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तरविकारा सुखदु खेच्छाद्वेषप्रयत्नाश्चात्मनो लिंगानि–वैशेषिक० अ० ३ आ० २ सू० ४ । कोष्ठ्यस्य वायोर्निस्सारण प्राण. । वाह्यस्य वायोराचमनमपान. । नेत्रस्यावरण निमेष. । तदुद्घाटनमुन्मेष. । जीवनं प्राणधारणम् । मनो ज्ञानम् । गतिरुत्क्षेपणाद्यनुष्ठानम् । इन्द्रियान्तरविकाराः ॥ इन्द्रियसयोजन कस्माच्चिद्विषयान्निवर्तनम् । अन्तर्हृदये व्यापारकरणम् । विकाराः । क्षुत्तृड्ज्वरादिरोगादय । धर्म्मानुष्ठानमधर्म्मानुष्ठान च । सख्याजात्यभिप्रायेणैकत्व व्यक्त्यभिप्रायेण वहुत्वम् । पूर्वानुभूतस्य ज्ञानमध्येऽङ्कन सस्कारः । परिमाण परमसूक्ष्मत्वम् । पृथक्त्वमस्यान्तोऽन्य भेदः । सयोगो

मेलनम्। वियोगः संयुज्य पृथग्भवनं वियोगत्वमिति च जीवधर्म्माः। मानसो-ऽग्निर्जीव इति महाभारतस्य मोक्षधर्म्मान्तर्गते भरद्वाजोक्तौ वर्त्तते। अस्यायमर्थः। यो मनस्यन्तःकरणे भव इच्छादिज्ञानान्तसमूहप्रकाशसमवेतः पदार्थोऽस्ति तस्य जीवसंज्ञेति बोध्यम्। अथ खलु देहेन्द्रियप्राणान्तःकरणाद्भिन्नश्चेतनोऽस्ति। कुतः। अनेकार्थानां युगपत् संधातृत्वात्। तद्यथा। अहं यच्छ्रोत्रेणाश्रौषं तच्चक्षुषा पश्यामि। यच्चक्षुषाऽद्राक्षं तद्धस्तेन स्पृशामि। यद्धस्तेनास्प्राक्षं तद्रसनया स्वदे। यद्रसनयाऽस्वदिषि तद्घ्राणेन जिघ्रामि। यद्घ्राणेनाघ्रासिषं तन्मनसा विजानामि। यन्मनसाऽज्ञासिषं तच्चित्तेन स्मरामि। यच्चित्तेनास्मार्षं तद्बुध्या निश्चिनोमि। यद्बुध्या निरचैषं तदहङ्कारेणाभिमन्य इत्यादिप्रत्यभिज्ञया सह वर्त्तमानं यदस्ति तदात्मस्वरूपं सर्वेभ्यः पृथगस्तीति वेदितव्यम्। कुतः। यः स्वस्वविषये वर्त्तमानैरन्यविषयाद्भिन्नवर्त्मभिः श्रोत्रादिभिः पृथक् पृथग्गृहीतानां शब्दार्थानां वर्त्तमानसमये संधातास्ति स एव जीवोस्त्यतः। नह्यन्यदृष्टस्यान्यः स्मरति नहि श्रोत्रस्य स्पर्शग्रहणे साधकत्वमस्ति न च त्वचः शब्दग्रहणे परन्तु श्रोत्रेण श्रुतो घटस्तमेवाहं हस्तेन स्पृशामीति यस्य पूर्वकाल-दृष्टस्यानुसंधानेन पुनस्तस्यैवार्थस्य प्रत्यभिज्ञया वर्त्तमाने दर्शनमस्ति स उभय-दर्शिनः सर्वसाधनाभिव्यापकस्य सर्वाधिष्ठातुर्ज्ञानस्वरूपस्य जीवस्यैव धर्म्म उपपद्यत इति मन्तव्यम्। एवमादिप्रकारेण बहूनामार्य्याणां वेदशास्त्रबोधसमा-धियोगविचाराभ्यां जीवस्वरूपज्ञानं बभूव भवति भविष्यति वेति यदायं शरीरं त्यजति तदा मरणं जातमित्याचक्षते नहि खलु तस्य देहाभिमानिनो जीवस्य वियोगाद्विना मरणं सम्भवति। शरीरं त्यक्त्वायं खल्वाकाशस्थः सन्नीश्वरव्य-वस्थया स्वकृतपापपुण्यानुसारेण शरीरान्तरं प्राप्नोति। यावत्पूर्वं शरीरन्त्यक्त्वा-ऽऽकाशे गर्भवासे बालाद्यवस्थायां वा तिष्ठति न तावदस्य किञ्चिद्विशेषविज्ञान-मुपपद्यते। किन्तु यथा निद्रामूर्च्छाङ्गतो जीवो वर्त्तते तथा तत्रास्य गतिरिति। यद्येतस्य वार्त्ताकरणे कपाटताडने परशरीरावेशे सामर्थ्यं वर्त्तेत तर्हि स कथं न पुनः प्रियं स्थानं धनं शरीरं वस्त्रभोजनादिकं प्रियान् स्त्रीपुत्रपितृबन्धु-मित्रभृत्यपशुयानादीन् प्राप्नोति। यद्यत्र कश्चिद् ब्रूयाद्यदा सम्यग्ध्यानं कृत्वा तमाह्वयेत्। तर्हि तत्समीपमागच्छेत्। अत्र ब्रूमः। यदा कस्यचित्कश्चित्प्रियो म्रियते तदा स तस्य प्राप्त्यर्थमहर्निशं सम्यग्ध्यानं करोति पुनः स कथं नागच्छति। यदि कश्चिद् ब्रूयात्पूर्वसम्बन्धिनं प्रति नागच्छत्यन्यान् प्रत्यभ्यागच्छतीति। नैत-दुपपद्यते। कुतः। पूर्वसम्बन्धिनं प्रति प्रीतेर्विद्यमानत्वेनासम्बन्धिषु प्रीतेरदर्श-नात्। नेदमनधिष्ठातृकं स्वतन्त्रं जगत्सम्भवति। सर्वस्यास्याधीशस्य न्याय-

कारिणः सर्वज्ञस्य सर्वेभ्यो जीवेभ्यो पापपुण्यानां फलप्रदातुरीश्वरस्य जागरूकत्वात्। अतः श्रीमद्भिर्यो मृतकस्य प्रतिविम्बो मत्समीपे प्रेपितः तत्र कापट्य-धूर्त्तत्वव्यवहारो निश्चीयत इति। यथेंद्रजालीचातुर्येणाश्चर्य्यान् विपरीतान व्यवहारान् सत्यानिव दर्शयति तथाऽयमस्तीति प्रतीयते। यथा कश्चित्सूर्य्यचन्द्र-प्रकाशे स्वच्छायायां कण्ठशिरस उपरि निमेपोन्मेपवर्जितां स्थिरां दृष्टिं कृत्वा किञ्चित्कालानन्तरं शुद्धमाकाश प्रत्यूर्ध्वं पुनरेवमेव निमेपोन्मेपवर्जितां दृष्टिं कुर्य्यात्स स्वस्माद्भिन्नां स्वच्छायाप्रतिविम्बरूपा महती मूर्त्तिं पश्यति तथैवाऽय व्यवहारो भवितुमर्हति। संस्कृतविद्यायां भूतशब्देन य कश्चित्सशरीरः प्राणी वर्त्तित्वा न भवेत्तस्य ग्रहणमस्ति। यस्तु खलु निर्जीवो देहः समक्षे वर्त्तते यावदस्य दाहादिकं न क्रियते तावत्तस्य प्रेत इति सञ्ज्ञा। ईश्वरेण समः कश्चिन्न भूतो न भविष्यतीत्याप्तवाक्यम् ॥

गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरन्।
प्रेतहारैः समं तत्र दशरात्रेण शुध्यति ॥ म० अ० ५ श्लो० ६५ ॥

अत्र भूतशब्देन भूतस्थस्य ग्रहणम्। "प्रेतस्य" "प्रेतहारै" एताभ्या पदाभ्यां मृतकशरीरस्य प्रेत इति नाम। यथा पितृमेध समाचरन्निति पदेन मृतकस्य पितृशरीरस्य दाहवद् गुरोर्मृतकशरीरस्य दाहकरण पितृमेधसञ्ज्ञां लभते तथा मृतकानां शरीराणां विधिवद्दाहकरण नृमेध इति विज्ञेयम्। इद प्रसंगादुक्तम्। यथा भूतप्रेतेष्विदानीतनानामभिप्रायोस्ति तथेद नैव सम्भवति। कुत.। समूलतो ऽस्य मिथ्यात्वेन भ्रान्तिरूपत्वात्। नात्र कश्चित्सदेह इदमस्ति नास्ति वेति किन्तु सर्वमिद कपटजालमिति विजानीम। अत्रालमतिविस्तरेणैतावतैवाधिकं भवद्भिर्विज्ञे-यमिति ॥

॥ ७ ॥ भवन्तो यां शिक्षां मत्तो ग्रहीतुमिच्छन्ति सा परमार्थव्यवहार-विषयभेदेनातिविस्तीर्णास्ति। पत्रद्वारा लिखितुमशक्या। सा सक्षेपतो मद्रचितेषु ग्रन्थेषु लिखितास्ति। विस्तरशस्तु वेदादिशास्त्रेषु। परन्त्वेतदुत्तरदानाय मया श्रीयुत-हरिश्चन्द्रचिन्तामणीन् प्रति लिखित मद्रचितस्य स्वल्पस्यार्य्योद्देश्यरत्नमाला-ग्रन्थस्यैंगलण्डभाषया विवरण कृत्वा भवतां समीपे सद्यः प्रेपयन्त्विति ते तत्र शीघ्रं प्रेपयिष्यन्तीति बुध्यध्वम्। तद्दर्शनेन श्रीमतामुद्देशतो मदुपदेशशिक्षा भविष्यति ॥

॥ ८ ॥ वेदोक्तानुसारेण वक्ष्यमाणरीत्या मृतकक्रिया कर्त्तव्या। तद्यथा। सेय सस्कारविधिग्रन्थे विस्तरश. प्रतिपादिता तथाप्यत्र संक्षेपतो लिख्यते।

यदा कश्चिन्मनुष्यो म्रियेत तदा मृतकं शरीरं सम्यक् स्नपयित्वोत्तमसुरभिणाऽनुलेप्य सुगन्धियुक्तैर्नवीनैः शुद्धैर्वस्त्रैराच्छाद्य मलिनानि वस्त्राणि पृथक् कृत्वा श्मशानभूमिं नीत्वा तत्र यावानूर्ध्ववाहुकः पुरुषस्तावद्दीर्घा पार्श्वतो व्यायाममात्रविस्तीर्णामूरुदघ्नी गम्भीरां वितस्तिमात्रीमधस्तादेतत्परिमाणां वेदिं रचयित्वा जलेनाभ्युक्ष्य शरीरभारसमं घृतं वस्त्रपूतं कृत्वा तत्र प्रतिप्रस्थमेकैकरक्तिकापरिमाणां कस्तूरीमेकमाषपरिमाणं केशरं च सपेष्य यथावन्मेलयेत्। चन्दनपलाशाम्रादिकाष्ठानि गृहीत्वा वेदिगर्त्तपरिमाणेनैतेषां खण्डान् कृत्वाऽधस्तादर्धवेदिं पूरयित्वा तदुपरि मध्यतो मृतकं देहं संस्थाप्य कर्पूरगुग्गुलुचन्दनादिचूर्णानि मृतकदेहाभितो विकीर्य्य पुनस्तैरेव काष्ठैस्ततः ऊर्ध्वं वितस्तिमात्रीं वेदिं संचित्य तन्मध्येऽग्निस्थापनं कुर्य्यात्। तद्घृतं स्वल्पं स्वल्पं गृहीत्वा यजुर्वेदस्यैकोनचत्वारिंशाध्यायस्थं प्रतिमन्त्रमुच्चार्य्याभितो दाहयेत्। पुनर्य्यदा भस्मीभूतं शरीरं भवेत्तदा ततो निवर्त्य जलाशयं स्वं स्वं गृहं वा प्राप्य स्नानादिकं कृत्वा निःशोकाः सन्तो यथायोग्यं स्वानि स्वानि कार्य्याणि कुर्य्युः। पुनर्य्यदा दाहदिवसात्तृतीये दिवसे सर्वं शीतलं भवेत् तदा तत्र गत्वा सास्थि सर्वं भस्म गृहीत्वा स्थानान्तरे शुद्धदेशे गर्त्तं खनित्वा तत्र तत्सर्वं संस्थाप्य खनितगर्त्तं मृदाऽऽच्छादयेत्। एतावानेव वेदोक्तसनातनोत्तमतमो मृतकसंस्कारोऽस्ति नातोऽधिको न्यूनश्चेति। एवमेव यानि स्वमित्रशरीरास्थीनि भवतः समीपे स्थितानि संति तान्यपि कचिच्छुद्धभूमौ गर्तं खनित्वा तत्र स्थापयित्वा मृदाच्छादनीयानीति ॥

॥ ९ ॥ पत्रद्वयमिङ्गलण्डाख्यदेशं यथालिखितस्थाने प्रेषितम् ॥

॥ १० ॥ यदा युष्माकं निश्चयः स्यात्तदा सभानामविपर्य्यासः कार्य्यः। विदुषां सभायां अयं नियमोऽस्ति यत् किञ्चिन्नूतनं कार्य्यं कर्त्तव्यं तत्सर्वमुत्तमान् विदुषः सभासदः प्रति निवेद्य तदनुमत्या कार्य्यमिति यद्यत्सर्वोपकारविरुद्धं सभाकृत्यं तत्तन्नैव कदाचिदाचरणीयम्। यद्यत्तु खलु परिणामानन्दफलं तत्तदचिरादेव पुरुषार्थेन समयं प्राप्य कर्त्तव्यम्। तस्माद्यदावसर आगच्छेत्तदा तलत्यसभाया आर्य्यसमाजेति नामरक्षणे न काचित्क्षतिरस्तीति मतं मे ॥

॥ ११ ॥ अत ऊर्ध्वं श्रीमन्तो यद्यत्पत्रं मत्समीपे प्रेषयेयुस्तत्तन्मन्नामाङ्कितं प्रेषणीयम्। परन्तु पूर्वलिखितेन श्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामण्यादिद्वारैव प्रेषणीयम्। तत्रायं क्रमः। पत्रोपरि मन्नाम पत्रावरणपृष्ठोपरि श्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामणीनां नाम लिखित्वा प्रेषणीयम्। सच्चिदानन्दादिलक्षणाय सर्वशक्तिमते दयासागराय सर्वस्य न्यायाधीशाय परब्रह्मणेऽसङ्ख्याता धन्यवादा वाच्याः। यत्कृपया भवद्भिः सहाऽस्माकमस्माभिः सह भवता च सम्प्रीत्युपकारसमयः प्राप्तः।

एतममूल्य समयं प्राप्य यूय वय चैव प्यतामहे यतो भूगोलमध्ये मनुष्याणां पाषण्डमतपापाचरणाविद्यादुराग्रहादिदोषनिवारणेनैक सनातनं वेदप्रमाणसृष्टिक्रमानुकूलं सत्य मत प्रवर्त्तेतेति। पत्रद्वाराऽतीवस्वल्प कार्य्य सिध्यति । याव-त्समक्षे परस्पर वार्त्ता न भवन्ति न तावत्समस्तो लाभो जायते। परन्तु यस्ये-श्वरस्यानुग्रहेण पत्रद्वारा वार्त्ताः प्रवृत्ता. सन्ति तस्यैव कृपया भवतामस्माक च कदाचित्समक्षेऽपि समागमो भविष्यतीत्याशासे किं वहुना लेखेन वुद्धिमद्वर्य्येषु ॥

भूतकालाङ्कचन्द्रेऽब्दे नभोमासासिते दले ।
शुक्रे रुद्रतिथौ सम्यक् पत्रपूर्तिः कृता मया ॥ १ ॥

सवत् १९३५ श्रावणवदी ११ शुक्रवासरे पत्रमिदमलङ्कृतमिति विज्ञेयम ॥[1]

(दयानन्दसरस्वती)

---

[१] पत्र (५६) [७३]

बाबू दयाराम आनन्द रहो ।[2]

अमरीकन चिट्ठी की नकल कराकर रवाना करेंगे। और यह भी आप को विदित होगा कि अमरीका थियोसोफिकल सोसायटी आर्यसमाज की शाखा वन गई और अमरीका वाले वरावर वेद को मानते है और उस की शिक्षा के इच्छुक। और हम वहुत राजी खुशी हैं।

२७ जुलाई ७८ दयानन्द सरस्वती

श्रावण वदी १३ सवत् १९३५ रुडकी

---

[१] २५५[3] पत्र (५७) [७४]

ला० मूलराजजी एम. ए आनन्द से रहो ।[4]

विदित हो कि कल आप के पास एक पारसल अमरीका की चिट्ठियों का भी पहुंचा होगा। सो उन मे से डिप्लोमा और छपी हुई चिट्ठी जो उन के साथ है, सो हमारे पास भेज दीजिये। और लाहौर मे अथवा ट्रिब्यून मे शीघ्र छपवा दीजिये

---

१ २६ जुलाई १८७८ ।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत ।

३. यह सख्या हमने ला० मूलराज को लिखे गए अगले पत्र की पक्ति दो से ली है।

४. प लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत।

क्योकि इन की वहुत आवश्यकता है, और सब स्थानो से उनकी माग आती है। इस लिये २०० कापी शीघ्र छपवा दीजिये। डिप्लोमा और छपी चिट्ठी जो असल है, वह हमारे पास भेजें। और जो नकल करके भेजी गई है सो छपने के लिये प्रेस में दीजिये। यहा पर व्याख्यान नित्य होते हैं। और लोगो के विचार वहुत अच्छे हैं। हम वहुत आनन्द मे हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

५ अगस्त ७८ रुड़की दयानन्द सरस्वती

---

[१] नं० २७८ पत्र (५८) [७५]

ठाकुर भूपालसिंहजी आनन्द रहो।[१]

विदित हो कि ठाकुर रणजीतसिंहजी ने रुपया हमारे पास भेज दिया है। परन्तु ठाकुर मुकुन्दसिंह ने अब तक रुपया नही [भेजा] और पहले यहां उनकी दो तीन चिट्ठिया इस विषय की आईं कि रुपया हमारे पास मौजूद और तय्यार रक्खा है कहा भेज देवें। सो उनको कई वार लिख चुके कि हमारे पास भेजो। अब वे फिर चुप हो बैठे। इसका कारण ही मालूम नही होता कि क्या भेद है। और रुपये की हमको वहुत जरूरत है। इस लिये एक वार लिखा जाता है कि उन से फर्रुखाबाद शहर की हुंडी वनवा कर यहाँ हमारे पास भिजवादो। ताकीद जानो। और हम वहुत आनन्द मे हैं।

रुड़की जि० सहारनपुर }
६ अग० १८७८ } { हस्ताक्षर
{ दयानन्द सरस्वती

---

१. प्रसिद्ध कविवर प० नाथूरामशङ्कर शर्मा जी हरदुआगज, (अलीगढ) निवासी को यह पत्र किसी रद्दी में से मिला था। पत्रों का अन्वेषण करते हुए ला० मामराज सितम्बर सन् १९२८ को प० जी के घर पहुचे थे। वही कवि जी ने वहुत आग्रह पर यह पत्र उनको दिया था।

मूल पत्र अब हमारे सग्रह म सख्या ७ पर सुरक्षित है।

ठाकुर भूपालसिंह ग्राम ऐरा (जिला अलीगढ) के रहने वाले ऋषि के अनन्य भक्त थे। ऋषि के अन्तिम दिनो में इन्हो ने ही वडी श्रद्धा भक्ति से उनकी सेवा की थी।

उनके पोते चौ० मित्रसेन से ला० मामराज सितम्बर सन् १९२८ को मिले थे। उन के कागजों के खोजने पर रामानन्द ब्र० के कितने ही पत्र मिले थे, परन्तु ऋषि का कोई पत्र नहीं मिला।

[२] पत्र (५९) [७६]

ला० मूलराज एम. ए. आनन्द रहो ।[१]

विदित हो कि इससे पहले एक चिट्ठी सं० २५५ लिखी ५ अगस्त की आप के पास भेजी गई है । सो पहुंची होगी । और अव फिर लिखते हैं । आप के पास जो चिट्ठी भेजी गई है सो उन मे से दो असली छपी हुई चिट्ठीयां और डिप्लोमा बहुत शीघ्र हमारे पास भेज दो । क्योकि उनकी नकल बावू कमल नयन जी कर ले गये थे । वह समाज मे विद्यमान है । और आधा खर्च छपाई का आप के ऊपर रहेगा । और आधा रुड़की निवासी पण्डित उमरावसिंह वा शङ्कर लाल आदि देवेंगे । परन्तु लाहौर प्रेस वा ट्रिव्यून प्रेस जहां छपवाने की इच्छा हो, शीघ्र छपवा दीजिये क्योकि २८ ता० को यहा पर टामसन कालेज की परीक्षा गवमिण्ट लेवेगी । फिर दो मास की छुट्टी मे सब अपने २ घर चले जावेंगे । कभी तीसरे मास मे आवेंगे । जो पास या फेल हो जावेंगे । इस लिये आप को लिखा जाता है कि २८ ता० से पहले छपवा लीजिये ।

९ अगस्त ७८ दयानन्द सरस्वती

रुड़की ।

---

[४] पत्र (६०) [७७]

२७०

बाबू माधोलालजी आनन्द रहो ।[२]

विदित हो कि आप को इस बात का विज्ञापन दिया जाता है कि बहुत से मनुष्य हमारे नाम से आप लोगो को लूटने फिरते हैं और कहते हैं कि हमको स्वामीजी ने भेजा है, सो हमने अब तक किसी को व्याख्यान के लिये नियुक्त नहीं किया और जब नियत करेंगे तो सब समाजों में अपनी मोहर करके चिट्ठी भेज देवेंगे और एक नकल उसी चिट्ठी की मोहर करके उस मनुष्य को देदी जावेगी ॥ कभी ऐसे मनुष्यों के धोखे में न आना ॥ और ग्राहक अष्टाध्यायी के भेज दो क्योकि अब तैयार होने लगी है ॥

९ अगस्त ७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
रुड़की जि० सहारनपुर

---

१ प लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत ।

२. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के पास सुरक्षित है ।

[१] पत्र (६१) [७८]

जनाव मौलवी मुहम्मद कासिम अली साहिव !¹

आप की खिदमत शरीफ मे वजा हो कि कल ववक्त शाम ६ वजे के रजिस्ट्री चिट्ठी आप की मेरे पास पहुँची। उस चिट्ठी पर आप के दस्तखत न थे इस वास्ते आप को तकलीफ दी जाती है कि मुन्शी चिट्ठी लेकर आप की खिदमत मे पहुँचता है। आप इस पर दस्तखत सावत कर देवें। क्योकि इश्तिहार और लिफाफे पर तो आप के दस्तखत मौजूद थे मगर सिर्फ चिट्ठी पर न थे, लिहाजा अर्ज है कि वराय इनायत दस्तख़त चिट्ठी मजकूर पर कर देवे। ताकि हम भी अपने दस्तख़त कर के चिट्ठी वराय डाक रजिस्ट्री आप के पास रवाना कर देवें। ज्यादा खैरियत।

रुडकी जिला सहारनपुर। १० अगस्त सन १८७८।

दयानन्द सरस्वती

---

[९] पत्र (६२) [७९]

न० ३०३

वावू माधोलालजी आनन्द रहो !²

विदित हो कि चिट्ठी आप की आई एक नोट १०)के और २८) के टिकट पाये सो आप के लेखानुसार

४	सत्यार्थप्रकाश	१०)
३	प० महायज्ञविधि	१)॥
१	आर्य्याभिविनय	॥)
		११॥)॥
	डाक महसूल	॥)

भेजते हैं सो जव आप के पास पहुच लेवें रसीद भेज दीजिये और आर्य्यसमाज की उन्नति करते रहो ॥

अष्टाध्यायी की वृत्ति वनने का आरम्भ हो गया है।

यहाँ पर सव प्रकार से कुशल है और हम आनन्द मे हैं।

रुडकी जिले सहारनपुर
१५ अगस्त ७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

१ प लेखरामकृत जीवन च. पृ ७३६ से उद्धृत

२ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित ह

[३] पत्र (६३) [८०]

ला० मूलराज जी एम० ए० आनन्द रहो।[1]

विदित हो कि चिट्ठी आप की लिखी हुई १४ अगस्त को पहुँची। और एक पारसल डिप्लोमा और दो छपी हुई चिट्ठियों से युक्त पहुँचा। आप को चाहिये कि इन चिट्ठियो के छापने मे जो कुछ खर्च हुआ हे सो लिख भेजे। क्योंकि खर्च रुड़की वाले देवेंगे। और आशा है कि यहा पर आर्यसमाज अवश्य वन जावेगा।

१७ अगस्त ७८

रुड़की

---

[१] पत्र (६४) [८१]

[मन्त्री आर्यसमाज मुलतान][2]

रुड़की में व्याख्यान नित्य होते हैं। दृढ आशा है कि आर्यसमाज अवश्य बन जावेगा। मौलवी महम्मद कासम भी हम से मुवाहिसा करने के लिये आया है और १८ ता० निश्चित है। सो अभी कुछ ठीक २ नही हे जव कुछ होगा सूचना दी जावेगी। हम बहुत आनन्द और कुशल मे है। सव सभासदो को नमस्ते।

१७ अगस्त १८७८ दयानन्द सरस्वती

रुड़की

---

[४] पत्र (६५) [८२]

लाला मूलराजजी एम. ए. आनद रहो।

विदित हो कि तारीख १८ अगस्त को वावू हरिश्चन्द्र चिन्तामणिजी और श्री श्यामजीकृष्ण वर्म्मा हम से मिलने के लिये बम्बई से अलीगढ़ को चले हैं और २१ वा २२ तारीख तक वे वहां आ पहुंचेंगे और हम भी २२ तारीख को अलीगढ़ पहुंच जावेंगे।

आपको उचित है कि आप भी २२ वा २३ तारीख तक अलीगढ़ पहुंच जायें परतु आप अकेले ही चले आना।

---

१ पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२, ३३ पर उद्धृत।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७५७, ५८ पर उद्धृत।

और स्टेशन के पास ही ठाकुर मुकुन्दसिंहजी का वागीचा पूछ लेना वही पर हम ठहरेंगे ॥

हम वहुत आनद में हैं ।[1]

और इस चिट्ठी तथा अपने आगमन की प्रसिद्धि न कर (ना)	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती रुडकी जि सहारनपुर	२० अगस्त १८७८

---

[९] पत्र (६६) [८३]

न० ३४०

लाला मूलराजजी एम. ए आनन्द रहो ।[2]

विदित हो कि हम और हरिश्चन्द्र चिन्तामणिजी कल २६ अगस्त को यहां से सवार होकर मेरठ पहुचेंगे, और वाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, श्यामजीकृष्ण वर्मा और मूलजी ठाकुरशी, २७ अगस्त दिन मगलवार मेल ट्रेन पर सवार होकर वुधवार २८ ता० को प्रात काल ८ वजे लाहौर आवेंगे। सो आप सव आर्य लोक स्टेशन पर मौजूद रहैं और उनको अच्छी प्रकार खातिर के साथ लेकर अपनी वैठक वा आर्य्यसमाज वा किसी और अच्छे मकान मे ठहरा देवें। और हर तरह से खातिर रक्खें।

एक व्याख्यान हरिश्चन्द्र चिन्तामणि देवेंगे। और दो व्याख्यान श्यामजी कृष्ण वर्म्मा देवेंगे, एक अग्रेजी और एक सस्कृत। फिर वे अमृतस(र) आवेंगे सो आप सव लोक अच्छी तरह से उनका इस्तकवाल करें। रुड़की मे आर्य्यसमाज वन गया है। हम वहुत आनन्द मे हैं। सव सभासदों को नमस्ते ॥

२५ अगस्त १८७८	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती अलीगढ़

---

[६] पत्र (६७) [८४]

ला० मूलराज जी एम ए आनन्द से रहो।[3]

आपने लिखा था कि ता० २४ को छपी हुई चिट्ठी भेज देंगे। सो अव तक

---

१ मूलपत्र रायवहादुर मूलराज जी के पास है।

२ मूलपत्र रायवहादुर मूलराज जी के पास है।

३. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३३ पर उद्धृत।

नही आई। जो अब तक रवाना न की हो तो मेरठ भेजना।

२७ अगस्त ७८ दयानन्द सरस्वती

मेरठ

---

[१४] पत्र (६८) [८५]

न ३७७

पडित रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ।[1]

विदित हो कि आपको लिखते हैं कि आप के पास जो रुपया जमा है वा किसी ग्राहक से वसूल हो और पुस्तकादि के मूल्य की बाबत जो हो और सब ग्राहकों से रुपया वसूल करके मेरठ के पते से हमारे पास भेज दो क्योकि हम को रुपये की बहुत जरुरत है और इसी कारण आपको लिखा है कि जल्दी कुल रुपया हमारे पास भेज दो और यह भी लिखो कि स्वामी गगेश आज कल कहां है ॥ उत्तर शीघ्र भेज दीजिये ॥

२ सितबर १८७८ हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती मेरठ

---

[१] पत्र (६९) [८६]

मौलवी अब्दुल्ला साहिब सलामत[2]

दरजवाब आपके लिखा जाता है। बेहतर है कि आप अपनी हस्बमन्शा वज़रिये मुअज़िज़ रईसान शहर और सदर के सिलसिला जुम्बानी कीजिये। मुझको कुछ उज़र नहीं। और जुमला मुआमलात तहरीरी होने चाहियें न कि तकरीरी। फक्त॥

ता० ७ सितम्बर सन् १८७८ दयानन्द सरस्वती

---

[७] पत्र (७०) [८७]

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्द रहो ।

विदित हो कि पडित श्यामजी कृष्णा वर्म्मा ९ सि० को यहां से रवाना हो कर लाहौर गये हैं सो पहुंचे होगे। सो उन को अपने मकान पर वा जहां पर आराम हो ठहरा देना, और ये सस्कृत तथा इगलैंड भाषा मे व्याख्यान देवेंगे॥

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३९६ से उद्धृत किया।

वावू हरिश्चन्द्र चिंतामणि एक जरूरी कार्य्य के कारण से मुवई को वापिस चले गये हैं। यहां पर नित्य व्याख्यान होता है और हम वहुत आनन्द में हैं। सब सभासदो को नमस्ते ॥ शायद समाज भी हो जावेगा।

११ सि० १८७८ हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
मेरठ

---

[६] पत्र (७१) [८८]

४६५

वावू माधोलाल जी आनन्द रहो ।[1]

विदित हो कि पत्र आपका १०।≈)॥ के साथ पहुंचा सो रसीद भेजते हैं और मुवई को लिख दिया है वहां से १०—११ दिन में २ वेदभाष्यभूमिका आप के पास पहुंचेंगी।

हम आज कल मेरठ मे हैं। यहां से दिल्ली की ओर का विचार है। जव पूर्व को चढेंगे आप को लिख भेजेंगे। यहा पर भी व्याख्यान नित्य होता है। आशा है कि समाज भी हो जावेगा। हम वहुत आनन्द मे हैं। सव सभासदो को नमस्ते ॥

मेरठ हस्ताक्षर
१३ सि० १८७८ दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (७२) [८९]

लाला किशनसहाय जी साहव आनन्द रहिये ।[2]

जो के कल हस्वुलईमा आपके प० मानसिंह और नीज़ दीगर साहिवान ने सभा के नियम लिखवा दिये हैं। हम उनके वखूवी पावन्द हैं। अगर आप को फिलहकीकत और वदिल निश्चय करना सत्य और असत्य का मजूर है तो आप उनपर गौर कीजिये और अमल फरमाइये। वरना अमूरात मुनासिव में तहरीर व तकरीर खिलाफ वरजी के नतायज भी वहरज वेरूही होवेंगे फक्त।

१८ सितम्वर १८७८

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है। इस की प्रतिकृति श्रीमद्दयानन्द चित्रावली में है।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृष्ठ ४०४ पर उद्धृत।

[७] पत्र (७३) [१०]

वाबू माधो लालजी आनन्द रहो[1]

प्रकट हो चिट्ठी आप की नम्बरी १६४-२० सि० की लिखी हुई पहुंची। सब हाल मालूम हुआ, आप के प्रश्न का उत्तर यह है कि हम १ अक्टूबर से १५ अक्टूबर तक मेरठ और दिल्ली रहेंगे। जो आप लोग १ अक्टू० के पीछे मेरठ आ जाओगे तो फिर साथ २ दिल्ली चले जावेंगे।

यहा पर आर्य्यसमाज हो गया है और व्याख्यान भी होता है। सब प्रकार से कुशल है॥ हम वहुत अनान्द मे हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

मेरठ हस्ताक्षर

२३ सि० ७८ दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (७४) [११]

५६३

पडित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो

विदित हो कि आपका पत्र मुवई से आया था हाल मालूम हुआ। आपने वहां जाकर काम देखा ही होगा कि क्या प्रवन्ध है और अव की वार भी वेदभाष्य के लिफाफे के ऊपर देवनागरी नही लिखी गई जो कही ग्राम मे अग्रेजी पढ़ा न होगा तो अक वहां कैसे पहुंचते होगे और ग्रामों मे देवनागरी पढ़े वहुत होते हैं इस लिये तुम वावू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी से कहो कि अभी इसी पत्र के देखते ही देवनागरी जानने वाला मुशी रख लेवें कि जो काम ठीक ठीक हो नही तो वेदभाष्य के लिफाफो पर किसी से रजिस्टर के अनुसार ग्राहको का पता किसी देवनागरी वाले से नागरी मे लिखा कर टपास लिया करें और तुम जाकर काम की खवरदारी करो कि वहा क्या हाल हो रहा है और उनसे पुस्तको का हिसाव भी जोकि अक ग्राहको के पास भेजे गये हों और जो उनके यहां मोजूद हों भिजवा दो और वावू साहव से कह दो कि जव वेद का प्रूफ भेजा करें तो उस के सा(थ) टाइटिल पेज भी भेजा करें और वहां के समाचार से वहुत जल्दी हम को पत्र द्वारा विदित कर

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है।

दीजिये । मेरठ मे आर्य्यसमाज हो गया है और हम ३ अक्टूवर को दिल्ली आगये हैं ।[1] यहां पर कुशल है ॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली ७ अक्टू० ७८

---

[३] पत्र (७६) [९२]

५९४

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो ।[2]

विदित हो कि इससे पहले एक चिट्ठी आप के पास भेजी गई थी पहुंची होगी आज फिर आवश्यकता समझ कर आपको लिखते हैं **वह पत्र जिस के लिये मेरठ बात हुई थी शीघ्र भेजदेना और**[3] जब तक तुम वहां रहो हम से पत्र व्यवहार करके वेदभाष्य के काम का तुम ही प्रवन्ध करो क्योंकि विना आप के यह काम न चलेगा वा किसी देवनागरी वाले को वहां रखा दो क्योंकि बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी अगरेजी मे भी लिखते हैं तो भी छेदीलाल को शादीलाल लिख देते हैं और न ग्राहको के नम्बर लिखते हैं विवेचन पूर्वक पहिले पत्र मे भी आपको लिखा गया है आप इसका कुछ प्रवन्ध अवश्य शीघ्र ही कीजिये और वहा के प्रवध और सव हाल से विदित कीजिये और एक कामसूत्र का पुस्तक भी हमारे पास भेज दीजिये हम वहुत आनन्द मे हैं ॥

१४ अक्टूवर ७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

१ प० लेखराम (पृ० ३८६, ४१०) तथा प० घासीराम (पृ० ५०३) ने लिखा है कि श्री स्वामी जी ९ अक्टूवर को दिल्ली पहुचे । यह भूल है । श्री स्वामी जी ३ अक्टूवर को दिल्ली पहुचे थे ।

मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है ।

२ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है ।

३ स्थूल अक्षरों का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त का है ।

[१०] पत्र (७६) [९३]

No. 597

Dehllee, Kaboolee Gate
near the Subzimandee
in the Garden of
Lallah Kaishree Chand & Balmookund
15. 10 78

To

Baboo Madho Lall

Arya Samaj, Dinapore

Dear

I have received your letter No 181 of 31st October to-day, I shall be glad to see you at Dehllee on the address, which has [been] written up And I have appointed an Arya Samaj in the *Meerutt* and always here I am delivering the Lecture of Vedic reform I am well and hope you the same

Signature
[दयानन्द सरस्वती]
Dehllee.

15-10-78

[भाषानुवाद]

५९७ देहली कावुली गेट,
सब्जी मण्डी के समीप
ला० केशरीचन्द और वालमुकुन्द के उद्यान मे ।
१५–१०–७८

वावू माधोलाल, आर्य्यसमाज दीनापुर को ।

प्रिय !

आप का पत्र स० १८१, ३१ अक्तूबर[1] का आज प्राप्त हुआ। देहली में उपरिलिखित पते पर आप को मिल कर मै प्रसन्न हूंगा और मेरठ मे मैंने समाज स्थापन किया है।

वैदिक धर्म पर मैं प्रतिदिन यहां व्याख्यान देता हूं । मैं प्रसन्न हूं और आपकी प्रसन्नता चाहता हूं ।

१५–१०–७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

१ सम्भवत यहा १३ अक्तूबर चाहिए ।

मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है ।

[१९] पत्र (७७) [९४]
५८८

वावू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो।

विदित हो कि आपकी एक चिट्ठी मेरठ मे आई थी सो आपने लिखा था कि हम पुस्तकों का रुपया भेजेंगे परन्तु अव तक नही भेजा इस लिये आपको लिखते हैं कि आप वहुत जल्दी हुण्डी वनवा कर हमारे पास यहां दिल्ली में भेज दीजिये आवश्यकता के कारण से आपको लिखा गया है और मेरठ में समाज होने तथा वहा से दिल्ली को गमन करने का समाचार आपको पहिले पत्र मे लिख चुके हैं ॥

हम वहुत आनन्द में हैं ॥[1]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[२] [पत्रसूचना][2] (७८) [९५]
६०८

भूपालसिंह जी · ··

१५, या १६ अक्तूवर
दिल्ली

---

[१६] पत्र (७९) [९६]
६२६

वावू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो।

. विदित हो कि पत्र आपका आया सव हाल मालूम हुआ हुंडी ४६) की अभी हमारे पास नही पहुंची शायद कल वा परसो आ जावेगी तब्ही

---

१ प० रा० वा० ने लालरग मे १५ अक्तूवर १८७८ की तारीख स्वामी जी से इस पत्र के चलने की लिखी है इस लिए इस पत्र की सख्या ५९८ होगी, ५८८ नहीं। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

२ इस पत्र का सकेत ठाकुर भूपालसिंह के पत्र में है, देखो परिशिष्टपत्रसग्रह॥

आपके पास रसीद भेजी जावेगी और ७ ऋग्वेद और छः यजुर्वेद आपके पास भेजने के लिये मुबई को लिख दिया है वहाँ से जल्दी आपके पास पहुंचेंगे और आगे से बराबर पहुंचा करेंगे ॥

और केवल भूमिका ५) को मिल सकती है और जो ग्राहक लोग ४॥) गत वर्ष मे दे चुके और भूमिका पर्य्यंत लेकर छोडते हैं उन से ॥) और वसूल कर लो और जो केवल एक वेद लेते हैं उन से ४) लेने चाहियें और जो ग्राहक पिछले साल मे ४॥) दे चुके और इस वर्ष में दोनो वेद लेना चाहते हैं उन से ७) और जो एक वेद लेते हैं उन से ४) वसूल करो, जो नवीन ग्राहक हो और वे दोनो वेद भूमिका सहित लेवें उन से ११॥) और जो भूमिका सहित एक वेद लेवें उन से ८॥) और जो केवल एक वेद लेवें उन से ४) वसूल कीजिये यहां पर आज कल नित्य व्याख्यान होता है ॥ हम आनन्द पूर्वक कुशल क्षेम से हैं ॥[1]

२० अक्टूबर ७८ दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (८०) [२७]

नं० ६२८

बाबू समर्थदानजी चारण आनन्दित रहो !

विदित होवे कि आज जुगल बिहारी शर्म्मा की एक चिट्ठी आई, जिससे जाना गया कि वहाँ चन्दे का कुछ प्रबन्ध नहीं हुआ है। सो तुम कुछ चिन्ता मत करो। अब मिलना न हो तो फिर कभी मिलेंगे। और कुछ अफसोस मत समझो। हम तुम्हारे प्रेम को खूब जानते हैं और कुछ शोक की बात नही है। यहा पर भी आनन्द पूर्वक व्याख्यान हो रहा है, और सब प्रकार से कुशल है। हम बहुत आनन्द मे हैं।[2]

२१ अक्तूबर सन् १८७८

दिल्ली ह० (दयानन्द सरस्वती)[3]

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

२. यह पत्र अजमेर को लिखा गया था।

३. यह पत्र प लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४१४ पर छपा है। यही पत्र भारत सुदशा प्रवर्तक दिसम्बर १८८१, पृ २३ पर भी छपा है। पहले हम ने जीवनचरित से इसे छापा था। अब भा० सु० प्र० से शुद्ध कर के छापा है।

[४] पत्र (८१) [२८]

६३०

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो।

विदित हो कि तुम्हारी चिट्ठी १८ अक्टूबर की लिखी पहुंची सब हाल मालूम हुआ, हम बहुत प्रसन्नता पूर्वक लिखते हैं कि जब तक तुम मुम्बई मे रहो तभी तक वेदभाष्य का काम उठालो और खूब होशियारी स करो और ३०) जो नौकर चाकरो के लिये हैं उन में तुम को अख्त्यार है चाहे जैसे खर्च करो और जो ३५) तक भी कभी खर्च हो जावेगा हमको स्वीकार है और यह सख्या भी जब तक है कि काम कुछ कम चलता है, जब दो हजार ग्राहक हो जावेंगे फिर हम कुछ गिनती न रक्खेंगे चाहे जितना खर्च हो और जब तुम इस काम को ठीक ठीक चलाओगे तो प्रतिदिन उन्नति ही होगी और आज ही हमने बाबू हरिचन्द्र चिन्तामणि जी को भी लिखा हैं। वे आप को बुला कर प्रसन्नता पूर्वक काम सौंप देंगे, तुम यह शका मत करो कि शायद वे बुरा माने, वे कभी बुरा न मानेंगे और न वे ऐसे आदमी हैं और उनकी और तुम्हारी तो घर के सी बात है, वे तुम पर सदैव प्रसन्न हैं ॥

यह पहिला पत्र व्यवहार का हमारा तुम्हारे पास पहुचता है इस को रख लेना और आगे से सब रखते जाना[1], हम भी तुम्हारे पत्र रख लिया करेंगे, और तुम्हारे पास पत्र भेजा करेंगे और पुस्तक आदि सब सभाल कर रखना और जैसा कागज अब की बार लगा है ऐसा ही सदैव लगाना इस से कुछ भी न्यून न हो और अगले मास मे ५००) भी तुम्हारे पास भेज देंगे। बाबू हरिचन्द्र चिं० जी को यह हमारा पत्र दिखा देना और गोपालरावहरि देशमुख जी को हमारा आशीर्वाद कह देना अगले मास में तुम्हारा नाम भी टाईटिल पर छाप दिया जावेगा जिस से ग्राहक लोग भी चिट्ठी पत्री और रुपया पैसा तुम्हारे पास भेजा करेंगे हम बहुत आनन्द मे हैं ॥[2]

२२ अक्टू० ७८ हस्ताक्षर

दयानन्द सरस्वती दिल्ली

---

1 इसी आदेश के अनुसार ये सब पत्र सुरक्षित रहे।

२ मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

[१७] पत्र (८२) [९९]

६३२

वावू रामाधार वाजपेई जी आनद रहो[1]

विदित हो कि एक पत्र इससे पहिले आपके पास भेजा गया है पहुचा होगा, अव इस चिट्ठी के भेजने की आवश्यकता यह है कि आपने पत्र मे लिखा था कि ४६) की हुण्डी दूसरे लिफाफे में भेजी है सो आज तक हमारे पास नहीं पहुंची सो जानना और सव प्रकार से आनद है ॥[1]

२२ अक्टूवर ७८ } हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती दिल्ली {

---

[१८] पत्र (८३) [१००]

६२७

वावू रामाधार वाजपेई जी आनद रहो ॥

विदित हो कि आज आपका भेजा हुआ मनी आर्डर ४६) का पहुंच गया है आप खातिर जमा रक्खें, और वाकी रुपया भी जल्दी ही भेज देना क्योंकि रुपये की आज कल वहुत आवश्यकता है ॥

और यह भी लिखना चाहिये कि कितना रुपया किस पुस्तक का है वा किस ग्राहक के नाम छपना चाहिये, और ७ ऋग्वे० और छः यजु० आप के पास मुवई से पहुचेंगे, वहा को लिख दिया गया है, यहां पर व्याख्यान नित्य होता है और हम वहुत आनद मे हैं ॥[2]

२३ अक्टू० १८७८ } हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती दिल्ली {

---

१ मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

२ मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है। इस पत्र की सख्या ६२७ लिखी है। यह सख्या ठीक प्रतीत नहीं होती। अथवा ठीक भी हो सकती है। सभवतः कोई पिछली सख्या छूट गई हों और उसी पर इसे रख दिया गया हो।

[११] पत्र (८४) [१०१]

No. 636 *Dehllee*
26-10-78

To

Baboo Madho Lall
Arya Samaj,
Dinapore

My Dear,

I have received your letter just now and knew the all subjects of it You must send the account of books to me When you will go to *Arra* I hope you will say to Baboo Hurbansh Shai for the *Chanda* of Ved Bhashya

Here I am delivering the Vedic Lecture in these days and hoping that the Arya Samaj will be oppoint at *Dehllee* I am well and hope you the same

Swamee D Nd Sarrasswatee.

26-10-78 [दयानन्द सरस्वती]
Dehllee

[भाषानुवाद]

देहली
सं० ६३६ . २६-१०-७८

बाबू माधोलाल
आर्यसमाज दीनापुर को ।

मेरे प्रिय !

अभी आपका पत्र मिला सब समाचार ज्ञात हुआ । आपको पुस्तकों का हिसाब मुझे अवश्य भेजना चाहिये । जब आप आरा जायेंगे तो मैं आशा करता हूं कि आप बाबू हरबससहाय को वेदभाष्य के चन्दा के लिये कहेंगे । मैं यहा आजकल वैदिक विषय पर व्याख्यान दे रहा हू और आशा करता हू कि दिल्ली मे समाज स्थापित हो जावेगा । मैं प्रसन्न हूं और आपकी प्रसन्नता चाहता हूं ।[1]

२६ ।१० । ७८ दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

[1] मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है ।

[९]　　पत्र (८९)　　[१०२]

६३८

पडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनद रहो।

विदित हो कि इस से पहले तुम्हारे पास एक पत्र भेजा गया है पहुंचा होगा और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को तुम्हे काम सोपने के लिये तीन चिट्ठी लिख चुके हैं, और एक चिट्ठी आज फिर लिखी है, सो शायद है कि उन्होंने तुम को बुलाकर सब काम सौंप दिया होगा, पहिली नवम्बर से सब काम तुम ही करो और ग्राहकों के पास भी वेदभाष्य तुम ही भेजना और रजिस्टर, वेदभाष्य के अक और लिखित पत्र आदि चिट्ठी वगैरे और सब काम उन से लेकर समझ लो, जो वे प्रसन्न हों तो पुस्तकें उन्ही के मकान मे रहने दो और कुजी अपने पास रक्खो और जो वे न रहने दें तो जहां तुम चाहो रक्खो परन्तु प्रबन्ध से रखना कि कुछ हानि न हो, और जो कुछ रुपया वेदभाष्य के अकों के ऊपर लगाने के टिकटों के लिये चाहिये सो बाबू साहब से ले लेना फिर आगे से प्रबन्ध कर दिया जायगा, जब तुम यह काम ले लोगे और हमको लिख भेजोगे, तब सब व्यवस्था तुम्हारे पास लिख कर भेज देंगे उसी के अनुसार काम करना॥ अब शीघ्र लिखो कि काम तुमने लिया वा नही और वहां का कुल हाल लिखो, हम बहुत आनद में हैं।[1]

२७ अक्टू० ७८ }　　हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

[६]　　पत्र (८६)　　[१०३]

६४३

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो।[2]

विदित हो कि पहले भी आप को दो तीन चिट्ठियां लिखी गई हैं पहुंची होगी और बाबू हरिश्चन्द्र चिंतामणि जी को भी तुम्हें काम देने के लिये कई बार लिखा गया है सो आशा है कि तुम को उन्हो ने सब काम सोप दिया होगा और

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

जो कुछ उन से बातें हुइ हों सो हम को जल्दी लिखो और बाबूजी से काम ले कर पहिली नवम्बर से तुम्ही करो यह भी लिखो कि **छापेखाने करने में यन्त्र और**[1] अक्षर और टाइप आदि के मगाने मे क्या खर्च होता है और मोहन लाल विष्णु लाल पण्ड्या जी आज कल कहा हैं मुबई मे हैं वा नही ॥

अब हम यहाँ से ६ नवम्बर बुधवार को पुष्कर जायेंगे सो इस मिति के पीछे पत्र हमारे पास अजमेर मे भेजना चाहिये कल वहा पर भी आर्य्य समाज के लिये प्रधानादि नियत हो गये हैं और ३ नवम्बर रविवार को समाज का आरभ हो जायगा उत्तर शीघ्र भेजो कि जिस मिती तुम काम सभाल लो आगे उस मिती से पत्र तुमारा हमारा बराबर आनन्द से पत्र व्यवहार होगा ॥

३० अक्टू० ७८ — हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती दिल्ली

---

[१०] पत्र (८७) [१०४]

६४८.

पडित गोपालहरि देशमुख जी आनद रहो !

विदित हो कि जिस दिन से बाबू हरिश्चन्द्र चिंतामणि जी के प्रबध में वेद-भाष्य का काम गया है तब से किसी ग्राहक के पास भी अक यथार्थ ठीक ठीक नही पहुंचते और वे बेचारे क्या करें उन के पास कोई आदमी इस काम के योग्य नही अब हम इस बात से बहुत प्रसन्न हुए कि आपने श्यामजी कृष्ण वर्म्मा को इस काम के स्वीकार करने को उद्दित किया यह पुरुष इस काम के बहुत योग्य है और बाबू जी को इन्हें काम देने क लिये लिखा था सो वे लिखते हैं कि इस की बाबत एक दो दिन मे लिखूगा सो देखिये क्या लिखते हैं प्रथम तो आशा है कि वे कुछ इस मे तकरार न करेंगे और जो शायद वे कुछ तकरार करने लगें तो जब आप मुबई मे आवें वा पत्र द्वारा उन को समझा कर इन को काम दिला दीजिये ॥

आप इस काम के अधिपति रहें और बाबूजी भी नाम मात्र रहें परन्तु सब काम आप के नीचे श्यामजी करें तब यह काम ठीक ठीक होगा और

---

१. स्थूलाक्षर का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त में है।

श्यामजी[1] ...और जब आवश्यकता होगी आप को भी लिखा करेंगे। यहां दिल्ली मे आर्य्य समाज नियत हो गया है अब हम यहां से ६ नवंबर को पुष्कर जावेंगे और सब प्रकार से हम आनन्द मे हैं ॥[2]

२ नवम्बर ७८ { हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली }

---

[७] पत्र (८८) [१०९]

६४९

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्मा आनन्द रहो !

विदित हो कि कल आप का पत्र आया था सब हाल मालूम हुआ और कल ही बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का भी पत्र आया था वे लिखते हैं कि श्यामजी को काम देने की बाबत सोच विचार के दो एक दिन मे लिखूगा, सो जब वे कुछ लिखेंगे तब तुमको लिखा जावेगा और वे तुम्हें काम देने मे कुछ तकरार नही करेंगे, क्योकि उन की हानि ही क्या है, जो वे लिखेंगे कि हमारा नाम टाइटिल पेज पर छपवा कर हमको बदनाम किया, तो उनका नाम माघ तक ऐसे ही छपता रहेगा फिर अगले वर्ष मे बदल दिया जावेगा, और हम उनको भी यही लिख देंगे ॥

हमने एक चिट्ठी लीलाधर हरिदास को लिखी थी कि श्यामजी से वे० के काम मे सलाह करके उनको सहाय दो सो उन्हो ने लिखा है कि हम उनसे मिल कर अवश्य सम्मति करेंगे, सो तुम तथा वे सुन्दर दास और पुरुषोत्तमादि मिलकर इस काम को चलाओ और सब काम तुम करो, वे तुमको सहाय देंगे.. .. ..ते रहा करो ॥[3] और गोपाल रावहरि देशमुख जी के नाम एक चिट्ठी लिख कर तुम्हारे पास इस चिट्ठी के साथ भेजते हैं सो जहाँ वे हों भेजदो वा जब वे मुंबई में आवें तब उनको दे देना, और बाबू जी के पास और भी चिट्ठियां लिखी गयी हैं जो उनसे बातें हुआ करें सो सब लिखा करो। यहा पर आर्य्य समाज

---

१ अगला थोडा सा पाठ फट गया है।

२ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

३ विन्दु वाले स्थान के तीन या चार शब्द फट गये हैं।

हो गया है अब हम कार्ति० शु० १२, ६ नवबर को पुष्कर जावेंगे और दो तीन मास इधर ही जयपुर अजमेर आदि नगरों मे घूमेंगे फिर हरिद्वार में कुभ के मेले पर आवेंगे, जो हम दूर देश मे हो और तुम को जो कुछ काम पड़े सो लीलाधर हरिदास जी से कह कर सहाय लेना और सब काम ठीक करना और बाबू हरिश्चन्द्र से भी मिला करना, अब उन का दूसरा पत्र आने वाला है जब वह आ लेवे तब प्रबन्ध कुछ दूसरा किया जावे और तब ही तुम को भी लिखेंगे और तुम सब हाल वहा का लिखो और यह भी लिखो कि गोपालरावहरि देशमुख जी आज कल कहां हैं, हम बहुत आनद में हैं ॥[1]

न० ७८[2] { हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती दिल्ली }

---

[८] ६७६ पत्र (८९) [१०६]

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो।

विदित हो कि आज एक पत्र बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का आया, उसमें वे लिखते हैं कि वर्ष दिन के अन्त पर्य्यंत हम काम नही छोड़ सकते इसमें हमारी बदनामी होगी सो आज उनको उत्तर लिख दिया है कि इस में आपकी बदनामी किसी प्रकार से नही हो सकती क्योंकि वर्ष दिन तक टाइटिल पेज़ पर आप ही का नाम बना रहेगा और ग्राहको के पत्रादिक भी आप ही के पास आया करेंगे, और सब काम श्यामजी करेगा, अब देखिये क्या उत्तर लिखते हैं, अब तुम चौथे अङ्क का शोधना, सब ग्राहको [के] पास यथावत् भेजना, और सब काम ठीक ठीक करो और कागज़ का प्रबन्ध भी करो, कि कागज़ अच्छा लगा करे, जैसा दूसरे अक मे लगा है हम क्षेम कुशल पूर्वक पुष्कर में पहुँच गए हैं, अब यहां से अजमेर जाकर ठहरेंगे वहा का सब हाल जल्दी लिखाकर उसी जगह हमारे पास भेजना और बाबू जी से मिलना ॥[3]

पुष्कर ज़ि० अजमेर }
१० नवं० १८७८ }

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

२ तिथि का स्थान फट गया है। सम्भवत २ नवम्बर चाहिये।

३ मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

[९] पत्र (२०) (१०७)

७०४

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो।

विदित हो कि आज आप के पास हम एक सूचीपत्र भेजते है कि जिस मे उन ग्राहको का नाम लिखा है जिन्हो ने अब तक वेदभाष्य का मोल नहीं दिया, सो इस कुल सूची को पांचवें अक के टाइटिल पेज पर छाप देना और डिसम्बर के मास से सब काम सभाल कर पाचवें अक का सब काम तुम ही करना, बाबू हरिश्चन्द्र चिंतामणि जी को तो हम ने कई बार बहुत कुछ लिखा, परन्तु अब हम ने पण्डित गोपालरावहरि देशमुख जी को भी लिखा है, वे मुम्बई में आकर अपने सामने तुम को सब काम सोपवा देंगे, और जो कुछ हिसाब किताब होगा सो सब तुम समझ लेना वा बाबू जी हमारे पास भेज देंगे, और वहां का कुल हाल लिखो कि बाबू जी का क्या विचार है, और प्रेस मे आज कल क्या काम होता है। और चौथा अक भी ग्राहको के पास तुम ही भेजना और बहुत होशयारी के साथ अंकों को बांध कर अग्रेज़ी और नागरी मे लिखना और अच्छी तरह से रजिस्टर से मिला लेना यह काम बहुत होशयारी से करना चाहिये, उत्तर शीघ्र भेजो ॥[1]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्ती
अजमेर

२० नव० ७८

---

[१०] पत्र (२१) [१०८]

७८०

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दयुक्त रहो।

प्रकट हो कि अब हमारी सम्मति है कि वेदभाष्य की ३१०० कापी जो हम छपवाते हैं उनकी जगह १५०० कापी छपवावें, क्योकि ३१०० कापी छपने मे खर्च अधिक होता है। इस लिये तुम से पूछते हैं कि १५०० कापी के छपने मे क्या खर्च रह जावेगा, और छापे वालो का

---

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है।

तथा कागजादि का कितना खर्च कम हो जावेगा इसकी सब व्यवस्था लिखो, और यह भी लिखो कि राव साहब गोपालरावहरि देशमुख जी कहां हैं और तुम से मिले वा नहीं और अमरीका वालो का समाचार क्या है, और केशवलाल निर्भयराम कहा हैं। इस पत्र का उत्तर जयपुर में भेजना क्योंकि हम यहा से १४ दिसम्बर को चलकर अजमेर होते हुए १५ दि० को जयपुर पहुंच जावेंगे, हम बहुत प्रसन्न हैं ॥[१]

११ दि० ७८ { हस्ताक्षर / दयानन्द सरस्वती / नसीराबाद जि० अजमेर }

---

[९] पत्र (९२) [१०९]

बाबू प्यारे लाल सभासद आर्यसमाज लाहौर ।

आज आपका खत हमको रिवाडी में मिला बहुत खुशी हासिल हुई हम अजमेर से जयपुर आये थे और ९ रोज वहा कयाम किया इस अरसे मे वहा पर ठाकुर फतेसिंह साहब व बाबू श्री प्रसाद मोहतमिम बदोबस्त व जी अखत्यार वो मुअजिज शख्स कपतान वगैरा हम से मिले। और निहायत आनन्द रहा। मगर राजा साहब से मुलाकात नहीं की गई। और वहा से हम २४ दिसम्बर को रवाना होकर २५ को रिवाडी जिला गुड़गावां में पहुचे और व्याख्यान दिया। अब यहा व्याख्यान पूरा हो चुका है। लिहाजा हम परसो बतारीख ९ जनवरी १८७९ देहली मे जाकर सब्जी मडी के पास बाबू केशरी लाल के बाग में ठहरेंगे और जो कैफियत वहा की होगी सो तहरीर की जावेगी और सब तरह से खैरियत है हम बहुत आनन्द हैं सब सभासदों को नमस्ते ॥[२]

७ जनवरी १८७९

दयानन्द सरस्वती
रिवाड़ी जिला गुड़गांवा

---

१. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५४१ पर उद्धृत।

[११] पत्र (९३) [११०]

९३७

पडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनद रहो।

विदित हो कि आप के पास एक पत्र पहिले भेजा गया है पहुंचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम लिखो कि चौथा अक वेदभाष्य का अब तक क्यों नही निकला और छापेखाने मे आज कल क्या काम हो रहा है और बाबू साहब क्या करते हैं दो दो महीने हो जाते हैं कि अक नही निकलता ग्राहक लोग बहुत तकाजा करते हैं ॥ इस लिये तुम को लिखा है कि जल्दी लिख कर भेजो कि चौथे अंक के निकलने में क्या देरी है, हम कल दिल्ली से मेरठ आ गए हैं यहां पर आठ नव दिन ठहरेंगे, फिर मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, रुड़की होते हुए चैत्र मास में हरिद्वार पहुंचेंगे सो जानना ॥[1]

उत्तर शीघ्र भेजो हम बहुत आनन्द में हैं ॥

मेरठ १७ जन० ७९

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

[१२] पत्र (९४) [१११]

९४२

पडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो!

विदित हो कि १७ जन० को तुम्हारे पास एक पत्र भेजा गया है पहुँचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम जल्दी वहां का हाल तलाश करके लिखो कि चौथा अक हरिश्चन्द्र ने छपवाया है वा नहीं वा छपवा कर रख छोड़ा है और हानि करना चाहते हैं इसका व्योरा जल्दी लिख भेजो और बाबू जी की प्रतिज्ञानुसार माघ महीना पूरा होने वाला है इसलिये तुम उन से अव वेदभाष्य का काम ले लो और पाचवा अक तुमही निकालो, और छापे वालो से इकरार लिखा लो कि हमारा काम मितिवार निकला करे और हम रुपया दूसरे महीने और हर तीसरे महीने तक चुकाते रहेंगे, और तुम रुपये पैसे का कुछ संदेह न करो हम इसका प्रबंध ठीक ठीक कर देंगे और तुम

---

१ मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

विस्तारपूर्वक लिखो कि १५०० वा २००० कापी के छापने में कितना खर्च कम होगा वावू जी लिखते हैं कि १५०० के छपाई में कुल १००) कम होगा जिस मे से ७७॥) तो कागज ही के कम हुए फिर छपाई और बंधाई वगैरे का कुछ भी कम नही होता इससे यह हिसाव तुम तलाश करके विस्तारपूर्वक लिखो। जो तुम को हजार काम भी हो तो उनको छोड कर इस पत्र के प्रत्येक अक्षर का उत्तर लिखकर वहुत जल्दी भेजो, और यहा मेरठ में कई एक धनाढ्य छापाखा[ना] किया चाहते हैं इस लिये इस का निश्चय करके लिखो कि टाइप आदि के लेने मे कितने रुपये लगेंगे ॥[1]

} हस्ताक्षर
द० स० {

मेरठ १९ जनवरी ७९

जिसे तुम ने मेरठ में फोटोग्राफ खेंचने को कहा था उस ने तैय्यार कर लिया है ५) भेज कर मंगा लो ॥

---

१ मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

मासिक पत्र आर्यदर्पण, जनवरी सन् १८७९, पृ० २४ पर निम्नलिखित सूचना छपी है। उन दिनों यह पत्र उर्दू में निकलता था—

"सब आर्य भाइयों को वाजेह हो कि वतारीख २४ माहे अक्तूवर (दिसम्बर चाहिए। भूल से अक्तूबर छपा है। भ० द०) सन् ७८ पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती मुकाम जयपुर से रवाना होकर मुकाम रिवाडी, जिला गुडगावा में पहुचे। और ९ तारीख जनवरी को रिवाडी से देहली तशरीफ लाए। तारीख १६ जनवरी को देहली से रवाना होकर वमुकाम मेरठ पहुचे। और वहा पर आठ रोज रह कर मुकाम मुजफ्फर नगर, देववन्द, सहारनपुर रुडकी होते और हर जगह हफता अशरा ठहरते हुए माहे चेत में कुभ के मेले पर वमुकाम हरद्वार पहुच जावेंगे। इतलाअन अर्ज किया, फक्त।"

श्री स्वामी जी ने मेरठ मे कोई पत्र मु० वखतावर सिंह को शाहजहापुर भेजा होगा। उस पत्र में यह सब वृत्तान्त लिखा होगा। उसी पत्र के आधार पर मु० जी ने यह सूचना अपने पत्र में छाप दी होगी।

[१] उर्दूपत्र (२८) [११२]

लाला रामशरनदास जीव साहिब आनन्दित रहो।

जो कि तजवीज हुई है कि आर्य्यसमाज की तरफ से एक छापहखाना जारी किया जावे। और हर एक हिस्सा मुब्लिग सौ रुपया का मुकरिर हुआ है। लिहाजा हमारे भी उस में दो सौ रुपया के दो हिस्सा शामिल कर लेवें। और जब आप चाहें रुपया मजकूर हम से ले लेवें।[1]

स्वामी दयानन्द सरस्वती

मेरठ २० जनवरी सन् १८७९ दयानन्द सरस्वती

---

[९] विज्ञापन [११३]

ओं नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय

विज्ञापनपत्रमिदम् ॥[2]

सब सज्जन लोगो को विदित हो कि पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज विक्रमादित्य के स० १९३५ फा० शु० ६ गुरुवार को हरिद्वार में आकर श्रवणनाथ के बाग के पास निर्मलों की छावनी के सामने बूचा नाला के पार मूलामिस्त्री के खेतों मे ठहरे हैं। जो महाशय मनुष्य उन स्वामी जी से संभाषण करके लाभ उठाना चाहें वे पूर्वोक्त स्थान पर उपस्थित होकर सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वार्त्तालाप करें ॥

सब सज्जनों के लिये वेदोक्त उपदेश

ऐसा कौन मनुष्य होगा जो अपना, अपने बन्धुवर्गों का हित और परमेश्वर की आज्ञा का पालन करना न चाहे। क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो परस्पर मित्रता, सदुपदेश, प्रीति, धर्मानुष्ठान, विद्या की वृद्धि, दुष्टकाम और आलस्य के त्याग, श्रेष्ठ कामों के सेवन, परोपकार और पुरुषार्थ के विना सर्वहित कर सके। और ईश्वर प्रतिपादित वेदोक्त अनुसार आचरण किये विना सुख को प्राप्त हो सके। इसलिये आर्यों

---

१ मूल पत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सेठ धनपतिराय जी सुपुत्र ला० रामशरनदास जी मेरठ से प्राप्त हुआ था। ला० मामराज जी इसे लाए थे॥

२. यह अद्‌भुत विज्ञापन सवत् १९३५ के कुम्भ के मेले पर सहस्रों की सख्या में हरिद्वार के समस्त मार्गों, घाटों, पुलों और मन्दिरों की दीवारों पर लगवाया गया था। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६१६–६१८ पर देवनागरी अक्षरों में उद्धृत है।

के इस महा-समुदाय मे वेदमन्त्रो के द्वारा सब सज्जन मनुष्यो के हित के लिये ईश्वर की आज्ञा का प्रकाश सन्क्षेप से किया जाता है। जिसको सब मनुष्य देख सुन और विचार कर ग्रहण करें। और इस मेले मे तन मन और धन से आने के सत्य सुखरूप फलो को प्राप्त हो और अपने मनुष्य देहरूप वृक्ष के धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चार फलो को पाकर जन्म सुफल करें। और अपने सहचारी लोगो को भी उक्त फलों की प्राप्ति करावें। इस विषय में नीचे लिखे वेदमन्त्रो का प्रमाण देख लीजिये।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव। १।
ऋ० मं० ५ सू० ८।

उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवामफलामपुष्पाम्। २।
यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्। ३।
सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः।
किल्विषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय। ४।
सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि। ५।
ऋ० मं० १० सूक्त ७१ मन्त्र ५। ६। १०। २॥

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः। ६॥
तैत्तिरीयारण्यके प्र० ६। अनु० १।

॥ इन मन्त्रो के अर्थ ॥

सब मनुष्य इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करें कि हे (देव) सब सुखो के देने और (सविता) सब जगत् की उत्पत्ति और धारण करने वाले परमेश्वर, आप कृपा कर के (नः) हमारे जितने (विश्वानि)

सब (दुरितानि) दुष्ट कर्म और दुःख हैं उन सब को (परासुव) दूर कीजिये और (यत्) जो (भद्रम्) शुभकर्म और नित्य सुख हैं उनको हमारे लिये सदा प्राप्त कीजिये । १ ।

परमात्मा ऐसे धार्मिक मनुष्यो को वेद और अन्तर्यामीपन से उपदेश करता है कि जो अविद्वान् मनुष्य (अपुष्पाम्) साधन रूप पुष्पों और (अफलाम्) अर्थ काम और मोक्ष रूपी फलों से रहित (वाचम्) अर्थ ज्ञान के विना वाणी को (शुश्रुवान्) सुनकर (एषः) यह पुरुष (अधेन्वा) सुशिक्षा शब्द अर्थ और सम्बन्ध के वोध रहित वाणी और छल कपटादि बुरे कामो से युक्त होकर (चरति) चलता है जिसको अज्ञानी (आहुः) विद्वान् लोग कहते हैं (उत्) जिसको कुछ भी दुःख (न) नही प्राप्त होता और जो आप विद्वान् होकर (एनम्) इस विद्या रहित मनुष्य को (स्थिर-पीतम्) दृढविद्यायुक्त करके (हिन्वन्ति) वढ़ाने (त्वम्) उसको (सख्ये) वैर विरोध छुड़ाकर मित्र होने के लिये प्राप्त करते (अपि) और उसको (वाजिनेषु) अतिश्रेष्ठ गुणकर्म युक्त करके सुखी कर देते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं । २ ।

इन से विरुद्ध (य.) जो मनुष्य (सचिविदम्) सब से प्रीति प्रेम भाव से सब को सुख प्राप्त कराने वाले (सखायम्) सर्वहितकारी मित्रों को (तित्याज) छोड देता है अर्थात् औरो से मित्र भाव नही रखता (तस्य) उसका (वाचि) सुशिक्षित विद्या की वाणी मे (अपि) कुछ भी (भाग) अश (नास्ति) नहीं है अर्थात् वह भाग्यहीन पुरुष और (यत्) जो कुछ वह विद्वानो वा अविद्वानो के मुख से (ईम) शब्द को (शृणोति) सुनता है सो सब (अलकम्) अर्थ प्रयोजन रहित (शृणोति) सुनता है अर्थात वह विद्या और ज्ञान के विना अर्थ का अनर्थ और अनर्थ का अर्थ समझ कर (सुकृतस्य) धर्म्म के (पन्थाम्) मार्ग को (न हि प्रवेद) कभी नही जान सकता । और जो आप सब का मित्र और सब को अपने मित्र समझ के सत्य से सबका उपकार करता है वही धर्म्म के मार्ग को जान कर आप उसमे चल और सब को चला के धन्यवाद के योग्य होता है ।३।

इन का ऐसे न होने और होने चाहिये । जो मनुष्य (वाजिनाय) विद्यादि शुभ गुण प्राप्ति करने और कराने के लिये (किल्विषस्पृत्) पाप का सेवन कराने हारा (पितुषणिः) स्वार्थी (भवति) होता है, वह सुख को कभी प्राप्त नहीं होता। और जो (हि) निश्चय करके (एषाम्) इन

मनुष्यादि वर्त्तमान जीवों का (अरहितः) अत्यन्त हितकारी है, उस (यशसा) कीर्तिमान् (सभासाहेन) सभा का भार उठाने और सभा को उन्नति करने (आगतेन) सब प्रकार से प्राप्त होने वाले (सख्या) मित्र के साथ (सखाय) मित्र भाव रखते हैं वे (सर्वे) सब लोग (नन्दन्ति) परस्पर सदा आनन्दयुक्त रहते हैं।४।

जहां ऐसे मनुष्य होते हैं, वहा दुःख का क्या काम है। (सक्तुमिव) जैसे सत्तू को (तितउना) चालनी से छान कर सार असार को अलग २ करके शुद्ध कर देते हैं, वैसे (यत्र) जिस देश, जिस समुदाय, जिस सभा मे (धीरा) धार्मिक विद्वान् लोग (मनसा) विज्ञान और प्रीति से (वाचम्) वाणी को सुशिक्षित और विद्या युक्त करके सत्य का सेवन और असत्य का त्याग करने के लिये (सखाय) परस्पर सुहृद होकर (सख्या) मित्रो के कर्म्म और भावो को (जानते) जानने और जनाते हैं। (अत्र) इस मे वर्त्तमान होने वाले (एषाम्) मनुष्यो ही की (वाचि) सत्य वाणी में (भद्रा) कल्याण और सुख करने वाली (लक्ष्मी) विद्या शोभा और चक्रवर्ती राज्य की श्री (निहिता) सदा स्थित रहती है, और जो एक दूसरे के साथ सुख करने मे निश्चित नही होते, उनको दरिद्रता घेर कर सदा दुःख देती रहती है॥ ५॥

इसलिये हे मनुष्य लोगो तुम ऐसा समझ के इस आगे लिखी बात को सदा करते रहियो।

(सह नाववतु) हम लोग परस्पर एक दूसरे की रक्षा सदा करते (सह नौ भुनक्तु) एक दूसरे के साथ विरोध छोड कर आनन्द भोगते (सह वीर्यं करवावहै) और एक दूसरे का बल पराक्रम, विद्या और सुख को बढ़ाते रहें और (तेजस्विनावधीतमस्तु) हमारे बीच में विद्या का पठन पाठन (तेजस्वि) अत्यन्त प्रकाश युक्त हो। (मा विद्विषावहै) और हम लोग आपस मे वैर विरोध कभी न करें। इस प्रकार चाल चलन शुद्ध करने से (ओ३म् शान्तिः शान्ति शान्ति) जो हमारे (आध्यात्मिक) शरीर की पीड़ा (आधिभौतिक) शत्रु आदि से पराजय आदि क्लेश का होना, (आधि-दैविक) अर्थात् अति वर्षा होने न होने आदि और मन आदि इन्द्रियो को चचलता से तीन प्रकार का दुःख होता है वह कभी उत्पन्न न हो किन्तु सदा सब सुख बढ़ते रहते हैं।६।

विचारना चाहिये ॥ हे मनुष्य लोगो! ऊपर लिखी व्यवस्था पर आत्मा मे ध्यान देकर देखो कि परमेश्वर ने वेद द्वारा हम सब मनुष्यों को सुखी होने के लिये कैसा सत्योपदेश किया है कि जिसमे चलने से अपने लोगों मे सब दुःखो का नाश और सत्य सुखो की वृद्धि बनी रहे। क्या तुम ने नही सुना कि अपने पुरुष ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्य्यन्त महर्षि और स्वायभव से लेके महाराजे युधिष्ठिर पर्य्यन्त राजर्षि लोग वेदोक्तधर्म्म के अनुकूल चलके कैसे २ बड़े विद्या और चक्रवर्ती राज्य के असख्यात सुखो को भोगते, विमान आदि सवारियो मे बैठते, सर्वत्र विद्या और धर्म को फैला कर सदा आनन्द मे रहते थे। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, दिन, रात, प्रहर, मुहूर्त, घड़ी, पल, क्षण, आख, नाक, कान, आदि शरीर, ओषधि, वनस्पति, खाना, पीना आदि व्यवहार ज्यो के त्यो बने हैं और हम आर्यो का हाल क्यो बदल गया। हे मनुष्यो! आप लोग अत्यन्त विचार करके देखो कि जिसका फल दु.ख वह धर्म्म और जिसका फल सुख वह अधर्म्म कभी हो सकता है। अपना हाल अन्यथा होने का यही कारण है कि जिसको ऊपर लिख चुके, वेद-विरुद्ध चलना। और उस प्राचीन अवस्था की प्राप्ति कराने वाला कारण वेदोक्तानुकूल चलना है। और वह चाल चलन यह है कि जैसा आर्य्यावर्त्त वासी आर्य्य लोग आर्य्यसमाजो के सभासद करते और कराना चाहते हैं कि सस्कृत विद्या के जानने वाले स्वदेशियों की बढ़ती के अभिलाषी, परोपकारक निष्कपट हो के सब को सत्यविद्या देने की इच्छा युक्त, धार्मिक विद्वानो को उपदेशक मण्डली और वेदादि सत्य शास्त्रो के पढ़ने के लिए पाठशाला किया चाहते हैं। इस मे जिस किसी आर्य्य की योग्यता हो वह अपने अभिप्राय को प्रसिद्ध करके इस परोपकारक महोत्तम कार्य्य मे प्रवृत्त हो। इसी से मनुष्यो की शीघ्र उन्नति हो सकती है। मैं[1] निश्चित जानता हूं कि इस बात को सुन के सब भद्र लोग स्वीकार कर के आर्य्योन्नति करने मे तन, मन, धन से प्रवृत्त हांगे, निस्सन्देह ॥

भूतरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे माघमासि सिते दले ।[2]
अमायां बुधवारे वै पत्रमेतदलेखिषम् ॥

---

१. विज्ञापन के अन्त में श्री स्वामी जी का नाम अवश्य होगा। मै शब्द से वे अपना सकेत करते है।

२. २२ जनवरी १८७९। यह विज्ञापन चशमाए फ़ैज़ प्रेस मेरठ में छपा था।

(१) पत्र (९६) [११४]

न० १००७

श्रीयुत कृपाराम स्वामी आनन्द रहो !

ता० १ फरवरी सन् १८७९ का लिखा रजिस्टर पत्र पहुंचा। देख कर आनन्दित होके समाचार जानके प्रत्युत्तर लिखता हूं। वहा रहने वालो से मेरा आशीर्वाद कहना। वहां आने में मुझको वहुत प्रसन्नता है। परन्तु मैं अनुमान करता हूं कि जो वन सकेगा तो स० १९३६ वैशाख लगते ही आने का सम्भव है। यहां सहारनपुर से ता० ६ फरवरी को रुड़की को जाके वहां ८ वा १९ दिन रह के हरद्वार में जाके कनखल और ज्वालापुर के बीच नहर के पुल पर वड़ी सड़क पर मूला मिस्तरी के वाग में डेढ़ महीना ठहरने का विचार है। पीछे आप लोगो के यहां आने का विचार है। सो जानिये। क्या आप लोगों से मैं नहीं मिला चाहता ऐसा सम्भव है।

सम्वत् १९३५ मिति माघ शु० १० आदित्यवार।[1]

दयानन्द सरस्वती

---

[१३] पत्र (९७) [११९]

स० १९३५ मि० फाल्गुण शु० ८ शनि ता० १ मार्च १८७९।

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दित रहो !

ता० २४ फरवरी का लिखा पत्र आप का आया सब हाल विदित हुआ। मेरी ओर से पाताल देश वासी लोगो को वहुत २ प्रेम प्रीति के साथ आशीर्वाद यथोचित कहके कुशल क्षेम पूछना और वे वहा कितने दिन रहके किधर २ जाना होगा जब लाहौर आदि समाजो मे जाना हो तव पहिले ही हम को विदित कर देना उचित है उन का सत्कार यथायोग्य सर्वत्र हो और वे मुवई मे नवीन समाज और थियोसोफीकल सुसायटी का स्थापन करेंगे सो क्या वात है समाज तो है ही है पुनर्नवीन समाज और थियोसोफीकल का स्थापन करना कुछ समझ मे नहीं आया इस का खुलासा लिखो जिस से समझना सुगम हो आगे जो रुपैयों के

---

१ मूल पत्र अतिजीर्ण प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार की भगिनी के पास हरिद्वार गुरुकुल काङ्गडी में है। इसे हमने पहले मेरठ से आई प्रतिलिपि से छापा था, फिर सन् १९३३ में ला० मामराज जी ने मूल पत्र से मिला लिया था। यह पत्र सहारनपुर से देहरादून भेजा गया था। २ फरवरी १८७९ ॥

विषय में लिखा सो विदित हुआ उन सब की इच्छा हो तो वेदभाष्यादि के छपाने मे खरच हो तो अच्छा है आगे इस से अधिक परोपकारक विषय हम को नहीं विदित होता आगे जैसी सब की प्रसन्नता हो सो करें। आगे एक मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य का काम वहां करेगा यह बडा भद्र पुरुष है नागरी पारसी तो अच्छी तरह से जानता है थोडी सी इगरेजी भी जाने है अपने घर का प्रतिष्ठित मातवर पुरुष है यह यहां हरद्वार से दो चार दिनो मे मुबई को आने के लिये रवाना होके वहां पहुंचेंगे इस को सब काम छापे वालो से और कागज वालो से नियम व्यवहार करा देना और इन को किसी प्रकार का दुःख न हो स्थान आदि का प्रबन्ध कर देना सब से मिलाप भी करा देना और एक चपरासी भी मातवर आगे का हो तो वही नहीं तो कोई दूसरा रखवा देना ठीक २ व्यवस्था करवा देना चाहिये ॥

(दयानन्द सरस्वती)[1]

---

[१४] पत्र (९८) [११६]

स० १९३५ मि० फाल्गुण शु० ११ मगल ता० ४ मार्च १८७९ ।

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दित रहो।

तुम्हारा ता० २६ फरवरी का लिखा पत्र आया सब हाल विदित हुआ। मैं बहुत शोक इस बात मे करता हूं कि हमारे प्रिय बन्धुवर्ग पाताल देश निवासी लोगों को मुबई मे आके मिल नही सकता क्योकि हरद्वार मे चैत्र की समाप्ति पर्य्यन्त ठहरने का नोटिस फाल्गुण शुदि ६ गुरुवार से दे चुका हुं और यहां इस बात की प्रसिद्धि भी कर चुका हूँ अब इस बात को अन्यथा नहीं कर सकता। जब वे इस देश में लाहौर आदि के समाजो को देखने को आवेंगे तब यहां वा कहीं अत्यन्त प्रेम के साथ उन से मिलूगा और बात चीतें भी यथोचित होगी उन से मेरा आशीर्वाद कहके कुशल क्षेम प्रेम से पूछना और जो तुमने समाज के विषय मे लिखा कि न आओगे तो यहां का आर्य्यसमाज टूट जायगा क्या तुम ने समाज हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के ही भरोसे किया था और जो मेरे आने जाने पर ही समाज की स्थिति है तो मै अकेला कहां २ जा आ सकता हूं जो समाज मे अयोग्य प्रधान हो उसको छुडा कर दूसरा नियत करके समाज का काम ठीक २ चलाना चाहिये। कल यहां से चल के मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य के काम पर नियत होके मुबई को

---

१ यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है।

मूलपत्र प्रो० वीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है। हरिद्वार से लिखा गया।

आते हैं तुम से मिलेंगे छापेवालो और कागजवालो से ठीक २ नियम करा देना और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से भी सब पुस्तक पत्रे दिला देना सब हिसाब किताब करा के शीघ्र खुलासा करा देना और इन को मकान आदि का क्लेश कुछ भी न होने पावे ॥[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१९] पत्र (९९) [११७]

सं० १९३५ फाल्गुण शुदि १२ बुधवार ता० ५ मार्च १८७९

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्य. श्रीयुतश्यामजिकृष्णवर्मभ्यो दयानन्दसरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति तत्रत्य भवदादीनां च नित्यमाशासे ॥ अग्र इदं वोध्यमेक मनस्विन समर्थदाननामान पुरुष वेदभाष्यप्रवन्धार्थं भवत्सनीड मुम्बापुर्यां वर्त्तमानेऽहनि प्रेषयामि यथासमयमय तत्र प्राप्स्यत्यस्मै कथचित्क्लेशो न स्यात्तथानुष्ठेय वेदभाष्यसम्बन्धिकार्याणि संसेधनीयानि नैवात्र विलव: कार्य इति ॥ ये तत्र सभासद. सज्जना: सन्ति तै: सह समेलनम् । ये तत्र पातालदेशनिवासिनो वर्त्तन्ते तेभ्योऽत्यन्तादरेणाशिष. सश्राव्य कुशलक्षेमता प्रष्टव्या ॥ यथा मयि प्रीति वर्त्तते तथैवैतस्मि[न्] प्रेमभावो विधेयो विद्याऽध्ययनसहाय: स्थानभृत्यप्रवन्धश्च यथावत्समर्थदानस्य कार्य इति च ॥[2]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१ यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है ।
मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षित है ।

२. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है ।
मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के सग्रह में सुरक्षिन है ।

आर्यसमाज लाहौर के पुस्तकाध्यक्ष श्री वल्लभदास का एक पत्र भी इस पत्र के साथ लगा है। उस पर श्री स्वामी जी ने निम्नलिखित टिप्पणी दी है—

"इन पुस्तकों में से शिक्षापत्री ध्वान्तनिवारण को छोड के और सब पुस्तक आधे हमारे पास भेजो और आधे वल्लभदास जी के पास भेजिये ।

(दयानन्द सरस्वती)"

[११] पत्रांश (१००) [११८]

[मुशी समर्थदान··· ··················][1]

मुम्बई जा कर अमरीका वालो से मिलना और हाल लिखना ॥

चैत्र वदी २, सोमवार संवत् १९३५ ॥[2]

(हरद्वार)

---

[१२] पत्र (१०१) [११९]

Hardwar.
16 March 1879.

Lalla Madho Lall
Secretary, Arya Samaj
Dinapore,

Dear Sir,

I have the pleasure to acknowledge receipt of your letter of 13th instant, containing 3 Currency notes aggrigating Rs. 20/- and postage stamps for annas five, being cash of the books mentioned therein :—

I am very glad to hear that efforts are being made for establishing Arya Sanskrit Patsala still more that Rs. 102/5 are collected in its aid. I shall be happy to hear further of your progress—

There are 10 copies of Satyarth Prakash available The other contents of your letter the 5th Number of Vedá Bhash

Always your well wisher

[दयानन्द सरस्वती][3]

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३४ पर इतना अश उद्धृत है ।

२. १० मार्च १८७९ ।

३ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है ।

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१६ मार्च १८७९

लाला माधोलाल
मन्त्री आर्य्यसमाज
दीनापुर

प्रिय महाशय !

आप का १३ तारीख़ का पत्र मिला, प्रसन्नता हुई। उस में ३ करेन्सी नोट २०) रु० के और पांच आना के टिकट थे। यह रुपया वहा लिखी पुस्तको का मूल्य है।

मुझे यह सुन कर वहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य्य सस्कृत पाठशाला का यत्न कर रहे हैं, और भी अधिक प्रसन्नता इस वात की है कि १०२।⁻) रु० इस की सहायता में एकत्र हो गये हैं।

मैं आगे आप की उन्नति सुन कर प्रसन्न हूगा।

सत्यार्थप्रकाश की १० प्रतियां मिल सकती हैं। आप की दूसरी वात का उत्तर है, वेद भाष्य का पांचवां अंक।

आप का सदा हितैषी
(दयानन्द सरस्वती)

---

[२] पत्रांश (१०२) [१२०]

.. ..

अमरीका वालो से अति प्रेम से हमारा नमस्कार कहना और उन से कुशलता पूछना कि लाहौर आदि के समाज में आप लोगों के लिए तय्यारी कर चुके हैं, वहां कव तक जावेंगे और उन्हों ने संस्कृत पढ़ने का आरम्भ किया है वा नहीं और जो कुछ वे हमारे विषय में कहा करें सो लिख दिया करना और हम नहीं लिखें तो भी उन की कुशलता आदि सदैव लिखते रहें। यहां मेला अव तक साधुओ का ही है। गृहस्थ लोग तो कम आए हैं। हम ने एक पत्र कर्नल अलकाट साहव को २४ ता० को और दिया है। तुम उन से उत्तर लिखवाना[१]। शाम लाल खन्ना को नमस्ते। चैत्र सुदी ४ संवत् १९३६। हरद्वार।

२६ मार्च १८७९[२] दयानन्द सरस्वती

---

१. प्रवन्धकर्ता वेदभाष्य (मु० समर्थदान ?) को लिखा गया।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। २७ मार्च चाहिए।

[३][1] पत्रांश (१०३) [१२१]

.. ..

दो लाख के लगभग वैरागी तथा सन्यासी आदि आए हैं। मेला के समाप्त होने का समाचार है। हैजा से ५ व्यक्ति तीन दिन में मर गए हैं।

चैत्र सु० [४][2] दयानन्द सरस्वती
२७ मार्च १८७९ हरद्वार

---

[४] पत्रांश (१०४) [१२२]

....

हम को पन्द्रह दिन से दस्त आते हैं।[3] दिन भर मे १०, १२। अव दिन दिन से आराम है परन्तु निर्वलता वहुत है। सो यहां से १२ ता० को देहरादून के पर्वत को जावेंगे। वहां से मुम्बई आने का प्रवन्ध करेंगे जव शरीर अच्छा होगा। सो तुमने अमरीका वालो से कह देना। उनको समझा दो कि हमारा शरीर महीने डेढ़ तथा दो से कम मे अच्छा भी नही होगा और जो इस गर्मी के दिनो मे रेल मे भी वडी गर्मी होगी। सो आठ दिन के जाने और आठ दिन के आने में वड़ा कष्ट होगा और देह को वड़ा दुःख होगा। तुम उनको अच्छे प्रकार सन्तुष्ट कर देना कि हम अवश्य आवेंगे जिस दिन हमारी देह को आराम होगा। और हमको वड़ा दुःख है कि अमरीका वाले ऐसे समय मे आए हैं जिसमे हमारा उनसे शीघ्र मिलाप नही हो सकता।

चैत्र शुक्ल ११।[4] २ अप्रैल १८७९ दयानन्द सरस्वती
हरिद्वार

---

१ प्रवन्धकर्ता वेदभाष्य (मु० समर्थदान) को लिखा गया।

२ प लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। ४ के स्थान में वहा माघ पाठ है। यह माघ पाठ अशुद्ध है।

३. अर्थात् १८ या १९ मार्च अथवा चैत्रवदी ११ या १२ से।

४. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत।
यह पत्र सभवत: मु० समर्थदान को मुम्बई लिखा गया है।

[९] पत्रांश (१०५) [१२३]

तुम्हारे जाने के पीछे हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा। अर्थात् ४०० से अधिक अधिक दस्त हुए। इस से शरीर अति दुर्बल हो गया। विचार था कि शरीर अच्छा रहता तो हम हरद्वार से ही मुम्बई को अवश्य आते परन्तु अब यहां डेहरादून जाने का विचार है। सो वहा जा कर थोड़े दिनों मे शरीर अच्छा हो जायगा। तब आने के विषय में लिखेंगे। सो तुम ने अमरीका वालो के पास हमारा नमस्ते कहना और किसी प्रकार का सोच विचार वे लोग न करें। क्योंकि मुम्बई मे आ कर उन लोगों से हम अवश्य मिलेंगे। मुन्शी इन्द्रमणि जी भी यहा हमारे पास आ कर ठहरे हैं और मेला भी कुछ विशेष नही जुड़ा है।[1]

वैशाख सु० २ सवत् १९३६[2] दयानन्द सरस्वती
हरद्वार

---

[१३] पत्र (१०६) [१२४]

Hardwar,
10-4-78[3]

Baboo Madho Lall
Arya Samaj,
Dinapore

Dear Sir,

Informs that American Mission (*Col* H S Olcott and countess H Blavatsky) is coming to see me at Dehra Dun about the 14th current and I hope will stay with me for some months

Sd Dianand Sarasswatti.
द. दयानन्द सरस्वती[4]

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। यह पत्र संभवत मुशी समर्थदान को मुम्बई में लिखा गया है। मुशी समर्थदान को ही वेदभाष्य के प्रबन्धकर्ता के रूप में ता० ५ मार्च को श्री स्वामी जी ने हरिद्वार से मुम्बई भेजा था। देखो पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के नाम का पत्र, पूर्ण सख्या ११७।

२ ८ अप्रेल १८७९ मगलवार। वैशाख वदी चाहिए। सुदी छापने में जीवनचरित की भूल है।

३ यहा ७८ भूल से लिखा गया है। ७९ चाहिये।

४ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१०-४-७९

बाबू माधोलाल
आर्यसमाज दीनापुर को ।

प्रिय महाशय !

आप को सूचित किया जाता है कि अमेरेकन मिशन (कर्नल एच० एस० अल्काट और काऊण्टेस एच० ब्लवत्स्की) इस मास की १४ तक मुझे डेहरादून मिलने आ रहा है और मैं आशा करता हूं कि मेरे साथ कुछ मास तक ठहरेंगे ॥

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्रांश (१०७) [१२५]

[प० कृपाराम]

हम पर्वी से दूसरे दिन डेरादून को कूच करेंगे ।[१]

---

[६] पत्रांश (१०८) [१२६]

....

हरद्वार मे ओंकार मल और सुनन्दराज हम को नही मिले । रामगढ़ से भी वहुत से प्रेमी लोग पहुंच गए ।[२] हरद्वार मे बहुत लोगो से बात चीत हुई । साधु लोगो ने उपदेश सुना लाभ भी बहुत सा हुआ । हैजा बहुत सा नही है थोड़ा सा हुआ । जब अमरीका वाले सुनेंगे और उन से बात चीत होगी, तब सब भ्रम निकल जावेंगे । हम को हरद्वार मे लग भग ४०० दस्त हुए और अब तक भी कुछ २ आते हैं परन्तु यहां की वायु ठण्डा होने से कुछ २ आराम होता आता है परन्तु

---

१. यह मूल पत्र का अंश अथवा उस का अभिप्राय है । यह पत्र हमें नहीं मिल सका । इस का उल्लेख प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४२७ पर है ।

२ मगलदान चारण के पुत्र मुंशी समर्थदान रामगढ सीकर (जयपुर राज्य) के समीप, नेठवाग्राम के रहने वाले थे । उन्हें ही पूर्ण सख्या ११८, १२०—१२२, १२४ और १२६ के पत्र लिखे गए प्रतीत होते है ।

शरीर बहुत निर्बल हो गया है। आज दस्त बन्द हुआ दीखता है। जो बन्द हो जावेंगे तो शरीर भी १५, २० दिन मे अच्छा हो जावेगा॥

वैशाख वदी १२, शुक्रवार संवत् १९३६।[1]

दयानन्द सरस्वती
देहरादून।

---

[१४] पत्र (१०९) [१२७]

Dehra Dun
24th April 1879

Sir,[2]

I am very glad to receive your letter of 20th instant by this day's post.

You were quite right in remitting the value of Ved Bhashya Bhoomika to Pandit Sunder Lall at Allahabad who can supply you as many more copies as you will want I have also received the price of the books you had taken from Delhi —

I have great pleasure to hear of your intention for opening a Sanskrit School, but before you take this most advantageous work in hand I should be informed as to what arrangement you have made about the standard of various sciences to be studied at the School, have you got all the necessary books ready yet, I think not ! I mean to say that before you go into the work you should have all the books printed first of all The "Koran" in Nagri is entirely ready but has not been printed yet.

The Astadhyaee has not met the sufficient number of subscribers yet, the 4 adhyas of this are just ready but the work is

---

१ पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। १८ एप्रिल १८७९।

२. बाबू माधोलाल, दानापुर को लिखा गया।

going on quite well though not (a) copy (has) passed in the press up to date

The great dishonesty and misconduct on the part of Babu Harish Chandra Chintamani has been the cause of delay in getting the Ved Bhashya out of the press in the proper time. Now the man has been turned out and another man has been appointed in his stead and it is hoped that he will carry out the work very satisfactorily.—

I intend setting up a press at Moradabad under the auspices of Munshi Indra Mani for which purpose a subscription to the amount of Rs 5,000/- is necessary to be raised by shares of 100/- each Of this sum Rs 2,500/- has already been raised I hope it will be a great help to the work should you be inclined to take as many shares as you can In that case you should apply to Lallah Ram Saran Das of Meerut who is authorized to receive money when the time comes.

Yours truly
Sd. Daya Nand Saraswati
[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

देहरादून
२४ एप्रिल, १८७९

महाशय !

आज की डाक मे आप का २० तारीख का पत्र प्राप्त करके मुझे बडा हर्ष हुआ ।

वेदभाष्यभूमिका का मूल्य प्रयाग मे पण्डित सुन्दरलाल को भेजने में आप ने सब ठीक किया । वे आप को जितनी प्रतियां आप और चाहें, भेज सकेंगे । जो पुस्तकें आप ने दिल्ली से ली थीं, मुझे भी उनका मूल्य मिल गया है ।

आप के सस्कृत पाठशाला खोलने का विचार सुन कर मुझे बहुत हर्ष है । पर इस से पूर्व कि आप इस सर्वोपयोगी काम को हाथ में लें, मुझे

सूचना दें कि पाठशाला में पढ़े जाने वाले भिन्न २ शास्त्रों के प्रमाण के सवन्ध में आप ने क्या क्रम रखा है ? क्या अभी आप के पास सव आवश्यक ग्रन्थ तय्यार हैं। मेरा विचार है, नहीं। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि काम को आरम्भ करने से पूर्व आप को सव से पहले सव ग्रन्थ छपवा लेने चाहियें। "कुरान" नागरी मे पूरा तय्यार है परन्तु अभी तक छापा नही गया।

अष्टाध्यायी के अभी तक पर्याप्त सख्या में ग्राहक नहीं हुए हैं। इस के ४ अध्याय अभी तय्यार हुए हैं। काम सर्वथा भले प्रकार चल रहा है, यद्यपि कोई कापी आज तक यन्त्रालय मे से नहीं निकली।

वावू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि की वडी कुटिलता और वुरे आचार के कारण वेदभाष्य के प्रेस मे से उचित समय पर निकलवाने मे देर हो गई है। अव वह वाहर निकाल दिया गया है और उसके स्थान मे अन्य पुरुष नियुक्त हुआ है और यह आशा की जाती है कि वह कार्य्य को सन्तोष-जनक रीति से करेगा।

मुन्शी इन्द्रमणि की अध्यक्षता मे मुरादावाद मे मेरा एक यन्त्रालय खोलने का विचार है। एतदर्थ ५,०००) रु० का चन्दा करना आवश्यक है जो १००) रु० के प्रति भाग द्वारा होगा। इतने मे से २,५००) रु० पहले एकत्र हो चुका है। मैं आशा करता हूं कि इस से हमारे काम में वड़ी सहायता होगी, यदि आप की अभिरुचि अधिक से अधिक भाग जितने आप ले सकते हैं, लेने की हो तव आप को ला० रामशरणदास मेरठ वालो को लिखना होगा। उन्हें समय आने पर धन लेने का अधिकार है।[1]

आपका शुभचिन्तक
[दयानन्द सरस्वती]

---

[३] पत्र (११०) [१२८]

Saharanpur N W P
May 2nd 1879

I hereby authorize Henry S Olcott, to caste my vote upon all questions relating to the Theosophical Society which may be brought before the General Council for action in my

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है।

absence; and, generally, to use my authority as Supreme Chief of the Eastern and Western Theosophists of the Arya Samaj according to the general views which I have personally expressed to him [1]

(दयानन्द सरस्वती)

[भाषानुवाद]

सहारनपुर, पश्चिमोत्तर प्रदेश
२ मई, १८७९

मैं इस लेख द्वारा हैनरी ऐस आल्काट को थियोसोफिकल सोसायटी सम्बन्धी सब प्रश्नो पर जो मेरी अनुपस्थिति मे साधारण सभा के सम्मुख कार्यार्थ लाये जायें, अपनी ओर से सम्मति देने का अधिकार देता हूं और वे उन सामान्य विचारानुसार जो मैंने उन्हे स्वयं जताए हैं, आर्य्यसमाज के पूर्वीय और पश्चिमीय थियोसोफिस्टों के प्रधानाध्यक्ष के रूप मे साधारणतया मेरा अधिकार वर्त्त सकने हैं॥

[दयानन्द सरस्वती]

---

[७] पत्रांश[2] (१.१.१) [१.२२]

....

मुम्बई जा कर अमरीका वालो से मिलना और हाल लिखना।

हम डेरादून से चल कर सहारनपुर आए और वहा पर अलकाट साहव और ब्लेवेस्तकी लेडी वा मूलजि ठाकरसी से जोकि अमरीका से आए हैं, समागम हुआ। दो दिन वहां ठहर कर हम मेरठ आ गये हैं। यहां पर [पांच छ.] ५, ६ दिन ठहरेंगे। पश्चात् साहव मुम्बई को आवेंगे और हम कुछ दिन यहां ही वास करेंगे परन्तु आज कल कुछ अवकाश नही है। साहव की और हमारी सम्मति मिल गई है। किसी प्रकार का भेद नहीं है और जो कुछ हरिश्चन्द्र ने उन के चित्त में शङ्का डाली थी, वह सब निवृत्त हो गई है। साहव अत्यन्त शुद्ध अन्त.करण सज्जन पुरुष

---

१ जब यह पत्र लिखा गया था तब कर्नल और मैडम श्री स्वामी जी के साथ सहारनपुर में ही थे॥

इस पत्र की प्रतिकृति थियोसोफिस्ट जुलाई १८८२ के परिशिष्ट में छपी है। उसके नीचे एक नोट है कि म० मूलजी ठाकुरशी ने कहा है कि उन्होंने स्वामी जी को इस पत्र का अनुवाद सुनाया था। तब उनके सम्मुख ही स्वामी ने अपने हस्ताक्षर कर दिये थे॥

२. प० लेखरामकृत दयानन्दचरित पृ० ८३६, ३७ पर उद्धृत।

यह पत्र सभवत: मु० समर्थदान प्रवन्धकर्ता वेदभाष्य मुम्बई को लिखा गया है।

हैं। इन में किसी प्रकार का छल छिद्र नही है। परन्तु हरिश्चन्द्र ने ऐसा कपट किया कि जिस को हम कथन नही कर सकते हैं। परन्तु अव होश्यार रहना चाहिये ॥

वैशाख सु० १४ स० १९३६।[1]

दयानन्द सरस्वती

---

[८] पत्रांश[2] (११२) [१३०]

. ...

कल अल्काट साहव और व्लेवेस्तकी लेडी समाज में गये थे और आज उक्त साहव सदर मेरठ में उपदेश करेंगे और कल परसों यहा से मुम्बई जाने वाले हैं। उक्त साहवों की अपनी समाज से कोई वात विरुद्ध नही है अर्थात् अनुकूल आचरण स्वभाव है। क्योंकि चार पाच दिन से जो हम उन के साथ वात करते हैं तो विलकुल ये लोग शुद्ध अन्त.करण प्रतीत होने हैं और थियोसोफिकल सोसायटी में जो हमारा नाम लिखा गया है यदि तुम उस पत्र को भेज देते तो हम साहव को दिखला देने परन्तु जुवानी जो साहव से कहा गया तो उन्हो ने उत्तर दिया कि हमारी थियोसोफीकल सोसायटी का अभी तक यह प्रयोजन था कि सव मतो के लोग इस में दाखल हो और अपनी २ सम्मति देवें। अव आर्यसमाज के नियमो को समझ कर जिस प्रकार आप की आज्ञा होगी, उसी प्रकार किया जावेगा। आगे ऐसा न होगा और जो आर्यसमाज के नियमो को पसन्द नही करता है, वह थियोसोफिकल सोसायटी में नही रहेगा। इस वृत्तान्त को जव मूलजिभाई आवेंगे[3], तव तुम को समझा देंगे ॥

५ मई ७९

मेरठ

दयानन्द सरस्वती

---

१ ५ मई १८७९।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत।

३ यह पत्र भी मु० समर्थदान के नाम हो सकता है। मूलजि भाई मुम्बई वासी थे। वे भी सहारनपुर आए थे।

[१९] पत्र (११३) [१३१]

ओ३म्

बाबू माधोप्रसादादि आनन्दित रहो !

वृत्तांत यह है कि सब सज्जनो के प्रति एक आनन्द का समाचार प्रकट किया जाता है वोह यह है कि एस० एच० अलकाट साहिब तथा एच० पी० व्लेवेस्तकी लेडी जिन की पत्री पहिले अमेरिका से अपने समाजों मे आई थी उन से हमारा पहिली मई सन् हाल को सहारनपुर में समागम होने से मालूम हुआ कि जैसी उनकी पत्रियो से बुद्धि प्रकट होती थी उनके मिलने से अधिक योग्यता और सज्जनता प्रकट हुई। उनके साथ दो दिन सहारनपुर मे समागम रहा और समाज के सब पुरुषों ने यथावत् सत्कार किया। उनका उपदेश सुनने से लोगो के चित्त बड़े प्रसन्न हुए। पश्चात् वे हमारे साथ मेरठ को आये। वहा पर भी सब समाजके लोगो ने सुन्दर रीति से सत्कार किया और उपदेश का ऐसा सुन्दर चरचा रहा कि जिस से सब को आनन्द हुआ और उपदेश मे सब अमीर वा उमराव तथा अहलकार और अगरेज़ लोग भी पाच दिन तक बराबर आते रहे और जिस किसी ने मतमतांतर मे कुछ शका की उनका यथार्थता से उत्तर मिलता रहा। अर्थात् अमरीकन साहिबो ने सब लोगो के चित्त पर यह निश्चय करा दिया कि जितनी भलाई और विद्या हैं वे सब वेद से निकली और जितने वेद विरुद्ध मत है वे सब पाखण्ड रूप हैं पश्चात् उक्त साहिब तो ७ मई को बम्बई चले गये और हम कुछ दिन यहां पर ठहरेंगे। यह जो उन साहिबो से हमारा समागम है यह इन आर्य्यावर्तादि देशो के मनुष्यों की उन्नति का कारण है। जैसे एक परम औषध के साथ किसी सुपथ्य का मेल होने से शीघ्र ही रोग नाश हो जाता है इसी प्रकार इस समागम से आर्य्यावर्तादि देश (में) वेदो का प्रकाश और असत्यरूपी रोग का विनाश शीघ्र हो जावेगा और उक्त साहिबो का आचरण तथा स्वभाव हम को अत्यन्त शुद्ध प्रतीत होता है क्योकि वे लोग तन मन धन से सब प्रकार वेद मत की स्थापना करने में उद्यत हैं। जो बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने उक्त साहिबो के विषय मे यह बात उड़ाई थी कि ये लोग जादू जानते हैं और जासुसो की तरह छल कपटी बातें करते हैं उस की यह बात सब मिथ्या है क्योंकि जिस को जादू कहते हैं वोह यथार्थ में पदार्थ विद्या है उस विद्या को इन्होने मूर्खों के भ्रम दूर करने और सत्य मार्ग मे चलाने के लिये धारण किया है सो कुछ दोष नहीं है परन्तु हरिश्चन्द्र जैसे मूर्खों को भूषण भी दूषण

ही दीख पड़ता है। इस हरिश्चन्द्र ने इन साहिवो के चित्त मे ऐसा भ्रम गया कि जिसका हम वर्णन नही कर सकते परन्तु वे सव भ्रम हमारे मिलने से दूर हो गये। देखो इस हरिश्चन्द्र की वेइमानी कि वहुत सा विघ्न वेदभाष्य के काम में कर चुका है और अव तक भी करता जाता है इस लिए सव आर्य्य भाइयो को उचित है कि इस को अपने आर्य्यसमाजों से वहिष्कृत समझें और इस का किसी प्रकार का विश्वास न करें। देखो पूर्व काल में हमारे ऋषि मुनियों को कैसी पदार्थ विद्या आती थी कि जिस से आत्मा के वल से सव के अत.करण के भेद को शीघ्र ही जान लिया करते थे जैसे वाहर की पदार्थ विद्या से सिद्ध किये हुए रेल तारादि विद्या को मूर्ख लोग जादू समझते हैं वैसे ही भीतर के पदार्थों के योग से योगी लोग अनेक अद्भुत कर्म कर सकते हैं इस मे कोई आश्चर्य नही क्योकि मनुष्य लोग जितनी विद्या वाहर के पदार्थों से सिद्ध करते हैं उस से कइ गुणी अधिक भीतर के पदार्थों से सिद्ध कर सकते हैं जैसे वाहर के पदार्थों का उपयोग वाहर से होता है वैसे ही भीतर के पदार्थों का उपयोग भीतर से होता है जैसे स्थूल पदार्थों की क्रिया आंखों से देख पड़ती है वैसे सूक्ष्म पदार्थों की क्रिया आंखो से नही देख पड़ती इसी कारण लोग आश्चर्य मानते हैं। हां यह कह सकते हैं कि वहुत से धूर्त लोग उस विद्या को तो जानते नहीं झूठे जाल रच कर सत्य विद्या को वदनाम करते हैं इस प्रकार झूठों का तिरस्कार और सच्चों का सत्कार सर्वथा करना चाहिये परन्तु जिस समय किसी का असत्य प्रकट हो जावे उसी समय उसका परित्याग करना चाहिये जैसे वहुत दिनों के पश्चात् हरिश्चन्द्र का कपट प्रकट होने से अपने आर्य्यसमाजों से वाहर किया गया इसी प्रकार जिस किसी पुरुष का प्रकट हो जावे उसको तत्काल ही अपने समाजों से अलग करदो चाहे कोई क्यो न हो। असत्यवादी की सर्वदा परीक्षा करते रहो। इसी का नाम सुधार है क्योंकि वुद्धेः फलमनाग्रह. जव यही सत्पुरुष का लक्षण है तव उसको सच्चा ज्ञान हुआ जानो जव अपने निश्चय किये हुये में भी जितना असत्य जाने उस को उसी समय त्याग दे। तो उस को दूसरे का असत्य छोड़ने मे क्या आश्चर्य्य है। ऐसे काम के विना न आप सुधर सकता है और न दूसरे को सुधार सकता है। अव इस पत्री को इस वृत्तांत पर पूर्ण करता हूं कि इन साहिवो के पूर्व पत्रों और सात दिन वात चीत करने से निश्चय किया है कि इनका तन मन धन सत्य के प्रकाश और असत्य के विनाश और सव मनुष्यों के हित

करने में है। जैसा कि अपने लोगों का निश्चय उद्योग है। वेदभाष्य अब शीघ्र आने वाला है कुछ चिन्ता मत करना ॥[1]

७।५।१८७९ मेरठ। (दयानन्द सरस्वती)

---

[९] पत्रांश[2] (११४) [१३२]

.. . .

पाताल देशस्थों का पत्र तुम्हारे द्वारा वाला अब तक नही पहुंचा है। उन को हमारा नमस्ते कह के कुशल पूछना और अब वह क्या काम करते हैं सो लिखते रहना। जिन बाबू छेदीलाल वा शिवनारायण गुमास्ता कमसरेट मेरठ की कोठी पर वे उतरे थे, उन से लैकचर छपवा कर भेजने को कह गये थे सो अब तक नहीं भेजा कदाचित् भूल गया याद दिला देना। हम यहा से परसो अलीगढ़ जावेंगे ॥

ज्येष्ठ वदी १४ मगलवार

२० मई ७९ मेरठ दयानन्द सरस्वती

---

[१०] (विज्ञापन) [१३३)

सब सज्जन लोगो को विदित हो कि ठिकाना जिले अलीगढ़ परगना मौरथल ग्राम छलेश्वर ठाकुर मुकुन्दसिंह ठाकुर मुन्नासिंह रईस तथा ठाकुर भूपालसिंह ऐरव रईस को हमने वेदभाष्य और सत्यार्थप्रकाशादि पुस्तको के मूल्य वसूल करने का अधिकार दिया है अर्थात् इनके नाम मुखितयारनामा रजिस्टरी कराके दिया है। इनमें से ठाकुर मुन्नासिंह के नाम पूर्वोक्त ठिकाने वेदभाष्यादि पुस्तकों का मूल्य भेजें। वे ग्राहको के पास रसीद भेज देवेंगे। जो

---

१. लग भग यही पत्र मन्त्री आर्यसमाज शाहजहापुर को लिखा गया था। देखो पं० लेखरामकृत दयानन्दचरित पृ० ८३५, ८३६। शाहजहापुर से प्रकाशित होने वाले आर्यदर्पण (उर्दू) जून १८७९ के अन्तिम पृष्ठ पर इस पत्र का कुछ अंश छपा है। वह ८ मई मेरठ का है।

हमने उपरि मुद्रित पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित पत्र से छापा है।

यही पत्र मन्त्री आर्यसमाज अमृतसर को ११ मई १८७९ को लिखा गया था। देखो उर्दू मासिक पत्र विद्याप्रकाशक अगस्त १८७९।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत। सम्भवत मुं० समर्थदान के नाम मुम्बई को यह पत्र भेजा गया है।

कोई पुस्तक लिया चाहे वह भी मुन्नासिंहजी के नाम पत्र भेजे वा इस विषय में जो कुछ लिखना आवश्यक हो सो भी लिखे और जो अङ्क ५वें में पण्डित उमरावसिंहजी के नाम से नोटिस दिया था सो अव नही रहा । अव मैं सव ग्राहको से प्रीतिपूर्वक सूचना करता हू कि जैसी प्रीति से इस काम में पुस्तक लेके सहायक हुए हैं वैसे मूल्य भेजने में भी विलम्व न करें। क्योकि अव जो मुखतियार किये हैं वे जिस उपाय से मूल्य वसूल होगा वह २ उपाय करके शीघ्र वसूल करेंगे । और जो अक ५वें में नोटिस दिया था कि उधार वाले ग्राहकों के पास ६ अक नहीं भेजा जायगा सो भी नहीं रहा क्योकि जव तक ग्राहक अपनी खुशी से वध न करावेगा तव तक वरावर पहुचता रहेगा। जो ग्राहक वर्ष की आदि मे पहिले ही मूल्य भेज देंगे उनसे प्रत्येक वेद का वार्षिक मूल्य ४) रु० लिये जायेंगे और जो प्रथम न भेजेंगे उनसे एक २ वर्ष के ४।।) रु० के हिसाव से लिये जायेंगे और जो ग्राहक अपनी प्रसन्नता से नही भेजेगा उससे डाक महसूल भी लिया जायगा। और हमारे इस काम में कोई मनुष्य किसी प्रकार की वुराई की है वा करेगा, उसका भी प्रवध पूर्वोक्त मुखतियार लोग यथोचित करेंगे। जैसा कि वावू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने वहुत से रु० पुस्तको की वावत आये वे हमारे पास न भेजे न हिसाव ठीक २ दिया और सुना है कि विलायत को चले गये। जो नोटिस पहुंचने पर रुपये न भेज देंगे तो उन पर अव नालिश करनी पड़ेगी ।।[1]

हस्ताक्षर दयानद सरस्वती

---

[१०] पत्रांश[2] (११६) [१३४]

.. .

हम वमुकाम छलेसर परगना थल जिला अलीगढ़ मे क्याम पजीर हैं । जुलाव जो लिया था, उस से फारिग हो गये मगर कमज़ोरी किसी कदर है ।

---

१. वैशाख मास स० १९३६ । यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य अंक ६ पर छपा है। वेशाख का अंक देर में छपा था ।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७६८ पर उद्धृत ।

बाद ७, ८ दिन के मुकाम मुरादाबाद को जायेंगे । मुन्शी इद्रमन भी यहां आये हैं ॥

२३ जून १८७९[1]　　　　　　　　　　दयानन्द सरस्वती
　　　　　　　　　　　　　　　　　　छलेसर

चन्दा वेदभाष्य का मुन्नासिंह वसूल करेंगे ।

---

[११]　　　　　पत्रांश[2] (११६)　　　　　[१३९]

. . .

पाताल निवासियों के पत्र का मतलब यहां लिखना कठिन है, जब समझेंगे, तब जवाब लिखा जावेगा ।

हमारा शरीर अब कुछ अच्छा होता आता है ।

आषाढ़ सुदी ५ मंगलवार १९३६ ।[3]

　　　　　　　　　　　　　　　　　　दयानन्द सरस्वती
　　　　　　　　　　　　　　　　　　छलेसर

---

[१]　　　　　पत्र (११७)　　　　　[१३६]

॥ ओ३म् ॥

वेदभाष्य कार्यालय मारवाड़ी बाजार मुबादे बीका चाली मुंबई ता० ३० जून स० १८७९ ई०

पंडितवर श्यामजी कृष्णवर्म्मा आक्सफोर्ड

प्रियतम महाशय, नमस्ते !

निवेदन यह है कि पत्र आप के मारफत प्राणजीवनदास के पास आये। आपके आनन्द के समाचार सुन कर बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। आप बरिस्टर की परीक्षा देने के लिये कालेज में भरती हुए सो बड़ी आनन्दकारक बात हुई। मैं यह पत्र स्वामी

---

१. मिती आषाढ सुदी ४ सम्वत् १९३६ सोमवार ।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७६८ पर उद्धृत ।

३. २४ जून १८७९ ।

जी की आज्ञानुसार लिखता हूं ।' वावू हरिश्चन्द्र, अमेरिका वालो और केशव लाल निर्भयराम का हाल आप को मास्तर का पत्री इस पत्र मे मै डालता हू उससे मालूम होगा। उक्त वावू वहुत रुपये खा गया। इस लिये अमेरिकन के द्वारा उस पर नालिश करने का विचार है। आप तलाश करके लिखें कि वावू किस शहर में और किस ठिकाने पर है इसकी अति आवश्यकता है। लडन में है तो उसका एड्रेस भी लिख भेजें। मेरे नाम पर पत्र भेजना। मेरा ठिकाना छपे करा परचे मे भेजता हू सो विदित होगा। आप वहा के समाचार पत्रो मे छपा के ऐसा प्रगट कर दें कि वावू मुवई के आर्य्यसमाज का प्रधान था सो विलकुल समाज से निकाल दिया गया है और उस समाज के प्रधान राववहादुर गोपालराव हरि देशमुख नियत हुए हैं स्वामी जी के नाम के पत्र आदि इगलैण्ड से आते हैं वे अभी तक वावू के नाम से आते हैं अव आप इतना काम कृपा करके करना कि वहां के नियूज़ पेपरो में नोटिस दे दें कि अव पीछे जिस किसी को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास पत्र वा समाचारपत्र भेजना हो सो स्वामी जीके एजेन्ट मुनशी समर्थदान के द्वारा भेजें और मेरा नाम और पता और मुवई सव यथार्थ छाप देना यह काम वडी आवश्यकता का है नोटिस आदि छपाने के वावत कुछ दाम खर्च होगे सो आप के लिखने से यहा धनजी को दे दिये जायेंगे। आज वुकपोस्ट के द्वारा वेदभाष्य का अक ५।६ और पचमहायज्ञविधि १ और पचांग १ भेजता हूँ सो रसीद भेजना अक प्रोफेसर मोनियर विलियमस के हैं और पुस्तक और पचांग आप के लिये भेजे हैं सो उक्त प्रोफेसर से लेना। आप ने लिखा कि प्रोफेसर के पास अक नही पहुँचे सो आप के लिखने से विदित होगा कि कौनसे अक नही पहुँचे तव मैं अक भेज दूंगा। वेदभाष्य का मुल्य ५।६ में नोटिस में दिये हैं उनके अनुसार भेजवा देना। विलायत का महसूल जो अको पर लगता है उसका मूल्य भी भेजवाना प्रोफेसर मेक्समूलर और मोनियर विलियमस दोनो से मूल्य भेजवा देना और लिखना कि उन लोगो का स्वामी जी और वेदभाष्य के विपय मे क्या कहना है। स्वामी जी उनके भाष्य का खण्डन करते हैं उसके वावत वे क्या कहते हैं। अमेरिका वालों के विपय में वे क्या कहते हैं सो भी लिखना। वहा सस्कृत का कालेज है उसमें कैसे पुस्तक पढ़ाये जाते हैं सो लिखना। और कोई भाष्य का ग्राहक हो तो करना। वहां के लोगो से कहना कि तुम पढ़ नही सकते तो पुस्तकालयो में रखने के लिये ही ऐसा पुस्तक मगाना

१ इसी लिए यह पत्र इस सग्रह में छापा गया है।

चाहिये। सस्कृत विद्या का वहां कैसा प्रचार है और आर्य समाजो के वावत वे लोग क्या कहते हैं? मै जानता हूं कि आप का समय वहुमूल्य है परन्तु क्या करें उधर का हाल सुनने को चित्त वहुत चाहता है। आप जैसे भद्रपुरुप हमको हाल नहीं लिखेंगे तो और कौन लिखेगा। स्वामी जी वहुत प्रसन्न हैं। आपके भाई धनजी वहुत प्रसन्न हैं। धनजी का पत्र इसमे भेजता हू सो लेना। वावू के रहने का पता तलाश करके शीघ्र लिखना और मेरे योग्य काम हो सो सदैव लिखा करें। हम विचारते हैं कि वावू वहा आर्यसमाज और स्वामी जी के विरुद्ध कहता होगा सो आप लिखना जो वह पेपर में कुछ वुराई छापें तो आप उसका उत्तर यथार्थ देना जिस वात की खवर आप को न हो सो लिखना हम वरावर भेजेंगे। वावू आप से कुछ सहायता चाहे तो देने के योग्य नही है।

आपका शुभचिन्तक
समर्थदान प्रवन्धकर्त्ता वेदभाष्य
कार्यालय मुवई

---

[४] पत्र (११८) [१३७]

Moradabad,
The 13th July 1879.[1]

Dear Col Olcott,

Your letters of 10th June and 5th July duly to hand. Also of Madam H P Blavatsky of probably 30th June in Hindi.

You have acted very wisely in negotiating with the Governor of Bombay, and that British Government has no more suspicions regarding your stay in India and your movements to different places on sacred duty of preaching the Vedic religion

---

१ कटघर मुहल्ला, मुरादावाद निवासी ठाकुर शंकरसिंह उपनाम भूपजी श्री स्वामी जी के वडे भक्त थे। श्री स्वामी जी के अनेक पत्रों का वे ही अग्रेजी अनुवाद करते थे। यह पत्र भी उन्होंने ही अग्रेजी में अनूदित करके दिया होगा। सौभाग्यवश अग्रेजी प्रतिलिपि उनके घर सुरक्षित रही। १३ नवम्वर सन् १९२६ तदनुसार कार्तिक शुक्ला ८, शनिवार सवत् १९८३ को श्री भूपजी के पुत्र ठाकुर चैतन्यदेवजी से ला० मामराज यह पत्र लाये थे।

The Kunte brothers are fickle minded I knew I am glad to hear, you have begun reading "Nagari."

Your proposal for publishing a monthly journal is very sound I only add a little to the name you have already proposed My object is that the name will convey to the subscribers that joint exertions are made in the paper—this may perhaps cause a great influx of subscribers Call the journal by name "The Theosophist or Aryaprakash"

The date of the foundation of Arya Samaj you can get from Bombay Samaj The object of this Samaj is that all mankind

(1) "give up bad ideas, deeds and habits"

(2) and take hold of good ideas, deeds and habits" Guna (गुण) Karma (कर्म्म) and Svabhava (स्वभाव) through the ancient (Sanatana) (सनातन) (1) Veda Vidya (2) God-creation (ईश्वरकृतसृष्टि).

(3) The question with regard to my life, I should say that at present, I am not quite prepared to undertake so long a business I shall give you a brief account of me after sometime I shall do this work myself or have it done directly under my own eye Certificate will follow.

Yours truly,
(Sd) ———

---

[१] पत्र (१२१) [१३८]

Dear M Blavatsky,[1]

(1) After death man's or any one's "Atma" lives in air "Vayu" according to the sins and virtues of the departed

---

१ यह पत्र मुरादाबाद से मुंबई को भेजा गया। इस पत्र की प्राप्ति वैसे ही हुई है, जैसे इससे पूर्व पत्र की। पूर्ण संख्या १३८ के ३१ जुलाई ७९ के पत्र में इस पत्रान्तर्गत वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद के विषय का उल्लेख है।

soul God allows the transmigration or a new life When there is small proportion of sins and numerous good deeds, then the soul gets a body of highly educated man or "Deva" in proportion to good deeds, and after leaving the Vidvan body, ascends to Moksha or becomes free of sorrow and troubles When sins and virtues are equal, then soul gets a man's body When Sins increase and Virtues decrease the soul is sent to lower creation and vegetable world

The "Jiva" or soul suffers for the increased quantity of sins in the bodies of lower animals or in form of *trees* plants, &c, and after a lapse of time when sins and virtues again kick the beam equally, then the soul again gets a human body

In the same manner "Vidvan" after the enjoyment of blessings in Deva-life, becomes man again, when the Virtues and Sins are in equal proportion

Sins and Virtues are of various stages and degrees.

The inferior or superior body is given according to their proportion both in the brute creation and human being as well as of Deva

The *Mukta Jiva* enjoys eternal happiness till Mahakalpa (36,000 times creation and destruction of the world) and comes into the human body again and transmigration goes on again according to good and bad deeds

(2) The first rishis were Aditya, Vayu, Agni, and Angira

The Omnipresent (Sarva Vyapka), God inspired the sacred Vedas into their Atma "Nothing like a Heavenly book coming from Heaven and sent by God thro' his Messanger." This is detailed at length in my Ved Bhashya from the very beginning (Vide Anka 1, &c,) You can have it

read to you All such things are discussed at length in my books both in Sanskrit and Bhasha, which see

(3) The Verbal prayer as well as practice is to teach others but for ones own good it should be done internally.

(4) (*a*) In order to obtain the advantage of Diksha and yoga, company of the learned (Vidvano ka sang), (4) Atma-ki-pavitrata, (purification of soul) and (5) "Pratyakshadi pramana" (The essence and reality of the Universe) one is to practice

The practitioners are allowed to embrace the deeds which are to help in the matter ; the contrary to be rejected—(see Upasanaprakarna in Veda Bhumika 9 Anka)

(*b*) The soul in human body can perform wonders. By knowing the properties and formation of all the things in the universe (between God and Bhumi (earth)—a human being can acquire power of seeing, hearing, &c , far distant objects which generally is unable to attend to

You can write articles on any subject , but first consult my books and write cautiously in their light The contrary or the offspring of your own brain will have to be answered by you if criticized

Yours———

(Sd) ———

P. S. I received the other day under cover of Col. Olcott's letter 9th July—letters from .—

(1) Peter Davidson Scotland (13th June 1879)

I shall send answer to Peter Davidson in English as you say. The others will be replied in Hindi

In these matters I shall take steps according to your suggestions With regard to your enquiry of translating

Veda-Bhashya into English and publish it into your journal, I am of opinion that —

(1) It is an uphill work to translate faithfully one language into another—and if at all possible the translator should be equally learned in both languages My Bhasha version is not like common vernacular, word for word of Sanskrit is translated in Bhasha A most competent man both in English and Sanskrit is required to translate my Veda-Bhashya—and that even not quite to the mark.

(2) Unless I hear the gist of translation thus made in English—myself, I cannot be satisfied of its accuracy and I have not time enough to do this

If you can manage to keep the translator with me it is possible that at leisure moments he can read it over to me and have it rectified where necessary - and where he might be unable to understand, he can ask its explanation from me.

(3) Supposing all these arrangements can be successfuly made—the greatest drawback then is that the Aryan (English student) community of India will, on the appearance of English translation of my Veda-Bhashya-give up the Sanskrit and Hindi studies which they are so vehemently pursuing now a days in order to enable themselves to read Veda-Bhashya, and which is the chief object of mine, so of course English translation will be greatly serviceable to European scholars only

(4) This will lead to the diminution of the number of subscriber's of Hindi Edition of Veda-Bhashya and cause a great deterioration in its publication This will result very probably in the stoppage of the Hindi version altogether The treasure whence you wish to take will exhaust The final result will be the total destruction of both Hindi

and [Sanskrit and] English will thus be a favourable issue ? It is not my desire to prohibit you from translating, as without the English translation the European nations cannot catch the true light But first consider the above points

First of all the four Vedas should be expeditely translated I have estimated that it will take 10 years for me at the present rate of translation of all the Vedas It is most important to finish them

Please answer all the points

Your———

---

[१२] पत्रांश[1] (१२०) [१३९]

• •

अमरीका वालो से हमारा नमस्ते कह देना ।

वेदभाष्य के अंग्रेजी करने के विषय मे अमरीका वालो के पत्र का उत्तर हमने भेज दिया है ।[2] इस का उत्तर अभी तक हमारे पास नही पहुचा । उन के पास जाओ तो प्रसग से कह देना कि अब तक हमारा शरीर अच्छा नही था । इस लिये विलायत की चिट्ठियों का उत्तर नही भेजा है । अब कुछ शरीर अच्छा है । अब भेजेंगे । वहा मुम्बई मे इस समय हम नही जा सकते किन्तु पटना से दानापुर को जावेंगे ।

३१ जुलाई ७९

मुरादाबाद

———आज मुरादाबाद से बदायू जाते हैं ।

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत ।

२. देखो इस से पहला अंग्रेजी पत्र ।

[१३] पत्र (१२१) [१४०]

[मैनेजर प्रेस के नाम·· · ··][1]

·· ·· · ··

हम मुरादाबाद से चलकर बदायू ठहरे हैं। यहां से भाद्रपद कृष्णा १२ गुरुवार १४ अगस्त ७९ को बरेली पहुचेंगे । अब तक हमारा शरीर काम के योग्य ठीक २ नहीं हुआ है ।

दयानन्द सरस्वती
बदायू

---

[१४] पत्रांश[2] (१२२) [१४१]

·· ·

हमारा शरीर बहुत दिनो से बीमार है। अति दुर्बल हो गया है। सो तुम जा कर अमरीका वालों से कहना कि और कुछ न समझें। हमारा शरीर दो दिन से कुछ अच्छा है। जो ऐसा ही रहेगा तो हम उन के पत्रो का उत्तर शीघ्र भेजेंगे। और अपने जन्म से लेकर दिन चर्या अभी कुछ संक्षेप से देवनागरी और अंग्रेजी मे करवा कर हम उन के पास भेजदेंगे। और विलायत के पत्रो का उत्तर भी शीघ्र भेजेंगे। अमरीका वाले लोग समाचार पत्र छापेंगे सो उनको भूमिका आदि से बातें समझा देना।

२१ अगस्त ७९

दयानन्द सरस्वती
बरेली

---

[१५] पत्र (१२३) [१४२]

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम][3]

·· · ··

करनैल साहब ने हमको लिखा था कि आप अपना जन्मचरित्र लिख दीजिये प्रथम तो हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा इस कारण से नहीं भेज सके।

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४४० से उद्धृत ।
मैनेजर अर्थात् मुं० समर्थदान ।

२. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत ।

३ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४४१ से उद्धृत ।
मैनेजर अर्थात् प्रबन्धकर्ता मुशी समर्थदान ।

अब दो चार दिन से कुछ अच्छा है सो आज तुम्हारे इस पत्र के साथ कुछ थोड़ा सा जन्मचरित्र लिख कर भेजते हैं। सो तुम जिस समय पहुंचे उस समय उनके पास पहुंचाना। क्योकि उनका समाचार मे छापने का समय आ गया है। अलकाट साहब को यह वात भी हमारी ओर से सुना देना कि हमारा यह अभिप्राय नही कि इस समाचार का नाम केवल आर्यप्रकाश वा थ्योसोफिस्ट हो किन्तु दोनों को मिला कर रक्खा जावे। और यह भी कह देना कि आपने जो चिट्ठी के साथ दो पत्र विलायत के भेजे सो पहुच गये। हमारा शरीर दस्तो की वीमारी से वहुत दुर्वल हो गया था। अव आनन्द है।

२७ अगस्त सन् १८७९

दयानन्द सरस्वती
वरेली

---

[१९] पत्र (१२४) [१४३)

My Dear friend,

My friend M Indermuni requires the address of M. Hurprasad, the copy-navis. I hope you will send it to him as soon as possible.[1]

Yours ever
Swamee Diyanund Sarusswatti

[भाषानुवाद]

मेरे प्रिय मित्र!

मेरे मित्र मुन्शी इन्द्रमन, म० हरप्रसाद कापी-नवीस का पता चाहते हैं। मै आशा करता हूं कि आप उन्हें यथासम्भव यह शीघ्र भेज देंगे।

आप का
स्वामी दयानन्द सरस्वती

रामाधार वाजपेई जी आनन्दित रहो![1]

मुशी जी ने जो पत्र तुम्हारे पास भेजा उस का उत्तर क्यो नही दिया जो २ पूछे वा मगवावे उसी समय उत्तर भेज दिया करो। यहा

---

१ ये दोनों लेख एक ही पत्र पर हैं।

व्याख्यान खूब हो रहे हैं। पादरी स्काट साहब से तीन दिन[1] भर बहस हुई उनकी विरुद्ध बातें सब कट गई सो जब छपेगा तब तुम्हारे पास भी भेजा जायगा। और यहा से चार पाच दिन के पीछे शाजहापुर आकर वहा कुछ ठहर कर तुमको लिखेंगे। जैसा मकान हमारे रहने के लिये किया है वैसा ही व्याख्यान के लिये भी एक मकान शहर मे कर रक्खो क्योकि हमारा ठहरना अब थोडा २ ही होगा।

ता० २९ अगस्त।[2] { दयानन्द सरस्वती }

---

[१] पत्र (१२९) [१४४)

ओम् नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय[3]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान् प्रतीदमाज्ञापनम् ।[4]

क्या आप लोग मूर्तिपूजा आदि वेदविरुद्ध काम करने से वेद विमुख होकर वेदप्रतिपादित एक अद्वितीय ईश्वरपूजा और सद्धर्मादि से उलटा चल और चला कर अपना मतलब (प्रयोजन) सिद्ध नही करते हैं।

और क्या मै कोई धर्म अर्थ काम मोक्ष सम्बन्धी कर्म वेदविरुद्ध कभी करता और कराता हूं।

जो आप को शास्त्रार्थ करने की सच्ची इच्छा होती तो सभ्यता वा विनयपूर्वक शास्त्रार्थ करने का निषेध मैंने कब किया था और अब भी नही करता।

परन्तु जो शास्त्रार्थ को आप की सच्ची इच्छा होती तो जहा मैं ठहरा था उसी स्थान मे आकर ठहरते।

अन्य स्थान मे ठहरने से विदित होता है कि आप की इच्छा शास्त्रार्थ करने की नही है। किन्तु कहने ही मात्र है और अब आगे जैसी होगी वैसो विदित भी हो जायगी।

---

१ यह प्रसिद्ध शास्त्रार्थ २५, २६, २७ अगस्त १८७९ को बरेली म हुआ।

२ सन् १८७९। बरेली से लिखा गया।

मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के सग्रह में सुरक्षित है।

३ मासिकपत्र आर्यदर्पण, शाहजहापुर, सितम्बर १८७९, पृ० १४-१६, २६१-६२ पर उद्धृत।

प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४६९-७१ पर आर्यदर्पण से ही उद्धृत किया गया है। परन्तु कई पाठ अशुद्ध हैं। हमारा पाठ आर्यदर्पण के अनुकूल है।

४ प० लेखरामकृत जीवनचरित में यह पक्ति लुप्त है।

हा जहा मूर्ख और असभ्य पुरुषों का हल्ला गुल्ला होता है, वहा मै खड़ा भी नही होता। तुम ने जो यह लिखा कि मै जहा २ जाता हू वहा २ से तुम किनारा काट कर चले जाते हो, यह बात तुम्हारी अत्यन्त झूठ है।

तुम से मुझ को किञ्चिन्मात्र भी भय न कभी हुआ था, न है और न होगा। क्योकि आप मे ऐसे गुण ही नही हैं जो भयप्रद हो।

बासबरेली मे भी तुम्हारी उलटी काररवाई अर्थात् दगा बखेडा करने वाले मनुष्यो के सग लाने के कारण खजानची लक्ष्मी नारायण आदि ने अपने बंगला मे तुमको आने से रोक दिया था। यह तुम को तुम्हारे ही कर्म्मों का फल है। सिवाय बरेली और शाहजहापुर के मैंने कभी आप का आना सुना भी नही। अब आप और मै दोनो शाहजहापुर मे हैं जो इस समागम से भागे सो झूठा। अब आप को जितना शास्त्रार्थ करने का बल हो कर लीजिये। परन्तु विदित रखना चाहिये सब आप्तो की यही रीति है कि जो सर्वदा सत्य को जताना है और झूठ को हराना है। इस को मत भूलियेगा। मै अपनी विद्या और बुद्धि के अनुसार निश्चित जानता हू कि मै और पुरुषो को जहा तक शक्य है, वेदोक्त सनातन धर्म में चलता और चलाता हू। इस मे जो तुम को वेदविरुद्धपने का भ्रम हुआ, सो जो शास्त्रार्थ होगा, तो तुम वेद-विरुद्ध चलते हो या मैं, निश्चय हो जायगा। हा मथुरा मे श्री स्वामी जीके पास बहुत विद्यार्थी जाते थे, आप भी कभी गये होगे परन्तु जो आप स्वामी जी के शिष्य होते तो उन के उपदेश से विरुद्ध आचरण क्यो करते और ज्येष्ठ कनिष्ठ उत्तम गुण कर्म्म और नीच गुण कर्म्मों से ही होते हैं। इस शास्त्रार्थ मे निम्नलिखित नियम उभयपक्ष वालो को मानने होगे।

१ इस शास्त्रार्थ मे चारो वेद मध्यस्थ हैं अर्थात् वेदविरुद्ध झूठा और वेदानुकूल सच्चा माना जायगा।

२ इस शास्त्रार्थ मे जो वेद के किसी मन्त्रपद के अर्थ करने मे विप्रतिपत्ति[1] हो तो जिस के अर्थ पर ब्रह्मा जी से ले कर जैमिनि मुनि पर्यन्त उक्त सनातन मान्य ग्रन्थो का प्रमाण साक्षी मे मिलेंगे उन का अर्थ सत्य माना जायगा, दूसरे का नही। और वेदानुकूलता श्रेष्ठ कर्मानुसार प्रत्यक्षादि प्रमाण, लक्षण लक्षित, आप्तानुचरण अविरुद्ध और अपने आत्मा की विद्या और पवित्रता इन पाच कसौटियो से परीक्षा मे जो २ सच्चा वा झूठा ठहरेगा सो २ वैसा ही माना जायगा, अन्यथा नही।

३ एक एक की ओर से सभ्य धार्मिक विद्वान् चतुर पचास पचास पुरुष शास्त्रार्थ मे सभासद होना चाहियें।

४ उभय पक्ष के १०० मनुष्यो को प्रथम से सभा में प्रवेश करने के लिये टिकट मिल जायेंगे। वे ही सभा मे आ सकेंगे, अन्य नही।

---

१ आर्यदर्पण-विप्रतिपक्त। जीवनचरित-विप्रतिपक्ष।

५ जो जिस का पक्ष होगा वही अपने सप्रमाण पक्ष को लिखा कर सुना समझा या दूसरे से सुना कर समझाया करेगा।

६. उभय पक्ष वालों को अपने अपने समय मे एक एक अक्षर प्रश्न या उत्तर लिखवा कर आगे चलना होगा, अन्यथा नही।

७. इस शास्त्रार्थ मे उभय पक्ष वाले जो २ कहेंगे, उस २ को तीन लेखक लिखते जावेंगे। अपने २ पक्ष के लेख लिखवा कर अंत मे तीनो पर स्वहस्ताक्षर कराके एक प्रति मुझ को दूसरी आप को और तीसरी सरकार में रहेगी कि जिस से कभी कोई घटा बढ़ा न सके।

८. अपने पत्र मे जो आपने दस २ मिनट लिखे सो स्वीकार करता हूं परन्तु उत्तर देने के लिये दस मिनट और प्रश्न करने के लिये दो मिनट होना योग्य है।

९ शास्त्रार्थ विषय मे मुझ और आप को ही बोलने लिखवाने सुनवाने का अधिकार होगा। अन्य को नही। अन्य सभासद तो ध्यान देकर सुनते रहेगे।

१०. जहां खजानची जी के बगला मे मैं ठहरा हू, यह ही शास्त्रार्थ के लिये निश्चित रहना चाहिये। क्योकि यह न मेरा स्थान है न आप का।

११. इस शास्त्रार्थ मे वेद आदि सनातन शास्त्रों की रीति से पाषाणादि मूर्तिपूजा और पुराणादि पक्षो का खण्डन विषय मेरा और आपका मण्डन विषय रहेगा।

१२. कुवचन, हठ, दुराग्रह, क्रोध, पक्षपात, भय, शङ्का, लज्जा आदि को छोड़ कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग उभयपक्ष वालों को अवश्य होना चाहिये। क्योकि आप्तो का यह ही सिद्धान्त है।

१३. जब तक किसी विषय का खण्डन या मण्डन पूरा [न] हो तब तक शास्त्रार्थ बन्द न होगा। किन्तु प्रतिदिन होता ही जायगा। क्योकि आरब्ध कर्म्मों को बीच में निष्फल न छोड़ कर सिद्धान्त पर्यन्त पहुंचा देना विद्वानों का मुख्य सिद्धान्त है और इसी रीति से बहुत दिनो वा महीनो तक शास्त्रार्थ होने से आप के शास्त्रार्थ करने की उत्सुकता भी परिपूर्ण होगी, अन्यथा नही।

१४ उभयपक्ष वालो को सरकार से पोलीस आदि का प्रबन्ध अवश्य करना होगा कि जिस से कोई असभ्य मनुष्य शास्त्रार्थ मे विघ्न न कर सके।

१५ इस शास्त्रार्थ का समय जिस दिन से आरम्भ होगा उस दिन से सन्ध्या के ५ बजे से ८ बजे तक प्रतिदिन होना चाहिये।

१६ एक दिन पहले मैं बोलूंगा, तो दूसरे दिन आप बोलेंगे और जो पहले बोलेगा वही उस दिन अन्त में भी बोलेगा। और सब सुनने वाले वा जब छप

कर सब सज्जन लोग बाचेंगे तब अपनी २ विद्या और बुद्धि के अनुसार सच्चा वा झूठा को जान कर झूठ को छोड़ कर सत्य का ग्रहण करलेंगे। आप की चिट्ठी कल दोपहर समय आई। इस से आज उत्तर लिखा गया। जो प्रातःकाल आती तो कल ही लिख दिया होता। आप के पत्र मे सस्कृत और भाषा में अनेक प्रकार से बहुत अशुद्ध है। सो जब मिलोगे तब समझा दिया जायगा।

आश्विन कृष्णा ११ शुक्रवार[1] १९३६।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (१२६) [१४९]

ओम् नम सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय[3]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान्प्रतीदम्प्रख्यापनम्।

सवत् १९३६ आश्विन कृष्ण १२, शनिवार का लिखा तुम्हारा पत्र आश्विन कृष्ण १३ रविवार को दिन के ११½ बजे मेरे पास पहुचा। तत्रस्थ लेखाभिप्राय सब प्रकट हुआ। मुझ को अति निश्चय है कि तुम लोग शास्त्रों का विचार करना कराना तो तब जानोगे कि जब तुम्हारे अनेक जन्मों के पुण्य उदित होगे परन्तु जो मैं तुम्हारे निश्चय किये स्थानों में बातचीत करने को आऊ तो तुमको हल्ला गुल्ला करने को अवसर अच्छा मिल जावे। अब जो तुम को पूर्वोक्त ५० धार्मिक बुद्धिमान् रईसो के साथ यहां आकर कुछ कहना सुनना हो तो मैं आने से रोकता नहीं। आगे तुम्हारी प्रसन्नता।

दयानन्द सरस्वती

स० १९३६ आश्विन कृष्ण १३, रविवार।

---

१ आर्यदर्पण में शुम्वार छपा है। प्रतीत होता है कि उर्दू के लेखक ने शुक्र को शुम्वार लिखा है। जीवनचरित में सोमवार छपा है। चाहिए वस्तुत शुक्रवार।

२ १२ सितम्बर १८७९।

३ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४७७ पर उद्धृत। १४ सितम्बर १८७९। यह पत्र व्यवहार शाहजहापुर में हुआ। अगद शास्त्री के पत्र भी जीवनचरित में छपे हैं।

आर्यदर्पण पृ० २७२, २७३ सितम्बर १८७९।

[१६] पत्रांश (१२७)[1] [१४६]

... .

अमरीका वालो के पास हम एक पत्र भेजेंगे तो उस में सब बाते लिखेंगे। आबू मे कोई विष खाता था, यह बात हमने सुनी हुई कही थी। ठीक नहीं समझते। इस लिये जन्मचरित्र मे नहीं लिखी और एक साधु समुद्र पर चलता था, ऐसी असभव बातें मैं ने कदापि न लिखी होगी।

दयानन्द सरस्वती

१७ सितम्बर ७९ शाहजहापुर

---

[१७] पत्रांश (१२८)[2] [१४७]

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम]

कुवर मुन्नासिंह छलेसर वाले का अब चदा वसूल करने का कुछ भरोसा नहीं। इस लिये तुमको चाहिये कि जहा तक बने चदा वसूल करो। आठ दिन पीछे लखनऊ जावेंगे। अब हमारा शरीर कुछ अच्छा है।

दयानन्द सरस्वती

१७ सितम्बर ७९ शाहजहापुर

---

[१८] (१२९)[3] [१४८]

. . . .

हम १८ सितम्बर सन् [१८]७९ को सायकाल को शाहजहापुर से लखनऊ आये और ता० २४ सितम्बर सन् [१८]७९ बुधवार के दिन प्रात.काल कानपुर को जायेंगे और वहा से उसी दिन फर्रुखाबाद को जावेंगे और वहां एक सप्ताह या दस दिन ठहर कर फिर कानपुर आवेंगे और फिर यहां दो चार दिन

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत ।

२ पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४७९ मे उद्धृत ।

पत्र पूर्णसख्या १४६ और १४७ एक ही पत्र के अश प्रतीत होते है।

३ प० लेखरामकृत जीववनचरित पृ० ४८० से उद्धृत। यह पत्र दानापुर के बाबू माधोलाल को लिखा गया होगा। मूलपत्र प० लेखरामजी के सग्रह के साथ नष्ट हो गया प्रतीत होता है।

ठहर कर प्रयाग मिर्जापुर काशी होते हुए कार्तिक पूर्णमासी तक दानापुर पहुचेगें और अब हमारा शरीर पहले से अच्छा है।

दयानन्द सरस्वती

२१ सितम्बर १८७९, लखनऊ

---

[१९] पत्रांश (१३०)[1] [१४९]

• •

छापाखाना के वास्ते एक हजार फरुखाबाद से हुआ है। अब अपना छापाखाना स्वतन्त्र कराया जावेगा। तुम भी मुम्बई मे इसके वास्ते चदा करो। हमारा विचार मार्गशीर्ष तक अपना छापाखाना कर लेने का है।

दयानन्द सरस्वती

कानपुर ११ अक्टूबर १८७९

आश्विनवदी ११ शनि०[2] अर्थात् १६ अक्टूबर को यहा से प्रयाग को जावेंगे।[3]

---

[२०] पत्रांश (१३१)[4] [१५०]

• •

और कर्नल अलकाट साहब के पत्र आये। उसका उत्तर पीछे से तुमको नागरी में भेजेंगे। उनकी नकल अग्रेजी मे करके दे देना तो हम सीधा भेज दिया करें।

दयानन्द सरस्वती

११ अक्तूबर ७९
कानपुर

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४९२ पर उद्धृत। यह पत्र सभवत मुन्शी समर्थदान को लिखा गया है। अगला पत्राश भी इसी में सम्मिलित होगा।

२ शनिवार।

३ १६ अक्टूबर को आश्विन(२) वदी ११ नहीं पड़ती। प्रत्युत आश्विन द्वितीय शुक्ला १ पडती है। वीरवार। प० लेखराम जी के लेखक ने ११ अक्टूबर को ११ आश्विन समझ कर भूल की है।

४ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत।

[१९] पत्र (१३२) [१९१]

आर्य्यसमाज के मन्त्री वाबू माधोलाल आनन्दित रहो !

तुम्हारी कई चिट्ठियां आईं। हम सफर मे रहे, इस लिये चिट्ठी का जवाब नही भेज सके। विज्ञापन तुम ने छपवा लेने। नमूना भेजते हैं और हम १६ अक्तूवर को प्रयाग जायेंग तव तुमको और चिट्ठी भेजेंगे। अव हम वनारस नही जावेंगे। मिरज़ापुर से दानापुर सीधे चले जायेंगे. रास्ते मे कहीं न ठहरेंगे। हमारे पास कोई आदमी आप भेजें। जव हम दूसरी चिट्ठी लिखें तव मिरजापुर मे भेजना। मुरादावाद से विज्ञापन वावत नवीन पुस्तक छपवाने के आप के पास गया होगा, उसके मुताविक चन्दा करने का वन्दोवस्त कर रहे होंगे। फर्रुखावाद से एक हजार रुपया हो गये होंगे। यह चन्दा हम को वनारस मे मार्गशीर्ष मे जाना होगा सो समझ लेना। हम को दानापुर से लौट कर आरा अथवा जहा कही ठहरना होगा वहां ठहरेंगे। मार्गशीर्ष तक वनारस लौट कर आ जावेंगे। और विज्ञापन मे स्थान की जगह छोड़ दी है, सो तुम जो जगह निश्चित हो, लिख कर छपवा देना और तारीख की जगह छोड देना। जव हम आयेंगे लिखवायेंगे। हमारे रहने का मकान शहर से एक मील अलग रहे इस से दूर न हो। व्याख्यान का मकान शहर मे हो। और रहने के मकान की आवोहवा अच्छी देख लेनी। और हरिहर क्षेत्र के मेला में जायेंगे। वहाँ का भी वन्दोवस्त, मकान, डेरा, तम्वू वगैरा का कर लेना अव हम चिट्ठी मिरजापुर से लिखेंगे। और अगले महीना मे वनारस में आकर छापाखाना अपना वनवाने की तजवीज करेंगे। सो चन्दा अपने हा जल्दी करना और अव वनारस में छः महीने रहने का वन्दोवस्त हुआ है, जिस मे वेदभाष्य और वाकी पुस्तक जल्दी छप कर तय्यार हो जावेंगे, ऐसा विचार है।

दयानन्द सरस्वती

मुकाम कानपुर, १२ अक्तूवर ७९ ई० ।[1]

---

१. जो पत्र हमें दानापुर से प्राप्त हुए है उनमें यह पत्र नहीं है, परन्तु पण्डित लेखरामजी रचित बृहद् जीवनचरित के पृ० ४९६ पर यह मिलता है। हम ने वहीं से लेकर इसे शब्दशः देवनागरी लिपी में कर दिया है।

[११] (विज्ञापन पत्रम्)[1] [१५२]

ठाकुर मुकुन्दसिंह वा मुन्नासिंह ग्राम मुकद्दमा के वास्ते मुख्तार हैं । परन्तु पुस्तकें वेचने और रुपया लेने के मुख्तार ये हैं मुन्शी समर्थदान मुम्बई वाले । मुंशी इन्द्रमणि जी प्रधान आर्य्यसमाज मुरादाबाद । वख्तावरसिंह मन्त्री आर्यसमाज शाहजहापुर, लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ । लाला साईंदास मन्त्री आर्यसमाज लाहौर । लाला बलदेव दास वा डा० विहारीलाल मन्त्री आर्य समाज गुरुदासपुर । चौधरी लक्ष्मणदास[2] सभासद आर्यसमाज अमृतसर । बाबू रामाधार वाजपेयी[3] तार आफिस रेलवे लखनऊ । प० सुन्दरलाल राम नारायण पोस्ट मास्टर जनरल आफिस प्रयाग । बाबू माधोलाल मन्त्री आर्यसमाज दानापुर । इन सब को चन्दा वेदभाष्य के उगराहने का अधिकार है । और जिसके पास जितना चन्दा होवे, जैसराज गोटेराम साहूकार फरुखाबाद के पास रुपया भेज कर रसीद मगा लें । और मु० समर्थदान मुम्बई वाले और मु० इन्द्रमणि जी मुरादाबादी के पास मेरे बनाए सब पुस्तक मिलेंगे ।

दयानन्द सरस्वती

१४ अक्तूबर १८७९

कानपुर

---

[१६] पत्र (१३३) [१५३]

बाबू माधोलालजी आनन्दित रहो ![4]

विदित हो कि १९३६ द्वि० आश्विन सुदी ९ गुरुवार ता० २३ अक्टूबर को हम प्रयाग से मिरजापुर आकर सेठ रामरतन के बाग में ठहरे हैं अब तुम लोगों

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४९२ पर उद्धृत ।

२ ये ही चौधरी लक्ष्मणदास थे जो पीछे लक्ष्मणानन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए । इन्होंने श्री स्वामी जी से योग की अनेक क्रियाएं सीखी थीं । इन्हीं का ग्रन्थ ध्यानयोग-प्रकाश योगशिक्षा के लिए अपूर्व है । हमने उन्हीं की कृपा से सन् १९१२ में अमृतसर में जप की विधि सीखी और सत्यार्थप्रकाश के कई प्रकरण पढे । ऋषि दयानन्द सरस्वती का महत्त्व हमने उन्हीं से समझा था ।

३. जीवनचरित में अर्जुन आधार नाम छपा है, परन्तु शुद्ध नहीं । रामाधार जी के नाम के अनेक पत्र इस सग्रह में छापे गए है ।

४ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४९६, ४९७ पर उदधृत । परन्तु हमने यह पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित मूलपत्र से ही छापा है ।

का क्या विचार है। हमारा शरीर बीमार है परन्तु तुम्हारे यहां आने को लिख चुके हैं। आना तो होगा ही व्याख्यान होना, न होना वहा आकर मालूम होगा।[1] और तुम लोगों ने लिखा था कि हमारे सभासद आप को लेने को आवेंगे सो जो आने का विचार हो तो ६ छः दिन के विच यहा मिरजापुर मे पूर्वोक्त पते पर आजावें। क्योकि कार्तिक वदि प्रतिपदा ता० ३० अक्टूवर[2] को हम यहा से चल कर डुमराव वा आरा अथवा पटना मे पहुंचेंगे। इस मे सन्देह नही।

सब से मेरा नमस्ते।

दयानन्द सरस्वती।

---

[२१] पत्रांश (१३४)[3] [१५४]

[मुशी समर्थदान • •]

कर्नल अलकाट साहव को मेरे शरीर का हाल विदित नहीं है कि दस मास तक तो दस्तों का रोग रहा। पश्चात् एक वड़ा ज्वर आने लगा सो तीन वारी आकर छूट गया है अब दोनों रोग नही हैं परन्तु विचार करो कि इतने रोग के पश्चात निर्बलता और स्वस्थता कितनी हो सकती है। इस मे भी हम को कितने काम आवश्यक हैं जिन से दम भर अवकाश नहीं मिल सकता जो एक जन्मचरित्र के लिखने लिखवाने का काम ही होता, तो एक वार लिख लिखवाके भेज दिया होता।

दयानन्द सरस्वती

६ नवम्बर ७९

दानापुर

---

१ व्याख्यान न होगा तो तुम लोगों से वातचीत तो अवश्य होगी।

जीवनचरित में इतना लेख अधिक है। सभवत. प० लेखरामजी ने यह पत्र वैदिक थन्त्रालय के सग्रह के पत्र से प्रतिलिपि किया हो। और उस पत्र से प्रतिलिपि होकर दानापुर को जाने वाले पत्र में यह पक्ति छूट गई होगी।

२. २३ और २९ अक्ट्रवर १८७९ के मध्य की किसी तिथी को यह पत्र लिखा गया होगा। सभवत: २५ अकतूवर को लिखा गया।

३. मैनेजर वेदभाष्य के नाम। प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७, ३८ पर उद्धृत। अगला पत्र भी इसी पत्र का एक अश प्रतीत होता है।

[२२] पत्रांश (१३५)[1] [१५५]

[मैनेजर प्रेस के नाम]

आजकल दानापुर में प्रतिदिन व्याख्यान होते हैं आज पाचवा दिन है। यहां का समाज और समाज के पुरुष बहुत उत्तम हैं । समाज का प्रवन्ध भी बहुत उत्तम किया है। यहा से अमावस के पश्चात् हरिहरक्षेत्र के मेले मे जाना होगा। वहां से कार्तिकी पूर्णमासी के अनन्तर काशी में जाकर छापेखाने का प्रवन्ध किया जावेगा और वहां आधे चैत या अन्त चैत तक ठहरेंगे।

दयानन्द सरस्वती

६ नवम्बर १८७९ दानापुर

---

[२३] पत्रांश (१३६)[2] [१५६]

.. ..

शोक की वात है कि आर्यपुरुष ठाकुर मुन्नासिंह का शरीर छूट गया।

दयानन्द सरस्वती

२० नवम्वर १८७९ काशी

---

[१७] पत्र (१३७) [१५७]

वावू माधोलाल जी आनन्दित रहो।

हम वहा से चल के आनन्दपूर्वक काशी में पहुच कर महाराजे विज[य]नगर के आनन्द वाग मे ठहरे हैं यह वाग बहुत अच्छा है । हवा और जल यहा का बहुत अच्छा है मकान भी इस वाग में बहुत और उत्तम हैं यह वात प्रसिद्ध है। इसमे ठहरने के लिये लाजरस साहेव ने प्रवन्ध कर रक्खा था चिट्ठी पहुचने पर। जैसा यह वाग है वैसा काशी मे दूसरा नही

---

१ पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४९९ पर उद्धृत।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७६८ पर उद्धृत।

है इसके आगे जो २ अवश्य लिखने योग्य समाचार हो वे २ लिखे जायेंग आप लोग भी लिखते रहना । सब से हमारा नमस्ते कहना ॥

संं० १९३६ मि० का० सद० ८ शुक्रवार ।[1]

दयानन्द सरस्वती
काशी ।

---

[२०] पत्र (१३८) [१५८]

Benares
The 24th Nov. 1879

Babu Rámádhár, Bajpaye,

May you prosper ! I returned from Dánápore and have lodged now-a-days in the garden of His late Highness the Maharajah of Vizianagram, at Benares I will write for the books about which you told me, to Bombay and Morádábád. You will try your best to treat in a friendly manner the son of Munshi Indra-Man, named Narayan Dás, who wishes to go to Lucknow from Morádá-bad in the search of a copy-writer on a printed lithographic paper, you will procure for him such a writer if you can find one,—for such a writer is urgently required [2]

दयानन्द सरस्वती
काशी ॥

[भाषानुवाद]

बनारस
२४ नवं० १८७९

बाबू रामाधार बाजपेई आनन्द रहो !

मैं दानापुर से लौटा हूं और बनारस मे स्वर्गवासी श्री महाराजे विजयनगर के बाग में आजकल ठहरा हूं । जिन पुस्तको के लिये आप ने मुझे कहा था, उन के

१. २१ नवम्बर १८७९ । मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है । इसकी प्रतिकृति श्रीमद्दयानन्द चित्रावली में छपी है ।

२. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है ।

लिये मैं मुम्बई और मुरादाबाद को लिखूगा । मुन्शी इन्द्रमन के पुत्र नारायणदास को मित्रवत् रखने में आप अपना पूर्ण यत्न करेंगे । वह मुरादाबाद से छपे हुए लिथो कागज पर कापी लिखने वाले की खोज में लखनऊ जाना चाहता है । यदि ढूढ सकें तो उस के लिये ऐसा लेखक निकालें, क्योंकि ऐसे लेखक की अत्यन्तावश्यकता है ।

(दयानन्द सरस्वती)

काशी ॥

---

[१८] पत्रांश (१३९)[1] [१५९]

[बाबू माधोलाल जी]

ता० १५ दिसम्बर ७९ को साहब लोग अंग्रेज निम्नलिखित बनारस आ कर मेरे पास राजा विजयनगर के बाग में जो निकट महमूदगज है, ठहरेंगे । इस लिये आप को लिखा जाता है कि यदि आप को इन अंग्रेजो से मुलाकात करनी हो, तो सोलहवीं तक मेरे पास उक्त बाग मे चले आइये । और कृपा करके छपरा मे महावीर प्रसाद आदि को भी इस विषय मे विदित कीजिये ।

१२ दिसम्बर ७९

नाम उन साहब लोग अंग्रेजो के जो बनारस में १५ को आवेंगे । करनेल एच० एस० अलकाट साहब बहादुर अमरीकन । मेडम ऐच० पी० ब्लेवेटस्की साहिबा । इ० एफ० सिनेट साहब प्रबन्धक पायोनियर समाचार इलाहाबाद । अतिरिक्त इन अंग्रेजों के उनके साथी और भी दो तीन अंग्रेज आवेंगे ।

दयानन्द सरस्वती

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३८ पर उद्धृत । यह पत्र संभवत उर्दू में था । जीवनचरित में सब उर्दू शब्द ही हैं ।

[२४] **पत्रांश (१४०)**[1] [१६०]

[प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य][2]

करनल अल्काट आदि सब अंग्रेज १५ दिसम्बर ७९ को मेरे पास आ गये। और मेरा संवाद उन से प्रारम्भ हो गया।

१७ दिसम्बर ७९ दयानन्द सरस्वती
बनारस

---

[१] **पत्रसूचना (१४१)**[3] [१६१]

वल्लभदास लाहौर।

मार्ग सु० १२ स० १९३६ बृहस्पतिवार
२५ दिसम्बर १८७९

---

[२] **उर्दू पत्र (१४२)** [१६२]

जनाब मुंशी इन्द्रमन जीव साहब आनन्दित रहिये।

नमस्ते। ५९९ पंचसौ निनानवें जिल्द सन्ध्याभाष्य मुरसले आपकी पहुंची। हस्बुल ईमा आपके मैं यहां चन्द्रिका तलाश कर रहा हूं। अनकरीब वशरते दस्तयावी अरसाल खिदमत होगी। कैफीयत यहां की यह है कि जमीअ असवाव छापेखाने का मय कागज व रौशनाई व प्रूफ सीट वगैरा के कलकत्ता से यहा आ गया। व ५ पांच मन टाइप तो राजा साहब ने मुरादाबाद से मेरे पास भेज दिये हैं। व करीब ८ आठ मन के कलकत्ते से खरीद किये गये हैं। ग़रज़ कि अन्दर एक महीने के कार छापेखाने का इजरा हो जावेगा। मेरा कस्द है कि पेशतर शिक्षा पुस्तक जो छोटी व हाल में तसनीफ हुई है छपवाइ जावे। व बाद उसके दूसरी किताबें जो काबिल नविश्त खवांद हैं छपवाई जावें। व जब कार छापेखाने का बखूबी इजरा हो जावेगा

---

१ पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३८ पर उद्धृत।

२ मुंशी समर्थदान।

३. इस पत्र का संकेत लाहौर समाजके कोषाध्यक्ष ला० वल्लभदासजी के पत्र में है। देखो परिशिष्टपत्र।

तव बम्बई से बुला वेदभाष्य का कारखाना उठवा कर बनारस मे जारी किया जावेगा।

अब यहा रुपये के लिए कमाल दिक्कत है। व यह कारखाना सिर्फ आप लोगो की उम्मीद पर चलाया जाता है आगाज़करदए सास मासाह।

इसलिये आप बराये मेहरबानी ला० श्यामसुन्दर से कह कर अरदूनी महकमा जहा २ जिस कदर रुपया जमा हो यकजा कराकर मेरे पास भेज दीजिये। ताकि इजराय कार में तवक्कुफ व तसाहुल न हो। अब बनिसबत निकालने अख़बार के क्या कस्द हैं। मेरी दानिस्त मे तो अगर अख़बार अंग्रेजी व हिन्दी व उर्दू तीनो एक ही परचे में हों तो निहायत मुनासिब होगा। या जैसी राय शरीफ हो वही अनसब है। बराय मेहरबानी दर्बारए निकालने अख़बार के जो तजवीज़ आप की मुसम्मिम हो उसको तहरीर फरमाइये। बाकी कैफीयत यहां की बदस्तूर है। हनूज़ यहां के पडित शास्त्रार्थ करने के लिये मुसतइद नहीं हुए। जैसा हाल होगा उस से आप को मतले करूगा। फक्त १० जनवरी सन् १८८० ई०।[1]

दस्तखत

द० [दयानन्द सरस्वती]

---

[२] पत्र सूचना (१४३)[2] [१६३]

[मैडम ब्लेवेटस्की के नाम]।

लाहौर समाज से अंग्रेजी भाषान्तर मुम्बई समाज को गया और वहां से मैडम को।

जनवरी १८८० का आरम्भ

---

१ यह उर्दूपत्र काशी से मुरादाबाद भेजा गया था।

मूलपत्र मुशी जी के पोते ला० भगवनसहाय के पास लिफाफे के अन्दर मुरादाबाद में है। इसकी प्रतिलिपि ता० १० नवम्बर सन् १९२६ को म० मामराज जी ने उन के स्थान मुरादाबाद से प्राप्त की।

२ इस पत्र का सकेत मुम्बई समाज के मन्त्री श्री सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में है। देखो महात्मा मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २६५।

[१९] (१४४) [१६४]

वाबू माधोलालजी आनन्दित रहो।

अवतक छापे खाने की कुछ सामग्री आई नहीं और न कुछ पण्डित सुन्दर लाल का जवाव आया। अव आप लोग इसका वहुत शीघ्र भाव नाव टैप् का नमुना और रायलप्रेस का मूल्य लिखकर हमारे पास भेजिये। इसमे जितना वने उतनी शीघ्रता कीजिये। हम को सव छापखानो से तिगुना चौगुना टैप् लेना होगा। उसके केस, लकड़ी, सवका भाव लिखना।

मुसी वखतावरसिंह मत्री आर्य्यसमाज साहजहांपुर ने ३०) रुपये मावारी पर छापेखाने का सव प्रवन्ध करने के लिये सरकारी नौकरी छोड़के आने का स्वीकार किया है। ये वहुत अच्छे आदमी हैं तीनो भाषा पढ़े हुए सव काम अच्छा चलेगा छापेखाने का काम सव जानते हैं। और विज्ञापन पत्र आज छप चुके हैं सो भी तुम्हारे पास भेजते हैं।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र सूचना (१४५)[2] [१६५]

[शुकदेवप्रसाद नसीराबाद]।

फरवरी १८८० के आरम्भ मे लिखा गया।

---

[१] पत्र सूचना (१४६)[3] [१६६]

वावू श्रीप्रसाद जयपुर।

अष्टाध्यायीभाष्य शीघ्र छपने वाला है।

फरवरी १८८०

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के सग्रह में सुरक्षित है । इस पर कोई तिथि नहीं है। प्रसग से ज्ञात होता है कि काशी से ही भेजा गया है।

२ देखो शुकदेवप्रसाद का पत्र परिशिष्टपत्र में।

३. इस पत्र के सकेत के लिए, देखो परिशिष्ट पत्र।

[१२] **विज्ञापन पत्र** [१६७]

सब सज्जनो पर विदित हो कि अब वेदभाष्य तेरहवें १३ अक पर्य्यन्त मुम्बई में छपेगा, इस के आगे १४वें अक से ले कर आगे आगे काशी में आर्यप्रकाश यत्रालय में सदा छपा करेगा। मैंने इस यंत्रालय में अधिष्ठाता मुनशी बखतावरसिंह मत्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर को नियत किया है, इस लिए सब ग्राहक और दूसरे सज्जनों से यह निवेदन है कि इस के आगे अब जो कुछ वेदभाष्यादि पुस्तको के लेने के लिये पत्र और मूल्यादि भेजा चाहें सो उक्त यंत्रालय मे उक्त स्थान पर उक्त मुनशी जी के पास भेजा करें। और इस के आगे बाहर के लोग मुम्बई में मुन्शी समर्थदान के समीप वेदभाष्य सवधी कार्य्य के लिए पत्र अथवा मूल्य आदि न भेजें क्योंकि १३ अक छपे पीछे मुम्बई मे इस का कुछ भी सवध नहीं रहेगा, किन्तु मुम्बई के लोग दूसरा विज्ञापन दिया जाय तब तक सब व्यवहार मुम्बई मे ही रक्खें।[1]

(दयानन्दसरस्वती)

---

[१३] [१६८]

॥ ओ३म् । नम. सर्वशक्तिमते परमेश्वराय ॥

॥ प्रथमं विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

सर्वान् सज्जनान् प्रतीद विज्ञाप्यते सम्प्रति दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः श्रीयुत-महाराजविजयनगराधिपतेरानन्दारामे निवसन्ति। यैर्वेदानां मतमङ्गीकृत्य तद्वि-रुद्ध किंचिदपि नैव मन्यते। किन्तु यानीश्वरगुणकर्मस्वभाववेदोक्तेभ्य सृष्टि-क्रमात्प्रत्यक्षादिप्रमाणेभ्यः आप्ताचारसिद्धान्तात्स्वात्मपवित्रता सुविज्ञानतश्च वि-रुद्धत्वात्पाषाणादिमूर्त्तिपूजा। जलस्थलादौ पापनिवारणशक्ति.। व्यासमुन्यादिभिर-प्रणीतास्तन्नामव्याजेन प्रसिद्धीकृता नवीना व्यर्थपुराणादिसञ्ज्ञा ब्रह्मवैवर्तादयो ग्रन्था'। परमेश्वरस्यावतारा। सपुत्रो भूत्वा स्वविश्वासिना पापानि क्षमित्वा मुक्तिं प्रददाति। उपदेशाय स्वमित्र भूमौ प्रेषितवान्। पर्वतोत्थापन-मृतकसजीवन-चन्द्रखण्डनाकारणकार्य्योत्पत्तिस्वीकरणानीश्वरवाद-जीवब्रह्मणो. स्वरूपैक्यादीनि। कण्ठीतिलकरुद्राक्षादिधारणम्। शैवशाक्तवैष्णवगाणपतादि नवीना' सम्प्रदा-यादयश्च निराकर्त्तुमर्हाणि सन्ति तानि खण्ड्यन्ते॥ अतोऽत्र यस्य कस्य-

---

१ यजुर्वेद और ऋग्वेदभाष्य के बारहवें अक पर छपा। यह अक कार्तिक मास स० १९३६ का है।

चिद्वेदादिसत्यशास्त्रार्थविज्ञाने प्रवीणस्य सभ्यस्य शिष्टस्याप्तस्य विदुषो विप्रतिपत्ति. स्वमतस्थापने परमतखण्डने च सामर्थ्यं वर्त्तते। स स्वामिभिः सह शास्त्रार्थं कृत्वैतेषां मण्डनाय प्रवर्तेत नेतर खलु। इह शास्त्रार्थे वेदा मध्यस्था भविष्यन्ति। एतेषामर्थनिश्चयाय ब्रह्मादिजैमिनिपर्य्यन्वैर्मुनिभिर्निर्मिता ऐतरेयब्राह्मणादि पूर्वमीमांसापर्यन्ता आर्षा वेदानुकूला वादिप्रतिवाद्युभयसम्मता ग्रन्था मन्तव्याश्च। येऽत्र सभासदो भवेयुस्तेऽपि पक्षपातविरहा धर्मार्थकाममोक्षपदार्थस्वरूपसाधनाभिज्ञाः सत्यप्रिया असत्यद्वेषिणः स्युर्नातो विपरीता। यत् किंचित्पक्षिप्रतिपक्षिभ्यामुच्येत तत्सर्वं त्रिभिरभिज्ञैर्लेखकैर्लिपीकृत भवेत्। स्वस्वलेखान्ते वादिप्रतिवादिनौ सम्मत्यर्थं स्वहस्ताक्षरैः स्वस्वनाम लिखेताम्। ये च मुख्याः सभासदः। एतत्कृत्वैकदिनलेखसिद्धं पुस्तकमेक वादिने द्वितीयं प्रतिवादिने देय तृतीय च सर्वसम्मतया कस्यचित्प्रतिष्ठितस्य राजपुरुषस्य सभाया स्थापित भवेद्यत कश्चिदप्यन्यथा कर्तुं न शक्नुयात्। यद्येव सति काशीनिवासिनो विद्वांस. सत्यानृतयोर्निश्चय न कुर्य्युस्तर्ह्येषामतीव लज्जास्पदमस्तीति वेदितव्यम्। विदुषामयमेव स्वभावो यत्सत्यासत्ये निश्चित्य सत्यस्य ग्रहणमितरस्य परित्यागं कृत्वा कारयित्वा स्वेनान्यैः सर्वैर्मनुष्यैश्चानन्दितव्यमिति॥

॥ प्रथम विज्ञापन ॥

॥ भाषार्थ ॥

सब सज्जन लोगो को विदित किया जाता है कि इस समय पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज काशी मे आकर जो श्रीयुत महाराजे विजयनगर के अधिपति का आनन्दबाग महमूदगञ्ज के समीप है उसमें निवास करते है। वे वेदमत का ग्रहण करके उससे विरुद्ध कुछ भी नहीं मानते, किन्तु जो २ ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव और वेदोक्ति १। सृष्टि क्रम २। प्रत्यक्ष आदि प्रमाण ३। आप्तो का आचार और सिद्धान्त ४। तथा अपने आत्मा की पवित्रता और उत्तम विज्ञान से विरुद्ध होने के कारण जो पाषाणादि मूर्ति पूजा, जल और स्थल विशेष मे पाप निवारण करने की शक्ति, व्यास मुनि आदि के नाम पर छल से प्रसिद्ध किये नवीन व्यर्थ पुराण नामक आदि ब्रह्मवैवर्त आदि ग्रन्थ, परमेश्वर के अवतार, ईश्वर का पुत्र होके अपने विश्वासियो के पाप क्षमा करके मुक्ति देने हारे का मानना, उपदेश के लिये अपने मित्र पैगम्बर को पृथ्वी पर भेजना, पर्वतो का उठाना, मुरदो का जिलाना, चन्द्रमा का खण्ड करना, कारण के विना कार्य की उत्पत्ति मानना, ईश्वर को नहीं मानना, स्वय ब्रह्म बनना, अर्थात् ब्रह्म से व्यतिरिक्त वस्तु कुछ भी न मानना, जीव ब्रह्म को एक ही समझना, कण्ठी तिलक और रुद्राक्षादि धारण करना, और शैव, शाक्त वैष्णव, गाणपतादि सम्प्रदाय आदि है, इन सब का खण्डन करते हैं।

इस से इस विषय में जिस किसी वेद आदि शास्त्रो के अर्थ जानने मे कुशल, सभ्य, शिष्ट, आप्त विद्वान् को विरुद्ध जान पडे, अपने मत का स्थापन और दूसरे के मत का खण्डन करने मे समर्थ हो वह स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ कर के पूर्वोक्त व्यवहारों का स्थापन करे। इस से विरुद्ध मनुष्य कभी नही कर सकता।

इस शास्त्रार्थ में वेद मध्यस्थ रहेंगे। वेदार्थ निश्चय के लिये जो ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त के बनाए ऐतरेय ब्राह्मण से लेके पूर्वमीमांसा पर्यन्त वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ हैं, वे वादी और प्रतिवादी उभय पक्ष वालो को माननीय होने के कारण माने जावेंगे। और जो इस सभा मे सभासद् हो, वे भी पक्षपात रहित धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के स्वरूप तथा साधनो को ठीक २ जानने सत्य के साथ प्रीति और असत्य के साथ द्वेष रखने वाले हो, इन से विपरीत नही। दोनों पक्ष वाले जो कुछ कहें, उसको शीघ्र लिखने वाले तीन लेखक लिखते जावें। वादी और प्रतिवादी अपने अपने लेख के अन्त में अपने २ लेख पर स्वहस्ताक्षर से अपना-अपना नाम लिखें। तथा जो मुख्य सभासद् हों, वे भी दोनों के लेख पर हस्ताक्षर करें।

उन तीन पुस्तको में से एक वादी दूसरा प्रतिवादी को दे दिया जाए और तीसरा सब सभा की सम्मति से किसी प्रतिष्ठित राजपुरुष की सभा मे रखा जावे कि जिस से कोई अन्यथा न कर सके।

जो इस प्रकार होने पर भी काशी के विद्वान् लोग सत्य और असत्य का निर्णय करके औरो को न करावेंगे, तो उनके लिये अत्यन्त लज्जा की बात है, क्योंकि विद्वानो का यह ही स्वभाव होता है जो सत्य और असत्य को ठीक २ जान के सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग कर दूसरो को कराके आप आनन्द में रहना औरो को आनन्द मे रखना।[1]

॥ दूसरा विज्ञापन ॥

स्वामी जी को छ पुरुषो की अपेक्षा है॥ एक—वेद वेदाङ्ग निघण्टु निरुक्त व्याकरण मीमासादि शास्त्रों में निपुण शुद्ध लिखने पूर्वापर शब्द अर्थ और सम्बन्ध के विचार से शुद्धाशुद्ध को जान के शुद्ध करने और भाषा के व्याकरण की रीति से सस्कृत की भाषा की सुन्दर रचना करने वाला विद्वान्॥

---

१ आर्यदर्पण दिसम्बर १८७९, पृ० ३४७, ३४८ पर भी इतना आर्यभाषा का भाग फारसी अक्षरों में छपा है।

दूसरा—व्याकरण मे निपुण लिखने मे शीघ्रकारी पूर्वोक्त रीति से सस्कृत की ठीक २ भाषा की रचना करने हारा ॥

तीसरा—शुद्ध लेखक शीघ्र लिखने वाला ॥

चौथा—ब्राह्मण रसोई बनाने मे अति चतुर ॥

पांचवां—चतुर सेवक कहार काछी कुर्मी वा किशान ॥

और छठा—नागरी इगलिश और उर्दू भाषाओ का लिखने पढने वाला हो। इन छः पुरुषो की जैसी २ योग्यता अपने २ काम मे होगी उसको मासिक भी वैसा ही दिया और उस से यथायोग्य काम लिया जायगा। जिस किसी को ऐसा करना अपेक्षित हो वह उक्त स्थान पर जाकर स्वामी जीसे मिल के प्रबन्ध कर लेवे ॥

ऋतुकालाङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षेऽसिते दले ।
चन्द्रवारे तृतीयायां पत्रमेतदलेखिषम् ॥ १ ॥

सवत् १९३६ मिती मार्गशीर्ष वदी ३ सोमवार को यह पत्र मैने लिखा है ॥[1]

हस्ताक्षर
पण्डित भीमसेन शर्म्मा[2]

Printed At The Medical Hall Press, Benares.—3-12-1879–200.

[१४] [१६९]

॥ ओ३म्। नम. सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय ॥[3]

॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

समस्तान्धार्मिकान्प्रतीदम्प्रत्याय्यते । यच्छ्रीताराचरणप्रकाशित वाराणसी-स्थविदुषा स्वामिभि सह शास्त्रार्थकरणाभिप्रायसूचक सभ्यविद्वल्लेखविरुद्ध पत्र-मस्ति। तद्दृष्ट्वाऽत्यन्तमाश्चर्य्यं प्रतिभाति न.। यदत्रत्यो दयालुरुपानहान्निर्माताऽन्त्य-जोऽपि विद्वदुपमा विभर्त्ति तर्ह्यत्या. पण्डिताः खलु कस्योपमां दधतीति। नहि योग्ययोर्विदुषोः समागमेन विना कदापि सत्यासत्यव्यवहाराणां सिद्धान्ता भवितु-मर्हन्ति । तस्माद्भाविनि समागमे विशुद्धानन्दसरस्वतीस्वामिनो बालशास्त्रिणो वा संवादङ्कर्त्तुं प्रवर्त्तेरन्नेतरा. किल यदैतेऽत्र प्रवर्त्स्यन्ति तदा स्वामिनोऽभ्युद्यता सन्त्येवेत्यलमतिविस्तरेण।

---

१ प्रथम दिसम्बर १८७९ को लिखा गया और ३ दि० १८७९ को छप कर बाटा गया।

२. हमने सारा विज्ञापन मूल-विज्ञापन से छापा है । मूल विज्ञापन हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

३. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० १५७, १५८ से उद्धृत ।

विद्वास. सुविचारशीलसहिता धर्मोपकारे रता
दुष्ट कर्म विहाय सत्यसरणा नौकेव पारणायते।
क्रूरा कामसिताः किमत्र समला. स्वार्था अहो भावना
विघ्नाः कस्य नरस्य नैव वितताऩ् कुर्य्यु सदा दूषिता ॥१॥
ऋतुरामाङ्कचन्द्रेव्दे मार्गशीर्षे सिते दले।
चतुर्दश्या शनीवारे पत्रमेतल्लेखिषम ॥

॥ भापार्थ ॥

मब काशीस्थ धामिक विद्वान् महाशयो पर प्रगट हो कि श्री ताराचरण शर्म्मा ने एक विज्ञापन पत्र छपवाया जिसका अभिप्राय यह है कि काशी निवासी विद्वज्जन स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से शास्त्रार्थ करने की इच्छा करते हैं। यह पत्र विश्वास करने योग्य तो है परन्तु ऐसा लेख सभ्य विद्वानों का नही होता। इसके देखने से हम को वडा आश्चर्य होता है कि जव जूते गाठने और वनाने हारा काशी का चमार विद्वानो की उपमा को धारण करता है तो पडित लोग किस की उपमा को धारण करेंगे। भला वक और हस की समता कही सभव है। यदि यह वात एक मूर्ख से भी पूछी जावे तो वह भी दृढता पूर्वक कहेगा कि सत्य सत्य का सिद्धांत विना पडितो के समागम के कदापि नही हो सकता। अव इस काशी मे सर्वोत्तम पडित दो हैं। एक स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती दूसरे वालशास्त्री। जो इन दोनों महाशयो में से कोई एक भी यहि शास्त्रार्थ करना चाहे तो स्वामी जी भी सर्वथा उपस्थित हैं। सिवाय इन दोनो के दूसरो को विज्ञापनपत्र देना और लिखना सर्वथा निरर्थक है।

श्लोक की भापा।

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की सृष्टि मे दो प्रकार के मनुष्य हैं। एक उत्तम दूसरे निकृष्ट। उत्तम वे हैं जोकि विचारयुक्त सुशील धर्म और उपकार करने मे सन्तुष्ट दुष्ट कर्मों से दूर सत्य के प्रेमी नौका के समान अविद्यादि दोषो और कष्टो से लोगो को पार उतारने वाले विद्वान् हैं। वे अपनी शान्ति परोपकार और गभीरतादि को कभी नही छोडते। और जो क्रूर कामी अविद्यादि मलयुक्त स्वार्थी दूपित मनुष्य हैं वे श्रेष्ठ मनुष्यो को वडे २ विघ्न सदा क्या नही करते हैं? ये वडा आश्चर्य है कि आप्त लोग असभ्य लोगो पर कृपा करके सदा उनका उपकार ही किया करते हैं। परन्तु वे अपने दोषो से उपकार को अनुपकार ही माना करते हैं। इसलिए हम प्रार्थना करते हैं कि सर्वशक्तिमान् परमात्मा अपनी कृपा से उन मनुष्यों को सव वुरे कामो से हटाकर सत्यमार्ग में सदा प्रवृत्त करें।

सवत् १९३६ मि० मार्ग शुक्ल १४ शनिवार।

[१] पत्र (१४७) [१७०]

मुशी मनोहरलालजी [आनन्दित] रहो [1]

आप ले जाइये सब, परन्तु जितना शोधा जाय उतना भेज दें । वा सब को शोध के शीघ्र भेजियेगा । क्योंकि इसका काम हम को बहुत पड़ता है । और जगन्नाथ के हाथ और भी सब पूरे पत्रे भेजते हैं । आप सभाल लीजिये ।

मि० मा० ३० मगल [2]

[दयानन्द सरस्वती]

१०४ से लेकर १२५ पृष्ठ सब है ।

---

[८] पत्र (१४८) [१७१]

To

Lala Mulraj, M A., Officiating Extra Assistant Commissioner, Multan.

Benares, dated 16th February 1880.

NAMASTE,

Your letter, dated 11th February 1880, received. It has given me great pleasure to hear of your appointment as an Extra Assistant Commissioner May God raise you still higher. As regards matters over here, the Lieutenant-Governor has as yet sent us no reply. The Magistrate Sahib verbally tells us

---

१ श्री स्वामी जी ने कुरान का भाषानुवाद करवा रखा था । मुशी मनोहर लाल रईस गुड़ हट्टा, पटना निवासी अरबी के अच्छे विद्वान् थे । वे ही उस अनुवाद को शोधने के लिये अपने घर ले गये । यह पत्र उसी अनुवाद की पुस्तक में पडा रहा । हमारे मित्र श्री साधु महेशप्रसाद मौलवी फाजिल प्रो० हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी, उस अनुवाद को अजमेर में देखने गये । वहीं से वे इस पत्र की प्रतिलिपि कर लाये । वह प्रतिलिपि उन्होंने अपने पत्र ७-८-१९४३ के साथ सोलन में हमारे पास भेजी ।

२ मार्गशीर्ष सवत् १९३४ मगल तदनुसार ४ दिसबर १८७७ को पडता है । और माघ ३० सवत् १९३६ मगल, १० फरवरी १८८० को पडता है । यही स० १९३६ की तिथि ठीक प्रतीत होती है ।

to commence lecturing, but shrinks from giving the order in writing. We have come to know that the Lieutenant-Governor forwarded our application to the Magistrate for his remarks, and the Magistrate returned it (about one week ago) saying that he had stopped the lectures on account of the Muharram procession, fearing lest a quarrel may not arise We expect to get a reply in a day or two We have not thought it proper to commence lecturing without a written order of the Local Government. This will settle the matter once for all

We will commence our series of lectures with great earnestness The press has been started and named Vedic Press A notice to that effect is sent separately to-day Namaste to all.

(Sd) Dayananda Saraswati

[भाषानुवाद]

लाला मूलराज एम० ए० स्थानापन्न
ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर, मुलतान

बनारस, १६ फरवरी १८८०

नमस्ते !

आप का पत्र, ११ फरवरी १८८० का मिला । आप की ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर पद पर नियुक्ति सुन कर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। परमात्मा आप को और भी उन्नत करे। यहां का हाल यह है कि लाट साहब ने अभी तक हमें कोई उत्तर नही दिया। मजिस्ट्रेट साहिब मौखिक रूप से हमें व्याख्यान आरम्भ करना कहते हैं पर लिखित आज्ञा के देने में सकोच करते हैं। हमें पता लगा है कि लाट साहब ने हमारा प्रार्थनापत्र मजिस्ट्रेट को उस की सम्मत्यर्थ भेजा था, और मजिस्ट्रेट ने (लग भग एक सप्ताह हुआ) उसे यह कह कर लौटा दिया था कि उस ने मुहर्रम मेले के कारण व्याख्यान बन्द किये थे, इस भय से कि कोई झगड़ा न उठ पडे। हम एक या दो दिन में उत्तर की आशा रखते हैं। हम ने स्थानीय सरकार की लिखित आज्ञा विना व्याख्यान आरम्भ करना उचित नहीं समझा। इस से इस बात का सदा के लिये निर्णय हो जायगा।

हम अपने व्याख्यानो का क्रम वड़े उत्साह से आरम्भ करेंगे। यन्त्रालय का आरम्भ कर दिया गया है। इस का नाम वैदिक यन्त्रालय रखा गया है। इस विषय का एक विज्ञापन आज पृथक् भेजा जाता है। सव को नमस्ते।[1]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र सूचना (१४९)[2] [१७२]

वावू श्रीप्रसाद जयपुर।

व्याकरण सम्वन्धी पुस्तको के सम्वन्ध मे।

---

[२९] पत्र सूचना (१५०) [१७३]

उर्दू पत्र

मुशी समर्थदान मुम्वई।

पुस्तको का महसूल आदि अधिक लगा।

लगभग २० फरवरी १८८०

वनारस

---

[१] लेख [१७४]

श्राद्ध (ओरिजन) अर्थात् असली है। श्राद्ध शव्द के अर्थ श्रद्धा के हैं। पुत्र को माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से उनके जीवन पर्यन्त करना अवश्य है। परन्तु जो लोग मरे हुए माता पिता का श्राद्ध करते हैं वह असली नहीं है क्योंकि जीते माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से करनी श्राद्ध कहाता है। मृतक

---

१ मूलपत्र आर्यभाषा में था। उस का अंग्रेजी अनुवाद दि० गुरुकुल मैगजीन, गुजरावाला, अकतूवर-दिसम्बर, सन् १९०८, पृ० २४८ पर छपा है। ला० मूलराज जी ने कहा था कि गुजरावाला गुरुकुल के सचालक ला० रलाराम जी की असावधानी से मूलपत्र चूहों से नष्ट किया गया।

२ इस पत्र के सकेत के लिए देखो परिशिष्टपत्र।

३. इस पत्र का सकेत देखो परिशिष्टपत्रों में।

के लिये पिण्ड देना व्यर्थ है क्योंकि मरे हुए को पिण्ड देने से कुछ लाभ नही होता ।'

दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र सूचना (१५१)[2] [१७५]

गोपालराव हरि फरुखाबाद ।
लगभग १० मार्च १८८०

---

[५] पत्रांश (१५२) [१७६]

Though I am very anxious that my autobiography which you are publishing in your journal, should be completed, I have not yet been able to give the necessary time to it But as soon as possible I will send the narrative to you [3]

---

१ किसी पुरुष ने सम्पादक थ्यासोफिस्ट को ८ फरवरी १८८० को एक पत्र लिखा। उसमें उसने श्राद्ध विषय में उनकी और विशेष कर स्वामी दयानन्द सरस्वती की सम्मति मागी थी। वह मूल और स्वामी जी की ओर से उसका पूर्वोक्त उत्तर थ्यासोफिस्ट मार्च १, १८८० में छपा है।

२ इस पत्र का सकेत गोपालराव के १८ मार्च ८० के परिशिष्टपत्र सग्रह में है।

३. यह पत्राश थ्यासोफिस्ट ऐप्रिल सन १८८० के पृ० १९० पर छपा है। इस से पहले निम्नलिखित सूचना है। आवश्यक समझ कर वह भी छापी जाती है।

THE FOOLISH EMBARGO LAID UPON SWAMIJI DAYANAND Saraswati by Mr Wall, the Benares Magistrate, has at last been raised, and that learned and eloquent Pandit was to have resumed his lectures on the evening of the 21st March [1] Before granting the permission—which the Swami ought never to have been obliged to ask- Mr Wall had a conversation of nearly an hour with him The excuse, offered by the Lieutenant Governor for the action in the premises, was that it was not safe for the Swami to lecture in the Moharam holidays ! The subject of the opening discourse was "The Creation "

---

१ इस लेख से प्रतीत होता है कि यह पत्र १४ या १५ मार्च सन् १८८० अथवा उस से कुछ पूर्व लिखा गया था।

[२] पत्र सूचना (१५३)[1] [१७७]

[केशवलाल निर्भयराम सूरत]

सस्कारविधि की छपाई के हिसाव के सम्वन्ध मे।

३१ मार्च १८८० काशी।

---

[१] पत्र (१५४) [१७८]

॥ ओम् ॥

सं० १९३७ चैत्र शुदी १२ गुरुवार।[2]

राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो!

आपका चैत्र शुक्ला ११ बुधवार का लिखा पत्र मेरे पास आया। देख के आपका अभिप्राय विदित हुआ। उस दिन आप से और मुझ से परस्पर जो २ बातें हुई थी वे तव आप को अवकाश कम होने से मै न पूरी वात कह सका और न आप पूरी वात सुन सके क्योकि आप उन साहबो से मिलने को आए थे। आप का वही मुख्य प्रयोजन था। पश्चात् मेरा और आपका कभी समागम न हुआ जो कि मेरी और आपकी वातें उस विषय मे परस्पर होतीं। अव मैं आठ दश दिनों मे पश्चिम को जाने वाला हू। इतने समय मे जो आपको अवकाश हो सके तो मुझ से मिलिये। फिर भी वात हो सकती है। और मैं भी आपको मिलता परन्तु अव मुझको अवकाश कुछ भी नही है इस से मैं आप से नहीं मिल सकूगा क्योकि जैसा सन्मुख मे परस्पर बातें होकर शीघ्र सिद्धान्त हो सकता है वैसा लेख से नहीं इसमे वहुत काल की अपेक्षा है।

आपका प्रश्न	मेरा उत्तर
१ आपका मत क्या है ?	१ वैदिक।
२ आप वेद किसको मानते हैं ?	२ संहिताओं को।
३ क्या उपनिषदो को वेद नही मानते ?	३ मै वेदो मे एक ईशावास्य को छोड़ के अन्य उपनिषदो को नही मानता। किन्तु अन्य सब उपनिषद् ब्राह्मण ग्रन्थो मे हैं। वे ईश्वरोक्त नहीं हैं।

---

१ इस पत्र का सकेत म० मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २८७ पर है।

२ २२ एप्रिल १८८०।

आपका प्रश्न	मेरा उत्तर
४ क्या आप - ब्राह्मण पुस्तको को वेद नहीं मानते ?	४ नही, क्योकि जो ईश्वरोक्त है वही वेद होता है जीवोक्त नहीं। जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं वे सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है। जैसा ईश्वर के सर्वज्ञ होने से तदुक्त निर्भ्रान्त सत्य और मत के साथ स्वीकार करने के योग्य होता है वैसा जीवोक्त नही हो सकता क्योंकि वे सर्वज्ञ नही। परन्तु जो २ वेदानुकूल ब्राह्मण ग्रन्थ हैं उनको मैं मानता और विरुद्धार्थों को नही मानता हू। वेद स्वतः प्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं। इससे जैसे वेदविरुद्ध ब्राह्मण ग्रन्थो का त्याग होता है वैसे ब्राह्मण ग्रन्थो से विरुद्धार्थ होने पर भी वेदो का परित्याग कभी नही हो सकता क्योकि वेद सर्वथा सब को माननीय ही है।[1]

अब रह गया यह विचार कि जैसा संहिता ही को ईश्वरोक्त निर्भ्रान्त सत्य वेद मानना होता है वैसा ब्राह्मण ग्रन्थो को नहीं, इसका उत्तर मेरी बनाई ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका के नववें पृष्ठ से ९ लेके ८८ अट्ठासी पृष्ठ तक वेदोत्पत्ति, वेदों का नित्यत्व, और वेदसंज्ञाविचार विषयों को देख लीजिये। वहां मैं जिसको जैसा मानता हूं सब लिख रक्खा है। इसी को विचार पूर्वक देखने से सब निश्चय आपको होगा कि इन विषयो मे जैसा मेरा सिद्धान्त है वैसा ही जान लीजियेगा ॥[2]

(दयानन्द सरस्वती) काशी।

---

१ प्रश्न और उत्तर का भाग एक दो शब्दों के अन्तर से भ्रमोच्छेदन में भी छपा है।

२ मूलपत्र अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इस पर अधिकाश श्री स्वामी जी के हाथ का संशोधन है। इसी की प्रतिलिपि राजा जी को भेजी गई होगी।

[२] पत्र (१५५) [१७२]

राजा शिवप्रसाद जी आनन्दित रहो।

आप का पत्र मेरे पास आया देख कर अभिप्राय जान लिया। इस से मुझ को निश्चिय हुआ कि आपने वेदो से लेके पूर्वमीमांसा[1] पर्यन्त विद्या पुस्तको के मध्य में से किसी भी पुस्तक के शब्दार्थ सवन्धों को जाना नही है। इस लिये आप को मेरी वनाई भूमिका का अर्थ भी ठीक २ विदित न हुआ जो आप मेरे पास आके समझते तो कुछ समझ सकते। परन्तु जो आपको अपने प्रश्नो के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती वा वाल-शास्त्री जी को खडा करके सुनियेगा तो भी आप कुछ २ समझ लेंगे क्योंकि वे आपको समझावेंगे तो कुछ आशा है समझ जायगे। भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तको के पढे विना वेद और व्राह्मण पुस्तको का कैसा आपस में सवन्ध, क्या २ उन मे है और स्वत. प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परत प्रमाण और ऋषि मुनि कृत व्राह्मण पुस्तक हैं इन हेतुओं से क्या २ सिद्धान्त सिद्ध होते और ऐसे हुए विना क्या २ हानि होती है इन विद्यारहस्य की वातों को जाने विना आप कभी नही समझ सकेंगे॥

(दयानन्द सरस्वती)

स १९३७ मि० वै० व० सप्तमी शनिवार[2]

---

[१] पत्र (१५६) [१८०]

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

वैशा[ख] सुदी ११[3] को कान्हपुर से फरुकावाद आनन्दपुर मे पहुंच कर टोकाघाट पर कालीचरण रामचरण के वाग में ठहरे हैं। पिछले पत्र में वर्त्तमा[न] जो लिखा है सो सव करते होगे। और कलकत्ते से टैपादि आ गया होगा तो वेदभाष्य

---

१ इस स्थल पर राजा जी ने अपने निवेदन में एक टिप्पण दिया है। उस में उन्होंने इस वात पर हास्य किया है कि स्वामी जी महाराज पूर्वमीमासा पर्यन्त ही पढे थे, उन्होंने उत्तर मीमासा न देखी थी। राजा जी इस पर वडे प्रसन्न दीखते हैं, परन्तु यह भी उनका अज्ञान है। उन्हें यह ज्ञान नहीं कि अतिम आर्षग्रन्थकार जैमिनि मुनि हुए है। उन्हीं का वनाया पूर्वमीमासा है। ग्रन्थ गणना में चाहे वह पहले गिना जाय वा पीछे, परन्तु रचयिता दृष्टि से जैमिनि ही अतिम है, अतएव ऋषि का उपर्युक्त लेख सत्य ही है। राजा शिवप्रसाद के निवेदन में मुद्रित। २ १ मई १८८०। ३ २० मई १८८०।

राजा शिवप्रसाद जी आनन्दित रहो

आपका पत्र मेरे पास आया देखकर अभिप्राय जान लि
या इसके देखने से मुझको निश्चित हुआ कि आपने वेदों से लेके
पूर्वमीमांसा पर्यन्त विद्यापुस्तकों के मध्य में से कोई भी पु
स्तक के शब्दार्थ संबंधों को नहीं जाना है इसलिये आपको मेरी बनाई
भूमिका का अर्थ भी ठीक २ विदित न हुआ जो आप मेरे पास आके स
मझते तो कुछ २ समझ सकते परन्तु जो आपको अपने प्रश्नो
के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती बाबा
लशास्त्री जी को खड़ा करके सुनियेगा तो भी आप कुछ २ समझ
लेंगे भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तकों के पढ़े विना
वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का कैसा आपसमें सम्बन्ध क्या २ उनमें
है और स्वतः प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमा
ण और ऋषिमुनिकृत ब्राह्मण पुस्तक है इन हेतुओं से क्या २ सि
द्धान्त सिद्ध होते हैं और ऐसे हुए विना क्या २ हानि होती है इन वि
द्यारहस्य की बातों को जाने विना आप कभी नहीं समझ सकते। सं० १९३६ मि० वै०
वदि सप्तमी शनिवार (दयानन्दसरस्वती)

ऋषि दयानन्द सरस्वती का आद्यन्त स्वहस्तलिखित पत्र। पृ० १९६ पर मुद्रित।

का आरंभ कर दिया होगा और जो न आयाहो तो चिठी के देखते हि कलकत्ते जाके टैपादि लाके शीघ्र ही वेदभाष्य का आरभ चलाओ । और दूसरे पुस्तक का सधि-विषयक का भी शीघ्र २ छपना चाहिये । व्यवहारभानु का पुस्तक छप गया हो तो भेजदो । और पिछले पत्र के लिखे मुताविक सव काम करो । और पिछले पत्र का जवाव लिखो । सवसे नमस्ते कह देना ।

मिती वैशाख शुक्ल १२ शुक्रवार स० १९३७ ।[1]

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र सूचना (१५७)[2] [१८१]

मु० वखतावरसिंह वनारस ।

९ जून १८८०

---

[३] पत्र (१५८) [१८२]

ओम्

मुशी व[खतावरसि]सह जी आनन्दि[त] रहो ।

आज रजस्टरी करके राजा शिवप्रसाद का उत्तर यहां से रवाना करेंगे । उस के पहुंचते वखत ही रसीद भेजनी । इस पुस्तक को प्रथम भीमसेन देख कर कंपोजीटर को समझा देवे । कही टूट फूट अशुद्ध न होने पावे । नोट जैसा कि इस मे है वैसा ही छपे । और इस की भी २,००० दो हजार कापी छपवानी । ‿) मूल्य । और वेदभाष्य के साथ जहा २ भेजना योग्य समझें वहा भी भेजना । [सव आर्यस]माजोमें भेज देना । और [सन्यासि]यो के पास भी । और जो भाष्य के गाहक योग्य हैं उन[सव] के पास [एक]२ पुस्तक भेज देनी । सव कालेज ग[वर्नमेंएट स्कूलों] और शरकारी पुस्तकालय मे भी भेजना ॥

तुमारे लिखे प्रमाण सीसा (टैप आदि) के लिये सेठ निर्भयराम से कह दिया है । जैसी तुम लिखो [गे वै]सी कलकत्ते से आजावेगी । परन्तु प्रथम कलकत्ते में सौ रुपैये जैस[राजगुट]ी राम की दूकान पर भेज दो । उन्ही मे से जो २ चीजें

---

१ २१ मई १८८०, फरुखावाद । मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

२ इस पत्र का सकेत परिशिष्टपत्र सग्रह में है ।

तुम का चाहने पड़ेंगी सो २ वे भेज दिया करेंगे। और जो तुमने लिखा के अभयराम चुन्नीलाल अच्छी तरह से वन्दोवस्त नही रखते उसके लिये वहां काशी मे एक साहूकार के पास रुपैये जमा करने के लिये यहां वन्दोवस्त किया है। उसी की दो[का]न* पर जमा करना। और अभयराम चुन्नीलाल के यहां केवल सौ रुपैये वाकी रहने भी देना जिस में [लेन दे]न न टूटे। फिर दिवाली पर हिसाव करके सव चुका लेना। तुमने जो पारसल भेजा ठीक २ पहुंचा। परन्तु उसका डाक महसूल वहुत क्यो लगा। जिस कारीगर ने ये दुपट्टा और अरडी वनाई है उसको ३) रुपैये इनाम दे देना। मै खूव जानता हूं कि तुम तन मन धन से काम करते हो। परन्तु मेरे जरूरी वार २ लेख से कुछ सन्देह न करना। क्योकि तुम अपना और मेरा काम [दो] नही समझने। सन्धिविपय और वेदभाष्य [के पत्रे] आपने मगवाये। वे इस वखत राजा शिवप्रसाद के [उत्तर देने से फु]रसत नहीं मिली। इस वास्ते नही पहुंचे। आगे··

जो[2] भैरव कहार हमारे साथ आया था·· ·· [उस]ने कलमदान खोल १॥) वा २॥) रुपैये चोर लिये थे। इस [लि]ये उसको जितना मासिक चढ़ा था दिया। और म[ार्ग] [ख]रच ।॥—) आने देकर यहां से निकाल दिया। जव तक यह भ्रमोच्छेद[न]* ग्रंथ छपके वाहर न हो तव तक किसी को मत दिखलाना। जव छप जाय तव काशीराज, राजा शिवप्रसाद, विशुद्धानन्द, वालशास्त्री और राय शंकटाप्रसाद की लायव्रेली तथा पंडित सुवेराव औ[र] हरि पंडित जी को भी एक पुस्तक दे देना। और जिस २ को योग्य जानो उस २ को भी देना। वाकी मूल्य से देना। सव से हमारा न[मस्ते क]ह देना। हम वहुत प्रसन्न हैं। आप लोग सव प्र[सन्न रहि]ये।

सवत् १९३७ आषाढ कृष्ण २ गुरुवार।[3]

[दयानन्दसरस्वती]

---

१. इस पत्र पर अनेक स्थलों में श्री स्वामीजीने स्वहस्त से सशोधन किया है।

२ 'जो····' भैरव से आगे सारा लेख उनके अपने हाथ का ही है। बिन्दु से परिचिन्हित कोष्ठों को छोड कर शेष सव कोष्ठों के स्थान का पत्र फटा हुआ है। हमने कोष्ठों में अपनी ओर से पूर्ति की है।

३ २४ जून १८८०, फरुखवाद। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[१] पत्र (१५९) [१८३]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हायै श्रुतशास्त्रविद्याभ्यासापन्नायै श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्।

शमत्रास्ति। तत्रत्य भवदीयमेधमान च नित्यमाशासे।

अभ्यस्तसंस्कृतविद्याया भवत्याः शुभां कीर्त्ति निशम्योत्पन्नस्वान्तानन्देन मया श्रीमतीन्प्रति लेखद्वाराभिप्राय प्रकाश्यैवमेव भवत्या अभिप्राय विज्ञातुमिच्छामि सद्य. स्वाभिप्रायविज्ञापनेन मामलङ्करोतु।

इदानीमग्रे च भवति किं किं कर्त्तुं चिकीर्षति। किं यथा लोकश्रुतिरस्ति सा ब्रह्मचारिणी वर्त्तत इतीदमेव विद्यते न वा। सा यत्र कुत्र जनताया सुशोभितं शास्त्रोक्तलक्षणप्रमाणान्वित विद्वदाह्लादकर वक्तृत्व करोतीत्येतत्तथ्य न वा। श्रुत मया सा स्वयवरविधिना विवाहाय स्वतुल्यगुणकर्म्मस्वभावसहित कुमार पुरुषोत्तममन्विच्छतीति सत्यमाहोस्विन्न। किमेतदकृत्वा ब्रह्मचर्य्ये स्थातुमशक्यमस्ति।

यथाऽऽर्य्यावर्त्तीय सत्यो विदुष्यो गार्ग्याद्य कुमार्य्यो ब्रह्मचर्य्ये स्थित्वा स्त्रीजनादिभ्यो यावान् सुखलाभ प्रापितस्तथा तावान् विवाहे कृतेऽनेक-प्रतिबन्धकप्राप्त्या प्रापितुमशक्य। एव सत्यपि स्वसमानवर पुरुष प्राप्य विवाह कृत्वा यथाऽनेकाः स्त्रिय सन्तानोत्पत्तिपालनस्वगृहकृत्यानुष्ठाने प्रवर्त्तन्ते तथैव भवत्या इच्छास्ति वा पुनरपि कन्यकाभ्योऽध्यापनस्य स्त्रीभ्यः सुशिक्षाकरणेच्छास्ति। श्रीमती वगदेशनिवास कृत्वाऽन्यत्र यात्रा न करोति किमत्र कारणम। यावदुपकार. सर्वत्र गमनागमनेन जायते न तादृगेकत्र स्थिताविति निश्चयो मे।

यद्यत्रागमनाभिलाषास्ति चेत्तर्ह्यागम्यता यावानस्या यात्राया मार्गे धनव्ययो भविष्यति तावान् भवत्या अत्र प्राप्तेऽवश्य लभ्येत। यद्याजिगमिषाऽत्र वर्त्तेत तर्हि ततो गमनात्प्राक् पत्रद्वारा समयो विज्ञाप्यतामतोऽत्र भवत्या स्थित्यर्थं स्थानादि-प्रबन्ध. स्यात्। यदि श्रीमत्युपदेशाय सर्वत्र यात्रा चिकीर्षेत्तर्ह्येतत्स्थानादिनिवासिन आर्य्या भवत्या. सर्वत्रार्य्यावर्त्तयात्रायै योगक्षेमाय च धन दातु शक्नुवन्ति नात्र काचिच्छङ्कास्ति।

यदि भवती पत्र प्रेषयेदथवाऽऽगच्छेत्तर्हि निम्नलिखितस्थानस्य सूचनया पत्र भवतीवाऽऽगन्तुमर्हतीत्यलमतिविस्तरलेखेन विदुषी प्रति।

रसरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे आषाढस्य शुभे दले।
षष्ठ्यां शनौ शिव पत्र लिखितं मान्यवर्द्धकम् ॥[1]

(मेरठ छावनी बाबू छेदीलाल गुमास्ते कमसरयट के द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती) जी के पास पहुंचे । परन्तु इतना लिखना बहुत है कि (मेरठ स्वामी दयानन्द सरस्वती) बराबर पहुंचेगा।

---

[२] पत्र (१६०) [१८४]

ओ३म्

पण्डित गोपालरावहरि आनन्दित रहो—

मै आशा करता हूं कि जो २ बातें करनी आपके लिये नीचे लिखता हू, सो २ यथावत् स्वीकार करेंगे।

(१) जो मीमांसक उपसभा नियत की गई है उसके पांच सभासद् निश्चित किये गये है। एक आप, द्वितीय बाबू जी, तृतीय लाला जगन्नाथप्रसाद, चतुर्थ लाला रामचरण, पचम लाला निर्भयराम और उसकी अनुपस्थिति में क्रमशः यथा आप के लाला रामनारायणदास मुख्तार, लाला हरनारायण, ला० हितमनीलाल, लाला कालीचरण और लाला निर्भयराम के कोई पुत्र अर्थात् तीनो मे से एक जो उपस्थित हो, नियत किये गये हैं ॥

(२) जहां तक बनें और आप यहां उपस्थित हो तो व्याख्यान भी समाज मे दिया करें ॥

(३) जो मासिक पुस्तक निकलता है वह भी आपके हाथ से बनेगा, अथवा बनने पर शुद्ध कर देंग। तो भी अच्छा होगा। इति—

आषाढ कृष्ण ८, सम्वत् १९३७।[2] दयानन्द सरस्वती

---

१ स० १९३६ आषाढ सुदी ६ शनि। यह तिथी सर्वथा अशुद्ध है। सवत् वष १९३७ चाहिए १९३६ नहीं। रमा ने इस पत्र का उत्तर आषाढ शुक्ला १, भृगुवासर शक वत्सर १८०२ अर्थात् ९ जुलाई १८८० को दिया। अत श्री स्वामी जी का पत्र आषाढ, वदी ६ सोमवार अथवा २८ जून १८८० का हो सकता है। आषाढ सुदी ६ को शनिवार भी नही था।

२ ३० जून १८८०। मूलपत्र पहले हमारे पास था। अब प्रो० महेशप्रसाद जी के पास है।

[४] पत्र (१६१) [१८९]

मुशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

हम आज मेरठ मे पहुंचके लालकुर्ती बजार मे रामशरणदास के बगले में ठहरे हैं। और यहा महीना भर ठहरने का विचार भी है। जो कुछ चिठी पत्रादि भेजो मेरठ में इसी पता से भेजना। तुम ने लिखा था कि पचीसवी जून को दोनो वेदों [का] १४वा [अक] छपकर तैयार हो जायगे। और हमने २४वी जून को राजा शिवप्रसाद का उत्तर भेजा था। २६वी को पहुचा होगा। और वह भी पहिली अप्रेल[1] वा पाचवी तारीख अप्रेल[1] त[क] छपके तैयार हो ही गया होगा। सब के पास वेदभाष्य के साथ रमाना भी तुमने कर दिया होगा। जैसा कि हमने पहिले पत्रो मे लिखा है वैसा करना। तुमको चाहिये कि आप जो २ वहा की कारवाहै २ दूसरे तीसरे पत्र मे जो काम किया लिख भेजा करो। भीमसेन ने पांच रुपैये माहवारी के लिये लिखा। सो आजकल इतना अन्नादि महगा नही है। कि जिस मे खान पानादि का निर्वाह ना हो। और मेरे आये पीछे कोई भी पुस्तक छोटा वा बड़ा जिसका आरभ मेरे पीछे आप ने वा भीमसेन ने किया हो नही पहुंचा। वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छपकर अभी तक नही आया। सधिविषय का अब तक प्रारभ न हुआ होगा। एक फर्मा व्यवहारभानु का छपना था ओ भी पूरा न हुआ होगा अब भीमसेन कहता है कि मैने बडा परिश्रम किया सो दो तीन महीने में क्या बनाके तयार किया। अपने लोगो की ये व्यवस्था है कि रुपैये के लिये तैयार और काम कुछ भी नही दिखाते। और जो हम काम देखेंगे तो आप ही बढ़ा देंगे। और वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर जलदी भेजना चाहिये। और राजाराम शास्त्री के लिये हमने लिख भेजा है कि पेंतीस रुपैये मे मजूर हो तो चल आवें और एक विद्यार्थी जो कि पचास श्लोक काम करके लिख सकता हो रसोई आदि के लिये पांच रुपैयें माहवारी का लेते आवें। कुछ व्याकरण भी पढा हो। और जो इनकार करे तो चालीस रुपये के बीच मे दो पडित अच्छी तरह लिख[ने] वाले बहुत जलदी आप और भीमसेन अच्छी तरह परीक्षा करके भेज देना। वे भी व्याकरण पढे हो। और भीमसेन [से] कह देना कि जब छापाखाने का काम अच्छी तरह चलेगा तब पांच रुपैये हो जायगे। भारौल वाले ठाकर फतेसिंह के १७) रुपैये वेदभाष्य के लिये तीन वर्ष के हमारे पास जमा कर दिये हैं।

मिती आ० सुदी १ सवत् १९३७[2] [दयानन्द सरस्वती]

---

१ यहा जुलाई के स्थान में अप्रेल भूल से लिखाया गया प्रतीत होता है।

२ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है॥ ८ जुलाई १८८०।

[९] उर्दू पत्र (१६२) [१८६]

मुंशी वखतावरसिंह जीव आनन्दित रहो ।

आज कल तुम्हारा कोई चिट्ठी पत्र नही आता। तुमने लिखा था कि २५ जून को वेदभाष्य तय्यार हो जावेगा। और २४ जून को राजा शिवप्रसाद का जवाव हम ने फर्रुखाबाद से तुम्हारे पास भेज दिया था। और वेदभाष्य को दुरुस्त हुए भी आज १६ या १७ दिन हुए। राजा जी के जवाव का पुस्तक हद्द के दरजह ८ दिन मे छपकर तय्यार हो सकते है। पर न मालूम अव तक क्यो नही तय्यार हुए। और हम ने तुम से कहा था कि दूसरे तीसरे दिन खत भेजते रहना। मगर अव २०-२० दिन तक आपके चिट्ठी पत्र का दर्शन नही होता। आप को चाहिये कि हफता मे दो दफा चिट्ठी भेजा करो। और सव हाल कच्चा पक्का आमदनी खर्च का मुफसिल लिखा करो और यह भी लिखना कि राजा शिवप्रसाद का जवाव और वेदभाष्य अव तक छप कर क्यो नहीं आया। और फाऊण्डरी यानि हरफ वगैरा ढालने का सांचा और औजार कलकत्ता से आये या नही। और हर्फ वगैरा ढालने शुरु हो गये या नही। अव हम वेदभाष्य के पत्रे तय्यार कर रहे हैं। और सन्धिविषय के पत्रे भी शोधे जाते हैं। दो चार दिन मे वेदभाष्य और सन्धिविषय के पत्रे तुम्हारे पास पहुंचेंगे। और क्या आज तक हमारे नाम की कोई चिट्ठी काशी मे ऐसी नही आई होगी जो हमारे पास भेजने के लाइक हो। जरूर आई होगी। मगर तुम भेजनी भूल गये होगे। और तुम जो अपने आर्यदर्पण निकालो तो जो वृत्तान्त मुंशी इन्द्रमन जी की वदनामी का मुसलमानों ने अपने अखवार जामे जमशेद मे छापा था, और उस का जवाव और मुख्तसर हाल अखवार नैय्यरे आज़म मथरा मतबूआ ३० जून सन् ८० और अखवार दवदवा कैसरी वरेली मतबूआ ३ जुलाई सन् ८० मे छपा है।[1] तुम भी अपने समाचार में छाप देना। उसमे साहव मैजिस्ट्रेट वहादुर मुरादाबाद के नाम तहकीकात का हुक्म गवर्नमेण्ट से आया है। और जो कोई काशी में और समाचार हो, तो उसमे से अगरेजी से और भाषा वन सके तो जरूर छपवा दीजिये। और कलकत्ता में भी जो समाचार या अखवार अगरेजी का निकलता हो, और तुम उसमे छपवा सकते हो, तो वहां भी छपवा दो, और अमृतवाजार पत्रिका के एडीटर को भी लिख के इस को छपवा देना। और अव वेदभाष्य के १५ [अक के] भेजने में तुम क्यों देर कर रहे हो। लोग घवरा रहे हैं। इसमें

---

१. यह पत्र इस तिथि के ६, ७ दिन पश्चात् लिखा गया है।

जितनी देर करोगे, उतना ही महा हानि का सवब होगा। और मुशी जी का सव हाल मुफस्लि लिख कर अमृतबाजार पत्रिका में और थ्यासोफिस्ट में छपने के लिये भेज देना। और हम यहां एक महीने तक ठहरेंगे।[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१६] पत्र (१६३) [१८७]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हाय विद्वद्वर्य्याय वैदिकधर्ममार्गैकनिष्ठाय निगमोक्त-लक्षणप्रमाणैर्धर्म्यकर्मोपदेशप्रवर्त्तितस्वान्तायैतद्विरुद्धस्योच्छेदने प्रोत्साहितचित्ताय सद्विद्वद्भ्योऽभ्यानन्दार्थं सूक्तसमूहवाक्यानुवाक्यप्रयुक्तवक्तृत्वाभ्यासशालिने सर्वदा विद्यार्जनदानोत्कृष्टस्वभावाय लब्धार्यविपश्चिन्मानायास्मत्प्रियवराय श्रीयुतश्यामजि-[कृष्ण]वर्म्मणे दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमत्रास्म[दीयम]स्ति तत्रत्य भवदीय नित्यमेधमान चाशासे।

वहुमासाभ्यन्तरे भावत्कपत्रानागमेन चित्तानन्दाह्रासात् पुनरानन्दप्रजननायेदानीमेतस्मिन्निम्नलिखिताभिप्रायाणां भवतः स[का]शात् सद्य' प्रत्युत्तराभिकाङ्क्षिणोत्साहयुक्त'''मया पत्र श्रीमत्सनीड प्रेष्यते।

तत्र कीदृग्गुणकर्मस्वभावा मानवा भूजलवायुभक्ष्यभोज्यलेह्यचूष्या पदार्थाश्च सन्ति। अतो गत्वाऽद्यपर्यन्त तत्र भवदात्मशरीरारोग्यमस्ति न वा। यदर्था यात्रा कृत्ता तत्प्रयोजनं प्रतिदिन सिध्यति न वा। भवत्समर्थ्यादि तत्रत्याः कति जना सस्कृतमधीयते क क ग्रन्थ च। तत्र भवतः कियती मासिकी प्राप्तिर्व्ययश्च। कस्मिन् कस्मिन् समये पठ्यते पाठ्यते चिन्त्यते च। ततोऽत्र कदाऽऽगमनाय निश्चित कृतमस्ति। किमिद यथात्र सद्धर्मोपदेशजन्या भवत्कीर्तिस्तूरण देशदेशान्तरे प्रसृता तत्र कुतो न जाता। जाता चेद्यतो दूरदेशस्थास्ति, तस्मादस्माभिर्न श्रुता किम्। किं वैतत्कारणेऽवकाशो न लब्धः। एव चेद् यदा भवता पठनपाठने सम्पूर्य्य (?) वेदार्थोत्कर्षाभिप्रायसूचकानि वक्तृत्वानि तत्रत्येपु देशेषु कृत्वैवात्रागमने भद्र नान्यथेति निश्चयो मेऽस्ति। कुत.। धनलाभात् सत्कीर्त्तिलाभो महान् शिवकरोस्त्यत। श्रीयुतप्रियवराध्यापकमुनियरविलियस[मो]क्षमूलराख्यानामधुना वेदादिशास्त्राणां मध्ये कीदृङ् नि[श्चय] प्रेम तदर्थप्रचारा[य] चिकीर्षाऽस्त्यन्येषा च। तत्र नन्दनपुर्य्यां काचिद् वैदिकी शा[खा]ख्या थियोसोफीकलसभाप्रेरिता सभास्तीति श्रुत तत्तथ्य न वा। भवता [कदा]चिच्छ्रीमतीराजराजेश्वरी महाराज्ञी पारलीमेंटाख्या

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

सभा च दृष्टा न वा । भवता श्रीमत्प्रियवराध्यापकमुनियरविलियसाख्यादिभ्यो ऽत्यादरेण मन्नियोगतो नमस्त इति सश्राव्य कुशल पृष्ट्वा ते श्रुत्वा यद्यत्प्रत्युत्तरं ब्रूयुस्तत्तदन्यच्च यद्यद्युक्तं च लिखितु तत्तस्य सर्वस्यक्त(?) प्रत्युत्तराणि यद्यस्यानुक्तप्रश्न-स्यापि लेखार्हमुत्तरं वैतत्सर्वं विस्तरेण संलिख्याविलम्बेन पत्र मत्सन्नि[धौ] प्रेषणीयमेवेत्यलमधिकलेखेन विचक्षणोत्कृष्टेषु ॥

मुनिरामाङ्कभूम्यब्द आषाढस्य शुभे दले ।
षष्ठ्यां हि मंगले वारे पत्रमेतद्लेखिषम् ॥[1]

इस पते से पत्र भेजना । बनारस लक्ष्मीकुण्ड मुंशी बखतावरसिंहजी मैनेजर वैदिक यन्त्रालय के द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के समीप पहुंचे ॥

इदं वैदिकयन्त्र स्वाधीन नवीनस्थापितमस्मा[भि]रार्य्यवेदादिशास्त्राणां मुद्राऽक्षरससिद्ध्य इति वेद्यम् ।

[दयानन्द सरस्वती][2]
(मेरठ)

---

१. संवत् १९३७ आषाढ सुदी ६ मंगलवार। १३ जुलाई १८८०।

२. पहले हम ने यह पत्र आर्यभाषा में संख्या ३८ के अन्तर्गत छापा था। इस का अंग्रेजी अनुवाद सन् १८८० या ८१ में इङ्गलैण्ड के एथिनियम पत्र में अध्यापक मोनियर विलियम्स की ओर से छपा था। भारत में भी उसी अंग्रेजी के कई अनुवाद समय २ पर प्रकाशित हुए थे। हम ने मूल अंग्रेजी की सहायता से भाषा उल्थे को ठीक बनाया था। पाठक आश्चर्य करेंगे कि पत्र के लिखे जाने की तिथि वाला श्लोक जो हमने बना के धरा था, उस में और श्री स्वामीजी के रचे मूल श्लोक में एक ही अक्षरका भेद रहा था। श्लोक के तीसरे पाद में श्री स्वामी जी ने "हि" रखा था। उस के स्थान में हमने "च" बनाया था। ईश्वर कृपा से इस पत्र का मूल परोपकारिणी के संग्रह में सुरक्षित रहा। उसी की प्रतिलिपि विलायत गई होगी। दीवान बहादुर हरविलास जी सारडा मन्त्री सभा ने मूल पत्र का चित्र दयानन्दग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण संवत् १९८१ में छापा था। उसी से अब यह मूलपत्र संस्कृत में ही छापा गया है।

[१] पत्र (१६४) [१८८]

वाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो !

बड़े आश्चर्य की वात है कि तुमने वहा जाके एक भी पत्र न भेजा। अव जो २ लिखने योग्य हो सव समाचार लिख भेजना। सुना है कि वावू केशवचन्द्रसेनजी आज कल वहां हैं। तुम आनन्द में होगे हम वहुत आनन्द में हैं। एक वात तुमको आवश्यक जान के लिखी जाती है। जो वहा ब्रह्मी ओषधी मिलती हो तो उसको ले सुखा पारसल कर डाक मे भेज दो उसका महसूल वहा दे दिया जाएगा उस पर पता यह लिखो। (हरि पण्डित जी कामदार महाराजे विजयनगराधिपति बनारस भेलूपुरा)। अब छापा का काम चलने लगा है। हम यहा मेरठ मे वीस या पच्चीस दिन रहेंगे। जव तुम प्रयाग को आओ तव ब्रह्मी ओषधी वहुत सी लेते आना। जो आज कल न हो तो भादो और आश्विन में वहुत होती हैं वहा के मनुष्यों से पूछ के निश्चय कर लेना वहां रईस उसको जानते होंगे। सव से मेरा नमस्ते कह देना।

दयानन्द सरस्वती

स० १९३७ मि० आ० शु० ११ रविवार।[1]

---

[१] पत्र (१६९) [१८९]

ओ३म् लिफाफा

लाला रूपसिंहजी आनन्दित रहो !

तारीख १९ जुलाई को एक पत्र आपका दो टिकट सहित और २३ जुलाई[2] को ६०) रुपैये का मनियाडर हमारे पास आया। इस वात पर जैसा कि हमने आशीर्वाद आर्यसमाज फरुकावाद को दिया वैसा तुम को भी देते हैं। आप आगे की साल से फरुखावाद मन्त्री आर्यसमाज कालीचरण रामचरण के पास साठ २ रुपैये हर साल भेजना। ये रुपैये भी दो तीन दिन मे फरुक्खावाद में उक्त मन्त्री के

---

१. आषाढ। १८ जुलाई सन् १८८०।

यह सारा पत्र श्री स्वामी जी के हाथ से लिखा हुआ है। मूलपत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२ २३ भूल से लिखा गया है। २१ जुलाई चाहिए।

पास भेजेंगे वहा से अपना हिसाव समझ लिया करो । शुक्रिया अदा करना इसका अर्थ सस्कृत में धन्यवाद देना ऐसा है ।

मै मेरठ मे २० दिन तक रहूगा ।

(दयानन्द सरस्वती)

मिति आपाढ सुदी १५ सवत १९३७ ।[1]

---

[२] पत्र (१६६) [१९०]

श्रीमदनवद्याभ्यस्तसुविद्यालङ्कारपरिशोभितायै भारतवर्षीयेदानीन्तनस्त्रीजनानां निवारितमूर्खत्वादिकलङ्कदार्ष्टान्तस्वरूपायै सत्वसौजन्यार्द्रताभ्यार्य्यविद्वद्वर्य्यस्वभावान्वितप्रकाशितस्वाभिप्रायलेखायै प्रियवरमनसे श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः स्वाशिषो भूयासुस्तमाम् ।

शिवमत्रास्ति तत्र भवदीय च नित्यमाशासे । यद्भवत्याः प्रेमास्पदानन्दप्रद पत्रमागतं तत्समालोक्यातीव सन्तुष्टिं प्राप्तोऽह पुनरपि श्रीमत्यै यत्किञ्चित्कष्ट दातु प्रवर्त्ते तत्क्षन्तुमर्हति । महदाश्चर्य्यमेतद्यदानन्दवर्द्धनाय भवतीं प्रति पत्र प्रेषित तत्प्रत्युत्तरितमागतं सद्धर्षशोककरं कुतो जातमिति प्रतिभाति न· कस्य श्रीमत्या आर्जवलेखं दृष्ट्वा सुखं सनाभ्यस्य मरण श्रुत्वा दु ख च न जायेत । परन्त्वेवं जाते सत्यपीदानीमशक्ये सांसर्गिकसयोगवियोगात्मकजन्ममरणस्वरूपे लोकव्यवहारे भवती शोचितु नार्हति । श्रीमत्याः कुत्रत्य जन्म कियदायुः किं किमधीत श्रुत च ? किं सस्कृतादार्य्यावर्त्तीयभाषाभ्यो भिन्ना काचिदन्यद्देशभाषाभ्यस्तास्ति न वा ? कास्ति निज गृहमभिजनश्च मातापितरौ विद्यमानौ नो वा ? मृताद्बन्धोरन्ये ज्येष्ठाः कनिष्ठा वा भ्रातरो भगिन्यश्च सन्ति न वा ? यो मृतः स भ्वतो ज्येष्ठ कनिष्ठो वा ? अधुनाऽनघायाः सनिधौ स्वजातीयः पुरुष. स्त्री वा काचिद्वर्त्ततेऽथवैकाकिनी च ? अहो कुतोऽस्मदीय पत्रं काकतालीयन्यायवत्सुखदु.खसयोगसूचक जातमिति विस्मयामहे। परन्तु विद्वद्वर्य्यायां भवत्यां शोकस्य लेशोऽपि स्थातुमनर्ह इति निश्चित्य मृडयामः । यदि मार्गव्ययार्थो धनापेक्षास्ति तर्हि सद्यो विज्ञाप्यतामियद्धनमत्र प्रेषणीयमिति नात्र शङ्कितु लज्जितु योग्या वर्त्तनेऽपूर्वपरिचये कथं धनार्थं लिखेयमिति । यदि स्वसमीपे वर्त्तते तर्हि लेखितु न योग्यम् । यथा मया पूर्वपत्रे लिखित तथैवात्र प्राप्तायां श्रीमत्यां लब्धव्यमित्येवानवद्ये कार्य्यमस्तु । यथा भवत्यात्र स्वशुभागमनसूचना द्विविधा कृता तत्राद्यायां प्रतिज्ञायां मासात्पर इति वचसि यदि शक्यमत्रागन्तु तर्ह्यत्यन्त वरमिति नियोजनम् । अहमप्य-

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सरदार रूपसिंहजी ने हमें दिया था। २१ जुलाई १८८० ।

त्र पञ्चविंशतिदिनानि स्थातुमिच्छाम्येतदन्तराले समयेऽत्रागमिष्यति चेत्तर्हि मत्समागमो भविष्यति। पुनरितो यत्र गमिष्यामि तस्यापि सूचना श्रीमती प्रति विज्ञापयिष्यामीत्यलमधिकलेखेन विपश्चिद्विचक्षणायाम् ।

मुनिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे शुचौ मासे सिते दले ।
पौर्णमास्या बुधे वारे लिखित्वेदं ह्यलङ्कृतम् ॥[1]

---

[६] पत्र (१६७) [१९१]

ओ३म

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो ।

जो हमने ऋग्वेद और यजुर्वेद के पत्रे भेजे थे पहुचे होंगे । कल और भी पत्रे भेजेंगे । हमने फरूखावाद को लिख भेजा और कलकत्ते का पत्र भी भेज दिया। परन्तु यह काम उन से होना कठिन है। अन्य किसी भद्र मनुष्य से कराना चाहिये। जो रुपैये हमारे सामने कलकत्ते मे भेजे थे उन का हिसाव लिख भेजना। जिने १७) रुपैये दिये थे हमको, वह ठाकर फतेसिंह पहिले के गाहक हैं । उसको भीमसेन भी जानता है। वह ठाकर जाल[म]सिंह का सम्वन्धी है । क्या उसका नाम रजष्टर मं नही लिखा है। जो मुझ से पूछते हो । निम्नलिखित पुरुषो की रसीद छपा देना कि जिनोने दो पण्डितो के लिये जितने २ रुपैये दिये हैं । वावू दुर्गाप्रसाद रईस फरूखावाद ने ५०० रुपैये अनाथो के पालन के लिये। १०) स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अनाथों के पालन। और ५००) रुपैये वेदभाष्य वनवाने के लिये दिये। २५०) सेठ निर्भयराम रईस फरूखावाद ने पण्डितो के लिये दिये । १५०) लाला कालीचरण रामचरण रईस फरूखावाद ने प० वे० के लिये दिये । २००) लाला जगन्नाथ प्रसाद रईस फरूखावाद ने प० वे० दिये । १००) लाला गणेशराम रईस फरूखावाद ने प० वे० के लिये दिये। ५०) लाला गुरुमुखराय रईस फरूखावाद ने प० वे० के लिये दिये। ५०) लाला नारायणदास रईस फरूखावाद ने दिये प० वे० के लिये दिये। ६०) वावू रूपसिंह त्रेजरी क्लर्क कोहाट पजाव ने प० वे० के लिये दिये। ४०) आर्य्यसमाज दानापुर ने प० वे० के लिये दिये । २५) आर्य्यसमाज देहरादून ने प० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज रुडकी ने प० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज सहा[र]नपुर ने दिये। इस मे इतना विशेष है कि पण्डितों को रख के वेदभाष्य को वनाने में १००) मावारी हम खर्च किया

---

[1] सं० १९३७ आषाढ सु० १५ । २१ जुलाई १८८० ।

करेंगे। छः वर्षों तक इस में ५०) रुपैये मावारी देने मे सब लोग और ५०) रुपैये देने मे अकेला फरुखावाद रहेगा। यह चन्दा छ वर्ष का है। शाय[द] और भी इकट्ठा भया होगा। अगाडी मालूम होगा।[1]

मिती श्रावण वदी १ सवत् १९३७।[2] मेरठ

[दयानन्द सरस्वती]

[3]दो पडितो को रखने के लिये ६ छ. वर्ष पर्यन्त देंगे। प्रति मास १००) रुपैयो के हिसाब से दिया करेंगे। मावारी १००) रुपैया मे जितना चन्दा न्यून रहेगा उतना आर्य्यसमाज फुरुखावाद दिया करेगा। ओर वाकी अन्य सब समाज देंगे। अर्थात् ५०) मावारी छः वर्ष तक अकेला फुरुखा[वा]द आर्यसमाज और ५०) रुपैये मावारी अन्य सब समाज देंगे। परन्तु शोक है कि अब तक कोई योग्य पण्डित नहीं मिला है वहुत ठिकानो मे लिखा तो है। तुम भी जहा तहां लिखना और वेदभाष्य के टाटिलपेज पर जो विज्ञापन पडितो के लिये लिखा है वह अवश्य छाप देना।[3]

श्री स्वामी जी।[4]

यह भी लिखिये कि यह रुपया एक दफा दे दिया वा वार्षिक देते हैं। सो सव वृत्तान्त सपष्ट करके लिखिये। जो रसीद गडवड छप जावे अच्छा नही। इसलिये जो स्पष्ट हो जावे अच्छा है।

---

[७] पत्र (१६८) [१९२]

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

टाटाल पेज वादामी पर अछा होगा, छाप दो। आज यजुर्वेद और ऋग्वेद के पत्रे शोध कर भेज दिये हैं। तेली की चिठी कोई नही आई। ऐसे वीमागे को

---

१ इस पत्र की कई वातें, अर्थात रुपयों का व्योरा मुशी वखतावरसिंह जी को समझ नहीं आया। उन्होंने पत्र पर वहा २ चिन्ह कर के स्पष्टीकरणार्थ पत्र श्री स्वामी जी को लौटा दिया। स्वामी जी महाराज ने जैसा ठीक करके पत्र पुनः भेजा वैसा हम ने ऊपर छाप दिया है। तथा अगली पक्तिया भी श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से उसी पत्र की पीठ पर लिख दीं। वे आगे छापी जाती है।

२ २२ जुलाई १८८०।

३–३ यह श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लेख है।

४. पूर्वपत्र की पीठ पर यह लेख मुन्शी वखतावरसिंह जी का है। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

इनाम देने लगोगे तो कहां पूरा पडेगा। पन्द्रह का अव भेजोगे और सोलह सत्रका फिर, ये वहुत अच्छा किया। ३२ २ पृष्ठ से अधिक मत वढ़ावो। नहीं तो हमारे वेदभाष्य के वनने में हरकत होगी। ये वी नोटिस दे दो वेदभाष्य के टाटल पेज पर कि हम को एक ऐसा पडित चाहता, कि जो पाणि[नीय] व्याकरण अर्थात् अष्टाध्यायी, महाभाष्य, पूर्वमीमासा, न्याय, निरुक्त, निघटु, पूर्वमीमासा[1] न्याय, वेदान्त, उपनिषद, छन्दोग्रथ आदि वेदागों का पढ़ा हुआ सस्कृत की भाषा व्याकरण की रीति से सुदर[1] वना सकता हो एक वेद अथवा दो वेद भी पढ़ा हो सस्कृत की शुद्धि कर सके। उसको पचास वा साठ रुपैये माहवारी देंगे। परतु शीघ्र. शुद्ध लिखने वाला हो। यह तुमारे पास काशी मे तुमका खवर देदे।

मिती श्रावण वदी २ शु० सवत १९३७।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (१६९) [१९३]

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

अव तुमने ८ दिन पीछे चिट्ठी भेजना वद क्यो कर दिया। वरावर आठ दिन पीछे चिट्ठी भेजा करो। और यह लिखा करो कि इस सप्ताह मे इतनी पुस्तकें छपी और यह २ काम हुआ। और अव. क्या होता है। आगे सप्ताह मे कौन २ काम होने वाला है। और जव २ चिट्ठी लिखा करो मुशी जी से पूछ देखा करो कि इन ८ दिनो मे कितनी पुस्तकें छपी। और जव २ छप कर तैयार हुआ करें सव गण कर सख्या लिखा करो। और मुशीजी तो माहवारी आमदनी विक्री के रुपयों का हिसाव चिट्ठी लिखते ही है। तथापि तुम भी वखत २ सव पूछ लिया करो। और मुशीजी से कहना कि तुम को कुछ भी शका न करनी चाहिये। आप इस्तिफा शरकारी नौकरी का दे दीजिये। जव तक तुम काम करने वाले हो, जव तक तुम्हारे शरीर में प्राण है और सामर्थ्य है तव तक आनन्द मे काम किया करो और पश्चात भी तुम्हारी सलाहसे काम हुआ करेंगे और वसीयत-नामा की सभा के सभासद सव आर्य्यसमाज.के हैं। किसी प्रकार की हानि उनके लिये न करेंगे। और निश्चय है कि मुशीजी भी ऐसे नही हैं कि कभी धर्मविरुद्ध काम करें। और वसीयतनामे मे यह अवकाश रखा है कि चाहे जिसको रजष्टरी जितने अधिकार वा धन देने आदि के लिये मै करा दूगा। उसका पूरा करना सभा को अवश्य होगा। और अधिक न्यून अदल वदल वा दूसरा वसीयननामा करने का

---

१ पूर्वमीमासा—सुन्द० तक इतना लेख श्री स्वा० जी की अपनी लेखनी से है।

२ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। २३ जुलाई १८८०, शुक्रवार।

अधिकार मैने अपना पूरा रखा है। चाहे किसी सभासद को निकाल दूं वा किसी अन्य सभासद को भरती कर दूं। इत्यादि नियम इसी लिये रखे हैं कि जो चाहें सो हम कर सकते है। ये सभासद मुशी जी के सुहृद ही हैं। और सब विद्वान् और धार्मिक हैं। किसी के लिये अन्याय की वृत्ति नही करते तो क्या मुशी जी के लिये अन्यथा प्रवृत्ति करने को उद्यत हो सकते है। कभी नही। क्योकि धार्मिक लोग सदा धर्म प्रिय और अधर्मद्वेषी ही होते हैं। क्या मैं वा वे सभासद मुशी जी को परोपकार के लिये प्रवृत्त हुए नहीं जानते है। इस से यह पत्र मुशी बखतावरसिंह जी को एकान्त मे सुना देना। और इस पत्र को अपने पास रखा चाहे तो दे देना। तुझ को यह पत्र इस लिये लिखा है कि तू भी इस का साक्षी रहै। और यह लेख मैने अपने हाथ से इस लिये किया है कि यह बात गुप्त रहे और समय पर काम आवे।[१]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (१७०)] १९४]

ठाकरदास जी योग नमस्ते।

पत्र आप का संवत् १९३७ आषाढ सुदी पञ्चमी पंजाबी का लिखा हुआ स्वामी जी के पास पहुंचा। देख कर अभिप्राय जान लिया। उस के उत्तर लिखने के लिए स्वामी जी ने मुझ को आज्ञा दी है इस से आप को मैं लिखता हूं।

बड़े आश्चर्य की बात है कि जो लोग विद्वान् नही होते, वे ही अन्यथा बातो के लिखने मे प्रवृत्त हो कर अपनी हानिमात्र कर बैठते है क्योकि उन को अपनी और पराई बातो की समझ तो होती ही नही। इस से अपने आप गढ़ा खोद उस मे आप ही गिर पड़ते हैं। तुम्हारे लेख से हम को यह विदित हुआ कि आप किसी विद्या को न पढ़े और न किसी विद्वान से कभी तुमने संग किया है, नही तो स्वामी जी के लेख के अभिप्राय को क्यों न समझ लेते? और अपना लेख अपने अभिप्राय के विरुद्ध क्यो लिखते? देखिए, जब स्वामी जी ने बारहवें समुल्लास में अनेक ठिकानो में यहे चाहे अर्थात जैन लोग चाहे ऐसा कहते हैं लिखा ही था फिर आपने यह क्यो पूछा कि किस शास्त्र ग्रन्थ के अनुसार छापा है? इस लेख से विदित होता है कि आप जिस सम्प्रदाय में हैं जब उसी का हाल ठीक नही जानते तो दूसरे जैनियो के सम्प्रदायो की बातो को कैसे जानने में समर्थ हो

---

१. यह पत्र आर्यदर्पण मई सन् १८८६ पृ० ११७-११८ पर छपा है। हमने इसे वहीं से लेकर यहा धरा है। प्रकरण से जुलाई १८८० में लिखा गया प्रतीत होता है।

सकते हैं। और इस से यह भी विदित होता है कि आप और आपका कोई सगी भी संस्कृत और भाषा को नहीं पढ़े हैं। जब स्वामी जी ने यह लिखा है कि जैन लोग ऐसा कहते हैं फिर क्या तुम्हारा लिखना कि किस शास्त्र और ग्रन्थ की यह बात है, मिथ्या नहीं है। और जो तुमने श्लोक लिखे हैं वे ही स्वामी जी के सब लेख में प्रमाणभूत हैं। परन्तु जो तुमने अग्निहोत्र, तीन वेद, त्रिपुण्ड्र भस्म धारण आदि बुद्धि और पुरुषार्थ से हीन मनुष्यों की जीविका, स्वभाव से जगत् की व्यवस्था वर्ण और आश्रमों की क्रिया सब निष्फल हैं लिखा क्या ये बातें तुम्हारा सर्वस्व नीलाम होने में थोड़ा अपराध है। मैं आप से सुहृदता से लिखता हूं कि इस विषय को आप झूठा कभी मत समझना। इस में सब जैन मत वालों की सम्मति ले लीजिए। जैसे कि हम सब आर्यों की तुम्हारे सामने अदालत करने में तन मन धन से निश्चित हैं। क्योंकि तुम जैन लोगों ने परम पवित्र सब सत्य विद्याओं से युक्त, सब मनुष्यों के लिए अत्यन्त हितकारी ईश्वरोक्त वेदों और वेदानुकूल अन्य सच्छास्त्रों की निन्दा और इन परोपकारी पुस्तकों के नाश करने से इतनी हानि की और करनी चाहते हो कि जिसमें सब जैनियों का तन मन और धन लग जावे तो भी नालिश की डिगरी पूरी न होगी। इस लिए तुम सब जैनियों को विज्ञापन देदो कि वह भी सब तुम्हारे सहायक होके इस मामला को हम लोगों से चला सकें। तुम सब इस में तैयार हो जाओ जैसे कि हम लोग सत्य और असत्य के निश्चय करने में तत्पर हैं। यह अपने मन में बड़ा विचार कर लीजिएगा। हम आर्यों को वैष्णव आदि के समान कभी मत समझ लेना कि जैसे उनके रथ आदि निकालने के विषय को अदालत से जीत लेते हो वैसे हमारे साथ कभी न कर सकोगे। क्योंकि जैसे पाषाण आदिक मूर्तिपूजक तुम हो वैसे वे भी हैं। और हम हैं परमेश्वर पूजक और तुम हो अनीश्वर वादी, अर्थात् स्वतः सिद्ध अनादि ईश्वर को नहीं मानते। इत्यादि हेतुओं से तुम्हारा पराजय हमारे सामने होना किसी प्रकार असंभव और कठिन नहीं है। इस लिए तुमको नोटिस देते हैं कि तुम आपस में मिलकर इस मामला को चलाओ। और जब तुम्हारी योग्यता हमारे सामने कम दीखती है तो स्वामी जी के सामने तुम्हारी क्या योग्यता हो सकती है ? कभी नहीं। देखना, तुम्हारे हजारों ग्रन्थों से वेद आदि सच्छास्त्रों की मिथ्या निन्दा कचहरी में हम सब हाकिमों आदि के सामने ठीक २ सिद्ध कर देंगे। इस में कुछ भी सन्देह मत जानना। जितना तुम्हारा सामर्थ्य हो उतना खर्च हो जाने पर भी आप लोगों को बचना अति कठिन देख पड़ता है। और एक यह बात भी करो कि जैसे हमारे बीच में स्वामी जी बहुत से उत्तम विद्वान् हैं वैसे जो कोई एक तुम्हारे मध्य में

सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो उसको स्वामी जी के सामने खड़ा कीजिए कि जिस से तुम और हमको वैदिक और जैन मत के चर्चा मे कुछ आनन्द प्राप्त हो और अन्य मनुष्यो को भी लाभ पहुँचे। हमारे इस लेख को नि.सन्देह सत्य और मूल मन्त्र तथा सूत्र के तुल्य समझना कि इतने ही लिखने से सब कुछ जानियेगा। तुम्हारे सामने इससे अधिक लिखना हमको आवश्यक नही किन्तु जब २ जहां २ जैसा २ प्रकरण आवेगा तब २ वहां वहां वैसा २ ही हम लोग तुम को ठीक २ साक्षात् करा दिया करेंगे। ऐसा निश्चित जानो। जैसे यह पत्र हम लोग वहां गुजरांवाला के आर्यसमाज के द्वारा ही भेजते हैं वैसे आप लोग वही के समाज द्वारा ही हमारे पास पत्र भेजा कीजिए।

मिति श्रावण वदी ५ सोमवार संवत् १९३७।[1]

---

(६) पत्र (१७१) [१२९]

ता० १४ जुलाई सन् १८८०[2]

श्रीयुत प्रियवर एच एस् करनेल ओलकाट साहेब तथा एच पी ब्लेवत्स्किी जी आनन्दित रहो। नमस्ते। अब मेरा शरीर नीरोग हो के स्वस्थानन्द मे है। आशा है कि आप लोग भी आनन्द मे होगे। सुना था कि आप लोग लंका अर्थात् सिलौन की यात्रा के लिए गए थे। वहां क्या २ आनन्द की बातें हुईं और कुशल क्षेम आए ही होगे। मैं इस समय मेरठ में ठहरा हूं। एक मास भर रहूंगा। जैसा दृढ़ता से वेदों को परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त सब का हितकारी आपने अपने नागरी पत्र मे लिख कर काशी को मेरे पास भेजा था उसको देख मैं और समस्त आर्य्य विद्वान् लोग बहुत प्रसन्न हुए। सत्य है कि (अगीकृत सुकृतिनः परिपालयन्ति) जो धर्मात्मा विद्वान् पुरुष हैं वे जिस धर्म की बात को ग्रहण करते हैं उसको कभी नही छोड़ते। अब मैं जो थियोसोफीकल सुसायटी में वैदिकी शाखा है वह आर्य्यसमाज और थियोसोफीकल सुसायटी की भी शाखा है। न आर्य्यसमाज थियोसोफीकल सुसायटी की शाखा और

---

१ प० लेखरामकृत ऋषि जीवनचरित पृ० ६८५, ६८६। जीवनचरित में पत्र के अन्त में "दयानन्द सरस्वती" लिखा है। वस्तुतः यह पत्र आनन्दी लाल के हस्ताक्षरों से गुजरावाला भेजा गया था। इस के लिखाने वाले, जैसा पत्र के आरम्भ में लिखा है, श्री स्वामी जी ही थे। दयानन्द मुख चपेटिका में इस के आगे कुछ और भी पक्तिया हैं और अन्त में आनन्दी लाल जी के अंग्रेजी में हस्ताक्षर हैं। २६ जुलाई १८८०।

२. १४ जुलाई को लिखा गया होगा, परन्तु श्रावण वदी ६ = २७ जुलाई १८८० को अंग्रेजी में अनुवादित करा के भेजा गया होगा। देखो पत्र के अन्त में श्रावण की तिथि।

न थियोसोफीकल सुसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है, किन्तु जो इन दो समाजो के धर्म के सम्बन्धार्थ प्रेम का निमित्त वैदिकी शाखा है, वही परस्पर सम्बन्ध का हेतु है। इत्यादि बातो की प्रसिद्धि जैसी आर्य्यसमाजों मे मैं शीघ्र करूगा वैसी प्रसिद्धि थियोसोफीकल सुसायटी मे भी आप अवश्य करेंगे। इस बात का गुप्त रहना ठीक नही। क्योंकि आगे आर्य्यसमाज वैदिकी शाखा और थियोसोफीकल सुसायटी के सभासदों को, जैसा पूर्वोक्त सम्बन्ध है वैसा ही जानना, मानना, कहना और प्रसिद्धि करना सर्वदा उचित होगा, अन्यथा नहीं। ऐसी प्रसिद्धि हुए पर किसी को कुछ भ्रम न रहकर सुनिश्चय से सब को आनन्द होता जायगा। और जो मैने सिनट साहेब से कहा था वह ठीक है। क्योकि मैं इन तमाशे की बातो को देखना दिखलाना उचित नही समझता। चाहे वे हाथ की चालाकी से हो चाहे योग की रीति से हों। क्योकि योग के किए कराये बिना किसी को भी योग का महत्व वा इसमे सत्य प्रेम कभी नही हो सकता, वरन सन्देह और आश्चर्य्य में पड कर उसी तमाशे दिखलाने वाले की परीक्षा और सब सुधार की बातो को छोड तमाशे देखने को सब दिन चाहते हैं, और उसके साधन करना स्वीकार नहीं करते। जैसे सिनट साहेब को मैंने न दिखलाया और न दिखलाना चाहता हू, चाहे वे राजी रहें चाहे नाराज हों क्योंकि जो मैं इसमें प्रवृत्त होऊ तो सब मूर्ख और पण्डित मुझ से यही कहेंगे कि हमको भी कुछ योग के आश्चर्य काम दिखलाइये, जैसा उसको आपने दिखलाया, ऐसी ससारकी तमाशे की लीला मेरे साथ भी लग जाती जैसी मेडम एच पी ब्लेवस्तिकी के पीछे लगी है। अब जो इनकी विद्या धर्मात्मता की बाते हैं कि जिनसे मनुष्यो के आत्मा पवित्र हो आनन्द को प्राप्त होसकने हैं उनका पूछना और ग्रहण करने से दूर रहते हैं। किन्तु जो कोई आता है मेडम साहेब आप हमको भी कुछ तमाशा दिखलाइये। इत्यादि कारणो से इन बातो में प्रवृत्ति नही करता न कराता हू। किन्तु कोई चाहे तो उसको योग रीति सिखला सकता हू कि जिस[1] से

---

1 इस पत्र का इतना अश हम ने पहले परोपकारी पत्र से छापा था। "जिस" से आगे कुछ शब्द परोपकारी के सम्पादक ने अपनी ओर से बना के धरे थे। महात्मा मुशी राम जी ने पत्र व्यवहार में "स से वह स्वय" से लेकर पाठ छापा था। प्रतीत होता है कि परोपकारी में छापने वालों को मूलपत्र का पृष्ठ ३ नही मिला होगा। और म० मुशीराम जी को पहले दो पृष्ठ नहीं मिले। वहीं से हमने भी पहले इस एक पत्र को दो पत्रों के रूप में छापा था। अब संगति मिला कर पढने से ज्ञात हुआ कि यह एक ही पत्र है। इसी लिए अब यह यथार्थ रूप में छापा गया है।

वह स्वय योगाभ्यास कर सिद्धियों को देख लेवे । इससे उत्तम बात दूसरी कोई भी नहीं । मै बहुत प्रसन्नता से आप लोगो को लिखता हू कि जो आपने ईसाई आदि आधुनिक मत छोड, परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त वेदमत का स्वीकार कर, इसक प्रचार मे तन मन और धन भी लगाते हो। और उस बात से अति प्रसन्नता मुझको हुई कि जो आपने यह लिखा कि कभी आप भी वेदो को छोड़ दें तो भी हम लोग उन को न छोडेंगे। क्या यह बात छोटी हैं ? यह परमात्मा की परम कृपा का फल है कि जिसने हम और आप लोगो को अपने वेदोक्त मार्ग में निश्चय पूर्वक प्रवृत्त किए। उसको कोटि कोटि धन्यवाद देना भी थोड़े हैं। जैसी उसने हम और आप लोगो पर करुणा की है वैसी ही कृपा सब पर शीघ्र करे कि जिससे सब लोग सत्य मत मे चलें और झूठ मतों को छोड़ देवें। कि जैसा अपने आत्मा अत्यन्त आनन्दित हैं वैसे सब के आत्मा हों। और एक आनन्द की बात की सूचना करता हूं कि जिसको सुन आप लोग बहुत आनन्दित होगे । सो यह है कि एक वसीयतनामा १८ अठारह पुरुप अर्थात् जिन मे दो अर्थात एक आप और दूसरी ब्लेवस्तिकी और सोलह पुरुष आर्य्यावर्त्तीय आर्य्यसमाज के प्रतिष्ठित पुरुप हैं । इन आप सब लोगों के नाम पर पत्र और नियम लिख रजष्टरी कराके आप और सब लोगो के पास शीघ्र पत्र भेजूगा कि जिससे पश्चात् किसी प्रकार की गडबड़ न हो कर मेरे सर्वस्व पदार्थ परोपकार मे आप लोग लगाया करें और मेरी प्रतिनिधि यह सभा समझी जावेगी।

इस लिए उस पत्र को आप लोग बहुत अच्छी प्रकार रखियेगा कि वह पत्र आगे बड़े २ कामो में आवेगा । किमधिलेखेन प्रियवरविद्वद्विचक्षणेपु ।[1]

स० १९३७ मि० श्रावण वदी ६ मगलवार ।[3] ता० १४ जुलाई सन् १८८० ।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१ "यह पत्र पेंसिल से लिखा हुआ है और इस पर पृष्ठ सख्या ३ तीन है । जिससे विदित होता है कि इसके पूर्व दो पृष्ठ और लिखे गए थे, परन्तु उन दोनों पृष्ठों का पता नहीं है । यद्यपि पत्र के आदि, मध्य वा अन्त में कर्नल आलकट साहब का नाम लिखा हुआ नहीं है परन्तु सारे पत्र का आशय विचारने से यही बोध होता है कि यह पत्र श्री स्वामीजी महाराज की ओर से आलकट साहब को लिखा गया था ।"

२. "इस पक्ति से बहुत नीचे बाई ओर "स्वामी जी" पेंसिल से लिखा हुआ है जो बतलाता है कि श्री स्वामी जी महाराज की ओर से जो पत्र कर्नल आलकट साहब को लिखा गया उस की यह कापी है ।" ये १,२ टिप्पणिया "पत्र व्यवहार" में म० मुशीराम जी की हैं।

३ २७ जुलाई १८८० ।

[१] पत्र (१७२) [१२६]

Meerut,
27th July 1880

My Dear Babu Mulrajji, M A

It is a long time since I have heard nothing from you, still I hope you are quite well and wish you to give me, in future, occasional, if not often, intimation of your destination, &c

I am at Meerut for a fortnight last and intend staying here for about 20 days more

I have a mind to address our Government on a subject which is unquestionably a matter of public good, now wished for by hundreds of men, who have attended to my lectures, &c It is that Government may be moved to pass a regulation by which children of widows be entitled to claim and obtain their rights of the property, both movable and immovable, of their parents, and that any one trying to injure the widow in any way be made liable to punishment by Government

The results which I anticipate from the above are, that lives of thousands of children will be saved, miscarriages shall be minimised or not all, *Niyog* or remarriage of widows will thus be introduced at last &c &c , &c (*sic*) But this is a work not to be dealt with by men of ordinary abilities I, therefore, leave the matter to you and ask you to frame regulations worthy of the subject, giving everything requisite in detail I hope you will agree with me and do the needful I have given you only the hints, you have to think upon and frame what is called a law, complete in all respects, having sections, clause, &c , for every part of the point in view This draft regulation may be sent to me as soon as ready in a complete state for submission of Government under my signature, but the sooner it is done so much the better

There is a piece of *bad* news too which requires your advice, and considerable efforts which it may be worthy of I think you know well Munshi Indra Man of Muradabad He is now President of the Arya Samaj there, and a personage of unrivalled excellence No, he is universally known and it is useless to enter into detail as regards him The Mohammadans are his great enemies and have always been playing tricks to injure him but in vain They have succeeded this time to mortify him to the very soul, and that injury is not to him alone, but for all the Aryas

History of the case stands thus that a newspaper, called *Jam-i-Jamshed* of Muradabad, published an article on 16th May last stating that Munshi Indra Man, enemy of Islam, had published some books in these days against *Mohammadanism* which will give rise to a general disturbance in the Mohammadan community, and that he will lose his life by similar acts one day or other It is not known how the Magistrate and Collector of the city allowed him this liberty Now *I solicit* the Government to order destruction of the books he has published and abolition of the Press.

The said newspaper was laid before Government (I mean H E. the Lieutenant-Governor) and enquiry made through District authorities, which unfortunately resulted on 24th instant in the infliction of a fine of Rs. 500 on Munshi Indra Man and the confiscation of all his books, without any due enquiry into the matter As the matter is of great concern not only to *Munshi Indra Man*, but to our country and to all of us, I, therefore, ask your advice in the matter how to proceed In the meantime, arrangements will be made to prefer an appeal in the case Early answer with full directions to go in this critical matter is requested

I have yesterday received a letter from a gentleman of Germany accepting instructions of our countrymen in any act they like (sic) This is a good chance indeed, and if you like to allow your brother to try his fortune, it is all that I want Any other Aryan worthy of the task, will also be welcome. Full particulars as to expense, voyage, &c, &c, will be communicated to you at leisure time

All is well here and hope the same to be with you

Hoping to hear from you soon

I am,

Yours, &c.

(Sd) Daya Nand Saraswati

P S.—After all, I again ask you to interest yourself in this matter and expedite your advice &c.

[भाषानुवाद]

मेरठ

२७ जुलाई १८८०

मेरे प्यारे बाबू मूलराज जी एम० ए०

चिर काल से आप का कोई पत्र नही आया, फिर भी मैं आशा करता हू कि आप सर्वथा अच्छे हैं और चाहता हू कि भविष्य मे यदि अधिक नही तो कभी२ अपने स्थानादि की सूचना देंगे।

मैं पिछले पक्ष से मेरठ मे हू और लगभग २० दिन और यहा ठहरने की इच्छा है।

मेरा विचार अपनी सरकार को एक ऐसे विषय पर लिखने का है जो निस्सन्देह जनता का हितकारी-है जिसे अब मेरे व्याख्यानो आदि के सुनने वाले सैंकडों पुरुष चाहते हैं। वह यह है कि सरकार को एक ऐसा नियम पास करने के लिये कहना चाहिये जिस से कि विधवाओ की सतान अपने पिताओ की स्थावर और जगम सम्पत्ति के अधिकार को प्राप्त करे और उसे ले सके। और जो कोई विधवा को किसी प्रकार भी कष्ट दे वह सरकार का दण्ड भागी बने।

पूर्वोक्त बात से मैं इन फलो का विचार करता हूँ कि हजारो बालको के जीवन बचाये जांयगे। गर्भपातन बन्द या कम हो जायगा, इस प्रकार नियोग या

विधवाओं का पुनर्विवाह अन्तत प्रचलित होगा......। परन्तु इस काम को साधारण योग्यता के पुरुष नही कर सकने, इस लिये मैं यह विषय आप पर छोडता हूं और चाहता हू कि आप यथायोग्य नियम वनायें जिन मे सब आवश्यक बातें विस्तार से आजायें। मै आशा करता हू कि आप मेरे से सहमत होंगे और अवश्य काम करेंगे। मैने आप को सकेत मात्र दिये हैं, आपने ही विचार कर नियम वनाना है जो सब प्रकार से पूर्ण हो और जिस मे दृष्टिगत वात के प्रत्येक भाग के लिये दफा आदि वनें। जब यह मसौदा पूर्णतया तय्यार हो जाये तो मुझे भेज दें, मैं इसे अपने हस्ताक्षर सहित सरकार के पास भेजूगा, और यह जितना शीघ्र हो उतना ही अच्छा है।

एक अशुभ समाचार भी है, जिस मे आप की सम्मति और यथायोग्य वहुत परिश्रम की आवश्यकता है। मेरा विचार है आप मुन्शी इन्द्रमन मुरादावादी को भले प्रकार जानते हैं। वह अब वहा की आर्य्यसमाज के प्रधान हैं और अद्वितीय योग्यता के पुरुष हैं। नही, वह सर्वत्र प्रसिद्ध हैं अतः उन के विषय मे अधिक कहना निरर्थक है। मुसलमान उन के वड़े शत्रु हैं और सदा निष्फल ही उन्हे कष्ट देने के उपाय घड़ते रहे हैं। अव वे उन्हे अत्यन्त वांध लेने मे सफल हुए हैं, और यह हानि उन्ही की नहीं, प्रत्युत सब आर्य्यों के लिये है।

मुकद्मे का वृत्तान्त ऐसे है कि मुरादावाद के एक पत्र जामेजमशेद ने गत १६ मई को एक लेख इस विषय का प्रकाशित किया 'कि इसलाम के शत्रु मुन्शी इन्द्रमन ने इन दिनो महम्मदी मत के विरुद्ध कुछ ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। इन से महम्मदी श्रेणी मे एक सामान्य विप्लव हो जायगा, और वह एक न एक दिन अपने जीवन को खो वैठेगा। यह ज्ञात नही होता कि नगर के मजिस्ट्रेट और कलेक्टर ने उन्हे कैसे यह स्वतन्त्रता दे दी। अब मै सरकार से प्रार्थना करता हूं कि वे उस के प्रकाशित ग्रथो को नष्ट कर दे और प्रेस को तोड़ दे।'

पूर्वोक्त पत्र सरकार (मेरा अभिप्राय लाट साहव से है) के सामने रखा गया और जिला अफसरो द्वारा पड़ताल हुई। उस का दुर्दैव से २४ तारीख को यह फल निकला कि विना किसी उचित पड़ताल के मुन्शी इन्द्रमन पर ५०० रुपये दण्ड हुआ और उन के सारे ग्रन्थ जवत हुए। क्योंकि यह वात केवल मुन्शी इन्द्रमन के लिये ही वड़ी नही, प्रत्युत हमारे देश और हम सव के लिये भी है, इसलिये मै आप की सम्मति चाहता हू कि इस विषय मे क्या किया जाय? इस अन्तर में मुकदमे की अपील दायर किये जाने का प्रवन्ध किया जायगा। इस सूक्ष्म विषय मे पूर्ण-निर्देशयुक्त उत्तर शीघ्र चाहिये।

मुझे कल जर्मनी से एक महाशय का पत्र आया है। उस ने स्वीकार किया है कि वह हमारे देशीय लोगो को किसी भी विषय में शिक्षा देगा। यह निश्चय ही अच्छा अवसर है, और यदि आप अपने भ्राता को दैव परीक्षा में डालना चाहते हैं, तो बस मैं यही चाहता हू। कोई अन्य आर्य्य सज्जन जो इस काम के योग्य हैं बड़ी प्रसन्नता से लिये जायेंगे। व्यय, यात्रादि का पूरण व्योरा अवकाश मिलने पर आप को लिखा जायगा।

यहा सब आनन्द है और आप का आनन्द चाहते हैं।

आशा है आप शीघ्र उत्तर देंगे।

मैं हू आप का

ह० दयानन्द सरस्वती

पुनः—अन्तत मैं पुनः कहता हूं कि आप इस विषय मे ध्यान दें और अपनी सम्मति आदि से कृतार्थ करें।

---

[१९] [१९७)

॥ ओ३म् ॥

॥ विशिष्ट विज्ञापन ॥

॥ सब सज्जनो को ॥

विदित हो कि आर्य्यसमाज और थियोसोफीकल सोसायटी का जैसा सम्बन्ध है वैसा प्रकाशित कर देना मुझको अत्यन्त उचित इसलिये हुआ कि इस विषय में मुझ वा अन्य से बहुत मनुष्य पूछने लगे और इस का ठीक मतलब न जान उलटा निश्चय कर कहने भी लगे कि आर्य्यसमाज थियोसोफीकल सोसायटी की शाखा है। इत्यादि भ्रम की निवृत्ति कर देनी आवश्यक हुई। जो ऐसी २ बातो के प्रसिद्ध रीति से उत्तर न दिये जाय तो बहुत मनुष्यों को अत्यन्त भ्रम बढ कर विपरीत फल होने का सभव हो जाय। इसलिये सब आर्य्य और अनार्य्यों को इसका सत्य २ वृत्तान्त विदित करता हू कि जिससे सत्य [में] दृढ़ता और भ्रम का उच्छेद हो के सब को आनन्द ही सदा बढता जाय॥

बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जो किसी समय मुम्बई आर्य्यसमाज के प्रधान थे उनसे न्यूयार्क नगर एमिरिका की थियोसोफिकल सोसायटी के प्रधान एच० एस० करनेल ओलकाट साहब बहादुर और एच० पी० मेडम ब्लेवस्टिकी आदि से कुछ दिन आगे पत्र द्वारा एक दूसरी सभा के नियम आदि जानके सम्वत् १९३५

चैत्र मे मेरे पास भी पत्र न्यूयार्क से आया था कि हमको भी आर्य्यावर्त्तीय प्राचीन वेदोक्त धर्मोपदेश विद्या दान कीजिये। मैंने उसके उत्तर में अत्यन्त प्रसन्नता से लिखा कि मुझ से जितना उपदेश वन सकेगा यथावत् करूगा। इसके पश्चात् उन्होने एक डिपलोमा मेरे पास इसलिये भेजा जो थियोसोफिकल सोसायटी आर्य्यावर्त्तीय आर्य्यसमाज की शाखा करने के विचार का निमित्त था। जब वह डिप्लोमा यहां से फिर वहां गया सभा करके सभासदों को सुनाया, तव वहुत से सभासदों ने इस वात मे प्रसन्न होकर इसका स्वीकार किया, और वहुतो ने कहा कि हम ठीक२ जान के पश्चात् इस वात का स्वीकार करेंगे॥

जब वहा ऐसा विरुद्ध पक्ष हुआ तव फिर मेरे पास वहां से पत्र आया कि अव हम क्या करें? इस पर मैंने पत्र लिखा कि यहां आर्य्यावर्त्त मे अब तक भी वहुत मनुष्य आर्य्यसमाज के नियमों को स्वीकार नहीं करते, थोड़े से करते हैं, तो वहां वैसी वात के होने में क्या आश्चर्य्य है। इसलिये जो मनुष्य अपनी प्रसन्नता से आर्य्यसमाज के नियमो को मानें वे वेदमतानुयायी और जो न मानें वे केवल सोसायटी के सभासद रहे, उनका अलग होजाना अच्छा नही। इत्यादि विपय लिख के मैंने वावू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास पत्र भेजा और उनको लिखा कि इस पत्र की अगरेजी करके शीघ्र वहां भेज दीजिये। परन्तु उन्होने वह पत्र न्यूयार्क मे न भेजा, जब समय पर पत्र का उत्तर वहां न पहुचा तव जैसा मैंने उत्तर लिखा था वैसा ही वहां किया गया, कि जो वेदो को पवित्र सनातन ईश्वरोक्त मानें वे वैदिकी शाखा मे गिने जाय, और वह आर्य्यसमाज की शाखा रहे; परन्तु वह सोसायटी की भी शाखा रही क्योंकि वह सोसायटी की भी एक अगवत है। अर्थात् न आर्य्यसमाज थियोसोफिल सोसायटी की शाखा और न थियोसोफिकल सोसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है, किन्तु जो वैदिकी शाखा थियोसोफिकल मे है जिसमे एच्० एस्० करनेल ओलकाट साहव वहादुर और एच्० पी० मेडम व्लेवस्टकी आदि सभासद हैं वह आर्य्यसमाज और सोसायटी की शाखा है। ऐसा सव सज्जनो को जानना उचित है। इससे विपरीत समझना किसी को योग्य नही। देखिये यह वड़े आश्चर्य्य की वात हुई है कि जिस समय मुम्बई मे आर्य्य-समाज का स्थापन हुआ उसी समय न्यूयार्क मे थियोसोफिकल सोसायटी का आरम्भ हुआ। जैसे आर्य्यसमाज के [उद्देश्य] नियम लिखके माने गये वैसे ही [उद्देश्य] नियम थियोसोफिकल सोसायटी के निश्चित हुए, और जैसा उत्तर मैंने तीसरे पत्र मे लिख के वैदिकी शाखा और सोसायटी के लिये भेजा था उसके पहुंचने के पूर्व ही न्यूयार्क मे वैसा ही कार्य किया गया। क्या ये सव कार्य्य

ईश्वरीय नियम के अनुसार नहीं हैं ? क्या ऐसे कार्य्य अल्पज्ञ जीव के सामर्थ्य से बाहर नहीं हैं ? कि जैसे कार्य्य पृथिवी के ऊपर जिस समय में हो वैसे ही भूमि के तले [पाताल] अर्थात् एमरिका मे उसी समय हो जाय। ये बडी अद्भुत बातें जिसकी सत्ता से हुई हैं अर्थात पाच हजार वर्षों के पश्चात आर्य्यावर्त्तीय धार्मिक मनुष्यो और [पातालस्थ] अर्थात एमरिका के निवासी मनुष्यों का वेदोक्त सनातन सुपरीक्षित धर्म्य व्यवहारो मे बान्धवीय प्रेम प्रकट किया है, उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा को प्रार्थना पुरस्सर कोटि कोटि धन्यवाद देता हू, कि हे सर्वशक्तिमन्! सर्वव्यापक! दयालो ! न्यायकारिन ! परमात्मन जैसा आप ने कृपा से यह कृत्य किया है वैसे भूगोलस्थ सब धर्मात्मा विद्वान मनुष्यो को उसी वेदोक्त सत्य मार्ग मे सुस्थिर शीघ्र कीजिये कि जिससे परस्पर विरोध छूट, मित्रता होके सब मनुष्य एक दूसरे की हानि करने से पृथक् होके अन्योन्य का उपकार सदा किया करें। वैसे ही हे प्रियवर मनुष्यो आप लोग भी उसी परब्रह्म की प्रार्थना पूर्वक पुरुषार्थ कीजिये, कि जिससे हम सब लोग एक दूसरे को दुःखों से सदा छुड़ाते और आनन्द से युक्त रहें, और दूसरो को भी सर्वसुखो से युक्त करें। हे बन्धुवर्गो जैसा आनन्द मनुष्यो को छ हजार वर्षों के पूर्व था वैसा समय हम लोग कब देखेंगे ! धन्य है वे मनुष्य कि जो जैसा अपना हित चाहते और अहित नहीं चाहते थे और वैसा ही वर्त्तमान सब के साथ सदा करते थे। क्या यह छोटी बात है। इस लिखने मे मेरा अभिप्राय यह है कि जो २ बातें सब मनुष्यो के सामने सत्य हैं, जिनके मिथ्या होने के लिये कोई भी मनुष्य साक्षी न दे सकता है उन २ बातो को धर्म, उन से विरुद्ध बातो को अधर्म जान मान के भूगोलस्थ मनुष्यो को धर्म की बातो का ग्रहण करना, और अधर्म की बातों का छोड देना, क्या कठिन और असम्भव है ? जिस लिये ऐसा ही वर्तमान छ हजार वर्षों से पूर्व था इसी लिये कोई दूसरा मत प्रचरित नही होता था, जैसे अज्ञान से आज कल मनुष्य एक २ अपनी २ कौम और एक २ अपने २ मजहब की बढती और अन्य सब की हानि करने मे प्रवृत्त हो रहे हैं वैसे वैदिक मत के प्रचार समय मे न था, किन्तु सब मनुष्य सब की बढती करने मे प्रवर्तमान हो कर किसी की हानि करना कभी न चाहते थे, सब को अपने समान समझ दुःखी किसी को न करते, और सब को सुखी किया करते थे, वैसा ही अब भी होना अवश्य चाहिये। क्या जब सब धार्मिक विद्वान मनुष्य पुरुषार्थ से निःशंकित सत्य बातोंमे एक सम्मति और मिथ्या बातोंमे एक विमति कर एक मत किया चाहें तो असम्भव और कठिन है ? कभी नही। किन्तु सम्भव और अति सुगम है। जितना अविद्वानोके विरोध और मेल से मनुष्यों को हानि और लाभ नहीं होता,

उतने से हजार गुणा हानि और लाभ विद्वानो के विरोध और मेल से होता है। इस लिये सब सज्जन विद्वान् मनुष्यो को अत्यन्त उचित है कि शीघ्र विरुद्ध मतों को छोड़ एक अविरुद्ध मत का ग्रहण कर परस्पर आनन्दित हो। यही वेदादि शास्त्र प्राचीन सब ऋषि मुनि और मेरा भी सिद्धान्त और निश्चय है॥

बुद्धिमानो के सामने अधिक लिखना आवश्यक नही क्योकि वे थोड़े ही लेख मे सब कुछ जान लेते हैं॥ ओ३म्॥

मिती श्रावण वदी ५, सोमवार सम्वत् १९३७॥[1]

हस्ताक्षर—स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[१०] पत्र (१७३) [१९८]

लाला मूलराजजी आनन्दित रहो!

मुन्शी इन्द्रमन सम्बन्धी जो पत्र हम ने उर्दू मे भेजा है उसका अंग्रेजी मे अनुवाद होना है। जो पत्र जर्मनी से आये हैं वह आप के देखने के लिए ला० आनन्दीलाल द्वारा भेज दिये हैं। कृपया हमे बताना कि क्या उत्तर दिया जाय? मेरा विचार है कुछ पुरुष कला कौशल सीखने के लिये जर्मनी भेज दिये जाएं। परन्तु यदि यही आर्य्यावर्त मे ऐसा सिखाने वाले पुरुष मिल जायें तो बाहर जर्मनी को आदमी भेजने की कोई आवश्यकता नहीं।

यहां मुन्शी इन्द्रमन के लिये ३००) रुपये चन्दा हो गया है। इस विषय में किसी निश्चित परिणाम पर पहुॅचने के लिये हमने आप को सब आवश्यक पत्र भेज दिये हैं। कृपया बहुत सोच विचार के पश्चात् अपील के हेतु तय्यार करें, क्योकि इसे बहुत बड़े पुरुषो के पास भेजना है। इस अपील के मुकद्दमे सम्बन्धी खर्च के लिये १,५०० रुपये पजाब से चन्दा करना है और १,५०० रुपये दूसरे प्रान्तो से। यह अच्छा है कि पजाब से १,५०० रुपये एकत्र करने का आप प्रबन्ध करें।

जो पत्र हमने आपत्काल के धर्म्म नियोग सम्बन्धी लिखवाया था, मैं ने शोक से जाना है कि लेखक वह अभिप्राय नही प्रकट कर सका जो मै आप को जताना चाहता था, और इस लिये आप इसे न समझ सके।

आप का सकेत नियम के सम्बन्ध मे कि यह पुनर्विवाह को बताता है और नियोग को नही, इस के लिये मैंने अब एक कानूनी मसौदा एक विधवा की दुःखित

---

१ २६ जुलाई १८८०।

अवस्था को दूर करने के लिये बनाया है। मै वही एक या दो दिन मे आप को आवश्यक शुद्धियो के लिये भेज दूगा १ इस का प्रयोजन नियोग होगा। २ विधवा की सन्तान मृत पति की सम्पत्ति की दायभागी होगी। ३ उन्हें हरामी या जाति से बाहर न समझा जाय। ४ विधवा की जाति के लोग उसे किसी प्रकार तग न करें। ५ कानून भी उसे दुःख न दे। ऐसे नियम के पास होने से गर्भ पातन बन्द हो जायगा, और सैकडो बालको के जीवन बच जायगे, और आज कल की तरह किसी के दायभाग में आई सम्पत्ति या जागीर, अथवा कुल की वृद्धि बद वा नष्ट न होगी, क्योकि उस अवस्था मे नियोगज सन्तान विवाह से उत्पन्न होने वालो के समान अधिकार रखेगी, उस मे कोई भी भेद न होगा। चाहे नियम जनता के सामने किया जाता है या और रूप से यह एक ही है। मसौदा पूर्वोक्त नियमानुसार होगा। जब हम आप को फिर इसी विषय पर लिखें तो आप को ऐसे ही समझना होगा।

श्रावण सुदी ४ स० १९३७।[1]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[८] पत्र (१७५) [१२९]

मुशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।[2]

१६ अगस्त का लिखा पत्र तुम्हारा आया। वर्त्तमान विदित हुआ। जिन तीन के पास सत्यार्थप्रकाश भेजने को लिखा था भेज दिये। और कल इन दोनो के पास भेजेंगे। एक २ पाकट पर =)॥ अढ़ाई २ आने के टिक[ट] डाक महसूल के लगे हैं।

जो सस्कृतवाक्यप्रबोध पर पुस्तक छपाया है सो बहुत ठिकानो मे उनका लेख अशुद्ध है। और कै एक ठिकानो मे सस्कृ० मे अशुद्ध भी छपा है। इस अशुद्धि

---

१ यह और अगले ४ मूलपत्र हमें नहीं मिल सके। ला० मूलराजजी ने कहा था कि उन्हें चूहे काट गये हैं। हम ने अंग्रेजी से इनका अनुवाद दिया है। अंग्रेजी न देने का प्रयोजन यह है कि वस्तुत ये पत्र आर्य्यभाषा में थे।

१० अगस्त १८८० मेरठ। वैदिक मैगजीन, गुजरावाला, अक्टूबर–दिसम्बर सन् १९०८ पृ० ७४९ मे अनुवादित।

२ यह सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

के कारण तीन हैं। एक शीघ्र बनना, मेरा चित्त स्वस्थ न होना। दूसरा भीमसेन के आधीन शोधने का होना और मेरा न देखना न प्रूफ को शोधना। तीसरा छापेखाने मे उस समय कोई भी कम्पोजीटर बुद्धिमान् न होना, लैपो की न्यूनता होनी॥ इसके उत्तर मे जो २ उनकी सच्ची बात ह सो २ शोधक और छापा का दोष रहेगा। इसके खडन पर भीमसेन का नाम मत लिखना किन्तु पडित ज्वालादत्त के नाम से छापना।[1] इस पर आगे के आर्य्यदर्पण मे छापने के लिये प० ज्वा० भी लिखेगा। भीमसेन भी लिखो परन्तु उसका नाम उस पर छपवाने से उसके पढ़ने मे वहां के लोग बहुत विरोध करेंगे।

मोहनलाल विष्णुलाल आदि का हिसाब वही जो मुशी समर्थदान से वही दी थी उसमे और भूमिका तथा वेदभाष्य के टायटिल पेज और ग्राहको के रजष्टर मे है। देखके भेज दो। हमने सब रजष्टर अन्य सत्यार्थ आदि पुस्तको के भी वही रखे हैं। फिर हम से हिसाब उनका कैसे मांगते हो। देख कर भेज दो। यहां हमारे पास सिवाय एक रजष्ट[र] के दूसरा कागजात कुछ भी नहीं हैं। नवीन हाल ये हैं। एक मुशी जी का दूसरा मेरे ठहरने का भी ठिकाना मेरठ का ही नोटिस छापना। तीसरा आजकल रमाबाई यहां कलकत्ते से आके ठहरी हैं। आज उसका व्याख्यान समाज मे स्त्रियो के कर्त्तव्याकर्त्तव्य विषय मे है। दूसरा आगामी शनि को भी होगा। यह सस्कृत पढ़ी है। बहुत अच्छा सस्कृत भाषण भी करती है। इसका विशेष आगे लिखेंगे। चौथा जो मै कह आया था कि जो धन आवे वह वहां न रखना चाहिये किन्तु जिसका नाम फुरुखाबाद से लिख भेजा था उसी की दुकान मे जमा रक्खा करो, अपने पास मत रक्खो। पांचवां असरफियों का हिसाब लिख भेजना। छ:ठा वसीयतनामा रजष्टरी करा लिया है। जब तहसील की कचहरी से नकल मिलेगी तब वहां भी एक नकल भेजेंगे। छापेखाने रख लेना। सातवा यह जो तुमने लिखा कि दुकान मे ४००) रुपैये रह गये कलकत्ते चले गये। इसके लिखने का क्या मतलब है। तुम्हारे पास मासिक खरचे से आमदनी अधिक होती है। उसमे कलकत्ते का भी माबारी हिसाब मे खरच आ जाता है। फिर वे दुकान के रुपैये सिवाय २००) के किस लिये उठाये। आठवां जो आपने लिखा था वह सब क्षमा किया गया। नवमा। वेदभाष्य का प्रूफ और छापना सस्कृतवाक्यप्रबोध के तुल्य न हो जाय। दशवां। मै यहां मेरठ मे १५ दिनो से कम न रहूंगा। हम लोग सब आनन्द मे हैं। आप लोग भी आनन्द होगे। कल परसो और भी पत्रे दोनो वेदो के भेजेंगे। सब से हमारा नमस्ते कहना। तेली आदि के मासिक बढ़ाने के लिये जब

---

१ यही खण्डन अगली सख्या [१९९] पर मुद्रित किया गया है।

१६वा और १७वा अक छपके आवेंगे। १४वें अक से लेके १७ अक तक जो काशी मे छपे हैं देखके जिसकी जैसी योग्यता होगी वैसा वढाया जायगा। और १४वें अक से ले १७वें अक तक दोनो वेदोंके अक भेजके आगे वरावर फिरोजपुर आर्य्यसमाज के नाम प्रति मास भेजा करो। इस समाज मे क्यों नहीं पहुचा। क्या यह आपकी भूल है वा डाकवालो की गडवड है। यह अच्छा होगा कि जव २ डाक की गडवड़ हो तव २ पोष्ट इन्स्पेक्टर को लिख के जवाव लेना। नही वहुत गडवड करेंगे। शमस्तु

मि० आ० शु० १३ बुध स० १९३७।'

[दयानन्दसरस्वती]

---

[१] लेख [७००]

पुस्तक 'अवोधनिवारण' की अशुद्धियां

१. येन शरीराच्छ्रमो न क्रियते स नैव शरीरसुखमवाप्नोति। पृ० ६ पं० २०॥

यहा पण्डित अम्बिकादत्त जी लिखते हैं कि (शरीरात्) इस पद मे पञ्चमी विभक्ति अशुद्ध है किन्तु (शरीरेण) ऐसा चाहिये। सो यह सन्देह कारक-व्यवस्था को ठीक २ नहीं विचारने से हुआ है। देखो श्रम कहते हैं पुरुषार्थ करने को। उसका कर्त्ता जीवात्मा और शरीर आश्रय रहता है। क्योकि। चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम। चेष्टा अर्थात् क्रिया का जो आश्रय है उस को शरीर कहते हैं। सो यहां पञ्चमी विधाने ल्यव्लोपे कर्मण्युपसंख्यानम्। अ० २।३।२८॥ इस वार्तिक से (आश्रित्य) इस ल्यवन्त क्रिया के लोप में पञ्चमी विभक्ति हुई है। देखो ऐसा वाक्यार्थ होगा। येन पुरुषेण शरीरमाश्रित्य श्रमो न क्रियते— इत्यादि। जो कहो कि ऐसा अर्थ भाषा मे क्यो न किया तो सस्कृत के एक वाक्य का व्याख्यान भाषा में कई प्रकार से कर सकते हैं इस में कुछ विवाद नही है। परन्तु यहां तो प्रयोजन यही है कि भाषा सुगम और थोडी हो ऐसा उल्था करना चाहिये। अव पण्डित जी के कहने से तो प्रासादात्प्रेक्षते इत्यादि महाभाष्यकार के प्रयोगो मे भी पञ्चमी विभक्ति नहीं होनी चाहिये। और भी पण्डित जी क्या लिखते है कि विभाषा गुणेऽस्त्रियाम भला इसका यहा क्या प्रसग था। सो जव स्वामी जी के मुख्य अभिप्राय को पण्डित जी न समझे तो जो सूत्र सामने आया लिख वैठे।

---

१ १८ अगस्त १८८०।

भला शरीर शब्द को कोई थोड़ी विद्या वाला भी गुणवाचक कह सकता है कि जिस से गुणवाची मान के पञ्चमी विभक्ति हो जावे। और कारक विषय मे ऐसा भी नियम है कि—**कारकं चेद्विजानीयाद्यां यां मन्येत् सा भवेत** । अर्थात यह शब्द क्रिया के किस अश को सिद्ध करता है ऐसे क्रिया साधक कारक को जान के जिस २ विभक्ति से वह अर्थ प्रतीत हो सके वह २ विभक्ति हो सकती है। इन गूढ बातो को समझना सब का काम नही है ॥ १ ॥

२. चक्रवर्तिशब्दस्य कः पदार्थः । १० । ९ ।

यहां प० जी लिखते हैं कि चक्रवत्ति शब्दका क्या अर्थ है इसकी सस्कृत यही होगी। इनको भाषा का भी बोध है जैसा विदित हो गया। भला सस्कृत शब्द को स्त्रीलिंग पण्डित जी ने किस व्याकरण से किया । यह संस्कृत प्राचीन ऋषि मुनियो के अनुकूल है इसमे कुछ दोष नही । देखो महाभाष्य में लिखा है कि **अथ सिद्धशब्दस्य कः पदार्थः ।** आह्निक १ । इसका क्या यह अर्थ नही है कि सिद्ध शब्द का क्या अर्थ है। वड़े आश्चर्य की वात है कि प्राचीन ग्रन्थो को विना देखे दोष देने लगते हैं। अव पं० जी का लगाया दोष कुछ स्वामी जी को ही लगा हो सो नही किन्तु इन्हो ने तो सव ऋषि मुनियो को दोष लगा दिया और **सापेक्षमसमर्थ भवीति** । यह दोष यहां कभी नहीं आता क्योकि यहां एक देश के साथ अन्वय नही है। और इसी प्रकार **सभाशब्दस्य कः पदार्थः** इसको शुद्ध समझ लेना ॥ २ ॥

३. अस्मिन् समये तु मम सामर्थ्य नास्ति पण्मासानन्तरं दास्यामि ।१८।८ ।

यहां पण्मास शब्द मे पण्डित जी को सन्देह हुआ है कि यहां **द्विगोः** इस सूत्रसे ङीप् होके षण्मासी शुद्ध होता है। इस भ्रमका मूल यही है कि उनको व्याकरण के सव सूत्र विदित नही हैं। प० जी के कथनानुसार यदि स्वामी जी का लेख अशुद्ध भी माना जावे तो फिर पाणिनि मुनि का सूत्र भी अशुद्ध मानना चाहिये। **सू० षण्मासाण्यच्च । अ० ५ । १ । ८३ ॥** यहां पण्डित जी के मतानुसार **षण्मास्योण्यच्च**—इस प्रकार का सूत्र होना चाहिये । अव देखिये इस पाणिनीय सूत्र को यदि प० जी जानते होते तो स्वामी जी के लेख को मिथ्या दोष क्यो लगाते और छोटे २ वालक कि जो अष्टाध्यायीके सूत्र भी घोखते हैं वे भी जानते हैं कि यह सूत्र ऐसा है। इस प्रकार के वहुत से प्रयोग व्याकरण आदि शिष्ट जनो के ग्रन्थो मे आते हैं तो क्या सव अशुद्ध हैं। अव रहा कि ङीप् क्यो नही होता तो **पात्रादिभ्यः प्रतिषेधः** ।

यह वात्तिक इसीलिये है। पात्रादि आकृतिगण है। इसका परिगणन कहीं नहीं किया कि इतने ही पात्रादि शब्द हैं। महाभाष्यकार ने तो इस वार्तिक पर उदाहरणमात्र दिया है। अब इसी प्रकार 'द्विवर्षानन्तरम्' इसको भी शुद्ध समझ लेना चाहिये। पाणिनिजी महाराज ने अपने सूत्र में षण्मास शब्द को पढ़ा है। इससे यह भी उनका उपदेश प्रसिद्ध विदित होता है कि षण्मास आदि शब्दो मे ङीप् कदापि नही होता और कोई किया चाहे तो अशुद्ध ही है॥ ३॥[1]

एक पण्डित[2]

---

[२] पत्र (१७६) [२०१]

मुशी इन्द्रमनजी आनन्दित रहो।[3]

आप के दो तीन पत्र आये हाल मालूम हुआ। पञ्जाब के अढ़ाई सौ या तीन सौ रुपया आप के पास शायद पहुचे होंगे। आज हम यहा के सभासदो से दर्याफ्त करेंगे कि रुपया भेजे या नही। अगर न भेजे होंगे तो हम भिजवाते हैं। चार दिन हुए कि उसी वक्त हम ने उनसे कह दिया था कि रुपया भेज दो। अढ़ाई सौ रुपया वहा हैं और १००) रुपया लाला श्यामलाल के और पञ्जाब और फरुखाबाद से भी आते हैं। सब मिलकर सात सौ रुपया इकट्ठे होगे। खूब होश्यारी से काम करना।

मिति भाद्रपद कृष्ण ६ गुरुवार सवत १९३७, स्थान मेरठ।[4]

दयानन्द सरस्वती

---

[१] [२०२]

नियोग का मसव्विदा

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निहायत अदब से उस एजाज और ताजीम कानूने शादी के तसलीम करने के बाद कि जिसका तसलीम करना हम सब पर

---

१ आर्यदर्पण मई १८८० पृ० १२० पर छपा। यह अक अगस्त के अन्त या सितंबर के आरभ में छपा होगा।

२ इस उत्तर में श्री स्वामी जी की ही अनुमति थी।

३ ला० जगन्नाथदास की पुस्तक मु० इन्द्रमन का इल्तमास और स्वामी दयानन्द का सन्यास, पृ० १६ पर उद्धृत।

४ २६ अगस्त १८८०।

फर्ज़ है, निस्वत एक्ट नम्बर १५ सन् ५६ ई० (कानून दरबारा शादी बेवगान की, कि जिसकी यह मन्शा है कि हिन्दू बेवा के विवाह करने के बारे किसी तरह से कानूनन् मुमानिअत न हो और जो औलाद कि दूसरे विवाह से पैदा हो वह हरामी मुत्सव्वर न होकर तकरीबन मालिक हो सके, और जो बाज़ हिन्दू अपने ईमा से इस रसमोरिवाज विवाह सानी को खिलाफ रसमोरिवाज साबक के जारी करना मनजूर करें, उनको अदम तामील कानूनी की पाबन्दी से जिससे वह शाकी है रिहा किया जावे) अपनी आदिल और कदरदान गवर्नमेन्ट के हजूर मे चन्द बवाइस ज़रूरी गुज़ारिश करना चाहता हू और चूकि रिआया की फ़रयादरसी गवर्नमेण्ट से और गवर्नमेण्ट की दादबख्शी रिआया पर एक ऐसा फर्ज़ लाज़िम मलजूम है कि जैसा मा बाप का बच्चो पर, या बच्चो का अपने मा बाप पर। लिहाज़ा बावजूद मलहूज़ रखने तमामतर एज़ाज़ और आदाब कानून मज़कूर हसबजैल इलतमास करता हू, कि अगरचे एक्ट मज़कूर का असली मनशा सरीह इन्साफ और मसलिहत आमा कायिम करना और हिन्दुओ के असली और इन्साफी कानून को बमुकाबला जायिज़ रस्मो रिवाज बे बुनियाद के तरजीह देता है और उस की तासीर से बेवगान हनूद को झूठे रस्मोरिवाज की पाबन्दी से बचा कर आदिल गवर्नमैण्ट ने कानूनी हक़ उन का बहाल फरमाया है । लिहाज़ा इस हकपसन्दी गवर्नमैण्ट आलीजाह का तहे दिल से शुकरिया अदा किया जाता हैं मगर अफसोस है, कि उन हिन्दू साहिबो ने जो मुहर्रक उसकारे खैर के हुए थे इस मसला के मतालब और तासीरात और काइद की तौज़ीह मुगालता खाया। इस लिये ऐक्ट मज़कूर के नफाद से गरज मकसूद हासिल न होसकी और न पूरे २ क्वाइद उस की बाबत मिनज़ब्त हुए। बल्कि एक गलत लफ्ज़ विवाह बेवा हनूद के मुस्तअगल होने से कि गालिबन् सहीह नाम यानी नियोग से मुराद है। बाज़ असली मकासद और उसकी तमामतर तासीर बिलअक्स हो गये। यह ही वजह है कि ऐक्ट मज़कूर के नफाज को अरसा बईद २५ साल गुज़र गया, मगर जो कवाइद कि उस के जरिये से हासिल होने चाहिये वह हनूज़ मुतरत्तब नही हुए और न आइन्दा को किसी ऐसे फाइदा मकसूदा के पैदा होने की उमीद है कि जिसका पैदा होना वक्त नफाज ऐक्ट मजकूर तहरीक कुनन्दा हिन्दू साहिबो के जेहननशीन और गवर्नमैण्टको ख्याल दिलाया गया होगा। पस निहायत अदब से गुजारिश है कि ऐक्ट मजकूर की तौज़ोह बएतबार इलफाज़ और उसकी तरमीम बाएतबाद अदालत व ऐहकाम ऐसे तौर पर फरमाई जावे कि जिससे उसका मन्शा इस बारे में हिन्दुओ के असली कानूनके मवाफिक हो जावे ।

मरक्फी न रहे कि आर्य्य लोगो (जिनको उरफन गल्त नाम हिन्दू के लफ्ज से बोलते हैं) के असली कानून वेद वगैरा मे तीन आला फिरकों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य मे औरत और नीज मरद के वास्ते दूसरा विवाह करने की कतअई मुमानियत है।

सिरफ एक सूरत है कि जिस में दूसरा विवाह करने की औरत और मरद दोनो के वास्ते इजाज़त है और वह यह है कि जब कोई औरत ऐसे वक्त बेवा हो जाय कि उसकी हमबिस्तरी की नौबत अपने शौहर के न साथ पहुची हो, या किसी मरद की ज़ौजह ऐसे वक्त मर गई हो कि वह उस अपनी ज़ौजह के साथ हमबिस्तर न हुआ हो तो ऐसा मरद या औरत हरसे आया फिरक़ो मजकूरा वाला मे दूसरी शादी कर सकता है, मगर ऐसी औरत या ऐसे मरद के साथ (यानी जैसे कि सूरत हो) जो बज़रिया नियोग पैदा हुआ या हुई हो।

अलबत्ता वे औलादी की ख्वाहिशें रफा करने के वास्ते आर्य्य लोगो की सच्ची किताब वेद बगैरा में नियोग करने की इजाज़त मरद और औरत दोनो के वास्ते पाई जाती है। ताकि औलाद मज़कूर अपने वालदैन के वास्ते फैज़ दुनयावी का ज़रिया हो और मालिक मुतरद्दका होकर खानदान का नामोनिशान कायिम रख सके और जिस रसम नियोग से जो खास २ हालात मे महदूद किया गया है, मसलन् जब कि कोई मरद बगैर छोडे किसी औलाद के मर जावे या नामरदी से कोई नाकाबलियत ऐसी लाहक हो कि जिसकी वजह से वह औलाद पैदा करने के लाइक न रहा हो, तो बेवा बा इजाज़त विरसाए शौहर या शौहर या खुद अपनी मरज़ी से ऐसे शख्स के साथ जो उस की शौहरी निसबत की रू से भाई के सिलसला करावत मे नियोग कर सकती है और उस नियोग के जरिया से अपने शौहरी खानदान को फवाइद मजकूरावाला पहुंचाने के लिये दो और हिलकायिम पैदा कर लने की मजाज़ होती है मसलन् चित्रागद विचित्रवीर्य्य के मरने पर व्यासजी उन के बड़े भाई ने उनकी औरतो से नियोग करके दो लडके पैदा किये। एक धृतराष्ट्र, दूसरा पाण्डु। और एक कनीज़क से एक लडका पैदा किया। जिस का नाम विदुर था। इसी तरह पाण्डु की हय्यात में उनकी ज़ौजा कुन्ती ने पांच पुत्र उसी रिशता नियोग के जरिया से बवजह नाकाबल होने अपने शौहर के पैदा किये।

इस रिशता नियोग की वजह से मुसम्मात या मर्द या उस औलाद पैदाशुद का कोई तअल्लुक या फर्ज या हकतौरीस या हकनान वा नुफक खानदाने शौहरी

से मुनकतअ या ज़ायल और नियोग करने वाले शख्स के खानदान मे पैदा वा कायम नही होता है। बल्कि औलाद मज़कूर का तअल्लुक मिस्ल औलाद सहीह उलनस्ब के बेवा और उसके खानदान शौहरी से या अगर मर्द ने अपने वास्ते नियोग किया हो तो औलाद का तअल्लुक उस मर्द और उसके खानदान से इस तरह पर होता है कि गोया वह उस शौहर या मनकूह ज़ौज: से (व जैसी कि सूरत हो) पैदा हुई।

लेकिन अगर बवजेह मिन उलवजह मुअय्यन धर्मशास्त्र ज़ौजीन का तअल्लुक ज़नाशवी कतअ हो जावे और बाद कतअ हो जाने तअल्लुक मज़कूर के ज़ौज या ज़ौज अपने वास्ते नियोग करे तो उस औलाद का जो ऐसी हालत में पैदा हो सिर्फ नियोग करने वाले शख्स की जात से उस तेदाद तक कि जो आइन्द बयान की जावेगी तअल्लुक होता है, नियोग करने वाले शख्स को अपने वास्ते दो औलाद तक जो हिलकायिम. हों और जिस के साथ नियोग किया जावे दो औलाद तक उस के वास्ते भी, अगर नाम्बरदा की ख्वाहिश और जरूरत हो, पैदा करने का इख़तयार वेद वगैर. आर्य्य लोगो की मुकद्दस किताबो मे पाया जाता है। और जो ज्याद. औलाद इस तेदाद से उसी नियोग के ज़रिया से की जावे, वह हरामी ख्याल की जाती है।

एक औरत या एक मर्द को जब कि वह अपने वास्ते भी दो औलाद तक पैदा करना चाहता हो, चार नियोग तक करने की इजाजत है। और अगर नाम्बरदा अपने वास्ते औलाद के पैदा करने की ज़रूरत समझे तो पांच नियोग कर सकता है। इस का असली मन्शा बहुत साफ है कि एक ख़ानदान के नाम को कायिम रखने के वास्ते दो औलाद और एक शख्स के जरीयअ से दस औलाद तक पैदा करना जाइज है। और जो औलाद जिस खानदान के वास्ते इस रिशता नियोग के जरियअ से पैदा हो वह उसी खानदान मे मिस्ल सही उलनस्ब औलाद के दाखल और शामल समझी जाती है।

चूकि इस कारेखैर के मुहर्रक हिन्दू साहिबो ने इस मसअला के असूल और तासीरात के समझने और समझाने मे गलती की थी, बल्कि विवाह बेवा हनूद का गलत लफ्ज इस्तेमाल करके उस की तासीर को बिल्कुल मुन्कलब कर दिया था। लिहाजा वह तमाम फवायद जो इस के जरिया से हासिल होने चाहिये थे, बिल्कुल रुक गये।

अब मै स्वामी दयानन्द सरस्वती धर्म्मशास्त्र की सही और असली मकासद दर-बाब जिस मसअला की आदिल और कदरदान गवर्नमैण्ट की आखरी राय पर

जाहर करके एक मसव्विदा बाबत इजराय रस्म मज़कूर गवर्नमैंएट के हजूर मे निहायत अदब से पेश करता हू और उम्मीद रखता हू कि मसव्विदा मज़कूर की मनजूरी से इस आर्य्यावर्त देश की रिआया को फैज़ बख्शी और गवर्नमैंएट की हकपसन्दी बज़रिया इमदाद अदालतहाए दीवानी वाकिअ बृटिश इण्डिया बमुआम्लात नफाज़ हक तौरीस वगैर उन क्वाइद और शराइत के मवाफिक जो मसव्विदा मे अर्ज़ की गई हैं जाहिर फरमाई जावे।

चूकि इस ऐक्ट के ज़रिया से कोई जदीद मसअला कानून का पैदा नही होता बल्कि सिर्फ धर्म्मशास्त्र के कदीम मसअला की तजदीद होती है, लिहाज़ा कव्वी उम्मीद है कि जो फव्वाइद ऐक्ट १५ सन् ५६ के नकाद से ख्याल किये गए होगे, मगर पैदा नही हुए, वह बल्कि उस से ज्यादा कायम और मुकम्मिल हो जावेंगे। मस्लन

(१) बेवगान का फस्क फजूर से बचना और जुरायम शदीद मिस्ल इस्कात हमल और जना वगैर का मसदूद हो जाना।

(२) मसकीन बेवगान के दिल से बेऔलादी की हालत मे मुफारकते शौहर का गम रहब जाना।

(३) बे औलादी के रञ्ज और तकालीफ से मसकीन बेवगान का निजात पा जाना।

(४) किसी आर्य्य यानी हिन्दू की मौरूसी या मकसोय तर्क का बवज न होने औलाद के तल्फ न होना।

(५) किसी फैज़ दुनयावी से बवज: बे औलादी किसी आर्य्य का महरूम न होना।

(६) इन्सानो की अफज़ायश और उसके आम नतायज नेक का जहूर। व कस अलहजा।

फैज बख्शी गवर्नमैंएट के तरहम अगेज मादलत से दाद खाही की उम्मीद करके दस्तबस्ता गुजारिश करता हू कि मेरे पेश किये हुए मसव्विदा पर गौर फरमा कर इसकी मनजूरी से मत्तला फरमाया जावे।*

---

* शेष आगे छपेगा।

[२] पत्र (१७६) कार्ड [२०३]

स्वामी कृपाराम जी आनन्दित रहो ।

इस पत्र का उत्तर हम लिख चुके हैं। हम यहा छ. सात दिन रहेंगे। जो तुम शनिवार को आओगे तो मिल जायगे। और एक चिट्ठी बलदेवसिंह के विषय मे हमने भेजी है। तुम्हारे पास जो पहुंची होगी उसी मे । बाकी जब तुम यहां आके मिलो तब सब निश्चय होगा। और हम पहले लिख चुके हैं कि मनुष्यो का आत्मा कपटी। पहले कहते हैं कि हम ऐसा २ करेंगे। पीछे वक्त परे पर कुछ भी नही।

मिति भाद्र सुदी ४ मगलवार सवत् १९३७।'

दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (१७७) [२०४]

ओ३म

बाबू दुर्गाप्रसादजी आनन्दित रहो।

हम यहा हद्द आठ दिन रहेगे। और करनेल ओलकाट साहिब और मेडम भी कल यहां से चले गये। रमा भी कल यहा से जावेगी । लेखक को आप जल्दी मेरठ मे हमारे पास भेज दीजिये जब तक हम यहा हैं। १००) जो आप ने मुशी इन्द्रमणी जी के विषय मे इकट्ठे किये हैं वे मेरठ आर्य्यसमाज के उपप्रधान लाला रामशरण दास जी के पास भेज दीजिये उन्ही के नाम से। क्योकि सब जगह का यहां जमा होता है । और यहा से खर्च होता है। रमाबाई अपने घर को जाने कहती है। यहां समाज से १२५) रुपैये और एक थान मलमल का दे कर सत्कार किया। कल यहा से दिल्ली और दिल्ली से इलाहाबाद, वहां से घर जायगी । अभी किसी समाज मे नही जाने कहती है। शायत् वहां से आवे तो जाय। इस के भाई के मरने से इसकी "कुछ कुचाली हो गई है" ऐसा लोग सशय करते हैं। चित्त भी चचल है। शरीर पतला निर्बल और रोगी है, गुस्सा भी बहुत है। इसकी "कुचाली" मे जो लोग "शका करते हैं" वह लिखने "योग्य नही है"। हमने इस को वैशेषिक और न्याय दर्शन के कुछ सूत्र पढाये हैं। समझाई भी बहुत है । आशा है "कि कुचाली" को छोड़ कर उपदेश मार्ग में प्रवृत्त हो जावेगी। इस के साथ मे बगाली लोग हैं। वे ही इस की कुमति का कारण हैं। कहती है कि मैं देश मे जाकर वहां

१ ८ सितबर १८८०, मेरठ। मूलपत्र प० बुद्धदेव जी विद्यालकार की भगिनी के पास है।

से अपने किसी कुटुम्बी एक पुरुष और एक औरत रोटी करने वाली साथ में ले कर आऊगी। इसकी बुद्धि वहुत अच्छी और सुवोध है। काव्यालकार, कुछ व्याकरण, वाल्मीकी रामायण, महाभारत इतना पढ़ी है। सस्कृत वहुत अच्छा वोलती है। व्याख्यान वहुत अच्छा देती है। "परसो रविवार को" गोपालराव हरि ने इस के वुलाने के लिये चिठी भेजी थी। सो यह कहती है कि अभी तो हम देशको जायगे। फिर वहां से [आ]वेंगे तव देखी जायगी। जादा क्या लिखना। और तो सव प्रकार से अच्छी है परन्तु जैसे "चन्द्रमा मे ग्रहण लग जाय" ऐसो हाल है। रमा के इस हाल को प्रसिद्ध हर जगह न होना चाहिये। उनके भाई का शोक तो निवृत्त हो गया है।[1]

मुशी इन्द्रमणी जी के विषय में ३००) रु० मेरठ से ३००) रु० मुरादावाद से इकट्ठे हुए हैं। और भी मुरादावाद और चंदोसी चन्दा होगा। इन मे से ६००) रु० वालिष्टर को दिये गये और वाकी मित्ती पर फिर काम पड़ेगा तव भेजे जायगे। ये सव रुपैये यहा ही जमा होते हैं। उन के पास एक ही वखत भेजना अच्छा नहीं है, जो ऐसा होता तो इतनी जगह मामला क्यो वढता। उन मे वालिष्टर को पहिले पांच सौ रुपैये दिये थे। फिर १ सौ रु० पीछे से पहुँचाये गये। इस तरह का हाल है। मुकद्दमा तारीख १८ को जारी होगा। यहा से दो एक दिन पहिले लाला रामशरण दास जायगे। और वाकी रुपैये भी लेते जायगे। आप भी मुशी जी को लिख भेजिये कि उपर लिखे मुताविक मेरठ में रुपैये भेज द्रिये। रामनाथ लेखक को ७ दिन के भीतर मेरठ मे भेज दीजिये। सव से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ४ वुध० सवत् १९३७।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१ स्वामीजी का अनुमान सत्य निकला। रमा ने इस वगाली विपिनविहारी के साथ ही ता० १३ अक्टूवर सं० ८० को ईसाई मत स्वीकार करके विवाह कर लिया। देखो परिशिष्ट सग्रह में प० ज्वालादत्त का मिति मार्ग वदि ५ स० १९३७ का पत्र।

२ ८ सित० १८८०, मेरठ। उलटे कामों में छपा पाठ श्री स्वा० जी ने काटा हुआ है। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[१] पत्र (१७८) [२०५]

ओ३म

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया हाल मालूम हुआ। मुंशी इन्द्रमणि जी का विषय जो हमने वेदभाष्य के टाईटिल पेज पर छपाने को लिखा वह हमारा दोष है । परन्तु आर्य्यदर्पण और मेला चांदापुर प्रत्युत्तर एकसा ही छाप दिया है यह दोष तो दुर्निवार्य्य है। क्योंकि इसमे वृथा ही कागज खराब करना है। इस को कौन लेगा । अब ऐसा न होना चाहिये। सिवाय अच्छे समाचार और नोटिस आदि छापना उचित है । देवीदत्त और शंकरलाल हम से नही मिले। और वेदभाष्य के पत्रो की व्यवस्था भीमसेन लिखा करेगा उसी से कह दो जिस वेद के जिस पृष्ठ से जिस पृष्ठ तक दरकार हो दो तीन महीने पहिले से लिख भेजेगा। पहिले पत्र मे हिसाब के लिये जो नकशा की व्यवस्था लिखी है सब यन्त्रालय का हिसाब समझकर जलदी लिख कर भेज दो। हम अब यहां थोडे ही दिन तक रहेंगे। दो दिन पीछे लिखेंगे जहां जाना होगा। और १ रीम का कितना रुपया, कितना दस्ता, कितने ताव, कितने पृष्ठ होते हैं, यह भी लिखो। और हमारे कहे सुने बिना वेदभाष्य के अक का दाम बढाया मत करो। और वहां यह भी कह देना सब जनों से कि सत्यनामसिंह मथुरा में हैं। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होगे।

मिती भाद्र सुदी ६ शु० संवत् १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

जैन मत के ग्रन्थ जिस किसी छापेखाने बनारस वा कलकत्ते मे संस्कृत वा भाषाके जितने जहां से मिलें भेज दो। और अलकार के पत्रे जो हमने चद्रालोप(क) नामक लिखे हैं भीमसेन के पास होगे। भेज देना जलदी।

---

[२] पत्र (१७९) [२०६]

ओ३म्

भाई ठाकुरदास जी योग्य नमस्ते।

पत्र आप का मिति भाद्र वदी १० सोमवार [स० १९३७ पंजाबी] का लिखा स्वामी जी के पास पहुंचा। स्वामी जी ने हम को दे दिया। उक्त पत्र को देख अभिप्राय जानकर मुझ को आश्चर्य होता है कि आप पुनः पुनः पिष्टपेषणवत् श्रम क्यो करते हैं। मैंने प्रथम पत्र

---

१. १० सितम्बर १८८०, मेरठ। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

में सव बातो के प्रत्युत्तर लिखे फिर भी तुम न समझे तो मेरा क्या दोष है । क्या मैं ने यह वात न लिखी थी कि जो स्वामी जी से मत विषयक शास्त्रार्थ किया चाहो तो अपने मत के सर्वोत्कृष्ट विद्वान् को स्वामी जी के सन्मुख करो। अथवा जो ऐसा न कर सको तो जो इस समय गुजरावाला में आत्माराम जी उपस्थित हैं उन्हीं को शास्त्रार्थ के वास्ते नियुक्त करो। जिस में आप लोगो के मत की सत्यता सर्वत्र प्रसिद्ध हो के सव को विचार करने का समय प्राप्त हो और जो आप लोगों पर (मत और स्वग्रन्थो को गुप्त रखने से) मिथ्यात्वरूप कलक प्रसिद्ध हो रहा है वह दूर हो कर स्वमत का तत्त्व यथार्थ प्रकाशित हो जायें। लोग ऐसा अपवाद तुम्हारे पर धरते हैं कि जैसे वेदादिक शास्त्रो को आर्य लोग, वायवल आदि को ईसाई लोग और कुरान आदि को मुसलमान लोग व्याख्या और देश भाषान्तर में तरजुमा कर के प्रचार कर रहे हैं वैसे जैन लोग क्यो नही करते। यदि जैनो के मत विषयक पुस्तक ठीक २ सत्य और विद्या पुस्तको के अनुकूल होते तो वाम-मार्गियो के सदृश कौल पद्धति के समान अपने पुस्तको को गुप्त क्यो रखते। इत्यादि बुद्धिमानो के अपवाद का निवारण करना आप लोगो को अत्यन्त उचित है। सो इस के निवारण के उपाय दो ही हैं। एक स्वामी जी के साथ तुम्हारे मत के सर्वोत्तम विद्वान् का शास्त्रार्थ होना और द्वितीय अपने सव पुस्तको को अनेक देश भाषाओ मे छपवा के प्रसिद्ध करना। जव तक ऐसा न करोगे तव तक पूर्वोक्त कलक दूर कभी न होगा। प्रथम यत्न का उपाय जो किया चाहो तो शीघ्र ही हो सकता है। स्वामी जी और आत्माराम जी का सवाद हम और तुम मिल कर करावें। जो स्वामी जी का पक्ष खण्डित होकर आप लागो का पक्ष सिद्ध रहे तो आत्माराम जी आदि आठ जनों का रेल वा खाने पीने का जितना खर्च उठे उतना हम दें और जो आत्माराम जी का [पक्ष] निराकृत हो के स्वामी जी का पक्ष सिद्ध रहे तो आठ पुरुषो का पूर्वोक्त व्यवहार में यावत् व्यय हो तावत् आप लोग देवें। कोई उत्तम स्थान मध्यवर्ती हो वहां दोनो महात्मा उपस्थित हो के शास्त्रार्थ करें। हम लोगो ने स्वामी जी से इस विषय में पूछा था। स्वामी जी ने कहा है कि ऐसा हो तो हम को स्वीकार हैं।

अव तुम लोग आत्मारामजी से पूछो कि वे इस वात मे प्रसन्न हैं वा नही। जो वे शास्त्रार्थ करने को उद्यत हों तो शीघ्र लिखें क्योकि स्वामी जी यहां से अन्यत्र जाने वाले हैं। इस से यह कार्य अति शीघ्र होना चाहिये अर्थात् दोनो महात्माओ के समागम से सव सिद्धान्त प्रकाशित हो जा सकेंगे और दूसरे पत्र का उत्तर इस वास्ते नही भेजा कि उस मे कुछ विशेष न था। अव जो तीसरे उत्तर मे तुमने लिखा है सो भी पिष्ट पेषणवत् है। क्योकि इनका उत्तर प्रथम पत्र के उत्तर मे हम लिख चुके हैं और इस पत्र में तुमको ऐसा असभ्य लेख करना योग्य न था। तथा स्वामी जी के

नाम पत्र भेजना भी अनुचित था। यह निश्चय जानो कि स्वामी जी और उन का सर्वस्व हमारा और हम तथा हमारा सर्वस्व स्वामी जी का है। जैसा तुम ने लिखा वैसा तुम पर भी आ गिरता है कि तुम कौन कहने और लिखने वाले और जो हो तो हम क्यो नही? यह सब बातें लिखने से कभी नही निपट सकती है बिना दोनो विद्वानो के समागम के। बार बार बिना समझे लिखते हो कि सत्यार्थप्रकाश आप ने क्यो छपवाया? इतना भी बोध तुमको नही हैं कि यह ग्रन्थ स्वामी जी ने छपवाया है वा राजा जयकृष्णदास सी० ऐस० आई० रईस मुरादाबाद ने छपवाया हैं। जब ऐसी छोटी २ बातो को नही समझ सकते हो तो गूढ़ बातो को क्या समझ सकोगे। यह तुम और हमको अत्यन्त योग्य है कि अपने और दूसरे के मत का सत्यासत्य निर्णय के लिये सभ्यता, विद्या, प्रमाण और शास्त्रोक्त व्यवहार के सहित प्रीतिपूर्वक शास्त्रार्थ कर के असत्य का निरोध और सत्य का प्रचार करें। यह शास्त्रार्थ प्रथम प्रकृत विषय जो सत्यार्थप्रकाश मे स्वामी जी ने लिखा है उसी विषय में हो पश्चात् अन्य विषयों में। जो इस शास्त्रार्थ मे तुम्हारा पण्डित सत्यार्थप्रकाश के द्वादश समुल्लासोक्त विषय को तुम्हारे मत से विरुद्ध ठहरा देगा तो स्वामी जी उस विषय को दूसरी बार सत्यार्थप्रकाश मे छपवाने न देंगे और माफी भी मांगेंगे और जो वह विषय स्वामी जी ने तुम्हारे मत के अनुसार सिद्ध कर दिया तो जितनी तुमने वेदादि विषयक निन्दा लिखी है इस को छोड़ना और स्वामी जी से माफी मांगना होगा। जो तुम शीघ्र शास्त्रार्थ करना न चाहो तो कब तक करोगे इस का निश्चित समय लिखो। परन्तु जितना बने उतना शीघ्रता से करो। स्वामी जी और हमारी ओर से कुछ भी विलम्ब नहीं। इसका प्रत्युत्तर पत्र देखते ही दीजिये और इस बात मे तुम को विलम्ब करना उचित नही क्योंकि तुम्ही [ने] यह बात उठाई है। इस वास्ते आप को योग्य है कि कल शास्त्रार्थ करने मे प्रवृत्त हुआ चाहो तो आज ही तत्पर हूजिये। देखो हमारे साथ पत्र व्यवहार करने से तुमको कितना लाभ हुआ। कि जो प्रथम और दूसरा पत्र तुम ने हमारे पास भेजे थे वे कैसे अशुद्ध थे और जो तीसरा पत्र तुमने भेजा सो भाषा के कायदे से कुछ अच्छा है। और अभिप्राय अर्थ से तो यह भी शुद्ध नहीं है। अब मै अपनी लेखनी को अधिक लिखने से रोक कर आप लोगो को जताता हूं कि आप लोग पूर्वोक्त बातो पर ध्यान अवश्य देवें। यह बात बहुत उत्तम और लाभकारी है।

मिती भाद्रपद शुदी ८ रविवार सं० १९३७।[1]

आनन्दीलाल मन्त्री आर्यसमाज मेरठ

---

१. १२ सितम्बर १८८०। प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६८७, ६८८ पर छपा।

[२] पत्र (१८०) [२०७]

॥ ओं ॥

वावू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

लेखक रामनाथ कल सप्तमी शनिवार को हमारे पास पहुंचा। और आज लिखने का भी प्रारम्भ करा दिया है। जैसा होगा वैसा पीछे लिखा जायगा। अव हम यहां से १२ गुरुवार को ४ वजे की रेल मे मुजफ्फर नगर जायगे। मुन्शी इन्द्रमणि जी के विषय मे जो आपने १००) रूपैये चन्दा किये हैं वे क्या अपने ही पास रखनी की इच्छा है। हमने कई वखत लिखा है कि मेरठ आर्य्यसमाज के उपप्रधान लाला रामशरणदास के पास भेज दो। क्यो नही भेजते हो। मुन्शी इन्द्रमणि जी [के] पास नही भेजना। वहा जाने से व्यर्थ ही खर्च कर देंगे। हम ने यह कहा है कि मुकदमे मे यथोचित खर्च होकर जो वाकी वचेगा वह इकट्ठा जमा रहेगा कि जव फिर भी कभी इसी तरह समय काम आवे। इस मुकदमें के हुए पीछे जिन्होंने जितना रुपया दिया है छपाकर सव प्रकाश किया जायगा। और सितम्वर की १८ वी तारीख को मु[क]दमा जारी होगा।

मुम्वई मे पण्डित के विषय में हमने पत्र लिखा। वहा से रूपैये आगये वा नही।

मथुरा से दूसरा पण्डित वुलाया है। आशा है कि उसके आने से वेदभाष्य का अच्छी तरह से काम चलेगा। अभी यजुर्वेद के ७वें अध्याय २३वें मंत्र का भाष्य हो रहा है।

सव से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रवि वार सम्वत् १९३७।[1]

२०) रूपैये फिरोजपुर से जो विष्णुसहाय मत्री आर्य्यसमाज फिरोजपुर ने पण्डितो के विषय में भेजे हैं जमा कर लिये जाय।

[दयानन्द सरस्वती]

वावू जी दुर्गा प्रसाद जी से रामनाथ की नमस्ते। वहोत्त राजी खुशी साथ पहोचा। लाला हर नारायण जी योग्य रामनाथ की नमस्ते।

---

१. १२ सितम्वर १८८० मेरठ। मूल पत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है

[१०] पत्र (१८१) [२०८]

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज वसियत नामा रमाना कर दिया। और ८) रुपैये पडित अंवाशंकर् के वावत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और ८) रुपैये लाला रामशरणदास के वावत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और १४) रुपैये वावू छेदीलाल के वावत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और १२) रुपैये मुशी रामशरणदास के वावत वेदभाष्य के तीन वर्ष तक के। इन चारो का एक ही मिती मे रुपया जमा हुआ। और एक ही मुकाम मेरठ है। मिती भाद्र सुदी १२ वुध वा० सवत् १९३७ जानो। इन का नाम भी अगले वेदभाष्य मे चाहो तो छपा देना। और ५४॥=)॥ रूपैया आर्य्यसमाज मेरठ से वर्णोच्चारणशिक्षा आदि पुस्तको का मूल्य जमा हुआ मिती भाद्र सुदी १२ बुधवार संवत् १९३७ को। **हम कल ४ वजे की रेल में बैठ कर मुजफ्फर नगर जायेंगे।**[1] चिठी पत्र वहीं भेजना होगा। हम ने तुमको कई वखत् लिख कर भेजा है कि जो पुस्तक जिस वखत छपकर तैयार हो उसको उसी वखत जहां २ जितनी पुस्तकें जातीं हैं भेजदो। क्यो नहीं भेजने हो। हमको मालूम होता है कि जिस तरह मेला चांदापुर अभी तक यहां नहीं आया निश्चय है कि दूसरी जगह भी न पहुंचा होगा। यह वड़े अन्धेर की वात है। न जाने क्या होता है। हमने कह दिया है कि वेदभाष्य के साथ ही पहुंचा दिया करो। और पांच वा छः वेदभाष्य तो यहां से भेंजे गये और व्रजभूषण दास के यहां से भी आये थे। उनका दाम चिठी मे क्यो नहीं लिखा। क्या तुमने अपना ही पास हिसाव लिखकर वैठ रहे। इससे हमको क्या मालूम है कितना विका और कितना रहा। हम से यहां के पांच सात मनुष्य कह चुके कि हमने भ्रमोच्छेदन का पुस्तक मंगाया है। अभी तक हमारे पास नही भेजा। हम कहने हैं कि यन्त्रालय की आमदानी और विक्री जितनी हो तिल भर का हिसाव साफ लिख कर भेजा करो। और अगले महीने से हिसाव हमारे पास मत भेजा करो। किन्तु **परोपकारिणी सभा के मंत्री जो लाला रामशरण दास हैं,** उन्ही के पास एक नकशे मे सव हिसाब यथावत् लिखकर भेजा करो। अभी से अपना हिसाव ठीक २ कर रक्खो।[2] वहुत वार हम लिख चुके हैं कि जिस[न] ने वेदभाष्य का चन्दा आज तक कुछ भी नही आया

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित में भाद्र, सुदी १२ को वहा पहुचना लिखा है। पहुचे वस्तुत १३ को।

२. इस विराम के पश्चात् से लेकर अन्त की दो पक्तियों से पहले तक का सारा लेख ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ हैं।

है उनके पास वेदभाष्य चौथे वर्ष के आरभ से मत भेजना। ऐसा ही करना और उनके पास पत्र भी भेजो कि जब तक तुम चार वर्ष का चन्दा न भेजोगे तब तक तुम्हारे पास वेदभाष्य न भेजा जायगा। और उनके नाम छाटके हमारे पास भेजो कि जिनको हम अपने रजष्ट[र] के साथ मिला के ठीक करें। और जितनी सामग्री हमारे सामने और जितनी हमारे पीछे छापेखाने मे आई है और जितना दाम लगा है जितना तोल वा गिनती जितने पुस्तकादि पदार्थ जमा वा खर्च तथा धन का भी हिसाब यथावत् लिखकर लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ के पास भेज दीजिये। क्योकि इस परोपकारिणी सभा के मत्री उक्त लाला ही हैं। उन ने मुझ से हिसाब मांगा था। मैंने कहा कि मुशी जी देंगे। मेरे पास पूरा हिसाब नही है। श्यायद वे भी आपको इस के वास्ते लिखेंगे और आप उनके पास भेज भी देंगे।[1] हम आनन्द मे हैं। आप लोग आनन्द मे होगे।

मिती भाद्र सुदी १२ बुधवार सवत् १९३७ मु० (मेरठ)[2]।

[दयानन्द सरस्वती]।

---

[१७] पत्र (१८२) [२०९]

ओ३म्

स्वस्ति श्री श्रौतमार्गप्रकृतपरिचयस्वान्तसिद्धान्तधर्मा
नानातर्कप्रयासैर्विविधगुणभरश्रान्तिविश्रान्तिशर्मा।
देशे देशे प्रवादोत्पथजनमथितोत्कर्षसद्धर्षकर्म्मा
भूयो भूयस्समीयाद्बुधकृतिजनितं सत्फलं कृष्णवर्म्मा ॥१॥
पत्रमत्र त्वदीयस्योदन्तस्य च मदन्तिकम्।
आगतं येन नः स्वान्ते त्यन्तं सुखमजायत ॥२॥
वेदभेदपरिध्वंसतर्कसद्धर्षकृद्वरम्।
व्याख्यानमतिसौहित्यमाख्यातुस्तव दैशिकम् ॥३॥
समीरितं पत्रमनेकमञ्जसा क्रियावरैर्जर्मनदेशजैर्जनैः।
समीपमस्माकमवाप्तमत्र तत्तदाशयं विद्धि महाशयैर्मुदा ॥४॥

---

१. ऋषि का निज लेख यहा समाप्त हो जाता है।

२. १५ सितम्बर १८८०। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

विदेशजैर्देशसुखायं शिल्पकक्रियानिदेशाय सदाशयात्किल ।
नरेभ्य एभ्यो लिखितं निरन्तरं करण्डमेतैस्त्वमतस्समाचर ॥५॥
गन्तव्यमत्रागमनात्स्वदेशे त्वया च तत्राढ्यपुरे पुरैव ।
व्याख्यानमाख्यानमनस्सु देयं श्रुतीरितं श्रौतसुधान्वितं च ॥६॥
तदीयभाषाविरहान्न मत्तः प्रयाति पत्रोत्तरमाश्रुतेभ्यः ।
वक्तव्यमेतल्लिखितं न धीमंस्त्वया च मोनिर्विलमस्य वृत्तम् ॥७॥
नमस्त इत्येष मदुक्तशब्दस्तस्मै प्रयुक्तोथ न वा प्रयुक्तः ।
प्रस्थातुकामो मतिमंश्च देहरादूनं पुरं नूनमितोऽहमस्मि ॥८॥
गत्वा पारलिमेन्टसज्जनसभां व्याख्यानमाख्यावरम्
दत्त्वा भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षाव्रतंस्तान् कुरु ।
पश्येयुर्यत ईदृशं निजदशादुःखं द्रुतं दुःखिनां
म्लेच्छा म्लेच्छतया च भारतजनान् संपीडयन्तीति यत् ॥९॥
यवनजनमतं हि स्वीय धर्मानुकूलः
सकलजनगरिष्ठः श्रेष्ठकर्मैव नान्यः ।
इति मनसि निधायोत्कण्ठिताः कण्ठतेल
श्रुतिपथनिरतानां च्छेदमिच्छन्ति नित्यम् ॥१०॥

५—१. (देशसुखाय) भारतवर्षीयजनसुखाय ।
२ (एभ्यः) भारतवर्षनिवासिभ्यः ।
६—१ (तत्राढ्यपुरे) धनसमृद्धे यूरोपाख्ये ।
७—१. (तदीयभाषाविरहात्) तेषां यूरोपदेशवासिनां भाषाविरहात् ।
८—१. मौनिर्विलिमाख्याय ।
९—१ (आख्यावरम्) सौजनाभियुक्तश्रौतसिद्धान्तानुकूलम् ।
२. (भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षावतः) भारतवर्षस्य पूर्वेषां जनानां सौजन्यसौहार्द्राजिलत्व सर्वशास्त्रसिद्धान्तानुकूलेषु नियमेषु विचारवतः (तान्) यूरोपदेशनिवासिनो महाशयान् पारलिमेण्टसभासदः । (दुःखिनां) भारतवर्षनिवासिनां दुःखाकुलचेतसाम् ।

(अत्राशे प्रकृतविवादो यथा)

मुरादाबादीयश्श्रुतिपथगमुंशीन्द्रमणिकः
श्रुतः श्रौताचाराद्यवनमतविच्छे[द]नरतः ।
तदुक्तौ द्वौ ग्रन्थौ यवनकृतसम्मानवशान्
मजस्ट्रेटः सम्प्रसनिगमवदार्षीत्तदपरम् ॥११॥

मुद्रापञ्चशतं दण्डं कृतवाञ्छीघ्रमेव सः ।
तस्य प्रत्यर्जनं तत्र यातं जजगृहे यदा ॥१२॥

त्यक्त्वा शतानि चत्वारि जजेनापि स्वयत्नतः ।
मजस्ट्रेटकृतो न्यायः स्वीकृतो नैकधा तदा ॥१३॥

सदालसा राज्यनिबन्धकर्म्मसु प्रभावतः स्वार्थरता विशेषतः ।
भवन्ति केचिच्च परार्थतत्परा जना नियुक्ता इह राज्यकर्मसु ॥१४॥

भवन्ति ये म्लेच्छजनाश्च तेषु तत्कथाप्यलं दुःखतमाय दृश्यते ।
न यावदेतेषु मनूक्तदण्डकृन्नयोस्ति तावन्न मुनीतितत्पराः ॥१५॥

भवन्ति ते प्रत्युत धर्मकर्मणि प्रकाशयन्ति स्वमतिभ्रमं यतः ।
अहो महोपद्रवकर्मकारिणः समत्सराः स्वल्पधियोतिलोभिनः ॥१६॥

सर्वमेतत्समाख्याहि पारलीमेण्टसंसदि ।
आख्यातुस्तव दृष्टान्ते सिद्धान्ते न यथा भवेत् ॥१७॥

सुसायटी सोफिकलप्रधानः ख्यातश्च यो डाक्टर मासि नाम्ना ।
न तस्य पत्रोत्तरमाशु मत्तस्तदीयभाषाविरहाद्धि याति ॥१८॥

न च तावद्धनं व्येतुमवकाशो ममाधुना ।
रक्षेयं यावता कश्चिद् द्विभाषिणमिहान्तिके ॥१९॥

११—१. (अवदार्षीत्) भिन्नवान् ।

१२—१ (प्रत्यर्जनम्) प्रतिविवादपत्रमपीलाख्यमिति यावत् ।

१३—त्यक्त्वा शतानि चत्वारि इत्यत्र अय निर्धनी नापराधे न्यूनत्वमस्येति कथयित्वेति शेष ।

१५—(मनूक्त) कार्षापण भवेदत्र दण्ड्योन्यप्राकृतो जन । तत्र राजा भवेद्दण्ड्य सहस्रमिति धारणा ॥ इत्यादिवत् । अत्र राजशब्देन सामान्यतो राज्यकर्मणि नियुक्ता ग्राह्या ॥

१९ (द्विभाषिणम्) देवभाषागौरण्डभाषाविदम् ।

करनेल ओलकाटाख्यं प्रयुक्तं च मयाधुना ।
पत्रमिच्छुस्तदा रक्ष मत्समीपे तथाविधम ॥२०॥
यदि त्वां स मिलेत्तत्र मुसायटिपतिस्तदा ।
कथ्यतां सर्वमेवैतद्वृत्तं मत्पत्रकांक्षिणे ॥२१॥

त्वदभिलषितानि पुस्तकानि मया तदानीमेव प्रेषितुमाज्ञप्तानि काशीनगरादागमिष्यन्त्यागतानि न वेत्यल विस्तरेण । अत्रैका परोपकारिणीसभा स्थापिता यत्र भवानपि सभासदस्ति । तस्या व्यवस्था नियमान्वित राजमुद्राङ्कित भवत्सनीडे प्रेषयामीदं स्वात्मवत्सदा रक्ष्यमुत्तरस्मिन समयेऽत्यन्त कार्यकारि वर्तते । तत्रत्योदन्त. पत्रद्वारा मह्यं निवेदनीय इति ।

नगगुणनवचन्द्रे विक्रमादित्यवर्षे
रसतिथि शनिवारे चाश्विने कृष्णपक्षे ।[1]
बुधजनमुखदात्रे कृष्णवर्माभिधाय
प्रथितविबुधवाण्या प्रेषितं पत्रमेतत ॥[2]

दयानन्द सरस्वती

[३] उर्दू पत्र (१८३) [२१०]

ओ३म् तत्सत्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्द रहो ।

पत्र आप का आया । समाचार मालूम हुआ । रामनाथ पहुच गया । सो विदित हुआ । हम यहां ८ आठ दिन और रहेंगे । और ३ अक्तूबर को [मेरठ के] वार्षिक उत्सव पर जायेंगे ।[3] बाद इसके शायद देहरादून को जायें । मुन्शी इन्द्रमन

२० (तथाविधम्) उक्तविभापाविदम् ।

२१. (सः) सुसायटीप्रधानो डाक्टर मामीति नामा ।

१. २५ सितम्बर १८८० । उस दिन तिथि ७ हो गई थी । संवत् १९३७ आश्विन कृष्ण ६ शनिवार ।

२ मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्रवर्मा जी के पास सुरक्षित है । इसकी जो प्रतिलिपि हमारे पास आई थी, वह अशुद्धप्राय थी । हम ने बहुत यत्न से उसे शोधा है । फिर भी कई अशुद्धिया रह गई हैं ।

३ अनुमानत २७ सितम्बर १८८० को मुजफ्फर नगर से लिखा गया । मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

का मुआमला साहब जज ने भी कुछ अच्छा कुछ बुरा किया है। अर्थात् ५०० पाच सौ रुपया जुर्माना में से ४०० रुपया वापिस किये और १०० सौ रुपया रखे। और वाकी साहब मेजिस्ट्रेट की राय वहाल रखी। और उससे अधिक बुरी राय ऐसी दी कि उसने ३ तीन वात फोहश लिखी है। इस ने यानी जज ने सव किताव को फोहश वतला दिया। इस मे भी कुछ पक्षपात हुआ। अव यह मुआमला शायद हाई कोर्ट को जायगा। देखा जाय कि वहा से क्या होता है। और भी जज साहव ने लिखा है कि यह मुआमला सव हिन्दुओं का नही है खास मुन्शी इन्द्रमन का है। उसकी यह वडी भूल है। लेकिन हाकिम है जो चाहा सो लिखा दिया।

एक पण्डित मथुरासे यहा आया था। चार दिन रहकर चला गया। उसको आने जाने का खर्च दिया गया है। और असूजके अन्तमे फिर आवेगा। फिर खर्च दिया जावेगा। अव आप ही तहरीर फरमाईये कि उस का माहवारी क्या मुकर्रर किया जावे। आप के पास माहवारी असल मा सूद कहा तक हो गया है। और आर्यसमाज वाले अलहदा वैठने का खुशी नही करते। कहते है घूमे विना अच्छा नही है। तुम्हारी इस मे क्या राय है। लेकिन मै जानता हूं कि बहुत घूमने में हर्ज होगा। मगर इस मे कि जहां जायें दो दो एक एक महीना ठहरें तो हर्ज कम होगा। और वडे पडित तो अव मिलते नही कि जिसको पचास या साठ रुपया दें। लेकिन अव वेहतर है कि छोटे छोटे यानी एक एक विद्या जानने वाला कम तनखवाह वाला रख कर काम निकाला जावे। यानी चार पाच रखे जायेंगे। और उस से भी वैसा ही काम लिया जावेगा। यानी हर एक के एक एक काम सुपुर्द कर दिया जावेगा। हम आनन्द हैं। सव से नमस्ते कह देना।

दयानन्द सरस्वती

---

[११] पत्र (१८४) [२११]

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।

आज कल हम मुजफ्फरनगर में हैं। हम ने आप को वसीयत भेज दी थी। क्या वह आपको पहुची या नही? हमने अभी तक उसके उत्तर मे कुछ नहीं जाना,

क्या कारण है ? सब से हमारा नमस्ते कह दें। हम सब सर्वथा आनन्द मे हैं और आप सब का आनन्द चाहते हैं।[1]

अक्तूबर १८८०

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र सूचना[2] (१८५) [२१२]

सेवकलाल कृष्णदास म० आ० स० मुम्बई।

५, ६ अक्तूबर १८८० मेरठ।

---

[२] पत्र (१८६) [२१३]

पडित भीमसेन जी आनदित रहो।

आश्विन सुदि ७ रविवार के लिखे हुए पत्र तुम्हारे आये। तथा अक्टूबर १२ का लिखा पत्र मुन्शी [बखता]वर का आया। हाल विदित हुआ। पुस्तको का हिसाब तुम से वा २।४) रुपैये लगकर भी किसी पुरुष की सहायता से जैसे हो सके वैसे करो। और पुस्तक तथा और पदार्थों को अच्छी प्रकार गण कर ताज्ञा कुजी अपने हाथ कर ले। और मुशी बख्तावरसिंह लिखते हैं कि किसी मनुष्य को शीघ्र छापेखाने मे भेज दो क्योकि प्रेसमीन आदि कारीगर चालाक होते है। उन के सब काम के [को] वह अच्छे समझ ले। सो मेरठ वा फर्रुखाबाद आदि को हम पत्र भेज चुके हैं। तुम्हारी सहायता के लिये कही से कोई मनुष्य आया जाता है। वह भी सब काम समझेगा। परन्तु तुम अच्छे होशिआरी के साथ सब काम की जांच रखना। तुम किसी तरह हा [गा]फिल न होना। आर्य्यदर्प्पण इस महीने का छप जाने दो। परन्तु आगे को कोई भी और काम बाहरी न रहे। जो रुपैये ३००) जमा किये हैं उन का आठ आने ॥) सैकडे से व्याज मिला करेगा। हम से और मिरजापुर के भवानीराम जी के बेटे से पहले इस मामले की बात हो गई है। फिर भी उन के मुनीम से कहना कि मिरजापुर से चिट्ठी मगा लेओ। और फर्रुखाबाद निर्भयराम जी को भी लिख दिया है। वहां से भी उन को चिट्ठी आजायगी।

---

१ वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरावाला से अनुवादित। देखो पत्र पूर्णसख्या १७१ का टिप्पण।

२. इस पत्र का सकेत म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २४५-२४८ पर देखें।

पुस्तक काव्यप्रकाश सटीक जो छपी है वह भेज देना और सर्वदर्शनसग्रह' तथा जैनप्रभाकर से वा और जगह से जो जैन वा बौद्धमत वालों के ग्रन्थ जैसे हम ने लिखे हैं भेज देना।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (१८७) [२१४]

ओ३म्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

नमस्ते—पत्र आपका ता० २१ अक्टूबर स० ८० को हमारे पास पहुंचा। समाचार सब मालूम किया। मास्टर शादीराम जी कि जो अंग्रेजी और फारसी में खूब हुश्यार और रईस आदमी हैं, उनको मेरठ से बनारस को भेजा गया है। मास्टर मज्कूर काम अंग्रेजी और फारसी का और तोताराम जी नागरी का और भीमसेन जी सोधने वगैरा का काम करेंगे और सन्नूलाल वापिस आवेंगे। मगर माहवारी खर्च कि जैसे मुशी और शोधने वाले के ३५ रुपये हैं। जिन में से ३०) बख्तावरसिंह लेता था। और ५) भीमसेन को मिलते थे। सो अब दोनो काम यानी शोधना व मुशी का कुल ३०) रुपये में होना चाहिये। दोनो आदमियो को वह रुपये जैसे मुनासिब मालूम होंगे, हस्ब लियाकत दिये जाएंगे। और मास्टर शादीराम बिल्फेल वास्ते देखने और समझने काम के भेजे गये हैं। अगर वहा का काम उन से चला और समझ मे आगया तो रहेंगे। वर्ना खैर और कुछ तजवीज मुनासिब की जावेगी।

और प० गोपालराव हरी को हम अलहदे पत्र लिखेंगे। और पाठशाला की पुस्तको की बाबत जो लिखा है। सो ऐसा करना चाहिये। कि जो जो पुस्तक तैयार होती जाए, सो सो ज्मायत बन्दी मे शामिल करते रहना यथायोग्य। और हम को फुर्सत कम रहती है। हम भी कच्चा बनावेंगे। और दूसरा निवेदन जो बाबू शिवप्रसाद ने छापा है उसका उत्तर भी तैयार होगया है। सो प० ज्वालादत्त के नाम से अब जारी किया जायगा।

---

१. सभवत: १४ अक्तूबर १८८०। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२. यह उत्तर अनुभ्रमोच्छेदन के नाम से प० भीमसेन की ओर से छपा।

यजुर्वेद का ८ ऽध्याय पूरा होने को आया है। ज्वालादत्त के आये पश्चात् ३ ऽध्याय का भाष्य बन चुका है।

तारीख़ २१ अक्टूबर सन् १८८०।[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[३] पत्र (१८८) [२१५]

ओ३म्

पंडित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

नमस्ते—तुम अपने शरीर का हाल लिखो कि अब कैसा है। और बड़े अफसोस की बात है, देखो कि आज कल तुमको वहा पर रहना जरूर्यात से था। क्योकि काम की कसरत इस वक्त हुई थी। मगर खैर क्या किया जावे। तुम बेमारी की ज्यादती की वजह से चले आये होगे। अब तुम यह लिखो, कि जो जो चीज़ कपड़ा वा पुस्तक वा और कुछ वस्तू जो सर्कारी[2] हो, या रुपया जहा जहां तुम्हारे हाथ से जमा हो या तुम्हारी समझ मे और जिस किसी का जमा कराया हुआ हो फौरन अपने हाथ से वा अपने भाई के हाथ से लिखवा कर ठीक २ काशी जी प० ज्वालादत जी के पास भेज दो। ताकि उनको सब हाल मालूम हो जावे। और ज्वालादत को हमने हमेशा के लिये काशी जी मे भेज दिया है। जो हमारे पास था। और अगर तुम्हारी तबिअत दरुस्त हो गई हो तो तुम लिखो कि हम आजकल आग्रे की तरफ आने वाले है। जो तुम आना चाहो तो दुसरा आदमी तुम्हारी जगेह न रक्खा जावे। मगर पहिले तुम हमको लिख भेजो। और जहां २ जो चीज़ रक्खी हो या तुम जो तोताराम के स्पुर्द कर आये हो, सब का व्योरा पूरा पूरा लिखो। और शिघ्र ज्वालादत जी को लिख भेजो, कि फलानी २ चीज़ फलाने के स्पुर्द मे है। ताकि ज्वालादत को मिल जावे। और हमने तेरे लिखे मुताबिक यह काम हमने किया है। क्योकि तुम कहते थे, कि, हमारा पढ़ना नहीं होता। इसलिये ज्वालादत को हमने वहां भेजदिया है। अब तुम अपने आने की कैफीयत मुफस्सिल लिखो कि आवोगे या नही। मगर जहां तक मुमकिन हो, सब चिजो की फहरिस्त कपड़ा रुपया पुस्तकां इत्यादि वस्तु छापेखाने की, जो कुछ होवें महाभारत वगैरा की पुस्तक सब चीजें जहा २ और जिस २ के पास जमा या तुम्हारा रक्खा हो–सब की कैफीयत लिखदो। इन सब बातो का जवाब (कि मै

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। २ अर्थात् स्वामी जी की।

तुम्हारे पास आना चाहता हू, या काशी जी जाऊगा और कुल चिजो की फहरिस्त कि मैंने वहां पर उनके पास भेज दई।) हमारे पास भेजना जल्दी । देरी नही करनी ।[1]

ता० ७ नवम्बर स० १८८० ई०[2]

[दयानन्द सरस्वती]
मुकाम देहरादून ।

---

[४] पत्र (१८९) [२१९]

॥ ओ३म् ॥

तारीख १५ नवम्बर स ८० ई० ।
मिति कातिक सुदी १४ स० १९३७ चन्द्रवार
देहरादून से ।

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो ।[3]

नमस्ते । तुम हमारे दोनो वेग कि जिस में हमारे वस्त्र साल जोडी आदि और बरतन रसोई आदि कहा पर और किस की सुपुर्द करके आये हो । और जो रुपया कोठी से तुम लाये हो उस का व्योरा, कि किस २ कदर और कित २ कितना और किस को सोंपा है । और मुशी जी की निस्वत छापेखाने मे गडवड करने के मामले मे जान्ता हो या नौकरों चाकरो से सुन रक्खा हो, और या जो को [ई] चीज फौंडरी वगैरे लकड़ी आदि की बनाते या वनवाते देखा हो, सो सव का एक पत्र पर ठीक २ व्योरा लिख कर काशी जी को भेज दो । और एक पत्र मुझ को शीघ्र लिख दो । क्योकि वह सब वातो में यु "कहता है कि मुझ को कोई चीज़ मालूम नही है । सव वातो का हाल भीमसेन जी जानते हैं । क्योंकि उस का कोई हिसाब किताव तो दरुस्त है ही नही । और सव बातों मे गडवडाट कर रक्खा है । ठीक २ जवाब दे नही सकता है । उलटा लडने को दौडता है । परन्तु मास्टर शादीराम जी और पण्डित ज्वालादत्त जी योग्य आदमी हैं । वे उस के कहने पर बुरा नही मानते । अपना काम उनसे निकालते हैं । वह अपनी साथ तुम को भी

---

१. यह पत्र बहुत अशुद्ध लिखा हुआ है । किसी अनाडी लेखक का लिखा प्रतीत होता है ।

२ रविवार, कार्तिक सु० ५, सवत् १९३७ । मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

३ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

लपेटना चाहता है। और अपनी वदनामी तुम्हारे ऊपर रक्खा चाहता है । क्योंकि उसकी कई एक वातें वहां पर पकडी गई है। और मास्टर जीने मालूम कर लई हैं। उन को उस ने यही जवाव दिया है कि मुझ को कुछ मालूम नही। भीमसेन जाने। देखो जैसे कि उसने अग्रेजी फर्मा चढ़ा रक्खा था। और तुम ने कहा था कि तुम बिना आज्ञा स्वामी जी क्यों चढाया। तव उसने जवाव दिया था, कि अव जो मै यहां से दूसरी जगेह ले जाऊ, तो मेरा चार पांच सौ रुपय का नुकसान होता है। और यह भी कहता है कि कोठी से रुपये लाने या लेजाने की निस्वत मुझ को कुछ भी मालूम नही है। और यह भी हम को यकीन है कि तुम्हारे पास ऐसी लिखत मिति वार तो नही होगी, जैसा कि कव और कितना २ रुपया और किस के देने को आया। और किस को दिया गया है। मिति वार है या नही। अगर ऐसी क़िसम की हो तो वहुत अच्छी वात है। क्योंकि ऐसी लिखत के मौजूद होने से बहुत मतलव हासिल होगा। अगर तुम्हारे पास न हो, तो कोठी पर मितिवार सव रुपये की अम्मद रफत मालूम हो सकती है। वहां से हो सकता है। और तुम सव वस्तुओ की तैदाद लिख कर जो जो तुम्हारी दानिस्त मे हो, वहुत शीघ्र लिख कर एक पत्र काशी को और दूसरा हम को लिख भेजो, ताकि वह तुम्हारा नाम से वरी न होने पावे। और सव चीजो का पता ठीक २ वतला देवे। जो जो हिसाव रुपये जमा कर आने या सोपने या मुन्शी जी के काम मे आने की निस्वत तुम को मालूम हो, वह भी, और जो हिसाव चलती वेर वावत मौजूदगी रुपयो की कि जो मुशी जी के पास जमा थे, और जो कोठी पर थे, हम तुम को लिखवा आये थे, वह भी सारी वातो का हिसाव लिख पढ़ कर जल्दी हमारे पास भेज दो। और काशी वालो को भी, इतला दे दो, कि जिस्से वह लोग सव हाल जानकर मुशी जी की निस्वत अदालत मे दावा कर दें। और मुशी जी भी तुम्हारी निस्वत कुछ झूट न कह सकें। जिन जिन वातो का सबूत फोडरी आदि लकड़ी की किसी वस्तु का मुशी जी की निस्वत तुम जानते हो या कोई लिखत पढ़त तुम्हारे पास इस किसम की मौजूद हो, कि जिस्से स्पुर्द करना किसी वस्तु आदि या रुपये पैसे का मुशी जी की निस्वत ठीक सबूत हो जावे, फौरन लिख कर हमारे और काशी वालो के पास भेज दो। और अब वहां का काम बसवब मास्टर शादीराम व पण्डित ज्वालादत्त के उम्मद है कि अच्छी तरह से होगा और मुशी जी की सारी कलई सब बातो की खुल जावेगी। देखो बड़े शोक की बात है कि वक्त के ऊपर तुम को वेमार हो जाना, और तुम्हारा वहां से जल्दी चले आना। और मास्टर साहब, ज्वालादत्त का तुम्हारे सामने न पहुंचना, यह तमाम

कारण बख़तावरसिंह के करने का छापेख़ाने मे हुआ। वर्ने. तुम्हारे हुये, यानि तुम्हारे साम्हने ऐसा कभी न होता क्योंकि देखो, मुन्शी जी ने अकलमंदी से और चालाकी से आधी वस्तु छापेखाने की अपनी वना लई हैं। और रुपये का कुछ हिसाव नही देता और जो कोठी का हिसाव समझने के लिये मास्टर वा पण्डित कहते हैं, कि चलो, तो विल्कुल जाना कवूल नही करता। और गाली गुफ्तार वकने लगता है। यह कुल कारण माल के हजम करने का है। हम मिति मार्गशिर वदि २ बृहस्पतवार सम्वत् १९३७ को आगरे मे पहुचेंगे।[1] इस लिये तुम को उचित है कि सारी वातो का जवाव लिख कर ठीक २ हम को आगरा में खवर दो, और एक पत्र लिखकर सारी वातों का हाल से जो २ तुम जानते हो और जहा तक मालूम हो सके, जल्द लिख भेजो। और तुम भी लिखो कि अगर हमारे पास आना समझो और तुम्हारा शरीर भी दरुस्त हो गया हो तो हम को लिखो। अगर तुम आवो, तो हम दूसरा पण्डित न रक्खें। मुफस्सिल लिखो। शीघ्र जवाव से इतला दो।[2]

द० [दयानन्दसरस्वती]

---

[२] पत्र (१९०) [२१७]

लाला रामशरण दास जी आनन्दित रहो।

मुशी इन्द्रमणि के मामले के खरच मे तुम को अखतयार है। जो मुनाशिव जानो सो देओ। और अपील जरूर हाईकोरट में जाय। और पांच जजों के वीच यह मामला हो। ऐसा वदोवस्त कर देना। इस के खरच के लिये जहां २ चंदा होता है। और तुम योग्यता जानो उस २ जगह को और भी चदा होने के लिये लिखो। मेरठ समाज में पहले वहुत खरच हो चुका है। इस लिये तुम वहा चन्दा न करना। और मुशी जी को लिखना कि घवडावें नही। किंतु अपने पक्ष पर श्रेष्ठ प्रमाण राजघर में दें। दूसरों के वहुत दोष दिखाने से भी अच्छी तरह कार्यसिद्धि नही होती है, यह विचार पूरा २ रखें।

फर्रुखावाद से दो सभासद तोताराम और लाला सन्नू लाल काशी वैदिक यन्त्रालय मे गये हैं। वे सव हिसाव का वदोवस्त यथावत् करेंगे। तुम अव किसी आदमी का खोज न करना। परन्तु वहां रहने के लिये किसी मुशी का वन्दोवस्त

---

१ १८ नवम्बर १८८०। २. यह लेखक बहुत अशुद्ध लिखता है।

अवश्य करना जो हमेसा छापेखाने मे रहे और योग्य हो । तीनो भापाश्रो का यथायोग्य काम करें । और मातवर हो ।

मि० आ० १४ ।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्रांश (१९१) [२१८]

मन्त्री आर्यसमाज गुजरांवाला

. .. .

पण्डित आत्मा राम जी से एक पत्र उन संदेहमात्र वातो का जिनको वह सत्यार्थप्रकाश मे जैनो के मतो के विरुद्ध ठहराने हैं उनके हस्ताक्षर से हमारे पास भिजवा दो कि हम विचार पूर्वक उनका उत्तर लिखकर और अपने हस्ताक्षर करके उनके पास भेजेंगे।

सम्भवत कातिक वदी १, सं० १९३७।[2]

---

[१] पत्र (१९२) [२१९]

पूज्यवर आत्माराम, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना और ठाकुरदास जी रईस गुजरांवाला। जैन मतानुयायी सज्जनो के प्रश्नो के उत्तर—

प्रश्न—जो सत्यार्थप्रकाश में श्लोक लिखे हैं जैनो के किस शास्त्र या ग्रन्थ के हैं?

उत्तर—यह सव श्लोक बृहस्पतिमतानुयायी चारवाक जिसके मत का नामान्तर लोकायत भी है और यह जैन मतानुयायी है उनके मतस्थ शास्त्र वा ग्रन्थो के श्लोक हैं।

---

१. मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। आश्विन वदी १४ रविवार ३ अकतूवर १८८० को है और आश्विन सुदी १४ रविवार १७ अकतूवर को है।

२ यह पत्राश उस पत्र में है, जो मु० नारायण कृष्ण मन्त्री आर्यसमाज गुजरावाला ने प० आत्माराम जी को गुजरावाला मे ही कार्तिक ५ को भेजा। यह पत्र नारायण कृष्ण जी के पास लगभग ४ कार्तिक को पहुंचा होगा । श्री स्वामी जी ने मूलपत्र १ या २ कार्तिक को लिखा होगा। मुशी ना० कृ० जी ने अपने पत्र के आरम्भ में लिखा है—"इस समाज में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का एक पत्र आया है।" कार्तिक वदी १, १९ अक्तूबर १८८० को पड़ती है।

श्लोक .—

यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्योरगोचरः ॥
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥१॥

तथा तदन्तर्गतश्चाभाणकोप्याह—

अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम् ।
प्रज्ञापौरुषहीनानां जीविकेति बृहस्पतिः ॥२॥
अग्निरुष्णो जलं शीतं, शीतस्पर्शस्तथानिलः ।
केनेदं चित्रितं तस्मात्स्वभावात्तद्व्यवस्थितिः ॥३॥
न स्वर्गो नापवर्गो वा, नैवात्मा पारलौकिकः ।
नैव वर्णाश्रमादीनां, क्रियाश्च फलदायकाः ॥४॥
अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम् ।
बुद्धिपौरुषहीनानां, जीविका धातृनिर्मिता ॥५॥
पशुश्चेन्निहितः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति ।
स्वपिता यजमानेन, तत्र कस्मान्न हिंस्यते ॥६॥
मृतानामपि जन्तूनां, श्राद्धं चेत्तृप्तिकारणम् ।
गच्छतामिह जन्तूनां, व्यर्थं पाथेयकल्पनम् ॥७॥
स्वर्गस्थिता यदा तृप्तिं, गच्छेयुस्तत्र दानतः ।
प्रासादस्योपरिस्थानामत्र कस्मान्न दीयते ॥८॥
यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।
भस्मीभूतस्य देहस्य, पुनरागमनं कुतः ॥९॥
यदि गच्छेत् परं लोकं, देहादेष विनिर्गतः ।
कस्माद्भूयो न चायाति, बन्धुशोकसमाकुलः ॥१०॥
ततश्च जीवनोपायो, ब्राह्मणैर्विहितस्त्विह ।
मृतानां व्रतकार्याणि, न त्वन्यद्विद्यते क्वचित् ॥११॥
अश्वस्यात्र हि शिश्नं तु, पत्नीग्राह्यं प्रकीर्तितः ।
भण्डैस्तत्परं चैव ग्राह्यजातं प्रकीर्तितम् ॥१२॥

त्रयो वेदस्य कर्त्तारो, धूर्त्तभाण्डनिशाचराः ।
जर्फरी तुर्फरीत्यादि, पण्डितानां वचः स्मृतम् ॥१३॥
मांसानां खादनं तद्वन्निशाचरसमीरितम ॥

एतदादि जो जो मैं ने सत्यार्थप्रकाश मे जैन मत विषयक लिखा है सो सो समस्त यथार्थ है। प्रथम पत्र के उत्तर मे ला० ठाकर दास आदि को लिखवा दिया था कि जैन मतकी कई एक शाखायें हैं। यदि आपने प्रत्येक शाखा के प्रति तन्त्र सिद्धान्त जाने होते तो आप को सत्यार्थप्रकाश के लेख मे भ्रम कभी नही होता। आप लोगो के प्रश्नो के उत्तर मे विलम्ब इस लिये हुआ कि जो कोई सज्जन सभ्य विद्वान् जैसा कि श्रेष्ठ पुरुषो को लेख करना चाहिये वैसा करता तो उसी समय उत्तर भी लिखा दिया जाता, क्योंकि सज्जनता पूर्वक लेख के उत्तर में स्वामी जी विलम्ब कभी नही करते, देखिये अब पञ्चायत सरावगिया ने योग्य लेख किया तो स्वामी जी ने उत्तर भी शीघ्र लिखवा दिया और अब भी लिख दिया गया था कि जितने आप लोगो के सत्यार्थप्रकाश विषयक प्रश्न हो सब लिख के भेज दीजिये जो सब के उत्तर एक सग लिख दिये जावें। जैसा स्वामी जी ने लिखवाया था कि आत्मा राम जी को जैन मत वाले शिरोमणि पण्डित गिनते हैं। उन का और स्वामी जी का पत्र लेखानुसार समागम होता तो सब बातें शीघ्र ही पूरी हो जाती परन्तु ऐसा न हुआ और यह भी शोक की बात है कि हम ने इस विषयक रजिस्टरी पत्र आप, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना को भेजी थी और उस का उत्तर भी अब तक नही मिला, न प्रश्न भेजे किन्तु जो ठाकर दास ने एक बात लिख भेजी थी कि यह श्लोक जैन मत के किस शास्त्र और किस ग्रन्थ के अनुसार हैं और जो बात करने के योग्य आत्मा-राम जी हैं उन का शास्त्रार्थ करने में निषेध लिख भेजा और ठाकर दास जी का यह हाल है कि प्रथम पत्र मे संस्कृत और भाषा के लिखने मे अनेक दोष लिखे थे, अब आप लोग धर्म न्याय से विचार लीजिये कि क्या यह बात ऐसी होनी योग्य है कि जब जब पत्र ठाकर दास ने लिखी तब तब स्वामी जी के पास और उस मे जो बात शिष्ट पुरुषों के लिखने योग्य न थी सब लिखी और जो योग्य हैं अर्थात् आत्मा राम जी उन को बात करने और लिखने वा पत्र पर हस्ताक्षर करने से पृथक रखते हैं और एक ठाकुर दास से स्वामी जी का सामना कराते हैं, क्या ऐसी बात करनी शिष्टो को योग्य है। अब अधिक बात करनी हो तो आप अपने मत के किसी योग्य विद्वान् को प्रवृत्त कीजिये कि जिस से हम और आप लोगो को सत्यासत्य का निर्णय हो कर सर्वोत्तम ज्ञान हो सके। बुद्धिमानो के सामने

अधिक लिखना आवश्यक नहीं, किन्तु अपनी सज्जनता उदारता, अपक्षपातता, बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता से थोडे लिखने से वहुत जान लेते हैं।

स० १९३७ मिति कार्त्तिक शुदी ४ शनिवार ।[1]

कृपाराम मन्त्री आर्यसमाज डेरादून ॥

[२] पत्र (१९३) [२२०]

पूज्यवर आत्मा राम जी नमस्ते।[2]

पत्र आप का ता० ४ नवम्बर १८८० का लिखा हुआ १० नवम्बर १८८० की साय काल मेरे पास पहुंचा। देख कर आनन्द हुआ। अव आप के प्रश्नो का उत्तर क्रमवार लिखता हू—

प्रश्न १—सत्यार्थप्रकाश समुल्लास १२ पृष्ठ ३९६ पक्ति १६ मे लिखा है कि जव प्रलय होती है तो पुद्गल पृथक् २ हो जाते हैं ऐसा नही है।

उत्तर:—मैं ने ठाकुर दास जी के उत्तर में एक पत्र आर्यसमाज गुजरांवाला के द्वारा भेजा था जो आप के पास पहुंचा होगा। उस मे यह वतलाया गया है कि जैन और वौद्ध दोनों एक ही हैं चाहे उन को वौद्ध कहो चाहे जैन कहो। कई स्थलों पर महावीर आदि तीर्थङ्कारो को वुद्ध और वौद्ध आदि शब्दो से कहा गया है और कई स्थलो पर जिन, जैन, जिनवर, जिनेन्द्र आदि नाम से वोलते हैं (विवेकसार पृष्ठ ६५, पक्ति १३) वुद्ध, वौद्ध यह एक सिद्ध अनेक सिद्ध भगवान् हैं (पृष्ठ ११३, पक्ति ७) चार वुद्ध की कथा (पृ० १३७, प० ८) प्रत्येक वुद्ध की कथा (पृ० १३८, प० २१) स्वय वुद्ध की कथा (पृ० १५२, पं० १४)।

चार वुद्ध समकाल मोक्ष को गए। इसी प्रकार और भी आप के ग्रन्थों मे कथा स्पष्ट विद्यमान हैं जिन को आप या कोई जैन श्रावक विरुद्ध न कह सकेंगे।

और ठाकर दास के पहले पत्र मे (उन श्लोको समेत जो मैंने इस से पहले पत्र में लिख कर आप के पास भिजवाया है) आप लोग कई श्लोक स्वीकार भी कर चुके हैं। उस पत्र की प्रतिलिपि मेरठ मे है और आप के पास भी होगी (कल्प भाष्य भूमिका जिस मे राजा शिवप्रसाद जी ने अपने जैन मतस्थ पिता आदि पूर्वजों का वर्णन किया है उनकी साक्षी भी लिख भेजी और इतिहास तिमिर नाशक खण्ड ३, पृ० ८, पं० २१ से लेकर पृ० ९ की प० ३२ तक) स्पष्ट लिखा है कि जैन और वौद्ध एक ही के नाम है।

वहुत स्थलो पर महावीर आदि तीर्थङ्कारो को वौद्ध कहते हैं। उन्ही को आप लोग जैन और जिन आदि कहते हैं। अव रहे वौद्ध की शाखाओ के भेद जो चारवाक

१ ६ नवम्बर १८८०।

२ आर्यसमाचार मेरठ, भाग २, पृ ३१८-३२३, माघ, स० १९३७। दयानन्द-दिग्विजयार्क, १ खण्ड, पृ ४७-५०।

आभाणक आदि हैं जैसा कि आप के यहां श्वेताम्बर, दिगम्बर, ढूण्ढिया आदि शाखाओ के भेद हैं कि उन मे कोई शून्यवाद, कोई क्षणिक, कोई जगत् को नित्य मानने वाला, कोई अनित्य मानने वाला, कोई स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति और प्रलय मानते हैं, कोई आत्मा को पांच भूतो से बनी हुई मानते हैं और उसका नाश हो जाना भी मानते हैं (देखो रत्नावली ग्रन्थ पृ० ३२, प० १३ से ले के पृ० ४३, प० १० तक) कि उस स्थल पर सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी लिखा है वा नही ।

इसी प्रकार चारवाक आदि भी कई शाखा वाले जिस को आप पुद्गल कहते हैं उस को अणु आदि नाम से लिखते हैं और उन के परस्पर मिलने से जगत् की उत्पत्ति और पृथक् होने से प्रलय होना ही मानते हैं और वे जैन और बौद्ध से पृथक् नही हैं । किन्तु जैसे पौराणिक मत मे रामानुजी आदि वैष्णवो की शाखा और पाशुपतादि शैवो की और वाममार्गियो की दस महाविद्या की शाखायें और ईसाइयो मे रोमन कैथलिक आदि और मुसलमानों मे शीआ सुन्नी आदि कुछ के कुछ भेद हैं और तब भी वेद, बाईबल और कुरान के मत मे वे एक ही समझे जाते हैं वैसे ही आपके अर्थात् जैन और बौद्ध मत की शाखाओ के भेद चाहे पृथक् २ लिखे जासकते हैं, परन्तु जैन और बौद्ध मत मे एक ही है ।

आप ने बौद्ध, जैन मत के प्रत्येक सम्प्रदाय के तन्त्र सिद्धान्त अर्थात् भेद कथन करने वाले ग्रन्थ देखे होते तो सत्यार्थप्रकाश मे जो लेख उत्पत्ति और प्रलय के सम्बन्ध मे है उस पर शका कभी न करते ।

प्रश्न २— सत्यार्थप्रकाश पृ० ३९७ प० २४ (प्रश्न) मनुष्य आदिको को ज्ञान है, ज्ञान से वे अपराध करते है । इस से उन को पीड़ा देना कुछ अपराध नही । यह बात जैन मत में नही ।

उत्तर—ग्रन्थ विवेकसार मे पृ० २२८ प० १० से लेकर प० १५ तक देख लीजिये क्या लिखा है अर्थात् गुणाभियोग और स्वजन आदि समुदाय की आज्ञा जैसे विष्णु कुमार ने कछ की आज्ञा से बौद्ध रूप रचना करके नमुची नाम पुरोहित को कि वह जिन का विरोधी था लात मार के सातवें नरक मे भेजा और ऐसी ही और बातें ।

प्रश्न ३— सत्यार्थप्रकाश पृ० ३९९ प० ३ और उसके ऊपर (अर्थात् पद्म-शिला पर) बैठ के चराचर का देखना ।

उत्तर—पुस्तक रत्नसार भाग पृ० २३ प० १३ से लेकर पृ० २४ पंक्ति २४ तक देख लीजिये कि महावीर और गौतम के परस्पर वार्तालाप मे क्या लिखा है ।

प्रश्न ४—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ प० २३ और उन के मत मे न हो वह श्रेष्ठ भी होय तो भी उस की सेवा नही करते अर्थात् जल तक भी नही देते।

उत्तर—पुस्तक विवेकसार पृ० २२१ प० ३ से लेकर प० ८ तक लिखा है, देख लीजिये कि अन्य मत की प्रशसा वा उन का गुण कीर्तन नमस्कार, सत्कार, वा उन से थोडा बोलना वा अधिक बोलना वा उन को बैठने के लिये आसन आदि देना, उन को खाने पीने की वस्तु, सुगन्ध पुष्प देना वा अन्य मत की मूर्ति के लिये चन्दन पुष्प आदि देना यह छ बातें नही करनी चाहियें।

प्रश्न ५—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ प० २७ किन्तु साधु जब आता है तब जैनी लोग उस की डाढी, मूछ और सिर के बाल सब नोच लेते हैं।

उत्तर—ग्रन्थ कल्प भाष्य पृ० १०८ प० ४ से ले कर ९ तक देख लीजिये और प्रत्येक ग्रन्थ मे दीक्षा के समय पाच मुट्ठी बाल नोचना लिखा है। यह काम अपने हाथ चाहे चेला वा गुरु के हाथ से होता है और अधिकतर ढूण्डियो मे है।

प्रश्न ६—सत्यर्थप्रकाश पृ० ४०२ प० २० से ले कर जो श्लोक जैनो के बनाए लिखे हैं, वे जैन मत के नही।

उत्तर—मै इस का उत्तर इस से पहले पत्र मे लिख चुका हू (मिती कार्तिक शुदी ४ शनि वार) आप के पास पहुचा होगा देख लीजिये।

प्रश्न ७—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०३ पं० ११ अर्थ और काम दोनों पदार्थ मानते हैं।

उत्तर—यह मत जैन मत सम्बधी सम्प्रदाय चारवाक नामक का है जिस ने ऐसे २ श्लोक कि जब तक जिये सुख से जिये, कोई प्राणी मृत्यु से अगोचर नही है, भस्मी भूत देह में पुन. आना नही आदि अपने मत के बना लिये हैं, इसी प्रकार से नीति और कामशास्त्र के अनुसार अर्थ और काम दो ही पदार्थ पुरुपार्थ और बुद्धि से माने गए हैं।

यहा सक्षेप से आप के प्रश्नो का उत्तर दिया गया है, क्योंकि पत्रो द्वारा पूरा स्पष्टीकरण नही हो सकता। जब कभी मेरा और आप का समागम होवे तब आप को मैं ग्रन्थों के प्रमाणो और युक्तियो के साथ स्पष्ट ठीक २ निश्चय करा सकता हूं। आप को और भी जो कुछ सन्देह सत्यार्थप्रकाश के बारहवें समुल्लास में होवें। (मेरठ के आर्यसमाज द्वारा) लिख कर भेज दीजिये सब का ठीक उत्तर दे दिया जायगा। अब मै यहा थोडे दिन तक रहूगा। यदि आप अम्बाला तक आसकें तो ता० १७ नवम्बर १८८० तक प्रात: ८ बजे से पहले पहले डेरादून

में उसके पश्चात् आगरा मुझको तार मे सूचना देनी चाहिये कि मैं आप से शास्त्रार्थ अर्थात् परस्पर वार्तालाप के लिये वहा पहुंच सकू। बुद्धिमान् मनुष्य के लिये इतना पर्याप्त हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नही।

स० १९३७ मिति कार्त्तिक शुदी १३ रविवार।[1]

हस्ताक्षर—दयानन्द सरस्वती डेरादून

---

[४] पत्र (१९४) कार्ड [२२१]

लाला काली चरण राम चरण जी आनन्दित रहो।[2]

और मैं देहरादून से यहां आया। चोवे तोताराम की गफलत से पुस्तको का अस्त व्यस्त हो जाना है। और अब मैं यहां से दो चार दिनो मे आगरे को जाऊगा। और वहां मै १ महीना रहूँगा। और मास्तर शादीराम जी की जामनी लाला रामशरणदासजी ने कर दीनी है। और मुन्शी वख्तावर सिंह जी की चिट्ठियों से मालूम हुआ कि उनके ऊपर क़ानून से पेश आना चाहिये। सो ठाकुर मुकदसिंह जी भूपालसिंह जी मुखतार है। सब काम कर लेंगे।

स० १९३७ मि० मा० व० ४ रविवार।[3]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[३] पत्र (१९५) [२२२]

❀ ओ३म् ❀

एच्० पी० मेडम ब्लेवस्तकी जी आनन्दित रहो।

आपकी चिट्ठी ता० ८ अक्टूबर सन् १८८० ई० की लिखी हुई बाबू छेदीलाल जी रईस मेरठ के द्वारा मेरे पास देहरादून मे पहुंची।[4] इसका क्रमानुसार उत्तर सत्य निश्चय से देता हूं। आपने जो अमरीका से पत्र और उनके उत्तर मे यहां से मैंने वहां पत्र भेजे थे पुन. आपका और मेरा समागम सहारनपुर, मेरठ, काशी और फिर मेरठ में हुआ था। उन सब के अनुसार अपने निश्चय के अनुकूल सब दिन मैं वर्त्तमान करता रहा हूं। परन्तु वैसा वर्त्तमान आपका ठीक २ नही

---

१ १४ नवम्बर १८८०। पृ० २५३, टिप्पण २ यहा पर भी लागू है।

२ यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५१९, २० पर छपा है। वहा कुछ शब्द बदले हुए ह। हमने इसे मूलपत्र से छापा है। मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है।

३ २१ नवम्बर १८८०, मेरठ। 'फरुखाबाद का इतिहास' पृ० १८५ पर भी मुद्रित है।

४ मैडम का यह पत्र श्रीमद्दयानन्दप्रकाश तथा परोपकारी पत्र में छपा हुआ है।

देखता हू क्योंकि प्रथम आप लोगों ने जैसा लिखा था, जैसा समागम से प्रथम विदित किया था, वैसा अब कहां है ? आप अपने आत्मा से निश्चय कर लीजिये। प्रथम सस्कृत पढ़ने, शिक्षा लेने, सुसायटी को आर्य्यसमाज की शाखा करार देने आदि के लिए लिखा था; और वे चिट्ठिया छप के सर्वत्र प्रसिद्ध भी हैं, और जो मैंने पत्र वहां भेजे थे उनकी नकल भी मेरे पास उपस्थित हैं। देखिये कि जब अभी मेरठ में उस दिन रात को आर्यसमाज और सुसायटी के नियम विषयक बातें हुई थीं तब मैंने आप और अन्य सब के सामने क्या यह बात नही कही थी कि आर्यसमाज के नियमों से सुसायटी के नियमो मे कुछ भी विशेष नहीं ? यही बात मैंने बम्बई की चिट्ठी मे भी आपके पास लिख भेजी थी। उन्ही के अनुसार मैं अब भी बराबर मानता और कहता हू कि आर्यसमाजस्थो को सुसायटी में धर्मादि विषयों के लिए मिलना उचित नहीं। और यही बात आप वा एच् एस् करनेल ओलकाट साहिब ने अपने पुस्तक, उपदेश और सवाद में क्या नही लिखी और नही कही हैं कि जो सत्यधर्म सत्यविद्या और ठीक २ सुधार की और परम योग आदि की बातें सदा से जैसी आर्य्यावर्त्तीय मनुष्यो और वेदादि शास्त्रों में थी और हैं वैसी कही न थी और न हैं। अब विचारिये कि थियोसोफीष्टो को एतद्देश वासी मत मे मिलना चाहिए किंवा आर्य्यावर्त्तियो को थियोसोफीष्ट होना चाहिए। और देखिये कि आज तक मैंने वा किसी आर्यसमाजस्थ ने किसी थियोसोफीष्ट को आर्यसमाज मे मिलने का उपदेश वा प्रयत्न कभी किया है ? और आप अपनी बात को अपने आत्मा में विचार लीजिये कि आपने क्या करी और क्या करते जाते हैं। कितने ही आर्यसमाजस्थों को थियोसोफीष्ट होने के लिए कितना प्रयत्न और कितना उपदेश किया। और कइयो से १०) दस २ रु० फीस सभासद होने के लिए, लिए हैं। और मेरठ में बात होने के पश्चात् बाबू छेदीलाल जी से अम्बाले मे थियो-सोफीष्ट होने के लिये क्या न कहा था, और शिमले से चिट्ठी न भेजी थी ? इसीलिए अवश्य मैंने मेरठ आर्यसमाज मे सबके सामने पूर्वोक्त हेतुओ से यह कहा था कि जो कभी आप वा एच् एस् करनेल ओलकाट साहिब वा और कोई थियो-सोफीष्ट अथवा अन्य कोई जन किसी सभा में सभासद होने के लिए कहे तब उसको यही उत्तर देना कि जो आर्यसमाज के नियमो से थियोसोफिकल सुसायटी आदि के नियम और उद्देश एक ही हैं तो हम और वे भी सब एक हैं और जो विरुद्ध हैं तो हमको सुसायटी वा अन्य किसी सभा में मिलना कुछ आवश्यक नहीं। और तब तक आर्यसमाज के नियम अखण्डित हैं कि जब तक उनमे कोई बात खण्डनीय विदित न हो। अब कहिए निर्भ्रान्त पोप रूम की बात मेरी हैं वा आपकी ? और जो मैंने, अन्य देशियो के समाज मे मित्रता और स्नेह

वैसा कभी नहीं हो सकता जैसा कि स्वदेशियों के समाज मे, यह वात इस प्रसङ्ग पर कही थी, कहता हूं और कहूगा कि (असिद्ध वहिरङ्गमन्तरङ्गे) अर्थात् जिनका एक देश, एक भापा, एकत्र जन्म, सहवास और विवाहादि व्यवहार सम्वन्ध आपस मे होते हैं उनसे उनको जितना लाभ और उनकी उनमे जितनी प्रीति होती है उतना अन्य देश वासियों से अन्य देश वासियों को लाभ और उन्नति नही हो सकती। देखिये भापा ही के केवल भेद होने से मुझ को और योरपियन् को कितनी कठिनता परस्पर उपकार होने मे होती है। और जिन के पूर्वोक्त सव भिन्न हैं उन मे पूर्वोक्त वातें कम होती ही हैं। और जिनके वे सव एक हैं उनमे वे वातें सहज से शीघ्र अधिक होती हैं इस मे क्या सन्देह है। और दूसरे दिन भी थोडा सा अनुवाद अवश्य कर दिया था क्योकि जिस को रोग होता है उसी को निदान और पथ्य आदि करना आवश्यक हैं निरोगी के लिये नहीं। जव हम लोग थियोसोफिष्टों को भी आर्यसमाज के अवयवभूत शाखास्थ भ्रातृगणवत् मानते आये थे, और जहा तक वनेगा मानेंगे, ऐसा जानकर उनको आर्यसमाज मे मिलाने और उन से १०) रुपए फीस लेने आदि के लिये प्रयत्न न किया था और अव नही करते, उनसे यथाशक्ति प्रेम और उनका उपकार ही करते हैं, हां जो कोई आर्यसमाज वा सुसायटी से भिन्न हैं वे उपदेश से समझ कर वेदमत मे अपनी प्रसन्नता से स्वय मिलते जाते हैं तो हम लोगो के लिये वह निपेध करना भी औपध नही क्योकि हम मे वह रोग ही नही है। अव आप लिखती हो कि सिवाय आपके और वम्वई, लाहौर और अन्यत्रस्थ भी आर्यसामाजिक लोग हमारी सुसायटी मे है, परन्तु हमने उन से सरीख होने को कभी नही कहा यह वात सच नही। क्योकि आपने वम्वई मे मुन्शी समर्थदान आदि, प्रयाग मे पडित सुन्दरलाल आदि आर्यसभासदों को सुसायटी मे मिलने को अवश्य कहा था। इस का साक्षी मैं ही हूं क्योंकि मेरे विना सुने मुझ को खवर भी नही थी और जैसे मेरा नाम सुसायटी के सभासदो मे लिखती हो वैसा अन्यत्र भी आप ने किया होगा इस मे कुछ सन्देह नही। और जो वात आप आर्यसमाज के नियमों से विरुद्ध प्रत्येक धर्म के लोगो की प्रतिष्ठा और सव धर्म वाले हमारी सुसायटी मे मिलें और उनके धर्म पर हम हाथ नही डालते है किन्तु एक भाईपन होने के लिये शामिल करते हैं और कोई वात उसकी थियोसोफीष्ट होने मे निषेधक नही हो सकती। अव मै इसमें आपसे पूछता हूं कि आपका धर्म क्या है? जो आप कहें कि हमारा धर्म सवसे विरुद्ध है तो दूसरे धर्म वाला आपकी सुसायटी मे कभी नही मिल सकता। जैसा रात दिन का विरोध है वैसे विरुद्ध धर्म होते

हैं। और जो कहें कि हमारा धर्म किसी से विरुद्ध नही तो उसमें मिलना किस लिए हो क्योकि वे एक ही हैं। जैसे मुसलमान अपने मजहब से भिन्न को काफिर और उनसे मेल कभी न करना चाहिये कहते हैं, इत्यादि धर्म वाले लोग आप की सुसायटी मे कैसे मिल सकते हैं। जो वे भ्रातृभाव से अन्य मत वालों से आत्मा और मन करके प्रीति करते हैं तो उन का धर्म जाता है और अपना रक्खें तो आप का नही रहता। एक चित्त से एक समय मे दो बातें हो ही नही सकतीं, इत्यादि बातों के उत्तर लिखियेगी। और विशेष इस विषय मे जब सन्मुख बैठ के परस्पर हम आप बातें करेंगे तभी निश्चय होगा। क्या यह बात सर्वथा असभव नहीं है कि स्वामी जी भी अढाई वर्ष से हमारे सब से उत्तम सभासदो मे एक हैं। भला आप कहिये तो कि मैंने आप की सुसायटी का सभासद् होने के लिये कब दर्खास्त भेजी थी? और मैंने कब आप से कहा था कि मैं आप की सुसायटी का सभासद् होना चाहता हू? क्या मैंने जो बम्बई मे चिट्ठी भेजी थी उस बात को भूल गई कि जो मैं सिवाय वेदोक्त सनातन आर्य्यावर्त्तीय धर्म के अन्य सुसायटी, समाज वा सभा के नियमों को स्वीकार न करता था, न करता हू, न करूगा क्योंकि यह बात मेरे आत्मा की दृढतर है, शरीर, प्राण भी जायें तो भी इस धर्म से विरुद्ध कभी नही हो सकता। हा यह अपराध आप लोगो ही का है कि विना कहे सुने सुनाये अपनी इच्छा से आप ने मेरा नाम कही अपने सभासदो मे लिख लिया होगा सो क्यो कर सच हो सकता है। और इस बात को क्या भूल गये कि मेरठ मे मूलजीठाकरसी के सामने जहां आप भी सामने बैठी थी एच् एस करनेल ऑलकाट साहब को मैंने कही थी कि आप ने बम्बई की कौंशल मे मेरा नाम सभासदो मे क्यो लिखा, ऐसा काम आप लोग कभी मत कीजियेगा कि जिस मे मेरी सम्मति न हो और आप अपने मन से कर बैठोगे तो मै उस बात का स्वीकार कभी न करूगा। उस पर करनेल ऑलकाट साहिब ने कहा था कि हम ऐसा काम कभी न करेंगे। और बम्बई मे मैंने चिट्ठी भी दी थी कि मेरा नाम आपने अपनी इच्छा से जहां कही सभासदो मे लिखा हो काट दीजिये। इतने हुए पर फिर भी आपने इस चिट्ठी मे जो यह बात लिखी इस को कोई भी सच कर सकता है? क्या आश्चर्य्य की बात है? आये तो विद्यार्थी और शिष्य बनने को, गुरु और आचार्य्य बनना चाहते हो। ऐसी पूर्वाऽपर विरुद्ध बातें करना किसी को योग्य नही। जो आप ईश्वर को कर्त्ता, धर्त्ता नही मानती हो। सो बात इसी सवत् १९३७ के भाद्र महीने की है। इस के आगे आप ने मुझ से कभी न कहा और न किसी से मैंने सुना था कि आप ईश्वर को वैसा नही मानती हो, सिवाय काशी के

समागम मे प्रमोदादास मित्र और डाक्टर लाज़रस साहिब के। क्या आप ने काशी में डाक्टर टीबो साहिब आदि के सामने कोठी के बाहर चौंतरे पर श्याम को बैठे थे जब प्रमोदादास मित्र ने मुझ से कहा था कि मेडम तो अनीश्वरवादिनी, नास्तिकिनी है तब मैंने उन को उत्तर दिया था कि मेडम साहिब की बात को तुम समझे न होगे। और दामोदर से मैंने कहा था कि मेडम साहिब ईश्वर को मानती हैं वा नहीं तब दामोदर ने आप से पूछ कर मुझ से कहा था कि मानती है। क्या यह बात भी झूठ है? और मेरी बात अद्भुत भेद करने वाली आप की ओर नहीं किन्तु आप की बातें मेरी ओर भेद करने वाली हैं। मैं आप को भगिनी वा मित्र के समान जानता था, जब तक कोई ऐसा विशेष कारण न होगा तब तक जानूंगा भी, क्योंकि मैं और जितने सज्जन आर्य्य हैं वे जैसा सदा से मानते आए हैं और मानेंगे भी कि सामान्यतः आर्य्यावर्त्तीय इङ्गलेण्ड और अमरीका आदि भूमण्डलस्थ देशनिवासी मनुष्यों को सब दिन से भ्रातृ और मित्रवत् मानना है परन्तु सत्यधर्म व्यवहारों के साथ, असत्य और अधर्म के साथ नहीं। यहां के अंगरेज लोग आर्य्यों को चाहे वैसा मानें। क्या वे राज्याधिकारी हों वा व्यावहारिक हों मुझको भी अपनी समझ के अनुकूल यथेष्ट मानें। मैं तो सब मनुष्यों के साथ सुहृद्भाव से सदा वर्तता आया और वर्तना चाहता हूं। और जो उनका यह कहना कि हम इसका कोई दृढ़ हेतु नहीं देखते कि स्वामी जी के अनन्तर और आर्य्यसामाजिकों से भी वैसा ही वर्त्तें। यह उनका कहना तब तक है कि जब तक वे आर्य्यावर्त्तस्थ आर्यों का पूर्व इतिहास, आचार, उन्नति, विद्या, पुरुषार्थ, न्यायवृत्ति, आदि उत्तम गुणों और वेदादि शास्त्रों के सत्य २ अर्थों को न जानेंगे परन्तु कालान्तर मे उनका यह भ्रम अवश्य छूट जायगा। तथापि मैं परमात्मा को धन्यवाद देता हूँ कि जो हमने आपस के विरोध, फूट, अनाचार करने, और जैन और मुसलमान आदि की पीडा और भ्रम जाल से कुछ २ अलग स्वास्थ्य और स्वतन्त्रता प्राप्त की है कि जिससे मैं वा अन्य सज्जन लोग अपना २ सत्य अभिप्राय युक्त पुस्तक रचने, उपदेश करने और धर्म मे स्वाधीनपन से आनन्द मे प्रवृत्त हो रहे हैं। क्या जो श्रीयुतभारतेश्वरी महाराणी, पारलीमेन्ट सभा और आर्यावर्त देशस्थ राज्याधिकारी धार्मिक विद्वान् और सुशील न होते तो क्या मेरा वा अन्य का मुख प्रफुल्लित होकर व्याख्यान वेदमत प्रचारक पुस्तकों की व्याख्या करनी भी दुर्लभ न होती, और आज तक शरीर भी बचना कठिन न था, इसीलिए पूर्वोक्त महात्माओं को हम लोग धन्यवाद देते हैं। आप लोगों को अवश्य स्मरण होगा कि जो काशी की चिट्ठी के उत्तर मे आप लोगो ने लिखा था कि जो आप भी वेदों को छोड दें तो भी हम लोग कभी न छोड़ेंगे। यह

आप लोगो की वात प्रशसनीय और धन्यवादार्ह है। ऐसे ही सव योरूपियन इस उत्तम वात में मिलें तो क्या ही कहना है और जो कभी न मिलें हम आर्यों और आर्यसमाजों की कदापि हानि नही हो सकती, क्योकि यह वात नवीन नही है। हम लोग जव से सृष्टि और वेद का प्रकाश हुआ है उसी समय से आज पर्यन्त उसी वात को मानते आते हैं। क्या हुआ कि अव थोडे समय से अपनी अज्ञानता और उत्तम उपदेशकों के विना वहुत से आर्य्य वेदोक्त मत से कुछ २ विरुद्ध और वहुत से अनुकूल आचरण भी करते हैं। अव जिसको प्रसन्नता हो अपनी और सव की उन्नति के लिए इस आर्यसमाज में मिलें वा न मिलें। उनके न मिलने से हमारी कुछ हानि नहीं किन्तु उन्ही की हानि है। हम लोगो का तो यही अभीष्ट, यही कामना और यही उत्साह है कि सव की उन्नति मे अपनी उन्नति समझनी। और ऐसे तो कोई भी कह सकता है कि फलाने के सी मेरी सी सम्मति वा वड़ा विचार फलाने का नहीं है। फलाना ईश्वर को कर्त्ता धर्त्ता मानता है इस लिये उससे हम प्रेम क्यो करें। परन्तु यह वात आपकी सुसाइटी का मुख्य उद्देश्य जो सव को वन्धुवत् जानना आप कहते हैं उसको काट देती है। सोच कर देखिये कि हानि के कारण किनकी ओर हैं। हमारा तो ससार का उपकार करना और हानि किसी की न करना मुख्य तात्पर्य है, सो है ही है। यहां हम भी कह सकते हैं कि जो थियोसोफीष्ट आर्यसमाजो से विरोध करेंगे तो हमारी कुछ भी हानि नही किन्तु वे आप ही अपने भ्रातृभाव मुख्य उद्देश्य को नष्ट कर अपनी हानि कर लेंगे। हम तो हमारा स्वभाव जो कि धर्मात्माओ से सुहृद्भाव और अधर्मियों को धर्मात्मा करने में प्रयत्न और वन्धुवत् स्नेह करना है करते हैं और करत रहेंगे जितना कि हम कर सकते हैं (अव अपना पूर्वापर व्यवहार को समझ कर जैसा हित हो वैसा कीजिये) एच् एस् करनेल ओलकाट साहेव आदि को मेरा नमस्ते कह दीजियेगा।

स० १९३७ मि० मा० व० ६ मङ्गलवार।[1] (दयानन्द सरस्वती)

---

[१] [पत्र सूचना] (१९६) [२२३]

ला० श्यामसुन्दर दास मुरादावाद

यह चन्दा किसी की ज़ात ख़ास के वास्ते नही, वा सर्फ रिफा आम के लिए है।

२४ नवम्वर १८८० दयानन्द सरस्वती

---

१ २३ नवम्वर १८८०।

२. मु० इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का सन्यास। जगन्नाथदास कृत पृ० १८।

[३] [पत्र सूचना][1] (१९७) [२२४]

मुंशी इन्द्रमणि जी··· · ·

यह चन्दा का रुपया वैदिक फण्ड (निधि) कहलावेगा। और आर्यों के लिए इस फण्ड मे जमा होता रहेगा।

२९ नवम्वर १८८०

आगरा दयानन्द सरस्वती

---

[१२] पत्र (१९८) [२२५]

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो!

आप का २६ नवम्वर का पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ। आजकल हम आगरा मे हैं और व्याख्यान देते हैं और लगभग एक मास यहां रहने का विचार है।

यह अब स्पष्ट है कि बहुत से पढ़े लिखे लोगो को भी नौकरी नही मिलती, या वे जीवन-निर्वाह का प्रवन्ध नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था देख कर मैं एक कला कौशल के स्कूल की आवश्यकता विचारता हू। प्रत्येक पुरुष को अपनी आय का १००वां भाग प्रस्तावित सस्था को देना चाहिये। उस धन से चाहे तो विद्यार्थी कला कौशल सीखने जर्मनी भेजे जावें या वहां से अध्यापक यहां वुलाए जाय। जो कोई इस फण्ड के व्यय पर इन धन्दो को सीखे, उसे प्रतिज्ञा करनी होगी कि स्वशिक्षा समाप्त करने पर सभा या फण्ड की वह १२ वर्ष तक सेवा करेगा। यह प्रश्न यहां विचारा जा रहा है और जव कोई परिणाम निकलेगा तो हम आप को सूचना देंगे। मैंने एक गुजरांवाला के आत्माराम जैनी के भ्रमों के उत्तर लिखवाये हैं और वहा के आर्य्यसमाज द्वारा उसे भिजवाये हैं। मुझे इन के विषय मे सब कुछ लिखना। कर्नल आल्काट और मेडम ब्लेवस्तकी के पत्र का उत्तर मैंने भेज दिया है। मै आशा करता हू कि आप ने उसे देख लिया है। वह नास्तिकता की ओर झुके हुए दिखाई देते हैं। कदाचित् वह पहले भी ऐसे ही झुके हुए थे, परन्तु दूसरे के मन की कोई क्या कह सकता है?

---

१. रिसाला मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वामी दयानन्द सरस्वती का सन्यास (उर्दू) रचयिता जगन्नाथदास।

मुझे अपने भाइयों और उन के अब के पता का हाल लिखो। अब समय है कि आप ला० श्रीराम को कला कौशल सीखने इङ्गलैण्ड भेज दें।

जर्मनी से पत्र आ रहे हैं। हम सब आनन्द में हैं। सब से हमारा नमस्ते कह दें।[1]

ह० दयानन्द सरस्वती

३० नवम्बर १८८० बाग गिरधारी लाल

आगरा।

---

[४] पत्र (१९९) कार्ड[2] [२२६]

कृपाराम जी आनन्दित रहो!

पत्र तुम्हारा आया हाल विदित हुआ, मुशी वखतावरसिंह के हिसाव की जांच पडताल हो रही है। जालसाजी निकलती है पश्चात् जैसा होगा लिखा जावेगा और अब तुम पुस्तकें नि सदेह मगा लो, और पानो की तशतरी वही रक्खी रहने दो। जव कभी हम आवेंगे देख लिया जावेगा, यहाँ व्याख्यान होता है और हम सव प्रकार से आनन्द में हैं सब सभासदों को नमस्ते।

आगरा
१ ८० १८८० हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

---

[१] रसीद [२२७]

हमने आज मूल्य वेदभाष्य ८) वावत चौथे वर्ष के किशनलाल से वसूल पाए।

आगरा
१ दि० १८८० हस्ताक्षर दयानन्दसरस्वती

---

१ गुजरावाला को भेजा गया। वैदिक मेगज़ीन सन् १९०८ से अनुवादित किया गया।

२ मूलकार्ड प० कृपाराम जी के भाई के पोते प० मित्रानन्द जी फोटोग्राफर ओल्ड कैन्टोनमैण्ट रोड देहरादून के पास हैं। ता० २७।१२।३२ को म मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की।

३ मूल रसीद मथुरावासी, श्री किशनलाल नागर के पुत्र श्री काशीलाल (प्रसिद्ध मोहन लाल) नागर के पास है।

[४] पत्र सूचना [२००] [२२८]

मु० इन्द्रमणि[1]

६ दिसम्बर दयानन्द सरस्वती

---

[५] नं १० पत्र (२०१) [२२९]

मन्त्री आर्य्यसमाज आनन्दित रहो।

प्रकट हो कि पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ । आज गुजरांवाला से अभी लाला मूलराज एम. ए की चिट्ठी आई है। सो वहां कुछ प्रसिद्ध नही। और मित्र विलास तो विरोधी हैं। वह सदैव इसी प्रकार लिखता रहता है । जो वह कुछ प्रतिष्ठित होता तो लाहौर आर्य्यसमाज ही उसका सहायक होता। सो तुम कुछ शका न करो । और·· ····· ···तो अत्यन्त ही दुष्ट है। जो तुमको कुछ उनके विषय मे लिखना हो तो आर्य्यसमाज गुजरावाले से दर्य्याफ्त करलो। और हम सब प्रकार से आनन्द मे हैं। सभासदो को नमस्ते।[2]

आगरा हस्ताक्षर

८ दि० १८८० (दयानन्द सरस्वती)

---

[१३] पत्र (२०२) [२३०]

लाला मूलराज जी एम. ए आनन्दित रहो।

आप का ६ दिसम्बर का पत्र मिला, समाचार विदित हुआ। हम आप को मेडम ब्लवत्सकी का पत्र अपने उत्तर सहित भेजते हैं। उस मे जो कुछ परिवर्तन करें, उस की हमें पहले सूचना दे दें।

आप उसे मुम्बई आर्य्यसमाज द्वारा पत्र भेज दें। कृपया देखने के पश्चात् मेडम ब्लवत्स्की का पत्र हमे लौटा दें। आज कल आत्माराम कहा है? जैनो के उत्तर मे जो पत्र हम ने लिखे थे वे अवश्य समाज के कार्यालय में होंगे। अच्छा

---

१. मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का सन्यास पृ० १८।

२ मन्त्री आर्यसमाज फर्रूखाबाद को लिखा गया। मूलपत्र आर्यसमाज फर्रूखाबाद में सुरक्षित है। फर्रूखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० १८६ पर भी छपा है।

होगा यदि आप उन सब को किसी समाचार पत्र में प्रकाशित करवा दें। अब हम उस समाज द्वारा जैनों को कुछ प्रश्न करना चाहते हैं। आप अच्छा हो जो उस समाज से पूछ लें और हमें सूचना दें। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि कला कौशल सिखाने का स्कूल कहां है ?

यहां नगर के बाहर गोकुलपुर में एक छोटा सा समाज स्थापन किया गया है। सब को नमस्ते।[1]

८ दिसम्बर १८८०

[ह० दयानन्द सरस्वती]
आगरा।

---

[१] उर्दू पत्र (२०३) [२३१]

लाला शादीराम जी आनन्दित रहो।

वाजे हो कि खत तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। जो नोटिस सन्धि विषय पर छपेगा सो आपके पास रवाना करते हैं सो छाप देना। और पण्डित काशी नारायण साहिब मुनसिफ से आगरे चौथे वर्ष तक के २०॥) हमारे पास आये सो टाइटल पेज वेदभाष्य पर छाप देना। और एक खत लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले मुरादाबाद का आया। वे लिखते हैं कि उनके पास अब की मरतबा एक ही वेदभाष्य पहुंचा। और वे पांच अक हर एक वेद के लिया करते हैं और कीमत पेशगी दाखिल कर चुके हैं। सो इसका क्या सबब है। और ५० वेद भाष्य राजा जयकिशन दास तो लेते ही हैं मगर उनका लडका कुवर ज्वालाप्रसाद भी बरपता मुरादाबाद एक २ अक दोनो वेदभाष्य का लेते हैं सो लिखो कि उनके नाम भी रवाना कर दिया या नही। और भूमिका वगैरा जुमला कुतुब फरोक्त दस दस यजुर्वेदभाष्य के रवाना करदो और हिसाब व किताब भी जाच पडताल करके जल्दी जहातक मुमकिन हो बखतावर सिंह जी की जाल साजी जाहिर करो और कीमत सन्धि विषय की ।।) रखो और हमेशा खत को तोलकर टिकट लगाया करो, स्वामी दयानन्द सरस्वती।

दयानन्द सरस्वती
आगरा १० दिसम्बर १८८०[2]

---

१ गुजरावाला को लिखा गया। वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरावाला अक्तूबर-दिसम्बर १९०८, अक १०; ११, १२ पृ० २५३ से अनुवादित।

२. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर के पास सुरक्षित है।

[१] पत्र (२०४) [२३२]

ओ३म

प० गणेश प्रसाद जी आनन्दित रहो[1]

तुम से जो साथ रहने के विषय मे बात चीत हुई थी जिसका उत्तर विचार के देना कहा था सो क्या निश्चय किया। तुम्हारी शीघ्र और सुप्रचार लेख शैली से भाषा सम्बन्धी कार्य मे सुगमता रहेगी। तुम्हारा सस्कृत बोध जो अधूरा लघु-कौमुदी मात्र का है मेरे साथ मे अच्छा हो जायगा। और व्याख्यान देने की शैली भी आजायगी। योग्यता बढ़ने पर वेदभाष्य के प्रूफ को शोधन भी करना होगा। तब मासिक वेतन मे वृद्धि की जायगी। इसका उत्तर मत्री जी के पत्र में लिख भेजना।

१० दिसम्बर १८८० ई० आगरा[1] हस्ताक्षर

(दयानन्द सरस्वती)

---

[२] पत्र (२०५) [२३३]

ओ३म्

पं० गणेश प्रसाद जी आनन्दित रहो

कल एक पत्र भेजा था पाया होगा। उसमे इतना और विशेष जानना कि जो तुम हिसाब का काम रुपये पैसे रखना आदि और करोगे तो २०) मुद्रा मासिक मिलेगा। सो तुम्हारे पिता जी लाला निर्भय राम की दूकान से प्रति मास ले लिया करेंगे। हम तुम्हारे शील स्वभाव से प्रसन्न है। देशी भाषा की परीक्षा पास कर चुके हो काम ठीक कर लोगे।[2]

११ दिसम्बर ८० (दयानन्द सरस्वती)

---

१ मूल पत्र प० गणेशप्रसाद जी के पास फरुखाबाद में सुरक्षित था। म० मामराज जी ने फरवरी १९२७ में प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है।

२. मूल पत्र प० गणेशप्रसाद के पास फरुखाबाद में सुरक्षित था। म० मामराज जी ने फरवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है।

[१] पत्र (२०६) [२३४]

मास्टर दयाराम जी आनन्दित रहो !

विदित हो कि आपका पत्र आया हाल मालूम हुआ। आपने जो नकशा मर्दुम शुमारी का लिखा सो उसकी खाना पुरी इस प्रकार करो।

मजहव फिरके मजहवी	वैदिक
असल कौम	आर्य्य
जात या फिर्का	ब्राह्मण वा क्षत्रिय वैश्य शूद्र
गोत्र या शाख	जो अपना गोत्र है

और जिसको अपना गोत्र याद न हो वह अपना काश्यप गोत्र या पाराशर लिखा दे। और यह सब समाजों में तथा पजाव भर में इसी प्रकार से लिख भेजें। और हम यहां सव प्रकार से आनन्द मे हैं।[1]

आगरा ३१ दि० स० १८८० हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (२०७) [२३५]

द्वारकादास जी आनन्दित रहो !

पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। पुस्तको का सूचीपत्र लिखते हैं। जो चाहे दाम भेज कर मगालो ॥

ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका	५)
सत्यार्थ प्रकाश	२॥)
सस्कार विधि	१॥=)
सन्ध्या	।)
वेदांतिध्वातनिवारण	=)
सत्य धर्म्म विचार	=)
सत्यासत्य विवेक	।)
वर्णोच्चारण शिक्षा	।)

---

१ मूल पत्र की प्रतिलिपि फरुखावाद में सुरक्षित थी। वहीं से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इसकी प्रतिलिपि की। यह पत्र फरुखावाद का इतिहास पृ० १८७ पर भी छपा है उस में इतना लेख अधिक है—"इसकी नकल सब समाजों में स्वामी जी की आज्ञानुसार भेजी जाती है। दयाराम वर्मा मन्त्री आर्यसमाज मुलतान ८ जनवरी सन् ८१ ई०।"

व्यवहार भानु	...	...	...	।)'
संस्कृत वाक्य प्रबोध	...	...	.	।―)
आर्योद्देश्य रत्नमाला	...	...	...	―)॥

तथा ऋ० वेद और यजुर्वेद का भाष्य होता है। सो उस का मूल्य जो अब तक छपा और २९ अंक तक छपेगा २०॥) और आगे को दोनों वेदों का ८) साल है।[1]

आगरा
३१ दि० १८८०

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[९] पत्र (२०८) [२३६]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

तुम्हारे लिखने के अनुसार काशी को पत्र हमने भेज दिआ है। और जो लिखने की योग्यता थी सो सब लिख दिया। वहां के हिसाब के जो पत्र थे सो जा चुके हैं। और जो मेरठ मे लाला रामशरण दास के पास होंगे सो पहुच जायेंगे। मेरठ को भी पत्र लिख दिआ है।

३५) रुपैये माहवारी खरच मे ५)भीमसेन ३०) रुपैये मे मुशी का बदोबस्त है। अब हम चाहते हैं कि खजांची कोई अच्छा मातवर रहे। थोड़ा भी पढ़ा हो तो चिंता नही है। और चिट्ठी लिखने मात्र को कुछ दामो से मुन्शी रख दिया जाय, वह चिट्ठी लिख जाया करे।

अथवा तोता राम वहां का काम चलाने योग्य हो तो वह सब हिसाब और कारीगरो से काम लिया करे। भीमसेन खजांची रहे। भीमसेन निष्कपट है, हम अच्छी तरह जानते हैं। और चिट्ठी किसी से लिखवा दिया करें। नागरी पत्र ये दोनो लिखते ही हैं। अथवा तुम अच्छा विचार कर जो कहो सो किया जाय। परन्तु तोता राम को अच्छा चिताइ देना चाहिये कि जब तक मुशी न आवे कुछ और विशेष प्रबन्ध न हो ले तब तक होशआरी के साथ काम सम्हाले। आगे आप

---

१ यह कार्ड ता० १८ अप्रैल सन् १९२७ को म० मामराज जी ने ला० द्वारकादास जी (आयु ७५ वर्ष) से इटावा जाकर प्राप्त किया था। कार्ड उन्हें वापिस भेज दिया गया था। उक्त ला० जी ने ऋषि द० स० के लगभग ३० व्याख्यान आगरे में सुने थे। उनको यह कार्ड ऋषि ने एतमादपुर भेजा था। ला० द्वारकादास जी उस समय वहीं रहते थे।

लोग जैसा विचार कर बन्दोबस्त करेंगे सो होगा। इस पत्र का जवाब विचार पूर्वक हमारे पास जहां तक हो सके जल्दी भेजना चाहिये।

छापा खाने का प्रवन्ध अच्छा करना वहुत अवश्य होरहा है।[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[३] पत्र (२०९) [२३७]

१

लाला काली चरण, राम चरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हमने अब यहां सब असिल कागज और रजिस्टर "वख़तावरसिंह" के दस्तख़ती काशी से मगा कर देखे, उनमें वहुत कुछ फर्क है। और सब लेख धोखे का है। यह भली प्रकार से सावित होता है,। इस लिये तुम को लिखते हैं कि यहा आकर आप भी देखें। और "वख़तावरसिंह" को भी बुला लें। और एक रजिष्टरी चिट्ठी वख़तावरसिंह के पास भेज दो कि इस चिट्ठी के देखते ही आगरे में स्वामी जी के पास आकर हिसाव समझा दो। और हम भी वही होंगे। और ~) रजिष्टरी मे अधिक देवें कि उसके हस्ताक्षर भी आ जावें॥ और आप को यहां अवश्य आना उचित है। और जिस दिन आप आवें उससे पहिले हमको लिख भेजें कि हम फलाने दिन आवेंगे॥

हमने आपको पहिले लिखा था कि १००) पडितों की वाव्रत के हमारे पास भेज दो। सो अब तक नही पहुंचे। इसका क्या कारण है। और हमने नारायणदास मुखतार से कहा था। कि एक मोतविर खजानची काशी में रखवादो और उसकी जमानत भी ले लो। इसका भी हाल लिखो॥ सब सभासदो को नमस्ते॥

आगरा

वेलनगज लाला गिरिधरलाल वकील का वागीचा

१० जन० १८८१।

हस्ताक्षर

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। उस की प्रतिलिपि म० मामराज जी ने सन् १९२७ में की। यह पत्र फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृ० २१४ पर भी छपा है। वहा पाठ की कुछ अशुद्धिया हैं। पत्र में तिथि नहीं है। हमने इसे प्रकरण देख कर यहा रखा है।

२ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है। उसकी प्रतिलिपि सन् १९२७ में म. मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ. १८८ पर भी छपा है। वहा कई पाठ त्रुटित हैं।

[१४] पत्र (२१०) [२३८]

लाला मूलराजजी एम ए आनन्दित रहो [1]

आप को लिखा जाता है कि जब बाबू शिवदयाल जी यहाँ थे, तो उन्होने पण्डित बिहारीलाल को हमारे यन्त्रालय मे काम करने को भेजने और श्रीराम को विलायत भेजने की हम से प्रतिज्ञा की थी। क्या आप हमे लिखेंगे कि इस विषय मे अन्तिम निर्णय क्या हुआ है ? यहां एक गोरक्षिणी सभा स्थापन की गई है और इसके नियमोपनियम भी बना दिये गये है, जब छपेंगे तो आपको सूचना के लिये भेज देंगे। आज इसी विषय पर एक और सभा की जायगी।

मुन्शी बखतावरसिंह ने यन्त्रालय की बड़ी हानि की है। आज कल हम यन्त्रालय के हिसाब की जाच कर रहे हैं। जो आगे होगा सो लिखूगा। सब से मेरा नमस्ते कहना।

१२ जनवरी १८८१ ह० दयानन्द सरस्वती

आगरा।

---

[१] पत्र (२११) [२३९]

पंडित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो। [2]

विदित हो कि तुम ने जो यजुर्वेद अष्टमाध्याय के पत्र भेजे सो पहुंचे। परन्तु वे किसी काम के नही। क्यो, उनमे भाषा बहुत काट फाँट रक्खी है। और तुम्हारे सकेत है। यह उत्तर तो सहज है कि अवकाश नही मिला। और नामिक जैसा है वैसा शुद्ध और दिव्य छपवाओ। सन्धिविषय की तरह अशुद्ध [3] न होने पावे। अब हम ने सन्धिविषय का शुद्धिपत्रमात्र देखा तो विदित हुआ कि जो कम विद्या वाला भी ध्यान देकर शोधे तो भी ऐसी अशुद्धि कभी न रह सके। अब हम यह उपदेश करते हैं। तुम लोगो को इसका गुण मानना उचित है न कि चिड़ जाना। भीमसेन ने जो कि ४० पृष्ठ सधिविषय के शोध कर छपवाए

---

१ यह पत्र वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरावाला सन् १९०८ अंग्रेजी से अनुवादित है।

२ दयानन्द ग्रन्थमाला, शताब्दी सस्करण, प्रथमावृत्ति, सवत् १९८१, सन् १९२५, पृ० १६, १७ पर खण्डश मुद्रित। सम्पूर्ण पत्र Works of Maharshi Dayanand by Sri Harbilas Sarda, Ajmer 1942, पृ० १२७ पर मुद्रित। हम ने दोनों की तुलना करके तथा मूलपत्र की एक नई प्रतिलिपि से मिला कर सारा पत्र छापा है।

३ शताब्दी सं० में यह शब्द नहीं है।

हैं उसमें अशुद्धि कम है। और इन अशुद्धियों में भी संस्कृत की अशुद्धि बहुत ही कम हैं। देखो तुम्हारे शुद्धिपत्र के अनुसार ४० पृष्ठो मे ५१ अशुद्धि हैं। और तुम ने शुद्ध का अशुद्ध किया। और तुम्हारे २४ पृष्ठ में ५९ अशुद्धियां हैं। और इन अशुद्धियो में भाषा की कम और संस्कृत की अधिक हैं। और जब हम सन्धि विषय का पाठ करें [गे][1] तब तुम्हारी और भी० से० की न जाने कितनी निकलेंगी। अब ऐसा हुआ सो हुआ परन्तु आगे कभी ऐसा न करो। आगे से हम सब पुस्तक देखा करेंगे और अपना लिखाया और तुम्हारा शोधा पुस्तक भी मगा लिया करेंगे। और आज से हम वेदभाष्य भी देखेंगे कि कितनी अशुद्धि हैं। बड़े आश्चर्य की बात है कि जब लाज़रस और मुम्बई से छपता था, कभी ऐसी अशुद्धि न होती थी जैसे कि अब घर के छापेखाने में होती हैं। जो ऐसी अशुद्धि हुआ करेंगी, तो सब पुस्तक में अशुद्धिपत्र ही भरा करेंगे। और छपवाने वालो और प्रेस की भी बदनामी होगी। जो छप गया सो खैर परन्तु आगे कभी ऐसा न होगा।

आगरा[2]
१७ जन० १८८१ दयानन्द सरस्वती

---

[४] पत्र (२१२) [२४०]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि आपने जो पण्डितों के खर्च मे १००) की हुंडी भेजी सो पहुंची। आप खातिर जमा रक्खें॥[3]

हस्ताक्षर
आगरा १८ जन० १८८१ दयानन्द सरस्वती

---

१ Works of M Dayanand में (देखेंगे) पाठ है।

२ इस पत्र का उत्तर प० ज्वालादत्त ने १९ ज० १८८१ को दिया। देखो म० मुंशीराम-कृत पत्र व्यवहार पृ० ४०५-४०८। शताब्दी संस्करण और Works में इसकी तिथि १७ जून दी है। यह बात ठीक नहीं। चाहिए १७ जनवरी। मूल में १७ जन० ही होगा। श्री हरविलासजी के नकल करने वाले ने उसे जून बनाने में भूल की है। मूलपत्र उन्हीं के पास हैं।

३ मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। वहीं से म० मामराज जी ने फरवरी सन १९२७ में इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८८ पर भी छपा है।

[२] नं० १० उर्दूपत्र (२१३) [२४१]

मुशी नारायण किशन जीव आनन्द रहो।

वाजे हो कि तुम्हारा खत आया हाल मालूम हुआ । एक चिट्ठी वखत नागरी बनाम आत्मा राम आपके पास रवाना की जाती है। सो आप उनको दे दीजिये । और जो अब वे वहां न हो तो जहां वे गये हो पहुंचा दीजिये । और रसीद से मतलअ कीजिये । और लाला मूलराज जीव से कह दीजिये कि मुशी वखतावरसिंह के सब कागजात देखे गए। उनसे बखूबी उस का फरेब ज़ाहिर हुआ। और जाए गौर है कि सिर्फ कागज ही मे से उसने १७० का गबन किया। और रकम इलावा रही। और उस के पास ठाकुर मुकन्दसिंह के भेजे दो खत रवाना कराये कि जल्दी आकर हिसाब समझा दो। मगर वह नही आया। क्योंकि उसने काम नही किया जो रोबरू आने के लायक रहा हो। अब हमने भी एक खत रजिस्टरी उसके पास [रवाना] किया है कि एक हफता के अन्दर आकर हिसाब समझा दो सो अगर वह आगया तो ठीक है वरना यह मुआमला वज़रिआ अदालत ही तय होगा। इस लिये लाला मूलराज जी को भी लाज़िम है कि ठाकुर मुकन्दसिंह के (को)ज़ाबिता की कारखाई करने के लिये एक खत रवाना कर दें। और जो चिट्ठी आत्मा राम के नाम नत्थी खत हज़ा है उसकी नकल रखलो और छपवा दो। और वहां लाला शिवदयाल जीव पहुँचे या नही। और आपके खत से ठाकुर दास के अफआल मालूम हुए।[1]

आगरा २१ जनवरी सन् १८८१ | स्वामी दयानन्द सरस्वती
दयानन्द सरस्वती

---

[३] पत्र (२१४) [२४२]

आनन्दविजय आत्मा राम जी (नमस्ते)।

आप का पत्र ८ माघ का लिखा हुआ मेरे पास पहुंचा। उस मे लिखित वृत्त विदित हुआ। मेरे प्रश्नो के उत्तर मे जो आप ने लिखा कि "बौद्ध और जैन को एकही मत के नाम मानने से हमारी कुछ मानहानि नही" इसको पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यही सज्जनो का काम है कि सत्य को माने और असत्य को न मानें, परन्तु यह बात जो आप ने लिखी है कि "योगाचार आदि चार सम्प्रदाय जैन बौद्ध मत

---

१ मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। मुशी नारायण किशन आर्यसमाज गुजरांवाला के मन्त्री थे।

के हैं सो वह वौद्ध मत जैन मत से एक पृथक् शाख का है।" इसका उत्तर मैं आपके पास भेज चुका हूं कि मत मे शाखा प्रशाखा का भेद थोडी वातें पृथक् होने से होता है, परन्तु मत के-रूप मे शाखायें एक ही मत की होती हैं देखिये कि उनही नास्तिकों मे चारवाक आदि नास्तिक हैं और जो आप उनका इतिहास और जीवन चरित्र पूछते हैं सो इसका उत्तर भी मैं दे चुका हू अर्थात् इतिहास तिमिर नाशक के तीसरे अध्याय में देख लीजिये।

और आप जिन वौद्धो को अपने मत से पृथक् कहते हैं, वे आप के सम्प्रदाय से चाहे पृथक् हो परन्तु मत के रूप से कदापि पृथक् नहीं हो सकते, जैसे कई जैनी उदाहरणतया श्वेताम्वर दूसरे जैनो उदाहरणतया समवेगी साधुओं पर आक्षेप करके उन्हे पृथक् और नया मानते हैं। यह स्पष्ट हुवेक? नामक पुस्तक में लिखा है इत्यादि आप लोगो ने उन पर वहुत से आक्षेप करके उनके मत मे सम्यक्त्व निर्णय पुस्तक लिखी है, तो भी इस से वे और आप वौद्ध या जैन मत से पृथक् नहीं हो सकने और न कोई विद्वान् उनके मत के सिद्धान्तों के आधर पर उन्हें पृथक् मान सकता है, उनके सिद्धान्तो मे भेद तो अवश्य होगा।

आप के इस वचन से कि "इस में क्या आश्चर्य है कि महावीर तीर्थङ्कर के समय में चारवाक मत था और उन से पीछे नही हुआ" इस से मुझको आश्चर्य हुआ, क्या जो महावीर तीर्थङ्कर से पहले २३ तीर्थङ्कर हुए उन सव से पहले चारवाक मत को आप सिद्ध नही कर सकते। यदि किसी प्रकार का कथन का स्थान आप के लिये हो तो आप पर प्रश्न हो सकता है कि ऋषभ देव भी चारवाक मत से चले हैं फिर आप इसके उत्तर मे क्या कह सकते हैं। क्या चारवाक १५ प्रकार में से एक प्रकार का भी नहीं है और उसमें एक सिद्ध और मुक्त नही हुआ ? क्या वे आपके सिद्धान्तों और पुस्तकों से पृथक् हो सकते हैं ?

इसके अतिरिक्त आप ने भी अपने लेख में वुद्ध मत को अपने मतमें स्वीकार कर लिया है क्योंकि करकण्डा आदि को आप ने बौद्ध माना है और मैंने भी अपने पहले पत्र मे जैन और वौद्ध के एक मत होने का लिखित प्रमाण दे दिया है फिर आप का दूसरी वार पूछना व्यर्थ और निष्प्रयोजन है। जहा स्वय वादीके साक्षीसे मुकद्दमा सिद्ध हो जाए तो फिर हाकिम को अन्य पुरुषों की साक्षी लेने की आवश्यकता नहीं होती। भला जिसकी कई पीढ़िया जैन मत मे चली आई हो अर्थात् राजा शिवप्रसाद की साक्षी को और आज कल जो यूरोपियन लोग वडे परिश्रम से इतिहास वनाते हैं उनकी साक्षी आप अशुद्ध कह सकते हैं जिन्होने अपने इतिहासों में वौद्ध और

जैन को एक ही लिखा है और यह भी लिखा है कि कुछ बातें आर्यों की और कुछ बौद्धों की लेकर जैन मत बना है।

प्रश्न २ के उत्तर मे जो आप ने लिखा है वह नमुचि नास्तिक जैन मत का द्वेषी साधुओं को निकालने और कष्ट देने वाला था और उसको मार कर सातवें नरक मे भेजा गया। यह लेख आपने सत्यार्थप्रकाश के लेखके उत्तर मे नही समझा। विचार कीजिये कि वह नमुचि जैन मत का शत्रु था इस लिए मारा गया। तो क्या उसने जान बूझ कर पाप नही किया था। कितने शोक की बात है कि आप सीधी बात को भी उल्टा समझ गए।

प्रश्न ३ के उत्तर मे जो आपने प्राकृत भाषा का एक श्लोक लिखा है, परन्तु उसके अर्थ स्वय नही लिखे केवल मुझ पर उसका समझना छोड दिया। इसका यह अभिप्राय होगा कि मै उसके अर्थ और तात्पर्य तक नही पहुंच सकूगा, हां मै कुछ सब देशों की भाषा नही जानता हू केवल कुछ देशो की भाषा और सस्कृत जानता हूं, परन्तु मत मतान्तरो की शाखा प्रशाखा और सम्प्रदायो के सिद्धान्तों को अपनी विद्या और बुद्धि और विद्वानो के सग के प्रभाव से जानता हूँ। आप और आप लोगो के आचार्यों ने ऐसी अपभ्रश भाषा, अपनी भाषा बना ली है, जैसे धर्म के स्थान पर धम्म इत्यादि, जैसे जिन का मत युक्ति और प्रमाणो से सिद्ध नहीं हो सकता है वे ऐसे २ अप्रसिद्ध शब्द बना लेते हैं, ताकि कोई दूसरा ठीक प्रकार से समझ न सके, जैसे मद्य का नाम तीर्थ, मांस का नाम पुष्प आदि बना लिया है ताकि उनके सिवाय कोई दूसरा न जान ले। जो राजा लोग न्यायप्रिय होते हैं वे तो मार्ग ऐसे सीधे बना लेने हैं कि अन्धा भी प्राप्य स्थान को पहुंच जाए, परन्तु उनके विरोधी मार्गों को इस प्रकार से बिगाड़ते हैं कि कोई परिश्रम और कष्ट से भी चल न सके। आप रत्नसार भाग नामक पुस्तक को प्रामाणिक नही समझते तो क्या हुआ बहुत से श्रावक और जैन लोग उसको सच्चा मानते हैं।

देखिये आप ऐसे विद्वान् होकर मूर्ख को मूर्ष लिखते हैं और पत्र मे लिखे शब्दो को शुद्ध करने मे बहुत सी हडताल भी लपेटते है। कितने शोक की बात है कि सस्कृत तो दूर रही, देसी भाषा भी आप लोग नही जानते, परन्तु इस लेख के स्थान मे यह लिखना उचित था कि आप की भूल का कुछ नही क्योकि मनुष्य प्रायः भूल किया ही करता है।

प्रश्न ४ के उत्तर मे जो कुछ आप ने लिखा है वह बहुत आश्चर्य मे डालने वाला है विद्या की प्राप्ति की इच्छा मनुष्य वहां प्रकट कर सकता है जहां अपने से अधिक किसी विद्वान् को देखता है। मैंने भी उन्ही विद्वानो और आचार्यों से विद्या

प्राप्तकी है जो मुझसे अधिक बुद्धिमान् और विद्वान् थे आपभी शायद इसको स्वीकार करते होगे। क्या आप लोग दूसरे मत के विद्वानों को गुरु न समझ कर शिष्य के विचार से और मुक्ति के फल का ध्यान न रख कर किसी विरुद्ध अभिप्राय की प्राप्ति की इच्छा से दान करते हो और क्या यह बातें अविद्वानो की नही है कि अपने मत और उस के साधुओ की बडाई का ध्यान रखना और अन्य मत के विद्वानो के विषय मे इसके विरुद्ध। यह अच्छे लोगो की बातें नही हैं। वस्तुत मनुष्यमात्र मे से अच्छे को अच्छा और बुरे को बुरा मानना जिज्ञासुओं और धर्मात्माओ और महात्माओ का काम है और उसको ही हम मानते हैं और उचित है कि आप भी उस को स्वीकार करें। मेरे लेखका यथार्थ अभिप्राय आप उस समय समझेंगे जब कि मैं और आप सन्मुख होगे। मेरी पुस्तक सत्यार्थप्रकाशके लेखसे कोई मनुष्य यह अभि-प्राय नही निकाल सकता कि जैन मतके लोगो को चिरकाल तक पीडा देना और दान न देना और जैन मत बेईमानी का मूल है, अपितु यह सिद्ध है कि "अच्छे और ईमानदार लोगो और अनाथों की सहायता करना और बुरे लोगो को समझाना।"

परन्तु यह छ निषेधो का कलक आप को ऐसा लिपट गया है कि जब ईश्वर की दया हो और आप लोग पक्षपात को छोड कर यत्न करें तब धोया जा सकता है अन्यथा सर्वथा नही। भला जब यह स्पष्ट लिखा है कि अन्य मत की प्रशसा न करना और अन्यो को भोजन और जल न देना तो फिर आप इसको अशुद्ध क्योकर कर सकते हैं। यह बातें आप के सहस्रो ग्रन्थो मे लिखी हुई हैं और आप लोग इसको समझ लें कि मुझे ऐसा स्वप्न मे नही आया है, हा जो आप लोग कुछ भी विचार कर देखें तो उन का छोड़ देना ही धर्म है आगे आप की इच्छा।

पांचवे प्रश्न का उत्तर, उसके विषय में जो आपने लिखा है उस से मेरे उत्तर का खण्डन नहीं हो सकता क्योंकि जब बालो के नोचने का प्रमाण आप की पुस्तको मे लिखा है और मैं ने उस के प्रमाण से सिद्ध कर दिया फिर भला कही युक्ति का आश्रय लेने से उस बात से नकार हो सकता है? सर्वथा नही।

छठे प्रश्न के उत्तर मे, जब मै यह सिद्ध कर चुका हू कि जैन और बौद्ध जिस मत का नाम है उस की शाखा चारवाक आदि हैं फिर यह कैसे अशुद्ध हो सकता है।

जो आप जैन लोगो के ग्रन्थों मे हमारे मत के विषय में लिखा है और जिस का हमारी धार्मिक पुस्तको मे कही उल्लेख नही, इस से हमरी धार्मिक मानहानि होती है। इस लिये आप जैन लोगो से पूछा जाता है कि लौटती डाक शीघ्र उत्तर दें कि वे बातें हमारी किन धार्मिक पुस्तको में लिखी हैं। ध्यान रहे कि

जिस भाष्य और ठीक २ पता दें, उन के साथ पृष्ठ और पंक्ति आदि के प्रमाण से जैसा मैंने आप के प्रश्नो का उत्तर दिया है उसी प्रकार से आप भी उत्तर दें, नहीं तो आप सज्जनो की बहुत हानि होगी। इस विषय को आप केवल साधारण दृष्टि से न देखें परन्तु एक प्रकार का पूरा ध्यान रखें ताकि यह लम्बा न हो जाए उत्तर देने मे शीघ्रता करें तो अच्छा है।

जैनों के विवेकसार ग्रन्थ के लेख पर कुछ आक्षेप—

आक्षेप १—विवेकसार पृष्ठ १० पंक्ति १ मे लिखा है कि श्रीकृष्ण तीसरे नरक को गया।

आक्षेप २—विवेकसार पृ० ४० प० ८ से १० तक लिखा है कि हरिहर, ब्रह्मा, महादेव, रामकृष्ण आदि कामी, क्रोधी, अज्ञानी, स्त्रियो के दूषी, पाषाण की नौका के समान आप डूबते और सब को डुबाने वाले हैं।

आक्षेप ३—विवेकसार पृ० २२४ प० ९ से पृ० २२५ प० १५ तक लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु, महादेव आदि सब अदेवता और अपूज्य।

आक्षेप ४—विवेकसार पृ० ५५ पं० १२ मे लिखा है कि गङ्गा आदि तीर्थों और काशी आदि क्षेत्रों से कुछ परमार्थ सिद्ध नही होता।

आक्षेप ५—विवेकसार पृ० १३८ प० ३० मे लिखा है कि जैन का साधु भ्रष्ट भी हो तो भी अन्य मत के साधुओं से उत्तम है।

आक्षेप ६—विवेकसार पृ० १ पं० १ से ले कर लिखा है कि जैनो में बौद्ध आदि शाखाएं है। इस से सिद्ध हुआ कि जैनके अन्तर्गत बौद्ध आदि सब शाखायें हैं।

मिति माघ वदी ६ शुक्रवार स० १९३७ ।[1]

हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती

आगरा तारीख २१ जनवरी सन् १८८१

---

[२] उर्दू पत्र (२१९) [२४३]

लाला शादीराम जी—आनन्दित रहो

वाजे हो कि आज तुम्हारे पास ऋग्वेद के वरक १२३० सफे से १५२१ तक यानि ८६ सूक्त के ६ मंत्र से १११ मत्र तक रवाने करते हैं, रसीद रवाने कर देना

१ दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खण्ड पृ० ५२ से ५४ तक सक्षिप्त रूप से, तथा आर्य समाचार (उर्दू) मेरठ मिति माघ सवत् १९३७ विक्रमी पृ० ३२९ से ३३१ तक उद्धृत है। प० लेखरामकृत जीवन च० पृ० ६९५-६९८ तक भी छपा है।

और ज्वालादत्त ने जो लघु कौमुदी खरीदी है वह हमारे काम की नहीं उसको अखतियार है कि वह चाहे अपने खर्च मे रखे चाहे फरोख्त करे। हमारी सिद्धान्त कौमुदी मौजूद है। आज तुम्हारा वेदभाष्य पहुंचा, मालूम हुआ कि तुम्हारे पास रुपया वहुत कम आया है। अव तकाजा करके खरीदारों से रुपया वसूल करो और सब तरह आनन्द है।

आगरा ३ फरवरी ८०।[1]

३–२–८० दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (२१६) [२४४]

पण्डित सुन्दर लाल जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार विदित हुआ। जो प्रतिमास में २० फारम वेदभाष्य के और १२ फारम वेदांग प्रकाशादि के छपें तो कुछ चिन्ता नहीं। परन्तु इतने से कम न छपना चाहिये। जो · · के मन्त्री ने छापा खाना · · में होने के विषय मे लिखा है यह विलकुल वेसमझ की वात है। क्योंकि प्रथम तो जगह २ छापेखाने के होने में व्यर्थ हजारों रुपये खर्च होते हैं। और छापेखाने की प्रसिद्धि होने में भी वहुत काल लग जाता है। प्रवन्ध भी विगड़ जाता है। और भी वहुत प्रकार की हानि हो जाती है। इस से छापाखाना प्रयाग ही मे रहेगा। · में तो इस भाषा के जानने वाले कपोजीटरो का भी मिलना दुर्लभ है। जो वह हमको लिखेगा तो हम उसको उत्तर दे देंगे। यह उसका लिखना विलकुल व्यर्थ है।

· · · · · · · · ·

तुम और वावू विश्वेश्वर सिंह छापेखाने की तरफ दृष्टि रक्खोगे और भीमसेन को चेतन कर दोगे। मिति फाल्गुन वदी ३ सोमवार सवत् १९३८।[2]

(ह० दयानन्द सरस्वती)[3]

---

१ सन् ८० नहीं १८८१ चाहिए। मूलपत्र परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित है।

२ ६ फरवरी सन् १८८१।

३. इसकी छपी हुई प्रतिलिपि फरुखावाद आर्यसमाज में थी। उसी से म० मामराज जी ने सन १९२७ में इसकी प्रतिलिपि की।

[३] उर्दू पत्र। (२१७) [२४५]

❀ ओ३म् ❀

लाला शादीरामजी आनन्दित रहो—

वाजह हो कि खत तुम्हारा आया। हाल मालूम हुआ। और तुमने जो टिकट १०॥) के और तीन फर्मे नामिक के भेजे सो पहुंचे खातिरजमा रक्खो। हमने इस माह का ऋग्वेद का भी अङ्क देखा। उसमे भी गलती वरआमद होती हैं। मगर हां फर्मे अखीर मे वेशक गलतियां कम है। अगर इसी तरह ज्वालादत्त खयाल करेगा और काम मे दिल लगावेगा तो आइन्दह गलती विलकुल न रहेगी। उसको ताकीद कर दो कि प्रूफ को चार पांच दफे देखा करे, और एक मात्रा की भी गलती न रहा करे, तव छापने का हुक्म दिया करे। प्रूफ हमारे ग्रन्थ माफिक दुरुस्त हो जाना चाहिए। अगर वह जियादह शुद्ध न करे तो अशुद्ध भी न करना चाहिए। उसकी नजर शोधन मे वहुत मोटी है। देखो, नामिक के नोट मे "छन्दस्युभयथा" ऐसा लिखना चाहिये था कि उसने वजाय इसके "छन्दस्युथा" छपवा दिया है। ऐसा गाफिल होना उसको लाजिम नही। अगर वह कहे और पसद करे कि मै भाषा नही वना सकता सिर्फ शोधा करूंगा तो हमको कवूल है। हम भाषा का वनाना उस पर से मौकूफ कर देंगे, और सिर्फ शोधने ही पर रख लेंगे। और जो तनख्वाह भीमसेन को देते थे यानी ५) उसको भी, वल्कि दो जियादह यानी ७) माहवारी देवेंगे, क्योकि हम खूव जानते हैं कि वह वजुज लिखने और श्लोक वनाने के और कुछ नही कर सकता। वस अव उसको तुम वखूवी ताकीद करदो कि कोई एक भी गलती न रहने पावे। अगर अवकी मर्तबा एक भी गलती रही तो हम उस पर वेशक व शुवहा दण्ड करेंगे। और यह भी तहरीर करो कि वनारस मे आज कल सव-जज यानी जजमातहत या सदरआला कौन है, जनाव रामकाली चौधरी साहव हैं या और कोई साहव हैं, और हम सव तरह आनन्द मे है।

मुकर्रिर यह है कि हम तुम्हारे पास ऋग्वेद व नामिक की शुद्धि अशुद्धि नमूने के तौर पर लिखकर रवाने करते हैं, ज्वालादत्त को देदेना और तुम भी देखना कि किस कदर गलती निकलती हैं।[१]

आगरा ७ फरवरी ८१ ई० दयानन्दसरस्वती

---

१ आर्यधर्मेन्द्रजीवन तीसरा सस्करण पृ० ३६८, ३६९ पर मुद्रित। मूलपत्र परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित होगा।

[५] नं० ६२ पत्र (२१८) [२४६]

सेठ कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि अब हमने मुशी वखतावरसिंह के समय के सब कागजात काशी से मगवा कर देखे और हिसाब की जांच पडताल की। और कई योग्य पुरुषों, जैसे बाबू पन्नालाल के गुमाशते जमनादास हिसाबदा, लाला गिरिधरलाल वकील जो यहाँ इस समय वकीलो मे गणनीय हैं, मास्टर लक्ष्मणप्रसाद और लाला हरिप्रसाद आदि को भी दिखाकर जांच पडताल कराई। जो भली प्रकार प्रत्यक्ष और सिद्ध हो गया कि वखतावरसिंह ने टाइप, कागजादि प्रेस की वस्तुओ और बाहर की छपाई में से हजारो रुपयो का गवन किया। जो भद्र पुरुष उसके कागजात को देखता है दातो नीचे अँगुली दवा शोक से कहता है कि उसने यह ऐसा बुरा काम क्यों किया। जिस किसी साहव को इसमें सन्देह हो वह उसके कागजात अपनी आख से देख लेवे। जब हम पर उसकी चोरी सिद्ध हो गई तो हम ने नालिश करने से पहिले चाहा कि उससे हिसाब समझ लेना अवश्य उचित है। इस प्रयोजन से हम ने अलीगढ़ पहुँच कर अपने आम मुख़तार ठाकुर मुकुन्दसिंह और भूपालसिंह की मार्फत उसके पास २२ नवम्बर १८८० को रजिष्टरी चिट्ठी इस विषय की भिजवाई कि तुम आगरे में आकर स्वामी जी को हिसाब समझा दो, कि उसकी रसीद भी हमारे पास मौजूद है। जब वह न आया तब बहुत बाट देखने के पश्चात् हम ने उसके समय के सब रजिस्टरादि कागज यहा काशी से मगा कर देखे। और उसको एक रजिस्टरी चिट्ठी इस विषय की १९ जन० १८८१ को लिखी कि तुम एक सप्ताह के अदर यहा आकर हिसाब समझा दो नही तो काररवाई जाब्ते की कीजावेगी। जिस का उत्तर २१ जन० का लिखा २४ जून० को हमारे पास इस मज़मून का आया कि आप मेरे रजिस्टर आदि सब कागजात काशी से मगवा लें तो मै २९ जन० को आकर २ दिन मे सब हिसाब समझा दूं। उसका उत्तर हम ने २४ जन० को रजिस्टरी कराकर यह लिख भेजा कि हमने तुम्हारे सब कागज़ात काशी से १० जन० ही को मगा लिये। तुम अवश्य २८ जन० को चले आओ। उसका उत्तर नहीं भेजा। किन्तु गुम शुम लिखता है कि मुझ को छुट्टी नही मिलती। शिवरात्री वा मई मास की छुट्टी में आकर हिसाब समझा दूगा। सो वह केवल दिन टला रहा है। उसके आने की आशा नहीं॥ उसके लिखने का कुछ विश्वास और ठीक ठिकाना नही है। अब हम ने सब कागज़ात ला० गिरिधर लाल वकील को सौप दिये हैं। फिर हमने उनसे भी एक रजिष्टरी चिट्ठी उस के पास भिजवाई कि जो अपना कल्याण चाहते हो तो अब

भी आकर हिसाब समझादो। उसने उत्तर लिखा कि मै बहुत चाहता हू कि स्वामी जी से हिसाब का फ़ैसला हो जावे परन्तु छुट्टी न मिलने से मजबूर हूं। जो आप पंचायत करलें मुझे स्वीकार है। और लाला रामशरणदास मेरठ वाले तथा मुन्शी इन्द्रमणि साहब मुरादाबाद वाले मेरे पच रहे। उसको फिर उत्तर लिखा कि तुम अपने पचों को आगरे में लाओ वा आगरे मे और किसी को पच बध दो और स्टाम्प के कागज़ पर पंचायत का इकरारनामा लिखकर जल्दी भेज दो। अब देखिये कि क्या त्तर लिखता है। जो वह यहां आ गया और पचायत करके हिसाव का फैसला कर दिया तो अच्छा है नही तो यह मामला अदालत मे अवश्य जावेगा। आप फिर हम को कोई दोप न देना, क्योंकि हम ने केवल परमार्थ और स्वदेशोन्नति के कारण अपने समाधि और ब्रह्मानद को छोड़कर यह कार्य्य ग्रहण किया है। और निम्नलिखित सज्जन पुरुपो ने इस प्रेस के लिये रुपया दिया है कि जिसकी बेबाकी भी अब तक नही हुई। जो बख़तावरसिंह ऐसा अनिष्ट काम न करता तो देश की हानि न होती। जो सत्य पूछते हो तो यह वैदिक प्रेस इन्ही योग्य पुरुषो की सहाय के वसीले से हुआ है कि जिनका विवेचन यह है॥

आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद	१८००)
,, मेरठ	४२८)
,, लाहौर	३५०)
,, देहरादून	२५)
,, दानापुर	१४)
राजा जयकृष्णदास जी	६००)
लाला ईश्वरदास स्यालकोट	२५)
लाला चूड़ामणि लुधियाना	५)
चौधरी जालिमसिंह रूपधनी	५०)
प० सुन्दरलाल साहब इत्यादि।	३००)

इन्ही मे से कई मनुष्यों के नाम वसीयतनामा भी है। जो यह केवल हमारा ही धन होता तो कुछ पर्वाह न थी। परतु यह सब ससार का धन है। फिर भी चोरी से लेना सो यह कैसे पच सकता है। आप भी इसका उत्तर शीघ्र लिख भेजिये। और सेठ निर्भयराम जी से कह देना कि जब हम जयपुर जावेंगे तब आपको अवश्यमेव लिख भेजेंगे। और हम ने डेढ़ तोला सुर्मा पारसल करके भेजा

है। उसकी रसीद भेज दीजिये। हम सब प्रकार से आनन्द मे हैं। सब सभासदो को नमस्ते। और हमारा हिसाब भी उनसे भिजवा देना।[1]

दयानन्द सरस्वती[2]

---

[६] नं० ७० पत्र (२१९) [२४७]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि आप की चिट्ठी ९ फ० १८८१ की लिखी नम्बरी ४०१ आज हमारे पास पहुंची। समाचार विदित हुआ। पडित सुन्दरलाल जी प्रयाग वालों ने, खजानची होना और ऊपर की दृष्टि से सब यत्रालय का प्रवन्ध करना स्वीकार कर लिया है। और अनुमान है कि वे प्रेस को भी प्रयाग ही में अपने पास उठा मगावेंगे। इस लिये अब वहा किसी खजानची की आवश्यकता नहीं है। सब प्रवन्ध वे ही स्वत. एव कर लेवेंगे। इस वात का निश्चय अब हुआ है। इस लिये खजानची के विषय में कुछ उत्तर नही लिखा था। और पण्डित प्राणदत्त के लिये भी अभी कुछ नही लिख सकते। यदि वे ज्वालादत्त की तरह शीघ्र लिखते होते तो हम उन को अपने पास रख लेते। और उन्हो ने जो वालविवाह खण्डन वनाया सो वहुत उत्तम वात है॥

और जो प० सुन्दरलाल जी खजानची के लिये लिखेंगे तो राधाकृष्ण के लिये लिखा जावेगा और परसों वखतावरसिंह के विपय मे एक पत्र आपके पास भेजा गया है पहुंचा होगा।[3] वह धूर्त्तता कर रहा है। और अब यह भी सिद्ध हो गया कि उसने चोरी से अधिक पुस्तकें छपाकर वेच दी। अब लाला गिरिधरलाल जी वकील ने उसको नोटिस दिया है। देखिये वह आता है कि नही। और सब हाल

---

१ पत्र पर तिथि नहीं दी गई। अगले पत्र के अन्तिम भाग से निश्चय होता है कि यह पत्र ९ फरवरी सन् १८८१ को लिखा गया था।

२ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में था। उसी से १६ दिसम्वर सन् १९२६ को म मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की।

३ यहा से आगे का पाठ फरूखावाद के इतिहास (पृ० १८९) में नहीं है।

आपको परसों की चिट्ठी मे विस्तार पूर्वक लिख चुके हैं। सब सभासदो को नमस्ते पहुंचे।[1]

हस्ताक्षर

आगरा
११ फ० १८८१ } दयानन्द सरस्वती {

---

[७] नं० ७९ पत्र सूचना (२२०) [२४८]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।[2]

---

[८] नं० ८४ पत्र (२२१) [२४९]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि कल बखतावरसिंह की एक चिट्ठी आई है जिस मे उसने लिखा है कि मै शिवरात्रि की छुट्टी मे २४ फरवरी को चलकर २५ फ० को आपके पास पहूचूगा। और दो दिन मे सब हिसाब समझा दूंगा। इस लिये आप को लिखते हैं कि आप ला० नारायणदास मुखतार को २५ तारीख तक यहां अवश्य भेज देवें कि उन के सामने सब हिसाब की सफाई हो जावे। हमने भी

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज फरूखाबाद में था। उसी से म० मामराज जी ने दिम्बर सन् १९२६ में इस की प्रतिलिपि की।

२. फरुखाबाद के मन्त्री ने न० ४१८ का पत्र ता० २१।२।८१ को आगरा लिखा। उस में पत्र सख्या ७९ और ८४ का उत्तर है। श्री स्वामी जी का सख्या ८४ का पत्र अगली सख्या पर छपा है।

आर्यसमाज फरुखाबाद में पुरानें रजिस्टर सुरक्षित थे। उन में उक्त समाज के पास आने और उस समाज से भेजे गए सब पत्रों की तिथि-वार सूची है। उन के अनुसार समाज की ओर से सारे ५७ पत्र श्री स्वामी जी की सेवा में गए। अन्तिम पत्र ता० ३ अक्टूबर सन् १८८३ को जोधपुर गया था। उनमें से २३वें पत्र में यह सूचना है। म० मामराज ने सन् १९२७ में प्रतिलिपि की।

बखतावर सिंह के पास एक रजिस्टरी चिट्ठी आज भेज दी है कि तुम अवश्य २५ फ० को यहा पहुच जाओ। सब सभासदो को नमस्ते ॥[1]

आगरा १७ फ० १८८१	}	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती	{

---

[१] नं० ८८ पत्र (२२२) [२५०]

सेठ निर्भय राम जी आनदित रहो।

प्रकट हो कि ३ फ० को तुम्हारे पास एक पारसल अजनकी भेजी थी। सो उसकी रसीद आपने अबतक नही भेजी। न जाने पारसल पहुचा वा नही, क्योंकि इतनी देर तो आप कभी न करते थे। जो वह पारसल पहुच गया हो रसीद भेज दो। नहीं तो वैसा लिखो कि उसकी तला[श] की जावे। और हमने लाला कालीचरण रामचरण को भी परसो एक चिट्ठी भेजी है।[2] और आज आपक[ो] भी लिखते हैं कि बखतावरसिंह शिवरात्रि की छुट्टी [में] यहां हिसाब समझाने आवेगा। सो आप लाला नार[ा]यण दास मुखतार [को] २४ फर्वरी तक यहां अवश्य भेज दीजिये। हमारी तो यही सम्मति है कि यह मामला घरही में निमट जावे। जो वह आजावेगा तो अच्छो है। नही लाचारी से अत को अदालत में जाना होगा। लाला काली चरण जी ने लिखा था कि आपकी ओर से नालिश न होनी चाहिये। सो हम भी यही चाहते हैं। सो आप लाला गौरी शकर वकील से सम्मति लीजिये कि नालिश किस की ओर से हो। जो आप ही की ओर से हो तो अच्छा है, क्योकि वसीयतनामा भी आप के नाम है। और आपका धन भी छापेखाने में लगा है। प्रथम तो पचायत मे निमट जावे तो बहुत ही अच्छा है। दूसरे नही तो उस पर हिसाब फहमी की नालिश और जो जब भी न माने तो फोजदारी वा दीवानी मे दावा किया जावे।

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में था। म० मामराज जी ने दिसम्बर सन् २६ में इसकी प्रतिलिपि की। फरुखावाद का इतिहास पृ० १९० पर भी छपा है।

२. कालीचरण जी को फरवरी १७ को पत्र लिखा गया। इस से अनुमान होता है कि यह पत्र १९ फरवरी सन १८८१ को आगरा से लिखा गया था।

और जो तुम इस का प्रवन्ध कुछ न करोगे तो ऐसी लूट मार से हमारे पास के पुस्तकादि भी कोई लूट लेगा। फिर तो हम अपने समीप कुछ न रख सकेंगे। और वेद भाष्य आदि सब काम छोड़ देंगे। केवल एक लंगोटी लगा आनन्द में विचरेंगे। अब आप लाला नारायण दास को अवश्य भेज दीजिये कि बखतावर सिंह २५ फ० को अवश्य आवेगा।[1] यह पत्र बाबू जी और लाला जगन्नाथ प्रसाद जी [को भी] दिखला दीजिये। इस मे विलंब मत कीजियेगा ॥

---

[१५] नं० १०९ पत्र (२२३) [२५१]

श्रीयुत लाला मूलराज जी आनन्दित रहो !

प्रकट हो कि प्रत्र आप का २८ फ० का लिखा पहुंचा। हाल मालूम हुआ। गोकरुणानिधि पहुंचने से खातिर जमा हुई। इस का अग्रेजी तर्जमा जलदी करके हमारे पास रवाना कर दीजिये। हम भी उसको किसी अच्छे विद्वान् अग्रेजी वाले से सुन लेवेंगे। और जो आपने बाबा चयानन्द का हाल लिखा सो बहुत अच्छा है। परन्तु जब तक वे आद्योपान्त निरुक्त पढ़ लेवें तब तक अच्छी प्रकार नही खुल सकता। और आप जानते है कि हमको अवकाश बहुत कम है। और उन को १ घंटे वा २ घंटे अवश्य पढ़ना चाहिये। इसका हमने यह विचार किया है, कि जो हमको अवकाश मिला तो हम, नही तो किसी अच्छे विद्वान् से उसकी सूक्ष्म व्याख्या लिख लेवें तो बहुत अच्छा उपकार होगा। हमको अवकाश होता तो नही दीखता। जब कभी अवकाश मिलेगा तब चयानन्द हमारे पास आ सकते हैं। अब हम आगरा से ८ वा ९ मार्च को चल कर १० मार्च को जयपुर पहुंचेंगे।[2] जो पत्रादि वा गोकरुणानिधि भेजें तो वहीं भेजिये। और लाला शिवदयाल आज कल कहां हैं। और मुशी बखतावर सिंह ने प्रेस में बहुत हानि की है। अब उसके मामले मे पचायत ठहर के इकरार नामा कागज स्टाम्प पर लिखा गया है। हमारे पच बाबू छेदीलाल गुमाश्ते कमसरियट और उसके पंच लाला आनन्दलाल मत्री आर्यसमाज और सरपच लाला रामशरणदास रईस मेरठ। और लाला गिरिधरलाल

---

१ यहा से आगे का लेख स्वय ऋषि के हाथ का है। पत्र पर हस्ताक्षर नहीं हैं। सशोधन भी ऋषि ने किया हैं। मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। म० मामराज जी ने सन १९२६ में उसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास, पृ० १८९ से १९० पर भी छंपा हैं।

२ श्री स्वामी जी जयपुर नहीं गये, परन्तु भरतपुर गए। देखो पत्र पूर्णसख्या २५४।

वकील आगरा हमारे वकील ठहरे हैं । और मई मास में यह मामला निमट जावेगा ॥[1]

आगरा ३ मार्च १८८१	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

---

[३] नं० ११९ पत्र (२२४) [२८२]

पण्डित गोपालरावहरि जी आनन्दित रहो ।

विदित हो कि आपका पुस्तक[3] हमारे पास पहुच गया है, और हमने उसके छपवाने का निश्चय पडित ज्वालाप्रसाद भार्गव एडिटर सत्यप्रकाश प्रेस आगरा से किया है, और हमने दो कागज़ का नमूना आपके पास फर्रुखाबाद भेज दिया है क्योंकि विठूर मे आप का पता मालूम नही था । एक कागज़ १२) रीम वाला कि जो इस पर छपवाओगे तो १) के ३५ जुज, और दूसरे ६) रीम वाले पर छपवाओगे तो १) के ४५ जुज़ मिलेंगे, और पत्रके उत्तर में देर यो हुई कि ज्वालाप्रसाद के मिलने और कागज़ देखने मे समय लगा, । यहा पर लाला नारायणदास मुख़तार आये थे वे कहते थे कि आप विठूर में हैं । और आपको कागज़ के वास्ते ३०) पहिले देने पड़ेंगे, और हम फा०शु०९ को जयपुर जावेंगे, और आपका पुस्तक हम लाला गिरिधरलाल वकील बेलनगज आगरा को सोप देंगे । उन्हों से इस विषय मे पत्र-व्यवहार रखिये । आप अपने लडके का यज्ञोपवीत अच्छी प्रकार करें ॥ मुशी बखतावरसिंह के मामले की पचायत हो गई है, हमारे पच बाबू छेदीलाल कमसरियट गुमाश्ते, उसके पच लाला आनन्दलाल मत्री आर्यसमाज और सरपच लाला रामशरणदास रईस मेरठ

---

१ मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

२ ये गोपालरावहरि दक्षिणी ब्राह्मण थे । फरु० में स्कूलों के इन्सपैक्टर थे । यह पत्र पीले रग के बारीक कागज पर है । म० मामराज को यह तथा एक और पत्र जो पृ० २०० पत्र सख्या १६० पर छपा है, प० गो० राव के पुत्र श्री मुकुन्द गोपाल बक्षी इन्दौर से (श्री द्वारकाप्रसाद सेवक द्वारा) नवम्बर सन् ३३ में प्राप्त हुआ था ।

३ सभवत दयानन्ददिग्विजयार्क ।

और लाला गिरिधरलाल वकील आगरा हमारे वकील ठहरे हैं। मु० इंद्रमणि जी का मुकद्दमा नम्बर पर चढ़ गया, अभी मिति नियत नही हुई ॥[1]

आगरा
७ मा० १८८१

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[३] उर्दू कार्ड (२२५) [२५३]

लाला रामसरनदास साहिब आनन्दित रहो।

वाज़ेह हो कि हम कल यहा से रवानह होकर भरतपुर पहुंचेंगे।[2] और हमने आर्यसमाज के नियम यहा छपवाये थे।[3] वे ज्यादह नही । लिहाज़ा थोड़े आपके पास रवानह होते है । रसीद भरतपुर में हमारे पास रवानह कर देना । सब समासदों को नमस्ते।[4]

स्वामी दयानन्द सरस्वती

दयानन्द सरस्वती

आगरा
९ मार्च सन् ८१ ।

---

[७] पत्र (२२६) [२५४]

श्रीयुत करनेल एच् एस् आल्कट साहब तथा एच् पी मेडम ब्लेवस्तकी जी आनन्दित रहो ।

(१) प्रगट हो कि मेडम ब्लेवस्तकी का पत्र १७ जनवरी १८८१ का लिखा पहुंचा, वर्तमान विदित हुआ , उसका उत्तर लिखा जाता है । मै सब काल में एक सी बात कहता हू ।

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

२. ७ मार्च के पूर्णसख्या २५२ के पत्र में फा० शु० ९ अर्थात् ९ मार्च को जयपुर जाने का विचार लिखा है। पुन भरतपुर जाने का निश्चय किया होगा ।

३ इस पत्र के साथ 'आर्यसमाज में दाखिल होने की दरख्वास्त' और "आर्यसमाज के असूल" का उर्दू में छपा एक कागज है ।

४ मूलकार्ड हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

(२) जो आपने अपना निश्चय न वदलाया होगा तो गुप्त रक्खा होगा, जब कि मूलजी ठाकरशी के साथ वात हुई थी । मै जानता हू उस समय आप ईश्वर को मानते थे, अब कुछ दूसरी वात पहिली वातो से विपरीत देखने मे आती है जो कि आपने मेरठ मे की है, और हम किसी से ससार भर मे विरोध करना नही चाहते सिवाय उनके कि जो अधर्म और अन्याययुक्त आचरण करें ।

(३) आर्यसमाज ठीक वैदिक मत पर है । उनके उद्देश मे कुछ किसी प्रकार का फर्क नही है । और "भ्रातृभाव" जो कि आपका वडा भारी नियम है वह कभी पूरा २ नहीं वर्त्ता जा सकता, जव तक कि मज़हवी तास्सुव और द्वेष विलकुल दूर न हो जावे । मैं जानता हू कि आप फिर भी आर्यसमाज के नियम विषय में भूलती हो । पहिले भी कहा गया था कि आर्यसमाज के नियम से दूसरी किसी सभा के जो नियम मिलते हैं वे उसके अनुकूल ही है, उससे विरुद्ध कैसे अनुकूल होसकते हैं ? दो वातें जो परस्पर विरुद्ध हो कैसे सत्य हो सकती हैं ? यह प्रत्यक्ष है कि उन दोनों मे से एक ही सत्य होगी, अर्थात् सत्य के विरुद्ध झूठ, और झूठ के विरुद्ध सत्य सदैव होता है ।

(४) और आप वार २ लिखती हैं कि "पोप" के भी ऐसे ही निमय थे, सो पोप और आर्यसमाज के नियमो मे पृथ्वी, आकाश का अन्तर है । आर्य्यों के नियम विद्यामृत के अनुसार और पोप के नियम विद्या से विरुद्ध, स्वार्थ से भरे हुए हैं, और जो ऐसे ही विना विचारे कोई आपके नियमों को भी कह देवेगा तो आप क्या उत्तर दे सकेंगी ।

(५) सन् १८७९ में करनेल आल्कट साहव से साहरनपुर मे हमने कह दिया था कि हमारे पास कोई अङ्गरेज़ी का पूरा २ विद्वान् नही है इसी लिए हमको अङ्गरेज़ी चिट्ठी के उत्तर देने मे कठिनता होती है । इस कारण अङ्गरेज़ी पत्रो का उत्तर आप ही दिया करें, और जिसका उत्तर हम से चाहे उसको नागरी कराके हमारे पास भेजा करें, क्योंकि मैं एक ही भाषा का उपदेशक हूं दूसरी भाषा में कठिनता पड़ती है । जब कर्नेल आल्कट साहव जेनेरल कौंसिल में मेरे प्रतिनिधि थे तो फिर मेरा नाम लिखने में क्या आवश्यकता थी, जो चाहते वे करते ।

(६) चाहे कोई हो जव तक मैं न्यायाचरण देखता हूं मेल करता हू और जव अन्यायाचरण प्रकट होता है फिर उससे मेल नहीं करता, इस में हरिश्चन्द्र हो वा अन्य कोई हो ।

(७) और कोई मुख्य वात मुझको विस्मरण नहीं हुई । और जब डिसोमा आया था उसका यही प्रयोजन था कि थियोसोफिकल सुसाइटी आर्यसमाज की

शाखा होना चाहती है । अब वह बात वैसी नही रही जैसी की तब थी, इस लेख का क्या प्रमाण होसकता है, और जब तुम्हारा डिप्लोमा आया तो हम ने उसकी पहुंच लिखी थी, न यह कि हम तुम्हारे सभासद् होगए ।

(८) बस, जैसा आप दुष्टजनों को सभासद नही करते वैसे ही आर्यसमाज भी नही करता, आर्यसमाज के नियमो मे देख लो कि "सबसे प्रीति पूर्वक धर्म्मानुसार यथा योग्य वर्त्तना चाहिए" यह नियम पडा है वा नही ?

(९) और मै कोई नवीन मत चलाना नही चाहता किन्तु सनातन वेद मत का प्रकाश करता हूं । जो न मानेगा उसकी हानि होगी मेरी कुछ हानि नही । जैसी मुझ से आप सत्यभाव से प्रीति रखते हैं वैसे ही मै भी रखता हू । और आपसे क्या सब सज्जन पुरुषो से मेरी वैसी ही प्रीति है ।

(१०) और परस्पर ससार की उन्नति करने मे सहायक होना ही बहुत अच्छी बात है । और मै अपनी सामर्थ्य के अनुसार वेद का उपदेश करता हूं । सिवाय उपदेशक के और मै कुछ अधिकार नही चाहता । तुम मुझको कही सभासद् लिख देते हो, कहीं कुछ लिख देते हो, मै कुछ बडाई और प्रतिष्ठा नही चाहता, और जो मै चाहता हूं वह बहुत बडा काम है, सो आशा है कि ईश्वर की दया, और सज्जन तथा विद्वानो के सहाय से कृतकृत्य हूंगा ।

अब जो कर्नेल आल्कट साहब ने लिखा था उसका उत्तर यह है कि मुझ को अवकाश बहुत कम है । जब मै मुम्बई आऊगा तब आप को कुछ अवकाश दूंगा, वा जब वेदभाष्य पूरा होजायगा तब अवकाश मिलेगा । अब आप आए और कार्य्य सिद्ध न हुआ तो क्या लाभ होगा । और दामोदर से कह दीजिये कि सेवकलाल कृष्णदास ने हमारी रजिस्टरी चिट्ठी का उत्तर नही भेजा सो उससे पूछें कि क्या कारण है । जैसा वह कहे हमको लिख भेजें ।

और सबसे नमस्ते कह दीजिये । आज हम भरतपुर से जयपुर जाते हैं।

भरतपुर
१९ मा० १८८१

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

१. मासिकपत्र परोपकारी, कार्तिक सुदी १, सवत् १९४६, अजमेर से लिया गया ।

[१] उर्दू पत्र (२२७) [२५५]

चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो ।

वाज़ेअ हो कि प० भीमसेन रुख़सत पर गया था। उसने अब तक कुछ हाल नहीं लिखा और न वह आया। सो तुम इस खत के देखते ही उसका हाल लिखो कि क्या बात है। क्या उस ने हम को धोका दिया ? हम उस को ऐसा नहीं समझते थे, सो तुम जल्दी लिखो। अगर उस ने धोका दिया है तो लिखो कि फिर दूसरी चिट्ठी आप को लिखेंगे। हम आज भरतपुर से जयपुर जावेंगे। आप भी सैर करना चाहे तो आजावें ॥

भरतपुर १९ मार्च सन् १८८१ ।[1]

स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[२] कार्ड (२२८) [२५६]

ओ३म्

ता० २२ मार्च ८१

लाला कालीचरण रामचरण जी आनंदित रहो ।

हम प्रसन्नता पूर्वक जयपुर मे पहुंच के गगापोल दरवाजे के बाहर वदनपुरा मे अचरोल वाले ठाकुरो के वाग मे ठहरे हैं। और आज पण्डितों के विषय मे जो १००) रु० वहा से आये थे, उनका हिसाव सेठ निर्भयराम की दुकान पर भेजते हैं। अब मार्च की ता० १ तक हमारे पास २) रु० वाकी रहे हैं। इस लिये आप १००) रु० की हुडी करवा के जयपुर मे हमारे पास शीघ्र भिजवा दीजिये। हम आगरे से चल के भरतपुर मे १० दिन रहे। और वहां से चल के ५[2] रविवार को यहा पहुचे। हम सब प्रकार प्रसन्न हैं। आप लोग भी होगे। सब से हमारा नमस्ते कह देना।[3]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१ मूलपत्र प० विष्णुलाल जी एम् ए बरेली निवासी के पास था । उन्हीं के पास से हमने इस की प्रतिलिपि की थी ।

२ चैत्र वदी ५ सवत् १९३८=२० मार्च सन् १८८१ ।

३ सारा कार्ड ऋषि की अपनी लेखनी से है। जयपुर से लिखा गया है। कार्ड पर जयपुर मार्च २२ की मुहर है। पता भी ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है।

प० लेखरामकृत जीवनचरित्र पृ० ५४२ पर थोडा सा अन्तिम अंश उद्धृत है ।

मूलकार्ड आर्यसमाज फरुखाबाद में था । सन् १९२७ में म० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० १९१ पर भी छपा है ।

[९] पत्र (२२९) [२५७]

ता० ३१ मार्च १८८० [१८८१][1]

कृपाराम स्वामी आदि आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा आया समाचार जाना। आगरे से भरतपुर आये और वहां से आकर यहां जयपुर मे ठहरे हैं। ईश्वर विषय मे एक व्याख्यान भी यहां हुआ था और भी श्यायद होगा। कलकत्ते की सभा आदि के साथ हमको लिखने छपवाने का अवकाश नही वेदभाष्य का काम वहुत है। तुम को अवकाश हो लिखो छपवावो। अनुभ्रमोच्छेदन और गोकरुणानिधि छप चुके हैं वेदभाष्य के अंक के साथ तुम्हारे पास भी पहुंचेंगे। भागलपुर। जवनपुर। काशी। मिर्जापुर आदि मे मुसलमानो का उपद्रव हमने सुन लिया। मुंशी इन्द्रमणि का मुकद्दमा भी इलाहावाद में है अभी कुछ सिद्धान्त नही हुआ है।

दांत की औषधी

माजूफल। मोरेठी। पपरिया कत्था। रूमी मस्तगी। नीला थोथा ये पांच चीज वरावर अर्थात् आध २ पाव से कम न हो। नीलाथोथा को अग्नि पर फुला के थोड़ा सा जल कड़ाही मे रख के वुझा ले और वुझा के शीघ्र निकाल के पाचो चीजें अलग २ पीस ले उन पांचो की वरावर आक के जड़ की छाल अर्थात् पृथिवी मे से खोद के धो डाले जिस से मिट्टी ककर न रहे। छाल को छोटी २ काट के जिस जल मे नीला थोथा वुझाया है उस मे छः ही चीजें डाल के लोहे की कड़ाही मे लोहे की मुसली से कूटे। जव महीन हो तव निर्वातस्थान मे पीसे जव तक अजन के समान न हो जाय पीसता जाय पीछे किसी शीशी मे भर रक्खे। दांतोन करके पीछे अगुली से दांत और मसूरों मे लगावे। इससे दांत पुष्ट रहेंगे न हलेंगे न गिरेंगे न पीड़ा होगी। सव से हमारा नमस्ते कह देना।[2]

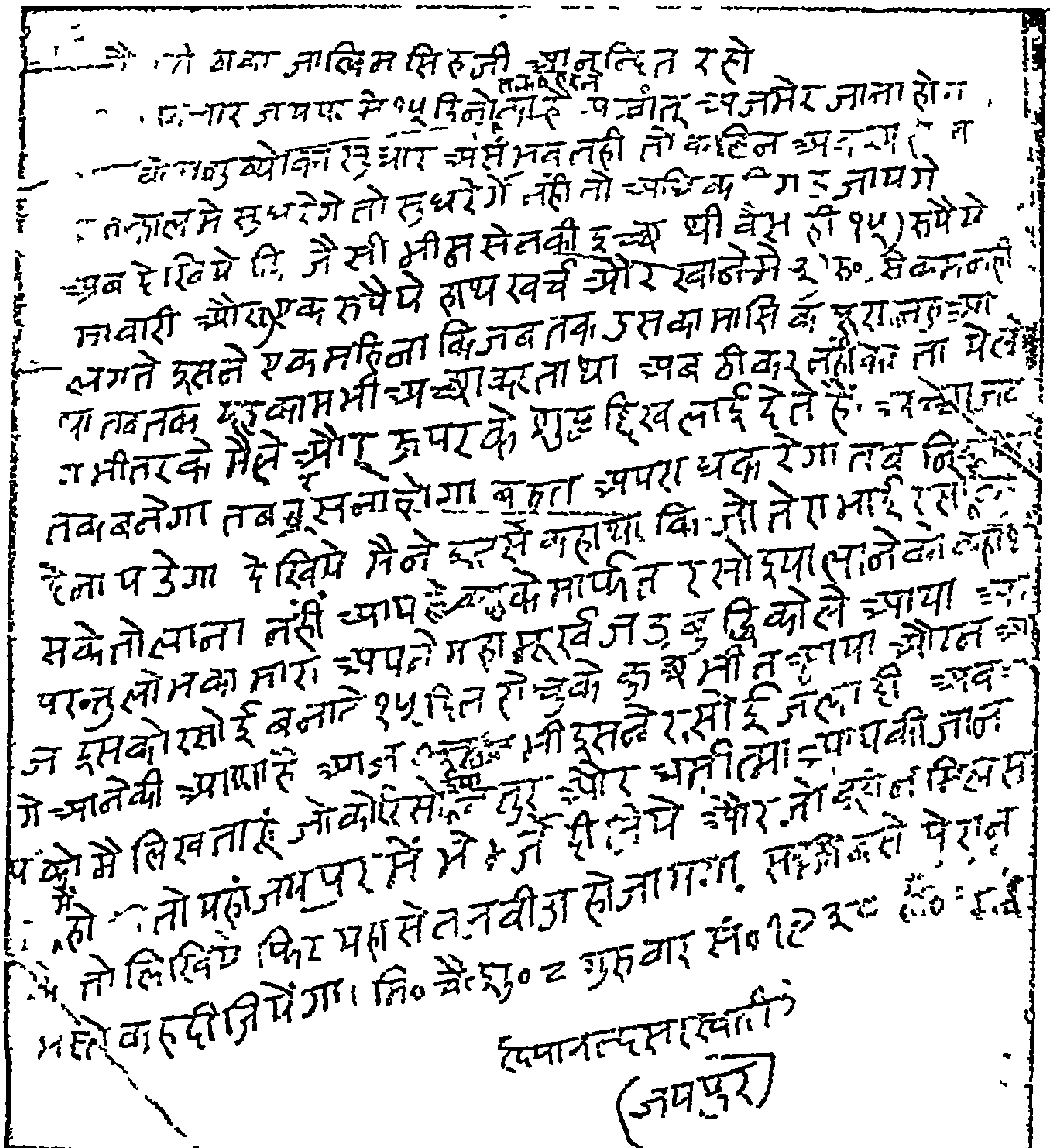
सवाई जयपुर [दयानन्द सरस्वती]

---

१ हाथी मारके के वारीक कागज पर सारा पत्र ऋषि के ही हाथ का लिखा हुआ है।

२. मूलपत्र इस समय डा० किदारनाथ जी के पास देहरादून में है। म० मामराज ने वहीं से उसकी प्रतिलिपि ता० २८ दिसम्बर सन् १९३२ को की थी। सन् १८८१ चाहिए। भूल से १८८० लिखा गया है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन।



[illegible] बाबा आलिमसिंहजी आनन्दित रहो

[illegible] समाचार जयपुर में १५ दिनों [illegible] पश्चात् अजमेर जाना होगा,

[illegible] क्योंकि [illegible] और असंभव नहीं तो कठिन [illegible]

[illegible] सुधरेंगे तो सुधरेंगे नहीं तो अधिक [illegible] जायगे

[illegible] जैसी भीमसेन की इच्छा थी वैसे ही १५) रुपैये

अब दे दिये कि [illegible] राह खर्च और खाने में [illegible]

[illegible] और एक रुपैये [illegible] जब तक उसका [illegible]

लगते इसने एक महिना कि जब तक [illegible] अच्छा करता था अब ठीक नहीं [illegible]

[illegible] तब तक [illegible] भी अच्छा [illegible] ऊपर के [illegible] दिखलाई देते हैं [illegible]

[illegible] भीतर के मैले और ऊपर के [illegible] तब [illegible]

तब बनेगा तब [illegible] होगा [illegible] जो तेरा भाई [illegible]

देना पड़ेगा [illegible] मैंने इससे कहा था कि [illegible] मार्फत [illegible]

सके तो लाना नहीं आप [illegible] के मार्फत [illegible] आया [illegible]

परन्तु लोभ का मारा अपने [illegible] भी [illegible]

[illegible] इसको रसोई बनाते १५ दिन हो चुके [illegible] भी इसने रसोई [illegible]

[illegible] आने की आशा है [illegible] भी इसने [illegible] और [illegible]

[illegible] मैं लिखता हूं जो [illegible] और जो [illegible]

[illegible] तो यहां जयपुर में भेज [illegible] हो जायगा [illegible]

[illegible] तो लिखिये फिर यहां से [illegible] मि० [illegible] गुरुवार सं० १९३८ [illegible]

[illegible] दीजियेगा। मि० [illegible]

दयानन्दसरस्वती

(जयपुर)

ऋषि दयानन्द सरस्वती का आद्यन्त स्वहस्तलिखित पत्र। पृ० २९१ पर मुद्रित।

[२] पत्र (२३०) [२९८]

चौधरी ठाकर जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।

मेरा विचार जयपुर में १५ दिनों तक ठहरने का है। पश्चात् अजमेर जाना होगा। यहां के मनुष्यों का सुधार असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। बहुत काल में सुधरेंगे तो सुधरेंगे, नहीं तो अधिक विगड़ जायगे। अव देखिये कि जैसी भीमसेन की इच्छा थी वैसा ही १५) रुपैये मावारी और १) एक रुपैये हाथ खर्च और खाने में ३) रु० से कम नही लगते। इस ने एक महिना कि जब तक उस का मासिक पूरा न हुआ था तब तक काम भी अच्छा करता था। अब ठीक २ नहीं करता। ये लोग भीतर के मैले और ऊपर के शुद्ध दिखलाई देते हैं। अच्छा, जब तक बनेगा तब तक रखना होगा। बहुत अपराध करेगा तब निकाल देना पडेगा। देखिये मैंने इस से कहा था कि जो तेरा भाई रसोई कर सके तो लाना, नही आप के मार्फत रसोईया लाने का कहा था। परन्तु लोभ का मारा अपने महा मूर्ख जड़ बुद्धि को ले आया।[1] आज इस को रसोई बनाते १५ दिन होचुके, कुछ भी न आया और न आगे आने की आशा है। आज भी इस ने रसोई जला दी। अब आप को मैं लिखता हू जो कोई रसोईया चतुर और धर्मात्मा आप की जान मे हो तो यहां जयपुर में भेज दीजिये। और जो वहां न मिल सके तो लिखिये। फिर यहा से तजवीज हो जायगा। सब से मेरा नमस्ते कह दीजियेगा।

मि० चै० शु० ८ गुरुवार स० १९३८, ता० ७ मार्च।[2]

[दयानन्द सरस्वती] (जयपुर)

---

[१] पत्र (२३१) [२९९]

ओ३म्

चोबे कन्हैयालाल जी आनन्दित रहो नमस्ते।

विदित हो कि पत्र आप का आया समाचार विदित हुए। आप ने प्रश्न किये सो सब हमारे पुस्तकों मे उत्तर सहित लिखे हुए हैं। उन में देखने से सब बातें विदित हो सकती हैं। तुम ने प्रथम ही बार ये प्रश्न किये हैं इस लिये इस दफे तो

---

१ अर्थात् अपने भाई ख्यालीराम को।

२ मूलपत्र प० विष्णुलाल जी के पास था। ७ एप्रिल १८८१ चाहिये। सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है।

सब के उत्तर देते हैं। परन्तु आगे हम से प्रश्न करोगे तो हम उत्तर नहीं देंगे क्योकि हमको काम वहुत हैं इस कारण से समय विलकुल नही मिलता। उत्तर (१) सध्योपासन और गायत्र्यादि नित्यकर्म द्विजो अर्थात तीनों वर्णों के लिये एक ही हैं। तीनों वर्ण गुण कर्मों से माने जायेंगे, जन्म से नही। शूद्र जो विद्यादि गुणो से हीन है इस कारण से उसे संध्योपासन नही आसकता। इस लिये वेद के किसी मंत्र को याद करके जपा करें।

उ० (२) कायस्थ अवष्ट हैं शूद्र नही। इस विषय मे सद्देप से लिखा है विस्तार पूर्वक शास्त्रों के प्रमाण देकर लिखने को समय नही है।

उ० (३) मुसलमानादि अन्य मत वाले वैदिक मत मे आवें तो वे जिस वर्ण के गुण और कर्म युक्त हों उसी वर्ण मे रह सकते हैं। विवाह और खान पानादि व्यवहार भी अपने समान वर्ण के साथ करें। आज कल के आर्य्य लोग उनके साथ उक्त व्यवहार नही करेंगे, इस लिये अपने लोगों मे ही करें और मत वैदिक रक्खें। इस मे किसी प्रकार की हानि नही हो सकती।

तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार संक्षेप से दिये हैं। विस्तार पूर्वक हमारे वनाये ग्रन्थों मे देख लो।[1]

ता० १६ अप्रैल
स० १८८१ ई०

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
स्थान जयपुर राजपूताना

---

१ यह पत्र पहले म० मुन्शीराम जी के सग्रह में छपा था। इसको उन्होंने परोपकारिणी सभा के पास पड़ी हुई मूलपत्र की नकल से ही छापा था।

पश्चात् मूलपत्र को चौवे कन्हैयालाल जलालावाद वालों के भतीजे श्री यज्ञदत्त जी से रु० ११) देकर ता० ७ जनवरी सन २७ को म० मामराज जी ने फरुखावाद में खरीदा था। अव उसी से शुद्ध कर के छापा है। म० मामराज ता० ३ से ७ तक जलालावाद, फतेगढ आदि में इसी पत्र के प्राप्त करने में लगे रहे थे। मूलपत्र मुशी समर्थदान का लिखा हुआ है और हस्ताक्षर ऋषि के हैं।

लिफाफे पर इस प्रकार लिखा हुआ है—

चौवे कन्हैयालाल ग्राम जलालावाद परगना कन्नौज जिला फर्रुखावाद।

मूलपत्र लिफाफे सहित हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[२६] पत्र (२३२) [२६०]

ओ३म्

प्रसन्नता पत्र

विदित हो कि मुनशी समर्थदान मगलदान जी के पुत्र ग्राम नेठवे ताल्लुका रामगढ़ रियास्त सीकर राज जयपुर के रहने वाले हैं। इन्होने मुवई में हमारे वेद-भाष्य कार्यालय का काम एक वर्ष तक वडे प्रेम परिश्रम और चतुराई से किया। इन के काम देखने और ये हमारे पास भी कई दिन तक रहे, इस से हम ने निश्चय किया है कि यह पुरुष धार्मिक, निष्कपटी, सच्चा, उद्योगी, परिश्रमी, चतुर, सभ्य, सुशील. और चालचलन का वहुत ही अच्छा और श्रेष्ठ है। इस लिये हम वहुत प्रसन्न होके लिखते हैं कि जो कोई महाशय इनको उन्नति देंगे तो हम वहुत प्रसन्न होंगे। और हमें पूरी २ आशा है कि इनके आधीन जो कार्य होगा उसको यह अच्छे प्रकार पूर्ण करेंगे। हम ने यह प्रसन्नता पत्र इनको वड़ी प्रसन्नता पूर्वक इस लिये दिया है कि किसी नये स्थान मे ये जाय तो अजान लोगों को भी इन के सद्गुण प्रगट हो।[१]

मिती वैशाख शुक्ला ६
स० १९३८। तारीख ४
मई सन् १८८१

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
स्थान जयपुर
राजपूताना

---

[१] पत्रांश (२३३) [२६१]

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर]।

मेडम ब्लेवेटस्की के पत्र का उलथा तुम ने भेजा था सो आ गया। और उस का उत्तर भी हम ने मुम्बई मे भेज दिया।[२]

१२ मई ८१

---

१ इस की छपी हुई प्रति आर्यसमाज फरुखावाद में है। उसी से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इस की प्रतिलिपि की। मूलपत्र मु० समर्थदान के घर में होगा।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४० पर उद्धृत। अजमेर से।

[१०] पत्र (२३४) [२८२]

लाला कालीचरण जी रामचरण जी आनन्दित रहो ।

यदुनाथ मित्र को जो तुम ने ४०) रु० मासिक पर नियत किया है सो ठीक है। परन्तु इस पाठशाला में अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रहना चाहिये । और इस मे केवल लडके ही पढ़ते हैं अथवा हमारे रईस लोगों में से भी कोई पढ़ता है ! और उस पाठशाला मे से कोई विद्यार्थी अच्छे निकले वा नही क्योकि शाला को एक वर्ष हो चुका है। चौवे तोताराम का हाल लिखा सो जाना। उस का मिज़ाज तेज है सहन शक्ति वहुत कम है। जयपुर में हम डेढ़ मास पर्य्यन्त रहे। वहां अभी राज्य प्रवन्ध मे गडवड सा है। और सव सर्दार लोग तो मिले थे परन्तु राजा अभी नही मिला। इस लिये कि उनके वाधक लोग वहुत हैं। वहां पर वेदधर्म के प्रकाश की वडी आवश्यकता है सो हमने कुछ २ वहा संस्कार भी डाला है। ईश्वर करे कुछ फल लगे। हिसाव के विपय मे जो तुमने लिखा सो यह वख्तावरसिंह का गड़वड़ था। अव प्रयाग मे हिसाव ठीक हो रहा है। सो सवको विदित होगा। परन्तु सीधा हिसाव तो आप लोग जानते हैं कि प्रति ग्राहक दोनों वेदो का चार वर्ष का २५॥) चाहिये। इसी हिसाव से देखकर भेज दो। और लाला निर्भयराम के पास भी हिसाव होगा। उनसे भी समझ सकते हो। आप को विदित करते हैं कि आर्य्यसमाज लाहौर से एक अख़वार अगरेज़ी भापा मे जारी होने वाला है। इस से यह अभिप्राय है कि उस्के द्वारा वेदोक्त आर्य्य धर्म्म तथा आर्य्य समाजो की काररवाई राज प्रधान अगरेज़ लोगो को भी विदित होती रहे। वरन विलायत वालो पर भी प्रगट होता रहेगा। इस्के प्रवन्ध मे आर्य्यसमाज लाहौर और मेरठ की अतरग सभा की ठीक २ अनुमति होगई है। इसके नफे नुकसान में सहभागी रहेंगे। मेरी अनुमति है कि आप लोग भी इनके शामिल होओ क्योकि इस्से आमदनी और तुम्हारे धर्म्म तथा आर्य्यसमाजों की काररवाई का ठीक २ वृत्तान्त गवर्नमेंण्ट तथा सम्पूर्ण अगरेज़ो को विदित भी होता रहेगा जिस्से अनेक अच्छे लाभो की आशा हो सकती है। और अनुमान होता है कि यह पत्र विलायत के वड़े २ ठिकानो मे पहुचेगा। इस से आशा है कि लाभ भी अच्छा होगा। पण्डित गोपालरावहरी ने जो एक मुदर्रिस हमारे पास भेजने को कहा था वह अभी तक नही आया। जिसको १५ दिन का अर्सा हो गया।

सो उन से कहना कि क्या कारण है जो अभी तक नही आया। किमधिकम् ।

वैशाख शुक्ला १४ संवत् १९३८।[1]

---

[२] पत्र (२३६) [२६३]

ओ३म्

सेठ निर्भयराम जी आनन्दित रहो।

यह पत्र आप को आवश्यक समझ कर इसलिये लिखा जाता है कि आप इसको उपसभा मे सब लोगों को सुना देवैं। मुशी कालीचरण रामचरण जी के पत्र से विदित हुआ कि आप लोगो की पाठशाला में आर्य्यभाषा सस्कृत का प्रचार वहुत कम और अन्य भाषा अर्थात् अगरेजी व उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिस्के लिये यह शाला खोली गई है सिद्ध होता नहीं दीखता । वरन आपका यह हजारहा मुद्रा का व्यय सस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है । हमने कभी परीक्षा के कागजात वा आज तक की पढ़ाई का फल कुछ नहीं देखा । आप लोग देखते हैं कि वहुत काल से आर्य्यावर्त मे सस्कृत विद्या का अभाव हो रहा है । वरन सस्कृतरूपी मातृभाषा की जगह अगरेजी लोगों की मातृभाषा हो चली है । अगरेजी का प्रचार तौ जगह २ सम्राट की ओर से जिनकी यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है । अव इस्की वृद्धि में हम तुम को इतनी आवश्यकता नही दीखती । और न सम्राट के समान कुछ कर सक्ते हैं । हा हमारी अति प्राचीन मातृभाषा सस्कृत जिस्का सहायक वर्तमान में कोई नही है । और यही व्यवस्था देखकर सस्कृत के प्रचारार्थ आप लोगो ने यह पाठशाला स्थापित की है । तौ यह भी उचित कर्तव्य अवश्य है कि सदैव पूर्व इष्ट के सिद्धि पर दृष्टि रक्खी जावै । अव इसके साधनार्थ यह होना चाहिये कि कुल पठन पाठन समय के छ घटों में ३ घंटे सस्कृत २ घटे अगरेजी और १ घटा उर्दू फ़ारसी पढ़ाई जाया करे। और प्रति मास सस्कृत की परीक्षा अन्य पडितो के द्वारा हुआ करे । और वे प्रश्नोत्तरो के कागज़ात हमारे पास भेजे जाया करें । अभी तक कुछ फल संस्कृत मे इस शाला से नहीं लगा।

---

१ यह पत्र अजमेर से भेजा हुआ है। पचागों में १४ शुक्ला लुप्त है। १२ मई सन् १८८१। म० मामराज ने मार्च सन् १९२७ में आर्यसमाज फरुखाबाद के पुराने पत्रों में से खोजा था। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

सो इस लिये ऊपर जो कुछ लिखा गया उसको वर्त्ताव मे लाओ तो अपने अभीष्ट के सिद्धि होने की आशा कर सक्ते हैं। किमधिक सुज्ञेषु ।

आजकल हम ऐसे देश मे हैं जहां पर इस ऋतु के श्रेष्ठ फल अर्थात् आम पके तौ दरकिनार कच्चे भी नही मिलते । उस ओर इसकी फसल कैसी हुई है। यदि वहां आम फले हो तौ एक वार मुवई आम अथवा और प्रकार के जो तुम्हारी समझ मे अच्छे हो दो सौ तीन सौ रेल द्वारा प्रवन्ध करके भेजदो । परन्तु वहां से गद्दर आम रवाने करना जिस्से यहां पर ठीक २ आन पहुंचें। यदि डाक गाडी मे रख दोगे तौ शायद ठीक रहेगा। हमारे पास जयपुर के मुकाम पर चुरू के सेठो के सरपंच का पत्र आया कि आप यहां पधारें । और लिखा है कि सांभर के रेलघर पर रथ, वहल और ऊट इत्यादि सवारी भेज देवें । अभी तो हमने उनको यही उत्तर लिख दिया है कि एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाने हो सकेंगे। क्योकि उदयपुर मेवाड़ की तर्फ़ भी कुछ हमारे वुलाने का विचार हो रहा है। यदि उदयपुर को गये तौ वह भी आप लोगो को विदित किया जायगा। शायद इन दोनो स्थानो को जाने मे आप से सवारी लेने की आवश्यकता नही दीखती। जव ज़रूरत होगी आपको लिखा जायगा। पत्र का उत्तर देना। किमधिकम् ।[1]

ज्येष्ठ कृष्ण ११ स० १९३८। ता० २३ मई १८८१ ई०।

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
(अजमेर)

---

[१६] पत्र (२३६) [२६४]

ओ३म्

लाला मूलराज जी एम० ए० आनदित रहो।

अर्सा तीन महीने के लग भग व्यतीत हुआ कि हमने आगरे के मुकाम से प्रथम ही गोकरुणानिधि की प्रति आपके पास इस अभिप्राय से भेज दी है कि इस्का वहुत अच्छा तर्जुमा अगरेजी भाषा मे कर दीजिये। कि वह जल्द छप कर

---

१ फरुखावाद आर्यसमाज के पुराने पत्रों में से म० मामराज ने सन् १९२७ में खोजा था । मूलपत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (विल्डिंग) खातौली (मुजफर नगर) में सुरक्षित है ।

अंगरेज राजपुरुषों वा सामान्यो के अवलोकनार्थ विलायत तक भी भेजी जावें। जिस्से इस बड़े धर्म्म कार्य्य मे फल प्राप्ति होवै। परन्तु मालूम नही अब तक उस्के तर्जुमे मे क्यों विलम्ब हुआ। शायद आप भूल गये वा कार्य्य की बहुतायत से यह ढील हुई। ऐसे कार्य्य मे आलस्य वा सुस्ती होना अच्छा नहीं। सो अब शीघ्र उक्त काम को पूर्ण करके भेज दीजिये। जयपुर में हम डेढ़ मास तक रहे। यथ[ा] शक्य अच्छा सस्कार वहां पर हमने डाल दिया है। ईश्वर चाहे वृद्धि होकर सफल होगा। अब ता० ६ मई से हम यहा अजमेर में हैं। सेठ फतेमल जी के बाग की कोठी मे ठहरे हैं। प्रति दिन रात को दो घटे रोज व्याख्यान हो रहा है। हम सब प्रकार यहा आनन्द में हैं। आप अपनी कुशलता के समाचार भी दीजिये। किमधिकम् बहुज्ञेषु।[1]

ता० २८ मई सन् १८८१ ई। मिती ज्येष्ठ सुदी १ स० १९३८।

{ द० स० }
{ (अजमेर) }

---

[६] कार्ड (२३७) [२६५]

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनदित रहो।

आप के लेखानुसार १०० आम काशी से हमारे पास आगये। हमने तो बम्बे आम फर्रुखाबाद से भेजने को लिखा था। आपने काशी से भेजने का परिश्रम किया। आम बहुत अच्छे निकले। यहां पर तो आमों का बिलकुल अभाव है। जहां तक बने पाठशाला के उद्देश पर कि संस्कृत की उन्नति होनी सो इस पर अच्छे प्रकार ध्यान रहे। समाज के कार्य्य प्रेम प्रीती और उत्साह के साथ करते कराते रहें। दस दिन अभी हम यहा रहेंगे। पीछे यहां से चलते समय इत्तिला दी जायगी। मुशी इंद्रमणि के मु० का हाल सुन[ा] होगा।

ता० १० जून।[2] { }

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२ सन् १८८१ अजमेर से। इस पर हस्ताक्षर नहीं हैं। यह कार्ड हमारे सग्रह में सुरक्षित है। सन् १९२७ में लाखों पत्रों में से खोजकर म मामराजजी लाये थे।

[७] पत्र (२३८) [२६६]

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

आपका कार्ड आया । समाचार विदित हुए। जयपुर मे कुछ थोड़ा सा सस्कार हो गया है। और अजमेर में छोटा सा आर्यसमाज नियत हुआ है। ईश्वर करे इसकी वृद्धि हो। हम तारीख २३ जून गुरुवार को यहां से मसूदा को जो अजमेर से १२ वा १३ कोस है जायगे।[1] क्योंकि वहां के राव साहब ने बड़ी प्रीतिपूर्वक निमन्त्रण किया है। वहां अधिक से अधिक १५ दिन तक रहेंगे। आम भेजें तो गादर वा कुछ कच्चे से भेजिये। जिस्से यहां पर पकने रहें। क्योकि पहिले आम जो काशी से आये थे थोडे काल मे अकसर विगड गये थे। सो अब एक ही वार भेज दीजिये । क्योंकि वार वार तकलीफ होती है। पाठशाला में संस्कृत का काम ठीक २ होना चाहिये। जैसे मिशन स्कूलो मे लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिये वाईविल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नही देते वैसे जो सस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा। इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उस्को ही वृद्धि देना चाहिये। वरन फारसी का होना कुछ अवश्य नहीं। केवल संस्कृत और राजभाषा अंगरेजी दो ही का पठन पाठन होना अवश्य है। सो आधे आधे समय दोनो जारी रहें। और दोनो की परीक्षा भी माहवार बड़ी सावधानी और दृढ नियम के साथ हुआ करे। और दोनो ही की अपेक्षा से कक्षा वा नम्वर की वृद्धि विद्यार्थियो की हुआ करे। और हम को सदैव परीक्षा पत्र भेजा करो। विशेष कर सस्कृत के विद्यार्थियो के माहवार पठन का व्यौरा और किस कक्षा मे कौन २ पुस्तकें पढाई जाती हैं, कितनी २ हुई, यह सब सूचना दिया करो। किमधिकम् विज्ञेपु। विशेष फिर आप को लिखेंगे।[2]

मिति आषाढ वदी ६ सम्वत् १९३८ ता० १७ जून १८८१ ई०।

दयानन्द सरस्वती
(अजमेर)

---

१. आषाढ वदी १२ वृहस्पतिवार को ४ वजे दिन के अजमेर स्टेशन से चढ कर नसीरा वाद पहुचे। वहा से रथ पर चढ ९ वजे रात्रि को मसूदे जा विराजे। देखो, देशहितैषी, अजमेर, खण्ड १, अङ्क २, ज्येष्ठ सवत् १९३९।

२ पहले हमने इसे बा० देवेन्द्रनाथ के सग्रह से छापा था । पश्चात् ता० २७ मार्च १९२७ को म मामराज जी ने मूलपत्र से शुद्ध किया । मूलपत्र आर्यसमाज फरूखावाद में सुरक्षित है। फरूखावाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० २१६ पर भी छपा है।

[१] पत्र (२३९) [२६७]

ओ३म्

वाबू छेदीलाल जी आनन्दित रहो।

जो कागज़ात हमने आगरे में बहुत पुरुष जो कि हिसाव के जानने वालो की सम्मति से निश्चित किया है। "वे उड़दू मे तो वहा आपके पास है। और जो उनका नकल नागरी हमारे पास थी," वह सव आपके पास भेजते हैं। देख विचार ठीक कर जितने उस पर वाकी निकलें हुक्म लिखिये। उस फैसले में जो जो "उसने" ख्यायानत के अपराध किये हैं वे भी लिख दीजिये। १—एक स्वामी जी से विश्वासघात करना। २—दूसरा हिसाव जैसा मैनेजर को रखना चाहिये वैसा न रखना। ३—तीसरा छापेखाने के स्वामी की आज्ञा के विना चोरी से अन्य के पुस्तकादि छाप के उसके लाभ का गमन कर जाना। ४—हिसाव देने में झूठे छल "कर" के "अन्यथा" व्यवहार करना। ५—हिसाव "न" देने "के लिये" झूठे हीले "किया" करना। ६—हिसाव देने के विना छापेखाने से चले जाना। ७—छापेखाने से जाते समय अपनी २० गठड़ियो को मास्तर शादीराम को दिखलाये विना "लेकर" चले जाना। इत्यादि जो २ हम ने इन कागजों पर लिखा है उस को विचारिये। ये सव कागज़ात वखतावर के रजष्टर आदि से जांच के लिखे हैं। और इसकी नकल उड़दू मे भी आगरे के कागज़ों में थी। उसको आप लोगो ने क्यों न देखके क्यों न फैसला कर दिया होता। अव न मुझ से और न वखतावरसिंह से पूछने की अपेक्षा करनी चाहिये। क्योंकि वख० तो ऐसा ही चाहता है कि यह मामला ऐसे ही घसड़ पचड हो के रह जाय। इन वखतावर के कागजातो के देखने से निश्चित होता है कि ८०००) रुपयों से कम गमन और हानि वख० ने नहीं की है। आगे जैसा आप लोगों के ध्यान मे आवे वैसा कीजिये। मैं यह आप लोगो से कहता हू कि इस मामले में जैसा आप करेंगे वैसा ही मुझको स्वीकार होगा। जो यह हिसाव लिखा है उस से कुछ कम डिगरी करनी चाहिये। अधिक नही। क्योकि सत्य व्यवस्था होनी चाहिये। जो वख०सिंह के कर्म्म देखे जायं तो जितना उस पर दण्ड करे उतना ही थोड़ा है। परन्तु मुझ को आशा है कि आप लोग सत्य ही न्याय करेंगे। "अव जो हम ने जाच परताल कर उस क कागजात से वाकी रुपैये उस से लेने जिस २ वात्र[त] में जितने २ रु० निश्चित किये नीचे लिखते हैं।"

१०६०।) "ये रु० वे हैं कि" जो मासिक हिसाव हमारे पास भेजता था। और वाद इस के शादीराम ने जो मास २ मे खर्च किया उन दोनो के मिलाने से जितने उस ने अधिक खर्च किये हैं।

६९७१।।।=) ये रुपये "वे हैं कि" जितने फर्मे मास्तर शादीराम ने अर्थात् किसी माह मे १४ किसी मे १५ और किसी मे १६ छपवाये और उस वखतावर "सिंह" ने ७ फर्मों से अधिक किसी माह मे नहीं छपवाये और काम सरकारी आदमियो से रात दिन लेता था। चोरी से दूसरो के पुस्तक छपवाता था। जैसे कि ला रिपोर्ट, उस के दाम अन्य पुस्तकों के गिने हैं।

३००) ये रुपये "वे हैं जो कि उस ने" टैप आदि के जो कि छापेखाने में थे और कम सौपे। शीशा सर्कारी, फौंडरी, टैप, और ढालने वाले भी सर्कारी थे। और कई एक चीजें वह ले गया। उनका तो पता ही नही। तौ भी ऊपर लिखे रु० निकलते हैं।

१४७-) "ये" रुपये "वे है कि" जो उसे सन्ध्यादि पुस्तकें सौंपी थी और जितनी उस ने दी "जितनी का खर्च रजष्टर मे उसने लिखा है उस से जो" वाकी "रहे उन के दाम इतने" निकलते हैं।

३५३।।।) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" भूमिका के "पुस्तक" उसे सौंपी थी उस के जमा खर्च से "वाकी निकलते" हैं।

४४२-) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" ऋग्वेद के १२८६ अं-"क उस" को दिये "थे उससे कम दिये अर्थात् जितने उसने रज[ष्ट]र मे खर्च मे लिखे हैं उस से वाकी के हैं।" और

४९३।।।≡) "ये" रुपये "वे हैं जो कि" यजुर्वेद के १४३७ अंको के जमा खर्च देखने से उसी पर वाकी निकलते हैं।

सव मिलाकर—

८९६८।।।≡) रुपये होते हैं।

ये सब रुपये उसी के हाथ के कागज़ादो से उसी पर निकलते हैं।

वे कागज़ आपके पास "भी" हैं। और जो उसकी नकल हमारे पास नागरी मे थी वह हम भेजते हैं। इसको भी आप लोग देख लीजिये। और इस की जाच पड़ताल उन्ही रजस्टरादि से जो आपके पास हैं

कर लीजियें। और उस के मासिक का रजस्टर अगरेज़ी में है। उसकी नकल भी फारसी में करवा के उस में रखी थी। और सब महीनों की चिट्ठियात भी माहवारी नम्बरवार हमने आगरे में करा के उन्हीं कागजों मे रक्खी हैं। उसमें भी इस ने "जो" जमा नहीं किया है वह हमने नही छाटा। "उन चिट्ठियों को" आप लोग वहां जाच कर लीजिये।[1] "इस से उसकी वहुत सी चोरिया पकडी जायंगी। आगे जो आपने थियोसोफीष्ट भेजा नोटिस देखने के लिये, सो देखा। क्या किया जाय जिनके लिये उपकार करते हैं, वे ही उलटे विरोध ही करते जाते हैं। अच्छा जो दुष्ट दुष्टता को नही छोडते तो श्रेष्ठ श्रेष्ठता को क्यों छोडें। ये का[ग]जात आप के पास इस लिये भेजे हैं कि लाला रामशरण दास जी नागरी नही पढ़े हैं। इनको आप देख के उन को समझा दीजिये। और सवसे मेरा आशीर्वा[द] कहियेगा। यहां वर्षा वहुत हुई है। प्रतिदिन यहा राज महल में व्याख्यान होते हैं। राजा आदि सब लोग अति प्रीति से सुनते हैं। अब जैसे वने वैसे यह मामला शीघ्र कर दीजिये। किमधिकेन व्यवहारज्ञेषु।

मि० श्रा० व० ९ मगलवार।[2]

[दयानन्द सरस्वती]
(मसूदा) जिले अजमेर।[3]
इसका उत्तर शीघ्र भेजियेगा।"[4]

---

१ यहा से लेकर अन्त तक श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लिखा हुआ है। इस पत्र को अनेक स्थलों पर श्री स्वा० जी महाराज ने स्वहस्त से शोधा है। कई स्थानों पर नयी पंक्तिया भी लिखी हैं। उलटे कामों के अन्तर्गत सब लेख श्री स्वामी जी के हाथ का लिखा हुआ है।

२ १९ जुलाई १८८१। यद्यपि पत्र पर सवत् नहीं लिखा गया, तथापि प्रकरण से और मसूदा से लिखे जाने से इसी तिथि का है।

३ यह पत्र उन २ नम्बर वाली चिट्ठियों तथा हिसाव आदि के लम्बे पत्रों सहित भेजा गया था। अक्टूबर सन् १९२६ में म० मामराज जी मेरठ से लाये थे। मूलपत्रादि हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४ इस पत्र से सम्बद्ध हिसाव का पूर्ण विवरण आगे पृष्ठ ३०२ से ३०५ पर देखें।

हिसाब कलकत्ते का जो वख़्तावरसिंह ने किया ।[1]

७५) हवाले जादोनाथ पेशगी वास्ते ख़रीद करने १ मन डवल ग्रेट । १ मन २८ सेर डवल पीका नागरी । २॥ मन सीसा । १५ सेर काइटेशन । साढे वारहसेर काडरेस्त । ता० रसीद ३० दिस० स० ७९ ।

---

५०) रसीद तारीख़ ३० दिस० १८७९

८००।=)।।। रसीद नम्वरी ६०२ पार्कर को० ता० ३ जनवरी १८८० कलकत्ता वावत खरीद

रायल प्रेस	१	६००)
,, ग्रोच सेंट	२	४॥) दर २।)
उमद[ा]वारीक कम्वल	१	३।)
कम्वल मोटा	१	४॥)
रायल रूलर फ्रेम	१	६॥।)
जाव	१	२।।)
रव कटर	१	
	१३२	९९
	,,	१८।=)।।।
	,,	२३।)
खर्च वधवाई		२०)

---

७०) हवाले विहारी लाल दत्त पेशगी वावत ख़री[द] ३ मन ग्रेट पराईमर दर ४०) मन । ता० १ जन १८८०

२९०।)। वावत कीमत काग़ज़ दो गट्ठे २०×२४ पौंड कीमत २९२≡) डिलेवरी चार्च १) कुल २६३≡) कमीशन २।।।=)।।। वाकी २९०।) ता० ३ जन० १८८०

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण १]

"यह भी रसीदें कलकत्ते की हैं । इन से भी प्रेस की चीजो का भाव आगम और ख़र्च विदित हो जायगा ।"

२९।) वावत रूलर मोल्ड केशसेल जान डि० क० ता० ५ जन १८८० ।

---

१ ला० छेदीलाल जी को लिखे पूर्वमुद्रितपत्र के साथ इस हिसाब का सम्बन्ध है । इस पर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से छः टिप्पण दिये हैं ।

५०|||=) ४ रसीद जा० डि० कं० ३ जन० १८८०

२ ब्रास रूलर	६
१ तथा	२।।)।।
१ तथा वार्निश	२।।)।।
१० टिन काली स्याही न० ३	१७।।) दर १।।।)
१० तथा	५) दर ।।)
५ इंगलिश बोर्डर न० ५०	७) ४ दर १।≡)
बोर्डर न० ६३	६।=)।। दर १।।-)४
१ चेक न० ११६५	१।।≡)।।
वधवाई आदि	२)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण २]

"यह लेख इस लिये है कि प्रेस की हर एक चीज का भाव विदित हो सके। इससे कितनी चीजें छापेखाने में उसने सोंपीं और कितनी उड़ा ले गया।"

१४१।-) रसीद पोस्ट आफिस न० १६८ ता० ९ अक्टूबर १८८० अधरचंद्र टाइप फौंडर

---

१२५) टाइप फौंडर जान डिकिशन से दिलाए १० सि० १८८०

१६३१।।।≡) ४ मीजान

जो वखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा प्रथम स्वामीजी से लेकर १५०—०

दूसरे तथा १४८

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ३]

"इतने रुपैयों को मुझ से लेके कलकत्ता में खर्च किया वख० ने। इस से अधिक जितने कल[1] कलकत्ते में भेजे वे अभयराम चुन्नीलाल की दुकान

---

१. दो वार लिखा गया है।

से भेजे थे । उसने इन रुपैयो मे से वहुत सी सामग्री अपने छापेखाने की है ।"

रुपया जो कि वखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा ।

२९ जनवरी १८८० को स्वामी जी से लेकर	३२७)
२ फरवरी १८८० को तथा	१५००)
माघ व० ४ सं० १९३६ तथा	२९३)
	२१२०)
अप्रेल मास में उस के रजिस्टर के अनुसार	४०)
मई	१००)
जून	२००)
अगस्त	२५१)
सित०	५४६।-)
	११३७॥-)
कुल मीज़ान	३२५७॥-)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ४]

"यह वह हिसाव है कि उस ने कलकत्ते मे कितने रुपैये भेजे। इनसे क्या २ चीजें आई। इनमे कि[तनी] वर्तमान हैं। कितनी खर्च हुई। और कितनी उसने छापेखाने सोंपी। जो सोंपी वे कितने दाम की हैं। कौन चीज खर्च हुई। और कितनी उसने गमन की। इसका निश्चय आप लोग करें उस से कि जो उस ने मास्तर शादीराम को उस ने जाती वखत सोंपी। उनका मूल्य का निश्चय रसीदों से कीजिये कि कौन चीज कितनी मूल्य की है।"

वहां पर ३२५७॥-) भेजा और रसीदें १६६१॥=) ४ की मौजूद हैं।

और ६७७॥=)॥ के विल हैं।

विलो की रसीदें नहीं। रसीदो के विल नही।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ५]

"इस से यह ठीक आपको विदि[त] हो जायगा कि उस ने कलकत्ते के हिसाव में कितने रुपैये उड़ाये लिये हैं और विल के रुपैयो की पहुच की रसीद न होने और रसीदों के विल न होने से जालसाजी उसकी विदित हो जायगी। और उस[की] चिट्ठियो से निश्चित है कि कलकत्ते का हिसाव चूकना कर दिया, तो विल का होना और रसीदो का न होना सिवाय चोरी के क्या कह सकते हैं।"

विल जो कि वखतावरसिंह नें किताव में चसपा किया और उनकी रसीद नहीं है॥

१३२) विल जान डिकि० कम्पनी तारीख २६ मई १८८०

१ वडल कागज २० पौंड कीमत १३२॥।-) डिलेवरी चार्ज ॥) कुल १३३।-) कमीशन १।-) वाकी १३२)

---

१३२) विल जा० डि० क० ता० ९ अग० १८८०

१ वडल कागज कीमती १३२॥।-) डिलेवरी चार्ज ॥) कुल १३३।-) कमीशन १।-) वाकी १३२)

१२६॥।≈)॥। विल जा० डि० क० २६ जन० १८८०

१ वंडल कागज १० रिम वजनी ४८० पौंड कीमत १२७॥) मिनहा वावत डिसकोंट १।)। वाकी १२६≈)॥। जमा किया डिलेवरी चार्ज १।।) कुल १२६॥।≈)॥।

२५३।≈)। विल जा० डि० क० ६ सित० १८८० २ वडल २० रिम वजनी ९६० पौंड दर ।)। फी पोंड कीमत २५५)

डिसकोंट २॥)॥। वाकी २५२।≈) डि० चार्ज १) कुल २५३।≈)।

३॥) विल वावू व्रजभूषणदास कम्पनी २॥) कीमत सहिता यजु. १) कीमत सर्वदर्शनसंग्रह १८ अक्ट० १८८०।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ६]

"ये रसीदें[।] का तर्जमा है। इन रसीदों में से कई एक रसीदें फाड़ भी ली है। और कितनी एक रसीदें चिपकाई भी नही। हिसाव कोई न कर सके इस लिये यह काम उस ने किया।"

[२] पत्रांश (२४०) [२६८]

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर]।

लेडी ब्लेवेटस्की के पत्र का उत्तर हमने दे दिया है। उसमे विशेष बात यही है कि हम उपदेश से तुम्हारी यथाशक्ति सहायता करते रहेंगे। और तुम्हारी सोसायटी के सभासद हैं।[1]

२२ जुलाई ८१

---

[१] प्रशंसा पत्र (२४१) [२६९]

श्रीमन् श्रेष्ठोपमायोग्य आर्य्यसमाजस्थ प्रधान और मन्त्री आदि सभासद् आनन्दित रहो—

विदित हो कि श्रीयुत द्विवेदी श्रीमाली राज मसुदा के मुख मन्त्री श्रीमान् छगनलाल जी को यह पत्र लिखके दिया जाता है इस लिये कि उक्त जन जिस किसी आर्य्यसमाज मे उपस्थित होवें, तो इनका सत्कार स्वात्मवत् प्रिय बधुवत् करना उचित है क्योंकि ये भी वेदोक्त धर्म्माचारी और आर्य्यसमाज अजमेर के सभासद हैं और इन को सवत् १९२३ के वर्ष से जानते हैं। ये सज्जन पुरुष हैं, उस समय अजमेर मे एक साहूकार के यहां इनके पिता जी मुनीम थे, तथा अपने घर मे और अन्यत्र भी प्रतिष्ठित थे। और ये आचार विचार तथा शास्त्र विषयो मे भी समझते हैं, चाल चलन भी इनका श्रेष्ठ है, और परोपकारी धार्मिक विश्वसनीय हैं, हमने बहुत प्रजास्थ पुरुषों से परोक्ष मे पूछा तो उनने कहा कि ऐसा कामदार हमने आगे कभी न देखा था। सब प्रजा इनसे प्रसन्न है। इस से हमने जाना यह इस समय में भी धार्मिक जन है।

मि० आ० शु० ११[2] सोमवार सवत १९३८।

दयानन्द सरस्वती मसुदा मुहर-मुहर-मुहर

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४०।

२ आषाढ को सोमवार नहीं है। आश्विन सु० ११ लुप्त है। १० को सोमवार है। ३ अकतूबर १८८१।

[१] पत्रांश (२४२) [२७०]

[समाचार पत्र देशहितैषी अर्थात् पं० मुन्नालाल मंत्री आर्यसमाज अजमेर को][1]

बनेड़े के ग्राम भीलवाड़े में हमारी डाक भेजा करो ।

१५ अकटूबर ८१

---

[१] पत्रांश (२४३) [२७१]

कविराज श्यामलदास ।[2]

हमने चितौड़गढ २७ अक्तूबर को पहुंचना है । आप स्थानादि का प्रवन्ध कर रखना ताकि कष्ट न हो ।

---

[२] कार्ड (२४४) [२७२]

ता० २ नवम्बर सन् १८८१
चित्तौड़ राज मेवाड़

[महाशय रूपसिंह जी के नाम] ।[3]

महाशय श्रीमत् महाराज स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी यहा सुशोभित हैं । और आप का गुजरावाले का कार्ड पहुचा । यह आपको कुशल समाचार का पत्र भेजता हू और आप भी अपने आनन्द मगल का समाचार सदा भेजते रहना जिससे आनन्द होय ।

रामानन्द ब्रह्मचारी[4]

---

१ देशहितैषी के रजिस्टर से । इस के पश्चात् का मुन्नालाल जी का पत्र नं० (२९) दो पैसे वाला लिफाफा "श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज नमस्ते । आपके पास यह थियोसोफिस्ट भेजता हू । अपने दिवाली का उत्सव अब के पत्र द्वारा निवेदन करूगा ।" उसी रजिस्टर से । मुन्नालाल २४-१०-८१

२. प० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ५५२ पर उद्धृत । २०—२५ अकतूबर १८८१ के किसी दिन यह लिखा गया होगा ।

३. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है । वा० रूपसिंह जी ने सन् १९१६-१७ में ये पत्र स्वय लाहौर में दिया था ।

४ रामानन्द ब्रह्मचारी श्री स्वामी जी का लेखक था । उसने उन की ओर से ही यह तथा अगले कई पत्र अपने हस्ताक्षरों से लिखे है ।

[१७] पत्र (२४५) [२७३]

११ नवम्बर सन् ८१ ई०
गढ़ चितोड राज मेवाड

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।

पत्र आपका पहुंचा। समाचार विदित हुआ। परतु यहां हमारे पास कोई इगलिश का विद्वान् नही है। इस वास्ते यहां भाषान्तर होना असम्भव है और जव आप इतना भी पुरुषार्थ नहीं कर सकते तव आर्य्य समाज की उन्नति किस प्रकार होगी। हम चाहते थे कि किसी प्रकार आप ही इस गोकरुणानिधि पुस्तक को अग्रेजी मे करें तो वहुत ठीक होता और शीघ्र ही हो जाता परन्तु अभी तक आप को अवकाश नही मिला है। किन्तु देश उन्नति के वास्ते थोडा अवकाश निकालना चाहिये। जव आप लोग कुछ नही करेंगे तव हम अकेले क्या कर सकेंगे। जो किसी प्रकार आप से तरजमा न हो सके तो हमारे पास भेज दो। जव हम मुवई जावेंगे वहां इगलिश के विद्वान् मिलेंगे तव अगरेजी मे करा लेवेंगे जैसा वना हो यहां भेज दो "अव हमारा विचार मुवई मे जाने का है क्योकि वहां के समाज ने १५०) रुपैये भी रेल के खर्च के लिये जवर्दस्ती भेज दिये हैं।" यहां से जव गवर्नर जनरल साहिव दर्वार करके चले जावेंगे तव हम भी मुवई की तरफ रवाना होवेंगे। "जव वहां आने का समय आवेगा तवी आना होगा। क्योकि काम वडा और काम के करने वाले और समय भी थोड़ा। आप लोगो को चाहिये कि जिस २ देश मे आप लोग हैं वहां वहां का काम सम्भाल लेवें तभी उन्नति का वाग वढ़ेगा।[1]

मि० मार्ग० व० ६ शनि स० १९३८।"[2] दयानन्द सरस्वती

---

[१८] पत्र (२४६) [२७४]

९ डिसम्वर सन् ८१ ई०
चितोड़गढ़ राज मेवाड़।

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।

आपका पत्र आया। समाचार विदित हुआ। आपने जो गोकरुणानिधि पुस्तक को इगलिश मे भाषान्तर कर देना स्वीकार किया उससे वहुत आनन्द

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२ १२ नवम्वर सन् १८८१। ११ नवम्वर को पत्र लेखक ने लिखा। उस दिन समाप्त नहीं किया गया। १२ को श्री स्वामी जी ने अपने हाथ से अन्तिम पक्तिया लिख कर पत्र समाप्त किया। " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है।

हुआ। क्योकि अगरेजी भाषा होने से अन्य देश वालों को भी लाभ पहुंचेगा। यह तो सच है कि स्वकृत से परकृत निर्बल होता है। तथापि विदेशी भी बहुधा ऐसे हैं कि जैसी इगलिश भाषा जानते हैं वैसी अन्य भाषा नही जानते। और यहां के यूरोपियन अस्वीकार करेंगे तो क्या किन्तु यूरोप देशस्थ जब इस पुस्तक को देखेंगे तो अनुमान है कि उन में से भी कई एक सहायक हों। और आप ने जो स्वजाति विषय में लिखा इस वास्ते अपनी स्वजाति का इतिहास जो परम्परा से चला आता है उसकी थोड़ी सी सूचना लिख भेजें। तब हम अच्छी प्रकार लिख भेजें। और पजाब मे जो हमने थोड़ा सा इतिहास सुना था वह भी विस्मरण हो गया है। इस में विलब न करना चाहिये। पत्र का उत्तर मुकाम इन्दौर राज ह[ो]लकर बाबू बालाप्रसाद सपरडट रेलवे पोलिस के नाम से अथवा मुबई नल बाजार शविलदास लल्लु भाई के मकान के पास सेवक-लाल कृष्णदास नाम से भेजना।[1]

(दयानन्द सरस्वती)[2]

---

[३] (२४७) [२७८]

|| ओम् ||

सर्दार रूपसिंह जी आनन्दित रहो।

विदत हो कि पत्र आप का सन् १८८१ ई० ६ छः डिसवर का लिखा हुआ ता० १२ डिसंबर को यहां पहुंचा। पत्रस्थ समाचार विदित हुए। यहा श्री स्वामी जी महाराज की सत्कारपूर्वक श्रीमान्महाराणा उदयपुर जी ने सेवा की। और यहां के दरबार में जितने राजा महाराजा आये वे सब श्री स्वामी जी महाराज के सत्योपदेश को सुन कर बहुत प्रसन्न हुए। और एक दिन महाराणा उदयपुर भी आये थे। कोई तीन वा चार घटे तक स्वामीजी महाराज जी का सत्सग किया और राजधर्म वा पारमार्थिक विषय मे जितनी बातें महाराज जी ने उपदेश की वे सब बातें राजा जी के ध्यान में जम गई। और यह माडवाड वा मेवा[ड] देश मे व्याख्यान को कोई समझता ही नही। जितने लोग पूर्वपक्षी आये उन सब को स्वामी जी ने यथा तथा उत्तर देकर उन्हो को शका रूपी दुःख सागर से छुड़ा

---

१. शुक्र, वदी ४ पौष स० १९३८। पत्र पर उर्दू में स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी ने भी कुछ लिखा हुआ है।

२ मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

दिया। अब यहा से श्रीस्वामीजी महाराज कल १४ चौदह डिसंवर के मध्याहोत्तर के ४ वजे रेल मे सवार हो कर १६ डिसम्बर के ८ वजे इन्दौर मे उतरेंगे। फिर वहां से मुवई को पधारेंगे ॥

(प्रश्न—मांस खाना बुरा वा अच्छा है)। (उत्तर) मांस खाना वहुत बुरा है और वेदादि सत्यशास्त्रो मे कही विधान नही है। जो सस्कार विधि मे लिखा है वह दूसरो का एक देशीय मत दिखाने को लिख दिया है। कुछ उस एक देशी मत होने से मांस खाना सिद्ध नही हो सकता। विशेप इस वा[त] को गोकरुणानिधि ग्रन्थ मे देख लीजियेगा उस मे इस वात को प्रश्नोत्तरपूर्वक सिद्ध कर दिया है कि मांस खाना वुरा। (प्रश्न दूसरा) मै अङ्गरेजी पढ़ू वा सस्कृत (उत्तर) जो कोई योग्य सस्कृत का पढ़ाने वाला मिले तो सस्कृत पढ़ा अवश्य ही चाहीये। सस्कृत के न पढ़ने का परिणाम तो तुम जानते ही हो कि हजारो ईसाई और मुसलमान होगये। जो योग्य अध्यापक न मिले तो अङ्गरेजी पढ़ते ही चले जाओ इस मे कुछ हर्ज नही। प्रथम मेरा नाम राज वल्लभ था। अब श्री स्वामी जीने मुझ को नैष्ठिक ब्रह्मचर्य्याश्रम की दीक्षा देकर मेरा नाम रामानन्द ब्रह्मचारी रक्खा हैं। और आप अपना कुशल पत्र मुम्बई मे इस पते पर भेजना कि (मुकाम मुवई वालकेश्वर पर श्री स्वामी जी के पास)। हम आनन्द मे हैं। श्री स्वामीजी की कृपा से व्याकरण जो कि स्वामीजी ने वनाई हैं उन मे से छः पुस्तक पढ़ली हैं और सातवी का आरम्भ होगा ॥

किमधिकलेखेन वुद्धिमद्वर्य्येषु ॥ सम्वत् १९३८ पौष वदी ७ मगलवार[1]
ता० १३ डिसम्बर सन् १८८१ ई० हस्ताक्षर (रामानन्द ब्रह्मचारि)

---

[२] पत्र सूचना (२४८) [२७६]

सेवक लालकृष्णदास मन्त्री आ० स० मुम्बई।[2]
छपाने योग्य पत्र
१३ दिसम्बर १८८१
चितोड

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२ इस पत्र के सकेत के लिए देखो म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २५४।

[२] पत्र (२४९) [२७७]

पण्डित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो।[1]

विदित हो कि तुम्हारा पत्र आया लिखा सो प्रगट हुआ बड़े शोक की बात है कि तुमको कई वार लिखा कि व्याकरण मे नवीन रचना की कुछ आवश्यकता नहीं है किन्तु जैसी सम्मिति डेरेदून मे ठहर गयी है उसी प्रकार से छपना चाहिये। और अब नामिक जैसा छपता है वैसे ही छपने दो कुछ जरूरत नवीन रचना की नही है॥ और नामिक के पश्चात करकीय छपेगा। हम नही जानते थे कि शोधने में तुम्हारी ऐसी कच्ची दृष्टि है देखो वेदभाष्य की शुद्धि अशुद्धि केवल चार पाच पत्र ही की नमूने के तौर पर लिखकर भेजने हैं उनको देखो और अपने शोधे हुए में सर्वत्र ऐसा ही जान लो॥ खैर अब ऐसा हुआ सो हुआ आगे कभी ऐसा न होने पावे। शोधने मे खूब दृष्टि दिया करो कि एक भी अशुद्धि न रहे।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[४] उर्दू पत्र (२५०) [२७८]

ओ३म्

मास्टर शादीराम जी।

आप पण्डित ज्वालादत्त को खूब समझा देवें कि व्याकरण मे कुछ जरूरत 'नवीनरचना" की नहीं है। जैसे अब नामिक छपता है वैसे ही छपने दो। और नामिक के बाद कारकीय छपेगा। और पण्डित ज्वालादत्त के शोधन में बहुत गलती रहती हैं। उनको ताकीद कर दो कि खूब गौर से शोधें ताकि गलती न रहे।

आगरा २२ दिसम्बर ८१[८०] ईस्वी[3]

दयानन्द सरस्वती।

---

१ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२ इसी पत्र के नीचे अगला (पूर्ण स० २७८ का) पत्र उर्दू में मास्टर शादीराम के नाम का लिखा हुआ है।

३ पहले यह पत्र आर्यधर्मेन्द्र जीवन सस्करण तृतीय पृ० ३६९ से छापा गया था। अब मूलपत्र की प्रतिलिपि से छापा है। मूलपत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है। हमारे पास आई हुई प्रतिलिपि में कोई तिथि नहीं है। न जाने आर्यधर्मेन्द्र जीवन में तिथि कहा से ली गई है। तिथि है भी अशुद्ध। शताब्दि सस्करण, भूमिका पृ० १६ पर ऊपर के पत्र के सम्बन्ध में भी यही अशुद्धि है। सन् १० चाहिए।

[४] पत्र (२५१) [२७९]

लाला रामशरणदास जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि तुम बखतावरसिंह का मामला शीघ्र कर दो। हम ने यहां अच्छे २ पुरुषों से पूछा। उनो ने यही उत्तर दिया कि जब अकरारनामा मे वह हस्त[ाक्ष]र कर चुका है तो अब उसका कुछ नही जोर चल सकता। अर्थात् जैसा पंच लोग फैसला करेंगे वैसाही कचहरी मे स्वीकार होगा। और आप भी विचार कर लीजिये। जैसी आप लोगों की राय हो वैसा शीघ्र करना उचित है परन्तु अब वह एक प्रकार का विघ्न डालता है जिस मे कि मामला फैसला न हो। अब उस से कुछ भी न पूछना और जनाना। जो आप लोगो की राय मे आवे सो फैसला कर देना। सब से हमारा आशीर्वाद कहदेना।[1]

ता० १७ जनवरी सन् १८८२ ई०[2] [द० स०]

---

[१] पत्र (२५२) [२८०]

(*From* PANDIT DAYANANDA SARASWATI
to MR. JOSEPH COOK.)

WALKESHWAR, BOMBAY
January 18, 1882.

Sir,—In your public lectures you have affirmed—

(1) That Christianity is of Divine origin.

(2) That it is destined to overspread the earth

(3) That no other religion is of divine origin

In reply, I maintain that neither of these propositions is true If you are prepared to make them good, and to ask the people of Aryavarta to accept your statements without proof, I will be happy to meet you for discussion. I name next Sunday evening at 5-30, at which time I am to lecture at Framji Cowasji Institute Or, if that should not be convenient to you, then you may name your own time and place

---

१. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२. अकतूबर सन् १९२६ में म० मामराजजी मेरठ से लाये थे।

in Bombay As neither of us speaks the other's language, I stipulate that our respective arguments shall be translated to the other, and that a short-hand report of the same shall be signed by us both The discussion must also be held in the presence of respectable witnesses brought by each party, of whom at least three or four shall sign the report with us; and the whole to be placed in a pamphlet form, so that the public may judge for themselves which religion is most divine'

दयानन्द सरस्वती
i e. DAYANAND Saraswati

---

[४] पत्र (२५३) [२८१]

ओ३म्

श्रीयुत मित्रवर आर्य्यकुलभूषक महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः श्रीयुत परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्री स्वामीजी का आशीर्वाद। पश्चात् रामानंद ब्रह्मचारी का अनेकधा शुभाशीर्वाद विदित हो॥

हे मित्रवर आप का कृपा पत्र २७ जनवरी का लिखा हुआ १ पहिली फर्वरी को पहुचा। और जो आप ने ५) रुपये का मनीआडर भेजा वह भी उसी दिवस मिला। हे महाशय आप के कुशलरूपी पत्र के अवलोकन करते ही ऐसा आह्लाद प्राप्त हुआ कि जिस को लिखने को भी अशक्य हूं॥

भो मित्र! मैं आप से विनयपूर्वक प्रार्थना करता हूं कि आप के निवेदन किये हुए पदार्थ को अति आनन्द पूर्वक स्वीकार किया। परन्तु आप को अप्रिय लगे तो मेरी अयोग्यता समझ कर अपराध क्षमा करना। सुनिये जिस समय नये सहर में आप मुझ को चिट्ठी पत्र के खर्च के वास्ते द्रव्य दे गये थे वह आप का परमार्थरूपी भार अभी मेरे पर विराजमान था। फिर वहुत शीघ्र आप ने धर्म रूपी भार निवेदन किया। मैं आप के परमार्थ रूपी भार से अति लज्जित होता

---

१. यह पत्र म० मुशीराम जी कृत 'पत्रव्यवहार' पृ० ३००, ३०१ पर छपा है। यह वही पत्र है जो ऋषि के अभिप्रायानुसार कर्नल आल्कट ने लिखा था, परन्तु इस में most divine शब्द कर्नल ने अपनी ओर से जोड़ दिया। इसका उल्लेख आगे ऋषि के एक विज्ञापन पूर्ण सख्या ३०० में आएगा।

हूं क्योंकि मुझ से आप का कुछ भी प्रत्यु[प]कार नही हो सकता। अत मेरी प्रसन्नता तो आपके अभीष्ट सिद्धिकी प्राप्ति होने से है। परमात्मा परम दयालु ईश्वर आपकी सदैव धर्मोन्नति विषय मे प्रवृत्ति और अधर्म अवनति से निवृत्ति किया करे॥

अब आप के प्रश्नों का उत्तर श्री स्वामी जी की आज्ञानुसार लिखता हूं। आशा है कि प्रसन्नता पूर्वक आप स्वीकार करेंगे॥

(प्रश्न) दूसरी माता की सेवा करने का अधिकार पुत्र को पहिली माता के सदृश है वा नही॥ (उत्तर) जो विद्यादि शुभ गुणो से युक्त हो और शिक्षा पूर्वक पुत्र पर प्रेम रखती हो उसका अनिष्ट चिन्तन कभी न करती हो तो साक्षात् अपनी माता के समान तन मन धन से सदैव सेवा करना योग्य है। जो इस प्रकार वर्त्ताव न वर्त्ते तो इतनी पुत्र को सेवा करना योग्य है। कि अन्न वस्त्रादि और अभिवादन से उस को प्रसन्न रखना अधिक सत्कार करने योग्य नहीं॥ (प्रश्न) १२ वा १४ वर्ष की युवती कन्याओ से पुरुष विवाह करै लेते हैं। उनके साथ पुत्र को किस प्रकार वर्त्ताव वर्त्तना चाहिये और विद्यादि शुभ गुणो की शिक्षा करे वा नही॥ (उत्तर) यह साधारण मनुष्यो से होना अशक्य है क्योकि स्त्री और पुरुष की परस्पर ऐसी आकर्षणता शक्ति है कि जैसे चुम्बक पत्थर की लोहे के साथ। जिस समय युवती स्त्री और युवा पुरुप की आमने सामने दृष्टि पड़ती है उसी समय मन बिगड़ जाता है। बहुधा इन्द्रियो के वेगाश्रित होके अन्यथा व्यवहार मनुष्य कर बैठते है [इसमे] कुछ शका नही। इससे सब से होना असभव है। हां जो पूर्ण विद्वान् योगाभ्यासी अर्थात् जिस की इन्द्रिय आत्मा के वस मे हो तो वह कर सकता है। स्त्री को शिक्षा करने का अधिकार उसके पति ही को है॥

(प्रश्न) नियोग से उत्पन्न हुए पुत्र उन माता पिताओ के साथ किस प्रकार वर्त्तें। (उत्तर) जो स्त्री अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करे वह पुत्र उस स्त्री के मृतक पतिका होगा और उस के पदार्थों का दायभागी होगा। जो पुरुष अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करेगा तो वह पुत्र उस पुरुष का होगा और उसीके पदार्थों का दायभागी भी होगा। सेवा करना भी जिसका पुत्र कहावेगा उसी की तन मन धन से करना योग्य है। दोनो की नही कर सकता। इस प्रकार का निर्णय वेदादि सत्यशास्त्रो मे विवेचन किया है। इन प्रश्नों के उत्तर तो सत्यार्थ प्रकाश सस्कारविधि मे देखने से निवृत्त हो सकते हैं॥

मैं बहुत प्रसन्न होता हूं आपका बड़ा भारी यश समझता हू जो आप प्रश्न लिख भेजते हैं। अब जो मेरे करने योग्य वह आप कृपा पूर्वक पत्र पर लिख भेजा

करें ॥ किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु ॥ आजकल यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं। यहां कोई एक मास पर्य्यंत स्वामी जी का निवास रहेगा। फिर जहां को जाने का विचार होगा पत्र द्वारा मैं आपको विदित कर दूगा और जो यहां विशेष वार्त्ता आप को लिखने योग्य होगी वह आपको निवेदन किया करूंगा ॥

शुभम् ता० ३ फरवरी सन् १८८२ ई०[1]

(हस्ताक्षर रामानन्द ब्रह्मचारी)

---

[२] पत्रांश (२५४) [२८२]

[समाचार पत्र देशहितैषी अजमेर को][2]

अमृतलाल[3] को अपनी समाज का सभासद कर लो।

४ फरवरी १८८२ मुम्बई

दयानन्द सरस्वती

---

[२१] पोस्टकार्ड (२५५) [२८३]

ओ३म्

वाजपेई रामाधार जी आनदित रहो!

विदित हो कि आज हम ने वैदिक यन्त्रालय प्रयाग मैनेजर दयाराम को लिख भेजा है सो आप का हिसाव सफा हो जायगा अव आगे को गड़वड़ न होगा। देखिये यह परोपकार का काम है इस में सव वात के प्रवन्धकर्त्ता आप ही को रहना चाहिये आप अपनी ओर से चाहे जिस को रक्खें परन्तु प्रधान आप ही समझे जायेंगे। अव आप इस पुराने हिसाव की सफाई करके नया हिसाव का आरम्भ कीजिये फिर गड़वड़ कभी नही हो सकेगी। हम यहां सहर मुवई वालकेश्वर गोशाला के वगल में ठहरे हैं यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं ॥[4]

ता० २० फरवरी सन् १८८२ ई०। [दयानन्द सरस्वती]

---

१. मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. देशहितैषी के रजिस्टर से।

३ रजिस्टर में एक टिप्पण है कि ये जयपुर में रहते थे।

४ मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है। इस पत्र का उत्तर म० मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३३८ पर छपा है।

[१] पत्र सूचना (२५६)[1] [२८४]

बाबू शिव नारायण जी मेरठ।
२४ फरवरी १८८२ मुम्बई

---

[५] पत्र (२५७) [२८५]

श्रीयुत मित्रवर आर्य्यकुल-प्रभाकर महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का यथायोग्य नमस्ते विदित हो ॥

हे महाजन आप के पत्र के प्रश्नो का उत्तर श्रीयुत स्वामीजी के आज्ञानुसार लिखकर भेज दिया था। आशा है कि पहुंचा होगा। अब दो पत्र गोरक्षा के विषय के भेजता हूं जिस मे एक पत्र तो सही करने का है जिस के ऊपर (ओ३म् और नीचे हस्ताक्षर) ऐसा चिन्ह है और दूसरा विज्ञापन पत्र अर्थात् किस प्रकार महाशयों के हस्ताक्षर, और मोहर होनी चाहिये इस विषय का है॥

आशा है कि आप इस महोपकीर्त्ति को प्राप्त हो कर आर्य्यावर्त्त मे सुशोभित होंगे। आप पंजाब हाथे मे जहां तक आपका पुरुषार्थ चले वहां तक अपनी और सब महाशयो की सही करा कर शीघ्र स्वामी जी के पास देंगे। इस मे सही इस प्रकार करानी होगी कि जिस महाशय के मेल मे जितने आर्य पुरुष हो उन सब की ओर से वह एक पुरुष अपने हस्ताक्षर कर दे कि इतने १०० इतने १००० इतने १००००० वा इतने १००००००० करोड़ पुरुषो की ओर से मैं अमुक नामा पुरुष अपने हस्ताक्षर करता हूं। इस प्रकार सही करके पश्चात् जितने पुरुषो की ओर से उसने सही की हो उन सब के हस्ताक्षर कराके अपने पास रखले। क्योकि जिस समय मुकद्दमा सरकार मे पहुंचेगा उस समय जब सरकार पूछेगी कि इतने मनुष्यों की ओर से तुमने हस्ताक्षर किये परन्तु उनकी सही तुम्हारे पास है कि नहीं तब दिखलाई जायगीं कि है। इस लिये सही करा कर रखनी अवश्य चाहिये ॥

मुझ को दृढ़ निश्चय है कि इस कीर्त्ति के भागी आप होगे। अब आप अपना पत्र शीघ्र भेजकर मुझ को कृतार्थ करेंगे। जो कुछ मेरे करने का काम हो कृपा पूर्वक विदित करना। आशा है कि आप कुटुब के सहित आनन्द में होगे। मै भी ईश्वर की कृपा से आनन्द मे हूं ॥

---

१ म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३१७ पर इस पत्र का सकेत है।

परमात्मा परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर आपको सदैव आनन्द में रक्खे॥ शुभम् सम्वत् १९३८ चैत्र कृष्ण ५ शुक्र ता० १० मार्च सन् १८८२ ई०॥[1]

[रामनन्द ब्रह्मचारी]

---

[२१] पत्र (२५८) [२८६]

मत्री आर्य्य समाज दानापुर आनदित रहो।

मैं आप परोपकारप्रिय धार्मिक जनों को सब जगत् के उपकारार्थ गाय बैल और भैंस की हत्या के निवारणार्थ दो पत्र एक तो सही करने का और दूसरा जिसके अनुसार सही करनी करानी है दो पत्र भेजता हू। इस को आप प्रीति और उत्साह पूर्वक स्वीकार कीजिये जिस से आप महाशय लोगो की कीर्त्ति इस ससार में सदा विराजमान रहे। इस काम को सिद्ध करने का विचार इस प्रकार किया गया है कि २०००००० दो करोड़ से अधिक राजे महाराजे और प्रधान आदि महाशय पुरुषो की सही कराके आर्य्यावर्त्तीय श्रीमान् गवरनरजनरल साहेब बहादुर से इस विषय की अर्जी करके उपरि लिखित गाय आदि पशुओ की हत्या को छुडवा देना। मुझ को दृढ़ निश्चय है कि प्रसन्नता पूर्वक आप लोग इस महोपारक कार्य्य को शीघ्र करेंगे। अधिक प्रति भेजने का प्रयोजन यह है कि जहा २ उचित समझे वहां २ भेज कर सही करा लीजिये। पुन नीचे लिखित स्थान में रजिष्टरी कराके भेज दिजीये। लाला रामशरण रईस मत्री आर्य्यसमाज मेरठ॥ अलमतिविस्तरेण धर्म्मिवरशिरोमणिपु॥

ता १२ मार्च सन् १८८२ ई०।[2] (दयानन्द सरस्वती)
मम्बई

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। यहा भी गुजराती सवत् है। चाहिए स० १९३९।

२ मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है।

[११] पत्र (२५९) [२८७]

ओ३म्

लाला रामचरण कालीचरण-मंत्री आर्यसमाज फरुखाबाद[1] आनन्दित रहो।
....पूर्ण स० २८६ का पत्र।

चैत्र कृष्ण ८ सोम० संवत् १९३८।[2]

[ह० दयानन्द सरस्वती]

---

[२२] पत्र (२६०) [२८८]

आर्य्यसमाज लखनऊ बाबू रामाधार बाजपेयी खजाना रलवे आनन्दित रहो[3]।

... .पूर्ण सं० २८६ का पत्र।

मि० चै० व० ८ सोम० स० १९३८।[4]

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (२६१) [२८९]

पण्डित सुन्दरलाल असिसटेण्ट पोस्ट मास्टर जनरल प्रयाग आनन्दित रहो।... .. .. पूर्ण संख्या २८६ का पत्र।

चैत्र कृष्ण ८ चन्द्रवार सवत् १९३८।

ह० दयानन्द सरस्वती

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। इसे म मामराज ने सन् १९२७ में आर्यसमाज फरुखाबाद के पुराने पत्रों में से खोजा था।

२. ता० १३ मार्च १८८२ सवत् १९३८ गुजराती है, १९३९ चाहिये। उपरोक्त पत्र स० एक ही तिथि के है।

३. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

४ यही पत्र श्रीस्वामी जी ने गोरक्षार्थ सही करने वाले दूसरे पत्र के साथ हस्ताक्षर कराने के लिये भारतवर्ष में सैकडों की सख्या में आर्यसमाजों तथा अन्यों को भेजा था।

[१] सही करने का पत्र (२६२) [२९०]

ओ३म्

ऐसा कौन मनुष्य जगत् में है, जो सुख के लाभ होने मे प्रसन्न और दुःख की प्राप्ति मे अप्रसन्न न होता हो। जैसे दूसरे के किये अपने उपकार में स्वय आनन्दित होता है, वैसे ही परोपकार करने में सुखी अवश्य होना चाहिये। क्या ऐसा कोई भी विद्वान् भूगोल में था, है और होगा, जो परोपकार रूप धर्म और परहानि स्वरूप अधर्म्म के सिवाय धर्म वा अधर्म की सिद्धि कर सके। धन्य वे महाशय जन हैं, जो अपने तन, मन और धन से संसार का अधिक उपकार सिद्ध करते हैं। निन्दनीय मनुष्य वे हैं जो अपनी अज्ञानता से स्वार्थवश होकर अपने तन, मन और धन से जगत् मे परहानि कर के बडे लाभ का नाश करते हैं। सृष्टिक्रम से ठीक २ यही निश्चय होता है कि परमेश्वर ने जो २ वस्तु बनाया है, वह वह पूर्ण उपकार लेने के लिये हैं। स्वल्प लाभ से महाहानि करने के अर्थ नही। विश्व में दो ही जीवन के मूल हैं, एक अन्न और दूसरा पान। इसी अभिप्राय से आर्य्यवर शिरोमणि राजे महाराजे और प्रजाजन महोपकारक गाय आदि पशुओं को न आप मारते और न किसी को मारने देते थे। अब भी इन गाय, बैल, और भैंस को मारने और मरवाने देना नहीं चाहते है। क्योकि अन्न और पान की बहुताई इन्ही से होती है। इससे सब का जीवन सुख से हो सकता है। जितना राजा और प्रजा का बडा नुकसान इन के मारने और मरवाने से होता है, उतना अन्य किसी कर्म से नही। इसका निर्णय गोकरुणानिधि पुस्तक मे अच्छे प्रकार प्रकट कर दिया है अर्थात् एक गाय के मारने और मरवाने से ४,२०,००० चार लाख बीस हजार मनुष्यों के सुख की हानि होती है। इस लिये हम सब लोग स्वप्रजा की हितैषिणी श्रीमती राजराजेश्वरी किन् विक्टोरिया की न्याय प्रणाली में जो यह अन्याय रूप बडे २ उपकारक गाय आदि पशुओं की हत्या होती है इस को इन के राज्य में से प्रार्थना से छुड़वा के अति प्रसन्न होना चाहते हैं। यह हमको पूरा निश्चय है कि विद्या, धर्म्म, प्रजा-हित-प्रिय श्रीमती राजराजेश्वरी किन् महाराणी विक्टोरिया पार्लीयामेण्ट सभा और सर्वोपरि प्रधान आर्य्यवर्त्तस्थ श्रीमान् गवर्नर जनरल साहिब बहादुर सम्प्रति इस बड़ी हानिकारक गाय बैल तथा भैंस की हत्या को उत्साह और प्रसन्नता पूर्वक शीघ्र बन्द कर के हम सब को परम आनन्दित करें। देखिये कि उक्त गाय आदि पशुओ के मारने और मर वाने से दूध घी और किसानों की कितनी हानि होकर राजा और प्रजा की बड़ी हानि हो गई और नित्य प्रति अधिक २

होती जाती है। पक्षपात छोड़ के जो कोई देखता है तो वह परोपकार ही को धर्म्म और पर हानि ही को अधर्म निश्चित जानता है। क्या विद्या का यह फल और सिद्धान्त नही है कि जिस २ से अधिक उपकार हो उस २ का पालन, वर्धन करना और नाश कभी न करना। परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान् परमात्मा इस समस्त जगदुपकारक काम करने मे ऐक मत्य करे॥'

चुन्नीलाल प्रेस (हस्ताक्षर)[2]

---

[१६] विज्ञापनपत्रमिदम् (२६३) [२९१]

सब आर्य पुरुषो को विदित किया जाता है कि जिस पत्र के ऊपर (ओ३म्) और नीचे (हस्ताक्षर) ऐसा वचन लिखा है, वही सही करने का है उस पर सही इस प्रकार करनी होगी कि जिस के स्वराज्य व देश मे ब्राह्मण आदि मनुष्यो की जितनी सख्या हो उतनी सख्या लिख के अर्थात् इतने सौ, हजार लाख व करोड़ मनुष्यो की ओर से मै अमुक नामा पुरुष सही करता हू इस प्रकार एक श्रीयुत महाशय प्रधान पुरुष की सही मे सर्व साधारण आर्य पुरुषो की सही आजायगी। परन्तु जितने मनुष्यो की ओर से एक मुख्य पुरुष सही करे वह उन से सही लेके अपने पास अवश्य रक्खे। और जो मुसलमान वा ईसाई लोग इस महोपकारक विषय मे दृढ़ता और प्रसन्नता से सही करना चाहे तो कर दें। मुझ को दृढ़ निश्चय है कि आप परम उदार महात्माओ के पुरुषार्थ उत्साह और प्रीति से यह सर्व उपकारक महापुण्य कीर्त्तिप्रदायक कार्य यथावत् सिद्ध हो जायगा।'

चैत्र कृष्ण ९ स० १९३९ तदनुसार १४ मार्च १८८२ मुम्बई

दयानन्द सरस्वती

---

१. फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृ० १९८ पर भी छपा है।

२. गोरक्षा वाले पत्रों के साथ यह सही करने वाला छापा हुआ पत्र बहुत स्थानों को भेजा गया था। मूल मुद्रित पत्र म० मामराज फरुखाबाद से लाये थे। वह हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[१] पत्र सूचना (२६४) [२९२]

म० कृष्णलाल साह् अल्मोड़ा[1]

गोरक्षसम्बन्धी दो पत्र

चैत्र वदी ११ बुधवार सवत् १९३८[2] मुम्बई

---

[३] पत्रांश (२६५) [२९३]

[समाचार पत्र देशहितैषी अजमेर को]

गोरक्षा के विषय में पत्र भेजते हैं।[3]

१६ मार्च १८८२ मुम्बई

दयानन्द सरस्वती

---

[६] पत्र (२६६) [२९४]

बाबू कृपाराम स्वामी आनन्दित रहो।

जो आपने ब्राह्मी ओषधी का पारसल भेजा सो पहुंचा। अब जब तक हम न लिखें तब तक मत भेजियेगा। यहां सब प्रकार आनन्द है। ३ तीन दिन के पश्चात् वार्षिक उत्सव आर्य्य समाज का ७ सातवां होगा। दानापुर से तीन सभासद् यहां उत्सव पर आवेंगे, और आर्य्यसमाज का स्थान भी थोड़े ही दिनो में बन जायगा। सब सभासद् भी प्रसन्न हैं। वहा की जो लिखने के तुल्य बातें हों, लिखते रहना। [सब] से हमारा आशीर्वाद कहना। मि० चै० व० १३ शुक्र स० १९३८।[4]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३७२ पर म० कृष्णलाल जी का पत्र ता० २९ मार्च १८८२ का है। उसी में इस पत्र का सकेत है।

२ १५ मार्च १८८२। सवत् गुजराती लिखा गया है। चाहिए सवत् १९३९।

३ देशहितैषी के रजिस्टर में से।

४. १७ मार्च १८८२ मुम्बई। सवत् १९३९ चाहिये।

[१२] पत्र (२६७) [२१६]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनंदित रहो ॥

विदित हो कि कल्ल रामानन्द के भाई त्रिलोचन ने एक पत्र भेजा है कि जिस में यह समाचार लिखा था। माता, पिता, वहुत वीमार हैं। और मैं भी वीमार हूं। यहां कोई हमको जल देने वाला भी नही है। इस कारण तुम श्री स्वामीजी से आज्ञा लेकर देखत पत्र के चले आओ। ऐसा शोक का समाचार लिखा था। इस वात की तुम पत्र के पहुंचते ही तलासी करना कि यह वात सच है किम्वा किसी के वहिकाने से उन्हो ने लिखी अर्थात केवल भाई के वुलाने के वास्ते। इसका ठीक २ निर्णय करके शीघ्र हमारे पास पत्र भेजो। जो ऐसा ही हो कि जैसा लिखा है तो किसी एक योग्य पुरुप का प्रवन्ध करके उनके पास रख देना जो उनकी सेवा अच्छे प्रकार कर सके। और जो दवा दारू के खर्च मे दो चार रुपये लगें तो दे देना। हिसाव हमारे नाम से लिख लेना। अव इसका पिता भी वहां आ गया है। इस कारण "३) रुपैये तो मा[ह]वारी इने मिलते ही हैं अव एक रु० अर्थात् ४) रुपैये मा[ह]वारी सेठ निर्भयराम जी[की] दुकान दिया करे।" किसी प्रकार दु:खी न होने देना जव तक अच्छे न होवें ॥

एक यह गुप्त वात लिखते हैं इसको प्रकट मत करना कि जो किसी का लोकान्तर हो जाय तो जैसा सस्कार विधि मे लिखा है उसके अनुसार घृत चन्दनादि से मृतक सस्कार करवा देना। जो कुछ पद्रह वीस रुपये लगें लगा देना परन्तु सस्कार अच्छी प्रकार करवा देना। "सव से हमारा आशीर्वाद कहियेगा। जो गोरक्षा के विपय मे पत्र वहा भेजे हैं उनको दिखला के अपनी जाति किंवा सव की सही वही में लेना। और सही करने वालों की ओर से जितनी सख्या हो उतनी लिख के पच लोग सही उस छपे हुए पत्र पर क[र] देवें।"[१]

चैत्र कृष्ण ३० रविवार सम्वत् १९३८।[२]

(दयानन्द सरस्वती)[३]

---

१. " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से (लाल रग से) लिखा है और पत्र को शोधा भी है।

२. १९ मार्च १८८२। सवत् १९३९ चाहिये।

३ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। मार्च सन् २७ में म० मामराज ने आर्य्यसमाज फरुखावाद के पत्रों में से खोजा था।

[१] पत्र (२६८) [२९६]

ओ३म्

श्रीमन्महाराजाधिराजेभ्य श्रीयुत शाहपुराख्याधीशेभ्यो दयानन्दसरस्वती स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति भवदीय च नित्यमाशासे। जब से आप और मेरा वियोग हुआ तबसे अवकाश न मिलने से मैं आपको पत्र नहीं लिख सका। अब इस पत्र के पहुंचने के पश्चात् अपने कुशल क्षेम के समाचार से सुभूषित पत्र भेजियेगा। मैं भी उचित समय पर पत्र भेजा करूगा, जो आप से और मुझ से गोरक्षा के विषय सवाद हुआ था उसके वास्ते जो एक पत्र और एक चिट्ठी छपवाके श्रीमानार्य्यकुलदिवाकर उदयपुराधीशादि राजे महाराजों के पास भेजे हैं वे ही श्रीमान् महाराजाधिराज आपके पास भी दो पत्र भेजते हैं, इसका प्रवन्ध ऐसा किया है कि अपने राज्य और मित्रो के राज्य में जो जो ब्राह्मणादि मनुष्य हों उनकी सही एक वही में लेके उनकी ओर से राजे महाराजे और प्रधान पुरुष उस छापे के पत्र के नीचे वा वगल में उन सही करने वालों की सख्या लिखके अपनी सही करे। चित्तौड़ में जो कुछ अच्छी वातें हुई वे सब श्रीमदनवद्य गुणोदार महाराजाधिराजों के पुरुषार्थ ही से हुई। और अग्रे होगीं जो राजकुमार पाठशाला की बात हुई थी सो श्रीमदार्यकुलभास्करो ने भी करना स्वीकार कर लिया है। यहां मुम्बई में भी गोरक्षा के वास्ते सही हो रही है। सबसे मेरा आशीर्वाद कहियेगा। अलमतिविस्तरेण महाराजाधिराजवर्य्येषु। मि० चै० शु० २ वार मगल सवत् १९३९।[1] इसका उत्तर मुम्बई मे शीघ्र लिख भेजिये। मुम्बई वालकेश्वर।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. २१ मार्च १८८२।

१. मूलपत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि प० भगवान् स्वरूप जी ने स्वहस्त से करके ता० ६-९-२८ के अपने पत्र सहित शाहपुरा मे भेजी थी।

[३] पत्र (२६९) [२९७]

पंडित सुन्दर लाल जी आनदित रहो।

विदत हो कि आर्यसमाज लाहौर मे प्रति मास अग्रेजी [का] एक आर्यपत्र निकलता है। वहां के एडीटर ने लिखा है कि इस पत्र के वदले में 'आप प्रतिमास ऋग्यजुर्वेद का भाष्य भेजा करें और इसके वदले वह पत्र भेजेंगे। सो तुम लाला साईदास के मार्फत वेदभाष्य भेज देना और वे जैसा नोटिस लिख भेजें छपने के वास्ते वैसा ही छपवा देना॥

भीमसेन अव भाषा वहुत ढीली वनाता है उसको शिक्षा करदेना कि भाषा के वनाने मे ढील न हुआ करे और आख्यातिक अव कितना छप चुका है। हमने कई वातें पूछी हैं उनका उत्तर हमको अव तक न दिया। उनका शीघ्र प्रत्युत्तर भेजना चाहिये। मेनेजर दयाराम ने अभीत[क] हिसाव का पत्र नहीं भेजा है उससे हिसाव भिजवा देना।

मार्च ता० २३ सन् १८८२ ई०

और जिन वातो के पूर्व पत्रों मे उत्तर मांगा है भेज देना। इसमे विलम्व न होना चाहिये।

[दयानन्द सरस्वती][1]

---

[३] पत्र (२७०) [२९८]

यह बात बहुत उत्तम है क्योकि अभी कलकत्ते मे इस विषय की सभा हो रही है। इस लिये जहां तक बने वहां शीघ्र सस्कृत और मध्य देश की भाषा के प्रचार के वास्ते, बहुत प्रधान पुरुषो की सही[2] कराके कलकत्ते की सभा मे भेज

---

१ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२ सही करने योग्य पत्र तथा मास्टर दयाराम जी का पत्र परिशिष्ट में देखें।

दीजिये और भिजवा दीजिये। और मेरठ और देहरादून से पूर्व २ समाजों में पत्र इस विषय के शीघ्रतर भेज दीजिये।

चै० शु० ५ शुक्र सम्वत् १९३८।[1]

{ दयानन्द सरस्वती }

(मुबई)[2]

---

[१७] विज्ञापनपत्रमिदम् [२९९]

सब सज्जन उदार आर्य लोगो को विदित किया जाता है कि जो फीरोजपुर में अनाथाश्रम कई एक वर्षों से आर्यसमाजों ने स्थापित किया है यह बड़ा प्रशंसित और धर्म का काम है और इस में बड़े सहाय की अपेक्षा है। इस लिये आप सज्जन लोगों को उचित है कि इसका सहाय करना। क्योंकि इसके होने से आर्यलोग जिन का पालन करने वाला कोई न होवे वे ईसाई वा मुसलमान अथवा अन्य मत में वेदोक्त सनातन धर्म से छूट के मिल जाते थे उनकी रक्षा के लिये यह अनाथ पालनार्थ सभा नियत की है। जिस प्रकार अर्थात् धन के सहाय करने से इसका दीर्घायु हो वैसे यत्न करने चाहिये॥

॥ अलमतिविस्तरेणौदार्य्यादिगुणयुक्तेषु ॥[3]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

१ २४ मार्च १८८२। भारतीय स्कूलों में कौनसी भाषा पढाई जावे, इस विषय पर विचारार्थ सन् १८८२ के आरम्भ में कलकत्ता में एक कमिशन बैठा था। लाहौर समाजने उस कमिशन के प्रधान को आर्यभाषा पढाई जाने के लिये पत्र लिखा था। मुलतान समाज ने भी ऐसा ही पत्र वहा भेजा था। उन दिनों मुलतान समाज के मन्त्री उत्साहमूर्ति मास्टर दयाराम थे। उन्होंने श्री स्वामीजी को १९ मार्च सन् २८ को लिखा कि वे सब समाजों को कलकत्ते को ऐसे पत्र लिखने के लिये प्रेरित करें। श्री स्वामी जी ने उसी पत्र की पीठ पर ऊपर मुद्रित लेख स्वहस्त से लिखकर फर्रुखाबाद भेजा ताकि वहा से सब समाजों में यह आन्दोलन किया जावे।

२ मूलपत्र मार्च सन् १९२७ में म० मामराज जी ने फर्रुखाबाद आर्यसमाज के पत्रों में से खोजा था। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है

३. ऋग्वेदभाष्य, अंक ३६। ३७, वैदिक यन्त्रालय, प्रयाग के मुखपृष्ठ की पीठ पर छपा। यह अंक चैत्र शुक्ला १० संवत् १९३९ तदनुसार २९ मार्च सन १८८२ को छपा था।

[१८] विज्ञापन [३००]

थियोसोफ़िस्टों की गोलमाल पोलपाल ॥

श्री स्वामी जी ने और आर्यसमाज के लोगो ने उन के पूर्व पत्र और व्यवहारों से यह अनुमान किया था कि उन से आर्यावर्त देश का कुछ उपकार होगा। परन्तु वह अनुमान व्यर्थ हो गया—

(१) क्योकि जो २ उन्होने प्रथम अपनी चिट्ठियो में प्रसिद्ध लिखा था कि हमारी थियोसोफिकल सोसाइटी आर्यसमाज की शाखा हुई, उससे यह लोग बदल गये।

(२) उन्होने कहा था कि वेदोक्त सनातन धर्म के ग्रहण और विद्यार्थी होकर सस्कृत विद्या पढ़ने को आते हैं, सो तो न किया किन्तु अब किसी धर्म को नही मानते और न कुछ किसी धर्म की जिज्ञासा की, न आज तक सस्कृत विद्या पढ़ने का आरम्भ किया और न करने की आशा है॥

(३) उन्होने कहा था कि जो इस सोसाइटी के सभासदो से फीस आवेगी वह आर्यसमाज के लिये होगी और बहुत सी पुस्तकें भेटकी जावेंगी, वह तो कुछ भी न किया परन्तु जो हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास ७००)[1] रुपये भेजे थे वह भी निगल कर बैठ रहे, पुस्तको का दान करना तो दूर रहा किन्तु जिन बाबू छेदीलाल और शिव नारायण आर्यसमाज मेरठ के सभासदो ने उनके सत्कार मे स्थान, मान, सवारी और खान पान आदि में सैकड़ो रुपये खर्च किये, इतने पर भी एच० पी० मैडम ब्लैवस्टकी और एच० एस० करनेल आलकाट साहब ने जो एक पुस्तक उनको दिया था उसके ३०) रु० झट ले लिये और लज्जित भी न हुये। इसके सिवाय सहारनपुर, अमृतसर और लाहौर आदि के आर्यसमाजो ने बहुतसा सत्कार किया वह भी उन्होने नही समझा और स्वामी जी ने भी जहां तक बना इनका उपकार किया उसको न मान कर व्यर्थ लिखते हैं कि हमने स्वामी जी का बहुत सहाय किया, परतु स्वामी जी कहते हैं कि कुछ भी नही और जो किया हो तो प्रसिद्ध क्यो नही करते हैं सो कुछ भी प्रकट नही करते फिर कौन मान सकता है?

(४) प्रथम इन्होने अपने पत्रो मे और यहां आकर स्वामी जी और सब के सामने ईश्वर को स्वीकार किया, फिर उसके विरुद्ध मेरठ मे स्वामी जी और अनेक भद्र पुरुषो के सामने दोनो ने कहा कि हम दोनो ईश्वर को नही मानते। क्या यह पूर्वापर विरोध नही है? तब स्वामी जी ने कहा कि तुम ईश्वर के मानने

---

१. इन सात सौ रुपयों के सम्बन्ध में श्री स्वामी जी के नाम, श्यामजी कृष्ण वर्मा का २४ फरवरी, सन् १८७९ का पत्र परिशिष्ट पत्र सग्रह में देखो।

का खण्डन करो और हम मण्डन करैं जो सच हो उसको मान लीजिये, तव इन्होंने इस वात को भी स्वीकार नही किया ॥

(५) जव ये आर्यावर्त देश में आने लगे तव एक समाचार पत्र (Indian Spectator) में तारीख २४ जुलाई सन ७८ ईस्वी में छपवाया था कि न हम वुधिष्ट न हम कृश्चियन और न् हम ब्राह्मण अर्थात् पुराण मत के मानने वाले हैं, किन्तु हम आर्य सामाजिक हैं। अव इस से विरुद्ध स्पष्ट छपवाया कि हम वहुत वर्षों से वुधिष्ट थे और अव भी हैं। क्या यह कपट और छल की वात नहीं है और जनवरी सन ८० ई० की चिट्ठी से सिद्ध होता है कि वे ईश्वर को मानते थे और आठ महीने के पश्चात् उसी सन् के अक्टूवर महीने में मेरठ में कहा कि हम दोनों ईश्वर को नही मानते। यह उसका छल नही तो क्या है ?

(६) यहां आकर प्रथम थियोसोफिकल सोसाइटी को आर्यसमाज की शाखा स्वीकार करके पश्चात् कहा कि मुख्य सोसाइटी न आर्यसमाज की शाखा और न आर्यसमाज मुख्य सोसाइटी की शाखा है किन्तु जो एक दूसरे वेद की शाखा दोनों के साझे की है, इस से विरुद्ध अव छाप के प्रसिद्ध किया कि हमारी सोसाइटी अभी आर्यसमाज की शाखा नही हुई थी और हम आर्यसमाज से वाहर हैं। क्या यह भी उनकी विपरीति लीला नहीं है कि जव उन्होंने वम्वई मे सोसाइटी वनाई थी, उस में स्वामी जी के कहने, सुनने और लिखने विना उनका नाम अपने मन से सभासदों में लिख लिया था। जव ये प्रथम मेरठ में मूलजी के साथ मिले थे तव स्वामी जी ने कहा था कि विना हमारे कहे सुने तुमने सोसाइटी मे हमारा नाम क्यों लिखा ? जहा लिखा हो काट दें। तव करनेल आलकाट साहव ने कहा कि हम इस से आगे ऐसा काम कभी न करेंगे। जहा लिखा है वहां से निकाल भी देंगे।

फिर जब काशी मे मिले, तव तक उन्होने सोसाइटी से स्वामी जी का नाम नही निकाला था। तव स्वामी जी ने कडा- पत्र लिखा कि जहा हमारा नाम लिखा हो वहा से शीघ्र निकाल दो। जव इन्होंने तार भेजा कि अव हम क्या लिखें तव स्वामी जी ने तार में ही उत्तर दिया कि जैसा हमने प्रथम वैदिक धर्म्म उपदेशक लिखा था वैसा लिखो। न मैं तुम्हारी वा अन्य किसी सभा का सभासद् हू, किन्तु एक वेद मार्ग को छोड़ के किसी का सगी मैं नहीं हूं। इस पर भी जव वे शिमले में थे, तव व्लैवस्टकी ने ऐसी असभ्यता की चिट्ठी लिखी कि जिसको कोई सभ्य स्वीकार न करेगा, क्या यह उनको योग्य था। स्वामी जी ने कभी उनको

न लिखा था और न कहा था, उस पर भी इन्होंने स्वय स्वामी जी का नाम लिख लिया था। क्या यह लज्जा की बात नही है?

(७) जो इन्होने मेरठ मे प्रतिज्ञा की थी कि आज से पीछे आर्यसमाज के सभासदो को अपनी सोसाइटी में भरती होने को कभी न कहेंगे इसी के दो दिन पीछे जब बाबू छेदीलाल जी अम्बाले तक उनके साथ गये, तब मार्ग मे बहुत समझाते गये कि आप हमारी सोसायटी के साथ हूजिये और पत्र शिमले से बाबू जी के पास भेज दिया आप सोसाइटी के सभासद हूजिये।

ऐसी २ छल कपट की बातै देखकर स्वामीजी ने आर्यसमाज मेरठ के वार्षिक उत्सव मे व्याख्यान दिया था कि इनकी सोसायटी मे किसी वेदानुयायी को सभासद् होने की कुछ आवश्यकता नही, क्योकि जैसे नियम आर्यसमाज के हैं वैसे उनकी सोसाइटी के नही। इस पर शिमले से मैडम ब्लैवस्टकी ने असभ्यता और झूठ की भरी हुई चिट्ठी लिखी और स्वामी जी ने भी इसका उत्तर यथायोग्य दिया। इसके पश्चात् स्वामी जी ने विचारा था कि जब हम बम्बई में जावेंगे, तब उनसे सब बातो का खुलासा कर लेंगे, ऐसा ही आर्यसमाज बम्बई चाहता था। जब स्वामी जी बम्बई मे पहुंचे, तब बहुत से सभासद् और करनैल आलकाट साहब भी स्टेशन पर आये थे। जब स्वामी जी स्थान पर आ पहुँचे, पश्चात् उनसे स्वामी जी की बहुत सी बातें हुईं और स्वामी जी ने यह भी विदित कर दिया कि आप से और भी बहुत विषयो मे बातै करनी हैं। तब उक्त साहब ने स्पष्ट उत्तर न दिया। जब कुक साहब[1] के विषय मे बातचीत करने के लिये स्वामी जी के पास आये तब भी कहा कि आपका और हमारा विचार हो जाना चाहिये था। तब करनैल आलकाट साहब ने कहा कि हां करेंगे। इस पर भी स्वामी जी ने पानाचन्द आनन्द जी और राव बहादुर प० गोपालरावहरि देशमुख द्वारा कहलाया कि आप लोग मुझ से बातचीत करने को आवै नही तो हम को प्रसिद्ध भाषण देना होगा। पानाचन्द आनन्द जी से इन्होने पूछ के स्वामी जी से कहा कि २७ मार्च ८२[2] को करनैल आलकाट साहब बातचीत करने को आवेंगे फिर भी न आये और बम्बई से जयपुर पहुंच कर पत्र लिखा कि मै नही आसका, परन्तु मैडम ब्लैवस्टकी आप से बातचीत कर लेंगी। वह भी नही आईं॥

तब स्वामी जी का भाषण आर्यसमाज और थियोसोफिकल सोसायटी के पूर्वापर-विरुद्ध अर्थात उनकी थियोसोफिकल सोसायटी का पूर्व क्या सम्बन्ध

---

१ देखो पत्र पूर्णसख्या २८०।

२. अतः मार्च के अन्त में यह विज्ञापन छपा।

था अब क्या है, इस विषय पर व्याख्यान कराने के अर्थ आर्यसमाज बम्बई ने एक दिन पूर्व नोटिस छपवा कर प्रसिद्ध कर दिया तो भी मैडम ब्लैवस्टकी ने स्वामी जी के पास आकर बात चीत न की, तब स्वामी जी ने भाषण दिया।[1]

इस पर अपने थियोसोफिकल पत्र में लिखते हैं कि हम से बिना कहे सुने स्वामी जी ने व्याख्यान दिया। क्या यह बात उनकी झूठ नही थी। इसमें उनकी चिट्ठियां पढ़ पढ़ाकर सुनाईं कि जिसमें उनका पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार प्रकाश किया और यह कहा कि ये लोग कहते हैं कुछ और, करते हैं कुछ। ऐसा कहते हैं कि हम आर्यावर्त देश की उन्नति करने के लिये आये हैं, परन्तु उन्नति के बदले उनके काम अवनति-कारक विदित होते हैं। देखो स्वामी जी ने अनेकवार इस बात के करने से रोका कि तुम थियोसोफिस्ट समाचार मे भूत, प्रेत पिशाच आदि का होना लिखते हो, यह विद्या के विरुद्ध व असम्भव है और ज। बातें विद्या से विरुद्ध हैं उनको मत लिखो, क्योंकि यह समाचार इस देश और यूरोप में भी जाता है। सब लोग जान जायेंगे कि आर्यावर्त देश में ऐसी ही व्यर्थ बातों के मानने वाले हैं। इस बात को अब तक नही माना और पूर्व पत्रो में लिखा था कि जो आप उपदेश करेंगे सो हम मानेंगे, क्या इस बात को भी कोई सच कर सकता है।

(९) जो पत्र कुक[2] साहब को लिखा था वह करनैल आलकाट साहब ने अपने हाथ से लिखा था और स्वामी जी ने लिखवाया। इस में (Most divine) अर्थात् कौनसा धर्म अधिक सम्बन्ध ईश्वर से रखता है, यह स्वामी जी के अभिप्राय से विरुद्ध लिखा था। जब उनके गये पश्चात् स्वामी जी ने इस पत्र की नकल बचवाई तो अशुद्ध विदित हुआ, फिर इस पर स्वामी जी के पास करनैल साहब आये और तब वह शब्द कटवा दिया अर्थात् उसके स्थान में ऐसा लिखवाया कि जब आप और मुझ से सवाद होगा तब विदित हो जायगा कि कौन धर्म ईश्वर प्रणीत है और कौन सा नहीं। इतने पर भी उन्होंने वैसा ही अशुद्ध छपवाया। क्या ऐसी बात उनको कर्त्तव्य थी ? देखो यह उनकी सोसायटी के नियमो में—"थियोसोफिस्ट अर्थात् ईश्वर के मानने वाले, इस सोसायटी में फीस नही ली जाती, इस धर्म से कोई धर्म उत्तम न कहना न जानना और सदा क्रिश्चियन धर्म के विरुद्ध रहना चाहिये" जो अजन्मा किसी का बनाया नही,

---

१. २८ मार्च सन् १८८२, चैत्र शुक्ला ९, सवत् १९३९, मगलवार, ६ बजे साय व्याख्यान हुआ।

२. इन के नाम का पत्र पूर्णसख्या० २८० पर देखें।

जिसने यह सब बनाया है उस ईश्वर को मानना, दस २ रुपये फीस लेना और जिस धर्म का व्याख्यान देते हैं, उसी को सब से उत्तम कहने लग जाते हैं, क्या यह खुशामदी और भाटो की लीला से कम है ?

अब विशेष लिखना बुद्धिमानो के सामने आवश्यक नहीं। इतने नमूने ही से सब कोई समझ लेंगे। परन्तु इस पत्र के लिखने का यही प्रयोजन है कि उनकी सोसायटी और उनके साथ सम्बन्ध रखने से आर्यावर्त देश और आर्यसमाजों को सिवाय हानि के कुछ भी लाभ नही, क्योकि इन लोगो का अन्तरीय अभिप्राय क्या है ? इस को वे ही जानते होंगे। जो इनका अन्तर ही निष्कपटी होता तो ऐसा पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार क्यो करते ? जब ये भयङ्कर नास्तिक, वाचाल और स्वार्थी मनुष्य हैं तो आर्यावर्त देश और आर्यसमाजस्थ पुरुषो को उचित है कि इनसे सम्बन्ध और देशोन्नति की आशा न रक्खें।

देखो और भी थोड़ा सा उनके प्रपञ्च का नमूना—प्रथम स्वामी जी का नाम लेते थे जब स्वामी जी उनके जाल मे न फसे तो अब कोट हूमी लाल का नाम लेते हैं कि जिसको न किसी ने देखा और न पूर्व सुना था। जो कभी उसके नाम से स्वार्थ सिद्ध न होगा तो गोत्र कोटहूमीसिंह नाम शायद लेंगे। अब कहते हैं कि वह हमारे पास आता, वातें और चमत्कार दिखलाता है। देखो इनका यह फोटोग्राफ (चित्र) है, चिट्ठियां और पुष्प ऊपर से गिरते हैं, खोई हुई वस्तु निकलती हैं इत्यादि सब वाते उनकी झूठ हैं। क्योकि दूसरी को तो जाने दो, परन्तु जब प्रथम करनैल साहब मैडम के साथ बम्बई मे आये थे, तब कुछ वस्त्र आदि की चोरी हुई थी, उसके लिये बहुत सा यत्न पुलिस आदि से कराया था, उनको क्यों नहीं मगा लिया ? जब अपने पदार्थ न मगवा सके तो शिमले की बात को सच्ची कौन विद्वान् मानेगा।

जब स्वामी जी और मैडम से मेरठ मे योग-विषय मे बात हुई थी, तब कहा था कि योगशास्त्र और सांख्य की रीति से मै योग करती हू, तब स्वामी जी ने उनसे उस शास्त्रोक्त योग की रीति पूछी। तब कुछ भी उत्तर न देसकीं, अर्थात् जैसे बाजीगर तमाशा करते हैं उसी प्रकार की इनकी भी बातें हैं, जो योग को थोड़ा भी करते हैं वह भीतर और बाहर से सरलता का व्यवहार करते हैं न कि छल और कपट युक्त व्यवहार। जो योगविद्या को कुछ भी जानते तो ईश्वर को न मानकर भयङ्कर नास्तिक क्यो बन जाते। इन के योगविद्या के न जानने मे ईश्वर का न मानना ही प्रमाण है। इस लिये यही निश्चय है कि इनकी सोसायटी

और उसकी पूर्वापर विरुद्ध बातें विश्वास के योग्य नहीं हैं। इसलिये इनसे पृथक् रहना अति उत्तम है।[1]

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥[2]

---

[१] पत्र (२७१) [३०१]

मन्त्री आर्यसमाज आनन्दित रहो।[3]

थियोसोफिकल सोसायटी के विषय में हम ने यहां पत्र छपवाया है। तुम को भेजते हैं। तुम उन को छोटी २ समाजों में भेज देना। और जब यह पत्र पहुचे तो उस का एक व्याख्यान दे दो कि स्वामी जी ने थियोफिसटों से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया है।

...मार्च मुम्बई

---

१ यह विज्ञापन लग भग ३१ मार्च सन् १८८२ को मुम्बई के ओरियण्टल प्रेस में छपा था। यही विज्ञापन प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४२-८४४ पर छपा है। पण्डित जी ने इसका उर्दू अनुवाद नहीं किया। फारसी अक्षरों में भाषा मूल समान ही दी गई है। प० लेखराम का पाठ अधिक शुद्ध है। आर्यधर्मेन्द्र जीवन में कुछ शब्द बदले हुए प्रतीत होते है। हमें मूल मुद्रित-प्रति प्राप्त नहीं हो सकी।

प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४१ पर लिखा है कि २१ मार्च १८८२ को श्री स्वामी जी ने मेडम और कर्नल के नाम एक पत्र मुम्बई से ही भेजा था।

२ यह विज्ञापन आर्यधर्मेन्द्र-जीवन प्रथम सस्करण, पृष्ठ ३४८ से ३५२ से लिया गया।

३. यह पत्र प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४२ पर छपा है। यह पत्र थियोसोफिसटों की गोलमाल पोलपाल के साथ सब आर्यसमाजों को भेजा गया था। २८ से ३१ मार्च तक किसी तिथी को छपेकर प्रकाशित हुआ।

[१] पत्र (२७२) [३०२]

Bombay 8th April [1882.]

To

Mr. Nand Kishore Singh.[1]

Dear Sir,

I gladly acknowledge the receipt of your letter of the 4th instant. I am very glad to hear that Pandit Kaloo Ram's visit to that place was crowned with success. I am also delighted to hear that arrangements have been made for the prevention of cow slaughter in Jeypor. I very much wished that such a work would well have been done through the interference of a Raja. You have certainly well planned that no kine (or oxen or she buffalœs) would be exported from your Raja The best plan which I would like to recommend in addition to yours, would be the following :— A census so to say, of these animals should be made—that all the eows, etc., of the kingdom should be counted. So also every new animal that is born (or every one that is died) should be reported to the officer-in.charge of the business. This counting ceremony should be made after every six months or so. The reason of this is that in the night time

१. श्री नन्दकिशोरसिंह जी ठाकुर, मोहन मोहल्ला, काशगज, सयुक्त प्रान्त के निवासी थे। वे जयपुर कौंसल के मन्त्री रहे। ऋषि दयानन्द सरस्वती से उन का बहुत प्रेम था। पहले उन्होंने महामहोपाध्याय स्वर्गीय पण्डित शिवदत्त जी की प्रेरणा से हमारे पास पत्रों की प्रतिलिपि भेजी थी। पुनः ४ अकतूबर १९२८ को काशगज से अपने निम्नलिखित पत्र के साथ सब मूलपत्र भेज दिए।

"...स्वामी जी महाराज के जितने पत्र मेरे पास थे, वोह सब इस पत्र के साथ भेजता हु स्वीकार कर बाधित करैं और मेरे योग्य सेवा सर्वदा लिखते रहैं मेरी याद बनी रहै कि मै अब इस ससार में थोडे ही दिनों का मेहमान हु। शुभम् ॥

नन्दकिशोरसिंह"

or so it is not quite impossible for the cattle to be stolen away.

That you have established an "Arya Dharma Sabha" is certainly a very praiseworthy undertaking, you have effected. I hope it will have for its object the welfare of the Aryas and the *Unnati* of their divine and true Vedic religion. I anticipate a great benefit to the country from this Sabha of yours.

The cow-aflair is rapidly proceeding and with utter success. Here in Bombay two thousands of signatures are being taken in favour of the prevention of the slaughter. We mean to banish cow-slaughter not simply from our native states but we mean to apply to the parliament on that act. For this purpose, we mean to collect signatures of two crores of people. It is also hoped that the Rajas also will be pleased to advise each other in this matter Pandit Kaloo Ram ji also deserves a great merit in this respect.

As for us we are doing quite well. The work of Veda Bhashya is going on uninterrupted and successfully. The Arya Samajists of Bombay have bought a large piece of ground for the Samaj building, (for Rs. 6,500) And the necessary fund of money (about 12,000 or 15,000) required for the building is also ready.

We have, separately, sent to you 5 printed forms with respect to the prevention of cow-slaughter which you will soon receive. All the rules and sub-rules of the Arya Samaj should be preserved in the Samaj you have successfully established. In conclusion I mean to bless you all. Be giving me the necessary information in time.

From the 5 papers we have sent you will understand our plan thoroughly. Kindly take the signatures of as many

men in your kingdom as you can and keep them with you. We shall require them before long '

[दयानन्दसरस्वती]'

---

[१२] पत्र (२७३) [३०३]

ओ३म्

लाला मूलराज जी एमे आनन्दित रहो ॥

आपके दो पत्र आये। उत्तर इसीलिये नही भेजा कि इस वात का पत्र कोई मसूदा वालो ने हमारे पास नहीं भेजा। अव उनका पत्र आवेगा तो उस वात का जवाव आप को लिखेंगे। और आप जो उस वावू .....को रखना चाहते है परीक्षा कर ली होगी कि कैसा शील स्वभाव का है। क्योंकि प्राय.... .लोगो का स्वभाव तेज और कठोर भक्ष्याभक्ष्य मे अनाचरी और लोभी भी होते हैं। और राजवाड़ों मे इन वातो का वड़ा विरोध है। अव हम इस विषय का पत्र मसूदा को भेजेंगे। जो हमारे पत्र का उत्तर न आया तो आपके पास कुछ उत्तर न भेजेंगे। पश्चात् जव कभी हम मसूदे को जायगे तव उसका विचार होगा। आप जानते हैं कि रजवाड़ो का लखोटिया ज्ञान है अर्थात् जव तक अग्नि के सामने रहें तव तक पिघले रहते हैं। तथापि हम पत्र भेज कर खवर मगवावेंगे। वड़े भारी शोक की वात है कि आपने अव तक गोकरुणानिधि की अंगरेजी नही की। हम ने निरास होकर यहां मम्वई मे और लोगो से अंगरेजी वनवानी पड़ी। अव आप उसमें कुछ मत वनाना। मालूम होता है कि आपके ऊपर वहुत कुछ वोझ पड़ गया इस कारण ढीले हो गए। आपके पास गोरक्षा और थियोसोफिष्टों के पूर्वापर विरुद्धाचर[ण] करने के विषय का भी पत्र पहुंचा होगा। अव इनसे सम्वन्ध तोड दिया है॥ सवसे हमारा नमस्ते कह दीजियेगा।

मिति वैशाख शुदी ११ शनि सम्वत् १९३९।[3]

मम्वई वालकेश्वर

[द० स०]

---

१ इस पत्र का उर्दू अनुवाद प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८७८,७९ पर छपा है।

२ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

३ ता० २९ एप्रिल सन् १८८२। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[ ] पत्र (२७४) (३०४)

लाला जीवनदास जी आनन्दित रहो ॥

पत्र आपका आया समाचार विदित हुआ। यहा पारसी खत पढ़ने वाले बहुत कम हैं इंग्लिश के पाठक बहुत हैं। इस लिये जब कभी लिखें तब नागरी वा इंगरेजी में लिखें। इस पत्र का मतलब हम ठीक२ नहीं समझते हैं। जितना समझा है उतने का उत्तर लिखा जाता है। (सूद) शब्द का अर्थ जो रसोई करने वालों का है। यही अर्थ अन्यत्र सूत्रादि मे भी है। पाककर्त्ता का कोई दृढ़ निश्चय नही हो सकता क्योकि पाचक सब वर्णों मे होते हैं। अब तो इस से सनातन का व्यवहार ही प्रमाण हो सकता है। जो आप लोगों मे यज्ञोपवीत होता और धरावट अर्थात् विधवा को पुन. दूसरे के घर मे वैठाना नही होता तो शूद्र वर्ण में गणना आप लोगो की नहीं। अब यह विचारना चाहिये कि (सूद) लोग क्षत्रिय हैं अथवा वैश्य। जो राजधर्म राज्य करना आप के पुरुष शौर्यादि गुणयुक्त युद्ध में कौशल वाले हुए हो तो क्षत्रिय और जो वैश्य के व्यापारादि कर्म और गुण हों तो वैश्य समझना चाहिये। अब आप लोग ही इस का निश्चय कर लीजिये।

और जो कभी (सूत) शब्द विगड़ के सूद हो गया हो तो आप अवश्य क्षत्रिय वर्ण हैं। हम ने सुना है कि आज कल बाबू नवीनचन्द्रराय लाहौर में हैं और विधवा विवाह मे प्रयत्न कर रहे हैं और आर्यसमाज लाहौर भी इस बात में बाबू जी से समत हो गया है। ये ब्रह्मसमाजी लोग भीतर और तथा बाहिर=और बात रखते हैं। इन का यह भी मतलब होता है कि जैसे हम लोग कृश्चिनो के तुल्य अपमानित हुए हैं वैसे आर्यसमाज भी हो जाय परन्तु जो अक्षतयोनि अर्थात् जिस का पुरुष के साथ कभी सयोग न हुआ हो उस कन्या के पुनर्विवाह करने मे कुछ दोष नही जिस का पुरुष से समेल हुआ हो उस का नियोग करने में अपराध नहीं। इस से विपरीत करने से शास्त्र से विरुद्ध होने से अब अथवा पश्चात् बहुत कष्ट भोगना पड़ेगा अर्थात् वर्ण बाह्य होना होवे तो भी कुछ सशय नही। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा।[1]

---

१. यह पत्र महा० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ४५८-४५९ पर छपा है। उन्होंने पत्र की प्रतिलिपि से ही छापा था। प्रतिलिपि पर हस्ताक्षर तथा तिथि नहीं थी। हमारा अनुमान है कि पत्र मुम्बई से भेजा गया था। वहीं "फारसी खत पढने वाले बहुत कम" थे।

[१३] पत्र (२७९) [३०९]

ओ३म्

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुह्मा[रा] आया। समाचार मालूम हुए। थियोसोफिष्टों की गोलमाल पोलपाल पत्र के छपवाने [मे] कुछ चिंता नहीं। क्योंकि जो २ उसमे बातें लिखी है वे सब सच्ची है। अवश्य छपवा दीजिये। जो लाला रामशरणदास ने लिखा है वह ठीक है। छपवाना ही चाहिये। उसमें जो कुछ लिखा गया है वह विचार पूर्वक सच्ची बातें लिखी हैं। जो ऐसा न हो तो हम यहां व्याख्यान क्यो देते। और इसको क्यों छपवाते। छपवाने मे कुछ हानि नहीं किन्तु लाभ ही हैं। जो यह बात गोलमाल रक्खी जाती तो आर्यावर्त्त मे नास्तिक मत फैल जाता। अपने साथ इनने मेल भी इसी प्रयोजन से किया था कि हमारा प्रवेश इस देश में हो जाय। इतना इनमे अच्छा गुण है कि वेद की बड़ाई और ईसाइयो का खण्डन करते हैं। यह भी जो स्थिर रहै तो। जो यह भी कपट हो तो क्या। जो इनका प्रसिद्धि मे व्यवहार हैं वह भीतर का नहीं। इनके सम्बन्ध से जो कोई बुरी बात निकलती तो बहुत धक्का आर्य्यसमाज को पहुंचता। और इन लोगो ने कई एक भोले भाले आर्य्यसमाजस्थों को बहका कर अपने सभासद कर लिये। और दश २ रुपये फी लिये। अब इनकी कपटरूपी बातों के प्रसिद्धि होने पर उनकी आंख खुली कि ओहो ये ऐसे निकले अर्थात् विचारों को पश्चात्ताप करना पड़ा। ऐसे ही अन्य लोगों को भी जोकि आर्य्यसमाज मे नहीं थे। यही उन लगो के मुख से बात निकली कि वृथा ही हमारे दश २ रुपये फी देने मे गये ॥ सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।[1]

मई ता० १ सन् १८८२ ई०।[2]

[द० स०]

(मम्बई वालकेश्वर गोशाला)

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज फरूखाबाद में है। उसकी प्रतिलिपि म० मामराज ने दिसम्बर सन् १९२६ में की।

२ फरूखाबाद का इतिहास पृ० १९१ पर भी छपा है।

[१] पत्र (२७६) [३०६]

ओ३म्

पण्डित दयाराम आनन्दित रहो।

तुमने यह अंग्रेजी चिट्ठी यहां क्यों भेजी जो कि थियोसोफिष्ट के विषय की थी। और तुमने लिखा है कि मैं भूलगया इसलिये दूसरा रजिष्टर अभी किया। यह क्या बात है? और वह रजष्टर अभी तक नही पहुंचा। और आज तक वेद भाष्य और मासिक हिसाब नहीं पहुंचा और यहां मम्बई में सर्वत्र आगया यह क्या कारण है। भीमसेन से कह देना कि भाषा के पत्र जल्दी भेजदे। सीसा सुर्मा स्याही तुम्हारे पास पहुंची वा नही? पहुंच गये हो तो हर्फ ढालके जल्दी काम चलाओ। आर्य पत्र का नोटिस भेजते हैं टाइटल पेज पर छापदो। जितने पत्रे भीमसेन के पास भेजे थे उन सब की भाषा बन चुकी वा नही।

मिति जेष्ट वदी ६ सम्वत १९३९।[1]

[द० स०]

---

[६] पत्र (२७७) [३०७]

ओ३म्

महाशय रूपसिंह जी योग्य इत ब्रह्मचारी रामानन्द का अनेकविध शुभाशीर्वाद विदित हो। आप का कुशलपत्र आया समाचार विदित हुए।

आपने जो सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि के विषय में लिखा परन्तु यहा मेरे पास न होने से भेजने में अशक्य हू। जो छापेखाने प्रयाग में होती तो भी मैनेजर दयाराम को लिख कर भिजवा देता और जो उस पुरुष को अत्यावश्यक हो तो आप मेरठ आर्य्यसमाज प्रधान लाला रामशरणदास जी के पास दाम भेज कर पुस्तक मगवा लीजिये। अनुमान है कि वहां से पुस्तक आप को अवश्य मिल जायगी। जो आपने गोरक्षार्थ पत्र के बावत मे लिखा सो हम ने जिस समय आपके पास पत्र भेजा था उसी समय लाहोरादि स्थानो मे पत्र भेज दिये थे। ऐसा आर्य्यावर्त्त के भीतर कोई देश बचा हो कि जहां दो चार स्थानों में पत्र न भेजे हों। और जहा २ की यादगारी आती जाती है वहां २ अभी भेजते जाते हैं। इस में

---

१ ९ मई १८८२। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

कारण यह हुआ है कि डांक वालो ने अनर्थ किया है। जैसे इस विषय मे आप का पत्र आया ऐसे ही कई एक महाशयो के पत्र आये कि पत्र पहुंचा परन्तु गोरक्षार्थ का मेमोरियल नही मिला। पुनः उन महाशयो के पास भेजना पड़ा। ईश्वर से ऐसी प्रार्थना करता हूं कि इस महोपकार कार्य करने मे आप को अत्यन्त सहायता मिले और जो पत्रो की आपको आवश्यकता पड़े तो लिखना भेज दूंगा। मैं एक बात आप से कहता हूं कि जो आप प्रसन्नता से स्वीकार करें तो। क्या जैसे आप पहिले घूमने के वास्ते दो मास की छुट्टी ले कर आये थं ऐसे ही आप पुन· दो एक मास की छुट्टी लेकर पजाव हाथा, पटियाला और काश्मीर आदि अच्छे २ राजस्थानो मे गोवध के नुकसान व्याख्यान द्वारा विदित कर, वड़े २ प्रधान राज पुरुष तथा राजा महाराजो की सही करावें तो वस आप आर्य्यावर्त्त मे सर्वोत्तम प्रतिष्ठा और महापुण्य के भागी होंगे। यह लेख मैंने आपकी योग्यता समझ के लिखा। आशा है कि आप अपनी योग्यता को सफल करेंगे॥ किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु॥ अव १५ व २० दिन मे श्रीयुत स्वामी जी यात्रा करेंगे। विशेष समाचार फिर लिखूगा॥

आपका अभिवादन परम गुरु स्वामी जी को विदित कर दिया। श्री स्वामी का शुभाशीर्वाद आपको विदित हो॥ भद्रमस्तु॥

ज्येष्ठ वदी ९ शुक्र सम्वत् १९३८॥[1]

ब्रह्मचारी रामानन्द

---

[४] पत्र (२७८) [३०८]

ओ३म्

पडित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो!

विदित हो कि सीसा स्याही आदि दो तीन दिन हुए हैं रमाना हो गये। आज बिल्टी भी रमाना हो गई। उनसे जैसे अक्षर आपको चाहियें वैसे ढलवा कर जल्दी काम चलाईये। श्याही वहुत सी भेजी है तुमको आठ दश महीने को बहुत होगी। जो तुमने ज्वालाप्रसाद के विषय मे लिखा सो ठीक है। उसको बुलाकर काम सिखलादो और भीमसेन से कहो कि व्याकरण की पुस्तक शीघ्र लिखकर

---

१. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। सवत् १९३८ गुजराती है। सवत् १९३९ चाहिए। १२ मई १८८२। परन्तु उस दिन ज्येष्ट वदी १० है। इस पत्र का लिफाफा १६ मई को कोहाट पहुचा। उस पर ऐसी ही मोहर है।

शुद्ध कर तैयार कर दे। लाहोर ८। ३। १८८२ ई० निम्नलिखित पुस्तक लाला वल्लभदास के पास से वैदिक यन्त्रालय प्रयाग मे पहुंची। ता० १९ फरवरी सन् १८८१ को सन्दूक नग ३ में पुस्तकें वन्द करके लाहोर से मारफत रेल रवाना किया। महसूल वेरग था। उसमे इस भांति पुस्तकें भेजी गई—

३८ जिल्द आर्याभिविनय
३० ,, वेदविरुद्धमतखडन
३१ ,, शिक्षापत्रीध्वान्तनि०
१० ,, वेदान्तध्वान्तिनिवारण
१३११ ,, सध्या भाष्य अर्थात् पच०
२५१ ,, पोपलीला
१३६ ,, जालन्धर की वहस
१९ ,, वेदभाष्य भूमिका इस भांति अक
० २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १३ १४ १५-१६
३ १ १ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १ २
१८५ ,, ऋग्वेद अक १ २ ३ ४ ५ ६
२८ ३० ३२ ३१ ३१ ३३
१८९ ,, यजुर्वेद अक १ २ ३ ४ ५ ६
३१ ३३ २८ ३१ ३३ ३३
३४३५ ,, आर्योद्देश्य रत्नमाला
२८ ,, सत्यार्थप्रकाश
२० ,, सत्यासत्य विचार
और वहिया हिसाव की और हिसाव

ता० १३ मई सन् १८८२ ई०

यजुर्वेद के भाषा के पत्रे यजुर्वेद अक गोकरुणानिधी और मासिक हिसाब पहुचा।

[दयानन्द सरस्वती][1]

---

१ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

[८] पत्र (२७९) [३०९]

ओ३म्

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो ।

पत्र आप का आया, समाचार विदित हुआ । हम वहुत आनद मे हैं । आशा है कि आप लोग भी आनद मे होगे । यहां से हमारा विचार ज्येष्ठ शुदी पौर्णमासी के पश्चात् और आषाढ वदी ३० के पूर्व २ इन्दोर की ओर यात्रा करने का है । क्योकि महाराजे इन्दोर ने मुझको बुलाने इन्दोर से तार भेजा था । इस समय वे पहाड़ को गये । १५ वा २० दिन मे इन्दोर मे आ जायगे । तव तक हम भी पहुंचेंगे । वहां से आंब भेजने की आवश्यकता नही है । क्योकि यहां मम्वई मे आपुस और पारी सञ्ज्ञक आंब वहुत उत्तम होते है । जो न होते तो वहां से आना अवश्य होता । यहां डेढ महीने से आंव खाया करते हैं । आज आंवरस भी बहुत सा बना था ।

लाला कालीचरण से कह दीजियेगा कि अगले महीने मे भा० सु० प्र० का नोटिस वेदभाष्य पर छप जायगा ॥

सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा ।

ज्येष्ठ शुदी ६ मगल सम्वत् १६३९ ।[1]

[द० स०] (मम्वई)[2]

---

[२] पत्र (२८०) [३१०]

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा आया, समाचार विदित हुए । जो वहां शास्त्रार्थ विषय में लिखा सो आप निश्चय जानो वे हम से शास्त्रार्थ सन्मुख आके कभी न करेंगे । देखो दो तीन बार हम जयपुर मे आये और प्रसिद्धि भी कर दी कि जिस पंडित का जिस २ विषय मे शास्त्रार्थ करना हो सो सन्मुख आकर करे । परन्तु कोई भी न आया न किसी ने शास्त्रार्थ किया । अब रहा वहां आने का । उस की यह बात है कि जो श्रीमान् महाराजा जी के हस्ताक्षर का पत्र आवेगा तो आना हो सकता है अथवा वहां जो सब मे अधिक विद्वान् हो उस का रेल खर्च देकर और दो एक

---

१ २३ मई सन् १८८२ ।

२. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है । इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् २६ में म० मामराज ने की । फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१९ पर भी छपा है ।

अच्छे उत्तम पुरुष पक्षपात रहित हो साक्षी के वास्ते जहां हम हों वहां लेकर चले आइये अथवा जहां होंगे वहां से ही अच्छे योग्य पुरुषो को साक्षी कर के जो २ शास्त्रार्थ की बातें होगी वे सब लिखी जायगी। पुन: पत्र द्वारा श्रीमान् महाराजा जी को विदित कर दिई जायगी और छपवा कर भी प्रसिद्ध भी होंगी। जिससे सब लोगों को सत्यासत्य विदित हो जाय। यह राजाओं का मुख्य धर्म है कि शास्त्रार्थ कर कराके सत्यासत्य का निश्चय करना औरों को कराना। देखो वड़े शोक की बात है कि जयपुर मे अनेक गिरजाघर वन गये और पादरी लोग राम कृष्णादि भद्र पुरुषो की निरन्तर निन्दा करते हैं और सैकड़ो को बहका कर भ्रष्ट कर रहे हैं। उनके हटाने को पडित वा राजा आदि राजपुरुषों ने कुछ भी प्रयत्न न किया। और जो आप लोगों ने सत्य वेद धर्म की उन्नति होने के वास्ते समाज स्थापित किया है उसकी उन्नति होने में पडित आदि विघ्नकर्त्ता होते हैं। इतने ही से तुम समझ लो कि ये क्या शास्त्रार्थ करेंगे सिवाय परोक्ष में गाल बजाने के। जो कोई तुम से शास्त्रार्थ करने की बात कहे उसको तुम इतना ही उत्तर दो कि लो खर्च जाने आने का हम देते हैं, चलो हमारे साथ स्वामी जी के पास शास्त्रार्थ करने को, अथवा तुम राजा जी से प्रवन्ध कराओ स्वामी जी के बुलाने के वास्ते हमारे बुलाने से तो आ नही सकते। किसी प्रधान पुरुष वा रा[जा] जी की समति से बुलाइये और शास्त्र[ार्थ] कर सत्य का प्रतिपादन और असत्य का खडन कीजिये। हमतो इसमें वहुत प्रसन्न हैं जो कोई स्वामी से शास्त्रार्थ करें तो, क्योंकि हमको भी मालूम हो जायगा कि क्या सत्य है और क्या झूंठ॥

आप भद्र पुरुष लोग इस वेदोक्त सत्यधर्म के विषय मे उत्साह पूर्वक दृढ़ निश्चित रहेंगे तो इस समाज की उन्नति करके ससार को फायदा पहुंचा सकोगे अन्यथा वहां उन्नति को प्राप्त हो कर फल प्राप्ति पर्य्यन्त पहुचना कठिन है। क्योंकि वहां वड़े २ धूर्त लोग हैं। तथापि जो मूर्ख लोग अपनी बुराई को नहीं छोडते तो बुद्धिमान् धर्मात्मा लोग अपनी धर्मात्मता को क्यों छोड़ कर दु:ख सागर मे पड़ें। देखिये—

(निंदन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मी: समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगातरे वा न्याय्यात्पथ: प्रविचलति पद न धीरा.)॥

यह कवि का श्लोक है विचार लीजिये।

मि० ज्यै० शु० १४ बुध स० १९३९।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। मुम्बई से जयपुर को भेजा गया। श्री स्वामी जी ने लाल रग से कहीं २ शोधा है। ३१ मई १८८२।

[३] गुजराती पत्र (२८१) [३११]

ओ३म्

आर्यसमाज मुबई
ता० ५मी जून १८८२

मित्रवर ठाकोरदास मूलराज जोग मुबई

यत आपे जे जेठ सूद १५ ने दीने श्रीमत पडित दयानन्द सरस्वती स्वामी ने पोस्ट कार्ड लख्यो हतो तेना प्रत्युत्तरमां जणाववामां आवेछे के जो कोई आपना मतनो ज्ञाता तथा धर्मोपदेशक विद्वान् प्रतिज्ञा पूर्वक नियम थी शास्त्रार्थ करवाने तत्पर होय तो स्वामी जी ने शास्त्रार्थ करवाने कोई पण प्रकारे अडचण न थी, मात्र व्यवस्था घटती रेहेवी जोइये, तेथी आपनी जो सेत्यासत्य निर्णय करावनी इच्छा होय तो आपना मतनो कोई विद्वान् माननीय धर्मोपदेशक साथे नक्की करी महने लखी जणावशो तों हमे तूर्त घटती व्यवस्था करी आपने विदित करशुं, परंतु ए बाबत ढील न थवी जोइए केम के स्वामी जी थोडा दाहाडामां जनार छेत गयवाद सघलो श्रम व्यर्थ जशे तेथी त्रण दिवसनी अदर कृपाकरी लखी मोकलशो अने जो ए प्रकारे करवानी आपनी इच्छा न होय तो हमारे आपने दलगिरी साथे लखवु पडेछे के स्वामी जी जे एने मली खुलासो लेवा आवेछे तेनी सांजना ५ थी ९ वागता सुधी प्रतिदिन मुलाकात लेयछे, त्यां जो आप जवा चाहो तो कृपाकरी महने लखी जणावशो तो हुं पणते वखते हाजर रहीश, हालतो ओज विनति।[1]

हुं छु आपनो सेवक
सेवकलाल करसनदास
मंत्री आर्यसमाज मुबई
जगजीवन कीका स्ट्रीट घर नबर ६१

---

[१४] पत्र (२८२) [३१२]

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो।

फर्रुखाबाद

विदित हो कि प्रयाग में दयाराम मैंनेजर हैं। उसने अकेले से काम बहुत होने के कारण से ठीक नही चल सकता। इस लिये पडत सुन्दरलाल जी लिखते हैं

---

१ दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका प्रथम भाग पृ० ४०-४१।

कि द० रा० के पास एक सहायक और रखना चाहिये। इस लिये आपको लिखते हैं कि एक प्रामाणिक पुरुष तीन भाषा जानने वाला कि जिस का आप को बड़ा विश्वास हो वहा भेजें। ऐसा पुरुष तलाश करके आप हमको और पण्डित सुन्दरलाल जी को भी [इस] विषय में लिखें। उसका मासिक १५) रु० वा २०) रु० वा जितना आप योग्य समझें करें। परन्तु काम बहुत ठीक होना चाहिये। पण्डित सुन्दरलाल जी अन्डमान एक मास तक ब्रह्मा के मुल्क को जाने वाले हैं। इसलिये उनके सामने ही उस पुरुष का वहां पहुच जाना चाहिये। वह पुरुष सदैव के लिये वहां रहना चाहिए। यह नहीं कि थोड़े दिन के लिये रहे। आपका समाज प्रयाग से निकट है। इस लिये आप लोगों मे से कोइ २ मा[स ह]ै मास से प्रयाग जाकर देख आया करें तो ठीक प्रवन्ध रहे। परन्तु वहा जाना प० सुन्दरलाल जी न हो तव जाना चाहिये। और जव वे हों तव कुच्छ जरूरत नही। सव से हमारा अशीर्वाद कहना। पत्र का उत्तर शीघ्र देना चाहिये।[1]

हस्ताक्षर

ता० ९ जून स० १८८२। [दयानन्द सरस्वती][2]

मम्बई वालकेश्वर

---

[५] पत्र (२८३) [३१३]

ओ३म्

पण्डित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो।

प्रयाग

विदित हो कि हम यहा से ता० १४ जून वुधवार दिन सायकाल यहा से रेल में बैठ कर बृहस्पति के दिन अनुमान १० वजे खडवे पहुंचेंगे। अव पीछे पत्रि आदि खडवे को भेजा करें। दूसरे मेनेजर के लिये हमने फरूखावाद को लिख

---

१. पत्र के नीचे कुछ पंक्तिया समर्थदानजी ने अपनी ओर से लिख दी है।

२. मूलपत्र आर्यसमाज फरूखावाद में है। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की। फरूखावाद का इतिहास पृ० १९२ पर भी कुछ पठा-भेद के साथ छपा है।

दिया है। उत्तर जैसा आवेगा वैसा आपको लिखेंगे। 'अन्यार्थ' को छपे बहुत दिन होगये है परन्तु उसका विज्ञापन वेदभाष्य [पर] अभी तक नहीं दिया गया है सो यह दयाराम की कितनी भूल है। अब तत्काल दिलवाओ। हमने भीमसेन के शोधे भये पुस्तक देखे तो बहुत भूल निकलती है। इससे ज्ञात होता है कि वह बड़ा गाफिल है। अब पीछे आप उसका मासिक पूरा प्रतिमास न दिया करें कुछ न्यून दिया करें अर्थात् दश वीश रुपये अपने मे उसके रखने चाहिये। जिससे कि वह काम अच्छा किया करे। नीचे लिखे नाम के छः रुपयो की रसीद छाप देना गत वर्ष की:—

कवि कृश्नाराम इच्छाराम ग्राम "खरसाज" जिला सूरत ६)

नीचे लिखे धर्मार्थ छाप दो।

चोधरी जालिमसिंह ग्राम रुपधनी जिला एटा २०)

वोहरा अमर चन्द ग्राम रुपधनी जिला एटा २०)

पत्रादि सब खडवे को भेजना।

हस्ताक्षर

ता० ११ जून स० १८८२।[1] [दयानन्द सरस्वती]

मुम्बई वालकेश्वर

आज कल वर्षा यहां अत्यन्त होती है। जो वक्त तारीख को चलना न हुआ तो दूसरा पत्र बुधवार के दिन आपको देंगे।[2]

---

[१९] पत्र (२८४) [३१४]

ओ३म

लाला कालीचरण जी मत्र[ी] व रईस आनन्दित रहो।

विदित हो कि एक पत्र [आप] को पहले दिया था। उसमे प्रयाग मे छापैखाने मे मैनेजर रखने के लिए आप को लिखा था। परन्तु पीछे से यह नि[श्च]य

---

१ मूलपत्र परोपकारिणि सभा अजमेर में सुरक्षित है। उस तिथि को शनिवार था।

२ इस पत्र का कुछ भाग दयानन्द ग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण पृ० १८ पर भी छपा है। प्रतीत होता है श्री स्वामी जी १४ जून बुधवार को मुम्बई से नही चले। ला० ठाकुरदास ने ठीक १३ जून को उन्हें नोटिस दिलवाया। उसी का उत्तर १९ को श्री स्वामी जी के वकीलों ने दिया। वह उत्तर पूर्ण-सख्या ३१७ पर देखें।

ठहरा कि वहा समर्थदान को भेजना चाहिये। समर्थदान यहां हैं। सो यहा से प्रयाग को चले जायंगे। ये प्रयाग को मास डेढ मास तक जा[वेंगे]। इनका यह काम किया हुआ है। इनको इस काम में तजरवा हो चुका है। ये काम अच्छा चलावेंगे। इस लिये इनसे पक्काई करली है। सो अ[ब] आप मैनेजर के तलाश करने मे परिश्रम न करें। जो इन से पक्काई न होती तो आप को परिश्रम करना पड़ता।

आर्य्यदर्पण मे जो जगन्नाथदास ने लिखा है उसका उत्तर आप बहुत उत्तम रीति से लिखें। कुछ दबना मत। खूब टुकड़े टुकड़े उड़ादो। ऐसा न हो[गा] तो वे लोग बंध न होंगे। वह लेख केवल जगन्नाथदास का ही नहीं है। उसमें इन्द्रमणी को भी शामिल समझना चाहिये। [मु]सलमानो के मुकद्दमे मे सहायार्थ रुपया आया था उसमे इन्द्रमणि ने क्या २ लीला की। सो तो आपको [वि]दित ही है। फिर ऐसे का क्या लिहाज रखना। बराबर लिखना चाहिये।[1]

हस्ताक्षर

ता० १४ जून १८८२।[2] दयानन्द सरस्वती
मुंबई

---

[२] पत्र (२८९) [३१९]

[प० दयाराम प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय अथवा पं० सुन्दरलाल के नाम]

जो कोई नोट वा विज्ञापन शास्त्रार्थ खण्डन मण्डन और धर्माधर्म विषयो का ज्ञापक हो वह हम को दिखलाये विना कभी न छापना चाहिये। यह मेरे पास भेजा सो बहुत अच्छा किया। जो दिखलाये विना छाप देते तो हम को इसके समाधान में बहुत श्रम करना पड़ता। भीमसेन जो व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ा है उतना ही उसका पाण्डित्य है, अन्यत्र यह बालक है। इस को इस बात की

---

१ मूलपत्र आ० स० फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि १८ दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर कुछ पाठभेद के साथ छपा है।

२ मूलपत्र के जीर्ण होने के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

खबर भी नहीं है कि इस लेख से क्या क्या कहां विरोध होकर क्या २ विपरीत परिणाम होंगे। इसलिये यह नोट जैसा शोध के भेजा है वैसा ही छपवाना। किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु।[१]

---

[१६] पत्र (२८६) [३१६]

ओ[३म्]

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो।

लेखनीय यह है कि लाला रामचरण जी के पुत्र के देहान्त होने का हमको समाचार मिला। सो यह गृहस्थ लोगो को वास्तव मे शोक का कारण है। परन्तु आप लो[ग] बुद्धिमान् हैं सो धैर्य्यावलम्बन करें। क्योंकि विद्या ऐसे शोक के समय में धैर्य्यावलम्बन कराने वाली है। सुख मे तो मूर्ख और विद्वान् स[भी] आनन्दित रहा करते हैं। परन्तु दुःख मे तो विद्वान् ही धैर्य्यावलम्बन करके शोकाकुल नही होते। विद्या का फल सच पूछो तो यही है। अब आप लोग सब घर के धीरजता धारण करके शोक निवृत्त करें। क्योंकि शोकाकुल रहने से अनेक प्रकार की हानियां होती हैं।

जगन्नाथदास की प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आपके पास भेज चुके हैं। उसके भेजे पीछे भा० सु० प्र० के दो अक निकल चुके हैं। परन्तु आप ने

---

१. म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ५३ पर छपा है। जिस प्रूफ के नीचे श्री स्वामी जी का यह लेख था, उस के सम्वन्ध में महात्मा मुंशीरामजी का निम्नलिखित टिप्पण है—

"यह उस लेखका प्रूफ है जो पण्डित भीमसेन जी छपवाना चाहते थे जिसके कई स्थलों को काट कर तथा कई स्थलों में नई पक्तिया जोड कर श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने शुद्ध किया है। यह शुद्ध हुआ लेख आगे पृ० ५४ पर छपा है। और यही शुद्ध हुआ लेख किञ्चित परिवर्तनों सहित वेदाङ्गप्रकाश के स्त्रैणताद्धित नाम भाग के प्रतिकृत्यधिकार के पृ० १४४ में छपा है। शोक है कि श्री स्वामी जी महाराज के शुद्ध किए हुए में भी परिवर्तन किया गया! न मालूम किसने यह परिवर्तन किया।

उक्त प्रूफ के पृष्ठ पर यह पैरा [अर्थात् पूर्णसख्या ३१५ के अन्तर्गत छपा हुआ मूल लेख] लिखा हुआ है जो श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का है जो भविष्यत के लिये प्रवन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय को सावधान करता है।"

उसको छापा नही। अब आप उसको शीघ्र ही छाप दें। क्योकि ऐसे काम में ढील करने से बड़ी हानि होती है। क्योंकि पाखण्डिओ को तो होसला होता जाता है और आर्य्य लोगो के चित्तों में भ्रम का सचार होने लगता है। इस लिये आप अब इसके छापने मे ढील न करें।

आपको विदित ही है कि देखो इन्द्रमणि ने उपकार का कैसा प्रत्युपकार किया है। अब देखो तो ऐसे २ नामांकित पुरुषों की ही यह दशा है तो अन्य साधारण की क्या कथा है।

हस्ताक्षर

ता० १६ जून
स० १८८२

दयानन्दसरस्वती
मुम्बई

---

[४] पत्र (२८७) [३१७]

Bombay 19th June 1882

To

Messrs Smith & Frere,

Attorneys for Lala Thakar Das Moolraj ,

Dear Sir,

Your letter of the 13th instant addressed to Pandit Dayanand Suruswatee Swami has been placed in our hands and in reply we are instructed to state that the Slokes referred to by you are believed to be by our client extracts from works published by persons of great reputation among the Jains and to contain the principles of tenets of the Jain religion as propounded by several Jain philosophers

These philosophers have no doubt differed from one another and our client in these extracts had no other intention than that of giving a general idea of the tenets of the Jain religion as propounded by their several philosophers

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित हैं। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर भी थोडे से पाठभेद के साथ छपा है। मूलपत्र के जीर्ण होने के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

Our client emphatically denies that in making these extracts he had any intention of wounding and offending the religious feelings of any portion of the followers of the Jain religion

Our client is actuated by no other desire than to seek the truth and if your client or any other person satisfies our client that any portion of the extracts is improperly taken or is opposed to the principles of the Jain religion our client will have no objection whatever to have such portions expunged from the 2nd edition which the publisher Raja Jaykrishnadas, C.S I., of Mooradabad intends to publish

Our client desires yours to refer to the notice published at the commencement of the 'Satyarth Prakash' by the publisher in which he states the objeets of the publication and accepts the whole responsibility in respect of the book. The further sale and publication of the book are entirely under the control of the publisher [1]

Yours truly,
(Signed) PAYNE & GILBERT.

---

[१७] पत्र (२८८) [३१८]

लाला[2] कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम सुख पूर्वक मम्बई से खडुआ मे आगये हैं। यहां रा० रा० भाऊ दादा जी के बागीचे मे ठहरे हैं।[2] हमने दश महीने का पडितो के जमा खर्च का हिसाब लाला मोहन लाल को दे दिया है। और २००) रुपये उनसे पडितो के मध्ये लिये हैं। १४) रुपये पिछले बाकी रहे थे। सब मिलके २१४) रुपये हुए। उनमे से १६०) रुपये पंडितो के मध्ये खर्च हुए। शेष ५४) रुपये रहे सो वहां

---

१. दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका, प्रथम भाग, पृ० ४४-४६ पर मुद्रित। श्री स्वामी जी १४ जून को मुम्बई से नहीं चले। इसी नोटिसरूपी उत्तर दिलाने के कारण पीछे चले।

२. २—२ तक का अश प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर उद्धृत है।

लाला निर्भयराम जी के पास जमा खर्च करा देना। अनुमान है कि वह कागज भी आप के पास पहुंच गया होगा। आर्य्य प्रश्नोत्तरी को शांति के साथ इस महीने में छाप के प्रसिद्ध कर देना। उस ही के साथ आर्य्यदर्पण का उत्तर भी छाप देना॥ सब से आशीर्वाद कह देना॥ शुभमिति।

ता० २५ जून सन् १८८२ ई०।[1]

[दयानन्द सरस्वती] (खड्डुआ)

---

[१] पत्रसूचना (२८९) [३१९]

३ जुलाई १८८२ खण्डुआ।[2]

---

[२७] पत्र (२९०) [३२०]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो।

विदित हो कि पंडित सुन्दरलाल जी जो अपनी ओर से रामनारायण वा तुम्हारे साथ प्रबन्ध कर जायेंगे तो अच्छा होगा अथवा जैसी उनकी इच्छा हो चाहे पत्र द्वारा छापा खाने का प्रबन्ध रखें वा किसी मनुष्य के द्वारा। जब तुमको अपने हाथ से कुंजी सोंप गये तो निश्चय होता है कि तुम्हारा विश्वास उनको है। अच्छा तुम जानो वे जानें। उनकी ओर से रामनारायण सहायक रहेगा। तुम अपनी ओर से चेतन रहना। और जो कुछ वहां विशेष व्यवस्था होगी उसको विशेश्वरसिंह जना देगा। जो इस समय भीमसेन वा ज्वालादत्त को सोंप जाते तो उन से कभी प्रबन्ध होना सम्भव नहीं था। अच्छा हुआ जो तुमको सोंप गये। अनुमान है कि जो दयाराम को लेजायेंगे तो २ वा ३ महीने में दयाराम लौट आवेगा। पंडित जी

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। लिफाफे पर २६ जून की मोहर है। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९५ पर भी छपा है। हम ने सारा पत्र मूलपत्र से छापा है।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर इतनी ही सूचना है। पत्र पूर्ण संख्या ३१४ (जून १४) में लिखा है कि मुंशी समर्थदान को वैदिक प्रेस प्रयाग में भेजने की पक्काई की। यह पत्र प्रयाग को भेजा गया।

कहते हैं कि पत्र द्वारा हम यथायोग प्रवन्ध रखेंगे। यह भी ठीक है। जो तुमको प्रधान करना चाहते हैं ठीक है तुम प्रधान हो जाओ। वहां वेदभाष्य के डेढ़ अक के ऋग्वेद के पत्रे वहां हैं क्योंकि हम यहां मन्त्र और पत्रो की संख्या रखते हैं। केवल बैठा रहने के वास्ते जल्दी २ छाप कर पत्रो का तकादा किया करता है। और व्याकरण के पुस्तक अभी तक तैयार नही किये। अब भीमसैन से कह देना कि १० दिन के पश्चात् तुझको स्वामी जी के पास रतलाम मे जाना होगा। चाहे घर होकर जाओ चाहे इधर ही से। क्योंकि जो हमारे पास रतलाम मे आवेगा तो फिर उदयपुर की ओर जाने मे उसको सुवीता पड़ेगा अन्यथा २० कोश पैदल आना पड़ेगा। और उधर भीलो का भी भय है। अव वहां दो पडित का रहना उचित नही। जो वहां रहेगा उसको यथेष्ट प्रूफ सोधना और ५ मत्रों से कम भाषा कभी न बनेगी और जो अधिक वनावेगा उसकी योग्यता विदित होगी। अव जव तक हमारी दूसरी चिट्ठी न आवे तव तक चिट्ठी पत्र न भेजना।

ता० ३ जुलाई सन् १८८२ [दयानन्द सरस्वती]
श्रावण कृष्णा २ चन्द्रवार स० १९३९।[1]

---

[२] पत्र (२९१) [३२१]

ओ३म्

स्वास्ति श्रीमदनवद्यगुणगणाऽलङ्कृतेभ्य. श्रीयुतमहाराजाधिराजभ्यो धीरवीर श्री नाहरसिंहवर्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमा शमत्रास्ति तत्र भवदीय च नित्यमेधमानमाशासे। श्रीमान महाशयो का गोकरुणा युक्त रजष्ट्री पत्र खडुवा मे पहुंचा। देख कर अति आनद प्राप्त हुआ। धन्य है महाशयो को कि जिनका तन मन धन सब परोपकारार्थ है। आप के सदृश आप ही हैं। महाशयो के सामने विशेष लिखना आवश्यक नही जो कि स्वल्प लेख से वहुत जान लेते हैं। वेदभाष्य के कार्य रहने से श्रीमानों के पास पत्र न भेज सका, परन्तु अब जहां विशेष स्थिरता होगी वहां से पत्र द्वारा विदित किया करूगा। जब इधर की ओर आना होगा तब प्रथम ही श्रीमानो को विदित कर दिया जायगा। अब मैं मुम्बई से चल कर खडुआ, खंडुआ से कल सायंकाल इन्दौर में, अब इन्दौर से कल सायंकाल की गाड़ी में बैठ कर रतलाम

---

१ मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

में पहुंच[1] पश्चात् वहा से उदयपुर जाने का विचार है। उसी लिये कि वेद विद्यालयादि उत्तम कार्यों का प्रवन्ध हो जाय। श्रीमान् महाराजाधिराज जी जो उचित समझें इस वात पर श्रीमान् आर्य्यकुल दिवाकर महाशयो को लिखें। जिससे पूर्वोक्त कार्य्य शीघ्र ही सिद्ध हो। जो कुछ चित्तौड गढ़ में अच्छी वातें हुई हैं वे सव महाराजाधिराजो के प्रयत्न का फल है। एक पोप लीला का पुस्तक आज भेजा है और वेदाङ्ग प्रकाशादि पुस्तक मगवाने का पता यह है (प्रवन्धकर्ता वैदिक यंत्रालय प्रयाग) ऐसा लिख कर भेज दीजिये अवश्य पत्र पहुच जायगा। जो २ पुस्तक मगवावेंगे वे २ सव उचित समय मे पहुचते रहेंगे। जव मैं उदयपुर मे पहुचूगा तव श्रीमान् महाराजाधिराज जी को समाचार विदित कर दूगा। सव सज्जनो से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। मिति श्रावण वदी ४ मगलवार सम्वत १९३९ शुभम् (इन्दौर)।[2] ह० दयानन्द सरस्वती

---

[१] कार्ड (२९२) [३२२]

श्रीयुत पडित शालिग्राम वावू गदाधर प्रसाद सिंह वावू जगन्नाथ जी आनन्दित रहो। विदित हो कि मै ४ जुलाई को यहां स्वामी दयानन्द [सरस्वती] जी महाराज के चरणों में पहुंचा। आप का समाचार कहा। श्रवण कर महाराज आनन्दित हुए। और मैं नागपुर ले जाने के वास्ते आया। परन्तु स्वामी जी राजपुताना देश में जावेगें और हुलकर महाराज यहां नही हैं। सर्व सभासदो से आनन्द कहना। दूसरा पत्र विस्ता[र] पूर्वक भेजूगा। ह० आत्मानन्द सरस्वती

५ जुलाई सन ८२ इन्दोर छावनी

सव से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। दयानन्द सरस्वती[3]

---

१. ४ जुलाई सन १९८२। ३ जुलाई साय को इन्दौर पहुचे, ५ जुलाई सायं समय इन्दौर से चलेंगे।

२. मूलपत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

३. यह लेख ऋषि ने स्वहस्त से लिखा है। शेष पत्र उनके शिष्य स्वामी आत्मानन्द ने लिखा है। हम ने ता० २३–४–२७ को एक पत्र विलासपुर भेजा था। उस के उत्तर में पत्र सख्या ८०, ता० ११–५–१९२७ को नरसिंहपुर मे मध्यदेश-विदर्भ आ० प्र० सभा के मन्त्री श्री शिवलाल जी ने यह मूलकार्ड हमें भेजा था। मूलकार्ड अव हमारे संग्रह में सुरक्षित है। प० शालिग्राम तथा वावू जगन्नाथ प्रसाद से विलासपुर में म० मामराज ता० २ फरवरी सन् १९४४ को, मिले थे। अन्य कोई पत्र नहीं मिला।

[७] कार्ड (२९३) [३२३]

ओ३म्

श्री स्वामी जी का आशीर्वाद विदित हो। स्वस्ति श्री मित्रवर बाबू रूपसिंह कलार्क जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते। गोरक्षा की सही पहुंची। आपने यह काम धन्यवाद देने योग्य किया। अब भी सही कराइये। जो गोरक्षार्थ (मे) मोरियल पत्र न रहे हो तो लिखना परन्तु हस्ताक्षर अलग अक्षर स्पष्ट रहे जिस मे सुगमता से पढ़ने मे आवें। यहा हमारे पास श्रीयुत महाराजाधिराज श्री नाहरसिंह जी साहपुरा मेवाड़ से ४०००[०] चाली हजार मनुष्यो की सही कराके भेजी है। श्री स्वामी जी मुम्बई से चल के खडुवा, खडुवा से इन्दोर अब इन्दोर से आज दो वजे रात्री की गाड़ी मे वैठ के रतल[ा]म को जायेंगे। वहां ८ वा १० दिन रह कर पश्चात् उदयपुर को जायेंगे॥

विशेष समाचार उदयपुर मे पहुंचे के पश्चात् भेजूगा॥ भद्रमिति।

कल स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी इन्दोर मे हमारे पास आगये॥

ता० ५ जुलाई सन् १८८२ ई०।[1]

रामानन्द ब्रह्मचारी (इन्दोर)

---

[१] पत्रांश (२९४) [३२४]

. ...

आज हम इन्दौर से दो वजे की गाड़ी मे वैठ कर रतलाम जावेंगे। वहां से उदयपुर जानेका विचार है। श्रावण[2] वदी ५, बुद्धवार। इन्दौर ५ जुलाई ८२।

दयानन्द सरस्वती
इन्दौर

---

१. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२. यह शुद्ध श्रावण अर्थात् प्रथम श्रावण है। प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर उद्धृत।

[२८] पत्र (२९५) [३२५]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान आनदित रहो।

विदित हो कि आज कार्ड पत्र आया समाचार विदित हुआ। परन्तु जो तुमने प्रथम पत्र में लिखा था कि विशेष यहां का वर्तमान द्वितीय पत्र मे लिखूंगा वह समाचार इस पत्र मे नही लिखा? क्या यह द्वितीय पत्र न था? अथवा लिखते समय स्मरण न रहा जो कि लिखा विशेष समाचार दूसरे पत्र मे लिखूगा। अब कब दूसरा पत्र लिखा जायगा? वह समाचार अवश्य लिखना। यन्त्रालय में जो दो महीने आगे का छपा हुआ वेदभाष्य है सो अधिक २ वेदभाष्य ही के छपने से क्या लाभ होगा। और जो प्रतिमास मे छपने के वास्ते वेदभाष्य ही भेजा जाय तो कई एक दिन तक वदभाष्य ही के शोधने में व्यतीत होजांय। पुनः आगे आगे न बनने से कहा से छपेगा। जो वेदाङ्ग प्रकाश के अक्षर नहीं हैं तो ढलवा लो। वहा शीशा रक्खा किस काम में आवेगा। और जब तक अक्षर न बन चुकें तब तक कम्पोजीटरों को छुट्टी देदो। जब अक्षर बनजावें तब बुला लेना। उन्ही अक्षरो को ढलवाओ जिनकी आवश्यकता है। क्या फूडरी मे अक्षर नही ढलते हैं जो लिखते हो कि अक्षर नही है। जिस प्रकार काम अच्छे प्रकार चले उस प्रकार का प्रबन्ध सर्वदा ध्यान में रखना चाहिये।

पण्डित भीमसेन के बुलाने के लिये १ तार और दो एक पत्र भेज चुके हैं। उससे कह देना कि स्वामी जी के पास जावरा नवाब का जिला इन्दोर में चला आवे। और तुम वेदभाष्य और मासिक हिसाब भी यही जावरा मे भेजदो। सर्वदा वहा का यथेष्ट समाचार लिखा करो। और जो हम लिखें उसमें ध्यान देकर काम चलाया करो।

ताः ११ जुलाई १८८२
श्रावण कृष्णा ११ मगलवार स० १९३९।[1]

[दयानन्द सरस्वती] (जावरा)

---

१ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

[२९] पत्र (२९६) [३२६]

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो।

विदित हो कि जो हमने लिखा और तार भेजा था उसको याथातथ्य किया होगा। वेदाङ्गप्रकाश के छपने के लिये शीघ्र ही फुंडरी मे अक्षर ढलवालो। और पूर्व पत्रों का उत्तर यथावत विस्तार पूर्वक लिखना। विशेष हाल कल के पत्र से जान लेना। अब देखो छापे खाने का प्रबन्ध–करनवास के ठाकुर शेरसिंह ने हमारे पास पत्र भेजा है। उसको तुम्हारे पास भी भेजते है। देखकर यथोचित प्रबन्ध करना। इसने २१) रुपये हमको मेरठ में वेदभाष्य के मध्ये दिये थे। वे रुपये टाटल पेज पर छप भी चुके। भला ऐसे २ ग्राहकों को वृथा अपनी अज्ञानता से क्लेश देते हैं। इस ग्राहक के २५॥) रुपये आ चुके हैं। अब पांचवें वर्ष के ८) रुपये रहे होगे मगवा लेना। जो इनके पास वेदभाष्य न जाता हो तो जहां से बंध हुआ हो वहां से उनसे पूछ कर बराबर भेजा करना। और जो जाता हो तो अच्छा है। और करनवास मे ठाकुर गोपलसिंह भी वेदभाष्य लेते हैं। उनसे भी बाकी रुपये उन्ही के द्वारा और उनके भी रुपये पांच वर्ष के अन्त तक के सब मगवा लेना। और छापेखाने की व्यवस्था अच्छे प्रकार रखना। इति ता० १३ जुलाई सन् १८८२ ई०।[1]

श्रावण कृष्णा १२ बृहस्पतवार
सं० १९३९।[1]

दयानन्द सरस्वती
नवाब का जावरा (मालवा)

---

[१८] पत्र (२९७) [३२७]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि लाला जगन्नाथदास मुरादाबाद की प्रश्नोत्तरी के विषय में विस्तार से लिख के ७ पृष्ठ भेजते हैं। पहुंचेंगे। जिस समय पहुंचे उसी समय १००० प्रति छपवा देना। परन्तु छपवाने मे विलम्ब किंचिन्मात्र भी न करना। पश्चात् तुम अपने समाचार मे छपवाना। छपवाने मे इतना ध्यान रखना कि जैसा लेख है वैसा ही छपवाना। कम वा अधिक न करना। और इसका मूल्य)॥ आना रखना। परन्तु बाहर के मंगवाने वालों से डाक व्यय भी ले लेना।

---

१ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

इसको शीघ्र ही छपवा के सर्वत्र प्रसिद्ध करदो। जिससे लोगों की शंका दूर हो जाय। और उनकी बुद्धि का भी प्रकाश हो जाय कि ये गुरु और चेला किस प्रकार के हैं। और इन्होने क्या २ विचित्र वर्त्तमान किया है। आजकल आत्मानन्द सरस्वती स्वामी जी हमारे पास हैं। इति

ता० १३ जुलाई सन् १८८२ ई०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
मालवा नवाब का जावरा

---

[४] **समीक्षा पत्र (२९८)** [३२८]

श्रीयुत सम्पादक देशहितैषी महाशय मंत्री आर्य्यसमाज अजमेर समीपेषु।[2]

प्रिय सम्पादकवर! जो मनुष्य स्वार्थ बुद्धि छोड़ परमार्थ करने में प्रवृत्त नहीं होता उसका हृदय पूर्ण शुद्ध होना असम्भव है, चाहे वह बहुत युक्ति और

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९५ पर भी छपा है।

२ जब मुशी इन्द्रमणि ने सहायता में आए हुए धन का पूर्वप्रतिज्ञा के अनुसार पूर्ण ब्योरा न बताया और न छापा, तब श्री स्वामी जी ने उन से सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया। तब मुशी जी ने आर्यप्रश्नोत्तरी (सवत् १९३८, आर्यदर्पण प्रेस, शाहजहापुर) छापी। उसका उत्तर लिखवा कर श्री स्वामी जी ने भारत सु० प्रवर्तक में छपने के लिये भेजा। फरुखाबाद समाज वालों ने वह न छापा।

अपने १६ जून के पत्र (पूर्णसख्या ३१६) में श्री स्वामी जी ने ला० कालीचरण को लिखा—"प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आप के पास भेज चुके हैं। उस के पीछे भारत० सु० प्र० के दो अक निकल चुके हैं। परन्तु आप ने उस को छापा नहीं।" अर्थात् श्री स्वामी जी का यह उत्तर एप्रिल १८८२ में लिखा गया होगा।

पुनः १३ जुलाई पत्र पूर्णसख्या ३२७ के अनुसार श्री स्वामी जी ने उसी प्रश्नोत्तरी का एक विस्तृत उत्तर छपने को भेजा।

फरुखाबाद वालों ने यह उत्तर भी न छापा। और मन्त्री आ० स० फरुखाबाद ने १४-७-८२ को एक पत्र (सख्या २७) श्री स्वामी जी की सेवा में खण्डुआ भेजा। उस का विषय "प्रश्नोत्तरी" था। पुन. मन्त्री समाज ने १९-७-८२ को एक और पत्र (सख्या ५२) श्री स्वामी जी को जावरा भेजा—

"पत्र आप का और ७ पृष्ठ आर्य प्रश्नोत्तरी के उत्तर में पहुचे। छापने के विषय में अन्तरङ्ग सभा से यह अनुमति मिली कि नया प्रेस एक्ट में छपने छापने का विषय है।"

गूढता अपनी कपटता को प्रसिद्ध करने मे कैसा ही यत्नवान क्यो न हो। उसका कपट कभी न कभी प्रकाशित हो ही जाता है। प्रत्यक्ष दृष्टान्त देख लो कि लाला जगन्नाथदास मुन्शी इन्द्रमणिजी के शिष्य की वनाई हुई [आर्य्य प्रश्नोत्तरी] की समालोचना करने से (वहुत से विषय उसमे सत्य और परोपकारक दीख पड़ते है परन्तु वहुधा विषय उसमे ऐसे भी हैं कि जिनके सुनने वा पाठ करने वालों का भ्रमजाल मे फस वेदादि सत्य शास्त्रो से विरुद्ध होना सम्भव है। यह विरुद्ध विषय केवल लाला जगन्नाथदास ही के अभिप्राय से नही किन्तु मुन्शी इन्द्रमणि भी उन दोषयुक्त विषयों के अनुयायी प्रतीत होते हैं।) अस्तु जो हो मुझको सत्य २ परीक्षा इस ग्रथ की कर के दोपो का प्रकाश करना अवश्यनीय है। कारण सज्जन लोग गुण ग्रहण कर दोषो को छोड़ दें। इतना ही नही किन्तु जैसे विषयुक्त उत्तमान्न का वुद्धिमानों को त्याग करना अवश्य होता है इसी प्रकार आर्य्य लोगो के लिये यह [आर्य्य प्रश्नोत्तरी] ग्रन्थ गुणो के साथ दोष दायक होने से श्रेष्ठ को त्याग के योग्य है। अव इसका कुछ थोड़ा सा नमूना सक्षेप से दिखलाता हूं।

और जो १००० प्रति अलग छापी जावे वह भी ऊपर के कारणों से (मुझे छोड) आप लिखें जिसके नाम से छपवाने का विचार किया जावे।"

फिर १४ अगस्त १८८२ के पत्र में श्री स्वामी जी ला० कालीचरण को लिखते हैं—

"अभी तक "आर्य प्रश्न०" के उत्तर नहीं छपवाये। क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शका हो तो देखत पत्र के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर के पास भेज दीजिये। वे छाप देंगे।"

फिर श्री स्वामी जी ने उदयपुर से श्रावण शुक्ला ३ सवत् १९३९, १७ अगस्त १८८२ को बाबू दुर्गाप्रसाद के नाम एक पत्र लिखा। उसमें भी इसी उत्तर के छापने का उल्लेख है।

२४ अगस्त १८८२ को श्री स्वामी जी पुन लिखते हैं—

"तुमने "आ० प्र०" के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया।"

२४-८-८२ को ही मुन्नालाल सम्पादक देशहितैषी श्री स्वामी जी को अजमेर से लिखता है—

"आर्य्य प्रश्नोत्तरी के खण्डन को किसकी ओर से प्रकाश करें।"

अन्त में यह उत्तर देशहितैषी अजमेर में "उचित वक्ता" के नाम से छपा।

[आर्य्य प्रश्नोत्तरी पृष्ठ २ । प्रश्नोत्तर ७] परमात्मा ने सृष्टि की आदि में श्री ब्रह्माजी के हृदय में वेदों का प्रकाश किया । उन से ऋषि मुनि अस्मदादिकों को प्राप्त हुये ।

[समीक्षा] यह बात प्रमाण करने योग्य नही क्योंकि (अग्नेर्वै ऋग्वेदो जायते वायोर्यजुर्वेदः सूर्य्यात्सामवेद.) शतपथ ब्राह्मण वचन ।

"अग्नि वायुरविभ्यस्तु त्रयम्ब्रह्म सनातनम् ।
दुदोह यज्ञसिद्धयर्थमृग्यजु सामलक्षणम्" ॥

मनुस्मृति का वचन । अब देखिये अग्नि आदि महर्षियों से ऋग्वेदादि का प्रकाश हुआ । इत्यादि ब्राह्मण वचनों के अनुसार मनुजी महाराज कहते हैं कि ब्रह्मा जी ने अग्न्यादि महर्षियो के द्वारा वेदो की प्राप्ति की । अत एव "यो वै ब्रह्माण विदधाति पूर्वं यो वै वेदाश्च प्रहिणोति तस्मै" इस श्वेताश्वतरोपनिषद् के वचनार्थ की सगति शतपथ और मनुजी के वचन से अविरुद्ध होनी चाहिये । किन्तु परमात्मा ने चारो महर्षियो के द्वारा श्री ब्रह्मा जी को चार वेदों की प्राप्ति कराई । और अब भी जो कोई चार वेदों को पढ़ता है वही यज्ञ मे ब्रह्मासन को प्राप्त और उसी का नाम ब्रह्मा भी होता है । यदि मुन्शी इन्द्रमणिजी और उनके शिष्य लाला जगन्नाथदास वेद और तदनुयायी ब्राह्मणादि ग्रन्थो को पढ़े होते तो ऐसे भारी भ्रम में पड़ ऐसे २ अन्यथा भाषण वा लेख क्यो करते ? इनको उचित है कि अपना हठ छोड़ सत्य का ग्रहण अवश्य करें ।

[पृष्ठ ३ । प्रश्नोत्तर १६] जीव वास्तविक अनन्त हैं । इस कारण ईश्वर के ज्ञान में भी अनन्त ही हैं ।

[समीक्षा] जब जीव देश काल वस्तु परिछिन्न अर्थात् भिन्न २ हैं । उनको अनत कहना मानो एक अज्ञानी का दृष्टान्त बनना है । अनन्त तो क्या परन्तु परमेश्वर के ज्ञान में असख्य भी नही हो सकते । परमेश्वर के समीप तो सब जीव वस्तुत. अतीव अल्प हैं । जीवों की तो क्या परन्तु प्रति जीव के अनेक कर्मों के भी अन्त और संख्या को परमेश्वर यथावत् जानता है । जो ऐसा न होता तो वह परब्रह्म जीव और उनके कर्मों का जैसा २ जिस २ जीव ने कर्म कीया है उन २ का फल न दे सके । जब कोई इनसे प्रश्न करे कि एक २ जीव अनन्त हैं वा सब मिल के ? जो एक २ अनत हैं तो "य आत्मनि तिष्ठन्" इत्यादि ब्राह्मण वचन अर्थात् जो परमात्मा व्याप्य जीवों मे व्यापक हो रहा है और ऐसा ही लाला जगन्नाथदास ने "पृष्ठ ५ । प्रश्नोत्तर ३२" के उत्तर में लिखा है कि "जीवेश्वर का व्याप्य व्यापक सम्बध और "पृष्ठ ४ प्र० २१" "में जीव को अणु

माना है।" जीव शरीर को छोड़ दूसरे शरीर में जाता और शरीर के मध्य में रहता है। इस लिये अनत वा असख्य ईश्वर के ज्ञान मे नही। किन्तु जीवों के ज्ञान मे जीव असख्य हैं। जिन लाला जगन्नाथदास वा मुन्शी इन्द्रमणिजी को अपने ग्रथस्थ पूर्वापर विरुद्ध विषयो का ज्ञान भी नही है तो आगे क्या आशा होती है। इसी से इनके सब प्रपचो का उत्तर समझ लेना शिष्टों को योग्य हैं।

[पृष्ठ ४ प्र० २४] "जीव के गुण वास्तव मे विभु हैं परन्तु बद्धावस्था में अविद्या से आच्छादित होने से परिछिन्न हैं। मुक्तावस्था मे विभु हो जाते हैं।"

[समीक्षा] विभु गुण उसी के होते हैं जो द्रव्य भी विभु हो। और जिसको अणु मानते हैं क्या उसके गुण विभु कभी हो सकते हैं ? क्योकि गुणो का आधार द्रव्य होता है। भला कोई कह सकता है कि परिछिन्न द्रव्य मे विभु गुण हो। क्या गुणी एक दशी और गुण विभु हो सकते हैं ? और गुणी को छोड़ केवल गुण पृथक् भी रह सकता है ? नही ! नही !! और जो (पृष्ठ ४। प्रश्नोत्तर २१) में जीव को अणु माना है वह भी ठीक नहीं। क्योकि एक अणु मे भी जीव रह सकता है। अर्थात् एक अणु मे अनेक जीव रह सकते है। देखो अणु कांच वा पृथिवी आदि के मध्य मे से पार नही जा सक्ता और जीव जा सकता है। इसीलिये जीव अणु से भी सूक्ष्म है और इसके गुण भी विभु नही। हा मुक्तावस्था मे जिस ओर उसका ज्ञान होगा उस दूरस्थ पदार्थ को भी अपने ज्ञान से जान लेता है। नही तो "युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम्" इस न्याय शास्त्र के सूत्र का अर्थ ही नही घट सकेगा। जो एक क्षण मे एक पदार्थ को जाने अनेक को नही उसी को मन कहते हैं। वही मन मुक्तावस्था मे भी रह जाता है। पुनः उसी मन रूप साधन से विभु गुण वाला जीव कैसे हो सकता है।

[पृष्ठ ४ प्रश्न २५] "जीव परतन्त्र है।"

[समीक्षा] जीव किस के आधीन है ? जो कहो कि परमेश्वर के तो जो कुछ जीव कर्म कर्ता है वह स्वतन्त्रता से वा ईश्वराधीनता से ? जो ईश्वराधीनता से करता है तो जीव को पाप पुण्य का फल न होना चाहिये किन्तु ईश्वर को होना चाहिये। जैसे सेनाध्यक्ष वा राजा की आज्ञा से कोई किसी को मारे वह अपराधी नही होता अथवा किसी के मारने मे लकड़ी तलवारादि शस्त्र अपराधी और न दंडनीय होते हैं वैसे ही जीवो को भी दण्ड न होना चाहिये। किन्तु पाप पुण्य का फल सुख दुख ईश्वर भोगे। इस लिये जीव अपने कर्म करने मे सर्वदा स्वतन्त्र और पाप का फल दुःख भोगने मे ईश्वर की व्यवस्था से परतन्त्र रह जाते हैं। जैसे चोर चोरी करने मे स्वतंत्र और राजदण्ड भोगने मे परतन्त्र हो जाते हैं इसी प्रकार जीवो को भी जानो।

[पृष्ठ ४ । प्रश्नोत्तर २८] "मुक्त जीव कर्म्मवश होकर कभी फिर ससार में नही आते । ईश्वरेच्छानुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म रक्षा करने को आते हैं" ।

[समीक्षा] पाठक गण ! विचारिये यह अविद्या का प्रताप नही है तो और क्या है ? जो कहते हैं कि जीव ससार में कभी नही आते और ईश्वरेच्छा-नुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म रक्षा करने को आने भी हैं। धन्य ! भला इस पूर्वापर विरुद्धता को गुरू और चेलेने तनिक भी न समझा। विचारणीय है कि जिस का ज्ञान सामर्थ्य कर्म अन्त वाले हैं उस का फल अनत कैसे हो सक्ता है ? और जो मुक्ति में से जीव ससार में न आवें तो ससार का उच्छेदन अर्थात् नाश ही होजाय। और मुक्ति के स्थान मे भीड़ भडक्का हरद्वार के मेले के समान होजाय। और ईश्वर भी अत वाले गुण कर्म्म का फल अनत देवे तो वह न्यायरहित हो जाय। और परिमित गुण कर्म स्वभाव वाले जीव अनत आनद को भोग भी नही सक्ते। फिर यह वात वेद तथा शास्त्र से विरुद्ध भी है। देखो "अग्नेर्नूंन कतम-स्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम। स नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितर च दृशेय मातर च" ऋग्वेद वचन–अर्थ-हम उसी सुन्दर निष्पाप परमात्मा का नाम जानते हैं और जो स्व-प्रकाश स्वरूप जगदीश्वर प्राप्तमोक्ष जीवों को पुन अवधि पर ससार में माता पिता के दर्शन कराता है अर्थात् मुक्ति सुख को भुगा के पुन. ससार में जन्म देता है ॥ इसी प्रकार सांख्य शास्त्र मे भी लिखा है "नात्यन्तोच्छेद" इत्यादि वचनो से यही सिद्ध होता है कि अत्यत जन्म मरण का छेदन[न] किसी का हुआ और न होगा किन्तु समय पर पुनः जन्म लेता है। इत्यादि प्रमाणो और युक्तियों से मुक्त जीव भी पुनरावृत्ति मे आते हैं।

[पृष्ठ ४ । प्रश्नोत्तर ३०] "एक वृक्ष मे एक ही जीव होता है न अनेक" ।

[समीक्षा] जो एक वृक्ष मे एक जीव होता तो प्रत्येक जीव[वृक्ष]मे पृथक् २ जीव कहां से आते और किसी वृक्ष की डाली काट कर लगाने से जम जाता है उस मे जीव कहा से आया इस लिये एक वृक्ष में अनेक जीव होते हैं।

[पृष्ठ ५ । प्रश्नोत्तर ३५] अनेक पूर्व जन्मो के कर्म जो ईश्वर के ज्ञान में स्थित हैं वे संचित कहलाते है।

[समीक्षा] क्या जीव का कर्म्म जीव के ज्ञान में संचित नही होता ? जो ऐसा न हो तो कर्म्मों के योग से पवित्रता और अपवित्रता जीव मे न होवे। इस लिये जो २ अध्ययनादि कर्म जीव करते हैं उनका सचय जीव ही में होता है ईश्वर में नहीं। किन्तु ईश्वर तो केवल उन के कर्म्मों का ज्ञाता है और फल प्रदाता है।

[पृष्ठ १२–प्रश्नोत्तर ७७] "केवल देवता और शिष्ट पुरुषों के नाम पर जन्माष्टम्यादिव्रत हैं। सो ईश्वरातिरिक्त किसी देवता की उपासना कर्तव्य नही"।

[समीक्षा] क्या शिष्ट पुरुषो से भिन्न भी कोई देवता है ? विना पृथिव्यादि के तेतीस और वेदमत्र तथा माता पिता आचार्य्य अतिथि आदि के जिन का वेदों ने पूजन अर्थात् सम्यक् सत्कार करना कहा है। क्या यह भी मनुष्यों को कर्तव्य नहीं।

[पृष्ठ १३–प्रश्नोत्तर ८२] "जो कुछ ईश्वर ने नियत किया है उस में न्यूनाधिक्य करने वाला कोई नही। जो बात जिस प्राणी के लिये जिस काल मे जिस प्रकार से ईश्वर ने नियत की है उस से विरुद्ध कभी नही होती।"

[समीक्षा] क्या ब्रह्मचर्य्य और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से आयु का अधिक होना और कुपथ्य से वा व्यभिचारादि से न्यून नही होता ? जब ईश्वर का नियत किया हुआ ही होता है तो जीव के कर्मो की अपेक्षा कुछ भी नही रह सकती। और जो अपेक्षा है तो केवल ईश्वर ने नियत नही किया किन्तु दोनो निमित्तो से होती है। जो हमारा क्रियमाण स्वतत्र न हो तो हम उन्नति को प्राप्त कभी नही हो सकते। इसीलिये हम कर्म करने मे स्वतन्त्र और ईश्वर जीवो के कर्मों को यथायोग्य जानकर कर्म्मानुसार शुभाऽशुभ फल देने मे स्वतत्र है। ऐसा माने विना ईश्वर में वे ही दोष आ जावेंगे जो २५ वें प्रश्नोत्तर की समीक्षा मे लिख आये हैं।

[पृष्ठ १३–प्रश्नोत्तर ८४] "स्वर्ग ससारांतर्गत है वा लोकान्तर ("उत्तर" स्वर्ग लोकविशेष है वहां क्षुधा पिपासा बुढापा आदि दु:ख नही है।"

[समीक्षा] क्या लोकान्तर का नाम ससार है नही। क्या बिना मुक्ति के वा प्रलय अथवा स्थूल शरीर के क्षुधादि की निवृत्ति हो सकती है। ऐसे विशेष स्वर्ग लोक को गुरु शिष्य देख आये होगे। जो पूर्वमीमांसा को देखा होता तो ऐसी अन्यथा बातें क्यो लिखते। देखिये "स एव स्वर्ग. स्यात्सर्वान्प्रत्यविशिष्टत्वात्" पूर्वमीमांसा का वचन। जो सर्वत्र अविशेष अर्थात् सुख विशेष की प्राप्ति का नाम स्वर्ग और दु.ख विशेष की प्राप्ति का नाम नरक लिखा है। सब जीवो को सब संसार मे प्राप्तहोता है किसी विशेष लोकान्तर ही मे नही। और जहां शरीर धारण श्वास प्रश्वास भोग वृद्धि क्षय आदि होते हैं वहा क्षुधा पिपासा और बुड्ढापन आदि क्यो नही ? यह सब अविद्या की बात हैं। ध्यान दीजिये वेद का कोष क्या कहता है (स्वः) साधारण नाम मे है निघ १। ४। "स्व. सुखं गच्छति यस्मिन्स स्वर्ग." जिसमे सुख की प्राप्ति हो वह स्वर्ग कहाता है। परन्तु "गौणमुख्ययोर्मध्ये मुख्ये कार्य्ये सम्प्रत्ययः" यह व्याकरण महाभाष्यकार का वचन है। इस से यह सिद्ध होता है कि निर्मल धर्म्माऽनुष्ठान जन्य सत्य विद्यादि साधनो से सिद्ध आत्मीय और शारीरिक सुख विशेष है। उसी प्रधान सुख की प्राप्ति का नाम स्वर्ग है॥

[पृष्ठ १४-प्रश्नोत्तर ९१] सम्पूर्ण जीव वास्तव में ईश्वर के दास हैं इस कारण मनुष्यों के नाम में ईश्वर वाच्य शब्द में दास शब्द का प्रयोग करना अत्युत्तम है।"

[समीक्षा] यह शास्त्रीय व्यवहार से सर्वथा वाहर है। किन्तु केवल कपोलकल्पना मात्र ही है क्योंकि—

"शर्म्मवद्ब्राह्मणस्य स्याद्राज्ञो रक्षासमान्वितम् ।
वैश्यस्य गुप्तिसंयुक्त शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्" ॥ मनु०

जैसे ब्राह्मण का नाम विष्णु शर्म्मा, क्षत्रिय का विष्णु वर्म्मा, वैश्य का विष्णु गुप्त और शूद्र का विष्णुदास इस प्रकार नाम रखना चाहिये। जो कोई द्विज शूद्र वनना चाहे तो अपना नाम दास शब्दान्त धर ले और जो शास्त्रोक्त विधि छोड मनोमुख चले उस को क्या कहना।

[पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर ९७] "परलोक और धर्मार्थ के फल तथा ईश्वर को न मानने वाले को नास्तिक कहते हैं।

[समीक्षा] इस में केवल इतनी ही न्यूनता हैं कि "नास्तिको वेदनिन्दकः" जो लाला जगन्नाथ दास और मुन्शी इन्द्रमणि जी ने मनुस्मृति पढ़ी वा अच्छे प्रकार से देखी भी होती तो वेद निन्दक का नाम नास्तिक क्यों न लिखते जिस से सव कुछ अर्थ आ जाता और लक्षण भी दृष्टि पडता।

(पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर ९८) "हिन्दू" शब्द सस्कृत भाषा का नही है पारसी भाषा मे वास्तविक अर्थ "हिन्दुस्तान" के रहने वाले का है और (काला,लुटेरा,गुलाम) "यह साकेतिकार्थ हैं"।

(समीक्षा) वह क्या ! जव सस्कृत भाषा का नही है तो इसका वास्तविक अर्थ कभी नही हो सक्ता, वास्तविक अर्थ इस देश वालो का नाम (आर्य्य) और इस देश का नाम "आर्य्यावर्त्त है"। इस सत्यार्थ को छोड़ असत्यार्थ की कल्पना करनी मुझ को तो अविद्या और हठ की लीला दृष्टि पडती है । जव "अर्वी", की (लुगात) नामक पुस्तक में लिखा है कि लुटेरे आदि का नाम हिन्दू है तो उस भाषा मे वास्तविक नाम क्यो नहीं ? केवल साकेतिकार्थ क्यों ? अर्थात् जो कोई आर्य्य होकर अपने हिन्दू नाम होने में आग्रह करे उन्ही का नाम काला, लुटेरा, गुलामादि का रहो आर्य्यों का नही।

[पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर १००] पहिले कहने वाला "परमात्मा जयति" कहे और उत्तर देने वाला "जयति परमात्मा" कहे ।

[समीक्षा] यह कल्पना वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध होने के कारण सर्वथा मिथ्या ही जान पड़ती है क्योंकि "नमस्ते रुद्र मन्यवे०। नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नम." इत्यादि यजुर्वेद वचन "परमर्षिभ्यो नमः" "नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायोः" इत्यादि उपनिषद् वचन, इनसे निश्चित यही सिद्ध होता है कि परस्पर सत्कारार्थ (नमस्ते) शब्द से व्यवहार करने मे वेदादि सत्य शास्त्रो का प्रमाण है और परस्पर अर्थ भी यथावत् घट जाता है जैसे (ते) तुभ्य वा तव अर्थात् जिसको मान्य देता है उसका वाची है और (नमः) शब्द नम्रार्थ वाचक होने से नमस्कार कर्ता का बोधक है मै तुम कू नमता हू अर्थात् (ते) आप वा तेरा मान्य वा सत्कार करता हू। इसमे नमस्कर्त्ता और नमस्करणीय दोनो का परस्पर प्रसंग प्रकाशित होता है और यही अभिप्राय दोनों का है कि दोनो प्रसन्न रहे और जो असबद्ध प्रलाप अर्थात् तीसरे परमेश्वर का प्रसग लाना है सो व्यर्थ ही है। जैसे "आम्रान्पृष्ठः कोविदारानाचष्ठे" किसी ने किसी से पूछा कि आम्र के वृक्ष कौन से है उसने उसे उत्तर दिया कि यह कचनार के वृक्ष हैं, क्या ऐसी ही यह बात नही है ? किसी ने ईश्वर का प्रश्न पूछा ही नही और न कोई परस्पर सत्कार के व्यवहार मे ईश्वर प्रसग है और कह देना कि (परमत्मा सारे उत्कर्षों के साथ विराजमान है) यह वचन हठयुक्तका नही है तो और क्या है ? हा जहां परमात्मा की स्तुति प्रार्थना उपासना उपदेश और व्याख्या करने का प्रसग हो तो वहां परमात्मा के नाम का उच्चारण करना सब को उचित है। जैसा राम राम, जय गोपाल, जयश्रीकृष्णादि शब्दो से परस्पर व्यवहार करना यह हठ दुराग्रह से सम्प्रदाई लोगों ने वेदादि शास्त्रविरुद्ध मनमानी व्यर्थ कल्पना की है उसी प्रकार से मुन्शी इन्द्रमणि जी वा ला० जगन्नाथदासजी की युक्ति और प्रमाण से शून्य यह कल्पना दृष्टि पडती है। इन विषयों मे मुशी इन्द्रमणि जी और स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी का सम्वाद भी पूर्व समय मे हो चुका है। परन्तु मुन्शी जी कब मानते है। विशेष क्या लिखें शोक है कि लाला जगन्नाथदास की करतूतों को विचार अब मुझको यह कहना पड़ा कि इन दोनों महात्माओ के प्रतिज्ञा से विरुद्ध करना आदि अन्यथा व्यवहारों को जो कोई सज्जन पुरुष जानना चाहै वे आर्य्य समाज मेरठ लाला राम सरन दासादि भद्र पुरुषों से पूछ देखें कि एक अन्य मार्गियों के विवाद विषय की शान्ति कारक व्यवहार प्रसग मे इन्होंने कैसा २ विपरीत व्यवहार किया जिस को सब जानकर आर्य्य लोग जानते हैं। सत्य यह बात चली आती है कि सब पापों का पाप लोभ है" जो कोई उसी तृष्णारूपी नदी प्रवाह मे बहे जाते हैं उन मे पवित्र वेदोक्त आर्य्य धर्म्म की स्थिरता होनी कठिन है अब जो मुन्शी इन्द्रमणि जी और

उनके चेले लाला जगन्नाथदास, स्वामी जी और भद्र आर्य्यों की व्यर्थ निन्दा करें तो इसमें क्या आश्चर्य है? पाठक गण! ठीक भी तो है जब जैसे में वैसा मिले फिर क्या न्यूनता रहै। जैसे दावानल अग्नि का सहायक वायु होता है वैसे ही इन के श्री मुन्शी वखतावरसिंह जी सहायकारी वन वैठे। अव तो जितनी निन्दा आर्य्य लोगो और स्वामी की करें उतनी ही थोडी। चलो भाई यह भी अच्छी मडली जुड़ी, महाशयो! जव तक तुम्हारा पेट न भरे तव तक निन्दा करने में कसर न रखना क्योकि यह अवसर अच्छा मिला है। जैसे किसी कवि ने यह श्लोक कहा है सो वहुत ठीक है।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्याय्यात्पथ. प्रविचलति पदं न धीराः॥ १॥

चाहैं कोई अपने मतलव की नीति मे चतुर निन्दा करे वा स्तुति करै चाहै लक्ष्मी प्राप्त हो वा चली जाओ चाहे मरण आज ही हो वा वर्षान्तरों में परन्तु जो धीर पुरुप महाशय महात्मा आप्तजन हैं वे धर्म्म मार्ग से एक पाद भी विरुद्ध अर्थात् अधर्म मार्ग मे नही चलते हैं॥ १॥ सभ्य गणो! यह तो आर्य्यों की शुभेच्छा का कारण है परन्तु जो प्रथम उत्तमाचरण करके पश्चात् गड़ वड़ा जाय वे ही तो आर्य्यावर्त्त के हानि कारक होते हैं। परन्तु यह सदा ध्यान में रखना चाहिये कि "श्रेयासि वहुविघ्नानि" जो इस सनातन वेदोक्त सत्य धर्म का आचरण करते हैं उस में अनेक विघ्न क्यो न होंय तदपि इस सत्य मार्ग से चलायमान न होना चाहिये। सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर परमात्मा अपनी कृपा दृष्टि से इन विघ्नों को हम से और हम को इन से सर्वदा दूर रख कर हम से आर्यावर्त्त की उन्नति कराने में सहायक रहै। इस थोडे से लेख से सज्जन पुरुष वहुत सा जान लेंगे। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु॥

एक उचित वक्ता

---

[८] पत्र (२९९) [३२९]

ओ३म्

श्री स्वस्ति श्री परोपकारप्रिय सद्गुणविभूषित महाशय वावू रूपसिंहाभिधेयेषु रामानन्द ब्रह्मचारिणो शतधाऽऽशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति तत्र भवदीय च नित्यमेधमानमाशासे।

महाशय! नमस्ते। आप का शुभ समाचारो से अलङ्कृत अनुग्रह पत्र (मालवा नवाब का जावरा) मे सुशोभित हुआ। अवलोकन कर अतीव हर्षित हुआ। परमात्मा से सर्वदा यही प्रार्थना करता हूं कि आप महाशय पुरुषो की बुद्धि को परोपकार के करने मे निरन्तर नियुक्त किया करे, जिस से पुन: यह आर्यावर्त्त देश अपनी पूर्वदशा को सम्प्राप्त होकर अपने मनुष्यरूपी वृक्ष मे धर्म अर्थ काम और मोक्ष रूपी चतुष्टय फलो से सयुक्त होकर परमानन्द भोगे। धन्य है आपके पिता जी को जिन महाशय की ऐसी विशाल बुद्धि कि जो इस महोपकारक गोरक्षार्थ विषय को श्रवण कर अति हर्षित हुए और आपको उत्साही किया। परमात्मा करे ऐसे ही पिता सब के होवें। और आप मेरा मान्य पूर्वक 'आशीर्वाद भी विदित कीजियेगा। मै नाम से विदित नही हूं परन्तु उनकी ऐसी योग्यता के जानने से मुझको अति आनन्द हुआ और ऐसे परोपकार प्रियो के नाम से विदित होने की भी चेष्टा हुई। आशा है कि आप विदित कर देंगे। दूसरा यह हर्ष हुआ कि अब आपका उद्वाह होने वाला है और आपकी योग्यता भी हुई अत्युत्तम है। आप प्रसन्नता के साथ अपना विवाह कीजिये। आप बहुत सारी बातें जानते भी हैं। तथापि मेरा मन नही मानता इस कारण लिखता हूं। देखिये मूल कारण आर्य्य[ा]वर्त्त के सुधार होने का उचित समय पर विवाह का होना और सत्योपदेश। गृहाश्रम केवल भोग विलास के अर्थ नही किन्तु ससार की उन्नति के अर्थ है। अर्थात् संस्कारविधि के अनुसार विवाहाऽनन्तर उचित समय पर क्रिया करना। इस आश्रम का मुख्य फल यही है कि सुन्दर, धीर, वीर, विद्यादि शुभ गुण युक्त पुत्र रूपी फल की प्राप्ति होना। विना विधि के सांगोपांग कोई भी कार्य्य सिद्ध नही होता। इस लिये उचित समय पर जो आपको जिज्ञासा हो तो पत्र द्वारा विदित करना। मै (श्रीयुत परम पूज्य गुरु जी) से पूछ कर आप को विदित करूगा वैसा ही करना होगा। आप विवाह किये के पश्चात् इस महोपकारार्थ पंजाब हाथा और काश्मीर आदि राजधानियों में जा गोरक्षा के विषय में (गोकरुणानिधि) के अनुसार व्याख्यान दे कर सही करावें तो क्या ही अत्युत्तम बात होवे कि जिसकी उपमा भी मै देने मे असमर्थ हू। परन्तु इतना तो कह सकता हूं कि थोड़े ही श्रम से महापुण्य का सचय कर अपने मनुष्य जन्म को सफल कर लोगे। जो तुमने सही करा के भेजी थी वह हमारे पास मुम्बई मे पहुंची। अब जिन २ मनुष्यो की सही कराई जाय वह प्राय देवनागरी के अक्षरो में होनी चाहिये। और स्पष्ट

अक्षर जिससे स्पष्टता से नाम वच जावे परन्तु जो पुरुष अप[ना] नाम किसी विद्या मे न लिख सके उसका नाम सही कराने वाला पुरुष उसकी सम्मति से लिख दे और एक वही के समान पत्रों को वना कर उस मे सव गोरक्षाप्रिय मनुष्यों की सही करानी। पश्चात् उस ग्राम वा नगर में जो माननीय प्रतिष्ठित पुरुष हो उससे हस्ता[क्ष]र गवाही के समान सही कराने के पत्र पर इस प्रका[र क]राना कि (हमारे यहा इतने मनुष्यो की सही हुई। पश्चात् अपना नाम लिखदे) यह रीति पीछे से श्री स्वामी जी ने प्रकट की है। इस प्रकार के लेख से किन्ही को राज सम्वन्धी भय न होगा। यह डरपुकनों के लिये है। मुख्य तो विज्ञापन पत्र के अनुसार सही कराना। गोरक्षार्थ आजकल भारत मित्र कलकत्ता ने पत्र छपवा के सही करा रहा है। मुम्वई के लोगो ने भी वहुत सी सही कर ली और वरावर कराते जाते हैं और गुजरात आदि देशों मे भी सही होती है। और स्वामी[जी] के पास मेवाड महाराजाधिराज नाहरसिंह जी ने ४०००[०] इतने हजार मनुष्यों की ओर से सही कर के भेज दी है। और मध्य देश में भी वहुत सी सही हो गई। प्रति दिवस होती जाती है। इस महोपकारक काम में डाक वालो ने दुष्टता वहुत सी की है।[1] क्योंकि वहुत से स्थानो को पत्र भेजे परन्तु उन के पत्र आने से यह विदित हुआ कि उनके पास नही पहुंचे। देखिये आश्चर्य की वात है [(लाला रामशरणदास मेरठ के पास) ३०० पत्र रजिष्टरी करा के भेजे थे इतने पर भी उनके पास न पहुंचे पुनः उनके पास ५० पत्र भेजे हैं।][2] परमात्मा कृपा करे कि ऐसे २ विघ्नकारी राक्षसों से वचा कर इस महोपकारक कार्य की सिद्धि करने मे आर्य भाइयों को सहायता देकर इस कार्य्य की सिद्धि करावे। किमधिकलेखेन परोपकारप्रियेषु। आज वा कल परमगुरु जी उदयपुर पधारेंगे।

ता० २४ जुलाई १८८२ ई०।[3]

रामानन्द ब्रह्मचारी
मालवा जावरा नवाव का

---

१. इस वात का सकेत कई पत्रों में है। बुद्धिमान् पाठकों को इस का रहस्य समझना चाहिये।

२. इतना पाठ पत्र में काट दिया गया है।

३ मूल पत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[१९] पत्र (३००) [३३०]

(ओ३म्)

लाला कालीचरण रामचरण जी आनदित रहो।

विदित हो कि प्रथम तो तुम लिखते थे कि शीघ्र (आर्य प्रश्नोत्तरी) के विस्तारपूर्वक प्रत्युत्तर लिखके भेज दीजिये। जब भेज दिये तो अब कहते हो कि कानून बनकर आवे तो छापें। छपाने मे विलम्ब करना अच्छा नहीं। जो उसमें कोई शब्द निकालने योग्य हो निकाल दीजिये। परन्तु जो २ उनके अभिप्राय के शब्द हैं उनमे कुछ न्यूनाधिक न करना॥

कल हम (मालवा नवाब के जावरा से चितोड़गढ़) में आ पहुंचे। यहां के हाकिम ठाकर जगन्नाथ जी ने हमारे लिये यथायोग्य प्रबन्ध किया है। अब दो एक दिन में उदयपुर जायंगे।

अनुमान है कि चातुर्मास वहीं होगा॥[1]

ता० २६ जुलाई सन् १८८२ ई०।

[दयानन्दसरस्वती] (चितोड़गढ़ मेवाड़)

---

[२०] पत्र (३०१) [३३१]

ओ३म्

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि आज ४ वा ५ दिन व्यतीत हुए हैं, हम उदयपुर में आके नौलखा बाग के महल में ठहरे हैं। यहां सब प्रकार आनंद मगल है। बहुत दिन हो गये हैं, अभी तक 'आर्य प्रश्नोत्तरी' के उत्तर नहीं छपवाये क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शंका हो तो देखत पत्र के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आर्यसमाज अजमेर के पास भेज दीजिये। वे छाप देंगे। इस विषय मे पत्र भी आज उन के पास भेज दिया है। जो छप चुकी हो तो शीघ्र विदित करो।

और गोरक्षार्थ कितनी सही हो चुकी। इस का भी उत्तर लिखना। इस समय (आर्यभाषा के) राजकार्य मे प्रवृत्त होने के अर्थ जो मोमरियल छपे हैं सो

---

१. यह अन्तिम पंक्ति प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५५६ पर उद्धृत है। हमने मूलपत्र से इसे छापा है। मूलपत्र आर्यसमाज फरूखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने जनवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९६ पर भी छपा है।

शीघ्र भेजना। और आप लोग भी जहा तक हो सके गोरक्षार्थ सही और आर्य-भाषा के राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ शीघ्र प्रयत्न कीजिये। और फर्रुखावाद के आर्यसमाज तथा पाठशाला का जैसा वर्तमान हो लिखना। और हम भी जो कुछ विशेष यहां का समाचार लिखने योग्य होगा लिखेंगे।[1]

१४ अगस्त सन् १८८२ ई०

[दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

[३] पत्र (३०२) [३३२]

ओ३म्

स्वस्ति श्रीमद्वर सद्गुण समूहालकृतेभ्यो राजराजाऽधि श्रीयुत नाहरसिंह वर्म्मभ्यो दयानन्दसरस्वति-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शामिहास्ति तत्र भवदीय च नित्यमेधमानमाशासे। उदन्तु नृगिरा वेदितव्य.। विदित हो कि अव हम परमात्मा की कृपा से उदयपुर मे पहुच कर नौलखा वाग के राज मन्दिर में निवाश किया है। और एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर भी सुशोभित हुये थे। कोई एक दो कला पर्य्यन्त अच्छे २ विषयों मे चर्चा भी हुई थी। और पश्चात् जो २ लिखने योग्य वर्तमान होगा वह श्रीमान् के निवेदन किया जावेगा।

श्रीमान् अपने कुशल समाचारो को विदित किया करें। प्रथम तो श्रीमान् महाशयों ने करुणा पूर्वक ४०००० हजार पुरुषों की ओर से हस्ताक्षर कर पत्र मस्वा-पुरी में हमारे पास भेजा था, परन्तु अव इस विषय में श्रीमानो के प्रवन्ध से कितनी सही हुई हैं। जो भवान् सदृश महाशय इन महोपकारक माता पिता के समान संसार के रक्षक करुणा पात्र गायादि पशुओं के दु:ख निवारणार्थ प्रयत्न किया है वा करते जाते हैं वह अवश्य सफल होकर इस आर्य्यावर्त्त की औषधि रूप होकर सव आर्यों के हृदय की अग्नि को शान्त करेगा।

किमधिकलेखेन श्रीमद्राजाधिराज बुद्धिमद्विचक्षणेषु अलमिति॥

श्रावण[2] शुक्ल १ मगल सवत् १९३९।[3] (उदयपुर)

[दयानन्द सरस्वती]

---

१ श्री स्वामी जी लग भग १० अगस्त को उदयपुर पहुचे होंगे। मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में सुरक्षित है। जनवरी सन् २७ में म० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की।

फरुखावाद का इतिहास पृ० १९७ पर भी छपा है।

२ यह द्वितीय श्रावण है। शुक्ल १ को मोमवार था। क्या प्रतिलिपि करने वाले ने २ को १ तो नहीं पढा।

३. १५ अगस्त १८८२। मूलपत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

[१] पत्र (३०३) [३३३]

ओ३म्

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनदित रहो।

विदित हो कि हम मुम्बई से चलकर ठहरते ठहराते अब उदयपुर मे पहुंच कर नौलखा बाग के राजमहल मे निवास किया है। एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर श्री महाराणा जी पधारे थे। अच्छे विषयों मे वार्त्तालाप हुआ। और राजपुरुष प्रतिदिन आया जाया करते है। यथायोग्य प्रश्नोत्तर भी होते हैं। जो आगे विशेष वर्तमान लिखने योग्य होगा विदित करेंगे। आशा है कि आप अपना कुशल क्षेम का भी समाचार लिखेंगे।

बड़े आश्चर्य का विषय है कि पुकारते तो है हमारी उन्नति हो, परन्तु उन्नतिकारक विषय जब आ पड़ता है तब ऐसे निरुत्साही और भयातुर होकर चुपचाप बैठ रहते हैं। क्या ऐसी ही बातों से उन्नति होने की आशा करते हैं। देखिये लाला कालीचरण जी ने प्रथम चिट्ठी पर चिट्ठी भेजी और बड़ी शीघ्रता के साथ लिखा कि (मुरादाबाद वाले जगन्नाथ निमित्त प्रश्नोत्तरी के) विस्तार-पूर्वक उत्तर प्रमाणों के साथ भेजिये । जब हमने वेदभाष्य के काम को छोड़ प्रमाण सहित उत्तर लिख रजष्टरी कराके भेज दिये और उसके साथ एक पत्र भी भेजा कि शीघ्र छपवा कर प्रसिद्ध कर देओ।[1] उस शीघ्रता का फल यह हुआ कि अब दो महीने व्यतीत हुए एक अक्षर भी नही छपवाया। लिखा कि प्रश एकट होने वाला है। उसको देखे पश्चात् छपवावेंगे। यह इनको केवल किसी के बहकाने से भ्रम मात्र हुआ है। क्योंकि जो ऐसा होता तो भारतमित्रादि पत्रो मे अवश्य छपता। अथवा अन्य मनुष्यो के द्वारा भी सुनने मे आता। सो केवल प्रश एकट के भ्रम होने से डर गये हैं। भला ऐसे २ सद्य॰ कर्त्तव्य कर्मों के करने मे भ्रम मात्र से डरकर निरुत्साही हो जाना अवनति का कारण नही तो क्या है। इसलिये—

आप उस प्रश्नोत्तरी के उत्तरो को ले के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आर्य्यसमाज अजमेर के पास देखत पत्र के भेज दीजिये । अथवा जो अगले भारतसुदशाप्रवर्तक के अक मे छपने का प्रारम्भ हो गया हो तो कुछ चिन्ता नही। दूसरी अति शोक करने की यह बात है कि आज काल सर्वत्र अपनी आर्यभाषा के राजकार्य में प्रवृत्ति होने के अर्थ (भाषा के प्रचारार्थ जो कमीशन हुआ है) उसमें पंजाब हाथा आदि से मेमोरीयल

---

१. देखो पत्र पूर्णसख्या ३७७ ।

भेजे गये हैं। परन्तु मध्यप्रान्त फर्रुखाबाद, कानपुर, बनारस आदि स्थानों से नही भेजे गये। ऐसा ज्ञात हुआ है। और गत दिवस नैनीताल की सभा की ओर से एक इसी विषय में पत्र आया था। उसके अवलोकन से निश्चय हुआ कि पश्चिमोत्तर देश से मेमोरियल नहीं गये। और हम को लिखा है कि आप इस विषय मे प्रयत्न कीजिये। अब कहिये हम अकेले सर्वत्र कैसे घूम सकते हैं। जो यही एक काम हो तो कुछ चिन्ता नही। इस लिये आप को अति उचित है कि मध्येदश में सर्वत्र पत्र भेज कर बनारस आदि स्थानों से और जहां २ परिचय हो सब नगर वा ग्रामों से मेमोरियल भिजवाइये। यह काम एक के करने का नही। और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ तो आशा है कि मुख्य सुधार की एक नीव पड़ जावेगी। आप स्वय बुद्धिमान् हैं। इस लिये विशेष लिखना आवश्यक नहीं। और गोरक्षार्थ कितनी सही हुई है। इस विषय में ध्यान देना अवश्य है। बड़े हर्ष के ये दोनों विषय प्रकाशित हुए है। इस लिये जहां लो हो सके तन मन धन से सब आर्य्यों को अति उचित है इन दोनो कार्यों के सिद्ध करने मे प्रयत्न करें। वारवार ऐसा ही निश्चय होता है कि ये दो सौभाग्यकारक अंकुर आर्यों के कल्याणार्थ उगे हैं। अब हाथ पसार न लेवे तो इस से दौर्भाग्य दूसरी क्या व होगी। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु। लाला निर्भयराम से हमारा आशीर्वाद कहियेगा।[1]

शुद्ध श्रावण शुक्ल ३ बृहस्पति सम्वत् १९३९।[2]

[दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

---

१ पहले हम ने इस पत्र का लग भग आधा उत्तर भाग बगाली बाबू श्री देवेन्द्र नाथ के सग्रह से श्री प० घासीराम जी की कृपा से म० मामराज द्वारा अक्टूवर २६ में प्राप्त किया था। वह पुरानी सख्या १७३ के अन्तर्गत छापा गया था। फिर ला० मामराज फरूखाबाद से सन् २७ में मूलपत्र की प्रतिलिपि लाये। तब पहला अमुद्रित भाग सख्या २२८ के अन्तर्गत छापा गया। अब सारा पत्र मूल से मिला कर यहा छापा गया है। मूलपत्र फरुखाबाद आर्यसमाज में सुरक्षित है।

२ शुद्ध श्रावण शुक्ल ३ को १८ जुलाई मलवार है। अतः यह तिथि अभिप्रेत नहीं। द्वितीय श्रावण शुक्ल ३ को १७ अगस्त १८८२ बृहस्पतिवार है। यही तिथि ठीक है। निश्चय ही यहा शुद्ध के स्थान में द्वितीय श्रावण चाहिये। शुद्ध श्रावण अर्थात् जुलाई तक श्री स्वामी जी उदयपुर नहीं पहुचे थे। ता० ९ या १० अगस्त को पहुचे। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१६ से २१८ पर किंचित शब्दभेद के साथ छपा है।

[२१] पत्र (३०४) [३३४]

(ओ३म्)

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दि रहो।

विदित रहो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार मालूम हुआ। तुम ने 'आर्य प्रश्नोत्तरी' के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया। अब वे शीघ्र छाप डालेंगे। विद्यार्थियो को निम्नलेखानुसार ग्रन्थ पढ़ना पढ़ाना चाहिये। कि प्रथम क्रम से वेदाङ्गप्रकाश पढ़वाना। फिर वैदिक निघण्टु। फिर पिङ्गल सूत्र। पश्चात् काव्य की रीति से मनुस्मृति। इत्यादि ग्रन्थ जब पढ चुकें तब आगे पूछना। और हम यहा आनन्द मंगल मे हैं। आशा है कि परमेश्वर की कृपा से तुम भी कुशल युक्त होगे। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।[1] द्वितीय श्रावण शुदी १० गुरु सम्वत् १९३९।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

[राज मेवाड उदयपुर]

---

[४] पत्र (३०५) [३३५]

ओ३म्

श्रीयुत पण्डित गोपालराव जी अनन्दित रहो।

विदित हो कि गोरक्षार्थ हस्ताक्षर पत्र के सहित आप का कुशल पत्र पहुंचा। पत्रस्थ समाचार के अवलोकन करने से अत्यन्त हर्ष हुआ। यह आप ने सर्वोपकारक धन्यवादार्ह पुरुषार्थ किया। परमात्मा दिन प्रति ऐसे ही कर्मों के सिद्ध करने मे उत्साही करे। आशा है कि आर्य भाषा के प्रचारार्थ भी आप स्वपुरुषार्थ की प्रकटता करेंगे। हम उदयपुर पहुंच कर नौलखा बाग़ के राज महलो मे ठहरे हैं। एक बार श्रीयुत आर्यकुल दिवाकर श्री महाराणा साहब पधारे।

---

१ मूलपत्र आर्य स० फरुखाबाद में सुरक्षित हैं। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०० पर भी छपा है।

२. ता० २४ अगस्त १८८२।

परस्पर प्रेम प्रीति के साथ समागम हुआ। जैसा उनका नाम है वैसे ही गुण भी देखे। इत्यादि।[1] द्वितीय श्रावण[शुदी] १२ शनि सम्वत् १९३९।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१]　　　　पत्रसूचना (३०६)　　　　[३३६]

श्री राव वहादुरसिंह जी मसूदा।

दुतीक श्रावण शुदी १२ [उदयपुर]।[3]

---

[२]　　　　पत्र सूचना (३०७)　　　　[३३७]

[छगनलाल मसूदा]।

·········महाराज गजसिंह जी और उनके भाई भी व्याख्यान में आये।[4]

---

[३०]　　　　पत्र (३०८)　　　　[३३८]

प्रवन्ध-कर्ता मुन्शी समर्थदान जी आन्दित रहो!

विदित हो कि ऋग्वेद के दो पृष्ठ हमने भेजदिये पहुंचे होंगे। और यजुर्वेद के भी भेजे हैं। आज सत्यार्थप्रकाश के शुद्ध कर के ९ पृष्ठ भूमिका के और ३२ पृष्ठ प्रथम समुल्लास से भेजे हैं पहुंचेंगे। भीमसेन के पास हमने पत्र भेज दिया और यह लिख दिया कि हम अपने पास तुझको २२) नगद और अन्न वस्त्र

---

१. दयानन्द दिग्विजयार्क तृतीय खण्ड पृ० ७९ से उद्धृत। फरुखावाद का इतिहास पृ० २०० पर भी छपा है।

२. २६ अगस्त १८८२। पत्र पूर्णसंख्या ३३२ के अनुसार १५ अगस्त तक महाराणा जी एक वार ही आए। और पुनः २६ तक नहीं मिले। २९ को मिले, देखो पत्र पूर्णसंख्या ३३८।

३ पत्र के संकेत के लिये प० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० ७७ देखो।

४. राव वहादुरसिंह जी मसूदा ने अपने पत्र में पं० छगनलाल मसूदा के नाम आए पत्र में से यह पंक्ति लिखी है। इस पत्र की तिथि पिछले पत्र की तिथि ही अर्थात् द्वितीय श्रावण सुदी १२ होगी।

भी दिया करेंगे। और छुट्टी मे भी उतना ही मासिक दे दिया जायगा। उसका स्वभाव है कि जब तक रुपये पास रहेंगे तब तक ऐसा ही करेगा। तुम भी उसको पत्र लिख देना शीघ्र चला आवे।

वहां क्या ज्वालादत्त एक फार्म के लिये भी तैयार नही कर सकता। वह बड़ा लिखने वाला है। ये दोनो एक से ही हैं। जैसा भूतनाथ वैसा प्रेतनाथ। इनसे चतुराई के साथ काम लेना। ये काम-चोर हैं।

निम्नलिखित पुस्तकें पहुंची

भूमिका	५	गोकरु०	५०
चांदापुर	२४	भूमि०	२५
सध्या	५०	अनु०	२५
व्यवहा०	१०	आर्यो०	४९
सस्कृत	४	शास्त्रा०	२५
सधि	१	गोतम०	२५
नामि	१		
कारकी	१		
सामासि	१		
स्त्रैणस्ता	१		
वर्णो	२		

आज श्रीयुत महाराणा जी इस बाग मे प्रात.काल से पधारे हैं। अब सायकाल से रात्री के समय मे वार्तालाप होगा। जो लिखने योग्य समाचार होगा सो लिखेंगे। यहां हम आनन्द मंगल मे हैं। तुम वहां सब से अच्छी प्रकार काम लेना। आशा है तुम अच्छे प्रकार प्रबन्ध करोगे। और यन्त्रालयस्थो से आशीर्वाद कह देना।[१]

भाद्रवदी १ मंगल सम्वत १९३९।[२] [दयानन्द सरस्वती]
(राज मेवाड़ उदयपुर)

---

१. मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। पहली तीन पक्तिया Works of Maharshi Dayanand, पृ० १२९ पर भी छपी हैं।

[३१] पत्र (३०९) [३३९]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि ३ सप्तंवर का लिखा हुआ अति लम्बायमान पत्र तुम्हारा पहुंचा। पत्रस्थ समाचार मालूम हुये। टैपके विषय मे हमने तुमको प्रथम ही लिखा था कि मगवालो। परन्तु तुम्हारी इस प्रकार की सम्मति हुई थी कि यहां ढलवा लेंगे। अव तुम्हारी सम्मति यह है कि यहां नही वन सकते अस्तु। अव तुम मुम्बई और कलकत्ता से पत्र भेज कर ठीक २ भाव का निश्चय कर लो कि मुम्बई और कलकत्ते से कितना फेर पड़ता है। और जव मगवाओ तव वहुत विचार से मगवाना अर्थात् वावू विशेश्वरसिंह पडित देवीप्रसाद और कम्पोजीटरों से पूछ और आप स्वय देख भार कर। फिर जिस २ प्रकार के जो २ अक्षर वा मात्रा और जिन अक्षरों का अपने यहां अधिक काम पड़ता है उन २ को मगवा लेना। और जो कलकत्ते से मंगवाये जायेंगे तो अच्छा होगा। क्योंकि वहां से टैप मगवाने मे फूण्डरी के साचे भी वरावर काम में आवेंगे। और वही के सांचे अपने यन्त्रालय में हैं भी। इस विषय में पडित जी की भी सम्मति कलकत्ते ही से मगवाने की थी। प्रथम कलकत्ते से टैप मंगवाये थे। सो हम को खवर है कि कोई ४०) रुपये कोई ५०) रुपये और कोई २ ६०) रुपये के हिसाव से आये थे। सो उन मे से अच्छे २ तो वखतावर चुरा ले गया। क्योंकि पीछे तोलने से ५ऽ मन टैप घटा था।

अव सत्यार्थप्रकाश छपेगा। इस लिये भाषा के अक्षर अधिक मगवाना चाहिये। सत्यार्थप्रकाश में सस्कृत पाठ के अक्षर भाषा से कुछ थोड़े उन्नीस वीस होने चाहियें। आजकल जो मूलमन्त्रों वा पदों में अक्षर लगते हैं वे विलकुल कुढगे हैं। इस लिये अव दो तीन महीने का तो वेदभाष्य छपा रक्खा ही है। तव तक आख्यातिक छपवाओ। क्योकि आगे वेदभाष्य उत्तम अक्षरो में छपना चाहिये। और जो तुम ने टैप ढालने वाले के विषय में लिखा ठीक है। वह दश पांच मन टैप नही ढाल सक्ता। किन्तु अटके समय उस का सहायक मात्र है कि जिस से काम वंध न रहे। विशेष अक्षर वह तैय्यार नही कर सकता। और कितना सुर्मा पड़ना चाहिये यह भी उस को ठीक २ ज्ञान नही है। मुम्बई और कलकत्ते के अक्षरों में कुछ वहुत भेद तो नहीं है। किन्तु मुम्वई के अक्षरो की ढाल और प्रकार की है और कलकत्ते की और प्रकार की। परन्तु कलकत्ते से मगवाने में

मुम्बई से दूना नही तो सवाया वा ड्योढा दाम अवश्य लगेगा। आगे जैसे तुम्हारी सम्मति हो। और जहां से मगवाने मे सोविता समझो वहा से मगवाना उचित है। परन्तु इस वात का प्रवन्ध शीघ्र करो। अपने यन्त्रालय के अक्षरों को चलते दो वर्ष हो गये हैं। इस लिये उन मे अव कुछ फेर पड़ गया है। और जिन टैपो मे आख्यातिक के कम्पोज मे कम पड़ते हो उन को जल्दी ढलवा लो। आर्यपत्र लाहौर और देशहितैषी अजमेर जिस प्रकार का नोटिस वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपने के लिये भेजें वैसा एक बार छाप देना। आगे सव काम वुद्धिमत्ता के साथ करना औरो से करवाना।[१]

ता० ८ सिप्तवर सन् १८८२ ईस्वी
भाद्र कृष्णा ११ शुक्रवार
स० १९३९

[दयानन्द सरस्वती]
(उदयपुर राज मेवाड़)

---

[३२] पत्र (३१०) [३४०]

प्रवधकर्ता मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो।

विदित हो कि ता० ४ सप्तवर लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुये।

टैप के विषय में एक पत्र आज भेज चुके। उसके अनुसार प्रवध करना।

जो कही पद छूट जाता है यह भाषा वनाने वाले और शुद्ध लिखने वाले की भूल है। हम प्राय इस बात मे ध्यान नही देते क्योंकि यह सहज वात है। अच्छा जहां कही रह जाया करे तुम देख लिया करो कि किस २ मत्र मे क्या २ छूटा। और यहां लिखके भेज दिया करो।[२]

ज्वालादत्त चाहे रात दिन काम करे परन्तु तुम देखा लिया करो कि कितना काम करता है कितना नही। इस को व्याकरण बनाने मे देर इस लिये लगती है कि उस को व्याकरण का अभ्यास कम है। तभी वहुत सी पुस्तकें रखनी पड़ती हैं—जो इस से आख्यातिक न बन सके तो यहां भेजदो। यहां भीमसेन आजायगा तब उससे बनवाकर शुद्ध करके भेज देंगे।

जिन अक्षरो में वेदभाष्य की भाषा छपती है उसमे भाषा और जिन अक्षरों में पदान्वय छपता है उनमे सस्कृत का पाठ छपना चाहिये। और दो हजार कापी

---

१ मूलपत्र परोपकारिणि सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२ यहा तक पाठ आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय सस्करण के पृ० ३७० पर छपा है।

छपनी चाहियें। जहां २ उचित समझो वहां २ नोट देदेना। सत्यार्थप्रकाश अच्छे कागज और अच्छे टैप में छपवाना। जो इन अक्षरो से पुस्तक न बिगड़े तो छापने का आरम्भ करदो। और मुम्बई कलकत्ते के भाव ताउ का शीघ्र निश्चय करके जहां सोविता पड़े माल अच्छा मिले और दाम कम लगे वहां से मगवा लेना। टैप के विना शीघ्र काम न चल सकेगा।

यहां कोई पांच सात वात चलाई हैं और स्वीकार भी सव करली हैं। परन्तु उनमे से अभी कोई सिद्ध नही हुई। इस लिये नही लिखा। जब उनमे से कोई भी वात सिद्ध हो जायगी वह चाहें गुप्त हो वा प्रगट परन्तु तुमको विदित कर देंगे। अभी तक महाराणा जी का विचार अच्छा है। आगे जैसा होगा विदित कर दिया जायगा।

पांच पत्र गोरक्षार्थ सही कराने के और पांच विज्ञापनपत्र भेजे हैं पहुंचेंगे। न रहे तो वही छपा लेना। हमारे पास सही तो कई स्थानों से आई है परन्तु सख्या हमने नहीं की। जव करेंगे तव लिखेंगे। यहां के कार्य सिद्ध हुये पश्चात सव सख्या पूरी हो जायगी। कार्य सिद्ध्यर्थ प्रयत्न कर रहे हैं। आशा है कि परमात्मा की कृपा से पूरे हो जायँगे।[1]

भाद्र वदी १२ सम्वत १९३९।[2]   दयानन्द सरस्वती
उदयपुर नौलखा वाग

---

[३३]   पत्र (३११)   [३४१]

ओ३म्

प्रवन्धकर्ता मुन्शी समर्थदान जी आनदित रहो।

ता० १३ सितम्वर का लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। दो पत्र पूर्व तुम्हारे पास टैपादि के विषय में विस्तार पूर्वक लिख भेजे हैं पहुचे होंगे। उन्हीं के अनुसार टैप आदि के विषय में शीघ्र प्रवन्ध करना॥

इस पत्र का उत्तर यह है कि जो हम प्रतिदिन एक फार्म के लिये शुद्ध करके भेजा करें तो आगे वेद भाष्यादि का काम सव वंध होजाय। अव आगे वने नहीं तो पुन. छापने के लिये कहां से भेजा जाय। और तुम भी क्या छापो। अव ४

---

१. मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२ ९ सितम्वर १८८२।

महीने का वेदभाष्य छपा रक्खा है। इसलिये इस टैप मे वेदभाष्य आगे न छापना चाहिये। क्योंकि इसके मूल अक्षर बहुत बडे और बेडोल के हैं। जब नया टैप आ जायगा तब वेदभाष्य को अच्छे अक्षरो मे छापा जायगा। हमारा विचार यह है कि ८ फार्म वेदभाष्य के और ८ अन्य वेदाङ्ग प्रकाशादि के १६ फार्म से कम अपने निज पुस्तक न छपने चाहिये। और जो अधिक छापने की आवश्यकता हो शुद्धप्रति छापने के लिये यन्त्रालय मे उपस्थित हो उस समय एक २ फार्म भी प्रति दिन छप सकता है वा अधिक भी। क्योकि अपना काम बढ़ाया जाय तो कुछ कम नही है। जो पडित सुन्दर लाल जी और तुम्हारी भी यही सम्मति है कि जो बाहर का काम यंत्रालय मे लिया जाय तो अधिक यन्त्रालय को फाइदा हो सकता है और हानि किसी प्रकार से न होगी तो भले ही बाहर का काम ले लो। कुछ चिन्ता नहीं। परन्तु जब हम बाहर के काम से निज पुस्तकों के छपने मे वा कुछ और प्रकार से हानि होती देखेंगे तो उसी समय बाहर का काम बध करा देंगे। इस बात मे सर्वदा ध्यान रखना। और जो हमको निश्चय यह विदित हो जायगा कि बाहर के काम से यन्त्रालय को फाइदा पहुचा और निज पुस्तको के छपने मे भी हानि न हुई देखेंगे तो दूसरे प्रेस का भी प्रबन्ध करने मे यत्न किया जायगा। परन्तु किसी प्रकार की हानि होने पर नही ॥

तुम्हारे लिखने से निश्चय हुआ कि सातवें दिन आख्यातिक का एक फार्म तैयार होता है। इसका कारण मुख्य तो यह है कि ज्वालादत्त को व्याकरण का बोध कम है। और आख्यातिक प्रक्रिया भी कठिन है। इस लिए उससे यथावत न बन सकेगी। इसलिये आख्यातिक के पत्रे उससे लेकर यहां भेज दो। कल भीमसेन भी हमारे पास आ गया है। यहां शीघ्र उसको बनवा और शुद्ध करके तुम्हारे पास भेज देंगे।

थोड़े दिनो के पश्चात् और सत्यार्थप्रकाश के पत्रे शुद्ध करके भेज देंगे। तुम सत्यार्थप्रकाश के छापने का आरम्भ कर दो। काम कभी बध मत रखो। और टूट फूटे अक्षरो को फुडगी मे ढलवालो। काम बध मत रखो। और सौवर तथा पारिभाषिक के भी पत्रे बनवाकर भेजे जायेंगे। आर्य्यो० १ चादां० १ इन दो पुस्तकों के कम होने का कारण यह है कि न जाने तुम्हारे बांधने मे कसर रही अथवा डाक मे कुछ बिगाड़ हुआ। हमारे पास तो वहां खुला और पुस्तक टूटी फूटी होकर पहुंची। उसी समय गिनी तो दो कम हुई। ये किसी ने लेली होगी। और वेदान्ति-ध्वान्ति तुमने भेजी कब जो रसीद भेजें। जो भेजा भी हो तो यहां नही पहुंचा। उसने नौकरी क्यो छोड़ी। क्या उसकी इच्छा नौकरी करने की नही थी। हम तो यह जानते

पत्रम् (३१२)

हैं कि तुम्हारे नीचे एक दूसरा सहायक चाहिये क्योकि तुम कही विशेष कारण से गये आये तो वह काम कर सके। इस लिये तुम्हारी इच्छा हो तो किसी योग्य पुरुष को रखलो।

यहां श्री महाराणा जी प्रतिदिन मिलते और समागम करते हैं। और एक मौलवी से प्रश्नोत्तर प्रतिदिन होते हैं और वे लिखे भी जाते हैं सो तुम्हारे पास भेजेंगे। अभी महाराणा जी से दो एक वार एकान्त में गोरचार्थ सही आदि कराने के विषय मे वातें चीतें हुई हैं। आशा है कि यह कार्य सिद्ध हो जायगा। इसके सिवाय जो और कोई वात होगी सो पीछे से लिखेंगे। हम सब प्रकार से आनन्द मंगल से हैं।

उदयपुर

भाद्र शुदी [६ ?] सम्वत १९३९।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

[३४२]

पत्र (३१२)

[३४]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो।

विदित हो कि २१ सप्तम्वर का लिखा हुआ पत्र पहुचा। समाचार ज्ञात हुए। हम तुमको इस विषय मे कई वार लिख चुके हैं कि अभी वेदभाष्य की प्रति इस लिये नहीं भेजते कि वेदभाष्य के मूल मन्त्र तथा पद के अक्षर वेढगे हैं। और भाषा के भी अक्षर घिस गये हैं। इस लिये वाहर के छापने के लिये हमने आज्ञा दे ही दी है। सो लेकर छापो। और उनसे रुपये लो। जव नये अक्षर आ जाय तव वेदभाष्य छापा जायगा।

हमने सौवर भेजा था सो छापते होगे। और कोई ८ वा १० दिन मे पारिभाषिक तैयार करा कर भेज देंगे। इस पत्र के साथ दूसरा पत्र भेजा है। उसके पास विक्रिय पुस्तको का सूचीपत्र भेज देना।

पत्र तुम्हारा दूसरा भी २९।९।८२ समय का लिखा आया। हाल जाना। इस मे दो वातें हैं। एक तो अक्षर मगाने के लिये तुमने पं० सु० जी० की सम्मति विरुद्ध लिखी। सो आज हम भी एक पत्र उन को भेज देते हैं। वे तुमको सम्मति शीघ्र देवेंगे। तुम कलकत्ते मे यदुनाथ वनर्जी को लिखो कि

---

1 १८ सि० १८८२। तिथि हम ने अनुमान से लिखी है। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

वे अक्षर भेज देंगे। पहिले ४०) रु० मन उनके यहां से पहिले आये थे। सो अब भी मिलेंगे। भाड़ा पृथक लगेगा। और जितने मन अक्षरो की आवश्यकता हो और जो २ अक्षर जितने २ कम वढ चाहिये सो सव उन के रुपये हम वही कलकत्ते मे दिला देंगे। और सेवकलाल निर्भयराम को भी हम कागज के लिये लिखदेंगे। और सत्यार्थप्रकाश के छपाने को हमारा तो यही विचार है कि नवीन टैप मे छपे। जो आरम्भ न किया होय तो पीछे छापना। और आरम्भ कर भी दिया हो तो उस मे सस्कृत के मूल वचन कुछ वड़े अक्षर मे और भापा छोटे मे। तथा जो तुमको विचार पूर्वक नोट देना हो सो भी देते जाना।

सवत १९३९ आश्विन वदी ६ च०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
उदयपुर

---

[३९] पत्र (३१३) [३४३]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा पहुंचा समाचार ज्ञात हुये। परन्तु उसका उत्तर जो तुमने कागजात भेजे हैं उनके पहुंचे के पश्चात भेजेंगे। सत्यार्थप्रकाशादि किसी पुस्तक मे जो नोट लिखो तो उसमें किसी का नाम न लिखना। किन्तु टाइटल पेज के ऊपर तो तुम्हारा नाम रहना ही चाहिये। परन्तु ग्रन्थ के नोट पर न रहना चाहिये।[2] सरदार विष्णुसिंह जी मोहतमिम जंगलात उदयपुर के पास आज तक का जितना दोनो वेदो का भाष्य आरम्भ से छपा है भेज दो और आगे को भी सदा भेजा करो। परन्तु भूमिका मत भेजना। क्योकि वह यहां से लेली है और जैसा ऊपर लिखा है ....।[3]

---

१. २ अकतूबर १८८२ सोमवार।

२ प्रतीत होता है कि जब सत्यार्थप्रकाश का प्रूफ श्री स्वामी जी के पास पहुचा तो उस में ऐसा नोट देख कर ही श्री स्वामी जी ने समर्थदान को ऐसा करने से रोक दिया।

३. यहा से आगे का पत्र फटा हुआ है अत पूरा नहीं छप सका। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। उदयपुर से लिखा गया।

[३] पत्रांश (३१४) [३४४]

प० छगन लाल [मसूदा]

....

श्रीयुत महाराणा जी दूसरे तीसरे समागम करते हैं। और उपदेश सुन कर बहुत से व्यसन अर्थात् दिन का सोना, रात्रि में न सोना, दिन चढ़े उठना इत्यादि बहुत बातें छोड़ दी हैं। और अच्छी २ बातो को ग्रहण करते जाते हैं।

आश्विन सु० ११ स० १९३९। ७ अकतूबर ८२।[1] उदयपुर[2]

---

[९] कार्ड (३१५) [३४५]

ओ३म्

सम्वत् १९३९ आश्विन वदी १४।[3]

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो। महाशय कई एक पत्र आप के पास विस्तार पूर्वक समाचार लिख के भेजे परन्तु प्रत्युत्तर एक का भी न मिला। इस में क्या कारण हुआ। अब पत्र देखते ही अपना विस्तार पूर्वक समाचार भेजना। श्रीयुत जगद्गुरु स्वामी जी महाराज उदयपुर मे विराजमान हैं। श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी अत्यन्त प्रेम से आते हैं और उपदेश सुनकर बहुत हर्षित होते है। कई एक बातों को छोड़दी जो कि हानिकारक हैं। और कई एक बातें जो कि सर्व सुख दायक हैं उनको ग्रहण कर ली हैं। आशा है श्री स्वामी जी के प्रताप से यह देश भी पवित्र हो जायगा। गोरक्षार्थ यहा भी सही हो गई हैं। आशा है कि यहां के सम्बन्ध से अन्यत्र अर्थात् जोधपुराधीशो आदि राजाओ से हो जायगी। विशेष समाचार तुम्हारे पत्र आये के पश्चात् लिखूगा।[4]

(रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर)

---

१ प० लेखरामकृत जीवनचरीत पृ० ५६८ पर इतना अश उद्धृत है।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित में भूल से रायपुर छप गया है। रायपुर के स्थान में उदयपुर होना चाहिये। सु० ११ लुन है। २२ और २३ अकतूबर था। ७ अकतूबर को आश्विन वदी ११ है। यही तिथि ठीक प्रतीत होती है। जीवनचरित में कुछ भूल हुई है।

३ १० अक्टूबर १८८२।

४ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[३६]　　पत्र (३१६)　　[३४६]

ओ३म्

प्रबन्धकर्त्ता मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो ।

विदित हो कि ७-१०-८२ नम्बर १३०५ का पत्र आया । समाचार विदित हुए । हम तुम्हारे पत्र भेजने मे कुछ भी विलम्ब नही करते । हमने बाहर के काम लेने के लिये तुम को पत्र द्वारा आज्ञा दे दी थी । उस बात को कोई एक मास हुआ होगा । तुमने कुछ भी नही लिखा कि अभी तक लिया वा नहीं । इसका उत्तर देना । जो एक फारम के अनुमान नित्यप्रति शोध कर तुम्हारे पास भेजा जाय तो यहां का सब काम अर्थात् वेदभाष्यादि का बनाना छूट जाय । प्रत्युत इस काम के लिये महाराणा आदि जी से कह दिया गया कि सन्ध्या समय आया करें । हमको कुछ भी अवकाश नही मिलता । अर्थात् प्रातःकाल से ११ वा १२ बजे तक वेदभाष्य बनाते हैं । पश्चात अन्य काम शोधने आदि का । और वह काम ऐसा है कि विना हमारे बन नही सकता । जो कहीं भाषा असबध हो और अभिप्राय वा अक्षर मात्रा आदि से अशुद्ध हो उस को तुम ही शोध लिया करो । बाहर के काम के लिये विना यहां से तुम्हारे योग्य इस समय छपवाने के लिये नही भेज सकने । जैसी तुम जल्दी चाहते हो ऐसा तो तब होसके कि जब हम स्वय छापेखाने मे आकर तुम को शोध २ दिया करें और तुम छापो ।

कल तुम्हारे पास ३३ पृष्ठ से ५७ पृष्ठ सत्यार्थप्रकाश के पत्रे[1] और पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ तथा जितना यहां वेदार्थयत्न के अंक हैं अर्थात् २० अक वे सब भेजेंगे ।[2] तुम हम को यह लिखना कि सत्यार्थप्रकाश के कितने पृष्ठ एक फारम मे लगते हैं । सो ब्यौरे वार से जब लिख भेजोगे तब हम यहां से अनुमान करके लिख देंगे कि सब सत्यार्थप्रकाश के इतने फारम होगे । हमने तुम को कई एक वार लिखा कि वहां जो कुछ हमारी फुटकर चीज व वस्तु पड़ी हैं उस का सूची बना के भेजो । सो अभी तक नही भेजा । शीघ्र अब लिखके भेजना ।

शोक की बात है कि तीन चार पत्र हम भी सेवकलाल को भेज चुके हैं । परन्तु एक का भी उत्तर न दिया । इसी प्रकार तू हमारे पत्रो के विषय मे कर्ता

१. २९ अगस्त को ३२ पृष्ठ तक भेजे थे । देखो पत्र पूर्णसख्या ३३८ ।

२. सायणकृत अथर्ववेदभाष्य के सम्पादक पण्डित बालकृष्ण शङ्कर पाण्डुरङ्ग इस ग्रन्थ वेदार्थयत्न को निकाला करते थे ।

होगा। जो तुम इस से काम चलते न देखो तो स्वतन्त्र किसी मातवर आदमी की दुकान से कागज़ आदि मंगवाने के लिये प्रवन्ध कर लो। क्योंकि अव तुम्हारे पास वहां कुल १० रीम वाकी हैं। जो शीघ्र न भेजेगा तो कागज़ के विना काम ही वन्ध हो जायगा। जहां से टैप मिले वहा से जितना चाहो मगवा लो। इस विषय में पडित जी को भी हमने लिखा था कि टैप मगवाने की तुम को आज्ञा देदें। न जाने तुम को आज्ञा दी वा नही। आशा है कि अवश्य वे तुम को आज्ञा देंगे। और तुम शीघ्र टैप मगवा लो। परन्तु हम को यह लिखो कि तुम कै मन टैप मगवाना चाहते हो और क्या खर्च पड़ेगा। इस वात का निश्चय करके लिखो। अव तुम रजिस्ट्री कराके पत्र सेवकलाल के नाम से भेजो कि जिस मे उस की सही तुम्हारे पास आ सके। हम ने भी आज एक पत्र मास्तर प्राणजीवनलाल कानदास जी के नाम से भेजा है। क्योंकि वे उस को समझा देंगे और जिन वातों का उत्तर हमने मांगा था सो सो भी सव उसमे लिखवा भेजेंगे। हमारा आशीर्वाद जज कार्ष्टीफन साहेब को लिख भेजना। कुवर जवाहर सिंह जी के रुपये अर्थात् २२॥=) भीमसेन के मार्फत हमारे पास आये सो तुमको लिखा था वेदभाष्य में क्यों नहीं छपे। क्या अगले मे छापोगे? और रजिस्टर में जमा कर लेना।[1]

सम्वत् १९३९ आश्विन सुदी ३ रवि।[2]

(उदयपुर)
[दयानन्द सरस्वती][3]

---

[२२] कार्ड (३१७) [३४७]

ओ३म्

लाला कालीचरणदास जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि तुम आर्य्यसमाज के पत्र में नाटक का विषय मत छापो। यह अनुचित वात है। यह आर्य्यसमाज है। भडुआ समाज

---

१. शताब्दी संस्करण, भूमिका पृ० १८ पर खण्डश मुद्रित। Works of Maharshi Dayanand पृ० १२८ पर शताब्दी संस्करण की अपेक्षा कुछ अधिक भाग मुद्रित।

२ १५ अक्तूवर १८८२। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

नहीं। जो तुम नाटक का विषय छापते हैं ऐसा करना भड़ुआपन की बात है। इस लिये ऐसा वर्त्तना उचित नहीं।[1]

ता० १६ अकटूबर।[2] [द० स०]

---

[९] पत्रांश (३१८) [३४८]

[माई भगवती........................... ..हरियाना, पञ्जाब]

..............तू लाहौर जा सके तो हम लाहौर आर्यसमाज को तेरे वास्ते लिखें। ....

१६ अक्तूबर १८८२।[3]

---

[१०] पत्र (३१९) [३४९]

ओ३म्

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो—

पत्र तुम्हारा पहुंचा। कुशल समाचार ज्ञात हुए। परमात्मा की कृपा से यहां श्री परमगुरु जी आदि सब आनन्द मङ्गलयुत हैं। अनुमान है कि

---

१. मूलकार्ड आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० २०२ पर भी छपा है। इस की प्रतिलिपि म० मामराज ने की।

२. लिफाफे की मुहर पर उदयपुर से पत्र का चलना लिखा है। सन् १८८२।

३ यह पत्रांश और इस का संकेत म० मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ४५०-५२ पर है।

पत्रम् (३१९)

अब थोड़े दिनों के पश्चात् स्वामी जी की उदयपुर से अन्य स्थान को यात्रा होगी। मेरा निज समाचार आप से मित्रता होने के कारण विदित करता हूं कि मेरे पिता जी का स्वर्गलोक हो गया है। इस कारण से अब मैं घर को जाने वाला हूं। अनुमान है कि दश वा बारह दिन के पश्चात् जाऊंगा। दूसरा प्रयोजन यह भी है कि मैं कुछ काल निरन्तर पढ़ना चाहता हूं। क्योंकि ब्रह्मचर्याश्रम केवल मैंने विद्या पढ़कर परोपकार करने के अर्थ लिया है और श्री परम गुरु स्वामी जी की भी पूर्ण कृपादृष्टि है। अब आप को पत्र मैं फर्रुखाबाद पहुंचने पर दूंगा॥

अब जो आप के प्रश्न और जो फर्रुखाबाद से रुपये दिया करते हो उसका उत्तर श्री गुरु जी की आज्ञा से लिखता हूं। आप निश्चित समझना॥

१—रुपयों के विषय में स्वामी जी ने यह आज्ञा दी कि रुपये फर्रुखाबाद में ही भेजना चाहिये। और हमारे पास जितना रुपया पण्डितों के मासिक में लगता है वह फर्रुखाबाद ही से लगा करता है। अभी हाल में २००) रुपये मुम्बई में मंगवाये थे। तुम कुछ सन्देह मत करो। वहां से जब २ हम चाहते हैं मंगवा लेते हैं। इस लिये तुम वहीं भेजना॥

प्रश्नों का उत्तर—धर्म कार्य के करने में जो पिता आदि किसी प्रकार का विघ्न करें तो उनकी ऐसी बात सर्वथा अमन्तव्य है। हां, पुत्र को उचित है कि माता पिता चाहे कैसे ही दुष्टाचारी क्यों न हों उनकी अन्न वस्त्र से सेवा अवश्य ही करनी चाहिये। जो वे पुत्र की सेवा न चाहें तो ऐसा करना उचित है कि जिस समय पुत्र अपने माता पिता को दुःखी देखे, उस समय बिना पूछे गाढ़े सेवा करना उस को चाहिये॥

२—चाहे कोई निन्दा वा स्तुति करे वा न करे तो भी धर्म जो कि सत्य भाषणादि है नहीं छोड़ना। क्योंकि लौकिक जितने मनुष्य हैं उन से मित्रता यहीं काम में आती है परन्तु परलोक में धर्म्म के बिना दूसरा सहायक मित्र कोई भी नहीं है। देखिये इस विषय में एक श्लोक लिखे देता हूं। आप कण्ठस्थ कर लेना—

(निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥)

इसका अभिप्राय यह है कि ससार मे चाहे कोई निन्दा करे वा स्तुति, लक्ष्मी अर्थात् धनादि पदार्थों की प्राप्ति हो चाहे अप्राप्ति, और मरण चाहे इसी समय हो वा कालान्तर मे परन्तु धीर पुरुष ऐसी २ विपत पर भी धर्म रूपी मार्ग नही छोड़ते। इसका फल यह है कि जो पुरुष ऐसा दृढनिश्चययुक्त धर्म पथ मे स्थिर होता है उस के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारो की प्राप्ति होती है॥

स्त्री का पढाना अत्युत्तम है, यथेष्ट पढाओ। और सस्कारविधि के अनुसार गर्भाधान सस्कार [कर]के पुत्रोत्पत्ति करना॥

हे प्रिय! अब मै अपनी ओर से इतना विशेष लिखता हूं कि तुम अपनी स्त्री को इस मन्त्र को शुद्ध बतला देना—

(ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव)

यजु० अ० ३० मं० ३

इस का अर्थ भूमिका मे देख के सुना देना। इस समय पिताजी के देवलोक हो जाने के कारण विशेष आप को नहीं लिख सका, परन्तु जब २ आप को कुछ प्रष्टव्य हुआ करे आप अवश्य लिखा करे। मै उत्तर देने मे आलस्य न करूंगा॥

कात्तिक शुदी १ सम्वत् १९२९॥[1]

(रामानन्द ब्रह्मचारी)
उदयपुर

---

[७] कार्ड (३२०) [३५०]

ओ३म्

बाबू कृपारामजी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। और जो तुमने ५०००[०] पचास हजार की सही कराके मेरठ भेज दी, सो अच्छा किया। और ब्राह्मी औषधी सेर भर का पारसल करके उदयपुर मे भेज दो। यहा उदयपुर का समाचार अतीव प्रशसनीय है। और सुनकर सबको आनन्द भी होगा। श्रीमान् आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी बहुत योग्य हैं। उन्होने हमारे उपदेशानुसार

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। २. ११ नवम्बर १८८२।

पत्रम् (३२१)

अपनी दिनचर्य्या, राजकार्य्य और धर्मकृत्य भी करना आरम्भ कर दिया है। प्रातः साय काल सात बजे मेरे पास नित्य प्रति आया करते हैं। कभी २ रात्रि को मैं शम्भु-विलास महिल मे जाया कर्ता हू। प्रातः काल कुछ योग वा राज-नीति की शिक्षा होती है। और सायंकाल दर्शनशास्त्रों के उपयोगी विषय पढ़ते हैं। उनके साथ बहुत से भाई बेटे तथा अमात्यवर्ग भी पढ़ते हैं। और सब अच्छी बातें हैं। आगे जो २ उत्तम बात होने वाली हैं, होंगी, तो सबको प्रसिद्ध कर दी जायगी।[1]

दयानन्द सरस्वती

स० १९३९ मार्गशीर्ष वदि ५, ता० २९ नवम्बर [१८८२]।

---

[३५१]

पत्र (३२१)

[१०]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि बहुत दिनों से अवकाश नही होने के कारण पत्र नहीं लिखा। अब कुछ प्रसग से लिखते हैं। यहां का वर्त्तमान बहुत अच्छा है। जो लिखने लगें तो एक पुस्तक बन जावे। सो पीछे सूक्ष्मता से आप को विदित कर देंगे। परन्तु यही समझ लेना कि समाचार बहुत ही अच्छा है। जब आप सुनेंगे प्रसन्न तो अवश्य हो जावेंगे। और हर साल आप शीत काल मे घूमने को जाते थे। यदि आप की इच्छा हो तो यहा हम कम से कम १५ दिन रहेंगे। आप आवें तो यहा का वर्त्तमान भी सब विदित हो जावेगा। और श्री महा[रा]णा जी तथा अन्य राजपुरुषो से भी आप का मेल मिलाप हो जावेगा। सो यदि आप आवें तो १५ दिन के भीतर ही विचार करना चाहिये। सो जो आप के आने का पत्र यहां आवेगा, तब चितौड़ गढ़ रेल से यहा तक आने के लिये सवारी का प्रबन्ध भी हम कर देंगे। और लाला कालीचरण जी से कह दीजिये कि उनका पत्र हमारे पास आया। हमारा अभिप्राय यह नही था कि ६००) वा ३००) तुमको देने पडेंगे। किन्तु लिखने वाले की भूल है। हमारा अभिप्राय यह है कि २००) रु० कम से कम देना चाहिये कि जिस से ३ फारम का नवीन टाईप मगा

---

१. मूलपत्र प० बुद्धदेव जी वि० की भगनी के पास गुरुकुल काङ्गड़ी में है। उस से सन् ३३ में म० मामराज ने शुद्ध किया। पहले मेरठ से आई प्रतिलिपि से छापा गया था।

लिया जा[वे]। और ६००) रुपये के विषय मे यह अभिप्राय है कि जो समाजों के समाचारपत्रादि सब पुस्तक छपने लगेंगे, तो दूसरा प्रेस मंगाने के लिये जिन २ के पुस्तक छपेंगे सब से रु० लिये जायेंगे। और निकाल भी दिये जायेंगे। अब भारतसुदशाप्रवर्तक प० लक्ष्मीदत्त जी से लिखाना चाहिये। वे संस्कृतयुक्त अच्छा विषय लिखेंगे। और नाटक का विषय तो नाम मात्र भी नहीं आना चाहिये। जो अच्छा विषय भी लिखना हो वह प्रश्नोत्तर वा अन्य प्रकार से लिखा जावे। नाटक[नाम] तमाशे का है। क्योंकि तुम्हारे नाटक को[लिखा] देख के लखनऊ के समाज मे नाटक का व्याख्यान ही होने लगा। जब हमने मने किया तो कहने लगे कि अपने फरुखाबाद समाज[के] पत्र में नाटक क्यों छपता है।[1] यह नाटक से बिगाड़का उदाहरण है।और पाठशाला में संस्कृत पढ़ के कितने विद्यार्थी समर्थ हुए। अथवा अंगरेजी फारसी में ही व्यर्थ धन जाता है। सो लिखो। जो व्यर्थ ही हो तो क्यों पाठशाला रक्खी जाय। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० मार्ग वदी १४ शनिवार स० १९३९।[2]

यह रुका सेठ निर्भयराम जी को देके १२) रु० मंगवा कर हर्जु कहार के लड़के रामदीन को दिला देना॰। और वहां के मुनीम से कहना कि रु० देने मे देर न करे।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. १० सितम्बर सन् १८८२ को लखनऊ आर्यसमाज के मन्त्री श्री हरनामप्रसाद जी ने एक पत्र श्री स्वामीजी को लिखा। उस में नाटक का उल्लेख है। देखो म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३५७।

२ यह सारा पत्र ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की अपनी लेखनी का लिखा हुआ है। ९ दिसम्बर सन् १८८२।

३. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१९-२० पर भी कुछ पाठभेद के साथ छपा है।

[२] पत्र (३२२) [३५२]

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो—

कुछ दिन हुए कि एक रजिष्टरी पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद की ओर से आया था। उस में यह विषय था कि जो देशहितैषी में प्रश्नोत्तरी के विषय में छपा है सो किस की ओर से है। आप की सम्मति से है वा नहीं। उस का यही उत्तर है कि वह किसी की ओर से छपा हो, अच्छा है। क्योंकि प्रश्नोत्तरी में जितने विरुद्ध विषय लिखे गये थे उन के सत्यासत्य निर्णय के लिए उन का उत्तर छपना योग्य था। और मैं भी उस प्रश्नोत्तरी के विरुद्ध विषय के उत्तर में सम्मत हूं क्योंकि जो ऐसा न हो तो जिसके मन में जैसा आवे वैसी ही बात लिख कर चला देवे। सब मनुष्यों को यही उचित है कि सत्यासत्य का निर्णय कर करा के सत्य को मानना, मिथ्या को छोड देना। अब इसका उत्तर दीजिये कि जो १००) रुपये वैदिक यन्त्रालय के सहाय मे आर्यसमाज मुरादाबाद से आये थे उस के देने की प्रतिज्ञा तीसरे वर्ष की पूर्ति तक थी। सो आगामी वैशाख की पूर्ति में तीसरा वर्ष पूरा होगा। सो वैशाख तक जहां २ से जितने २ रुपये आये हैं, दिये जांयगे। अब उस में यह भी प्रतिज्ञा थी कि व्याज के वदले १०) रु० के पुस्तक और मूल रुपये भी दिये जायगे। सो किस प्रकार किस के पास भेजा जाय। समाज से सम्मति लेकर लिखिये। और १०) रु० के कौन पुस्तक लेना है सो भी लिखना। यहां का समाचार वहुत अच्छा है पीछे लिखेंगे। और हमारा आशीर्वाद सब से कह दीजिए।[1]

स० १९३९ मार्ग शु० ७ रविवार।[2] (दयानन्द सरस्वती)

---

[२] पत्र सूचना (३२३) [३५३]

[माई भगवती ·········हरियाना पंजाब][3]

हमारा उत्तर लिखने का अवकाश नही। सत्यार्थप्रकाश और भूमिका में लिखा है।

१७ दिसम्बर १८८२।

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है।

२ १७ दिसम्बर १८८२।

३. इस पत्र का संकेत म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ४५३-५७ पर है।

[३७] पत्र (३२४) [३५४]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुआ। अब तुम बहुत शीघ्र नया टैप मगाओ, नही तो सत्यार्थप्रकाशादि सब पुस्तक बिगड़ जायेंगे। चाहे दोनो ओर से मंगाओ पर शीघ्र मगाओ। हम लिख चुके हैं कि गत महीने मे कितने फर्मे छपे और आख्यातिक तथा पारिभाषिक आदि पुस्तक मगाये हैं क्यो नही भेजे वा उत्तर दिया? अब शीघ्र भेजो। और कोश के विषय मे जो तुमने लिखा सो हम ऐसा कोश नहीं बनाते हैं कि सब कोशो से सब शब्दों का संग्रह करते हो। किन्तु उणादि के ऊपर अनुकूल सुगम संस्कृत मे वृत्ति बनाई है। उसके प्रत्ययों के प्रसङ्ग मे जो अन्य शब्द आये हैं वे भी लिख दिये हैं। सो बन के तो तैयार हो गया है। सूचीपत्र बाकी है। निघण्टु सूचीपत्र के सहित तुम्हारे पास भेज दिया है। और निरुक्त तथा ब्राह्मणो के प्रसिद्ध शब्दो की सक्षिप्त सूची भी बनाकर भेजेंगे। सो निघण्टु की सूची के अन्त मे छपवाना। और ज्वालादत्त के पास भाषा बनाने के लिये अब भेजे वा ऐसा ही रक्खोगे। ५ भूमिका और सत्यार्थप्रकाश के फारम भेजे थे सो पहुंच गये। परन्तु सत्यार्थप्रकाश अक्षरो के घिस जाने से अच्छा नही छपता।[1]

मि० मार्ग शुदी १० मगल १९३९।[2]

दयानन्द सरस्वती।

———

[३] पत्र (३२५) [३५५]

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया, समाचार विदित हुआ। ऐसे जो आर्यसमाज के नियमो से विरुद्ध व्याख्यान होते हैं तो उन को रोक दीजिए। यदि रोकने से न मानें तो दूसरे स्थान में करें। **और मेरी निन्दा करते हों उस पर कुछ ध्यान न देना चाहिए, क्योंकि निन्दक निन्दा ही किया करते हैं और क्षमावान क्षमा ही करते** हैं। ऐसो की निन्दा से क्या हो सकता है। इन

१. आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय संस्करण पृ० २७० पर मुद्रित।

२. १९ दिसम्बर १८८२। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

मुन्शी इन्द्रमणि तथा जगन्नाथदास का हाल मुझ से भी अधिक आप जानते ही हैं क्योंकि सहवासी विजानीयात् चरित्रं सहवासिनाम् । सो जैसे इन में गुण कर्म हैं वैसा करते हैं, करो । अब एक नई बात की है कि विज्ञापन के तौर पर लिख के छपवा के जहां तहां भेजा है कि जो धन मेरे मुकद्दमा के लिये आया था उस के मालिक स्वामी जी तथा लाला रामशरणदास जी बन बैठे। देखो कैसी मिथ्या बात है । ऐसी २ बातों के प्रसिद्ध करने से इन की ही फजियत होगी। और जगन्नाथदास आदि को समाज का सभासद नहीं किन्तु कलंक समझना चाहिए। ऐसे लोगों से कुछ सुधार की आशा नहीं होती कि जो पहिले अच्छे जान पड़ें और पीछे से बिगड़ जांय। अब इन की सब बातें खुलेंगी तब कोई भी इन का विश्वास न करेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।[1] सं० १९३९ पौष वदी १२ शनिवार।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[११] पत्र (३२७) [३५६]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि इस पत्र के भेजने का मुख्य प्रयोजन यही है कि जो यात्रा करने का प्रथम विचार किया था कि १५ दिन के पश्चात् यहां से अन्यत्र की यात्रा करेंगे उस में श्रीयुत आर्य्यकुल दिवाकर उदयपुराधीशों के अत्याग्रह से अब माघ शुक्ल १५ पर्यन्त रहना होगा। छः शास्त्रों का विषय तो पढा दिया है । अब मुख्य जो राजनीति का विषय है उस के लिये मनुस्मृति के ७वें अध्याय से ९वें तक पढ़ावेंगे। यदि अब आप आना चाहें तो हम को पत्र लिखो । जब हमारा पत्र तुम्हारे पास पहुंच जावे कि अब चलो सवारी भेज दी है तब वहां से चलना चाहिए। और यदि अब न आया चाहो तो जब रेल पर पहुंचेंगे तब आप को

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है।

२. ६ जनवरी १८८३।

खबर देंगे। उस समय मिलना हो जायगा। पंडित लक्ष्मीदत्त आदि सभासदों से हमारा आशीर्वाद कहियेगा।[1] शुभम्।

पौष वदी १४ सं० १९३९।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[९] पत्र (३२७) [३५७]

श्रीयुत देशहितैषी सम्पादक समीपेषु। मान्यवर नमस्ते।

विदित होय कि एक पत्र मुन्शी इन्द्रमणि जीके विज्ञापन रूप मेरे पास आया। इसका उत्तर बहुत लम्बा है। परन्तु इस समय इस पत्र के थोड़े से उत्तर को आप अपने पत्र मे स्थान देकर मुझ को कृतार्थ कीजिये। यदि मुन्शी इन्द्रमणि जी अपने लेखानुसार सच हों तो उस व्यवहार मे अन्यत्र से जितना आय व्यय हुआ हो आपके पत्र (दे० हि०) मे छपवा के प्रसिद्ध करें। और इसी प्रकार लाला रामशरनदास जी भी। जिस के देखने से सज्जन लोगों को स्वय सत्यासत्य का विचार हो जायगा, अर्थात् समझ लेंगे। और उसी हिसाब के नीचे यह भी लिखा हो कि जिस २ भद्र आर्यजन ने मुन्शी जी और मुसलमान मुरादाबाद के झगडे मे जितने रुपये जिस २ के पास भेजे होय और जिस २ की रसीद भी उन के पास हो नाम लेख पूर्वक वह २ देशहितैषी पत्र सम्पादक के पास भेजें। और उस २ के पत्र को आप अपने पत्र मे छाप कर प्रसिद्ध कर दिया करें। जिस से सत्य और असत्य सब साम्हने प्रकाशित हो जाय। इस मे सत्य तो यह है कि मुन्शी जी जो झूठा अपराध स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और लाला रामशरणदास रहीस मेरठ के ऊपर आरोपित करते है, वह सब अपराध मुन्शी जी का है। क्योंकि जब मुन्शी जी पर मैजिस्टरेट मुरादाबाद ने ५००) रु० दण्ड किये थे उसके पश्चात् मुन्शी जी मेरठ मे आये (जहां उस समय स्वामी जी भी उपस्थित थे) और कहा कि यह विवाद सब वेदमतानुयाइयो के ऊपर समझना चाहिये, न केवल मुझ पर।[3] इस पर स्वामी जी और अन्य सब सज्जनों ने कहा कि यह ठीक है। क्योकि मुन्शी जी ने वेदमत की रक्षा के लिये इतना बडा परिश्रम किया है। इस लिये इस समय इस

---

१ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२ ८ जनवरी सन् १८८३ सोम।

३. बाबू दुर्गाप्रसाद, फरुखाबाद को २५ अगस्त सन् १८८० के पत्र में मु० इन्द्रमन जी लिखते है—"चूंकि यह काम धर्म का है, इस में सब आर्यों को कोशिश करनी चाहिए।"

मामले मे सब वैदिकों को सहाय करना उचित है। इस पर सब की यही सम्मति हुई कि इस बात के लिये एक सभा नियत हो और चन्दा इकट्ठा करे। जिस से उस के आय व्यय का हिसाब वह सभा रक्खे। और मुन्शी जी को उस मे से इतना धन दिया जाय कि जितना खरच होना उचित होय। अन्त को यह सभा मेरठ में नियत हुई। और मुन्शी जी से कहा कि जो कोई आप के पास रुपये भेजे उन को आप भी इस सभा के कोपाध्यक्ष लाला रामशरणदास जी के पास भेज दिया करें।[1] और उस के आय व्यय की परताल (जाच) यह सभा किया करे और हिसाब भी लेवे। इन सब बातो को मुन्शी जी ने भी स्वीकार स्वामी जी आदि के सन्मुख किया था। और यह भी उसी समय निश्चय हुआ था कि सिवाय उस सभा के सभासद के दूसरे से उस धन का आय व्यय वा सख्या प्रसिद्ध तब तक न करनी चाहिये कि जब तक यह कार्य पूरा न हो जाय। यदि चदे का धन कम आवे और खर्च अधिक करना होय तो किसी योग्य धनाढ्य पुरुष से सभा उधार लेकर कार्य्य करे। इसी लिये लाला रामशरणदास जी ने जमा धन की सख्या मुन्शी जी को नहीं बतलाई थी। क्योंकि सभाकी आज्ञा बतलाने की नही थी। इस गुण को मुशी जीने दोष समझा। धन्य है मुशी जी की बुद्धिमत्ता को। इससे सब सज्जन लोग समझ सक्ते हैं कि यह मुशी जी को सख्या न बतलाने मे लाला रामशरणदास जी का दोष है। वा इस पर क्रोधित होकर यथा तथा कुवाच्य कहने लिखने में मुशी इन्द्रमणि जी का। इस विपरीत व्यवहार का कारण यह विदित होता है कि जब इधर उधर से बहुत धन मुन्शी जी के पास आने लगा तब लोभ के वश मे होकर जो पूर्वक्त नियम अर्थात् जितना धन मुशी जी के पास आवे वह मेरठ सभा के कोपाध्यक्ष लाला रामशरणदास जी के पास तो भेजना दूर रहा किन्तु जब लाला रामशरणदास जी ने कई बार पत्र भेज कर हिसाब मांगा तो मुन्शी जी ने मौन साध के हिसाब नहीं दिया। तब लाला रामशरणदास जी को निश्चय हुआ कि मुशी जी के मन में कुछ अन्य आशय है। इस बात के निश्चयार्थ लाला श्यामसुन्दर रईस मुरादाबाद के पास लाला रामशरणदास जी ने पत्र भेजा कि मुशी जी से हिसाब पूछ कर मेरे पास भेजो। उनको भी मुशी जी ने हिसाब नहीं दिया। किन्तु इस सर्ववैदिक मत के रक्षार्थ धन को अपना निज धन ही समझ लिया। जब से

१. अपने ६ सितम्बर १८८० के पत्र में मुन्शी जी बाबू दुर्गाप्रसाद को पुनः लिखते हैं—"चदा सब जगह का स्वामी जी के पास जमा हो रहा है। बवक्त जरूरत आजावेगा।"

लाला रामशरणदास जी ने मुशी जी को धन देना वद किया और स्वामी जी को पत्र द्वारा विदित किया तव स्वामी जी ने उत्तर दिया कि इस समय इस वात के होने से कार्य्य मे विघ्न होगा, कार्य होने दीजिये। और ६००) रु० जो मांगते हैं दे दीजिये। तव उन्होने देदिये। और इससे अधिक धन मुशी जी को कितना दिया और कितना लाला रामशरणदास जी के पास जमा रहा यह वात हिसाव छपने से सव को प्रसिद्ध हो जायगी। और स्वामी जी ने उक्त लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले रईस मुरादावाद के पास पत्र भेजा कि मुन्शी जी से हिसाव लेकर लाला रामशरणदास जी के पास भिजवा दीजिये। उन्होंने उत्तर दिया कि मुशी जी हिसाव तो नही वतलाते किन्तु इस विषय मे पूछा जाता है तो कुछ भी नही कहते। धन्य रे धन, तेरे मे वड़ी आकर्षण शक्ति है, कि तू वड़ो २ को भी धर्म से डिगा कर नीचे गिरा देता है। जव देहरेदून से आते समय मेरठ के स्टेशन पर लाला रामशरणदासादि से मेल हुआ तव मुशी जी के विषय की वात सुन वड़ा आश्चर्य मान के उन से (स्वामी जी ने) कहा कि मै कोयल[1] इसी लिये ठहरके वहां मुन्शी जी को वुला कर समझा दूंगा। स्वामी जी ने कोयल मे आकर मुशी जी को वुलाने के लिये तार दिया। उसके उत्तर मे मुन्शी जी ने तार मे खवर दी कि मै वीमार हूं। नारायणदास प्रयाग को गया है। अर्थात मैं नही आ सकता। पश्चात् स्वामी जी ने आगरे मे आकर मुन्शी जी के पास पत्र भेजा कि यदि यह वात सत्य है तो इस मे आपकी वड़ी निन्दा होगी। आप यहा शीघ्र आइये। मुशी जी ने वहुत क्रोधित होकर असभ्यता की वातें जो कि उनके लिखने के योग्य न थीं लाला रामशरणदास जी की निन्दापूर्वक वहुत सी लिखी। और यह भी उस पत्र मे लिखा कि आप लाला रामशरणदास जी से हिसाव मगवाइये। स्वामी जी ने तव लाला रामशरणदास जी को लिखा कि आप हिसाव लिख कर मेरे पास यहां भेज दीजिये। जव मै आप के हिसाव को मुशी जी को दिखला दूगा तव वे भी अपना हिसाव देंगे। इस के थोडे ही दिनों के पश्चात् मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदास जी आदि मथुरा होते हुए आगरे मे स्वामी जी के पास आये। जव स्वामी जी ने उन से कहा कि हिसाव लाये हो या नहीं तव मुन्शी जी ने कहा कि हां लाये हैं। परन्तु पहले लाला रामसरनदास जी का हिसाव मगवा लो तव हम भी दिखा देंगे। तव स्वामी जी ने कहा कि जव आप के पास हिसाव है

---

१. कोयल—अलीगढ का नाम है। कोयल अर्थात् अलीगढ जाने का वृत्त प० लेखराम, प० घासीराम, स्वामी सत्यानन्द आदि किसी ने नही लिखा। इस लेख से निश्चित हो जाता है कि श्री स्वामी जी कुछ दिन कोयल में रहे।

तो क्यों नहीं दिखलाते। तब पुनः मुन्शी जी और लाला जगन्नाथदास जी ने कहा कि उन का हिसाब आने दीजिये तब दिखलावेंगे। पाठकगणों! परमेश्वर की कृपा और लाला रामशरणदास जी की सच्चाई से दूसरे ही दिन मेरठ से हिसाब आ गया। स्वामी जी ने मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदास जी को दिखला दिया। पश्चात् स्वामी जी ने कहा कि अब तुम दिखलाओ। तब मुन्शी जी के कहने से लाला जगन्नाथदास जी ने बैग को हाथ लगाया। इधर उधर हाथ फेर कर कहा कि वह हिसाब का कागज़ तो मैं मुरादाबाद ही में भूल आया। सभ्यगणों! देखो! क्या मिली हुई गुरु चेले की भक्ति है। तब स्वामी जी ने कहा कि जितना आप को स्मरण होय उतना ही कण्ठ से लिखवाइये। तब मुन्शी जी लिखाने लगे। अनुमान है कि २०००) दो हज़ार तक का हिसाब तो लिखवाया। और कहने लगे कि अब मुझे याद नहीं है। हम मुरादाबाद पहुंच कर शीघ्र हिसाब भेज देंगे। सो आज तक नही भेजा। अब आप लोग इन बातों से विचार लेंय कि मुन्शी जी सच्चे हैं वा लाला रामशरणदास जी।

तब मुन्शी जी और लाला जगन्नाथ जी व्यर्थ वितण्डावाद करने लगे। और कहा कि जो २५०) रु० लाला वल्लभदास जी ने भेजे थे सो इस हिसाब मे जमा क्यों नही। तब स्वामी जी ने कहा कि वे रुपये तो गुरदासपुर में मेरे नाम आये थे। मैंने लाला रामसरनदास जी को दिये थे। न जाने उन्होंने जमा क्यों नहीं किये। इस का समाचार मै लिखकर मंगवा दूंगा। स्वामी जी ने उसी दिन लाला रामसरनदास जी को पत्र लिख उत्तर मगवाया। तब उन्हों ने लिखा कि यह मेरे मुन्शी की भूल से लाहौर के रुपयो के साथ गुरदासपुर के भी २५०) रु० जमा लिखे गये हैं। अर्थात् जिस दिन १५०) रु० लाहौर समाज से आये थे। उसी दिन २५०) के नोट आपने भी दिये थे। भूल से ४००) रु० लाहौर समाज के नाम जमा किये गये हैं। अब मुन्शी जी इस का निश्चय करें वा करावें। अर्थात् इन २५०) रु० के सिवाय किसी ने स्वामी जी के पास रुपया नहीं भेजा। यदि भेजा हो तो जिस के पास स्वामी जी के हस्ताक्षर रसीद होगी, भले ही प्रसिद्ध से छपवा देवे। किन्तु स्वामी जी की कुछ इस में विपरीत बात हो तो स्वामी जी प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं कि सिवाय २५०) रुपयो के मेरे पास एक कौड़ी भी किसी की नही आई। क्योकि जो कोई स्वामी जीसे पूछता वा पत्र भेजता था तो स्वामी जी यही उत्तर देते थे कि जो भेजना हो सो लाला रामशरणदास जी के पास मेरठ सभा को भेजो। क्योकि उसी सभा के आधीन यह सब प्रबन्ध है। इस उत्तम प्रबन्ध को तोड़ने वाले मुन्शी जी हैं, कि जिन्होने भारतमित्रादि समाचारों में अपना मतलब सिद्ध

करने के लिये अंड वड छपवा कर स्वप्रयोजन सिद्ध किया। और अपनी प्रशसा पर बट्टा लगाया। शोक है कि यह धन वुरी वला है, जो वड़े २ चतुरों को भी फसा लेती है। उसी दिन स्वामी जी ने मुशी जी से कहा कि हिसाव ठीक २ मेरठ सभा मे भेज दीजिये। जो एक नियम हुआ है उसका तोडना अच्छा नही। आप पूर्वकृत नियमानुसार वर्तिये, जिससे प्रीतिपूर्वक सव सहायक रहे। इसी मे अच्छा है। विरोध होना अच्छा नही। तव तो मुशी जी और लाला जगन्नाथदास जी दोनो क्रोधाविष्ट होकर कहने लगे कि हम से हिसाव लेने वाला कौन है। इस के मालिक हम हैं। हमारे पर यह सव मामला चला है। हमारे नाम चन्दा आता है। जो आता है हमारा ही है। और लाला जगन्नाथदास जी वोले कि यदि आप से कोई वैदिक यन्त्रालय का हिसाव पूछे, क्या आप देंगे? स्वामी जी ने कहा कल्ह लेते आज ही लो। यहां कोई वात गुप्त नही। किन्तु जव कोई आर्य्यसमाज का प्रतिष्ठित सभासद् हिसाब लेना चाहे उसको कोई अटकाव नही है। तव स्वामी जी ने मुशी जी को एकांत मे ले जाके समझाया कि ऐसी वात करना आप को उचित नही है। एक तो वह वात थी जो मेरठ मे आपने कही थी कि यह सव वैदिक धर्म वालो का मामला है। मेरा अकेले का नही और इस से विरुद्ध आज की वात है कि मेरे ही अकेले का मामला आदि है। सुनिये मुशी जी यदि मैं आप को पहले से ऐसा जानता तो आपके साथ एक क्षण मात्र भी न ठहरता और आपका कुछ भी समर्थ नही था कि अकेले इस प्रकार का सहाय प्राप्त कर सकते। अस्तु मैं तो उसी बात को समझता हू कि यह सव वैदिकमतानुयायियो के साथ की वात है। तब तो मुशी जी कुछ शान्त हुए। तव स्वामी जी ने कहा कि अव शेष कार्य्य आप सिद्ध कीजिये। और प्रयाग मे एक दो पुरुषों का नाम लिखवाया कि उनकी सम्मति से सब काम कीजियेगा। और मुरादावाद पहुंच के हिसाव मेरठ मे शीघ्र भेज दीजियेगा। मुन्शी जी ने कहा कि जाते ही भेज दूंगा। सो भी न किया और न हिसाव भेजा। करते और भेजते तव, जब उनके मन मे शुद्ध भाव होता। किंतु वहां प्रयाग में भी गुप्त व्यय कर कराके जैसा कि मुरादावाद जजी मे व्यय व्यवस्था हुई थी वैसे ही प्रयाग से करा अपनी नीयत का फल पाकर चले आये। फिर भी न जाने किस २ सज्जन पुरुष के पुरुषार्थ से श्रीमान् गवर्नर जनरल साहव बहादुर से प्रार्थना कर के १००) रु० का दण्ड भी माफ कराया गया। यदि अव भी मुशी जी अपनी बात को सच्चा करना चाहे तो उस मुसलमानों के साथ के मामले मे जहां २ से जितना २ धन जिस २ ने भेजा उनका नाम ठिकानादि सहित लिख और जितना जितना जिस २ कार्य मे व्यय हुआ हो प्रसिद्ध सब समाचारो

में छपवादें। और जितना धन उस मामले के विषय में व्यय से शेष रहा हो उसको मेरठ सभा में भेज देवें। क्योकि जो मेरठ सभा का वह विचार निश्चित हुआ था कि यदि मुशी जी के मामले से चन्दे का धन बचे तो उसका क्या किया जाय। इस पर सब की यही सम्मति हुई थी कि उस धन को ।।) आने व्याज मे किसी धनाढ्य के पास रक्खा जाय और जब २ अन्य मतावलम्बियों के साथ वैदिक आर्यों का विवाद राजन्याय घर मे चले तब उसी मे इसका व्यय किया जाय अन्यत्र नही। क्योंकि यह धन इसी बात के लिये इकट्ठा किया जाता है। और जैसा आज मुशीजी पर कष्ट पड़ा है सम्भव है कि अन्य पर भी कभी न कभी आपडे। इस लिये इस धन की स्थिरता और उन्नति सदा करने जाना चाहिये। परन्तु पाठकगणो इस महोपकारक कार्य को मुशी जी के लोभ ने बढ़ने न दिया। अब बुद्धिमान लोग विचार कर लेवें कि इसमें स्वामी जी और लाला रामशरणदास जी का अन्यथा व्यवहार है वा मुन्शी इन्द्रमणि जी का। अधिक लिखना बुद्धिमानों के साम्हने आवश्यक नही। क्योंकि प्राज्ञ जन थोडे ही लेख से बहुत समझ लेते हैं। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

निधिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे पौषमासे सिते दले।
प्रतिपत्सौम्यवारे हि पत्रमेतदलेखिषम ।।१।।

सम्वत् १९३९ पौप शुक्ले १ बुधवासरे ।।[1]

वही आप का परम मित्र
उचित वक्ता[2]

---

[३] **पत्र सूचना (३२८)** [३५८]

[सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आर्यसमाज मुम्बई][3]

घोडी भेजो। गोरक्षा की सही के कागज भेजो। समाजस्थान का सब हिसाब भेजो। विट्ठल का लेना देना चुका दो।

१७ जनवरी १८८३।

---

१ १० जनवरी सन् १८८३।

२ मासिकपत्र देशहितैषी अजमेर मास माघ स० १९३९ के अक १० खंड १ के पृ० २८–३६ मे लिया गया। रजिस्टर देशहितैषी अजमेर में इस का सकेत है। श्री मुन्नालाल ने ३-१-१८८३ को श्री स्वामी जी को "मुशी इन्द्रमणि जी के विज्ञापन का खडन" लिखने के लिए पत्र लिखा। उसी के उत्तर में यह खडन श्री स्वामी जी ने लिख कर भेजा।

३ इस पत्र का सकेत और अभिप्राय म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २६८ पर है।

[३८] पत्र (३२९) [३५९]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी अनन्दित रहो—

विदित हो कि कई एक पत्र भेज चुके हैं। एक का भी प्रत्युत्तर नहीं मिला, क्या कारण है ? तुम्हारा शरीर तो स्वस्थ है ? जैसा हो वैसा शीघ्र लिखो। और भेजे हुए पत्रों का भी उत्तर भेजना। **आज अत्यन्त अयोग्यता के कारण भीमसेन को सब दिन के लिये निकाल दिया है।** उसको मुख न लगाना। लिखे लिखावे तो कुछ ध्यान न देना॥

मार्ग बदी ५ रवि।[1]

उदयपुर।[2] दयानन्द सरस्वती

---

[३] पत्रांश (३३०) [३६०]

[भाई जवाहरसिंह मंत्री आर्यसमाज लाहौर][3]

हम मद्रास्यो को भूल रहे हैं। उधर जाना उत्तम होगा।

१७ फरवरी १८८३ से पहले।

---

[४] पत्रांश (३३१) [३६१]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]।

एक अन्तरङ्ग मन्त्री शाहपुरा राज्य के लिए चाहिए। एक ओवरसियर भी चाहिए। "यह देश के हित का काम है। .. .जिन के भाग्य होगे वह आयेंगे।"

१७ फरवरी से पहले।

---

१. २८ जनवरी १८८२। आर्यधर्मेन्द्र में भूल से 'मार्ग' लिखा है, माघ चाहिए।

२. आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय सस्करण, पृ० ३७६ पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित होगा।

३. इस पत्र का सकेत म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ११६ पर है।

[११] कार्ड (३३२) [३६२]

ओ३म्

आर्यवर श्री वाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का आशीर्वाद विदित हो। जगदीश की कृपा से यहां सब प्रकार आनद मगल है। आशा है कि तुम्हारे यहां भी सब प्रकार से कुशलता होगी। अब श्रीयुत जगद्गुरु श्री स्वामी जी यहां उदयपुर से फाल्गुण शुदी[1] ७ गुरु० सम्वत् १९३९ को यात्रा अजमेर की ओर करेंगे, सो जानना। आगे जहा जाके निवास करेंगे सो तुम को लिखूगा। वहुत दिनो से तुम ने अपना कुशल पत्र नही दिया। इस मे क्या कारण हुआ। अब आप इस पत्र के पहुंचते ही अपना कुशल पत्र भेजना। क्या मैंने एक वार तुम को लिखा था कि मैं श्री गुरु जी के पास से जाने वाला हू, इस वात से न भेजा हो। परन्तु जिस वात के न होने से मैं जाना चाहता था अर्थात् पठन[न] होने से सो दयानिधि गुरु जी ने मेरे पढ़ने के लिये आधा दिन दे दिया है। सो वडा पढ़ना हाता है। अब अष्टाध्यायी के ५ अध्याय कठ हो गये हैं। ६ अध्याय पढता हूं। श्री गुरु जी का आशीर्वाद विदित हो ॥

मिति माघ शुदी १२ रवि० स० १९३९।[2]

रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर।

---

[२] स्वीकार पत्र (३३३)[3] [३६३]

....

सम्वत् १९३९ फाल्गुण शुक्ला[4] ५, मगलवार तदनुसार ताः २७ फेब्रूएरी सन् १८८३ ॥

दयानन्द सरस्वती

उदयपुर

---

१ "वदी" चाहिये। १ मार्च १८८३ को चले। देखो पत्र पूर्णसख्या ३६५।

२. १८ फरवरी सन् १८८३। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

३. प्रथम स्वीकार पत्र जुलाई १८८० में मेरठ में तहसील की कचहरी में रजिस्टरी कराया गया। देखो पत्र पूर्णसख्या-१९३, १९५, २०१, २०८ और २११। यह दूसरा प्रसिद्ध और अन्तिम स्वीकार पत्र है जो उदयपुर राज मेवाड में स्वीकृत तथा मुद्रा-अकित हुआ। वैदिक यन्त्रालय अजमेर मे छपता रहता है। मूल मुद्रित प्रति हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

४ यहा भी भूल से शुक्ला लिखा गया है। वदी ५ चाहिए। मूल मुद्रित प्रति में और आज तक के छपे स्वीकार पत्र में यही भूल हो रही है।

[९] पत्र सूचना (३३४) [३६४]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर][1]।

वैदिक यन्त्रालय के सहाय मे लाहौर समाज से कितना रुपया गया था।
लगभग ४ मार्च १८८३।

---

[३९] पत्र (३३५) [३६५]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो—

हम उदयपुर से फाल्गुन बदी ७ गुरुवार के दिन घड़ी रात से राज की चार घोड़े की डाक बग्गी मे चल के शाम के ५ बजे नीमाहेड़े पहुंच कर ९ बजे रात के चित्तौड़ मे पहुंच गये, रेल मे बैठकर। यहां तीन दिन ठहरेंगे। पश्चात् जहां जायेंगे तुम को खबर देंगे। अब उदयपुर का वर्त्तमान लिखते हैं। जब से हम उदयपुर मे पहुंचे उस दिन से बहुत आनन्दित रहे। और नित्य प्रीति श्रीमान् महाशयो की बढ़ती ही गई। मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम, नवम पर्यन्त राजधर्म सब याथातथ्य पढ़ लिये। अन्य बहुत से महाभारतस्थ विदुरप्रजागर तथा ६ शास्त्रो के मुख्य २ विषय और चलते वक्त थोड़ा सा व्याकरण का विषय और अन्वय की रीति भी पढ़ ली। जैसा कि राजाओ को सत्यप्रतिज्ञ और पुरुष परीक्षक और गुणज्ञ तथा स्वगुण स्वदोष के मानने वाले होने चाहियें, वैसे श्रीमान् महाशयार्य्यकुलदिवाकरो को मैंने देखा। बहुत से राजा मुझ से मिले परन्तु जैसी प्रसन्नता मेरी और उदयपुराधीश की परस्पर रही और आगे के लिये भी दृढ़ रहेगी वैसी अन्य से बहुत न्यून सम्भावना है। अब जिस समाचार को तुम पूछा करते थे वह निम्नलिखित जानो। संस्कृत के अपने जो कि वेदाङ्गप्रकाशादि हैं उन का प्रचार राजकीय पाठशाला तथा चारणो की पाठशाला मे कर दिया है।

वो जो प्रसिद्ध वा रहस्य मे राजधर्म, ईश्वर तथा वैदिकधर्म प्रचार, और शरीर, राजनीति आदि विषयों मे उपदेश मैंने किया है उस का आचरण बहुत सा कर लिया और करने की प्रतिज्ञा भी की है।

---

१. इस पत्र का संकेत म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ११६ पर है। वह पत्र १६ मार्च को लिखा गया। उस से ८ दिन पहले श्री स्वामी जी का पत्र आ चुका था।

गत पञ्चमी मङ्गलवार के दिन सायकाल ७ वजे वडे २ सर्दार तथा कामदारों की सभा बुला के स्वीकारपत्र जो कि मेरठ मे हम ने रजिस्टर कराया था, उस मे से एच० एच० कर्नल आलकाट साहब, तथा एच० पी० व्लैवस्टकी, मुन्शी इन्द्रमणी को पृथक् कर दिये, और डाक्टर विहारीलाल जी का शरीर छूट गया, इन के ठिकाने मे अन्य[चार तथा] पाच सभासद् और वढ़ा दिये अर्थात् प्रथम अठारह थे, अव तेईस हो गये। उन मे से सभापति श्रीमान् 'आर्य्यकुलदिवाकर श्रीयुत महाराणा जी और उपसभापति लाला मूलराज एम० ए०, मन्त्री कविराज श्यामलदास जी आदि नियत हुए है। उस की एक प्रति श्रीमानों के हस्ताक्षर और राजकीय मोहर लगा कर सव ने माननीय प्रतिष्ठित माना है। यह वात महा लाभदायक और वहुत वडा काम देगी। अव सरकारी राज में भी इस की रजिस्टरी करालें, सो रजवाडों मे और अगरेज़ी राज मे भी वड़ा माननीय होगा। और राजकीय यन्त्रालय उदयपुर मे छपकर सभासदों के पास एक २ प्रति पहुंचेगी। और ज़ियादह छपेंगी तो अन्य योग्य पुरुषो के पास भेज दी जायगी। यह तुम्हारे पास इस लिये भेजते हैं कि अपने परामर्श, अनुमति और महाराणा जी को धन्यवाद लेखपूर्वक-पत्र अन्त में, और आदि में यह स्वीकारपत्र अच्छे कागज़ पर और अच्छे टैप में छपवा कर योग्य २ वेदभाष्य के ग्राहक और भारतमित्रादि समाचार-पत्र और मुख्य २ पुस्तकालय में भेजदो। और जव छप चुकेगा तव हम भी लिखेंगे कि फलाने २ के पास भेजदो।

और एक पत्र हमारे पास आने वाला है कि उस को एक अच्छे कागज पर छाप कर तुम को सव आर्य्यसमाजों के पास भेजना होगा। और वे श्रीमान् महाराणा जी के पास भेज देंगे। और कुछ २ अपने आनन्द प्रदर्शक वातें लिख कर भेजेंगे तो अच्छा होगा।

वारह सौ रुपये कलदार धर्मार्थ वेदभाष्य के सहाय में, एक दुशाला मुझको, तथा पाच सौ रुपये कलदार आर्य्यसमाज फीरोजपुर के अनाथाश्रम के लिये, और सौ रुपये कलदार वहां जो लडकियां कसीदा का काम करती हैं उन को पारितोषिक के लिये, और सौ रुपये कलदार और साधारण दुशाला रामानन्द ब्रह्मचारी को दिया। अर्थात् उन्नीस सौ कलदार रुपये और दो वस्त्र प्रदान किये।

इन वारह सौ रुपयों को उन्हीं के पास रक्खे हैं। इस प्रयोजन के लिये कि इसी मुख्य स्थान से प्रधान वैदिकधर्म प्रचार होवे और उस को पूर्ण सहाय मिले। इस का नाम वैदिकनिधि रक्खा है। और मेरे नाम से स्थापित हुआ, ऐसा खाता राजकोष मे और महद्राज सभा मे लिखित हो गया। इत्यादि सव

उत्तम बातें वहां की यात्रा से हुईं जिस को तुम सुन कर बड़े आनन्दित होगे। इस लिये प्रथम तुम को लिखा। इस के आगे जो २ वर्त्तमान होगा तुम को लिखा जायगा। और गोरक्षा मे भी पूरा सहाय निश्चत मिलेगा।[1]

चितौड़गढ़
मि० फाल्गुन वदी १० रविवार स० १९३९
तदनुसार ता० ४ मार्च सन् १८८३

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१२] पत्र (३३८) [३६६]

ओ३म्

श्रीयुत वाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।[2]

विदित हो कि कहार और रसोइया तथा शोधक और कोषाध्यक्ष के लिये आप को लिखा था। उस का उत्तर आपने लिखा कि ४ दिन के पश्चात् इसका निश्चित उत्तर भेजेंगे। सो वह आज तक नही आया। वीच मे पण्डित लक्ष्मीदत्त जी ने उत्तर दिया था कि आप वरेली को गये हैं। हम ने आप के पत्र का उत्तर लिखा था कि वह रामनाथ कौन है क्या पढ़ा है। और नागरी लिख[ना] जानता है वा नही। और हमारे साथ कव रहा था। कौन वर्ण है। कहां का रहने वाला[है]। और मुरादावाद वाले के लिये लिखा था कि जव तक वड़ा हानिकारक अपराध न करे न निकाला जायगा। सो भी आपके आधीन निकालना वा रखना होगा। सो आज पर्यन्त उस[का] उत्तर नही आया। सो शीघ्र भेज दीजिये। और दोनों पुरुषों[को] वैदिक यन्त्रालय मे भेजने के लिये पूर्ण यत्न कीजिये। क्योकि अकेले समर्थदान से वहां का काम नही चल सकता। आप के लिखे प्रमाण आर्यसमाज लाहौर[के] मन्त्री के पास सब समाचार भेज दिया।

और हम आज चित्तौड़गढ मे हैं।[2] आगामी फाल्गुन वदी चतुर्दशी गुरुवार के दिन राजस्थान शाहपुर मेवाड़ को जाकर यथारुचि वहां ठहरेंगे।

---

१ आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय सस्करण पृ० ३७१, ७२ से लिया गया। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

२ प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५६९ पर २—२ तक का अश उद्धृत है।

अब उदयपुर का वृत्तान्त सुनो। हम वहां बहुत आनन्द में रहे। नित्य प्रति श्रीमान् महाराणा जी की ओर से सेवा उत्तम रीति से होती रही। किसी दिन को छोड सब दिन तीन चार वा पांच घटे तक मुझ से मिल कर प्रेम पूर्वक सत्सग किया करते थे। केवल सुनने मात्र नही किन्तु उस का धारण और आचरण भी करते और कराते हैं। छः शास्त्रों का मुख्य २ विषय, मनुस्मृति के राजधर्म्म विषयक तीनो अध्याय, विदुरप्रजागर आदि के उपदेश के योग्य श्लोक, थोड़ा सा व्याकरण का विषय, और थोड़ी सी अन्वय की रीति श्रीमानों ने मुझ से पढ़ी। और राजधर्म्म मे तत्पर थे। और विशेषकर अब पूर्ण रीति से हुये। वेश्या आदि का नृत्य दर्शनादि नही सा निर्मूल कर दिया। स्वीकारपत्र जिसको वसीयतनामा कहते हैं वह उदयपुर में श्रीमानो ने स्वीकृत स्वमुद्राङ्कित स्वहस्ताक्षर स्वभूषित करके उस लिखी हुई सभा के उदयपुराधीश सभापति हुये हैं। उस का विशेष समाचार तुम को छपने पर विदित होगा। एक मान्य पत्र[1] मुझको दिया है। और रु० १२००) कल्दार वेदभाष्य के सहायार्थ और एक दुशाला और एक साधारण दुशाला और रु० १००) कल्दार रामानन्द ब्रह्मचारी को। तथा ५००) रु० कल्दार फीरोजपुर आर्य्यसमाज के अनाथालय को। और रु० १००) कल्दार उस में कसीदा करने वाली लड़कियों को पारितोषिक प्रदान किये। वैदिकधर्म्म पर प्रथम ही रुचि थी। अब विशेष कर हुई। जैसे श्रीमान् आर्यकुलदिवाकर सुशीलता सत्यता कृतज्ञता सुसभ्यता पुरुषज्ञानतादि शुभगुण कर्म स्वभावयुक्त मैंने देखे वैसे वहुत विरले होगे। अब हम इस वक्त चित्तौड़ में हैं। फाल्गुन वदी चतुर्दशी गुरुवार के दिन राजधानी शाहपुरा राज्य मेवाड़ जाकर ठहरेंगे। जो कुछ पत्रादि भेजो तो इसी पते से भेजना फक्त।[2]

ता० ४।३।८३ ई०। मि० फा० व० १० स० १९३९।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. यह मूल मान्यपत्र कविराजा श्यामलदास के सग्रह में था। अब ठाकुर किशोरसिंह वारहट जी के सग्रह में सुरक्षित है।

२ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने सन् १९२७ में मूलपत्र से शुद्ध किया।

३ इसे पहले हमने वा० देवेन्द्रनाथ वाली प्रतिलिपि से छापा था। फरुखावाद का इतिहास पृ० २२०–२२१ पर कुछ पाठभेद के साथ छपा है।

[३] पत्र (३३७) [३६७]

सर्व आर्य्यसमाजस्थ प्रधानादि आनंदित रहो।

विदित हो कि स्वामी सहजानन्द सरस्वती उपदेशक इसने सन्यासाश्रम धारण भी मुझ से किया है, आता है। इसको जब तक वहां रहे अन्न स्थानादि, और जब एक समाज से दूसरे समाज को जाय तब रेल के भाड़े आदि से सत्कार किया करना। जिस समाज से दूसरे समाज को जाना चाहे उस समाज का मन्त्री दूसरे समाज के मन्त्री के पास पत्र भेज देवे कि वह स्टेशन पर आके निवास स्थान को ले जावे।[1]

मिती फाल्गुन बदी १२ मंगल सम्वत् १९३९।[2]

ह० दयानन्द सरस्वती
चित्तौड़-मेवाड़।

---

[३] पत्र (३३८) [३६८]

ओ३म्

श्रीयुत चौधरी जालमसिंह जी आनदित रहो।

विदित हो कि हम उदयपुर से फाल्गुन वदि ७ सप्तमी के दिन चितौड़ में आन पहुंचे। और अब यहां से फाल्गुन वदि त्रयोदशी के दिन शाम की रेल में बैठकर चतुर्दशी के दिन शाहपुरा राज मेवाड़ ज़िला अजमेर को जोकि बड़ी रूपाहेली से ८ कोश है जांयगे। और जो कागज़ दो तो इसी पते से देना। आगे हाल यह कि एक स्वीकार पत्र राज उदयपुर मे मुद्राङ्कित स्वीकृत हुआ। और उसके अधिपति श्रीमान् दिवाकर हुए हैं। बाकी सब सभासद जब छपेगा विदित होगा। और एक मान्यपत्र भी दिया है। और छ. शास्त्रो का मुख्य २ विषय और मनुस्मृति का राजधर्म्म तथा विदुर प्रजागरादि के श्लोक कुछ व्याकरण और अन्वय की रीति भी श्रीमानों ने मुझ से पढ़ी। और रु० १२००) कल्दार और एक दुशाला वेदभाष्य के सहायार्थ और एक साधारण दुशाला और रु० १००) कलदार रामानन्द ब्रह्मचारी को और ५००) रु० कल्दार फीरोजपुर के अनाथाश्रम के लिये

---

१ .भारतसुदशाप्रवर्तक फरवरी १८८४ पृ० १८ से लिया गया। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०१ पर भी छपा है।

२. ता० ६ मार्च सन् १८८३।

और रु० १००) कल्दार उसी में कसीदा करने वाली लड़कियों को पारितोषिक प्रदान किया ।

मिती फाल्गुन वदि १२ सम्वत् १९३९ ।[1]

तदनुसार तारीख ६ मार्च सन् १८८३ ई०

(हस्ताक्षर)

[दयानन्द सरस्वती]

---

[३] पत्रांश (३३९) [३६९]

श्रीयुत पडित कालुराम शर्मादिभ्यो दयानन्दसरस्वती-स्वामिन आशिषो-भूयासुस्तमा शमिहास्ति तत्र भवदीयञ्च नित्यमाशास्महे । आपने धर्म जिज्ञासा की उसका उत्तर यह है कि इस विषय में जो सत्यार्थप्रकाशादि मद्रचित ग्रन्थ हैं उनमें मन्तव्यामन्तव्यादि सर्व धर्म विषय लिखा हुआ है उसी रीति से कार्य्य करो[2] इत्यादि.........

[लगभग १७ मार्च सन १८८३ ।][3]

---

[४०] पत्र (३४०) [३७०]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनदित रहो ।

तुम्हारी तारीख वारा मार्च की लिखी हुई चिट्ठी आई । समाचार विदित हुआ ।

(१) शुद्धि पत्र और टाटल पेज भले ही वना छाप कर ग्राहको के पास भेज देना और छापेखाने में भी जिल्दें वधवाने का लिखा सो अच्छा । परन्तु थोड़ी, जियादह नहीं ।

---

१. इस मूलपत्र को रूपधनी वाले चौ० जालिमसिंह के भाई के पौत्र चौ० गजराज सिंह से मास्टर वद्रीप्रसाद जी ले गये थे । उसे अहीर क्षत्री स्कूल शिकोहाबाद के उक्त मास्टर से म० मामराज जी ता० १५ अप्रैल सन् १९२७ को लाये थे । मूलपत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (विल्डिङ्ग) खातौली में सुरक्षित है ।

२. स्वामी कालूराम जी शर्मा स्वर्गवासी के जीवनचरित पृ० २६ पर इतना अंश उद्धृत है ।

३ तिथि सर्वथा अनुमानित है ।

(२) तुम को इस बात का ज्ञान नही। तुम इस बात को नही जानते कि हम को कितना काम करना पड़ता है कि एक क्षण मात्र भी अवकाश नही मिलता। देखो इसका दृष्टान्त कि तुम्हारे पत्र का उत्तर रात्री के ९ बजे लिखते हैं।

और इसके पद की गणना रामानन्द तथा दूसरे पडित के हाथ गिणवाये थे। कोई पद रह गया होगा। अब हम अपने सामने पद गिन गिनवा लेंगे और अगले अक के पत्रे और कुछ सत्यार्थप्रकाश के पत्रे उस के साथ भेजे जायेंगे।

(३) हिसाब हमारे पास आने से सब बात का प्रबन्ध हम भी आगे २ करते हैं। इसलिये जो तुमने उचित समय पर मासिक हिसाब भेजना लिखा सो बहुत अच्छी बात है। और द्रव्य के विषय में जो तुम को लिखा है सो तुम्हारे अविश्वास कारक नही है। एक उपदेश रूप है। देखो तुम हम और अन्य भद्र लोग मुन्शी इन्द्रमणि जी को कैसा अच्छा समझते थे। परन्तु वह तभी तक रहा जब तक कि उनके सामने धन न आया। और तुम्हारे विषय मे अविश्वास का हेतु प्रत्यक्ष कोई नही हुआ है। इस से तुम उल्टा मत समझो। इसका यह मर्म और अर्थापत्ति नही है कि तुमने अप्रत्यक्ष बुरा काम किया है। वह लेख इस अभिप्राय से है कि जिसका उत्तरकाल मे भी कभी ठोकर खाना न पड़े। देख २ कर पग जमा कर चलना चाहिये। क्या बालक वा विद्यार्थी अथवा शिष्य को मिथ्या भाषणादि के अप्रत्यक्ष मे भी तू मिथ्या भाषण चोरी जारी विश्वासघात आदि दुष्ट कर्म मत करना उपदेश नहीं होता। इसका प्रयोजन यह है कि जैसा आचरण भूत वा वर्तमान मे शुद्ध था वा है वैसा ही रहना उचित है। भला हरिश्चन्द्र और बखतावरसिंह का दृष्टान्त तुम मे घटता वा सभावना होती तो मै और सेवक लाल कृष्णदास आदि वैदिक यंत्रालय के प्रबन्ध करने को तुम को कभी न कहते। क्या तुमने हमारे और सेवक लाल कृष्णदास जी के कहने ही से इस काम को स्वीकार किया है परोपकार की दृष्टि से नही। शोक है कि सूधी बात को तुम उल्टी समझ गये। यदि तुम्हारे काम की पवित्रता की परीक्षा मुझको व सेवक लाल को न होती तो पुनः इस काम मे तुमको नियुक्त ही क्यो करते। यदि तुम इस काम के योग्य न होते तौ इतना बड़ा काम और जिस मे विशेष माल का काम है स्वाधीन क्यो करते। तुम को हम वा सेवक लालादि हरिश्चन्द्र बखतावरसिंह वा मुन्शी इन्द्रमणि सरीखा नही समझते। तुम को उत्तम पुरुष समझते हैं परन्तु—

सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते

क्या हमारे पास बुरे ही मनुष्यो का निर्वाह है। ऐसी तुम्हारी बातो का जो कि कभी २ लड़कपन की कर बैठने और समझ लेते हो इन बातों पर

ध्यान करूं वा करूगा तो क्या इस परोपकार के काम से सशयापन्न हो पृथक् हो जा नही सकता। मुझ को इतना वड़ा परिश्रम निन्दा अपमान उठा कर कौन सा स्वप्रयोजन सिद्ध करना चाहता हु। यदि तुम लोग जैसा कि अव उदासीनता की वार्तें लिखी हैं लिखोगे वा करोगे तो सव संसार की हानि का अपराध तुम्हारे पर होगा और मैने जो उपकार करना निश्चित किया है जहां तक वन सकेगा आमरण तक करूंहीगा पुनर्जन्मान्तर में भी। जव तक इस पत्र को देख कर तुम्हारा पत्र परोपकार अर्थात स्वदेशोपकार करने में दृढ़ता पूर्वक पत्र हमारे पास न आवेगा तव तक हमारे उपदेश रूप लेख को अपनी अल्प वुद्धि से उल्टा समझ गये हो, जाना जायगा। इस लिये पत्र देखते ही उस लेख का यह तात्पर्य समझ कर प्रत्युत्तर शीघ्र भेजना।

(४) मान्य पत्र उनके साथ भेजने मे रामानद भूल गया था। पीछे से भेजा है पहुचा होगा। और ऋग्वेद तथा सत्यार्थप्रकाश वो भी पत्रे परसो भेजे जायगे। क्योकि कल रविवार है रजिस्ट्री नहीं हो सकती। जव २ मासिक हिसाव भेजो तव २ इतने फर्म निज के और इतने वाहर के इस महीने में छपे यह भी साथ ही भेजा करो।

(५) यहा शाहपुरे मे श्रीयुत महाराजाधिराज व्याकरण का विषय पढ़ कर कल मनुस्मृति के सप्तमाध्याय राजधर्म के पढ़ने का आरम्भ करेंगे। और वड़े वुद्धिमान तथा राजनीति, प्रजा पालन में तत्पर साहसी उत्साही और वड़े वुद्धिमान हैं। सेवा भी वहुत प्रीति और अच्छी प्रकार से करते हैं।

(६) भीमसेन को तुमने जैसा वृत्ति समझा है, वैसा ही हम वकवृत्ति और मारजार लिंगी समझते हैं। वैसा ही उस से विलक्षण दभी क्रोधी हठी और स्वार्थ साधनतत्पर ज्वालादत्त भी है। अव उसको निकाल देना वा न निकाल देना तुमने क्या निश्चय किया है। मेरी समझ में भीमसेन का छोटा भाई ज्वालादत्त है। यदि उसको निकाल दोगे तो भी कुछ वडी हानि न होगी। क्योंकि यह कभी मन लगा कर काम न करेगा और उसकी ऐसी दृष्टि कच्ची है कि शोधने में अशुद्ध अवश्य कर देगा।

(७) और जो कुछ श्रीयुत आर्यकुलदिवाकर महाराणा जी के विषय में धन्यवाद का लेख लिखो सो अच्छा ही लिखोगे। मोहनलाल विष्णुलाल जी ने चलते समय कहा था कि धन्यवाद विषय का पत्र लिखकर भेजने को कहा था। यदि दो चार दिन में आया तो तुम्हारे पास भेज देंगे। तुम जानते हो राजकृत्य की शीतलता को कि जैसा मेरे वहा रहने में शीघ्रता होती थी वैसी कव हो सकती

है। जो कुछ होगा सो धीरे २ और अच्छा होगा। और तुमने कमीशन का क्या नियम किया है। क्या जैसा सुचिपत्र मे छपवाया है वही है वा अन्य कोई। जो तुमने छपवाये हैं वेही ठीक है। वैसा ही हम भी लोगो से उपदेश करेंगे। और उस भीमसेन की की हुई हानि कुछ भी नही हो सकती। उसका उत्तर तुम लिख भेजो कि जब तक स्वामी जी की आज्ञा वा इच्छा तुमको कही रखने वा भाषा बनवाने की नही होवी तब तक कुछ भी नही हो सकता। अब उस ने उदयपुर में जो भाषा बनाई है सोधी गई तो कई एक के अर्थ में पदार्थ छोड़ दिया। कई एक पद अन्वय के छोड़ दिये। और कई एक पद आगे पीछे भी कर दिये गये हैं। और उस का कार्ड बुक पोस्ट के साथ तुम्हारे पास भेजेंगे।

(८) हमने आज ४७ मत्र से लेकर ५२ मन्त्र तक के पत्र शोध कर आज आये और आज ही रजिस्ट्री करा के भेजदिये हैं। उन मे से जहा २ मांस खाने का विषय काट दिया और उचित अर्थ कर दिया है। परन्तु राजा और राजपुपों को हानिकारक सिंहादि जागल पशुओं को मारना तो रहने ही दिया है, क्योंकि उन मन्त्रों में अनुदिशामि। आरण्यम्। तेन। तन्वम्। पुष्यस्व। आदि पदो के अर्थ के अनुरोध से राजपुरुषों को उनका मारना तो अवश्य ही सिद्ध होता है। तथा युक्ति से भी सिद्ध है, क्योकि यदि डाकू चोर आदिको को भी राजधर्म मे मारना उचित है तौ वैसे प्रजा के हानिकारक पशुओ को मारने में राजाओ को कुछ भी अपराध नही हो सकता। यदि ये न मारे जाय तो प्रजा के खेती आदि के नाश से बड़ी ही हानि होवे इत्यादि। यदि शीघ्रता से शोधने मे मांस खाने में कोई रह गया हो तौ उसको तुम कटवा देना और उचित धरवा देना।[1] और उन्ही पत्रों,को शोधा है कि जिस से तुम्हारा कपोज सब व्यर्थ न जाय किन्तु उसके बराबर सही करवा कर ग्राहको के पास भेजदो। अब आगे वेदभाष्य के पत्रे उचित समय पर सदा भेजे जायेंगे। और मुम्बई से टैप आने का क्या समाचार है। तीन महीने तो हो गये होगे। उनसे तकादा करो कि शीघ्र टैप भेज देवें।

मिति फा० शु० ९ शनिचर स० १९३९।[2] [दयानन्द सरस्वती]

---

१. यजुर्वेद १३। ४८-५१ मन्त्रों में हानिकर पशुओं के मारने का कथन है। उन से भूलकर भी कोई मांस खाने का विधान न मान ले, इस लिए श्री स्वामी जी ने समर्थदान की प्रार्थना पर सारा प्रकरण अति स्पष्ट करके प्रूफ भेजा। इसी विषय का संकेत प्रबन्धकर्ता समर्थदान ने अपने १३-७-१८८३ के पत्र में किया। देखो परिशिष्ट पत्र सग्रह।

२. १७ मार्च १८८३।

[१] पत्र सूचना (३४१) [३७१]

[प० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या—उपमन्त्री परोपकारिणी सभा ।][1]
रुपयो का फरक क्यो पड रहा है । १९००) रु० थे, अथवा २०००) रु० ।
यहां राजाधिराज ने मनुस्मृति का पढ़ना आरम्भ कर दिया है ।

फा० शु० १० १९३८ ।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[६] पत्रांश (३४२) [३७२]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

·· "जो तुमने इतनी बड़ी चिट्ठी आर्यभाषा में लिखी यही हमने तुम्हारी शुद्धी जानी ।"[3] · ··

लग भग २३ मार्च १८८३ ।

---

[१] पत्र (३४३) [३७३]

(ओ३म्)

श्रीयुत विहारीलाल जी आनन्दित रहो ।

धर्म्मजीवन और मित्रविलास आदि पत्रो का झूठ बकना ही रात दिन काम है । और जैपुर गजट वाला भी उनके सदृश ही बुद्धि रखता होगा । आगे जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो । जैसी सम्मति लाहौर और मेरठ वाले दें वैसी

---

१ इस का सकेत प० चमूपतिकृत ऋषि दयानन्द का पत्रव्यवहार द्वितीय भाग पृ० ९ पर है ।

२ १८ मार्च रवि० १८८३ सवत् १९३९ चाहिए ।

३. ऋषि के पत्र से इतना लेख—भाई जवाहरसिंह ने अपने पत्र ता० १८ अप्रैल १८८३ बुद्धवार, में उद्धृत किया है । देखो म मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १२५ । श्री स्वामी जी का पत्र भाई जवाहरसिंह के १६ मार्च १८८३ के पत्र के उत्तर में लिखा गया होगा । उस पत्र में भाई जवाहरसिंह जी ने लिखा है—

"मुझे हिन्दी लिखनी नहीं आती" ·· · · · ·· ···· · ······प्रन्तु जैसे आई वैसे लिख दी ।" देखो म० मु० पत्रव्यवहार पृ० १२९ ।

करो। तुम जानते थे कि स्वामी जी जोधपुर मे गये ही नही। फिर तुम को शोक कैसे हुआ। और हमारे लिये ऐसे सैकडों मनुष्य वका करते हैं, कि जैसे मित्रविलास और धर्म्मजीवन आदि पत्रो के मांसाहारी काश्मीरी ब्राह्मण आदि लाहोर मे वका करते हैं। सव से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा।[1]

मिती च० व० ५ बुधवार स० १९३९।[2]

(शाहपुरा)

(हस्ताक्षर) [दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (३४४) [३७४]

ओ३म्

श्रीयुत चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।

जव वह स्वीकारपत्र छपेगा तव एक कापी तुम्हारे पास भेज देंगे। भीमसेन को न हम अपने पास वा न अन्यत्र कुछ काम देना चाहते हैं। वह काम करने मे अयोग्य और वह स्वभाव का भी वहुत वुरा आदमी है। हम उस के विषय में पहले भी लिख चुके हैं। और वह न किसी आर्य्यसमाज मे रहने के योग्य है। यदि कही जायगा वुरे हवाल निकाला जायगा। अन्यत्र जहां उसकी इच्छा हो जाये, चाहे न जाये, उसकी खुशी। परन्तु हम उस को कही नौकर वा काम कराना नहीं चाहते। यह सव एक जात वद्री ब्राह्मण सिकन्दरपुर के सदृश हैं। चाहे इनके ऊपर कितनी दया करो वे कृतघ्न[ता] ही करते जाते हैं। जव से वह गया है तव से जो पुरुष हमारे पास हैं आनन्द मे रहते हैं। यदि वह होता तो न जाने अव तक कौन जाता कौन रहता। केवल वह दम्भी और मिथ्याचारी है। यदि वद्री ब्राह्मण का विष देने का कर्म प्रसिद्ध होगया है तो उस को जैलखाने भेज दिया वा नहीं। ठीक सावूती हो तो उस को अवश्य जैलखाने मे भिजवा देना चाहिये। जिस से दूसरा भी कोई ब्राह्मण ऐसे काम करने की इच्छा न करे। वड़ा शोक है उस वद्री दुष्ट पर कि जिसकी आप लोगों ने हजारह रुपये की सेवा की और उसका फल उस कुपात्र ने प्राण लेना चाहा था। हम यहां राजधानी शाहपुरा राज

---

१. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२. २८ मार्च सन् १८८३।

मेवाड़ जिले अजमेर में ठहरे हैं। कुछ एक आध महीना यहां रहेंगे। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० चै० व० ५ बुधवार स० १९३९।[1]

(शाहपुरा)

(हस्ताक्षर) [दयानन्द सरस्वती][2]

---

[१] पत्र सूचना (३४५) [३७५]

[लीलाधर हरिदास मुम्बई]

१. सेवकलाल ने घड़ी क्यों नहीं भेजी।

२. समर्थदान ने जो टाईप मगवाया, उस का क्या उत्तर है।

३. आर्यसमाज मन्दिर का काम कैसा हो रहा है।[3]

चैत्र वदी १०।[4] दयानन्द सरस्वती

शाहपुरा

---

[१] पत्र (३४६) [३७६]

॥ ओ३म् ॥

वारट श्रीकृशन जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र आपका आया समाचार विदित हुए। संस्कृतवाक्यप्रबोध के विषय में जो तुमने लिखा सो छापेवालों की भूल से छप गया है।[5] वहां—(एकत्रैकाङ्गुष्ठ एकत्र चतुरंगुलयः) ऐसा चाहिये, सो सुधार लीजिये॥

यदि श्रीमान्महाशयो से निवेदन करके कविराज जी के पास जोधपुर से उक्त कार्य्य कराने के लिये जयपुर जाने के आने की आज्ञा पहुच जाय तो

---

१ २८ मार्च १८८३।

२ मूलपत्र प० विष्णुलाल एम०ए०, बरेली के पास था। उसकी प्रतिलिपि हमने वहा से की थी।

३. इस पत्र का सकेत म० मुशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २९७, पर है।

४. २ एप्रिल, १८८३ सोमवार।

५. इस का समाधान पत्र पूर्ण स० १९९ तथा २०० में पढें।

अत्युत्तम है। और यह भी निवेदन करना कि पत्र द्वारा श्रीमानो की दिनचर्या और शरीर कुशलता की सत्य २ सूचना मुझको हुआ करे तो अच्छी बात है। क्योंकि उसको सुनना मै अवश्य चाहता हूं । और फतह करण उदयपुर मे है वा कविराज जी के साथ जोधपुर गये हैं। **फतहकरण का नाम (विजयकरण) हो सकता है वा नहीं। क्योंकि (फतह) शब्द फारसी का है और उसका अर्थ विजय है इसलिये (विजयकरण) नाम होना उचित है ॥**

और जो तुमने महाराजाधिराज की चिट्ठी के साथ एक चिट्ठी भेजी थी कि जिस मे लिखा था १००) सौ रुपये स्वामी जी के नौकरो को अर्पित किये लिखा था और उस समय यही मै ने और आप लोगो ने भी सुना होगा कि ५००) रुपये अनाथाश्रम और कसीदा करने वाली कन्याओं के पारितोषिक देते हैं। ज[व] पण्ड्या जी की चिट्ठी आई उस पर हमने पूछा कि ६००) रुपये भेजने चाहिये सातसे कहां से भेजे। उस पर उन्होने उत्तर दिया कि हमारे पास राजसे ७००) रुपये आये सो ६९२) रुपये भेजे और ८) रुपये मनियाडर और रजिष्टरी कराई दिये। यह क्या बात है। हमतो ६००) रुपये सब मिल कर फिरोजपुर के लिये श्रीमानो ने दिये हैं ऐसा सर्वत्र लिख चुके हैं। यदि इस मे १००) भूल से चले गये हों वा सातसे ही प्रदान किये गये हो जैसा हुआ हो वैसी निश्चित बात लिखो। जिस से हम पुनः जैसा हो वैसा सर्वत्र लिखदें।

और श्रीमानों की दिनचर्य्या का विषय ठीक २ लिखा करो। गोलमाल मत किया करो। और यहां सब प्रकार से आनन्द मगल है। और सब महाशय भद्र-जनो से मेरा आशीर्वाद कहियेगा।[1]

चैत्र कृष्ण १० सोम सवत् १९३९।[2]

{ दयानन्द सरस्वती }
शाहपुरा राज मेवाड़

---

१. मूलपत्र श्री कृष्ण जी के पुत्र ठाकुर किशोर सिंह बारहट के संग्रह में सुरक्षित है।

२. २ एप्रिल १८८३। प० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० १६५ से लिया।

[७] पत्र सूचना (३४७) [३७७]

[भाई जवाहरसिंह मंत्री आर्यसमाज लाहौर][1]

हमारे पत्रस्थ दो बातो का उत्तर तुम ने नहीं दिया। एक तो लाला मूलराज के भाई · ··· ····· ·।

चैत्र शुक्ला ३ मंगल[2]

---

[२] पत्र (३४८) [३७८]

ओ३म्

श्रीयुत विहारीलाल जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा आज आया समाचार विदित हुआ। आप लोग धर्म में दृढ़ रहिये कि जिस का फल आनन्द ही होगा। जो बात श्रीयुत ठाकुर रघुनाथसिंह जी तथा श्रीयुत गोविन्दसिंह जी ने सत्य धर्म रक्षार्थ की है यदि यह ऐसी ही है तो उन को अनेक धन्यवाद देना चाहिये। तुम्हारे लिखे अनुसार ठाकुर रघुनाथसिंह जी के पास हमने पत्र भेज दिया है। और उस के साथ जो श्रीमान् आर्य्यकुल दिवाकर महाराणा जी ने हम को मान्य पत्र दिया है और जो हमने स्वीकार पत्र उदयपुर में रजिष्टर कराया है उन की एक २ नकल उन के पास भेज दी है। जो कि उन की एक २ नकल आज तुम्हारे पास भेजते हैं। कुछ चिन्ता मत करो। जिन का सहाय धर्म है उसी का सहाय परमेश्वर है। जब बुरे बुराई न छोड़ें तो भले भलाई क्यों छोड़ें। और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।[3]

मि० चै० शु० ९ रविवार संवत् १९४०। (शाहपुरा)

(स्वाक्षर) [दयानन्द सरस्वती]

---

१ इस पत्र का संकेत म० मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १३० पर है। वहां श्री स्वामी जी के इतने शब्द उद्धृत किए गए है।

२ १० अप्रैल १८८३।

३ मूलपत्र ठाकुर नन्दकिशोरसिंह ने भेजा था। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४ १५ एप्रिल १८८३।

[१९] ॥ विज्ञापन ॥[1] [३७९]

विदित हो कि जो विक्रम सवत् १९३७ तदनुसार सन् १८८० में मु० इन्द्रमणि जी रहीस मुरादावाद का मुसल्मानो से विवाद हो कर मुन्शी जी पर ५००) रु० मेजिस्ट्रेट मुरादावाद ने जुर्माना किया। तव उस पर आर्य्यजनो ने उस मामले को अपना समझ सहाय की थी। वह मामला तभी हो चुका था। परन्तु मेरठ मे उस समय इस के लिये यह नियम नियत किया गया था कि मुन्शी जी के मुकद्दमे मे से जितना धन वचे वह अच्छे प्रतिष्ठित साहूकार के यहां ॥) व्याज पर रक्खा जाय। जव कभी ऐसा ही किसी अन्य वैदिक धर्म्मावलम्वी आर्य्य का अन्य मतवादियो से धर्म विषय का विवाद हो के कचहरी मे मुकद्दमा जाय और वह असमर्थ होय तो इन्ही रुपयों से उस की सहाय की जाय। इस नियम को मुनशी जी ने भी स्वामी दयानन्दसरस्वती जी आदि के सम्मुख मेरठ मे स्वीकार कर लिया था। परन्तु शोक का विषय है कि उक्त मुनशी जी ने ऐसे उत्तम नियम को तोड अव हिसाव नही देते।[2] और उलटा चोर कोतवाल को दाण्डे इस के सदृश लाला रामशरणदास रईस मेरठ और स्वामी दयानन्दसरस्वती जी पर मिथ्या दोषारोपण करते हैं। इस कारण मेरठ आर्यसमाज के आय व्यय का हिसाव प्रकाश करना पड़ा। जिस्से मिथ्या भ्रम जैसा मुनशी जी को हुआ वैसा किसी अन्य सज्जन आर्य्य पुरुष को न होय। और मु० इन्द्रमणि जी का सत्यासत्य इस हिसाव और मुनशी जी के विज्ञापन को देख कर सव पर प्रगट हो जायगा। मुनशी जी लिखते हैं कि वहुत आर्य्यजनो ने मेरे मुकद्दमे की सहाय मे मेरठ समाज और स्वामी दयानन्दसरस्वती जी के पास धन भेजा था। "उसमे केवल ६००) रु० मेरे पास पहुंचे। वाकी उनके पास रहे।" परन्तु इस मेरठ के मिती वार क्रमानुसार हिसाव देखने से निश्चय होता है कि मुनशी जी के पास उन्ही के मामले मे ९६३॥।≈)॥। मेरठ समाज से पहुंचे हैं। न जाने मुनशी जी ने ६००) रु० क्यों अपने विज्ञापन द्वारा प्रकाश किये। इस वात से तो मुनशी जी की असत्यता प्रगट होती है। यदि मुनशी जी का कथन सत्य है तो इन रुपयों के सिवाय लाला रामशरणदास वा स्वामी जी के पास किसी ने और रुपये भेजे होंय, और उन के पास उन की हस्ताक्षरी सहित रसीद होय शीघ्र प्रकाश करै अथवा करवावें, क्योकि सांच को आंच कहां। और जो मुशी जी ने हिसाव के छपवाने मे ढच पच की वा और ही कुछ राग गाने लगे

---

१. मासिक पत्र देशहितैषी, अजमेर, ज्येष्ठ १९४०, पृ० १–५ पर मुद्रित।

२ यह हिसाव मुन्शी जी ने अन्त तक न दिया।

तो यह उन के लिये पूरा कलङ्क है। इस के निवारणार्थ उनको अवश्य चाहिये कि जब २ जितना २ खर्च हुआ है यथावत् मिती वार छपवा देवें। और शेष धन आर्य्यसमाज मेरठ में सर्वोपकारार्थ भेज दें। पूर्व स्वीकृत नियम को भी सत्य करें तो बहुत अच्छी बात है। नहीं तो रुपये गये हुये आ भी जाने हैं परन्तु धर्म्मयुक्त कीर्त्ति गई हुई कभी नहीं आती।

॥ संभावितस्य चाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥

सत्पुरुष को मरण से अपकीर्त्ति बहुत बुरी समझनी चाहिये। यदि हमारे आर्य्यजनो विशेष उपदेशकों का आरम्भ से मृत्यु तक एकसा सत्याचरण रहे तो देश की बडी ही उन्नति हो। सर्वशक्तिमान् परमात्मा आर्य्यावर्त्त देश पर कृपा करे जिस से हमारे आर्य्यावर्त्तीय उपदेशक अपने किये हुये उत्तम उपदेश को लोभादि दोषो से कलङ्कित न करके आद्योपान्त पर्य्यन्त शुभाचरण से देश की सुदशा बढ़ाया करें। (अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु।

॥ एति जीवन्तमानन्दः ॥

विक्रमी सवत् १९३७ तदनुसार सन् १८८० ई।

नकल हिसाब जो कि मेरठ के समाज और मुन्शी इन्द्रमणि जी के विषय का है।

(आमदनी)	(खर्च)
३५०) मार्फत आर्य्यसमाज लहौर यह तफसील लाहौर के रुपयों की है कि	।)॥ रजष्ट्री मुनशी इन्द्रमणि साहब के पास भेजी ता० ७ अगस्त सन् १८८०
३०) आर्य्यसमाज मुलतान	३००) हवालय मु० इन्द्रमणि मार्फत ला० श्यामसुन्दर रईस मुरादाबाद ता० ७ अगस्त सन् १८८०
१००) आर्य्यसमाज झेलम	
११५) आर्य्यसमाज लहौर	
१०५) मेम्बरान वियास	११।) किराया रेलगाड़ी मेरठ से मुरादाबाद तक ४ आदमियों का तारीख १४ अगस्त १८८०।
५०) आर्य्यसमाज अमृतसर	
१००) आर्य्यसमाज रुड़की	

१००) आर्यसमाज फरूखाबाद
२३३॥≡) आर्यसमाज फीरोजपुर

१५०।।–) आर्यसमाज गुर्दासपुर
२४५॥) आर्यसमाज मेरठ। इस रकम में मेरठ शहर के और मेरठ के जिला तीन चार महापुरुषों का जो समाज के मेम्बर नही हैं चन्दा शामिल है दीया हुआ।
११) ला० केवल कृष्ण
१३८॥) लाला रकुन राय व लाला मुरलीधर ओरगाबाद से।
१३६॥।) पांड़े रामदीन सेकिंड मास्टर दारजिलिंग।

१५१६) संख्या सम्पूर्ण एक हजार पांच सौ सोलह रुपये।

६) किराया रेल बरेली से मेरठ और बरेली से मुरादाबाद तक।
।–) ला० शादीराम के खत का महसूल जो इलाहाबाद से आया।
॥) किराया गाड़ी जो हुल साहेब बैरिस्टर के पास मेरठ मे जाते समय दिया गया ता० १४।८।८०।
२३) मुकदमे पहिले मे खर्च हुआ मुकाम मुरादाबाद इस का हाल मु० जी को मालूम है।
१७≡)। खर्च रवानगी मेरठ से इलाहाबाद तक ता० ६ सितम्बर सन् १८८०।
३००) वजरिये नोट के मुशी जी के पास भेगे गए।
।–) खत रजिस्टरी महसूल डाक सहित।
३००) वजरिये हुंडी के मुन्शी जी के पास भेजे गये।
१॥) हुंडियावन दिये गये ता० ३०।१०।८०।
३॥) किरया रेल झडू नोकर मेरठ से अलीगढ़ तक मय वापिस और खुराक के।
–) मु० इन्द्रमणि सा० के खत का महसूल

९६३॥।–)॥ संख्या सम्पूर्ण।

उक्त बाकी ५५२-) रु० का ब्योरा इस प्राकार से है।

११) आर्यसमाज मुलतान	आर्यसमाज मुलतान के लिखने अनुसार उपदेशक मण्डली के धन में जमा किया गया।
३६।≡) आर्यसमाज जेहलम	३६।≡) आ० स० जेलम के लेखानुसार वापिस किये गए।
४१।॥=) आर्यसमाज लाहौर	४१।॥=) आ० स० लहौर तथा
३८।) मेम्बरान वियास	३८।) तथा तथा तथा।
१८।) आर्यसमाज अमृतसर	१८।) अमृतसर आ० स० के लेखानुसार आर्यसमाज जेहलम को भेजे गये।
३६।≡) आर्यसमाज रुड़की	३६।≡) आ० सा० रुड़की के लेखानुसार उपदेशक मण्डली धनमे जमा किये गये।
३६।≡) आर्यसमाज फरूखाबाद	३६।≡) आ० सा० फरूखाबाद के लेखानुसार किसी उचित कार्य मे खर्च करने के लिये यहां जमा हैं।
८५-)। आर्यसमाज फीरोजपुर	८५-)। आ० स० फीरोजपुर के लेखानुसार वापिस भेजे गये।
५४॥=) आर्यसमाज गुरदासपुर	५४॥=) आ० स० गुरदासपुर के तथा तथा।
८९॥) आर्यसमाज मेरठ	८९॥) आ० स० मेरठ के विचार अनुसार अतरग सभा के वापिस लिये गये।
४-) लाला केवलकृष्ण	४-) लाला केवलकृष्ण के जवाब न आने से मेरठ समाज में जमा हैं।
५०≡) लाला रकुनराय वा ला० मुर्लीधर	५०≡) ला० रकुनराय वा ला० मुर्लीधर के पास रजिष्ट्री खत भेजा था परतु खत पता न लगने से लौट आया इस लिये इन के रुपये यहा जमा हैं।
४९॥=) पांडे रामदीन मास्टर	४९॥=) पां० रामदीन मा० के लेखानुसार इस रुपये की उनके पास पुस्तकें भेजी गईं॥

५५२-)। संपूर्ण सख्या

पाठक गण ! अब देखिये यह अपराध भी मु० इन्द्रमणि जी पर हुआ, कि यदि मुन्शी जी पूर्व स्वीकृत नियमानुसार वर्तते तो उक्त ५५२~)। ये रुपये भी सर्वोपकार आर्य्यधर्म रक्षा मे लगते। और आर्य्यसमाज मेरठ मुन्शी जी के अन्यथा व्यवहार पर शोक करके हिस्सेवार वैदिकधर्म रक्षणार्थ धन को पुन: दाताओ के पास क्यो फेर देते । जैसे थोड़े से उदार आर्यों ने वैदिकधर्मोपदेशक मंडली के लिये अपना २ भाग दे दिया वैसे सब धन आर्य्यावर्त देशोन्नति मे लगता तो कितनी अच्छी बात होती। परन्तु ऐसी २ तुच्छ बातो से देशहितैषी महाशय जन देशोन्नति करने मे उदासीन न हो किन्तु जब बुरे बुराई नही छोड़ते तो भले भलाई क्यों छोड़ें।

द० दयानन्द सरस्वती

---

[२३] पत्र (३४९) [३८०]

ओ३म्

श्रीयुत लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा महादेव पंडित के पत्र के साथ आया। समाचार विदित हुआ। समाज का उत्सव अच्छी प्रकार हो गया यह बहुत सौभाग्य की बात हुई। जो महादेव पण्डित के विषय मे जो तुमने कुछ अनुमान किया सो हमको नही दीखता। यह पण्डित धनार्थी है धर्मार्थी नही। क्योकि इसका पत्र इस बात की सिद्धी करता है। जैसा कि कानपुर मे एक पडित को रक्खा था और पश्चात् खराब निकला। इन लोगो का विश्वास हमारे हृदय मे तभी होगा कि जब उनका वर्तमान प्रत्यक्ष वा परोक्ष मे एक सा देखा जाय। इस पत्र के साथ मान्यपत्र की नकल भेजते हैं। मेरठ से आया हुआ मुशी इन्द्रमणि का हिसाब इस लिये नही भेजते कि तुम को प्रेस एक्ट के मिथ्या भ्रम ने भ्रान्त कर रक्खा है। अथवा मुशी इन्द्रमणि से किसी प्रकार का सम्बन्ध होगा। अस्तु जो हो। तुम्हारा प्रबन्ध भी पाठशाला विषयक अच्छा नही है। अब कई बोर हमने लिखा कि पडित लक्ष्मीदत्त जी के आने के पश्चात् वा पहले सस्कृत मे कौन २ ग्रथ को किस २ ने वा कितनो ने पढ़ा वा पढ़ने हैं। उसका समाचार कुछ भी नही लिखा। इस से विदित होता है कि तुम्हारी पाठशाला मे अलिफ बे और कैट बैट का धर्मार है जो कि आर्य्यसमाजो

---

१. प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८१९ से ८२२ तक छपा। प० जी ने भारत-मित्र कलकत्ता, २६-४-१८८३ से लिया। भारतमित्र के लेखानुसार "शाहपुरा" से भेजा गया।

को विशेष कर्तव्य नहीं है। और इसके साथ पडितों का हिसाब भेजते हैं देखलो। तुम अपने हिसाब से मिलालो। और आगे रु० शाहपुरा राज मेवाड़ के पते से मेरे पास भेज दो। और सब से बाबू जी आदि से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० वै० व० ३ स० १९४०।[1]

(हस्ताक्षर)[2]

---

[४१] पत्र (३५०) [३८१]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

तुम्हारे सब पत्रों का उत्तर और पुस्तक के बडल के विषय का पत्र कल तक भेज चुके हैं। आज एक विशेष समाचार के लिये लिखते हैं। जो तुम को पंड्या जी ने उदयपुर का वर्तमान न छापने के विषय में लिखा था उसको सुनकर हमने उदयपुर को लिखा था कि इसको छपवावें वा नही। वहा से उत्तर आया कि निसक छपवा दीजिये। सो इनके छपवाने मे विलम्ब न कीजिये। इसलिये अब स्वीकारपत्र, मान्यपत्र और धन्यवादपत्र उत्तम कागज पर छपवा कर सब समाजों मे और जहा उचित समझो भेजदो। अर्थात जहा २ लाइब्रेरी वा उत्तम समाचार पत्रों में भी भेज दो। और हमारे पास भी उसकी १०० नकल भेज दो। और टाइटल पेज पर भी उदयपुर का वर्तमान छपवा दो।

और गनशदास और कम्पनी तारघर के नीचे चांदनी चौक के उत्तर नई सडक बनारस के पास से हम पुस्तक अनेक वार मगवाते हैं। और उनका व्यवहार वैदिक यन्त्रालय के साथ है। और कुछ कमीशन तुम भी उनको देते होगे और वो भी तुमको देता होगा। तुम उसको एक चिट्ठी भेज दो कि स्वामी जी जो २ पुस्तकें मगवावें भेज दिया करो और हमारे हिसाब में लिख लो क्योंकि

---

१ २५ एप्रिल, बुध सन् १८८३।

२ इस पत्र पर ऋषि के हस्ताक्षर नहीं हैं। सारा पत्र लेखक के ही हाथ का है। ऋषि का एक भी अक्षर नहीं है। इस लेखक के लिखे और भी कई पत्र हैं।

मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने जनवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास ० २०२-२०३ पर कुछ पाठभेद के साथ छपा है। इस पत्र का उत्तर देखो, म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३२५।

उसका कमीशन वैदिक यन्त्रालय मे रहा करे। अभी हम २१॥।=) आने के पुस्तक मंगवा चुके हैं जिसका हाल तुमको लिख दिया। और दो एक दिन में ५०) रु० या ६०) रु० के पुस्तक श्रीयुत महाराजाधिराज हमारे द्वारा मगवावेंगे। और गनेशदास का व्यवहार शुद्ध है क्योंकि हमने उसकी दुकान से हजारों रुपये की पुस्तकें ली हैं। और कमीशन भी कुछ देता था हमको ठीक याद नही। तुम ने तो उस से कमीशन का खुलासा कर लिया होगा। यदि न करा हो तो अब कर लेना। पूर्व पत्रो का उत्तर और इसका उत्तर शीघ्र लिखना।

आज तुम्हारा २३–३ का पत्र पहुचा समाचार विदित हुये। ईश्वरानन्द वहां पहुंच गया, अच्छा हुआ। और रामनाथ को तुमने लौटा दिया होगा, अच्छा किया। जैसा तुम ने उसका सूचीपत्र बनवाया है उसको बहुत जल्दी छपवाओ। यजुर्वेद के पत्रे भेज दिये हैं पहुचे होगे। ऋग्वेद के भी अब भेजने वाल हैं। परन्तु यह समझो कि यजुर्वेद भेजा है मई महीने का। और जो यह ऋग्वेद का भेजेंगे जून का है। अब हम आगे यजुर्वेद के पत्रे जुलाई की ५वी तारीख तक पहुंचेंगे। बीच में भले ही तुम जब आधा जून हो हमको स्मरण देना। वैसे ही आगे को भी भेजा करेंगे।

मुम्बई से आज लीलाधर हरिदास का पत्र आया है। उस मे लिखा है कि टैप ढल रहे हैं। बहुत अच्छी बात है।

अब जो तुमने ज्वालादत्त के लिये भाषा बनाने के विषय मे लिखा उसके ये नियम हैं। यदि स्वीकार करेगा तो रखेंगे नही तो नही।

(१) यदि वह १७) रुपये ही अपना मासिक रखना चाहे तो १६ मंत्र की भाषा प्रतिदिन बनानी पड़ेगी, चाहे वह गायत्री छन्द हो चाहे उत्कृति अर्थात् छोटे बड़े मत्र सब गिनती मे आवेंगे।

(२) अक्षर स्पष्ट और चित्त लगाकर सुन्दर भाषा बनानी होगी।

(३) जो तुमने प्रयाग मे नौकर रखा है वह हमारी पुस्तकें सहर्ष प्रूफ सोधे देवे। और जहां उसको संदेह पड़े ज्वालादत्त से पूछ ले। और शिवदयाल को ईश्वरानन्द भी कुछ सहाय दिया करेगा। अन्त का प्रूफ जिस पर छापने की आज्ञा दी जाती है वह एक बार ज्वालादत्त और शिवदयाल देख लिया करें। उसके सिवाय ज्वालादत्त को कुछ न करना होगा किन्तु भाषा ही बनाना होगा।

(४) यदि उस पर उसकी प्रसन्नता न हो तो घर को चला जाय। यदि घर मे रह कर भाषा बनाना चाहे तो उसको ८) रु० माहवारी देवें और १२ मत्र की भाषा प्रतिदिन बना दिया करे। बाकी अपना घर का काम किया करे। डाक

और कागज का खर्च हमारा होगा। और यंत्रालय मे अच्छी भाषा और कुछ अधिक करेगा तो उसका मासिक यथायोग्य यथासमय वढ़ा दिया जायगा।

(५) यदि वह कहे कि इतनी भाषा मुझ से नही वनाई जाती तो उसका कहना व्यर्थ है। क्योंकि जब हम दो घंटे वा अढ़ाई घंटे अथवा तीन घंटे में २४ गायत्री मंत्र १२ त्रिष्टुप और १० जगती छंद का भाष्य सुखपूर्वक बना लेते हैं तो उस से अधिक समय और परिश्रम कभी नहीं लग सकता। इन दोनों बातो पर उसकी प्रसन्नता न हो तो हमको भी उस पर कुछ प्रसन्नता नही। यदि वह घमण्ड करके चला जायगा तो ऐसी जीविका कहीं नही मिलेगी और दुःख पावेगा। और हमारी कुछ भी हानि नही, क्योंकि हम तो दूसरे को रखके भाषा बनवा लेंगे। और उसके सिवाय पश्चात्ताप के कुछ भी हाथ न लगेगा। घर पै जाके दशगात्रादि मृतक कर्म कराके मुर्दाविधान खाया करेगा। यह सब बातें तुम उसको समझा दो। पश्चात जैसा हो वैसा हमको १० दिन भीतर शीघ्र उत्तर लिख भेजो। पीछे हम भाषा बनाने के लिये पत्र भेजेंगे पूर्व नही।

ईश्वरानन्द को हम ने जैपुर भेजा था। उस ने उस का वर्तमान कुछ नही लिखा। सो क्या बात है। सो उस से पूछकर लिख देना।

मि० वै० कृष्णा ४ स० १९४०।[1]

हस्ताक्षर

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (३५२) [३८२]

ओ३म्

श्रीयुत श्रीमान् महाशय आनन्दित रहो!

यहां जो नहर आपके खुदाई जाती है वह ३ फुट ऊपर ३ फुट नीचे और ३ फुट चौड़ी खुदायी जाती है। सो मेरी समझ में ३ फुट चौड़ी ४ फुट ऊपर

---

१ २६ एप्रिल, १८८३। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

और दो फुट नीचे रहना बहुत अच्छा है। इस का विशेष गुण आपको श्याम को समझा दूंगा । इत्यलम् ।

वैशाख कृष्ण ४ गुरु० सं० १९३९ ।[1]

हस्ताक्षर

[दयानन्द सरस्वती][2]

---

[८] पत्रांश (३५२) [३८३]

[भाई जवाहर सिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

....

मुझ को निश्चय है कि आप के आने से यहां बड़ा आनन्द और उन्नति होगी। . . .. [3]

---

[४] पत्रांश (३५३) [३८४]

[पं० छगनलाल द्विवेदी मसूदा]

.. ..

अब जब कभी हम मसूदे मे आवें[गे] तब श्री दरबार को और तुम को छः शास्त्र के मुख्य मुख्य विषय और मनुस्मृति के तीन अध्याय पढ़ाना चाहते हैं। उस समय वहीं रहना हो और निरन्तर पढाना हो तो एक आध महीने मे सब

---

१ २६ एप्रिल १८८३ । सम्वत् १९४० चाहिए ।

२ जिस समय स्वामी जी शाहपुरा में विराजते थे, उस समय वहा नहर की खुदाई हो रही थी। उसे देखकर अपने रहने के स्थान से ही स्वामी जी ने श्री दर्बार के पास यह पत्र भेजा था। मूलपत्र राजकार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

३. भाई जवाहरसिंह ने ऊपर मुद्रित अंश रद्दे बुतलान पृ० ६८ पर छापा है। दयानन्द चरित दर्पण पृ० २७२ पर इतना लेख अधिक है—

भाई जवाहरसिंह जी आनन्दित रहो।

आप का पत्र पाया विशेष आनन्द हुआ। आप रियासत जोधपुर में अवश्य आओ मुझको निश्चय........ .. । नहीं कह सकते कि इतना अंश मुंशी जीयालाल जैनी ने कहां से लिया। इन पंक्तियों वाला पत्र जोधपुर बुलाने के लिए नहीं था । भाई जवाहरसिंह का अभिप्राय है कि शाहपुरा बुलाने के लिए था।

'हो जावेंगे। इस का उत्तर लिखना। और यहां के श्री महाराजाधिराज ने मनुस्मृति का सप्तमाध्याय पढ़ लिया है। दो दिन योगशास्त्र अभ्यास करने के लिये पढ़ कर कल अष्टमाध्याय का आरम्भ करेंगे। ....

शाहपुरा
वैशाख वदी ७ सवत् १९३९ से कुछ दिन पहले लिखा गया।'[1]

---

[३] पत्र (३५४) [३८९]

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोर जी आनन्दित रहो!

आज जैपुर समाज से पत्र आया। उसके पहले भी आया था। और आपने जिस पडित के लिये विज्ञापन दिया है इत्यादि से आप के समाज का समाचार हम जान कर यह पत्र लिखते हैं कि उस पडित का क्या नाम है। यदि वह जैसा तुम ने विज्ञापन दिया है वैसा ही है तो उन पडित जी को यहा शाहपुरा में हमारे पास भेज दीजिये। हम उनकी परीक्षा कर के तुम्हारे लिखे प्रमाणे २०) रु० से कम माहवारी न कर के किसी योग्य स्थान पै रख देंगे, वा उतने ही माहवारी पर हम अपने ही पास रख लेंगे। एक वार यहां हमारे पास भेज दो।

द्वितीय यह बात है कि कल तुम्हारे पास जो स्वीकारपत्र उदयपुर राज यन्त्रालय में छपा है और जो एक मान्यपत्र श्रीमान् आर्यकुलदिवाकरों ने मुझे दिया है उन दोनों की दो २ नकल तुम्हारे पास भेजते हैं। उन मे से एक २ नकल तो तुम अपनी लायब्रेरी में रखना और एक २ नकल आर्य्यधर्म सभा जयपुर के समाज में देना। इन दोनों बातो का उत्तर नागरी मे लिख कर भेजना। इस बात से मुझे वड़ी प्रसन्नता हुई कि आप की सभा निर्विघ्नता से सदा वढती है। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर सव मनुष्यों पर कृपा करे कि सव की आत्मा असत्य

---

१ प० चमूपति जी सम्पादित ऋषि दयानन्द का पत्रव्यवहार, द्वितीय भाग, सम्वत् १९९२, पृ० ७३ पर प० छगनलाल के उत्तर में उद्धृत। प० छगनलाल का उत्तर-पत्र वै० व० ७ अर्थात् २९ एप्रिल १८८३ सोम का लिखा हुआ है। सवत् १९३९ भूल से लिखा गया है। चाहिए सवत १९४०।

अधर्म व्यवहार से छूट कर सत्य धर्म व्यवहार मे प्रवृत्त रहे। सब आर्यसमाज मे मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा—

मि० वै० कृ० ७ सं० १९४० । तदनुसार ता० २९ अपरेल सन् १८८३ ई० ।'

हस्ताक्षर

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (३५५) [३८६]

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत रावराजा श्रीमान् तेजसिंह जी आनन्दित रहो—

श्रीमान् का पत्र सवत् १९४० वैशाख वदी ३ रविवार का लिखा मेरे पास वैशाख वदी ८ सोमवार को पहुंचा। जिसके साथ मुन्शी दामोदर दास जी का भी पत्र था। वांच कर वड़ा ही आनन्द हुआ। मै आनन्द पूर्वक जोधपुर आने का निमन्त्रण स्वीकार करता हूं। और श्रीमान् महाशय महोदय जोधपुराधीशों, श्रीमान् महाराजे श्री प्रतापसिंह जी तथा आपको अनेक धन्यवाद देता हू कि जिन आप लोगों ने मेरे वहा जोधपुर मे आने के लिये प्रीति प्रकाश की। अव मुझको दृढ निश्चय इस वात से हुआ कि अव आर्यावर्त की उन्नति होने का समय आया है। जव श्रीमान् जोधपुराधीश आदि की वैदिक सत्य धर्म और सनातन राजनीति पर प्रीति हुई है। पुनः हम लोगो के सौभाग्य के उदय होने मे कुछ सन्देह नही। और इस वात से परम आनन्द हुआ कि जो मुशी दामोदरदास जी ने आपकी उन्नति होने का विषय लिखा। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर से मैं प्रार्थना करता हू कि आप लोगो की उन्नति कृपा कटाक्ष से सदा किया करें। और स्वदेशोन्नति मे आप सब लोगो को दृढोत्साही कर के आप लोगों के द्वारा सब आर्य्यावर्त्त देश की वढ़ती कराके इस महापुण्य कीति के भागी आप लोगों को करे।

(१) मैं आज से १० दश वा १५ पन्द्रह दिन मे दूसरी चिट्ठी आप को लिखूगा कि जिसमें पाली के स्टेशन से जोधपुर आने मे जितनी वा जैसी सवारी भेजनी, व जो २ उचित प्रवन्ध होना योग्य होगा लिखूगा। उसी के अनुसार प्रबन्ध आप कर देवेंगे।

---

१. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

(२) यहां श्रीमान् महाराधिराज मनुस्मृति का राजधर्म पढ़ रहे हैं। सात आठ दिन में पूरा हो जायगा। और ५ पाच सात दिन, एक राज में और दूसरा पुण्डरीक जी के यहा अग्निहोम का प्रारम्भ होगा उस में उचित उपदेश वा विधि बतलाने में लगेंगे।

(३) मैं अनुमान करता हू कि गत दिन आप का पत्र शाहपुराधीशों को दिखलाया। उस से अनुमान होता है कि जोधपुर मे शीघ्र आने में सम्मति कठिनता से देंगे। सम्मति शीघ्र होने के लिये यह उपाय है कि जब मेरा दूसरा पत्र आपके पास आवे तभी आप किसी दूसरे पुरुष को यहा भेज देवें। वे कहेंगे और पश्चात् मैं भी विशेष कहूंगा तो आशा है कि मान जावेंगे, क्योंकि शाहपुराधीश बड़े बुद्धिमान् हैं। इस मे आप २० दिन के भीतर समय का विलम्ब है कि इसी समय में मेरा पत्र वहां आता और वहा से योग्यपुरुष का यहा आना मेरी सम्मति है। अधिक विलम्ब होना मैं भी उचित नहीं समझता।

(४) मैं जैसा सत्यधर्म की उन्नति और स्वदेश का उपकार होने में प्रसन्न होता हूं वैसा किसी अन्य बात पर नहीं। क्योकि यही मनुष्य जन्म, विद्वान्, राजा वा धनाढ्य पुरुष होने का मुख्य फल है, जिस को कि आप लोग तन मन धन और पुरुषार्थ स करना चाहते हैं। और यह आप लोगों ही का कर्तव्य कर्म है। अब परमेश्वर न चाहा तो थोड़े ही समय मे मैं और आप लोग समक्ष होकर जोधपुर मे आनन्दोन्नति करने मे प्रवर्तमान होंग। मेरी ओर से महाराजे श्री प्रतापसिह आदि से आशीर्वाद कह दीजियेगा। अलमतिविस्तरेण।

वैशाख वदी ९ भौम सवत् १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
शापुरा राज मेवाड़

---

[२] पत्र (३५६) [३८७]

ओ३म्

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि बहुत दिन हुए वहा के समाचार विदित होने मे। अब आप श्रीमानों और आप के लिखने योग्य वर्तमान लिख भेजिये जिस्से विदित हो कि उन डाक्तरो के कृत्य से क्या गुण हुआ। और क्या क्या हो रहा है। आगे कैसा

---

१ १ मई १८८३। मूलपत्र रावराजा तेजसिंह जी के पास था।

अनुमान होता है। इसमे डाक्तर लोग भी यही पथ्य कहेगे कि ब्रह्मचारी रहना, घोड़े पर न चढ़ना तथा मांसाहारादि[का] एक वर्ष वा ६ छः महीने अथवा ४ चार महीने तक पथ्य भी यथावत् रखना होगा।

(२) आपके लेखानुसार उदयपुर का वर्तमान छापने के लिये वैदिक यन्त्रालय प्रयागादि मे आज्ञा दे दी है। थोड़े ही दिन मे छप के प्रसिद्ध हो जायगा।

(३) एक नूतन वर्तमान यह है कि श्रीमान् जोधपुराधीशोकी आज्ञा से श्रीयुत महाराजे प्रतापसिंह जी तथा श्रीयुत राव राजा तेजसिंह जी और बाहारट अमरदान जी आदि ने मुझको शीघ्र जोधपुर मे बुलाने के लिये पत्र भेजा है। सो गत दिन मेरे पास यहां शाहपुरा मे पहुचा है। इसमे आप सर्वाधीशो से पूछ कर अनुमति लिख भेजिये कि यहां क्या होना उचित है। मैंने उसको इस प्रकार का पत्र भेजा है कि जब मेरा द्वितीय पत्र आप लोगों के पास पहुंच जाय तभी पाली के ष्टेशन से जोधपुर तक सवारी आदिका प्रबन्ध कर दीजियेगा। मैने यह विचारा कि जब उदयपुर से प्रत्युत्तर आजायगा तभी जोधपुर मे जाने के लिये नियत समय की सूचना तुमको लिख दी जायगी।

श्रीयुत महाराज राजाधिराज जी का पढना रह जायगा। मनुस्मृति के तो ३ अध्याय हो जावेंगे किन्तु शास्त्रों का विषय रह जायगा। तथापि श्रीमानो की अनुमति से जाना होगा। पांच छः दिनों मे मनु का ९ वां अध्याय पूरा हो जायगा। और ८ दिनो मे अग्निहोत्र का विधि भी हो जायगा। यहां सदा के लिये दो अग्निहोत्र हुआ करेंगे। एक राज मे और द्वितीय पुडरीक जी के यहा। आप जोधपुर मे अभी होकर आये हैं। इस लिये आप भी मुझको लिखिये। और जो उचित हो तो जिस किसी को जोधपुर में लिखना। अखिलेशों की समति हो सो भी यहां लिख भेजिये। जो ५१ नियम राजनीति के लिखकर श्रीमानो को दिये थे उस की १ नकल हमारे पास अवश्य भेज दीजियेगा।[1] और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।[2]

मि० वै० कृ० ९ सोमवार सम्वत् ११४०।[3]

{ दयानन्द सरस्वती
शाहपुरा }

---

१. ये ५१ नियम आगे पूर्ण स० ३९० पर छपे हैं।

२. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में है। प० चमूपति सम्पादित पत्र व्यवहार पृ० १८१, १८२ पर भी छपा है।

३. ३ मई सन् १८८३।

[५] पत्र (३५७) [३८८]

पण्डित गोपालरावहरि जी आनदित रहो।

आज एक साधू का पत्र मेरे पास आया।[1] वह आप के पास भेजता हूं। साधु का लेख सत्य है। परन्तु आपने चितौड़ सम्बन्धी इतिहास में न जाने कहां से क्या सुन सुना कर लिख दिया। उस काल उस स्थान में मेरा उदयपुराधीश से केवल तीन ही बार समागम हुआ। आप ने प्रतिदिन दो बार होता रहा, लिखा है। आप जानते हैं कि मुझे ऐसे कामो के परिशोधन का अवकाश नही। यद्यपि आप सत्यप्रिय और शुद्ध-भाव-भावित ही हैं और इसी हित-चित्त से उपकारक काम कर रहे हैं, परन्तु जब आपको मेरा इतिहास ठीक २ विदित नहीं, तो उसके लिखने मे कभी साहस मत करो। क्योकि थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोषकृत्य विगड जाता है। ऐसा निश्चय रक्खो। और इस पत्र का उत्तर शीघ्र भेजो।

वैशाख शुक्ल २ सम्वत १९३९।[2] स्थान शाहपुरा।[3]

(दयानन्द सरस्वती)

---

[४२] पत्र (३५८) [३८९]

(ओ३म्)

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

१—पत्र तुम्हारा आया वर्त्तमान विदित हुआ। जैनियों की पुस्तक का बण्डल प्राप्त होने से निश्चय हुआ।

२—ईश्वरानन्द कहीं अन्यत्र चला गया है। वह बड़ा चंचल है। बहुत लोगो के कहने से हमने दीक्षा दी और तुम लोग भी प्रसन्न हुए परन्तु प्रसन्नता का काम करे जब ठीक है।

---

१. साधु जी का पत्र तथा प० गोपालरावहरि का २७-४-८३ का उत्तर दोनों म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ३३३-३३७ पर छपे हैं।

२. ८ मई १८८३। सवत १९४० चाहिए। तिथि की भी भूल हो सकती है। ९ एप्रिल भी संभव है।

३ दयानन्ददिग्वि० तृतीय खण्ड से लिया गया। फरुखावाद का इतिहास पृ० २०१ से २०२ पर भी छपा है।

३—कम्पोजीटर के निकालने से बहुत हानि हुई। परन्तु जैसे बने उन सब को जो कि पूर्व थे रख लो। किसी का ।।) आना किसी का १) रुपया अधिक बढ़ाकर रखलो। क्योंकि वेदाङ्गप्रकाश और सत्यार्थप्रकाश बहुत जल्द छपना चाहिए।

४—तुमको हम निश्चित कहते हैं कि बाहर का काम किसी का मत छापो। सत्यार्थप्रकाश और वेदाङ्गप्रकाश के छपने मे देर होने का कारण बाहर का काम है। और देशहितैषी और भारतसुदशाप्रवर्त्तक और प्रयाग-समाचार सब का छापना बन्द कर दो। और उनको लिख दो कि तुम्हारी इच्छा हो जहां छपवाओ। क्योंकि हमने पहिले ही लिखा था कि जब हमारे निज काम मे हर्कत होगी उसी वक्त हम बन्द कर देंगे। सो हर्कत बहुत होती है। क्योंकि यह यन्त्रालय रोजगार के वास्ते नहीं है, केवल सत्यशास्त्रों को छापकर प्रसिद्ध करने के लिये है न कि व्यापार के लिये। यहां छापने को बहुत हैं जितना चाहो उतना छापो। इन समाचार आदि के छापने में समय खोना कुछ उचित नहीं। हम को आशा है कि तुम भी इस बात को प्रसन्न कर लोगे क्योकि तुम को प्रसन्न करना अवश्य है। और पण्डित जी की यही प्रसन्नता है।

५—तुम्हारे कल के पत्र मे पुस्तको का बंडल लिखा हुआ नहीं आया है। आवेगा तब देख करके मान्यपत्र पर यदि तुम्हारा लेख मानने योग्य होगा तो रहने देंगे नहीं तो नहीं। और वैदिकनिधि के विषय में तुमने लिखा सो ठीक है। क्योंकि उन्हीं लोगों के दस्तखत से छपना ठीक है। और धन्यवादपत्र तथा मान्यपत्र पर प्रयागसमाज के प्रधान और मन्त्री के दस्तखत होना चाहिये।

६—ऋग्वेद के पत्रे १५७८ से लेके १६९७ तक पण्डित ज्वालादत्त को भाषा बनाने के लिये देदेना। और उसने १६ मन्त्र की भाषा प्रतिदिन बनाना स्वीकार किया है सो बराबर बनाया करे।[1]

मि० वै० शु० ३ सं० १९४०।[2]

ह० दयानन्द सरस्वती,

---

१. मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित होगा। हमने आर्यधर्मेन्द्र जीवनचरित पृ० ३७३ से लिया था।

२. ९ मई १८८३

[१] [३९०]

महाराणा श्री सज्जनसिंह जी उदयपुर की दिनचर्या के लिए नियम

तत्

जब न्यायस्थान पर जावे तब सब प्रजास्थ वादि प्रतिवादी साक्षी राजपुरुष सम्प्रेक्षक आदि मनुष्यो को प्रसन्नवदन कृपादृष्टि से आनन्दित करे। दक्षिण हाथ उठा कर सब को स्वास्थ्य अभयदान देकर न्यायासन पर बैठ सर्वव्यापक यथावत् न्यायकारी अन्तर्यामी को मन से नेत्रोन्मीलन करके प्रार्थना करे कि हे परमेश्वर आप की कृपादृष्टि हो जिस से मैं चाहता हूं कि कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादि के वश हो के अन्याय न करूं। ऐसा अनुग्रह आप भी कीजिये। परन्तु इस बात को सदा ध्यान में रक्खे कि सब कामादि और अन्याय में फसाने वाला लोभ है। उसको अपने से और आप उस से सदा दूर रहे। उस समय न किसी का शत्रु और न किसी का मित्र तथा उदासीन बने। किन्तु समदृष्टि कि जैसा पक्षपात छोड़ परमेश्वर वा आप्तपुरुष सब के साथ वर्तता है वैसे वर्त्ते। प्रत्येक सप्ताह मे गुरुवार के [दिन] ऋणादानादि मे विवाद अर्थात् दिवानी का न्याय करे। और रविवार के दिन साहसिकों का अर्थात् फहोजदारी का न्याय करे। जब अर्थी वा प्रत्यर्थी अथवा साक्षी जो कुछ स्वभाव से बोले उस पर अतीव ध्यान देकर विचार करे। और उनको कठिन से कठिन शपथ करावे। सब साक्षियो को पृथक् २ रक्खे। सीखावट की साक्षी को न माने। और यह भी जना देवे कि मिथ्या बोलने मानने और करने वाले को इस जन्म और परजन्म मे सुख वा प्रतिष्ठा नही होती। और देखो थोडे से जीवन में धर्मात्मा अर्थात् सत्यवादी सत्यमानी सत्यकारी मनुष्य धर्मार्थ काम मोक्ष फलों को प्राप्त होता और मिथ्यावादी, मिथ्यामानी अनृतकारी सर्वदा दु:ख को प्राप्त होता है। इस लिये किसी को आत्मा और परमेश्वर के मिथ्याभाषणादि से शत्रु न बनना चाहिये। जैसा कुछ तुम्हारे आत्मा मे हो वैसा ही जीभ से बोलो। जब वे कुछ भाषण करें वह सब लिपिवध होवे। और उन के नेत्र तथा मुखाकृति की ओर देख कर भीतर के आशय को पहिचाने। यदि कोई बड़ा ढीठ अथवा प्राड्विवाक अर्थात् वारिष्टर वा वकील जो कुछ परस्पर प्रश्नोत्तर करें उस पर ध्यान दे कर सुने तथा लिखे। यदि जहा २ पूछ उचित हो पूछे। बीच मे अन्य २ सम्वाद कर के वक्र वा सरलता से प्रश्न करे। यदि इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो उन पर विश्वास न कर के जहां वह विरुद्ध कार्य हुआ हो वहां के सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष और स्त्रियो की साक्षी मे स्त्री जनो से पूछ कर

निश्चय करे। परन्तु स्त्रियों से राणी पूंछे। अथवा यदि पड़दे मे रक्खे तो बड़े प्रबन्ध से रख के पूछे कि वहां उस के बदले दूसरी स्त्री न बोले। यदि सामने होवे तो न कोई उस पर दृष्टि डाले न हास्य करे और न डरावे। इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो गुप्त में उन को वात करते सुन अथवा धार्मिक आप्तजन दूतो के द्वारा निश्चय करे। पश्चात् जो अपराधी हो उसको यथायोग्य दण्ड दे कर हरावे। और अनपराधी का मान्य कर जितावे। जो हारे उस पर ताना न मारे। किन्तु ऐसा कहे कि देखो भाई मैं तुमसे ऐसे काम करने की आशा नही करता था। तुमने ऐसे कुल वा ऐसे के पुत्र हो कर ऐसा अनुचित काम किया। इस पर मुझ को वड़ा शोक है। हे भद्र यदि तू ऐसा काम न करता तो ऐसे दण्ड को प्राप्त क्यों होता। यदि कोई धूर्त वा आतुर बुरा शब्द बोले वा कुचेष्टा करे सह लेना। परन्तु अपने शरीर की रक्षा सब प्रकार से करना। और सब की मानसी वा बाह्य चेष्टा को जानते रहना। चाहे कोई कितनी ही प्रार्थना करे वा क्रोड रुपैये भी दे कर अन्याय कराया चाहें तो भी कभी अन्याय न करे। यही राजा के प्रताप, कीर्ति, श्री और राज्य बढ़ाने वाला कर्म है। यदि भूमि धन धरावट सीमा आदि जितने विवाद लेख वचन से हों अथवा साहस मारपीट कुवचन आदि से दूसरे को पीडा वा हानि पहुंचावें उनका भी न्याय यथोचित करे। जैसा मनुस्मृति के अष्टम और नवमाध्याय में न्याय व्यवस्था १८ प्रकारो मे लिखी है यथायोग्य करे। ये सब काम मध्यान्होत्तर चार बजे तक कर के कुछ ४५ पल अर्थात् १५ मिनट तक स्वस्थ होकर जिन के साथ मिलके राज प्रवन्धार्थ विचार करना चाहिये ५। सवा वजे तक प्रजास्थ जनो से बात करे। पश्चात् यदि प्रात.काल १० बजे भोजन किया हो और उष्णकाल हो तो शौच आदि से निवृत्त हो कर ६ छः बजे तक भोजनादि से निवृत्त होकर जहां का शुद्ध वायु शुद्ध देश एकान्त हो पैदल घूमने को जाय। यदि चलने मे असमर्थ हो तो सवारी पर बैठ कर घूमे। परन्तु यदि शीतकाल हो तो परमेश्वर की उपासना के पश्चात् भोजन करे। अर्थात् उष्णकाल मे आठ बजे पर्यन्त भोजन के पश्चात् घूमना उपासना करनी उचित है। और शीतकाल मे भी ५ बजे से सात बजे तक भ्रमण उपासना से निवृत्त हो कर साढ़े सात वजे तक भोजन कर ले। पश्चात् ४५ पल अर्थात १५ मिनट पर्यन्त किसी से न वोले। किन्तु हस्त मुख प्रक्षालन कर लघु शंका से निवृत्त हो ताम्बूल भक्षण कर शतपद घूम के किंचित् उत्तान दक्षिण और वाम पार्श्व से लोट कर उठ वैठे। तत् पश्चात् अर्थात पौने आठ वजे से नौ वजे तक दूत द्वारा स्वदेश स्वनगर परदेश पर-राज्य के समाचार जो कि अपने और दूसरे के सम्वध मे हो सुने। और उससे स्वकार्यसिद्धि के लिये आज्ञा भी देवे। नौ से

दश बजे तक आय व्यय आदि का वृत्तान्त सुन कर अगले दिन के लिये यथोचित प्रवन्ध करे। पश्चात् आध घण्टे में इष्ट मित्र वा मन्त्री आदि से जो कि उस समय उपस्थित हो प्रसन्नतापूर्वक विदा कर के साढ़े दश बजे शयन करे। यदि उष्णकाल हो तो १० बजे तक इन सब कामों से निवृत्त हो शयन करे। शयन एकान्त में करे। और उसी समय परमेश्वर को इस लिये धन्यवाद देना कि हे परमेश्वर आपकी कृपा से गत अहोरात्र जैसा आनान्द पूर्वक बीता वैसे ही अग्रस्थ अहोरात्र भी आनन्द पूर्वक व्यतीत होवे। दो दिन में पूर्वोक्त दो काम करने। मंगल के दिन किसी राजपुरुष ने वा अन्य राज्य से प्रजास्थ वा राज जन पीड़ित हुए हों उनकी बातें और तीन दिन अर्थात् बुध शुक्र और शनैश्वर में सब राज्य की उन्नति और स्वास्थ्य के लिये प्रवन्धार्थ अकेले वा मुख्य धार्मिक स्वराज्य भक्त मन्त्रियों के साथ विचार करना चाहिये।

विशेष नियम।

१—जब पति और पत्नि समक्ष हों प्रसन्नता पूर्वक नमस्ते कर जिस २ प्रकार दोनो मे प्रेम बढ़े वैसा व्यवहार करें। विरुद्ध कभी नहीं।

२—ऋतुदान के पश्चात् किंचित् ठहर स्नान कर शालव मिश्री केशर आदि सुगन्धियुक्त परिपक्व दुग्ध शीतल यथारुचि पी के ताम्बूल भक्षण कर मुख प्रक्षालन कर के पृथक् २ शयन करें॥

३—दोनों सदा विद्या धर्म प्रजासुख के लिये तन मन धन से प्रयत्न किया करें॥

४—किसी वेद विद्या युक्ति विरुद्ध मतमतान्तर के झगड़े में दोनों कभी न फसें। किन्तु पक्षपात रहित न्यायाचरण वेदोक्त धर्मही का आचरण करें और करावें।

५—अपने वा पराये राज्य में जहां तक शक्य हो किसी मत वाले की बहकावट से विद्यायुक्ति विरुद्ध मत मे किसी को न फंसने देवें। यदि कोई समझाने पर न माने जो कूप में गिरना ही चाहे तो उसका अभाग्य समझना चाहिये॥

६—जब बुरे बुराई नहीं छोडते तो भले भलाई क्यों छोड़ें।

७—सदा सनातन वेद शास्त्र आर्य राज राजपुरुषो की नीति पर निश्चित रह कर इनकी उन्नति तन मन धन से सदा किया करें। इनसे विरुद्ध भाषाओं की प्रवृत्ति वा उन्नति न करे वा करावे। किन्तु जितना दूसरे राज्य के सम्बन्ध में यदि वे इस भाषा को न समझ सकें उतने ही के लिये उन भाषाओं का यत्न रक्खे जो वह प्रबल राज्य हो।

८—कभी बिना विचारे लिखे नियत काल के आज्ञा न देवे। पश्चात् जैसी जितने समय में कार्यसिद्धि करने की आज्ञा दी हो वह यथावत् नियमित समय मे पूरी हुई वा नही उस पर ध्यान सदा रक्खे।

९—जो यथोक्त समय मे आज्ञा को यथावत् प्रीति से पूरी करे उस का सत्कार करना पारितोषिक देना और उसकी उन्नति करना अति योग्य है। और जो यथोचित न करे उसका अपमान दण्ड और ह्रास किये विना कभी न छोड़े।

१०—विना योग्यता वा परीक्षा के किसी को वड़ा वा छोटा अधिकार न देवे। किन्तु जो धर्मात्मता से उस कार्य के करने मे समर्थ हो उसी के आधीन वह कार्य सिद्ध करे वा करावे। दरिद्र वा लोभी को प्रारम्भ मे वड़ा अधिकार भी न देवे। और एक कुटुम्ब सम्बन्धी परस्पर मित्रो को भी एक अधिकार मे न रक्खे।

११—सदा वेदोक्त धर्मावलम्वी अधिकारियो पर अन्य मतावलम्बियो को अधिकार न देवे। किन्तु जिस २ कार्य मे न्याय वा (उपदा) अर्थात् रिश्वत खाने का सम्वन्ध हो उन को छोड़ अन्य गौणाधिकारो मे वैदिक धर्मावलम्वियो से कार्य सिद्ध न हो सके रक्खे।

१२—जो प्रीतिपूर्वक धर्मात्मता से ३० वर्ष तक राज कार्य करे उनको आधी नौकरी जब तक वे जीवें देवे। यदि संग्रामादि मे जिसका मृत्यु हुआ हो उसकी स्त्री पुत्रो को भी उसी प्रकार देवे। यावत् उनके पुत्र समर्थ न हो। जव समर्थ हों तव उनके पुत्रो को यथायोग्य अधिकार देवे। परन्तु उस की स्त्री को योग क्षेमार्थ यथोचित जब तक व[ह] जिये सदा दिया करे। यदि वह पांच रुपये मासिक पाता हो पूरा देवे। पुत्रो के समर्थ हुए पर स्त्री को आधा देवे।

१३—सब के लड़के लड़कियो को ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्या दान दिलावे।

१४—न्यून से न्यून सोलहवें वर्ष कन्या और २५वें वर्ष लड़के का स्वयम्वर विवाह होने देवे पूर्व नही।

१५—अपनी सत्ता शक्ति को यथासम्भव बढाता जावे न्यून न होने देवे।

१६—अपने अंश को न छोड़े और पराये अश का स्वीकार कभी न करे।

१७—संग्राम मे जो सेनास्थ पुरुष जीत मे शत्रुओ के पदार्थ पावें उन मे से १६वां भाग आप लेवे। और समुदाय के जीते हुये पदार्थो मे से १६वां भाग चाहे कितने ही क्रोड़ों रु० क्यो न हो सेना को अवश्य देवे। १५वां भाग आप रक्खे।

१८—युद्ध मे जो शत्रु घायल हो उस की रक्षा ओषधी अवश्य करे। स्त्री, वालक, वृद्ध, आतुर, भीरु शरणागत पर शस्त्र कभी न चलावे।

१९—हारे हुए शत्रु की अप्रतिष्ठा कभी न करे किन्तु उस का यथायोग्य मान्य रक्खे। परन्तु उसको छोड़ कर स्वतन्त्रता कदाचित् न देवे।

२०—सदा प्रयत्न से अलब्ध के लाभ की इच्छा लब्ध की सम्हाल से रक्षा रक्षित की व्य[ाजा]दि से वृद्धि और वढ़े हुए पदार्थों का व्यय विद्या धर्म राज्य की वृद्धि इन[के] प्रचार अनाथों के पालनादि शुभ व्यवहारो में करे।

२१—सर्वदा सन्तानो की शिक्षा मे धन का व्यय करे किन्तु विवाह, मृत्यु आदि मे न करे।

२२—सदा दासी वेश्यागमन हास्य नृत्य भांड चारण आदि के मिथ्या स्तुति कराने आदि व्यवहार से पृथक् रहे। और अन्य को भी ऐसे प्रसगों से सदा वचाया करे।

२३—सदा पूर्ण युवाऽवस्था मे अर्थात् २५ वर्ष के उपरान्त हृद्य स्वदृश्य एक स्त्री से विवाह करे और उसी से सदा ऋतुगामी रहे। यदि प्रमाद से अनेक स्त्री हों तो भी उन के साथ पक्षपात छोड़ नियमित समय में एक सा वर्त्ते।

२४—उन में परस्पर द्वेष उत्पन्न न होने दें किन्तु सव को तुल्य अन्न वस्त्रा-भूषण सम्भाषणादि प्रेम व्यवहार तुल्य रक्खे और प्रेम रखवावे।

२५—उन स्त्रियों को योग्य है कि एक के पुत्र होने मे सव अपने को पुत्रवती समझें। तथा सव भाई भी एक के पुत्र होने मे अपने को पुत्रवन्त मानें।

२६—राजा और राज्ञी का जिस २ कर्म से पति पत्नी में और प्रजा में परस्पर प्रेम वढ़े उस २ का सेवन और विपरीत का सर्वथा त्याग करे।

२७—सुपरीक्षित दूत द्वारा राज्य और राजपुरुषों की सुचेष्टा और कुचेष्टा से अपने को अभिज्ञ रक्खे। जिस २ यत्न से उनकी कुचेष्टा छूटें और सुचेष्टा वढ़े वैसा यत्न सदा किया करे।

२८—अपराध में प्रजा से राजपुरुषों पर अधिक दण्ड होना चाहिये। क्योंकि वकरी के प्रमाद रोकने से सिंहका प्रमाद रोकने में अधि[क]प्रयत्न होना उचित है।

२९—जैसे राजा और कृषीवलादि प्रजा सुखी रहे वैसा कर-प्रवन्ध प्रजा में करे। और उन्ही कृपीवलादि को सव राज्य के सुख का मूल कारण समझ उन से पितावत् वर्ते।

३०—जहा (साम) मेल (दाम) कुछ दे (भेद) तोड़ फोड़ से शत्रु वश में न आवें वही दण्ड प्रचरित करना चाहिये।

३१—किसी धर्मात्मा से विरोध वा लड़ाई करना न चाहे और दुष्ट से विरोध वा लड़ाई निःशक करे।

३२—सब काम धार्मिक सभ्यों के वहुपक्षानुसार नियत करे। और वह आज्ञा जो कि प्रजा के साथ सम्बन्ध रखती हो सब मे प्रजा की संमति लेवे और सर्वत्र सिद्ध करके गुण दोष समझे। पश्चात् गुणाढ्य नियमों को नियत और दोषयुक्तो का त्याग करे।

३३—अपना वा अपने कुटुम्ब का नित्य नैमित्तिक व्यय भी नियमपूर्वक करे।

३४—जिस किसी को मासिक धन वा भूमि धर्मार्थ अथवा गुणानुसार कुछ भी देवे वह यावत् माननीय जीवें वा अन्यथा न वर्ते तावत् वह दान रहे पश्चात् नहीं।

३५—यदि पूर्वजो ने इस से विपरीताशय लेखपूर्वक किया हो और उस के कुलोत्पन्न वैसे न वर्तते हों तो भी वह दिया न दिया हो जावे। क्योकि वह जिस समय दिया जाता है वह उत्तम काम के लिये होता है।

३६—परन्तु धर्मार्थादि के लिए जो दिया हो उस के भोक्ता अन्याय से वर्तते हो तो भी उस अंश को राजांश मे न मिलावे किन्तु कुकर्मी से छुड़ा योग्य धर्मात्मा को उस का अधिकारी करे। यदि वह भी प्रमादी हो तो पूर्वोक्त प्रकार उस से भी लेके अन्य योग्य को यदि उसी के कुल मे योग्य न हो तो देवे।

३७—यदि उन के सन्तान पितरों से अधिक योग्य हो तो उन को अयोग्य के अंश मे से अधिकांश देवे और अधिक प्रतिष्ठा करे।

३८—यदि न्यायाधीश ही प्रमादी हो कर अन्याय किया चाहे तो उन को राज्य और प्रजा के धार्मिक प्रधान पुरुष समझावें कि आप अन्याय मत कीजिये। यदि न मानें तो उस को पदच्युत कर के जो उसी के कुल मे निकट सम्बन्ध से न्यायास्पद के योग्य पुरुष हो उस को न्यायाधिकारी करें। परन्तु यह काम पक्षपात रहितता से होना उचित है। क्योंकि राज्य और विद्या, तथा धर्म की वृद्धि और अधर्म की हानि के लिये सब प्रतिष्ठा है प्रमाद के अर्थ नही।

३९—सब राज्य के आय मे से दशांश धर्मादि के लिये नियत रक्खे। उस से वेदविद्या धर्म सुशिक्षा की वृद्धि के लिए अध्यापक और उपदेशक प्रचरित करें। आपत् काल मे राज्य और अनाथो की रक्षा भी उसी धन से करे।

४०—और राज्य से आय के नवांशो मे से दो भाग स्थिर कोश दो अंश राज कुल, तीन अंश सेना विभाग एक अंश स्थानविशेष और एक अंश शिल्प विद्या की उन्नति मे लगावे।

४१—राज्य का कार्य एक पर निर्भर न रक्खे। किन्तु राजपुरुष और प्रजा पुरुष की अनुमति के अनुकूल प्रचलित करें।

४२—जो राजासन पर नियत हो उस का किंचित् भी अपमान कोई मन कर्म वचन से न करे। किन्तु जो जिस पर प्रधान हो चाहे उस से अप्रधान किसी गुण में अधिक भी क्यो न हो तथापि परमेश्वर से द्वितीय स्थान मे माननीय राजा और स्वामीवत् माननीय अपने २ प्रधान को मानें।

४३—अधिष्ठाता लोग राजाज्ञा को अपने प्राण से भी अधिक मानें चाहे कोई कैसा ही सम्बन्धी वा मित्र क्यो न हो। परन्तु जब राजाज्ञा भग वा उस मे आलस्य करे तब वह शत्रुवत् दण्डनीय हो जावे।

४४—प्रथम सब प्रयत्न से विचार कर सर्वहित समझ के आज्ञा देनी चाहिये। पश्चात् उस को पूरी करने मे पूरा ध्यान और पुरुषार्थ रक्खे।

४५—अपने आत्मा वा शरीर को राजा वा अधिकारी न समझें किन्तु राजनीति ही को राजा और राज्याधिकारिणी मानें।

४६—इस को निर्दोष और चलाने के लिये एक राजसमाज दूसरा विद्या समाज और तीसरा धर्मसमाज नियत करे।

४७—इन समाजो में राजपुरुष और प्रजापुरुष नियत रहें। राजपुरुष राजोन्नति और प्रजापुरुष प्रजा की वृद्धि मे प्रयत्न किया करें। और तीनों समाजों के विचारानुकूल नये नियम प्रचरित किये जावें।

४८—जो २ आज्ञा इन समाजो से निश्चित होकर प्रचरित की जायें उनका उलघन कोई भी न करे। यदि करे तो वह सब का अमाननीय और दण्डनीय [हो]।

४९—सदा वेदादिशास्त्र मनुस्मृति के सप्तम अष्टम और नवम अध्याय महाभारत के राजधर्म आपत्धर्म और विदुरप्रजागर विदुर नीति के शब्दार्थ सम्बन्ध और कर्त्तव्य को सब राजपुरुष जान के तदनुकूल वर्त्ते। और इनके प्रचार में सदा प्रयत्न किया करें।

५०—जो २ सामयिक नियम और उपनियम नियत करना होवे तो पूर्वोक्त समाज और वेदादिशास्त्रो के अनुसार निश्चित करें और करावें।

५१—यह निश्चय है कि जैसा शील आचरण उत्साह और पुरुषार्थ प्रधान पुरुष करता है वैसे ही इतरजन वर्तते हैं। इसलिये प्रधान पुरुषो को अत्यावश्यक है कि सदा अधर्मयुक्त कर्मों को छोड़ कर न्याय रूप धर्मकृत्यों मे वर्त्ता करें। क्योकि जो २ धर्म वा अधर्म प्रधानपुरुष दृष्टान्त से इतर जनों मे प्रवर्तमान होता है उस

का मुख्य निमित्त प्रधान हो कर फल भागी होता है। इस लिये मुख्य पुरुषो को बहुत विचार के वर्तना चाहिये।'

---

[२] पत्र (३५९) [३९१]

ओ३म्

श्रीयुत मान्यवर रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो।

आज पूर्वप्रेषित पत्रस्थ पूर्वकृत प्रतिज्ञानुसार आज से दसवें दिन पत्र लिखकर आपके पास भेजा था—मुझको निश्चय है कि आपने श्रीमान् प्रतापसिंह जी तथा श्रीयुत केसरीसिंह जी की सम्मति मेरे बुलाने मे अवश्य ले ली होगी। और इन महाशयो के द्वारा श्रीयुत महोदय महाशय जोधपुराधीशो की भी अनुमति स्वीकृत करके लिखी होगी। अब आपके पूर्वलिखित पत्रस्थ प्रीति, उत्साह और परोपकार दृष्टि के अनुरोध से आपको मै लिखता हूं कि यदि आप लोगो की ऐसी ही इच्छा है कि मुझको शीघ्र जोधपुर मे बुलाना अगीकृत है तो मै भी आप महाशयो की इच्छानुकूल लिखता हू कि इस पत्र के पहुंचने की मिति से आगे पांच दिन के भीतर पाली मे सवारी के लिए दो रथ और एक सैज गाड़ी, दो ऊट और एक हाथी और पुस्तकादि भार के लिए एक सवारी और दो सवार और आठ सिपाहियो का एक पहरा, पहरे के लिए भिजवा दीजिए। हमारे पास १० तथा १२ आदमियो से अधिक नही है।

और सवारी के साथ एक बुद्धिमान् पुरुष आना चाहिए कि जो पाली मे सवारी रख, रेल मे बैठ के मेरे पास शाहपुर मे आ जाय। परन्तु वह रूपाहेली के स्टेशन पर उतरे। और दो दिन पहले शाहपुर मे पत्र द्वारा खबर भेजदे कि जिस से शाहपुर से सवारी उन के लिए स्टेशन पर उपस्थित रहे कि वे रेल से उतर, सवारी मे बैठ, शाहपुरा मे आनन्दपूर्वक चला आवे। आप का भेजा हुआ माननीय पुरुष शाहपुरे मे जिस दिन आवेगा उस से दो तीन दिन मे यहा से यात्रा कर उचित समय पाली मे पहुंचेगे। जोधपुर मे आके अत्यानन्दपूर्वक मै

---

१ यह लेख उदयपुर में महाराणा जी को दिया गया। अतः संख्या ३४६ के आगे चाहिए। पत्र पूर्णसख्या ३५० में इस दिनचर्या का उल्लेख है। प० चमूपति जी के मुद्रित पाठ पृ० १४८—१६२ के दो तीन शब्द अशुद्ध है। हम ने म० मामराज जी की की हुई प्रतिलिपि से मूलवत् छापा है। मूललेख ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में था।

आप लोगो से मिलूगा । आगे मेरे ठहरने के लिए जहां तक हो सके बगीचे में स्थान होना चाहिए। न वह नगर से अति दूर, न अति निकट। जल वायु जहां का शुद्ध और एक मील से अधिक दूर और आध मील से कम दूर न हो । और पूर्वोक्त ऊटों मे एक सवारी का सांडिया और दूसरा साधारण। जब हम पाली मे पहुंचेंगे तब उस को एक चिट्ठी इस बात की कि जिस स्थान मे मेरा ठहरना हो, क्या २ सामग्री उपस्थित करनी होगी, पत्र लिख कर उस सांडिये सवार के हाथ आप के पास भेजी जाय, एक दिन पूर्व ही। जिस के अनुसार आप उस स्थान मे बिछौना आदि का यथावत् प्रबन्ध कर दीजियेगा । इस का उत्तर शीघ्र भेजिये और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिति वैशाख शु० ४ गुरुवार।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[२४] पत्र (३६०) [३९२]

ओ३म्

श्रीयुत कालीचरण रामचरणे जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा २-५-८३ का लिखा हमारे पास सहित ३००) की हुंडी के आया। मैं भी जानता हू वैदिक यन्त्रालय का हिसाब गडबड है । परन्तु अब पडित सुन्दरलाल जी का आदमी गया है। वह हिसाब किताब लिखा करेगा। इस से आशा है कि सुधर जायगा । यदि न सुधरेगा तो जैसी आप लोगो की सम्मति—यही कि एक सराफी पढा हुआ अच्छा प्रामाणिक आदमी आप लोगों की सम्मति से लिया जायगा। इस के लिये आज मैंने पण्डित सुन्दरलाल जी को लिखा है। उनकी सम्मति आने पर मै लिखूगा। अथवा परबारा पडित सुन्दरलाल जी तुम को लिखेंगे। लाला सेवाराम जी तथा बाबू जी आदि को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा । और एक यह फोटोग्राफ[2] तथा छोटा सा पत्र रामानन्द को दे

---

१. १० मई १८८३। मूलपत्र जोधपुर में रावराजा जी के पास सुरक्षित थे। हमें वहीं से प्रतिलिपिया आई थी।

२. यह फोटो श्री स्वामी जी तथा रामानन्द का एक साथ खिंचा हुआ है।

दीजियेगा। और पाठशाला के कत्ता विषय मे अवकाश पाकर लिखूंगा और यहां का समाचार भी।

शाहपुरा
मि० वै० शु० ४ स० १९४०।[1]

{ दयानन्द सरस्वती }

---

[१] पत्र (३६१) [३९३]

ओ३म्

रामानन्द आनन्दित रहो।

तेरे लिखे प्रमाणे प्रतिकृति भेजी जाती है।[2] कोई कहार अच्छा मिले तो लेने आना। तेरे ३०) रु० के लिये १०) १५) २०) तक देंगे। १०) जमा रहेंगे। दुकान को लिख दिया। जब आवश्यक होगा तब दे देंगे। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० वै० शु० ४ स० १८८३[3]

ह० दयानन्द सरस्वती
शाहपुरा

---

१ १० मई बृहस्पति सन् १८८३। मूलपत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि जनवरी सन् २७ में म० मामराज जी ने की।

फरूखाबाद का इतिहास पृ० २०३-४ पर भी छपा है।

२. यह पत्र तथा प्रतिकृति अर्थात् रामानन्द के साथ खिंचा हुआ अपना फोटो मन्त्री आर्यसमाज फरुखाबाद के द्वारा भेजा गया था। म० मामराज जी ने सन् १९२७ में वहां से प्रतिकृति तथा पत्र प्राप्त किया। इस पर रामानन्द का नोट इस प्रकार है—

"इस पत्र को जब कभी काम पड़े प्रवर्तक में छाप दीजिए. कृपा होगी। रा० न०

३. १० मई १८८३। मूलपत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (बिल्डिङ्ग) खातौली (जिला मुजफ्फरनगर, यू० पी०) में सुरक्षित है।



ऋषि दयानन्द सरस्वती और उनका लेखक ब्रह्मचारी रामानन्द ।
इस चित्र का संकेत पृ० ४३६ पर मुद्रित रामनन्द को लिखे गए पत्र में है ।

[२] पत्र (३६२) [३९४]

ओ३म्

वावू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो ।

निम्नलिखित वर्तमान पंडित वालमुकुन्द तथा देवीप्रसाद को भी सुना कर कार्य्य कीजिये। हम को मुन्शी समर्थदान ने लिखा था कि वाहर का काम भी छपना चाहिये। उस पर हमने ऐसी अनुमति दी कि हमारे काम मे हर्ज होगी तो हम उसी वक्त वाहर का काम वन्द कर देंगे । अव देखो कि एक सप्ताह में तो प्रयागसमाचार छपता है। और मासिक ये दो ले लिये । और आठ फारम वेदभाष्य का छपता है । और यह सव मिल कर महीने में १० फारम तथा १२ यह हो जाते होंगे। इस हिसाव से २० तो हो गये । अव कहो सत्यार्थप्रकाशादि कैसे छपे। इस लिये हम चाहते हैं कि वाहर का काम जव तक दूसरा प्रेस न लिया जाय तव तक न छपाया जाय। क्योकि यह छापाखाना केवल सत्यशास्त्र के प्रचार के लिए किया गया रोजगार के लिये नहीं । यद्यपि समर्थदान की मनसा छापेखाने की उन्नति करने पर हो कि वाहर के काम से कुछ सहाय होगा तथापि अपने निज पुस्तकों के छपने में हानिकारक को हम नही छपवा सकते । इस लिये मुन्शी समर्थदान को हमने लिखा है और तुम भी उन को समझा दो कि नोटिस देदें। पडित सुन्दरलाल जी की भी यही सम्मति होगी अर्थात् वाहर का काम विलकुल वन्द किया जाय। कारण कि समाचार चाहे जहां छपेगा उनकी कुछ हानि नही होगी। और अपने पुस्तक अन्यत्र नही छप सकते। और हम ने इस से कहा था जव इसी प्रतिज्ञा पर कहा था। चाहे चिट्ठी भी हमारी इसी के पास होगी भले ही देख लो। यदि तुम प्रयागसमाचार लो तो रात में व अनध्याय मे तथा सत्य शास्त्रों के छपने का समय वचा कर अन्य समय मे कि जिस में इन शास्त्रो के छपने में विघ्न न हो, लिखा था । सो अव समर्थदान को कह दो कि १५ दिन पहिले नोटिस दे दो प्रयागसमाचार वाले को और महीने पहिले देशहितैषी आदि को। और वाहर की छपवाई किसी की मत लो । जव वाहर की छपवाई लेने का समय आवेगा तव हमही कह देंगे। अव वाहर का काम जो कुछ आवे तो ले लो। एक तो प्रेस है उस में अपना छपना वहुत है । इस से वाहर की छपवाई लेनी अवश्य नही। और सव से हमारा आशीर्वाद कह देना।

और तुम तीन और समर्थदान मिल कर एक सभा करो कि जिस से कोई व्यवस्था नई करनी वा पुरानी हटानी हो तो विचार करके हम को और पडित जी को लिखा करो । और जो मुन्शी समर्थदान ने मान्यपत्र के साथ छापा है सो

अच्छा है। क्योकि इतने लेख के विना मान्यपत्र का अर्थ लोगों के समझ मे नही आता। इतना लेख अवश्य होना था।

मि० वै० शु० ४ स० १९४०।[1]

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]
शाहपुरा

---

[३] पत्र (३६३) [३९९]

ओ३म्

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो।

मेरे पत्र का उत्तर वारहट किश्न जी के हस्ते शाहपुराधीशों के द्वारा पहुंचा। वाच कर आनन्द हुआ। और इस बात से परम आनन्द हुआ कि श्रीमानों का शरीर आरोग्य होता आता है। निश्चय है कि परमेश्वर की कृपा से अव आरोग्य हो जायगा। और इसी द्वारा देश मेदपाट और त[द्] द्वारा आर्यावर्त देशकी उन्नति की भी आशा है।

(१) जो जोधपुर से पत्र आया था वह रावराजा तेजसिंह का था। और उस मे यह लिखा था कि तेजसिंह जी ने प्रतापसिंह जी से कहा और प्रतापसिंह जी ने श्रीमान् जोधपुराधीशों से और जोधपुराधीशों ने प्रत्युत्तर दिया कि स्वामी जी को शीघ्र बुलवाओ। और मुझ से पूछा कि किस स्टेशन से और कितनी सवारी और कितने आदमी आप के साथ हैं कितनी सवारी भेजे इत्यादि। और असल पत्र रावराजा तेजसिंह जी का आप के पास भेजता हूं। वांच कर लौटा दीजिये। और मैने पहले पत्र मे लिखा था कि दस दिन पीछे हम एक पत्र जोधपुर को आप के पास भेज देंगे। सो आज भेजा है। उस मे यह लिखा है कि हमारे साथ अधिक से अधिक १० तथा १२ आदमी होगे। और उन के लिए २ रथ एक सिकरम और मेरे लिए एक सिकरम अच्छी इत्यादि लिख दिया है। अव उन का और आप का प्रत्युत्तर आने पर जैसा होगा वैसा विचार किया जायगा। और अब श्रीमानों

---

1. १० मई १८८३। मूलपत्र श्री नारायण स्वामी जी के सग्रह में सुरक्षित है।

की सम्मति लेकर वहा का वर्तमान लिखा कीजिये । और आप अपने नेत्रो की ओषधी शीघ्र कीजिये ।[1]

मिती वैशाख शुक्ला ४ स० १९४०।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (३६४) [३९६]

ओ३म्

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।

मुन्शी इन्द्रमणी जी और लाला जगन्नाथदास समाज मे रहने के योग्य नही हैं। क्योकि केवल मेरी निन्दा करने से मेरा वे कुछ नही बिगाड़ सकते परन्तु जो देश की उन्नति और उन्नत्यर्थ समाज के उद्देश हैं उन से इन का आचरण विरुद्ध है। अब देखिए इन का सच और झूठ मुसलमानों के साथ मामले में प्रसिद्ध हो गया है। अब वे कितना ही उद्योग करें परन्तु वह उन के लिये सफल न होगा। इस लिये मुशी इन्द्रमणि जी का सभापति और लाला जगन्नाथदास का पुस्तकाध्यक्ष रहना अयोग्य है। क्योकि मैंने प्रथम इन दोनो के पास प्रयाग से पण्डित सुन्दरलाल जी की मारफत बहुत से पुस्तक रक्षा और विक्रयार्थ भेजे थे । उन का हिसाब आज तक उन्होंने नही दिया है। सिवाय अपने मतलब सिद्ध करने के लिये, देशोन्नति का नाममात्र कह के, स्वप्रयोजन[सिद्ध] करने के अन्य कुछ भी नही दीख पड़ता। हा प्रथम यत्किंचित था सो लोभादि दोष ने अब नष्ट कर दिया। इसलिये जो उन का संगी हो उन के साथ जाने दो। और बाकी समाज उन से अलग कर लीजिये। और रजिष्टर तथा समाज का धन उन को कभी मत दीजिये। यदि कोई दूसरा समाज होता तो लाला जगन्नाथदास को, इस समाज पर धिक्कार है, कहते समय पर ही हाथ पकड धक्का देकर बाहर निकाल दिया जाता । और उसी वक्त उस का नाम कट जाता। ऐसे दुष्ट भाषण करने वाले पुरुषो का समाज मे रहना परम दूषण है। देखो मुम्बई समाज ने ऐसी बातों से बाबू हरिश्चन्द्र चिंतामणि को प्रधान पद से शीघ्र च्युत कर दिया। ऐसा ही अनेक समाजों मे हुआ है। इसी से समाज की उन्नति है।

---

१. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में सुरक्षित है । प० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० १८३ तथा १८४ पर छपा है।

२. १० मई १८८३।

,, बस आप अपने स्थान पर समाज किया कीजिये और समाज के नियमो पर दृढ रहिये। और उन से अलग आप और जो समाजके हितैषी आर्य्यावर्त देश की उन्नति चाहे वे भी आप के साथी हों। और जो उन के सगी हो वे उन के साथ जावें। और अन्य समाज के सभासद के आने की वहाँ आवश्यकता क्यो समझते हैं। क्या आप समाज के सभासद नही है। आप ही जो कि लिखने मे बातें नही आती समाज की ओर से अन्तरग सभा मे प्रसिद्ध कर दीजिये। और ४७) रु० समाज के जमा और रजिष्टर पुस्तक उन को न देने मे जो कुछ वे आप की निन्दा करेंगे उस से आप को कुछ भी हानि नही हो सकती। और आप निश्शंक कह दीजिये कि हम मुन्शी इन्द्रमणी जी और लाला जगन्नाथ दास को सभा के अधिकारी वा सभासद रखना नही चाहते। न इनके साथ हम, वा हमारे साथ वे रहे। और न इनके सग देश की उन्नति हो सकती है। इसलिये हम आज से समाज का कार्य स्वतन्त्र होकर इन दोनों महात्माओं से पृथक् करते हैं। और उसी समय से पृथक् हो जाइये। बहुत से मुरादाबाद [के] रइसो ने प्रथम हीं मुझ से कहा था कि जैसा मुन्शी इन्द्रमणीजी को आप जानते है वैसे नही है, सो ऐसा ही हुआ। और इसी लिये मैने स्वीकारपत्र अर्थात् वसीयतनामा मे से मुन्शीजी को पृथक् कर दिया। उन का सच और झूठ इतने ही नमूने से समझ लो कि जो उन्हों ने विज्ञापन दिया था कि हमारे पास मेरठ समाज से मामले के सहाय मे केवल ६००) रु० ही आये और मेरठ समाज के हिसाब से ९६३॥।≈)॥[1] पहुंचे है। यह महा झूठ नही तो क्या है? इस लिये सज्जनो को विदित कराता हू कि यदि आर्य्यावर्त्त देश की उन्नति चाहो तो मुन्शी इन्द्रमणीजी और लाला जगन्नाथ दास के अन्यथा आचरण से पृथक् हो के देशोन्नति किया करो। इनके समाज मे मेल से सिवाय हानि के दूसरा कुछ भी नहीं है। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर अपनी कृपा कटाक्ष से देशोन्नति में दृढ़ोत्साही कटिबद्ध करें कि जिस से मुन्शी इन्द्रमणीजी तथा लाला जगन्नाथदास के किये हुए विघ्न आप लोगो को निरुत्साही न करें और तन मन धन से देशोन्नति मे तत्पर रक्खे। (अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु)।

मि० वै० शु० ६ स० १९४०।[2] शाहपुरा राज्य मेवाड़ [दयानन्द सरस्वती]

---

१ इस पत्र की जो नकल हमें प्राप्त हुई थी, उस में ८३॥।≈)॥ लिखे थे, परन्तु समस्त पुरातन लेखों में ९६३॥।≈)॥ देख कर हम ने वैसा ही कर दिया है। यह स्पष्ट ही नकल करने वाले का दोष है। पुन म० मामराज जी के मूलपत्र से मिलाने पर मूलपत्र में ९३६॥।≈)॥। है।

२ १२ मई १८८३।

[१]　　　　कार्ड (३६५)　　　　[३२७]

ओ३म्

ठाकुर शेरसिंह जी आनन्दित रहो।

कार्ड तुम्हारा आया समाचार विदित हुआ। आजकल गर्मी वहुत होती है। तुमको यात्रा में कष्ट उठाना पडेगा। यदि ऐसी ही इच्छा हो तो रात्रि २ में रेल में वैठ दिन में ठहर २ के अजमेर पहुच रूपाहेली के स्टेशन उतर के हमारे पास चले आओ। रूपाहेली से शाहपुरा ८ कोश है। यदि तुम तीन दिन पहले हमारे पास पत्र वा तार भेजदोगे तो सवारी तुम्हारे वारते यहा से आजायगी जिससे तुम सुखपूर्वक यहां पहुंच जाओगे। परन्तु थोडे दिन के लिये हमारे पास न आना चाहिये। कम से कम २० तथा ३० दिन तक जरूर रहना चाहिये। ठाकुर गोपालसिंह जी आदि को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। परमात्मा की कृपा से हम आनन्द मे हैं। आशा है कि तुम भी आनन्द में होगे।[1]

वै० शु० ७ स० १९४० रविवार।[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]

---

[३]　　　　पत्र (३६६)　　　　[३२८]

ओ३म्

श्रीयुत् रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो--

मुन्शी दामोदरदास जी का ता० २७ [१७?]मई का लिखा पत्र हमारे पास पहुचा, समाचार विदित हुआ। उन के पास इस लिये नही भेजा कि वह भागा-से होगा। आपने पाली मे सवारी आदी मुन्शी दामोदरदास और वारहट अमर्दान जी को भेजा और पाली में सवारी छोडकर शाहपुरा मे आने की आज्ञा दी। एक डेरा भिजवाया और मेरे रहने के लिये वाग में वगला नियत किया। वहुत अच्छी

---

१ मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में सुरक्षित है। जनवरी सन् १९२७ में म० मामराज जी ने इसकी प्रतिलिपि की। करणवास निवासी ठाकुर शेरसिंह जी ऋषि दयानन्द सरस्वती के अनन्य भक्त थे।

२ १३ मई १८८३।

३. निम्नलिखित पता ऋषि के हाथ का लिखा हुआ है। रामानन्द ब्रह्मचारी के हस्ते लाला कालीचरण रामचरण मत्री आर्य्यसमाज फर्रुखावाद की मार्फत पहुचे। (फर्खावाद)

फरुखावाद का इतिहास पृ० २०४ पर भी छपा है।

बात की। यह पुरुषार्थ सब आप ही लोगो का है। इसलिये श्रीमान् योधपुराधीशों, महाराजा श्रीमान् प्रतापसिंह जी, श्रीयुत महाराजा भतीजा फतेसिंह जी और आप आदि को अति प्रीति से आशीर्वाद और बहुत धन्यवाद देता हूं। इस को स्वीकार कीजिये। और यहां श्रीयुत महाराजाधिराज शाहपुराधीशो ने रुपाहेली स्टेशन पर ता० २६ मई के दिन आप के भेजे हुए पुरुषों के लिये सवारी उपस्थित कर देना स्वीकार कर लिया है। सो उसी तारीख को वह सवारी पहुंच जायगी। और जब आपके भेजे पुरुष यहां पहुचेंगें तत्पश्चात् मैं भी यहां से चल कर उचित समय पर जोधपुर पहुंच के आप लोगो से अत्यानन्दपूर्वक मिलूगा। और मैं इसी बात से प्रसन्न हूं कि जो मुझ से आप लोगो का यत्किंचित् उपकार हो और आप लोग मुझ से आनन्दपूर्वक उपकार ग्रहण करें। क्योकि जो कुछ अपने आर्य्यावर्त देश की उन्नति है सो सब आप ही लोगो के द्वारा अवश्य हो रही है और होगी। अन्य किसी के द्वारा नही। क्योंकि यथा राजा तथा प्रजा—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते ॥१॥

राजा और राजपुरुषों के सत्य धर्मयुक्त उत्तम पुरुषार्थ ही से सब को सब प्रकार के आनन्द प्राप्त होने हैं। अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु ॥ अन्य सब सज्जनो से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। और पाली में हाकिम के नाम ऐसा तार भेज दिया है कि ता० २६ मई को रूपाहेली के स्टेशन पर सवारी उपस्थित होगी।[1]

मि० वै० सु० १३ सोमवार सम्वत १९४०।[2]

(दयानन्द सरस्वती)
शाहपुरा

---

[१] पत्र (३६७) [३९९]

ओ३म्

स्वामी ईश्वरानन्दजी आनन्दित रहो।

१—सब यन्त्रालय के पदार्थ और नौकरो पर दृष्टि रखना कि नियमानुसार सब काम होते हैं वा नहीं।

२—जब कभी जिस किसी का व्यतिक्रम देखे तो जो शिक्षा करने से सुधर सका हो तो वही सुधार देना न माने तो हम को लिखना।

---

१. मूलपत्र राव राजा तेजासिंह जी के पास था।

२. १९ मई १८८३।

३—प्रति अष्टवारे वहां का वर्त्तमान पत्र द्वारा हम को भेजा करना और यथाशक्ति जो कोई पुस्तक छपे उसको दूसरे के साथ मिलकर वा स्वयं शोधा करना।

४—और जब कभी तुज को व्यतिक्रम विदित हो, तब, वा जब हम लिखें तब अपन सामने डाक खुलवाना और पुस्तकालय तथा धन, कोश और अन्य पदार्थों की सम्हाल से यथावत् रक्षा करना।

५—यावत् प्रबन्धकर्त्ता का व्यतिक्रम कोई विदित न हो तब तक उस के साथ मिलकर उसको सहायता देना और प्रीति प्रेम से यन्त्रालय की उन्नति करते रहना। ५) रुपये मासिक प्रतिमास यन्त्रालय से मिला करेंगे। उन से खान पानादि उचित व्यवहार करना। और जब कभी अधिक व्यय की इच्छा हो तब हम को लिखना।

६—सदा व्याकरण पढ़ने में परिश्रम किया करना और नियत समय पर यन्त्रालय का भी काम किया करना।

७—शरीर का संरक्षण, प्रात. व्यायाम, भ्रमण, सदा शास्त्रों का चिन्तन करना और जब तक तेरे स्थान में दूसरा निज पुरुष न आवे तब तक कहीं न जाना। धर्म से घर के समान काम किया करना। वैदिकयन्त्रालय से वेदाङ्गप्रकाश के पुस्तक लेकर पढ़ा करना।[1]

(हस्ताक्षर) दयानन्द सरस्वती
शाहपुरा राज मेवाड़ राजपूताना।

---

[३] पत्र (३६८) [४००]

ओ३म्

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो।

आप के नेत्र निरोग होगये कि नहीं। किशन जी बारहट के हस्ताक्षर आपकी चिट्ठी युक्त श्रीमानार्यकुलदिवाकरों के शरीर की आरोग्यता सुन बड़ा आनन्द हुआ। आप लोगो ने अपने शरीरो को अपने हाथ से ऐसा घास फूस सा बना रक्खा है कि किसी न किसी रोग को छोडकर थोड़े ही समय अरुग्ण रहते हैं। शरीर की आरोग्यता से धर्मार्थ काम मोक्ष यथावत् सिद्ध कर सकते हैं।

---

१. म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १७-१८ पर मुद्रित।

एक यह समाचार विदित होवे कि आज ३ दिन हुए मुझ को लेने के लिये जोधपुर से आदमी आगये हैं।[1] और मैं भी परसू अर्थात् जेठ वदि ४ शनिवारके दिन यहां से जोधपुर की ओर चलूंगा। और उचित समय वहां पहुँच फर आप को वहां का सब समाचार लिखूगा। यह समाचार श्रीमानो से भी कह दीजियेगा। और श्रीयुत कविराज मुरारिदान जी तथा उदयपुरस्थ भद्र लोगों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। और पूर्व मत्प्रेरित पत्रस्थौषधो थोड़े दिन सेवन कर देख लीजिये। यदि गुण दीखे तो अधिक सेवन कीजिये। निश्चय है कि आप ओषधी का सेवन न्यून न करते रहेंगे।[2]

मि० जे० कृ० २ सं० १९४०।[3]

हस्ताक्षर
शाहपुरा
[दयानन्द सरस्वती]

---

[९] पत्र (३६९) [४०१]

श्रीयुत मान्यवरेष्विदन् निवेदनं।

विदित हो कि हमारा असबाब और आदमी प्रातःकाल दो घड़ी वा तीन घड़ी दिन चढ़े यहा से चल देवें।

एक पुस्तकादि भार के लिये गाड़ी, कि जिस के वैल १ घटे कोश चलने वाले होवें और सिंघो साई। जैसा कि पहिले सिगी जी ने मुर्दार वैल भेजे थे वैसा न होना चाहिये। मैं इन बैलो को यहां चलाकर देख लूग।

एक सर्कारी रथ और एक सर्कारी तागा, यदि पुस्तकों के लिये सैज गाड़ी कि जिससे मेह आदि जल पानी का बचाव होवै। ऐसा हो तो बहुत अच्छा है। और

---

१. मुन्शी दामोदरदास रायजादा सिंघी नारनौली बाबू दुर्गाप्रसाद जी फरुखाबाद निवासी को लिखते हैं—

"... "हस्बुल्हुक्म जुनाब मौसूफ [श्रीस्वामी जी] के माय सब सवारियों के कमतरीन माय मित्र अमरदान जी जोधपुर से रवाना होकर स्वामी साहब को शाहपुरा से लेकर जोधपुर में आए। चुनाचे जब से अकसर वक्त व्याख्यान हुआ है। वरना ५ बजे से १० बजे रात तक सवाल व जवाब होते रहते है।"

२. प० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० १८५ तथा १८६ पर मुद्रित।

३ २३ मई १८८३।

बग्गी की डाक आपने बैठा ही दी होगी। और एक पहरा यहां का साथ चला जायगा। और पुस्तकों की गाड़ी के साथ एक वा दो मोम जामे भी चाहिये कि जिससे मेह पानी का बचाव हो सके।'[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[६] पत्र (३७०) [४०२]

श्रीयुतार्य्याऽनवद्य-शुभगुणगणाऽलङ्कृतेभ्यः श्रीमन्महाराजराजाधिधिराजेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे।

विदित हो कि हम कुशलता पूर्वक कल सध्या के समय मे अजमेर मे पहुंच गये। और पुस्तकादि के सहित आज सब आदमी प्रातःकाल पहुंच गये हैं। विशेष विदित किया जाता है कि शाहपुरा से चल कर जहां घोड़ा बदलता है, उससे आगे दो ग्राम छोड़ के जो रूपाहेली का भोजरास ग्राम है वह एक कोश रह गया। तब बड़े वेग से आंधी और पानी आया। वहां एक घण्टा तक भीगते रहे। जब आंधी और पानी बन्द हुआ तब भोजरास ग्राम जो कि रूपाहेली का है उस में पहुचे। वहा प्रथम ही मुझ को लेने के लिये रूपाहेली के ठाकुर उस ग्राम में आ ठहरे थे। उन के रात्रि में वहां रहने से मेरे ठहरने और घोड़े आदि के रहने के लिये सब प्रबन्ध उन्होंने कर दिया। और दूसरे दिन मध्याह्न में भोजन कर मध्याह्न समय में अर्थात् गाड़ी के छूटते ही समय पहुंचा। वहां से बरल के स्टेशन पर पहुंचा। देखा तो वहां न कोई सिपाई और न कोई गाड़ीमान उपस्थित था। इस लिये अजमेर को तार देकर सूधा अजमेर में पहुंचा। आज यहां से आधी रात के समय पाली का टिकट लेकर पाली को जावेंगे।

राज के मुख्य दो अग हैं कि अच्छे काम करने वालो को पारितोषिक और बुरे काम के करने वाले को दण्ड देना। जो दूसरा चौकी अर्थात् घण्टे मे घोड़ों के साथ सवार भेजा था, वह घोड़ो को छोड़ अपने घर का रास्ता लेकर चला आया। और एक मशालची गाड़ियों के साथ भेजा था सो भी न जाने कहां शाहपुरा में छिप रहा। उस का मुख भी नही देखा। यदि दोनो बग्घी के साथ सवार होते तो इतना कष्ट न उठाना पड़ता। इस लिये उनको शक्त दण्ड हो तो सब

---

१ सभवत. २४ मई सन् ८३। मूलपत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

चेतन हो जावेंगे। नहीं राजाज्ञा को कुछ भी नही समझेंगे। आगे जैसी आप की इच्छा हो वैसा कीजिये। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा।[1]

ज्ये० ब० ६ सोम १९४०।[2]

[दयानन्द सरस्वती] अजमेर

मैं शीघ्रता के कारण मेरे साथ ४ सिपाई थे। उन को ४) ग्यार [उपहार ?] संख्या और २) जो वहां सिपाई रहे थे उनको देना चाहता था [न दे सका]।

---

[२] पत्रांश (३७१) [४०३]

[राव० बहादुरसिंह जी मसूदा]

···रूपाहेली के स्टेशन से षोरलो का ही टिकट लिया था। इसीलिये कि मसूदा को अवश्य ही जाना होगा। परन्तु वहा सवारी मोजूद नही पाई। तब अजमेर को आना हो गया। अब फिर इधर आना होगा, तब मसूद आना होगा।

लगभग २८ या २९ मई १८८३ को अजमेर से लिखा गया।[3]

दयानन्द सरस्वती

---

१ इस पत्र का उत्तर पं० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० १९, २० पर छपा है।

२ २८ मई १८८३। मूलपत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

३. इतना अश राव बहादुरसिंह जी के पत्र में उद्धृत है। हमने उस की थोडी सी भाषा वदली है। राजस्थानी प्रयोग के स्थान में भाषा प्रयोग किया है। राव जी का पत्र स० १९३९ ज्येष्ठाब्द ८ का है। यहा सवत् १९४० चाहिए। ज्येष्ठ वदी ८ लुप्त है। ९ को ३० मई थी।

राव जी का पत्र प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ७५ पर छपा है। षीरली तथा बरल का एक ही स्टेशन होगा।

[४३] पत्र (३७२) [४०४]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

हम ज्येष्ठवदि ४ शनिवार[1] के दिन शाहपुरे से चलकर ज्येष्ठवदि १० गुरुवार[2] के दिन जोधपुर पहुचकर फ़ैजुल्लाखांजी के बाग मे ठहरे हैं।[3] वेदभाष्य के टाइटलपेज पर जोधपुर का नोटिस छाप देना। और देशहितैषी को भी हमने कह दिया है कि वैदिकयन्त्रालय को मत भेजो और प्रयागसमाचार भी वन्द करदो। यदि वन्द न करोगे तो हम दंड कर देंगे क्योकि वहुत वक्त हम लिख चुके हैं। सभा में जो वाहर के काम के छपने की अनुमति हो तो स्वीकार न किया जावे। ये निम्नलिखित समाचार वेदभाष्य के टाइटलपेज पर छाप देना। श्रीयुत महाराज राजाधिराज श्रीमान् नाहरसिंह जी वर्मा ने ३०) रु० माहवारी सदा के लिये ज्येष्ठ वदी ४ शनिवार के दिन से वैदिकधर्म उपदेशकों के लिये देना स्वीकार कर लिया है। और २००) रुपये चित्तौडी कि जिसके १५०) कलदार होते हैं वेदभाष्य के सहाय में प्रदान किए। और मनुस्मृति के सप्तम तथा अष्टम, नवमाध्याय जो कि राजधर्मविधायक है पढ़कर योगशास्त्र वैशेषिक और न्यायशास्त्र के मुख्य विषय भी पढ़ चुके। परन्तु न्यायशास्त्र, कुछ कम रह गया, जोधपुर को शीघ्र आने से। और हम लिख चुके हैं कि वेदभाष्य के ग्राहको का रजिस्टर जो कि तुम्हारे पास वर्त्तमान है नकल करके भेजदो और टाइप शीघ्र मगवाओ। और यदि १५०) रु० सेवकलाल कृष्णदास ने नही दिये हो तो तुम्हारे पास से भेजदो और टाइप शीघ्र मगवाओ। इसके लिये हम पण्डित जी को लिख देंगे। वह इस वात से तुमको कुछ नही कहेंगे। और तुम भी लिख देना कि स्वामी जी की आज्ञा से हमने भेजे हैं। और रामानन्द के कहने से विदित हुआ कि लखनऊ का कम्पोजीटर दुष्ट है। ऐसे आदमियो को यन्त्रालय मे नहीं रहने देना चाहियें। और यह पत्र वावू विश्वेश्वर सिंह जी को भी सुना देना। और जो छापने को सत्यार्थप्रकाश हैं उस को १ मास पहिले हमको लिख भेजोगे तव ठीक समय पर तुम्हारे पास पत्र पहुंचेंगे। और यहां का विशेष समाचार आगे लिखा जायगा।

मि० ज्येष्ठवदि १० सं० १९४०।[2]

जोधपूर।[4] ह० (दयानन्द सरस्वती)

---

१. २६ मई १८८३। २ ३१ मई १८८३।

३ प० लेखरामकृत जीवनचरित्र पृ० ८६० पर लिखा है कि २७ मई को पाली पहुचे और २९ मई को जोधपुर पहुचे। उसी जीवनचरित में पृ० ५७२ पर लिखा है कि २८ मई को [रात्रि के] १२ वजे अजमेर स्टेशन से चले। यह पूर्वापर-विरोध प० लेखराम जी के ग्रन्थ के सम्पादक की असावधानी से हुआ है। प० घासीराम [पृ० ६९३] २९ मई को अजमेर से चलना लिखते हैं। ४ मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

[९] पत्रांश (३७३) [४०५]

[भाई ज्वाहरसिंह…… ……शाहपुरा]।

. . ..

निश्चय है कि आप अपने काम पर तत्पर रहेंगे। और श्रीमान् महाराजाधिराज को अति आनन्दित करेंगे। और अपने पुरुषार्थ स्वाभाविक सद्गुणों और उत्तम कामो से अपनी कीर्ति को बढ़ावेंगे। .. . .[1]

मिति ज्येष्ठ कृष्ण १० सन् १८८३ जोधपुर ।[2]

---

[७] पत्र (३७४) [४०६]

ओ३म्

श्रीयुत महाराज राजाधिराज श्रीनाहरसिंह जी आनंदित रहो।

विदित हो कि जेष्ठ वदी ४ शनिवार के दिन शाहपुरा से चल कर जेष्ठ वदी १० गुरुवार के प्रात.काल योधपुर में आनन्दपूर्वक पहुंच गये । और पहुंच के कुछ देर से श्रीयुत महाराजा प्रतापसिंह जी और श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आदि भद्रजन प्रीतिपूर्वक मिले । और हम यहां फैजुल्लाखां जी के वाग मे ठहरे हैं। और जो आप पत्रादि लिखें सो इसी वाग के पते से लिखना। यह वाग और इसमे मकान तथा जलवायु भी अच्छा है सो जानना। और जो आपने २००) रु० चित्तौड़ी कोचमान के हस्ते भेजे सो पहुंचे। यहां का जो विशेष समाचार होगा सो लिखा जायगा। और आप भी वहां का जो विशेष समाचार हो सो लिखियेगा। बूंदी से पत्र का प्रत्युत्तर आया वा नहीं।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

(राज मारवाड़ योधपुर)[4]

---

१ यह पत्र भाई ज्वाहरसिंह के नाम लिखा गया था। भाई ज्वाहरसिंह जी ने ऊपर मुद्रित अश "रद्दे बुतलान" पृ० ६८ पर छापा है।

२ ३१ मई वीरवार सन् १८८३ ।

३ सभवत. ३१ मई अथवा १ जून १८८३ ।

४ मूलपत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है ।

[६] पत्रांश (३७५) [४०७]

[पं० मुन्नालाल स० देशहि० अजमेर][1]

...... हम जोधपुर बहुत उत्तम प्रकार से पहुंच गये। ......

२ जून ८३। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

[२०] [विज्ञापन][2] [४०८]

ओ३म् नमः सच्चिदानन्दादिलक्षणाय परमेश्वराय

सब सज्जन लोगो को विदित हो कि श्रीयुत परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ज्येष्ठ वदी १० गुरुवार के प्रातः समय जोधपुर मे आ के फैजुलाखां जी के बाग मे ठहरे है।[3] जो कोई उन से मिलना चाहै वह सायकाल के ५ बजे से रात्री के १० बजे तक आनन्दपूर्वक मिल के सभ्यता के साथ बात चीत करे वा सुने। उक्त स्वामी जी सन्ध्या के ६ बजे से ८ बजे तक फैजुल्लाखां जी के बाग में सनातन वेदादि सत्यशास्त्रोक्त विषयों में ज्येष्ठ वदी १३ रविवार सम्वत् १९४० के दिन से वक्तृत्व करेंगे। जिन महाशयों को श्रवण करने की इच्छा हो वे पूर्वोक्त स्थान और समय पर उपस्थित होकर सभा को सुशोभित करें। सब विषयों के सुननें के पश्चात् यदि किसी विषय में सन्देह रह जाय तो वह उस में आनन्दपूर्वक प्रश्नोत्तर कर लेवे। सुनने और प्रश्नोत्तर होने के पश्चात् सज्जनों को यही योग्य है कि सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करके स्वयं सदा आनन्दित होकर सब को आनन्दित किया करें।

मिति ज्येष्ठ वदी १२ शनि सम्वत् १९४०।[4]

---

१. देशहितैषी के रजिस्टर सें।

२ यह विज्ञापन जोधपुर में दिया गया था। पीले चिकने देशी कागज पर लिथो में काली स्याही से छपा हुआ हैं। इस की मुद्रित प्रति श्री० महावीरसिंह जी गहलौत एम० ए० रिसर्च स्कालर मोती दरवाजा जोधपुर के सग्रह में सुरक्षित है। उस की प्रतिलिपि प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस द्वारा ता० ३ मई १९४५ को हमें प्राप्त हुई।

३. ३१ मई १८८३। प० लेखरामकृत जीवनचरित में २९ मई को जोधपुर पहुचना लिखा है। यह भूल है।

४. २ जून १८८३।

[५] पत्र (३७६) [४०९]

ओ३म

श्रीयुत प्रधान दुर्गाचरणादि तथा श्रीयुत साहू श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।

कार्ड आप का आया समाचार विदित हुआ। जो प्रधान और पुस्तकाध्यक्ष जो कि आर्य्यसमाजों के उद्देशो के विघ्न थे पृथक् कर दिये गये। वहुत अच्छी वात हुई। अब आप का समाज उन्नतिशील होगा। और यही वात देशहितैषी और भारतसुदशाप्रवर्त्तक तथा मेरठ और लाहौर के समाज के पत्रों मे छपवा दीजिये। और आगे को कोई समाज के उद्देशो से विरुद्ध आचरण, भाषण करे, उस को एक दो वार समझा दीजिये। और न समझे तो इसी प्रकार पृथक् करते रहिये। और अब वैदिक यत्रालय मे आप के समाज के १००) रु० लगे हैं। और १०) के पुस्तक वैदिक यत्रालय से मगवा लीजिये। अथवा ११०) रु० ही के पुस्तक मंगवा लीजिये। और सब सभासदों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।[1]

मि० ज्ये० शु० १ स० १९४० बुद्धवार जोधपुर।[2]

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]

---

[३] पत्र (३७७) [४१०]

वावू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम कई वार मुन्शी समर्थदान को लिख चुके हैं कि वाहर का छापना विलकुल बन्द करदो। परन्तु उसने अव तक वन्द नही किया। इस लिये तुम उस को समझा दो कि बाहर का काम कभी न छापे। यदि वन्द न करेगा तो हम उस पर दण्ड कर देंगे। इस प्रकार की चिट्ठी परसो हम ने उस को लिख दी। और उस को दण्ड भरना पड़ेगा। इस को बाहर का काम छापने का उस को क्या प्रयोजन है। और तुम समर्थदान को सहायता देते हो इस मे हमारी बडी प्रसन्नता है। और तुम पिन्शिन कब लोगे। जब तुम पिन्शिन लोगे तव तुम्हारी नौकरी शीघ्र वैदिक यन्त्रालय मे हो जायगी। और सब यन्त्रालय की भी खबरदारी रक्खा करो। और लिखने के योग्य समाचार हम को तत्काल लिखा करो। और कितनी

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज मुरादावाद में सुरक्षित था। यही पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८२३ पर छपा है।

२. ६ जून १८८३।

हानि निघंटु उणादिगण और धातुपाठ सत्यार्थप्रकाश के छपने से वन्द हो रहा है। अव शीघ्र तुम पिन्शिन लो और शीघ्र यन्त्रालय में आ जाओ। जव तुम यन्त्रालय में आकर काम करोगे तभी काम ठीक वनेगा। और देख लो कि मुम्वई (से टाइप) मगवाने में समर्थदान का हठ था। नही तो पडित जी ने कहा था कि हम कलकत्ते से लेते आवेंगे। इसने कहा कि नहीं मुवई का मंगावेंगे। अव न ही मुवई का आया न कलकत्ते का। वहुत हानि हो रही है। और मुवई से मगाना भी नही है। २५०) रु० ऐसे आदमी के पास भेजा है कि जिस का ठोर न ठिकाना। इन सव वातो का उत्तर शीघ्र भेज दो। यहा वहुत आनन्द हो रहा है। विशेष समाचार आगे लिखा जायगा। और तुम वहां का समाचार सदा लिखा करो। और यह समर्थदान अपनी चिट्ठी में कभी तुमारा नमस्ते भी नही लिखता। यह क्या वात है। और सव से हमारा आशीर्वाद कह देना।[1]

मि० ज्ये० सु० २ सं १९४० गुरुवार जोधपुर राज मारवाड़।[2]

हस्ताक्षर

[दयानन्द सरस्वती]

---

[८] पत्र (३७८) [४११]

ओ३म्

श्रीमदनवद्यगुणगणालंकृत मान्यवरमहाशय शाहपुराधीश आनन्दित रहो।

निश्चय है कि जवाहिर सिंह जी शाहपुरा में पहुंच गये होंगे। और आज रुड़की से एक पत्र आया है सो आप के पास भेजा जाता है। सवओवरसीअर भी थोड़े ही समय में आप के पास पहुंचेगा। आप के लिखे अनुसार उदयपुर को लिख दिया जायगा। आपने जो पत्र भेजा था सो पहुंचवाय दिया गया है।[3] यहां का वर्तमान यह है कि आज कल विशेष कर प्रजाजनो की भीड़ भाड़ सायं समय उपदेश सुनने और प्रश्नोत्तर करने के लिये होती है। आगे विशेष समाचार जो कुछ होगा लिखा जायगा। वूंदी से कुछ पत्रोत्तर आया वा नहीं। अग्निहोत्र

---

१. मूलपत्र श्री० नारायणस्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. ७ जून १८८३।

३. यह पत्र राजाधिराज ने अपनी भूआ अजवजी के नाम का ता० ५ जून १८८३ के पत्र के साथ श्री स्वामी जी को जोधपुर में भेजा था। इसका संकेत प० चमूपतिकृत पत्रव्यवहार पृ० १९ पर है।

की शाला और कुंडादि बन गये होंगे। क्षात्रशाला का आरम्भ हो गया होगा। और विशेष समाचार हो सो लिखियेगा। और यह रुड़की का पत्र वांच कर जवाहरसिंह जी को दे दीजियेगा।

मि० जेष्ठ शु० ५ सं० १९४० रविवार।[1]

जोधपुर राज मारवाड़[2]

{ दयानन्द सरस्वती }

---

[२] पत्रांश (३७९) [४१२]

[लालजी बैजनाथ मुम्बई.........]

....

चालीस रुपये मनी आर्डर द्वारा भेजते हैं। विठल भाणा ब्राह्मण को देकर रसीद ले कर भेज दो।....... ....समाज मन्दिर का काम कैसा चल रहा है।

ज्येष्ठ शुद्ध ७ संवत् १९४०।[3]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर

---

१ १० जून सन् ८३।

२. मूलपत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

३. १२ जून १८८३ मंगलवार।

४. यह पत्रांश लालजी बैजनाथ के एक पत्र के आधार पर हम ने बनाया है। तिथि उसी पत्र में है और संवत् उस से पहले पत्र के आधार से लिखा है। संभवतः बिठल ब्राह्मण कुछ काल तक श्री स्वामीजी के पास नौकरी करता रहा। लालजी के ये दोनों पत्र म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २८१-२८३ पर देखो।

[२९]　　　　पत्र (३८०)　　　　[४१३]

ओ३म्

मन्त्री आर्य्यसमाज फरुक्काबाद लाला रामचरण कालीचरण जी आनंदित रहो।

विदित हो कि रामानन्द ब्रह्मचारी की माता मुहल्ला नुनिहाई साह विहारीलाल जी की हवेली के पिछवाड़े जो कि लाला बलदेवदास ने मकान मोल लेकर इसके पिता शकरानन्द जी को धर्मार्थ दिया उस में रहती है। यदि जब कभी उस का शरीर छूट जाय तो उसके अन्त्येष्टि कर्म के लिये ५०) पचाश रुपये लाला निर्भयराम जी की कोठी से लेलेना और हमारे हिसाव में लिखा देना। और उन रुपयों से घृत और सुगन्ध्यादि पदार्थों को लेकर जैसा विधान षोडश संस्कारविधि के पुस्तक में लिखा है उसके अनुसार मृतककर्म करा देना। और इस काम के कराने में किसी प्रकार आलस्य न करना। और इस बात को प्रत्येक सभासद को विदित कर देना जिस से समय पर सहायक होवें।

ज्येष्ठ शुक्ल ९ बृहस्पति संवत् १९४०।[1]

राज मारवाड़ योधपुर।

[दयानन्द सरस्वती]

निम्नलेखानुसार मृतकसंस्कार करने के लिये घृतादि पदार्थ लिये जावेंगे।

२५) पच्चीस रुपये का अच्छा घृत।

१०) दश रुपये का सफेद सुगंध वाला चंदन।

५) अगर तगर और कपूर आदि सुगन्धित वस्तु।

५) वस्त्रादि लिये जावेंगे।

५) और पांच रुपये की पलास अर्थात् ढाख की लकड़ी अथवा आब की, और संस्कारविधि के लेखानुसार वेदी बनानी होगी।[2]

उक्त लेखानुसार ५०) रुपये केवल दाहकर्म में खर्च होने चाहियें।[3]

---

१. १४ जून १८८३।

२. मूलपत्र आर्यसमाज फरुखावाद में सुरक्षित है। सन् १९२७ में म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की। फरूखावाद का इतिहास पृ० २०५ पर भी छपा है।

३. इसी पत्र की दूसरी प्रतिलिपि रामानन्द ब्रह्मचारी की पुस्तकों आदि में (अतरोली स्टेशन के निकट रायपुर ग्राम) से ता० १८ सितम्बर सन् १९२८ की रात्रि के तीन बजे तक खोजने पर मिली थी। उन के भ्राता त्रिलोचनदेव की आज्ञा से म० मामराज जी ले आये। वह उन के पास श्रीराम निवास (बिल्डिङ्ग) खातौली में सुरक्षित है।

[७] [पत्रांश] ३८१ [४१.४]

[प० मुन्नालाल सं० देशहि० तथा मन्त्री आर्यस० अजमेर][1]

.... चिट्ठी मे लिखे हुए महाशय कहां हैं ।[2] ....

१५ जून ८३ । जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

[४] पत्र (३८२) [४१.५]

(५)

[बाबू विश्वेश्वरसिंह..... .....]

....खलादेना । और मुझ को दृढ़ निश्चय है कि मुन्शी समर्थदान और तुम दोनों मिल कर यन्त्रालय का काम अच्छी प्रका[र] रखोगे । और सब से मेरा आशीर्वाद कह देना । (अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु) । और पंडित सुन्दरलाल जी की भी सम्मति नये काम में सदा लिया करोगे जैसी कि मेरी । और यह दोनो पत्र तुम्हारे पास भेजते हैं जोकि शाहपुरे की है । किसी समाचार मे छपवा देना ।[3]

मि० ज्ये० शु० १२ स० १९४० ।[4]

जोधपुर राजमारवाड़ (दयानन्द सरस्वती)

---

[१] पत्र (३८३) [४१६]

ओ३म्

श्रीयुत माननीयवर शूरवीर महाराजे श्रीप्रतापसिंह जी आनन्दित रहो !

यह पत्र बाबा साहब को भी दृष्टि गोचर करा दीजियेगा ।

(१) मुझ को इस बात का बहुत शोक होता है कि श्रीमान् योधपुराधीश आलस्य आदि मे वर्तमान, आप और बाबा साहब दोनों रोगयुक्त शरीर वाले हैं ।

---

१ देशहि० के रजिस्टर से ।

२. यह अभिप्रायमात्र है । इस का उत्तर १७-६-८३ अथवा ३-७-८३ का महात्मा मुंशीराम संकलित पत्रव्यवहार पृ० १६६-१६९ पर छपा है ।

३. यह पत्र बाबू विश्वेश्वरसिंह जी के पास प्रयाग को भेजा गया था । पत्र के पहले ४ पृष्ठ लुप्त हैं ।

४. मूलपत्र श्री० नारायणस्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है । १७ जून १८८३ ।

अब कहिये इस राज का कि जिस में १६००००० सोलह लाख से कुछ ऊपर मनुष्य वसते हैं। उन की रक्षा और कल्याण का वडा भार आप लोग उठा रहे हैं। सुधार और विगाड़ भी आप ही तीनो महाशयो पर निर्भर है। तथापि आप लोग अपने शरीर का आरोग्य सरक्षण और आयु वढ़ाने का काम पर वहुत कम ध्यान देते हैं। यह कितनी वड़ी शोचनीय वात है। मै चाहता हूं कि आप लोग अपनी दिनचर्य्या मुझ से सुन के सुधार लेवें। जिस से मारवाड़ तो क्या अपने आर्य्यावर्त देश भर का कल्याण करने मे आप लोग प्रसिद्ध होवें। आप जैसे योग्य पुरुष जगत् में वहुत कम जन्मते हैं और जन्म के भी वहुत कम चिरजीवी शतायु होते हैं। इस के हुए विना देश का सुधार कभी नही होता। उत्तम पुरुष जितना अधिक जीवे उतनी ही देश की उन्नति होती है। इस पर ध्यान आप लोगो को अवश्य देना चाहिये। आगें जैसी आप लोगो की इच्छा हो वैसे कीजिये।

(२) आगे जो यह सुना जाता है कि आगामी सोमवार के दिन यहां के लालजी आदि की मेरे साथ वात चीत होने वाली है।[1] उस मे आप की सम्मति है वा नहीं। यदि सम्मति है तो सायकाल के सात वजे से साढ़े आठ वजे तक सभा मे वरावर उपस्थित होगे वा नहीं। जो आप और वावा साहव उचित समय सभा मे उपस्थित न रहेंगे तो मैं भी इन स्वार्थी देश के विगाडने वाले पुरुषो के साथ वाद करने के लिये उपस्थित न होऊंगा। कारण यह कि उन मे सभ्यता की रीति वहुत कम देखने मे आती है। और पक्षपात भी अधिकतर है। एक आप को छोड़ कर अन्य पुरुष भी समय पर सभा में निष्पक्षपाती होकर सत्य वोलने वाला अब तक मेरी दृष्टि में नहीं आया है। इस से आप का उस सभा मे उपस्थित रहना अत्यन्त उचित समझता हूं।

(३) यदि सोमवार को शास्त्रार्थ कराने की इच्छा हो तो कल सायकाल ७ वजे से साढ़े आठ वजे तक उस के नियम एक दिन पहले वन जाने अवश्य चाहियें कि जिस से दूसरे दिन वरावर शास्त्रार्थ चले। इस लिये लालजी को कल सायकाल वुलवा लेना चाहिये। और आप लोग भी सभा मे उपस्थित हो कि सव के सामने पक्षपात रहित नियम नियत लिखित हो जावें।

---

१. आषाढ वदी ५, सम्वत् १९३९ (४०[२] सोमवार) को रायँजादा सिंघी नारनौली दामोदरदास राजा दुर्गाप्रसाद, फरुखावाद को लिखता है—"पुराण पढने वालों ने मुबाहिसा का आज का रोज मुकरर किया था। मगर हस्व कयास वकू में आया। यानी जुनाव महाराजा श्रीप्रतापसिंह साहव वहादुर प्राइम मिनिस्टर आज तशरीफ लाकर फरमाया कि अभी तो मुबाहिसा नहीं किया चाहते।"

(४) इस पोप लीला की निवृत्ति करके यहां से अन्यत्र यात्रा करने का मेरा विचार है। अनुमान है कि बाबा साहब ने आप से कह भी दिया होगा।

इन उपरि लिखित सब बातो का उत्तर लेखपूर्वक आज सायकाल तक मेरे पास भिजवा देवें। अलमति विस्तरेण महामान्यवर्य्येषु।[1]

मि० आ० व० ३ शनि सं० १९४०।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[८] [पत्रांश] ३८४ [४१७]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][3]

"दामोदर शास्त्री को भेज दो।[4]

२४ जून १८८३। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

[१२] कार्ड (३८५) [४१८]

ओ३म्

श्रीयुत महाशय श्री रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते वि- ज्ञात हो। आगे परमात्मा की कृपा से श्री जगत्गुरु जी के सहित सब लोग आनन्द में हैं। आशा है कि आप भी सकुटुम्ब आनन्द मगल में होगे। यह आप

---

१. मूलपत्र रावराजा तेजसिंह जी के पास था।

२. २३ जून १८८३। प० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८६४ पर इसी पत्र का (१) का अश छपा है। वहा आश्विन वदी ३ शनिवार अथवा २२ सितम्बर १८८३ छपा है। यह भूल है। आश्विन वदी ३ को शनिवार नहीं था। और २२ सितम्बर को ६ वदी है। वस्तुत: 'आ' से यहा आषाढ अभिप्रेत है।

३ देशहि० के रजिस्टर से। इस का उत्तर ३-७-८३ का म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १६९-१७२ पर छपा है।

४. दामोदर शास्त्री हरिश्चन्द्र मोहनचन्द्रिका के सम्पादक थे। देखो देशहितैषी वैशाख १९४०।

का पत्र कई महीनों के पश्चात् आया। मैं तो निरास हो गया था कि अब रूपसिंह जी मुझ को भूल गये हैं। परन्तु अब इस तुम्हारे पत्र से पूर्ण निश्चय होगया कि किसी कार्य विशेष से अपना कुशल पत्र आप न भेज सके। वर्त्तमान समय में श्री स्वामी जी राज देश मारवाड़ योधपुर में फैजुल्लाखां जी के बाग में ठहरे हैं। यहां के प्रजापुरुष प्रतिदिन आते हैं। दो एकवार व्याख्यान भी हुए। बहुत से श्री स्वामी जी के अनुकूल हैं और यहां के योधपुराधीश भी दो चार दिन के पश्चात् श्री स्वामी जी से मिलने को आने वाले हैं। और महाराजा जी के भाई महाराजा राजाधिराज श्री प्रतापसिंह जी आते जाते हैं। उपदेश सुन कर बहुत प्रसन्न हुए हैं। विशेष समाचार पश्चात् लिखूगा। तुम पत्र के देखते ही अपना विस्तारपूर्वक कुशल समाचार का पत्र शीघ्र लिख भेजना।

आषाढ़ बदी ५ सोम संवत् १९४[०][1]

रामानन्द ब्रह्मचारी राज मारवाड़ योधपुर

---

[४४]　　　　पत्र (३८६)　　　　[४१९]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुआ। हमारे आशय को तुम नहीं समझते हो। इसलिये एक बात को बहुत बार लिखनी पड़ती। यह समझो कि वेदभाष्य माहवारी ही निकले ऐसा विशेष नेम कभी न रहा है। किन्तु १२ बारह अंक पहुंचने से वर्ष पूरा माना जाता है। इस लिये जब तक टेप न आवे वेदभाष्य का छापना ठीक नहीं। किन्तु जो आवश्यक सत्यार्थप्रकाश और धातुपाठ का छापना है उसको तुमने रोक रखा। यह बड़ी हानि का काम है। इस लिये चाहे वेदभाष्य एक आध महीना बन्द रहे पर उनका छपजाना अत्यावश्यक है। और अन्य पत्र भेजे हैं। उनका उत्तर शीघ्र भेजो। और जो तुमने पुस्तकें भेजी सो वेदभाष्य के सहित पहुंच गई। और यह पत्र बाबू विशेश्वरसिंह जी को भी सुना देना। और उनको मेरा आशीर्वाद भी कह देना। प० ज्वालादत्त ने ८ दिन में ५० मंत्र की भाषा बनाई। कुछ भी नहीं बनाई। काम न करने के लिये चाहे १० अर्जियां दो। हम जानते हैं कि ये सब काम न करने की बातें हैं। हम निश्चय कर कहते हैं कि तुम इसका काम यथातथ्या निकालो। ज्वालादत्त जो भाषा बनाता है ऐसा नहीं

१　२५ जून १८८३। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

हो कि कहीं पोपलीला घुसेड़ डाले। जैसी हमारी संस्कृत है उस के अनुकूल और कुछ न करें। पंडित शिवदयाल को काम हो तो रहने में कुछ हर्कत नहीं।

पुंडरीक शिवशर्मा छीतरदत्त जी से दाम नही लिये गये हैं। सर्दार मेहर सिंह जी के पास ≡) आने के पुस्तक और भेजदो। उन्होने ५॥) रु० जिल्द सहित के दिये थे। वेद के मन्त्रो का क्रम तो अच्छा है परन्तु लागत वढ़ जायगा और कागज भी वहुत खर्च होगा। और अपने कोई समाज होगा तो उसको १०) रु० सेकड़े से अधिक कमीशन नहीं मिलेगा। सत्यार्थप्रकाश शोध कर भेजदें[गे]। और जोधपुर का हाल आगे लिखेंगे। निर्णयसागर से १५०) की रसीद आ गई। अच्छा हुआ। अव टेप शीघ्र मगवालो। जो पहले ही रुपये निर्णयसागर में भेज देते तो इतने दिन क्यो रहते। सस्कारविधी वना सोधकर भेज देंगे।

मिति अ० व० ६ सं० १९४० मंगलवार।[1]

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़ मरुस्थल

---

[१३] उर्दू पत्र (३८७) [४२०]

वाबू दुर्गाप्रसाद जी

हस्व-उल-ईमाए [आज्ञा] जुनाव स्वामी दयानन्द सरस्वती साहव आप को यहां की कैफियत से इत्तिला देता हूं। चुनाचे २६ जून सन् हज़ा को महाराजा महाराजाधिराज राजराजेश्वर वालिए मुल्क मारवाड़ जुनाव स्वामी साहव मौसूफ के दर्शन करने को भैय्या फैजउल्लाखां साहव के वाग में तशरीफ लाए और २५ रु० और पांच अशरफी नजर गुजरानी। और चन्द लमहा तक महाराजा मौसूफ बख्याल अदव स्वामी साहव कुर्सी नशीनी से वसद अज़रूए इनकार फरमाते रहे। मगर जुनाव स्वामी साहव ने जव दूसरी तीसरी मर्तबा फरमाया तब मजबूरन जनाब मौसूफ के रोबरू कुर्सी नशीन होकर गुफतगू आगाज़ की और नौह वनौह की गुफतगू अनकरीव दो घण्टे के ६ बजे शाम से ८ बजे शाम के करते रहे। और वसद वशाशत यानी खुशदिली तशरीफ ले गए।

---

1. २६ जून १८८३। शताब्दी सस्करण, पृ० १७ पर इस पत्र का थोड़ा सा अंश छपा है। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

और नीज वाएदा फरमा गए कि अब आप की खिदमत में हाजिर होता रहूँगा। चुनाचे महाराजा मौसूफ की ऐन खवाहिश दिली है कि स्वामी साहिब की इदायर्त यहां बखूबी ले ली जावे। मुकाम जोधपुर[1]

तारीख २७ जून सन् ८३।[2]

कमतरीन रायजादा सिंधी नारनौली दामोदरदास

वर मकान जनाव जयकिशनदास,

अज जानिब जुनाब स्वामी साहब आनन्दित रहो पहुंचे।

---

[९] पत्र (३८८) [४२१]

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो।

मुन्शी समर्थदान को कह देना कि ५० मन्त्र की भाषा का बण्डल भेजा सो पहुच गया। अब देखो ज्वालादत्त की बेसमझ का नमूना। हमने यह लिखा था कि जो भाषा बनाने का कागज दूसरे पृष्ठ पर हो और मन्त्र पदार्थ अन्वय भावार्थ दूसरे पर हो। जब ऐसा हो तो भाषा बनाने मे विलम्ब होता है। क्योंकि हर वार पत्र उलटाने मे देर होती है। और बिना पदार्थ अन्वय देखें भाषा नहीं बन सकती। इस लिये लिखा था कि उसी के सामने कि जिधर की ओर मन्त्र है

---

१. इसी मुन्शी दामोदरदास के पत्र का सकेत पूर्ण स० ३८६ में देखें। प० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० २६० और इस अश में उन के अनुवादक स्वामी सत्यानन्द (दूसरा सस्करण पृ० ५०२) और प० घासीराम (पृ० ६९४) लिखते हैं कि २९ मई सन् १८८३ को श्री स्वामी जी जोधपुर पहुचे। उसके ठीक सतारहवें दिन महाराज यशवन्तसिंह जी उन से मिलने आए। ये दोनों बातें अशुद्ध है। इस पत्र से ज्ञात होता है कि महाराज जोधपुर २६ जून को श्री स्वामी जी से मिले। यही बात श्री स्वामी जी के राजाधिराज शाहपुरा नरेश को लिखे गए एक अगले पत्र (पूर्णसख्या ४२३) से भी ज्ञात होती है। उस पत्र में श्री स्वामी जी लिखते हैं कि "मिति आषाढ वदि ७ मगलवार के दिन सर्वाधीश महाराजा जोधपुराधीश पधारे थे।" मगलवार को ही २६ जून पडती है। इस पक्ष में आषाढ वदी ११ लुप्त है विज्ञापन पूर्णसख्या ४०८ और पत्र पूर्णसख्या ४२३ के अनुसार ३१ मई प्रातःकाल को श्री स्वामी जी जोधपुर पहुचे और २६ जून को प्रथम वार महाराज उन से मिले।

२. यह पत्र राजा दुर्गाप्रसाद के पत्रों में से म० मामराज जी सन् १९२७ में लाए थे। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

उसी के सामने नीचे की ओर कागज चेप कर भाषा बनाने से शीघ्र बन सकती है। सो ज्वालादत्त ने उलटा समझ कर सोलह मन्त्र की भाषा दो दो वार लिख दी। यदि ऐसा न करता तो ८ दिन में ७० मन्त्र की भाषा आनी। अब देखा जायगा कि अब के अठवाड़े में कितने मन्त्र की भाषा भेजता है। और समर्थदान ने लिखा है कि कुछ ज्वालादत्त नई भाषा बनाता है। यदि वह हमारे संस्कृत और अभिप्राय के अनुकूल हो तो ठीक है। नही तो जो पोप लीला की भाषा बना कर वहां ही छपवा दे और हम को मालूम न हो पश्चात् प्रसिद्ध होने से कोलाहल होगा तो क्या होगा। हां अब तक तो इसने कुछ नही किया है। परन्तु सम्भव है कि कुछ गड़ बड करे तो हो सकता है। इस लिये जो कुछ वो बनावे उसको समर्थदान देखले। जैसा कि अब की भाषा में एक गोल माल शब्द (देवता) लिख दिया था। सो यह हमारे दृष्टिगोचर होने से शुद्ध होगई। यदि वहां ऐसी छप गई तो बड़ी हानि का काम है। इस लिये ऐसा न होना चाहिये। और हमने कई वार समर्थदान को लिखा है कि धातुपाठ, गणपाठ, उणादिगण निघण्टु का सूचीपत्र छपना बाकी है। सो तो नही छापते और वेदभाष्य २ करते हैं। छापना वेदभाष्य का महीनो पर नहीं है किन्तु बारह अक ग्राहकों के पास पहुंचने पर वर्ष माना जाता है। इस लिये इस मे थोड़ा बहुत विलम्ब हो तो कुछ चिन्ता नहीं। किंतु धातुपाठ आदि और सत्यार्थप्रकाश छपने में विलम्ब होना नहीं चाहिये। सो जब लिखता है तब अब तो वेदभाष्य छपता है यह उत्तर देता है। तुम भी ऐसी सम्मति उनको दो कि जिस में यह ४ पुस्तक शीघ्र छप जायें। अब वेदभाष्य के टाइटल पेज पर किसी ग्राहक का रुपया नहीं लिखा। सो क्या रुपया नहीं आया है वा अन्य कुछ है। इन सब बातों का उत्तर समर्थदान से पूछ कर शीघ्र भेजो।[1]

मि० आ० व० ९ शुक्रवार सम्वत् १९४०।[2]

दयानन्द सरस्वती

जोधपुर मारवाड़[3]

---

१. इस पत्र को कई स्थानों पर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से शोधा है।

२. २९ जून १८८३। परन्तु शुक्रवार को ८ वदी थी।

३. मूलपत्र श्री० नारायणस्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

[४] पत्र (३८९) [४२२]

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो—

विदित हो कि तुह्मारे तीन चार पत्र हमारे पास आये । उनका उत्तर समय पर इस लिये नहीं लिख सके [कि]इस समय वेदभाष्य का अधिक काम कर रहे हैं। तुम ने उदयपुर से लेकर शाहपुरा तक कई पत्र इस विषय में भेजे कि जब आप की यात्रा करने मे दश पन्द्रह दिन शेष रहें तब हम को विदित करना । इस बात का अभिप्राय जो होगा वह तुम जानते ही होगे और कुछ लिखा भी था।

यहां के श्रीयुत महाराजे योधपुराधीश और महाराजे प्रतापसिंह जी तथा रावराजा तेजसिंह जी आदि ने प्रीति के साथ पाली मे सवारी भेज कर मुझ को बुलाया। अब यहां श्री योधपुराधीश तथा म[हा]राजे प्रतापसिंह जी आदि प्रेम प्रीति के साथ समागम करते हैं। और दो एक व्याख्यान भी दिये । और प्रतिदिन राजपुरुष तथा प्रजापुरुष आते जाते हैं। यथाबुद्धि पूछते भी हैं । हम यहां फैजुल्ला खां जी के बाग में ठहरे हैं। और जो विशेष लिखने योग्य होगी सो पश्चात् तुम को लिखके विदित करेंगे। और जो अ[ग]रेजी मे बायबिल का पूर्वापर विरुद्ध आयतें लिखी हैं। उस की देवनागरी ठीक २ कराके शीघ्र योधपुर में हमारे पास भेज देना। सब से हमारा आशिष कह देना।

आषाढ वदी १० शनि } [1]
संवत् १९४०

लिखने योग्य वहां का जो समाचार हो सो भी लिखना।[2]

[दयानन्द सरस्वती] राज मारवाड़ योधपुर

---

१. मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। वदी ११ लिख कर १० की गई है। यही ठीक है। ३० जून १८८३।

२. इस पत्र का उत्तर ठा० नन्दकिशोरसिंह ने मिति आषाढ शुक्ला ३ शनि सं० १९४० को दिया। देखो म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० ९७।

[९] पत्र (३९०) [४२३]

ओ३म्

श्रीयुत मान्यवर श्रीमहाराजाराजाधिराज शाहपुरेश आनन्दित रहो ।

मैंने दो पत्र आप के पास भेजे । उस का उत्तर भी आज तक नही आया । एक ५०) रु० का मनी आर्डर भेजा था जो कि शाहपुरे के डाकखाने का था। रजिस्ट्री कराके भेजा था । उस की रसीद आज तक नही आयी । इस लिये वहां के डाकखाने से रु० लेकर हुंडी कराकर यहां मेरे नाम भेज दीजिये । और रसीद भी और जो छीतरदत्त जी भी वेदभाष्य के रुपये दें तो इसी के साथ भेज देवें, क्योंकि वेदभाष्य उन के पास पहुंच गया है । और छात्रशाला का आरम्भ हुआ कि नही। अग्निहोत्र का आरम्भ हो गया यह बहुत अच्छी बात हुई । मिति आषाढ वदी ७ मगलवार के दिन सर्वाधीश महाराजा जोधपुराधीश पधारे थे ।[1] दो घटे तक बात चीत कर और उपदेश सुन कर और प्रसन्न होकर पीछे पधार गये । और महाराजा प्रतापसिंह जी तथा रावराजा तेजसिंह जी नित्य आया करते हैं । जैसा चाहिये वैसा तो बदोबस्त नही है परन्तु ठीक २ है । और ज्वाहरसिंह जी का वर्तमान आप ने कुछ नही लिखा । और जो बात आपके पूर्व प्रतिज्ञात पत्र से कुछ विरुद्धाचरण हो सो भी मुझ को लिखिये । और सब को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा ।

मि० अ० व० ११ स० १९४० ।[2] जोधपुर राजमारवाड़ ।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[९] [पत्रांश] ३९१ [४२४]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][4]

.........काशीस्थ पं० से पत्रव्यवहार से पूछो कि मासिक कितने तक आ सकता है।

४ जुलाई १८८३ । जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

१. २६ जून १८८३ । देखो पत्र पूर्णसख्या ४२० ।

२. वदी ११ लुप्त है । अतः शनिवार या रविवार को लिखा गया । ३० जून या १ जुलाई ।

३. मूलपत्र शाहपुरा राज्य में सुरक्षित है।

४ देश हि० के रजिस्टर से ।

[१०] पत्र (३९२) [४२५]

ओ३म्

श्रीयुत माननीयवर शुभगुणगणालंकृत श्रीमहाराजाराजाधिराज श्री शाहपुराधीश आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम ने ५०) रुपय्या का मनियाडर भेज्या था। सो रुपया ५०) काका साब सबलसिंह जी के हाथ आ पहुंचा। और अग्निहोत्र का आरम्भ हो गया सुन के अत्यन्त आनन्द हुआ। और छात्रशाला का प्रारम्भ होगा सुनेंगे जब अत्यन्त आनन्द होगा।[1]

सम्वत् १९४० मि० असाढ शुक्ल ४ रवि।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[२] पत्र (३९३) [४२६]

श्रीयुत चार्ट किसनसिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। श्रीमान महाशयो के शरीर की आरोग्यता की बात सुन कर अत्यानन्द हुआ। और जो सर्वाधीशों की अनुमति से लिखा है सो ठीक है। अब मैंने इस का सद्यः उपाय यह निश्चय किया है कि ईसाई वा मुसलमानों के मत का खण्डन थोड़ा सा कल की डाक में तुम्हारे पास रजिष्टरी कराके रवाना किया है। उसको वहां यन्त्रालय मे १००० वा १०००० छपवा कर ५०० वा १००० उदयपुर में बांट देनी चाहियें। और बाकी देश में ठिकाने २ पर वा अच्छे चतुर स्कूल के माष्टर और तालबिलमों को देनी उचित हैं। और वहां राज में दो चार पांच सात पण्डित निकमे बैठे रहते हैं।

उन को यह खण्डन देकर बाजार में जहां कि वे खड़े हो वहां जाकर इन्हीं प्रश्नों में से प्रश्नोत्तर करें। और पण्डित अर्थात्—उपदेशक जिन नियमो पर चाहा है वैसा मिलना और उस का इन बातो को स्वीकार करना कठिन पड़ेगा। क्योकि ईसाई वा मुसलमान लोग तीर्थ मूर्ति मन्दिर इन तीन बातों पर खण्डन चलाते हैं। यदि जो इन तीनो को स्वीकार करेगा वह उनके सामने कुछ न कर सकेगा। क्योंकि वे ईसाई मुसलमान लोग इन्ही के दृष्टान्त दिया करते हैं। और ये बातें वेद शास्त्र से सिद्ध तो क्या परन्तु युक्तिसिद्ध भी नही हो सकती। इस से चाहे वह भीतर

---

१. प० चमूपतिजी सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ३८ पर छपा है। वहीं से लिया गया है।

२. ८ जुलाई ८३।

मानता भी हो तो परन्तु उनके सामने तीर्थ मूर्ति मन्दिर और चौथा पुराण पांचवां महात्म्य छवां व्रत सातवां कण्ठी तिलक आठवां कोई संप्रदायानुकूल और नवां अवतार आदि सिवाय वैदिक मत के जब तक नहीं मानेगा तब तक उनका खण्डन न कर सकेगा। इस लिये यह बात अशक्य होगी । इस कारण उस उपदेशक को समझा दिया जाय कि जब उन के सामने चर्चा की जाय तब जो इन ९ बातो पर शंका अर्थात् तर्क ईसाई लोग करें तब उस समय वह कह दें कि इन बातों को हम नहीं मानते। हम तो केवल एक सच्चिदानद परमात्मा को मानते हैं । तभी उन का विजय कर सकेगा। और जो कोई आर्यसमाज से विद्वान् आवेगा वह इन प्रतिज्ञाओं को स्वीकार नही करेगा। क्योकि जब तक आप निर्दोष मत को नहीं मानता स्वयं दोषी होता है । तब तक दूसरे दोषयुक्त मतों को कभी नही काट सकेगा। इस लिये उपदेशक तो शुद्ध ही होना चाहिये । और जैसा श्रीमानो का देशकालानुकूल अभिप्राय है उस अभिप्राय कीत से जो उपाय पूर्व मैंने लिखा है सो ठीक है। यदि जो मैंने लिखा है कि इन नौं बातो का जो खण्डन करेगा तो उन के सामने मानेगा भी नहीं। तभी यह बात पार पड़ेगी। और श्रीमानो का अभिप्राय भी इसी प्रकार सिद्ध होगा। यदि किसी को बुलाने ही की इच्छा हो तो वह नौ बातो को स्वीकार न करे। और अंगरेज ईसाइयो को २५०००० ढाई लाख रुपये देते हैं तो हम लोगो मे सहायक क्यो न हो ? और मिथ्या मत का खण्डन और सत्य मत का प्रचार होना इस से उत्तम धर्म और क्या होगा।

मिति आ० सु० १५ सवत १९४० ।[1]

मेरा यहा से किस स्थान मे जाना होगा जु अब तक निश्चय नही किया। और यहां रहने का भी कोई निश्चय समय नही है। अनुमान है कुछ यहां रहना होगा। यहां का सुधार कुछ थोड़ा सा हुआ है और बहुत सा बाकी है। संपूर्ण परमात्मा की कृपा से हो सक्ता है। क्योकि कई प्रकार के रोग लगे हैं। औषधी सेवन और पथ्य बहुत कम हैं। इसका विस्तार पश्चात् लिखा जायगा। ठाकर सबल सिंह जी को यही जवाब दिया है कि अब कुछ दिन यहां ठहरेंगे। पश्चात तुम्हारे साथ नही चलेंगे। और हमने एक कार्ड में तुमको लिखा था। पुरोहित उदयलाल को पूछ के लिखो। तुम्हारे पास घड़ी आई कि नही । इसका उत्तर हमारे पास अब तक नहीं आया है। और घड़ी तुम्हारे पास एक आई वा दो।

---

१ २० जुलाई १८८३, शुक्रवार। प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १७५-१७७ पर छपा है। मूल पत्र ठा० किशोरसिंह जी के पास सुरक्षित था।

जो एक आई तो कुछ चिन्ता नहीं। और जो दो आई हों तो एक हमारे पास भेज दो।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (३९४) [४२७]

ओ३म्

श्रीयुत भारतमित्र सम्पादक महाशय निकटे निवेदनम्।

महाशय, आप के सवत् १९४० आषाढ़ शुदी ८ गुरवार के छपे हुए पत्र में किसी ने वेद पर आक्षेपपत्र छपवाया है। उस लेखक का अभिप्राय यही विदित होता है कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नहीं है। परन्तु इस प्रश्न के करने वाले ने प्रश्नमात्र ही किया है। अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिये कोई विशेष हेतु नही लिखा। अर्थात् उत्तर उस बात का होता है जो किसी वेदवचन मूल पर भ्रांतपन दिखलाता तो उस का उत्तर उसी समय दिया जाता। जैसे कोई कहे कि यह १०००) एक हजार रुपयों की थेली सच्ची नहीं। दूसरे ने उस से पूछा क्या मैं तुम्हारे कहने मात्र ही से थेली को झूठी मान सकता हू। जब तक तुम झूठा रुपया इस मे से एक भी निकाल के सिद्ध नही कर देंगे, तब तक मैं थेली को झूठा नही मानूगा। वैसा ही मिष्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब और जिस ने आप के पत्र में छपाया है इन दोनों महाशयों का लेख है। यहा उनको योग्य था और है कि किसी एक वा अनेक मन्त्रों को अपने अभिप्राय के अर्थ सहित वेद, अध्याय, मन्त्र, सख्यापूर्वक लिख कर पश्चात् कहते कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नही हैं, तो प्रत्युत्तर के योग्य प्रश्न होता। अब भी यदि उत्तर जानने की इच्छा हो तो इसी प्रकार करें, नहीं तो कुछ भी नहीं है। किन्तु इस मे इतनी बात तो समाधान देने के किसी प्रकार योग्य है कि वेदो में मतभेद क्यों हैं। अब देखिये यह भी इनकी गोलमाल बात है। क्योकि वेदों में किस ठिकाने और किन मन्त्रों मे किस प्रकार के मतभेद हैं, हां, विद्याभेद से कथन का भेद होना तो उचित ही है। जैसे व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, वैद्यक, राजविद्या, गान, शिल्प और पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त की अनेक विद्याओं की मूल विद्या वेदो मे हैं। इन के संकेत शब्दार्थ और सम्बन्ध भिन्न २ हैं। जैसे व्याकरण विद्या से ज्योतिष विद्यादि के सकेत, परिभाषा और पदार्थ विज्ञान पृथक् २ होते हैं वैसे इन सब विद्याओं के वाचक अर्थात् प्रकाशक मन्त्र,

भी पृथक् २ अर्थ के प्रतिपादक हैं। यदि इन्ही को मतभेद कहते हैं तो प्रश्नकर्त्ता का कथन असगत है। और जो दूसरे प्रकार के मतभेद मानते हैं तो उन का कथन सर्वथा अशुद्ध है। इस लिये प्रश्नकर्त्ताओ को उचित है कि पूर्वोक्त प्रकार से चारो वेदो मे से जो कोई एक मन्त्र भी भ्रांत प्रतीत होवे वह आप के पत्र मे मिष्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब छपवावें। उन का उत्तर भी आप ही के पत्र मे उचित समय पर छपवा दिया जायगा। और उन को वेद के निर्भ्रान्त होने के जानने की पक्की जिज्ञासा हो तो मेरी बनाई ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका को देख लेवें। यदि उन के पास न हो तो वैदिकयन्त्रालय प्रयाग से मगा कर देखें। और जो उन को आर्यभाषा का पूरा ज्ञान न हो तो किसी सत्यवक्ता दुभाषिये पुरुष से सुनें। इस पर जो उन को शका रह जाय तो मुझ से समक्ष मिल के जितनी शका हों उन सब का यथावत् समाधान लेवें। क्योकि पत्रों से शका समाधान होने मे विलम्ब होता और अधिक अवकाश की भी अपेक्षा है। और मुझ को वेदभाष्य बनाने के काम से अवकाश न मिलने के कारण विशेष प्रश्नोत्तर करने का समय नही है। और जो उन्हो ने यह लिखा कि स्वामी जी ईश्वर वा ईश्वर की प्रेरणायुक्त हो तो उनका भाष्य निर्भ्रम हो सके। मै ईश्वर नही किन्तु ईश्वर का उपासक हूँ। परन्तु वेद मनुष्यो के हितार्थ परमात्मा ने प्रकाशित किये हैं। इस अभिप्राय से कि यहां तक मनुष्यो की विद्या और बुद्धि पहुंच सकेगी और इतने तक कार्य मनुष्य कर सकेंगे। इस लिये यावत् मेरी बुद्धि और विद्या है तावत् निष्पक्षपात होकर वेदो का अर्थ प्रकाशित करता हूं। और वह अर्थ सब सज्जनों के दृष्टिगोचर हुआ है, होता है और होगा भी। यदि कही भ्रांति हो तो उक्त साहेब प्रकाशित करें। बड़े शोक की बात है कि आज पर्यन्त एक भी दोष वेदभाष्य मे से कोई भी नही निकाल सका है फिर भी इन का भ्रम दूर नही हुआ। ऐसी निर्मूल शका कोई भी किया करे इस से कुछ भी हानि नही हो सकती। और सत्यार्थ होने ही से वेदो का निर्भ्रान्तत्व यथावत् सिद्ध है। यदि इस मेरे बनाए भाष्य मे मिस्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब को भ्रम हो तो इस मे से भ्रांतिमत्त्व किसी मन्त्र के भाष्य द्वारा आप के पत्र मे छपा देवें। मैं उत्तर भी आप ही के पत्र द्वारा देऊंगा।[1] और जो थियोसोफिष्ट के अध्यक्ष ऐसी वातें करें, इस मे क्या आश्चर्य है? क्योकि वे अनीश्वरवादी बौद्धमतानुयायी हो कर भूत, प्रेत और चुटकलो के मानने वाले है। बड़े शोक की बात है कि

---

१. प्रतीत होता है कि इस से अगला लेख सम्पादक भारतमित्र ने नहीं छापा होगा। देखो पत्र पूर्णसख्या ४३३ का आरम्भ।

सर्वथा विद्यासिद्ध परमात्मा को न मान कर भूत, प्रेत, मृतको में फस कर और भोले मनुष्यों को फसा अपने को सुधारने वाले मानना यह कितनी बड़ी अनुचित बात है। इन को तो नास्तिकमत जो कि ईश्वर को न मानना है वही प्रिय लगता है। परन्तु इस मे इतनी ही न्यूनता है कि भूत प्रेतो ने इन को घेर लिया। सच है जो सत्य ईश्वर को छोड़ेंगे वे मिथ्या भ्रम जाल भूत प्रेतो और वन्ध्यापुत्रवत्कुतु हूवीलालसिंह आदि में क्यो न फसेंगे। बहुत से समाचारों में छपवाते हैं कि इतने सौ इतने हजार मनुष्यों को मिष्टर एच० ए० करनेल ओलकाट साहब ने रोग रहित किया। यदि यह बात सच हो तो मुझ को क्यो नही दिखलाते और मनवाते। और मेरे सामने कि जिसको मैं कहू उस एक को भी नीरोग कर दें तो मै थियोसोफीष्टो के अध्यक्ष को धन्यवाद देऊ। इस मे मुझ को निश्चय है कि जैसे एक थियोसोफीष्ट दभ के मारे लाहौर मे अपनी अगुली कटवा के अग भग हो गया कही ऐसी गति मेरे सामने इन की न हो जावे। और करामात कुछ भी काम न आवेगी। मै प्रसिद्धी से कहता हूं कि यदि उन में कुछ भी अलौकिक शक्ति वा योगविद्या हो तो मुझ को दिखलावें। मैंने जहा तक इन की लीला सिद्धि और योगविषयक देखी है वह मानने के योग नहीं थी। अब क्या नई विद्या कही से सीख आए ? मुझ को तो यह विषय निकम्मा आडम्बर रूप दीखता है। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

मिति श्रावण वदी ४ संवत् १९४०।
तदनुसार २३ जुलाई सन् १८८३।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर।

---

[1] मूलपत्र म० मामराज जी ने फरवरी १९२७ में फरुखाबाद के पत्रों में से खोजा था। अब वह हमारे सग्रह में सुरक्षित है। इस पत्र पर भारतमित्र काट कर भारतसुदशाप्रवर्तक लिखा हुआ है। वस्तुतः यह पत्र भारतमित्र, भारतसुदशाप्रवर्तक तथा देशहितैषी, अजमेर आदि को भेजा गया। देशहितैषी को यह लेख २५-७-८३ को भेजा गया। देखो देशहितैषी के सम्पादक, आर्यसमाज अजमेर के मन्त्री कमलनयन शर्मा का २९-७-८३ का श्री स्वामी जी के नाम का पत्र, म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार में पृ० १७४ पर। देशहितैषी के रजिस्टर से पता लगता है कि यह लेख २५-७-८३ को जोधपुर से देशहि० को भेजा गया। देखो अगला पत्र पूर्ण-सख्या ४२८। पत्र व्य० पृ० ६८-७३ पर भी यह पत्र छपा है। उस में हस्ताक्षर और तिथि नहीं। देशहि० में है।

[१०] पत्रांश (३९५) [४२८]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][1]

· · · 'पत्र छापने को भेजते हैं। ·· ···

२५ जुलाई १८८३ जोधपुर।

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (३९६) [४२६]

ओ३म्

श्रीयुत भारतमित्र सपादक समीपेषु ।

महाशय, आप के सवत् १९४० मिति श्रावण शुदी ६ गुरुवार के दिन के छपे हुए पत्र मे जो विविध समाचार के दूसरे कोष्ठ मे यह छपा है कि मुसलमानों के मभहब का मूल अथर्ववेद है, सो बात [असत्य] है। क्योकि उस के नाम निशान का एक अक्षर अथर्ववेद मे नही है। जो शब्द कतृ न अल्लोपनिषद् नामक जो कि मुसलमानो की पादशाही के समय किसी थोड़ा सा सस्कृत और अरबी फारसी के पढ़ने वाले ने छोटा सा ग्रन्थ बनाया है वह वेद, व्याकरण, निरुक्त के नियमानुसार शब्द अर्थ और सबध के अनुकूल नही है। और अल्ला, रसूल, अकबर आदि शब्द चारो वेदो में नही है। किन्तु जो अथर्ववेद का गोपथ ब्राह्मण है उस मे भी यह उपनिषद् तो क्या किन्तु पूर्वोक्त शब्दमात्र भी नहीं है। पुनः जो कोई इस बात का दावा करता है वह अथर्ववेद की सहिता जो कि बीस काण्डों से पूर्ण है अथवा उसके गोपथ ब्राह्मण मे एक शब्द भी दिखला देवे वह कभी नही दिखला सकेगा।[2] यदि ऐसा होता तो उस पुरुष का कहना भी सत्य होता । अन्यथाकथन सच क्योकर हो सकता है ? कहां राजा भोज कहां गांगा तेली ? वेदों के आगे यह

---

१. देशहि० के रजिस्टर से। देखो गतपत्र, पूर्णसख्या ४२७।

इस का उत्तर २९-७-८३ को लिखा गया । वह म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १७४ पर छपा है। उस की निम्नलिखित पक्तिया देखिए—

मिष्टर ए. यू होम (ह्यूम) साहब के कथन का खण्डन जो आपने देशहि० में छपने को भेजा है सो पहुचा।···· कमलनयन

२. अज्ञानी लोगों की इस मूर्खता को देख कर ही श्री स्वामी जीने सत्यार्थप्रकाश के चौथवें समुल्लास के अन्त में इस अल्लोपनिषद् की कडी समीक्षा की। प्रतीत होता है कि वर्तमान सत्यार्थप्रकाश के चौथवें समुल्लास की प्रेस कापी भी उसी समय सशोधित हो रही थी। उसी के अन्त में इस मिथ्यात्व का भी खण्डन कर दिया गया।

ग्रन्थ ऐसा है कि जैसे अमूल्य रत्न के सामने भूडा। यही एक बात नई नहीं है। किन्तु स्वार्थी लोगों ने वेदों के नाम पर ऐसे २ निकम्मे बहुत से ग्रन्थ बनाये हैं जिन का मिथ्यात्व वेद के देखने से यथावत् विदित होता है। यदि बालादत्त शर्मा हेडमास्टर रियास्त टिहरी गढवाल की इच्छा ' '' ' जाने वा शास्त्रार्थ करने की इच्छा हो तो इस बात के लिये यहां सब दिशाओं के दरवाजे खुले हैं। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु।[1]

---

[१४] **कार्ड (३९७)** [४३०]

ओम्

जोधपुर
श्रावण वदी १० रवि स० १९४०।[2]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

आपने १२५ आम भेजे सो पहुंचे। उन मे से ८०) आम अच्छे रहे और बाकी बिगड़ गये। परन्तु आम बहुत अच्छे थे। और उदयपुर और साहपुरे की रसीद के लिये लिख भेजेंगे पहुंच जायगी। आप अपने २००) रुपये लेके बाकी रुपये लाला निर्भैराम की दूकान पर जमा करा दीजिये। क्योकि आज कल वैदिक यन्त्रालय की दशा जब से समर्थदान आया है तब से अच्छी है। और पंडित सुन्दरलाल प्रबन्ध भी अच्छा करते हैं। यहा का समाचार अच्छा है पश्चात् लिखेंगे।

लाला कालीचरण जी के पास मिष्टर ऐ० ओ ह्यूम साहब के प्रश्नोत्तर का पत्र छापने के लिये भेजा है पहुंचा होगा।[3]

सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।[4]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ७३-७४ से लिया। जुलाई १८८३ के अन्त में लिखा गया प्रतीत होता है।

२. २९ जुलाई १८८३।

३ देखो पूर्णसंख्या ४२७ का पत्र।

४ मूल कार्ड हमारे सग्रह में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने आर्यसमाज फरुखाबाद के पत्रों में से फरवरी सन् १९२७ में खोजा।

[३] पत्र (३९८) [४३१]

ओम्

श्रीयुत बहारट किसन जी आनन्दित रहो—

कार्ड तुमारा आया समाचार विदित हुआ । हमने मुसलमान और ईसाई के मतविषयक दो पुस्तक रजष्टरी कराके भेजे थे, अवश्य पहुंचे होंगे । उसका उत्तर अब तक क्यों नही भेजा । पहुंचे वा नही । और उस के साथ एक पत्र भेजा था । वह पहुंचा होगा । सर्वाधीशो के दृष्टिगोचर भी कराया होगा । अब मेरी चिट्ठि और वे दोनों पुस्तक पहुंचने के पश्चात् क्या निश्चय किया गया । क्या जो मैंने लिखा वही ठीक माना गया वा कुछ विचारांतर किया । इन सब बातो का उत्तर शीघ्र भेजना । यहा का समाचार पश्चात् लिखेंगे ।

और जो एक पत्र लाहौर का श्रीमानो के अवलोकन और संमत्यर्थ भेजा था उस का क्या विचार ठहरा । जो कि लाला साईदास प्रधान आर्यसमाज लाहौर ने भेजा था । उस का भी उत्तर श्रीमानो स पूछ के भजो । तथा श्रीमान् महाशयो के आरोग्यता का वर्तमान और वर्षा का भी वर्तमान लिखो ।

और जैकर्ण जी से कहना कि तुमारे पिता जी की मित्रता श्रीमान् योधपुराधीश प्रतापसिंह जी और रावराजा तेजसिंह जी से अच्छी प्रकार करा दी है ।[1] और पूर्व जो उन के हृदय मे भ्रांति थी वह भी निकाल दी । और श्रीमानो से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा ।

संवत् १९४० मिति श्रावण वदी ११ ।[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]
जोधपुर राज मारवाड़ ।

---

१. इस बात का उल्लेख श्री जयकर्ण जी के पत्र में है । देखो म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १०७ ।

२ ३० जुलाई १८८३ ।

३. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह के सग्रह में सुरक्षित था ।

[१] पत्र (३९९) [४३२]

ओ३म्

स्वस्ति श्रीमद्राजराजेश्वर महाराजाऽधिराजवर्य्येभ्यः श्रीमद्योधपुराऽधिपतिभ्यो मत्प्रेरिता आशिषः सन्तु ।

(गुप्तसमाचार)

पुरुषाः सुलभा राजन्सततं प्रियवादिनः ।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥ १ ॥

हे धृतराष्ट्र इस जगत मे बहुत पुरुष सुलभ अर्थात सुख से प्राप्त होते हैं जो सदा दूसरे की खुशामद की बातें करके अपना मत(ल)ब सिद्ध करते । परन्तु सुनने में अप्रिय और परिणाम में कल्याणकारी वचन का उपदेष्टा और सुनने वाला ये दोनों पुरुष अति दुर्लभ हैं । १ ।

यथा योधृषु वर्त्तमानो जयः पराजयश्च राजनि व्यपदिश्यते । महाभाष्य—

जैसे सेना की हार वा जीत राजा की ही हार और जीत मानी जाती है वैसा ही श्रीमानों को अवश्य चाहिये ।

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव तद्राजसमुदाहृतम् ॥ गीता ॥

जो विषय और इन्द्रियों के संयोग से आदि मे अमृतरूप सुख प्रतीत होता है वही परिणाम अर्थात पश्चात विष के तुल्य होकर महादुःखदायक हो जाता है ।

आप स्वयं बुद्धिमान् हैं । इतने ही से बहुत समझ लेंगे । सौभाग्य की बात है कि आप में अनेक प्रशंसनीय शुभगुण आरोग्य और राज्यैश्वर्य्य सम्पन्नता वर्त्तमान है । परन्तु शोक की बात है कि ऐसे आप बुद्धिमान् होके नीचे लिखी हुई थोड़ी सी बातों मे न जाने क्योंकर प्रवर्त्तमान रहते हैं । वे ये है—यदि आप मद्यपान वेश्यासंग पतंग उड़ाना घुडदौड आदि द्यूत नही छोड़ते और राज्यपालन कर्म में कम से कम छः घंटा परिश्रम और महालक्ष्मीरूप राजकन्या स्वपत्नियो से अधिक प्रेम नहीं करते हैं इत्यादि शोचनीय बातें आप मे हैं । आप निश्चय समझिये कि जितने आप के आधीन-पुरुष कीर्ति वा निन्दा का काम करेंगे वह सब आप की ही पर गिने जायेंगे । यदि आप स्वयं मद्यपानादि में प्रवृत्त न हों तो क्या कोई भी इन मे आपको प्रवृत्त कर सकता है । जो स्वार्थी खुशामदी हैं वे तो सदा यही चाहते हैं कि राजा प्रमाद मे लगें तो हमारे सब प्रयोजन सिद्ध हो जायें । परन्तु संसार में इन का नाम कोई भी न लेगा किन्तु—

(प्रधानाप्रधानयोः प्रधानं कार्य्ये सम्प्रत्ययः) महाभाष्य—

भलाई और बुराई प्रधान पुरुष के साथ लगती है गौण अर्थात् अप्रधान के साथ नहीं।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ गीता ॥

जैसा अच्छा वा बुरा आचरण श्रेष्ठ पुरुष कर्त्ता है वैसा ही इतरजन करने लग जाते हैं। और जिसका प्रमाण उत्तम पुरुष कर्त्ता है उसी का प्रमाण सब लोग करने लगते हैं। अर्थात (यथा राजा तथा प्रजाः) जैसा राजा होता है वैसी ही प्रजा भी होती है। इस लिये प्रधान पुरुष बहुत विचार से उत्तम आचरण करे कि जिससे उसको ससार के बिगडने का अपराध न लगे। बुद्धिमानो के सामने विशेष लेख करना उचित नही होता।

अब मुझको यह बड़ा सन्देह है कि जो आप जैसे दीर्घजीवी न्यायकारी राजा बने रहें तो सब प्रजा का कल्याण होवे। और जो मद्यपानादि कर्म हैं वे अवश्य आयु बुद्धि बल पराक्रम आरोग्यता कीर्ति धर्म अर्थ काम और मोक्ष तथा प्रजा के पुत्रवत्पालना करने में परम विघ्नकारी हैं। इस लिये मुझको निश्चय है कि आप मद्यपानादि दुष्कर्मों से पृथक् होके अपने समीपस्थों का भी यथावत्कल्याण करेंगे। (इसका उत्तर आप जैसी इच्छा हो वैसे दीजिये। मैं कड़ा उत्तर दूंगा तो स्वामी जी अप्रसन्न हो जायेंगे ऐसा ध्यान मत कीजिये। मुझको निश्चय है कि आप निष्कपट और सत्यवादी हैं। इस पर जैसा विचार होगा उत्तर यथावत् शीघ्र लिखेंगे। यद्यपि यह प्रथम ही पत्र आपके समीप भेजा जाता है तदपि यदि आगे आवश्यकता होगी तो मै और आप जब समक्ष न हो सकेंगे तब पत्रो ही से यथोचित बात होगी। जैसा मै आवश्यक कार्य करने वा पत्र के उत्तर देने मे क्षण मात्र विलंब नही कर्ता वैसे श्रीमान भी करेंगे)। यदि आप ही पूर्वोक्त निषिद्ध कर्म करने और विहित न करने मे प्रवृत्त रहैंगे तो अन्य पुरुष सब आपके दृष्टान्त से वर्त्तेंगे। जब तक मनुष्य के हाथ मे सर्वाधिकार आरोग्यता उत्तम सग शुभगुण कर्म स्वभाव होता है तब तक कोई भी विघ्न सुखनाशक नही खड़ा होता। विघ्नों का निवारण बुद्धिमान प्रथम ही करते हैं कि जब तक वे प्राप्त न हो। नही तो बुद्धिमान और निर्बुद्धि में दूसरा क्या भेद है। निर्बुद्धि लोग विघ्न के पूर्व कुछ भी ध्यान नही देते और विघ्न आये पश्चात् गभरा भी जाते है। विद्वान् लोग वैसे नहीं होते।

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेमृतोपमम्।
तत्सुख सात्त्विकं प्रोक्त मात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥ गीता—

जो ब्रह्मचर्यादि कर्मों का आचरण आदि में विषतुल्य दुःख प्रतीत होता है वही पश्चात् अमृत के सदृश विदित होता है। वही आत्मा और बुद्धि को प्रसन्न करने वाला सुख है कि जो विद्या सुविचार सत्संग और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से प्राप्त होता है।

जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः।
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥१॥ मनुस्मृतौ।

जो विवाहित स्त्रियां पति माता पिता बन्धु और देवर आदि से दुःखित होके जिन घर वालों को शाप देती हैं वे जैसे किसी कुटुम्ब भर को विष दे के मारने से एक बार सब के सब मर जाते हैं वैसे उनके पति आदि सब ओर से नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। और

सतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याण तत्र वै ध्रुवम् ॥१॥ मनुस्मृतौ—

अर्थ०—जिस कुल में स्त्री से पति और पति से स्त्री अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है उस कुल में निश्चय कल्याण अर्थात् आनन्द बढ़ता है ॥१॥

देखिये जैसे किसी की स्त्री उपपति अर्थात् दूसरे पुरुष से प्रसिद्ध वा अप्रसिद्ध प्रीति करे तो उस के पति को कितना बड़ा क्लेश होता है। इसी प्रकार पति के परस्त्री वा वेश्या-गमन से पत्नी को महा दुःख होता है। और वह उनका क्लेश कुटंब भर का नाशक और उनकी प्रसन्नता सब कुटुब को आनन्द देने वाली है। इस लिये आप अपने अमूल्य समय मद्य वेश्या-सग आदि में न लगा के न्याय धर्म से प्रजापालनादि शुभ कर्मों में व्यय करके धन्यवादार्थ सर्वत्र सत्कीर्ति हूजिये।

किमधिकलेखेन महामान्यवर्यतमेषु।[1]

---

१. अनुमानतः जुलाई सन् १८८३ का अन्त है। प० चमूपति सम्पादित पत्र व्यवहार पृ० ९८ पर छपा है। मूल लेख कई स्थानों पर श्री स्वामी जी का शोधा हुआ है। मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में सुरक्षित है। प्रतीत होता है कि इसी की शोधित प्रतिलिपि महाराज योधपुर को भेजी गई होगी।

[३] पत्र (४००) [४३३]

ओ३म्

श्रीयुत मनोहरदास खत्री सम्पादक भारतमित्र आनन्दित रहो।

आप ने मेरे भेजे पत्र को प्रसन्नतापूर्वक छाप दिया उसका उपकार मानता हूं। परन्तु शेष विषय[1] भी छापने योग्य जानकर मैंने लिखा था। क्योंकि इस पूर्वपक्ष के सम्बन्धी थियोसोफिकल सुसायटी के प्रधान हैं। इसलिये यह विषय लिखा था। और मैं आप को सुहृद्भाव से लिखता हूं कि यदि आप अपने भारतमित्र समाचार की विद्वानो मे प्रतिष्ठा चाहे तो करनल ओलकाट आदि के करामात वा मिसमिरेजम से अनेको रोग निवारण आदि नितान्त मिथ्या विषय कभी न छापें। नहीं तो समाचार की प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी। अब थोडे समय मे करनेल ओलकाट लाहौर गये थे। उनका रोग निवारणादि सामर्थ्य अत्यन्त झूठ बड़े बडे बुद्धिमान् लाहौर निवासियों ने निश्चित करके लिखा कि इन का यह सब ऊपर का ढोंग है। और जितना व्यवहार बाहर वा भीतर का थियासोफिस्टो का मैं जानता हू इतना आर्य्यावर्त्तीय लोगो में बहुत थोड़े लोग जानते हैं। जब इन लोगो ने झूठ दांभिक मिथ्या छल व्यवहारों मे मेरी सम्मति लेनी चाही मैंने नहीं दी तभी से वे अपना प्रपंच पृथक् करने लगे। और मै उन से पृथक् हो गया। अस्तु, थोड़े ही लेख से आप बहुत समझ लेंगे।

एक [पत्र] श्रीकृष्ण खत्रीने ता० २८वी जुलाई सन् १८८३ को लिखकर हमारे पास भेजा है। और उन्हों ने बहुत से सनातन आर्यधर्म के प्रयोजनादि विषयों मे आर्य पचांग बनाने के लिये मुझ से सहायता चाहते हैं तथा आर्यसमाजों से भी। जिस पत्र पर लेख किया है वह पत्र भारतमित्र कार्यालय का है। इसलिये मैं आप से पूछता हूं कि उक्त महाशय किस प्रकार के गुण, कर्म, स्वभाव वाले हैं। और जैसा उन ने लिखा है कि इस मे भारतमित्र सम्पादक की भी विशेष सहानुभूति है आप इन को योग्य समझते हैं। यदि इस कार्य के योग्य समझते हो तो इस पत्र को देखते ही मुझको प्रत्युत्तर लिखिये। तत्पश्चात् आर्यसमाजों को उचित होगा, लिखा जायगा। और जो एक पत्र बहुत दिन हुए मैंने लिखा था जिस में गोरक्षार्थ अर्जी देने का मसोदा वहां के वकील बारिस्टरों से पूंछ के आप लिखें उस का क्या हुआ? अब उस में अधिक विलंब करना उचित मै नहीं समझता। यहां जोधपुर का समाचार पश्चात् लिखा जायगा।

---

१. देखो पत्र पूर्णसख्या ४२७ पृ० ४६६ पर टि० १। अगस्त के आरम्भ में लिखा गया। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ७८ पर छपा है।

[४] पत्र (४०१) [४३४]

ओम्

श्रीयुत वहारट किसन जी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। यह पत्र सर्वाधीशों के दृष्टि गोचर करा देना।

१—मेरी भी यह मनसा नहीं है न थी कि पादरियों के सामने शास्त्रार्थ ही किया जाय। किन्तु जिस से कोई अपनी प्रजा का पुरुष उन के भ्रम्भव मे न फसे वैसा उपदेश किया जाय। इस लिये वे छोटे २ खंडन जो कि मैंने भेजे हैं वे छपवा के योग्य २ पुरुषो को चाहे वे पण्डित हों वा वुद्धिमान् हो वांट कर प्रचार करने से उन के फन्दे में कोई भी न फसेगा। आप से आप वहुत से उपदेशक उसी राज्य के पुरुष हो जांयगे। इस का वांटना विशेष कर सरदार हाकम भूमिये थाने वा अच्छे २ गामों मे अथवा जहां कही कोई वुद्धिमान् हो इस को देखकर उन ईसाइयो को हटा दे सकेंगे। और यदि श्रीमानो के नियमानुसार उपदेश कहीं करना हो तो वहां राज के नौकर वहुत से पण्डित हैं जिस को योग्य समझें उस को यह दोनो पुस्तक दे के उपदेशक कर देवें।

२—जैसा श्रीमान् महाशयो ने लिखा है वैसा उपदेशक आर्यसमाज से आने में असक्य नही है। किन्तु जो उस पत्र में नियम लिखे हैं उन के अनुसार और ईसाई आदि का खंडन होना असक्य है। क्योकि जव तक उपदेशक झूठ मत को मानेगा और दूसरे झूठे मत के खडन मे प्रवृत्त होगा कुछ भी न कर सकेगा। जव तक मनुष्य स्वय झूठी वातों का त्याग करके सत्य वातो में निश्चित प्रवृत्त नहीं होता तव तक वह अलौकिक शक्ति परमात्मा की ओर से नही मिलती। और न दृढ़ोत्साही वह हो सकता है। यावत् इन ईसाई आदि के सामने वैदिक मतानुसार ईश्वर धर्म आदि को नहीं मानता और मूर्तिपूजा आदि को मानता है तव तक वह जायगा खंडन करने को आप ही खंडित हो रहेगा। जैसे कोई किसी को दुर्व्यसन छुडाने का उपदेश करता और आप उसी दुर्व्यसन में फंसा है उस का उपदेश कोई भी न मानेगा। इस लिये असक्यता लिखी थी। नही तो पण्डित तो क्या किन्तु एक कोई साधारण उपदेशक भी आर्यसमाज का आवे तो इन का कुछ भी वल न चले। इस लिये जो उपाय मैंने उन के निवारण के लिये लिखा है वह अच्छा है। परन्तु ईसाई आदि के सामने जव कभी वात चीत हो तव उस को अति उचित है कि उस समय मूर्ति और पुराण आदि का पक्ष छोड़ ही के वोले तभी कृतकारी होगा।

३—यहां जयकरण के पिता नाथूराम जी का श्रीमान् जोधपुराधीश महाराजे प्रतापसिंह जी और बाबा साहब से कहकर मैंने मिलाप करा इनकी ओर से जो शंका थी सो दूर करा दी है। अब तीनो महाशय उनसे प्रसन्न हैं। और अब श्रीमान् योधपुराधीश भी कुछ २ मेरे उपदेश सुनने में प्रवृत्त हुए हैं। अनुमान है कि कुछ सुधार हो। परन्तु अब तक मद्यपानादि दुष्कर्मों से कुछ कम हटे हैं। आज तक लोगो ने बहुत सी बहकावट की थी परन्तु (सत्यमेव जयति नानृतम्। सत्येन पन्था विततो देवयान.। नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातक परम्॥[1] सत्ये नास्ति भय कचित्।) सत्य के सामने झूठ कभी नही ठहर सकता। महाराज का स्वभाव अत्युत्तम है परन्तु सगदोष ने कुछ का कुछ स्वभाव को कर रक्खा है। अब तक मद्यपान वेश्यासग खेल हांसी ठट्ठा छुकरपन सपूर्ण नही छूटे हैं। परमेश्वर अतर्यामी पूर्ण कृपा करें जिससे ये महाशय अपने राजधर्म मे प्रवृत्त हो प्रजा को पुत्रवत् न्याय से पालन कर कीतिमान् होवें। महाराजे प्रतापसिंह जी और बाबा साहब भी अति प्रसन्न हैं। जो यह यहा मेरा आना इन लोगो का मेरी ओर इतना प्रेम होना सब आर्यकुलदिवाकरो के प्रताप से हुआ है, ऐसा मै समझता हूं। जैपुर का कृत्य शीघ्र करा लेना चाहिये। श्रीमानो क शरीर की आरोग्यता सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। सबसे मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। और इस पत्र का उत्तर शीघ्र देना।

मि० श्रावण शुक्ल ३ रविवार सम्वत् १९४०।[2]

ठाक[र] सबलसिंह जी अब यही हैं।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

। जोधपुर मारवाड़।

---

१. ये ही वचन सत्यार्थप्रकाश के अन्त में स्वमन्तव्यामन्तव्य के आरम्भ में दिये गए हैं। प्रतीत होता है कि उन्हीं दिनों सत्यार्थप्रकाश का वह अन्तिम प्रकरण भी शोधा गया था।

२. ५ अगस्त १८८३ रविवार। परन्तु उस दिन शुक्ला २ है।

३. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में है।

[११] पत्रांश (४०२) [४३५]

[कमलनयन मन्त्री आर्य स० अजमेर][1]

..... बालकराम वाजपई कौन है।[2]

१० अगस्त १८८३ जोधपुर।

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (४०३) [४३६]

ओ३म्

श्रीयुत महिमहेन्द्र महामान्यार्यकुलदिवाकर आनन्दित रहो।

श्रीमानो को विदित हो कि मैं जोधपुर में भाद्रपौर्णमासी तक रहना चाहता हूं।[3] पश्चात् कहां जाना होगा इस का निश्चय अब तक नही किया है। जब निश्चय हो जायगा तब श्रीमानों को विदित कर दिया जायगा।

महाराजे प्रतापसिंह जी और रावराजा तेजसिंह जी उदयपुर में श्रीमन्महोदयों को मिलने के लिए आने को कहते थे। अनुमान है कि पूने से वहीं आवेंगे। यदि आवें तो अच्छे प्रकार आप शिक्षा करेंगे। इस मे कहना वा लिखना क्या है। किन्तु आर्यराजोत्कर्ष, वैदिकधर्म की उन्नति करने आदि का उपदेश यथायोग्य कीजियेगा। कुछ ओषधि लिखके भेजी जाती हैं। इन को यथायोग्य उपयोग में लावें।[4]

॥ उपदेश ॥

१—कभी साहित्य जो नायका आदि भ्रष्ट रीति है उस का स्मरण श्रवण और वैसे गणेशपुरी से मनुष्यो का संग भी कभी मत कीजियेगा। और न मद्यपान न वेश्या का दर्शन नृत्यगान आदि प्रसग करना।

---

१. देशहि० के रजिस्टर से। इस सम्बन्ध का पत्र म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १७५-१७७ पर छपा है।

२. यह अभिप्रायमात्र है।

३ १६ सितम्बर १८८३।

४. इन औषधों का सकेत बारहट कृष्णसिंह जी के पत्र में है—

"ओर येक पत्र आप का श्रीमान् के पास आया था जिस में सर्प, बिच्छू, ज्वर, विसमज्वर, मन्दाग्नि, बुद्धिवर्धक आदि परीक्षित्र-औसधियें लिषी थी। ... . सम्वत् १९४० आश्विन कृष्णा १० तारीष २६ सितम्बर।"

देखो प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ११७।

२—जैसी दिनचर्या[1] मै लिख आया हूं उस से विपरीत आचरण न कभी करना। किन्तु वही रात्रि के प्रात. ४ चार वजे उठना। दिन और रात में १० वजे भोजन करना दिन मे निद्रा न लेनी और रात्रि मे १०, १०॥ साढ़े दश वा ११ वजे तक शयन सदा कीजियेगा।

३—सदा छः घण्टे तक समय राजकार्य मे लगाया कीजियेगा । और जव कभी राजकार्य से अवकाश मिले तभी व्याकरणादि शास्त्र और मनुस्मृति के ३ अध्यायो का अभ्यास कीजियेगा । और व्यर्थ समय एक क्षणमात्र भी मत गमाइयेगा। जैसा कि सतरज हास्य और विनोद आदि मे मूर्ख लोग अपना अमूल्य समय खोते हैं—वैसा करना सर्वथा अनुचित है।

४—प्रातः समय योगाभ्यास की रीति से ध्यान करना। और नाम लेना आदि पुरोहित के आधीन कर दीजियेगा जिस से ध्यान करने और राज्यपालन में समय यथोचित श्रीमानो को मिले। बुद्धि, वल, पराक्रम, आयु, प्रताप वढ़ता रहे।

५—निरामय महोत्सव[2] मे निम्नलिखित कार्य अवश्य कीजियेगा। एक वेदमन्त्रो से होम। दूसरा १२५०००) सवा लाख रुपये छात्रशाला और २५०००) पच्चीस हजार रुपये स्वराज्य में अनाथ, वृद्ध, विधवा और रोगियो के पालन के लिए। और १००००) मेवाड़ मे वैदिकधर्म-प्रचार और प्राचीन आर्षग्रन्थों के छपवाने, प्रदान करने के लिए। और २०००००) दो लाख वहां के क्षत्रिय सरदारों से लेकर छात्रशाला स्थापन शीघ्र कीजियेगा। इस मे ऐसा समझिये कि जानो एक वार गवर्नर जनरल साहेव और आए थे।

६—सदा वलवान् और राजपुरुषों से सताये हुओं की पुकार यदि भोजन पर भी वैठे हो तो भोजन को भी छोड़ के उन की वात सुननी और यथोचित उन का न्याय करना । ऐसा न होवे कि निर्वल अनाथ लोग वलवान् और राजपुरुषों से पीड़ित होके रुदन करें और उन का अश्रुपात भूमी पर गिरे कि जिस से सर्वनाश हो जावे। और इन की रक्षा से सब प्रकार की उन्नति अर्थात् शरीरारोग्य आयुवृद्धि धनवृद्धि राजवृद्धि धर्मवृद्धि और प्रतापवृद्धि को सदा करते रहिये।

७—अव परमात्मा की कृपा से महाशयों का शरीर निरामय हुआ है। अव

---

१. दिनचर्या के ५१ नियम, देखो पूर्णसख्या ३९०।

२. वार्हट कृष्णसिंह जी अपने श्रावण शुक्ला २ सम्वत् १९४० (५ अगस्त १८८३) के पत्र में इस महोत्सव के होने की सूचना श्री स्वामी जी को दे रहे हैं। देखो प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ११५ । प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी का ऊपर मुद्रित पत्र महाराणा उदयपुर को १० से १५ अगस्त तक किसी तिथि को लिखा गया होगा।

इस को वीर्यरक्षणादि से सदा रोगरहित रखियेगा कि जिस से ऐहिक और पारमार्थिक सुख की सिद्धि करना सुगम होवे। और श्रीमानो के दीर्घायु होने से स्वराज्य और समस्त आर्यावर्त देश का सौभाग्य बढ़े।

८—कभी सत्य वात के करने और झूठ वात के छोड़ने में भय न करें किन्तु युक्तिपूर्वक इस वात को पूरी करें। और अपने राज्य में २५ वर्ष का पुरुष और १६ सोलह वर्ष की कन्या का विवाह करने के लिये दृढ़तापूर्वक आज्ञा दीजिये।[1] कुमार और कुमारी का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे जिस से सव मनुष्यजाति की सत्य उन्नति होवे।

९—एक विवाह से अधिक दूसरा भी विवाह कोई न करने पावे। परन्तु वह विवाह दोनों की प्रसन्नतापूर्वक होवे जिस से अत्युत्तम सन्तान उत्पन्न हों।

१०—स्वराज्य और प[र]राज्य का जो चिकीर्षित और अच्छे वुरे काम होते हैं उन को दूत द्वारा यथावत् जान कर दुष्ट कार्य कर्त्ताओ को दण्ड और उत्तम कार्य करने हारों का सत्कार यथायोग्य कीजिये जिस से उत्तम कार्य वढें और दुष्ट कर्म घट जायें।

११—जो जितना अपराध करे उसी को उतना दण्ड और जो जितना अच्छा काम करे उस को उतना ही पारितोषिक देना अधिक वा न्यून नहीं चाहे माता पिता भी क्यो न हो।

१२—जैसा कुत्तो पर अन्याय अर्थात् एक के हड़के होने और अपराध करने मे सव जाति को दण्ड देना अन्याय है इस के लिए जितना धन व्यय इस प्रवन्ध में होता है उतने धन से जितनो से प्रवन्ध हो सके उतने पुरुप हड़के कुत्ते को मारने के लिए नौकर रखिये। वे रात दिन इसी कार्य करने में तत्पर रहे। और विना अपराधियों को दण्ड मत दिलाइये।

१३—अव दशहरा निकट आया। उस में अनपराधी भैंसे वकरो का प्राण न लेकर उस के स्थान मे सिरनी मिठाई मोहनभोग लपसी आदी वलि प्रदान कीजिए। और क्षत्रियों को जो कि शस्त्र चलाना जानते हैं उन के उत्साह शौर्य धैर्य वल और पराक्रम की परीक्षा करने के लिये जगली सुअरो को वा सिंह को प्रथम पकड़ा रख के उस दिन मैदान में छोड़ शस्त्रप्रहार करने की आज्ञा दीजिये। इन को विदित तो होवे कि शस्त्र चलाना ऐसा होता है।

---

१ श्री स्वामी जी का लगभग यही अभिप्राय चिरकाल के पश्चात् भारत की सरकार ने परोपकारिणी सभा के मन्त्री महोदय श्री हरविलास सारदा जी द्वारा प्रस्तावित-सारदा एक्ट के नाम से प्रचलित किया।

१४—आरोग्य और अधिक वर्षा होने के लिए एक वर्ष मे १००००) दश हजार रुपये घृतादि जिस रीति से होम हुवा था उसी रीति से प्रति वर्ष होम कराइये। परन्तु उन मे से ५०००) पांच हजार रुपयो के सुगन्धित घृत मोहनभोग का होम वर्षा ही मे कि जिस दिन वर्षा का आरद्रा नक्षत्र लगे उस दिन से लेके विजय दशमी तक चारो वेदो के ब्राह्मणो का वरण करा एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रख के होम कराइयेगा।

सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। और इस लेख को यथावत् सफल कीजियेगा। और इस का प्रत्युत्तर शीघ्र भिजवा दीजिये। किमधिकलेखेन महामान्यवर्यतमेषु।

१५—अब कविराज जी आ गये होगे।[1] गोरक्षा के अर्थ अरजी शीघ्र देनी चाहिये। जितनी आशा लार्ड रिपन साहेब के ही समय मे इस कार्य की सिद्धी होने की है उतनी दूसरे गवर्नर के समय मे अनुमित नही है। इस कार्य कि सिद्धी करने का यत्न शीघ्र होना चाहिए ऐसी सब आर्यवरो की सम्मति है तथा मेरी भी यही सम्मति है कि यह कार्य अब शीघ्र होना चाहिये, क्योकि शुभ कार्य करने में विलंब होना उचित नही। जितनी शीघ्रता हो उतना ही अच्छा है।

रहस्य नियम

१—स्वयवर विवाह के पश्चात् कम से कम एक महीने और अधिक से अधिक ३ महीने तक ऋतुदान से पूर्व ब्रह्मचर्य सेवन पूर्वक पत्नी और पति भोजन का प्रबन्ध रक्खें। अर्थात् अति शीत अत्युष्ण, अति रुक्ष, मादक द्रव्यो का भोजन-पान छोड़ तरोष्ण मध्यस्थ गुण युक्त दुग्ध मिष्ट सुगन्ध तण्डुल गोधूम मूग उड़द दधि सद्योघृत सुसंस्कृत सुगन्धि युक्त बुद्धिवर्धक हृद्य पदार्थों का भोजन पान किया करें कि जब तक ऋतुदान समय न आवे।

२—ऋतुकाल प्रतिमास षोड़श रात्रि पर्यन्त होता है। उनमे से रजोदर्शन दिन को लेके चतुर्थ दिन पर्यन्त स्पर्श दर्शन भी परस्पर न करें। जब पांचवें दिन शुद्ध हो जावे तब यदि पुत्रेच्छा हो तो समाङ्क अर्थात् छठी आठवी दशवी द्वादशी

---

[1] संख्या १५ का लेख मासिक पत्र आर्य, भाग १३ अक ९ जनवरी १९३२ पृ० ३८९ पर छपा था। पीछे से यह अश खोया गया। प० चमूपति जी के आर्य पत्रस्थ लेखानुसार इतना अश ऋषि ने स्वहस्त से एक कागज के टुकडे पर लिखा हुआ था। पत्र व्यवहार में यह अश नहीं छपा। म० मामराज जी ने सम्वत् १९९० में ठा० किशोरसिंह जी के सग्रह की प्रतिलिपि की थी। अत हमारे पास और आर्य में यह लेख सुरक्षित रहा।

चतुर्दशी और सोलहवी रात्रि ऋतुदान के लिये उत्तम हैं। और जो कन्योत्पत्ति की इच्छा हो तो पांचवी सातवी नवमी एकादशी त्रयोदशी और पञ्चदशी तिथि प्रशस्त हैं। परन्तु इन्ही शोलह रात्रियों में दोनो पक्ष की अष्टमी चतुर्दशी पौर्णमासी और अमावास्या तिथि आवे तो उस रात्रि में भी ऋतुदान न देना चाहिये।

३—जिस रात्रि में शरीर चित्त आत्मा प्रसन्न हो उसी मे १० वजे के उपरान्त २ वजे से पूर्व ऋतु दान देके पश्चात् किंचित् ठहर स्नान कर शालम मिश्री और केशर आदि सुगन्धि युक्त परिपक्व दूध शीतल यथारुचि पी के ताबूल भक्षण कर मुख प्रक्षाल[न] करके पृथक २ शयन करें।

४—यदि पत्नी विदुषी चतुर हो तो उसी समय गर्भस्थित हुआ वा न हुआ जान लेवेगी। नही तो जव पुनः द्वितीय मास में रजस्वला न हो तव जानना कि गर्भ रहा। उस समय से आगे यावत् बालक के जन्म होने के पश्चात् दो महीने अर्थात् वर्ष व्यतीत न हो तव तक दोनो सिवाय सुभाषणादि व्यवहार के मध्य मे समागम (न) करें किन्तु पति पत्नी पूर्वोक्त प्रकार युक्ताहारविहार करते हुए ब्रह्मचारी रहैं जिससे अग्रिम सतान भी उत्तम होवें।

५—दोनो मन कर्म वचन से व्यभिचार अर्थात् अन्य स्त्री अन्य पुरुष से समागम छोड पातिव्रत्य और स्त्रीव्रत रह के धर्मार्थकाममोक्षों को सिद्ध करके आनन्दित और दीर्घायु होवें।

यदि इतने पर भी गर्भ स्थित न हो तो पत्नी एक यति वा वाल चान्द्रायण अर्थात् मध्यान्हनदि[न]में नित्य प्रति तीन २ तोले या ३६ मासे का एक ग्रास एकान्न के आठ ग्रास खावे। एक महीने अर्थात् पौर्णमासी से द्वितीय पौर्णमासी अमावस्या से २ अमावस्या और सक्रान्ति से २ सक्रान्ति तक व्रत करे। नित्य होम और भूमि में शयन करे और पति ब्रह्मचारी होकर वीर्य की रक्षा वृद्धि करे। पुनः पूर्वोक्त समय और रीति से स्थापन करें तो सभव है कि सन्तानोत्पत्ति होवे।

---

[४५]　　　　पत्र (४०४)　　　　[४३७]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

कल ऋग्वेद के पृष्ठ १७६८ से पृष्ठ १८०९ तक का पाकट रजस्टरी करा के भेजा है पहुंचेगा। यदि उनमें से पांच ५ वा १० दश मत्र शिवदयाल को भाषा वनाने के लिये दे देना और पत्र में लिख देना कि फलाने मंत्र से फलाने मंत्र तक शिवदयाल की वनाई भाषा है। परन्तु उन्ही मंत्रो की भाषा कि जिनकी शिवदयाल

बनावे ज्वालादत्त से भी बनवा के भेजना। अच्छी भाषा बनावेगा तो उनके पास भी भाषा बनवाया करेंगे। अब तक किसी का सूची छपकर तैयार हुआ वा नहीं। और आजकल क्या छपता है। सत्यार्थप्रकाश छपता है वा और कुछ। प्रयाग समाचार का छपना दो सप्ताह के लिये था पश्चात बन्द हो ही गया होगा। अब टेप आने मे कितनी देर है। जहां तक जल्दी आवे तो अच्छा है। बीच २ मे उनको चिट्ठी भेजकर तकादा किया करो। और कलकत्ते मे जो छोटे टेप हैं जिनमें भाषा छपती है वे बहुत अच्छे हैं। यदि उनमे से भी दो चार फर्म[ो] के टेप आ जाय तो अच्छा है। जो हमने तुम्हारे निजपत्र[1] के उत्तर मे पत्र भेजा है उसके सकारण हेतु लिखकर शीघ्र भेजो।

मिति श्रावण सुदि १२ सं० १९४०।[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]
जोधपुर राज मारवाड़

---

[६] पत्र (४०५) [४३८]

ओम्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो।

उस बात का स्मरण होगा कि जो तुम ने काशी मे मुझ से कहा था कि आप यंत्रालय कीजिये दो एक वर्ष मे पेंशन लेलूगा पश्चात् वैदिक यत्रालय का ही काम करूंगा। क्योकि यह आर्यावर्त देश भरका उपकार है। अब भी वही निश्चय है वा कोई दूसरा हो गया है। प्रयाग समाचार छपना बद हो गया वा नही। क्योकि दो सप्ताह की प्रतिज्ञा थी। कभी की होचुकी है। बन्द कर ही दिया होगा। टेप आने की अवधी हो चुकी वा नहीं। अब कब तक आवेगा।

और हमे आज मुन्शी समर्थदान जी को भी लिखा है कि जिन अक्षरों में भाषा छपती है वे कलकत्ते के ६ टेप बहुत अच्छे हैं। यदि वे भी कुछ मगवाये जांय तो ठीक है वा नही? और वहां किसी वकील से पूछ निश्चय कर लिखना कि मुन्शी बख्तावरसिंह पर नालिश की जाय [तो] प्रयाग में हो सकती है वा नही। क्योकि दो ही ठिकाने हो सकती है। एक जहां बात हुई हो वहां और दूसरे जहां मुद्द(ई) होवे। जब वह बात हुई थी तब यत्रालय काशी मे था अब प्रयाग

---

१. समर्थदान का निजपत्र १३-७-८३ को श्री स्वामी जी को भेजा गया। उस में अनार्य नौकरों का विषय हैं।

२ १५ अगस्त १८८३। ३ इस पत्र का मुन्शी समर्थदान का २०-८-८३ का लिखा उत्तर म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४६३ पर छपा है।

में है। सो किसी अच्छे वकील से पूछ के लिखो। और यह भी पूछ के लिखो कि नालिश फौजदारी में करना चाहिये वा दीवानी मे। मेरी समझ में और अन्य वकीलों की भी सम्मति है कि दीवानी में करना अच्छा है। सब से मेरा आशीर्वाद कह देना।

इन सब बातो का प्रत्युत्तर लिखो। श्राव० सु० १२ सं० १९४०।[1]

(दयानन्द सरस्वती)[2]
जोधपुरराज मारवाड़

---

[५] पत्र (४०६) [४३९]

ओम्

ठाकुर नन्दकिशोर जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा श्रावण सुदी १० का लिखा आया समाचार विदित हुआ। मुन्शी गगाप्रसाद बुद्धिमान् दृढोत्साही निर्भय धार्मिक निःशक था। ऐसे पुरुष का मृत्यु सुन कर जो कि उन को जानते थे शोक किस को न होगा—

(एति जीवन्तमानन्दः) यह महाभाष्यकार का वचन है, कि जीते हुए पुरुष को आनन्द प्राप्त होता है। इस लिये अशोचनीय बात पर शोक करना किसी को उचित नहीं। जो एक अशक्य बात है उस के शोक में वर्तमान और भविष्यत में हानि के सिवाय दूसरा कुछ भी फल नहीं होता। अस्तु जो हुआ सो हुआ। रहे को सम्भालो। और बड़े प्रयत्न प्रीति और दृढोत्साह से आर्यावर्त देश के परम हितकारक सभा के उद्देशो को अपने तन मन धन से पूरे करने के लिये सर्वदा उद्यत रहो। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर सब बातें अच्छी करेगा। (सत्यमेव जयति नानृतम्।) सत्य ही सर्वदा विजयी होता है झूठ कभी नहीं। इस लिये सर्वदा सत्य को उन्नति में सब जने उद्यत रहे। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिति श्रावण शुक्ला १४ शुक्रे सवत् १९४०।[3]

[दयानन्द सरस्वती][4]
जोधपुर राज मारवाड़

---

१ १५ अगस्त १८८३।

२. मूलपत्र श्री नारायण स्वामी जी के सग्रह में सुरक्षित है।

३. १७ अगस्त १८८३।

४. मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[४६] पत्र (४०७) [४४०]

ओ३म्

भाद्वावदी १—४०

(१)

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

धातुपाठ का सुचि जैसा हम ने भेजा है वैसा ही छाप दो। उस से वड़ा लाभ है। और गोवधका उपाय हो रहा है। निश्चय है कि लार्ड रिपन साहिव के समयही मे यह काम किया जायगा। और इसके फार्म नये छापने की कुछ आवश्यकता नही क्योकि हमारे पास वहुत पड़े हैं। तुम को चाहिये तो मगवा लो। और तुम ग्राहकों का रजष्टर क्यो नही भेजते। क्या अव तक मिलान नही हुआ। शीघ्र भेज दो। मुन्शी इन्द्रमणी जी [ने] जो वी दिया है वह टाइटल पेज पर छप गया है। उस मे देख लो। यदि अधिक निकले तो ले लो। न दे तो उस के नाम पर धूल डालो। यह वर्तमान महीने की १५ तारीख के पत्र का उत्तर हुआ।

और ऊपर लिखा ज्वालादत्त हमारे पास पन्द्रह दिन पहले पत्र क्यो नही भेजता जो कि पत्र हम वरावर भेज दें। और अव यह भापा भी अच्छी नही वनाता जैसी कि पहले वनाता था। जैसी कि प्रतिदिन उन्नति करनी चाहिये यह प्रति [दिन] गिरता जाता है। अव के भापा मे कई पद छोड़ दिये हैं। कही अपनी ग्रामणी भाषा लिख देता है। और (च) का अर्थ भी, और करना चाहिये। यह (भी) कर देता है।

अव १४ अगष्ट के पत्र का उत्तर। श्रीमान् महाराणा जी ने धन्यवाद पत्र के प्रत्युत्तर मे लिखा सो वहुत अच्छी वात हुइ। जो २ छपता जाय सो २ वरावर हमारे [पास] भेजते जाओ। सत्यार्थप्रकाश मे जो कोई ऐसा अनुचित शव्द[१] हो निकाल कर जो हमारे आशय से विरुद्ध न हो वह शव्द उस के स्थान मे धरना और हम को लिख कर सुचित करना कि यह २ शव्द धरे है। साहपुरे का जो वर्तमान हुआ था सो तुम्हारे पास लिख भेजा था। और मान्यपत्र की नकल भेज देंगे। और सस्कृत मे जो पत्र आया है उस साधु को हम नही जानते कि वह कैसा है। और पहले तुम्हारे निज पत्र के विषय मे लिखा था उस का उत्तर भेजो। और ग्राहकों का

१ इस का उत्तर उक्त मुन्शी जी ने ता० २४-८-८३ को पत्र न० ९३७ द्वारा दिया है। उसमें अनुचित शव्द का अभिप्राय कडा लिखा है। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४६६-६८ पर छपा है।

रजष्टर भेजो तथा जो २ पुस्तक छपे सो २ शीघ्र भेजो। और प्रयागसमाचार वन्द हो गया वा नही। और भूपालसिंह का भी जो कुछ आया है वह सव टाइटल पेज पर छपवा दिया गया है।

मिति भाद्रपद वदी १ सं० १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती।[2]
जोधपुर राजमारवाड़।

---

[१]　　　　पोस्ट कार्ड (४०८)　　　　[४४१]

[वालकराम वाजपेई अजमेर]

· · · · · क्या २ पढ़े हो और लेख कैसा है।·· ··· ·· ·

भाद्रपद कृष्ण ५ सं० १९४०।[3]

---

[४७]　　　　पत्र (४०९)　　　　[४४२]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

इसके पूर्व तुम्हारे दोनो पत्रों का उत्तर भेज चुके हैं। और जो गणपाठ के १० पुस्तक और उसके साथ भाषा भेजी सो पहुंचेगी। तुम थोड़ीसी भाषा देख लिया करो। यह ज्वालादत्त तो विक्षिप्त पुरुष है। इस का ध्यान सदा मासिक वढ़ाने पर रहता है काम चढ़ाने पर नही। यदपि मैंने सव पुस्तक गणपाठ का नहीं देखा परन्तु भुमिका के पहले पृष्ट मे दृष्टी पड़ी तो दूर २) के स्थान मे (दर २) अशुद्ध छपा है। ऐसी भाषा को तुम भी देख सकते हो। और अव यह भाषा भी अच्छी नही वनाता किन्तु घास सी काटता है। इस के नमूने के लिये एक पत्र भेजते हैं जिस की उसने भाषा वनाई है। और वड़ी भूल करी है कि जिस का पदार्थ है कुछ और भाषा कुछ वनाई है। और भावार्थ सस्कृत के अनुसार और पूरी भाषा भी नहीं वनाई

१　१९ अगस्त १८८३। मूलपत्र परोपकारिणीसभा अजमेर में सुरक्षित है।

२　इस पत्र का थोडा भाग दयानन्द ग्रन्थमाला भूमिका–पृ० १७ पर भी छपा है।

३.　२३ अगस्त १८८३, वीरवार। इस पत्र का सकेत म० मुन्शीरामकृत पत्र-व्यवहार पृ० २२० पर है।

है। तुम प्रत्यक्ष देख लो और उसके सामने दिखला दो। और छः मन्त्र की भाषा भी रोज नही बनाता। और उस पर भी यह हाल है। यदि यह प्रीति और परिश्रम से काम करता तो इस की उन्नती और हमारी प्रीति क्यो न होती। और अब भी जो अच्छा काम करेगा तो उसके लिये अच्छा होगा। यह तो एक नमूना भेजते हैं। थोड़े दिन के पश्चात् पुराणे बहुत से पत्र इसके भाषा बनाये भेजेंगे। उस मे इस के दोष सैंकड़ों दीख पड़ेंगे। बाबू विशेश्वरसिंह ने भी इस के लिये लिखा था कि इस के तीन रुपये मासिक बढ़ा दिया जाय, परन्तु यह काम भी करे। ऐसे पुरुष हमारे सामने ही काम दे सकते है। और यह भी है कि ऐसे पुरुप हमारे पास रह नही सकते। यह पत्र बाबू विशेश्वरसिंह जी को भी दिखला देना। और इस विषय में तुम दोनो जने सम्मिति करके लिखो वैसा किया जाय। इस से जो एक साधारण पुरुप जिस की दृष्टी सची हो वह भी इस से अच्छा छपवा सकता है। और एक तुम को यह लिखते हैं कि जैसा कागज गणपाठ मे लगाया है वैसा ही सब साधारण पुस्तको मे लगाया करोगे तो आगे जाकर खर्चको तगी पड़ जायगी। इस से जैसा प्रथम लगता था उसी प्रकार का लगाना चाहिये। न अति उत्तम और न अति उत्कृष्ट[निकृष्ट?]। और धातु पाठ तथा निघण्टु उणादि गण की सुचि भी बराबर उस के साथ छपे। और जो तुम पत्र लिखते हो उस मे एक महीने मे इतने फार्म फलाने २ पुस्तक के छपे अवश्य लिखा करो। और आज कल वेदभाष्य भी नही छपता। सत्यार्थप्रकाश के पत्रे भी शीघ्र २ नही मगाते हो, जितना कि हम अनुमान करते हैं। इस लिये हर महीनों के फर्मो का हिसाब लिखा करो। बाहर का काम कुछ भी मत लो। हमारे पास छपने को बहुत सी पुस्तकें हैं। तुम छापते २ थक जाओगे तो भी न चुकेगा।

ऋग्वेद का चौथा अष्टक भी पूरा हो गया। पांचवे अष्टक का एक अध्याय कल पूरा होगा और छटा मंडल आज पूरा हो गया। **परमेश्वर की कृपा से १. वर्ष में सब ऋग्वेदभाष्य पूरा हो जायगा। और एक वा डेढ़ वर्ष साम, और अथर्व में लगेगा।** और अब के सस्कारविधि बहुत अच्छी बनाई गई है। और अमावस्या तक बन चुकेगी।[1]

और हम ने कब कहा था कि निघण्टु व्याकरण के पुस्तको मे गिना जाय। वह वेदाङ्गप्रकाश मे गिना जायगा। क्योंकि निघण्टु मूल और निरुक्त व्याख्या है।

---

१ सस्कारविधि का सशोधन आषाढवदि १३ रविवार सवत १९४० को प्रारम्भ हुआ और लगभग दो मास में समाप्त हुआ।

इस लिये वेदाङ्गप्रकाश मे अवश्य गिणना होगा। और पठन पाठन की व्यवस्था में जो इस का सख्यांक हो वही टाइटल पेज और भुमिका के एक पृष्ट मे धरना।

मिति भाद्रपद वदी ५ स० ४०।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]
जोधपुर राजमारवाड़।[3]

---

[४८] पत्र (४१०) [४४३]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा २९ अगस्त का लिखा आया समाचार विदित हुआ। और जो तुमने रजिष्टर और दोनो की भाषा और सभा का कृत्य भेजा सो पहुंचा। इस भाषा को देखकर जैसा होगा वैसा लिखा जायगा। वाबू विशेश्वरसिंह सुख से यन्त्रालय में रहैं उनका घर है। **आज यहां से २४८ से लेके २७८ तक सत्यार्थप्रकाश** और १८१० से लेके १८९५ तक ऋग्वेद के पत्रे भापा वनाने के लिये भेजे हैं। पहुंचने पर ज्वालादत्त को देदेना और रसीद भेज देना। प्रथम सत्यार्थप्रकाश के पत्रे २५० तक तुम्हारे पास भेजे थे और तीन पृष्ठ रामसनेही के विषय के पश्चात धरे हैं। सो ४८–४९–५० अक घटे हैं। तुकको भ्रम न हो। परन्तु इतना अवश्य करना कि जो वहा २५० प्रष्ट हैं उसके अत और २४८ पृष्ट के आदि की सगति तुम मिला देना और २५१ के पृष्ट के आदि और जो अब २५० वा भेजा है उसकी सभी सगति मिला लेना। और ग्यारह समुल्लास की समाप्ति तक सब पत्रे भेज दिये हैं।[4] **और इसके अंत में महाराजे**

---

१ २३ अगस्त १८८३। दयानन्द ग्रन्थमाला शताब्दी सस्करण भूमिका पृ० १७, १८ पर इस पत्र का किंचित् अश मुद्रित हुआ है। वहा भाद्रवदी ६ छपा है। यह अशुद्ध है। मु० समर्थदान के उत्तर में इस पत्र की तिथि भाद्रवदी ५ ही लिखी है।

२ इस का उत्तर मुन्शी समर्थदान जी ने ता० २७-८-८३ पत्र न० ९४९ द्वारा दिया। सत्यार्थप्रकाश के ३१० पृ० तक छपने की सूचना इसी पत्र में है। देखो म० मुन्शीराम-कृत पत्रव्यवहार पृ० ४६९-७२।

३. मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

४. यहा तक का भाग Works of Maharshi Dayanand पृ० १२९ पर छपा है।

युधिष्ठिर से लेके यशपाल तक आर्य राजाओं की वंशावली पीछे से लिखी है। और उसके पृष्ठो के अंक ठीक २ हैं। वैसे ही छाप देना।

और प्रथम तुम जो काम अकेले करते थे उसके लिये अब तीन हो। सो उगाही और तकाजे मे आलस्य नही करना परन्तु स्मरणार्थ लिखा है। और जो ठाकुर भूपालसिंह ६ अंक विना मूल्य लेगये हैं और तुम्हारे नोटिस के पहुंचने पर तुमको इतना भी नही की फिर उनका मूल्य न देना वा तुम न लो तो नियम टूटता है। और उन्होंने जो २ रुपये जब २ दिये है टाटल पेज पर बरावर छप गये हैं। उस से अधिक न दिये न छपे हैं। और अगष्ट महीने मे कितने फार्म छपे सो लिख भेजो। यहां वर्षा हो रही है और दो तीन दिन से यहां वर्षा अच्छी होती है। अनुमान है कि यह प्रयाग आदि मे भी हुई होगी। सबसे हमारा आशीर्वाद कह देना।

भाद्र बदी ३० सम्वत् १९४०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

जोधपुर (मारवाड़)

मैनेजर भारतमत्र श्रीकृष्ण खत्री ने एक आर्य पचांग नामक ग्रन्थ बनाना चाहा है। उस मे आर्यधर्म के प्रयोजन जिस २ स्थान पर समाज हैं जिस दिन आरभ हुआ और जिस दिन वार्षिक उत्सव होता है और मत्री का नाम उसमें लिखाना चाहते हैं। सो हमने तुम्हारा नाम लिख दिया है। यदि वह तुम्हारे पास पत्र भेजे तो जहां तक तुम जानते हो पूर्वोक्त विषयो मे सहाय देना। और जो उन्होने समाजस्थ पुरुषो की सख्या और हमारा इतिहास भी लिखना चाहा हैं सो तो अब इस समय उनको नही मिल सकता। और समाजस्थ पुरुषो की संख्या बतलाने मे कुछ लाभ नही। इसलिये पूर्वोक्त विषयों में जो सहाय मांगे तो दे देना क्योकि वह प्रसिद्ध समाचार का सम्पादक है और उसकी प्रीति भी अधिक दीखती है चाहैं स्वार्थ वा परमार्थ से।[2]

---

१ १ सितम्बर १८८३।

२ इस पत्र का हस्ताक्षर के पश्चात् का भाग हमारे सम्पादित प्रथम भाग में सख्या ४९ पर छपा था। अब सारा पत्र प्राप्त हुआ है। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर के पास सुरक्षित है।

[३]　　　　पत्र (४११)　　　　[४४४]

ओ३म्

श्रीयुत बिहारीलाल जी आनन्दित रहो

विदित हो कि भाद्र कृष्ण १२ द्वादशी बुधवार के दिन का लिखा तुमारा पत्र आया समाचार विदित हुआ।

इस विषय के नियम

१—वहां पं० गौरीशकर जी का १ प्रथम माहवारी मासिक क्या था—और जब राज मे नौकरी थी तब क्या मासिक था। जब अगरेज़ मे नौकरी थी तब क्या मासिक नियत था।

२—और अब कितना मासिक उन को देना चाहिये और कितने मासिक मे उन का निर्वाह हो सकेगा।

३—और जितना मासिक उन को देना होगा जिस मे तुम कितना दोगे और कितने महीने वे अन्यत्र घूमेंगे और कितने महीने वहां रखना चाहते हो।

४—और जब वे बाहर घूमेंगे वह रेल का भाड़ा और खाने पीने का खरच समाज से मिलेगा। और जैपुर में रहेंगे तो अपना मासिक मे से खावेंगे। जब बाहर घूमेंगे तब समाज से रेल का भाड़ा खाने पीने का खरच मिलेगा।

५—इस में हमारा विचार यह है कि ८ आठ महीने बाहर घूमें और ४ चार महीने जैपुर मे रहा करें। इस मे तुमारी क्या सम्मति है। इन सब का प्रत्युत्तर शीघ्र भेजो। जब भेजोगे उस के पश्चात् हम उसका प्रबन्ध ठीक २ करेंगे। और हम अपनी सम्मति भी लिखेंगे। पश्चात् और इस प्रबन्ध के समय के प्रथम प० गौरीशकर जी को २०।१५ दिन हम अपने पास बुलालेंगे, जब कि जोधपुर से अजमेर को आवेंगे। इस लिये इस पत्र का उत्तर प० गौरीशंकर से और सभासदो से सम्मति लेकर शीघ्र भेजो।[1] और सब से मेरा आशीर्वाद कह देना।

यहां का समाचार पश्चात् लिखेंगे। और यहां वर्षा बहुत अच्छी हो गई और हो रही है।

सवत् १९४ [०] मि० भा० शु० १।[2]　　　　[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़

१　इस पत्र का उत्तर श्यामसुन्दर लाल जी मन्त्री वैदिकधर्म सभा सवाई जयपुर ने दिया—देखो म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १०२—१०६।

मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२　२ सितम्बर १८८३।

[७] पत्र (४१२) [४४९]

ओ३म्

बाबू विशेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो—

बख्तावरसिंह के समय के रजिस्टर सब प्रयाग मे हैं। और चिट्ठी पत्र तथा हिसाब किताब कुछ मेरठ में भी है। यदि अब तक न आया हो तो मंत्री आर्य समाज मेरठ बाबू आनन्दी लाल से मंगा कर वकीलों को दिखला देओ। और प्रबन्ध शीघ्र करो। कलकत्ते के टेप कितने मंगाना चाहते हो। और उसके कितने रुपये मन लगेंगे। जब कि प्रथम आये थे तब ४०) रुपये मन के दाम लगे थे। इस विषय का सब हाल लिखो। यदि मुबई के टेपो से कार्य निकल सके तो फिर मंगाना कुछ आवश्यक नही।

और यह जो सभा का प्रबन्ध हुआ है सो बहुत अच्छा है। एक को अधिकार देने में खराबी होती है। और एक को अधिकार न देना। इस सभा में तुम लोग तथा सुन्दर लाल जी और हमारी भी पूर्ण सम्मति है। इस लिये जो प्रबन्ध इसका तुम विचारते हो वही हमने विचारा है। क्योकि स्वतन्त्र अधिकार देने में हानि ही हानि होती है। और लाभ कुछ भी नहीं होता। और तुमने लिखा कि धन के कार्य मे किसी को स्वतंत्रता न देनी चाहिये वह सच है। क्योकि धन के काम मे स्वतत्रता से लाखो आदमियों मे से कोई ही रह सकता है। और यहां धन का ही केवल काम नहीं किन्तु पुस्तको का ही बड़ा भारी माल है। जैसे हरिश्चन्द्र ने और बख्तावरसिंह ने चोरी से वेदभाष्य के ग्राहक कर लिये थे। और छपवाने मे भी हम को प्रसिद्धि करता था १००० हजार और छपवाता था २०००) तथा १५०० डेढ़ हजार। और बाहर का चोरी से छपवा लेना। उस का हिसाब कुछ न देना। यदि दिया तो हिसाब मे लिया १०० सौ और लिखा २० वीस। इत्यादि बहुत प्रकार के छापेखाने मे काम रहते हैं।१दो मनुष्यो को जो तुम सभा मे बढ़ाना चाहो हमारी ओर से बढ़ा दो। और पडित जी की भी सम्मत्ति लेलो। और तुम प्रसन्नता से यन्त्रालय मे रहो तुमारा घर है। और मुन्शी समर्थदान ने भी हम को लिख भेजा है वह भी तुमारे रहने से राजी है।

जो पिछला रुपया बाकी है उसका तगादा करना विचारा है सो अच्छी बात है। परन्तु मैं शोक करता हूं कि जिस काम मे मुशी समर्थदान अकेले रहते थे तब वसूल और तगादा भी होता था। और जब से प० शिवदयाल और रामचन्द्र रक्खे हैं तो भी तगादा और वसूल अच्छा नही होता। यह अपने देश का अभाग्य

है क्योंकि जितने अधिक होगे उतना विरोध करेंगे। और काम ठीक २ नही करते। इस लिये इन तीनों को समझा दो कि अपना २ काम प्रीति और उत्साह से करें। विशेष कर प० शिवदयाल और रामचन्द्र को समझाना। समर्थदान तो समझा ही हुआ है। इस कमेटी के विषय में कोई निन्दा लिखे हम कभी नहीं सुनेंगे। हां जो कुछ हमको लिखितव्य होगा सो प० सुन्दरलाल जी को लिखा करेंगे। ऐसा विचार मत रक्खो कि इस प्रेस से मैं कुछ न लू। क्या घर के माल में से घर के आदमी यथोचित नही लेते। जो काम धार्मिक उत्तम मनुष्य से वनता है वह धन से कभी नहीं होता। जो तुम से यन्त्रालयकी उन्नति होगी वह निश्चय है कि लाखों रुपये खर्च करने से भी न होगी। क्योंकि सब पदार्थ संसार में सुलभ हैं परन्तु शुद्ध मनुष्य का मिलना दुर्लभ है। क्या तुम इस द्रव्य को बुरा और अधर्म का समझते हो जो नही लेओ। यह सब उत्तर लिखो। वड़ो २ और छोटों २ का कुछ नियम नहीं है। यह तो अपने आत्मा के साथ है। क्योकि वड़े २ तो विगड़ कर तेल के वड़े हो जायं और छोटे २ सुधर कर वड़े हो जाते हैं

अब वाकी का तगादा कर जहां तक हो सके धन इकट्ठा करो। और पश्चात् २०००) का सामग्री मंगवाओ। यदि उस में कुछ न्यूनता होगी तो हम दे देंगे। यदि यह सब प्रवन्ध हो जाय तो पेन्शन ले कर यहीं तुम रहना। और जो मासिक पाते हो वही यहा मिले। और १०) रुपये वे भी लिये जायं तो उस में से प्रति मास बचाते २ वहुत सा धन हो जायगा। और यह निश्चय है कि जहां २ जिस २ की उन्नति हुई है वह सव सभा ही से हुई है। इस लिये इस की भी उन्नति सभा ही से होगी—इस से यह वहुत अच्छा प्रवन्ध है। और सवसे हमारा आशीर्वाद कह देना। यहां वर्षा वहुत हुई और हो रही है। निश्चय है कि वहाँ भी हुई होगी।[1]

मिति भाद्र सुदी २ सवत १९४०।[2]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

---

१. मूलपत्र श्री नारायण स्वामी जी के सग्रह में सुरक्षित है।

२. ३ सितम्बर १८८३

[९] पत्र (४१३) [४४६]

ओ३म्

चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।

भीमसेन के दो पत्र आजकल हमारे पास यहां आये हैं। विदित होता है कि धक्का खाने पर इस को कुछ बुद्धि आई है। अब आप लिखिये कि जब से यह वहां आया, तब से उसका वर्त्तमान पोपलीलां का हुआ वा अच्छा। इस लिखने का प्रयोजन यह है कि फिर भी वह हमारे पास नौकरी करना चाहता है। और हम को उस के पूर्व चरित्रों से पूरा विश्वास नही होता कि यह जैसा लिखता है कि अब मैं सब बात समझ गया। आप से विरोध कभी नही करूगा। आप की सब बातो मे मेरा दृढ़ विश्वास हो गया, अब मै आप की आज्ञानुसार सदा चलूगा इत्यादि। परन्तु वह छोकर बुद्धि हैं। यदि उसको रखलें पुनः अनुचित काम करे निकालना हो तो अच्छी बात नही। अब आप लिखिये इसमे आप की क्या सम्मति है। क्योकि मैंने उस के बहुत से उलटे चरित्र देखे हैं। और इस मे अच्छे भी गुण हैं परन्तु बुरे गुण ऐसे प्रबल हैं कि अच्छे गुणो को मात कर देते हैं। यदि परमेश्वर की कृपा से उस का स्वभाव सुधर गया हो तो बहुत अच्छी बात है। परन्तु जब तक इस पत्र का उत्तर आप भेजेंगे तिस पश्चात् मेरी जैसी सम्मति होगी वैसी आप को और भीमसेन को लिख दूगा। देखिये कि बदरी आप को और मुझ को कैसा भलामानस दीखता था। और कैसा दुष्ट निकला। इसलिये उत्तम धार्मिक पुरुपार्थी मनुष्य का सहसा मिलना असम्भव नही तो दुर्लभ अवश्य है। बड़े भाग्य और परमेश्वर की कृपा से उत्तम पुरुष को उत्तम पुरुष मिलता है। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। मुझ को निश्चय है कि आप पक्षपात रहित यथार्थ लिखेंगे।

मिति भाद्र सुदी ४ सवत् १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती[2]
जोधपुर राज मारवाड़

---

१ ५ सितबर १८८३।

२. मूलपत्र श्री० विष्णुलाल एम० ए० के पास बरेली में था। वहीं से हमने इस की प्रतिलिपि ली। इस पत्र का उत्तर देखो म० मुशीराम सम्पादित 'पत्रव्यवहार पृ० ९४, ९५ पर।

[१२] पत्रांश (४१४) [४४७]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][1]

ईसाई स्त्री के विषय में लिख रहे हैं।[2]

५ सितम्बर १८८३। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

[१३] पत्रांश (४१५) [४४८]

[प० मुन्नालाल जी, अजमेर]

.... आप ने मन्त्री का पद क्यो त्याग किया। क्या फिर इसे ग्रहण नहीं कर सकते। ... ..

७ सितम्बर १८८३ से पूर्व।[3]

दयानन्द सरस्वती

---

[११] पत्र (४१६) [४४९]

ओ३म्

श्रीमन्माननीयवर श्रीयुत महाराज राजाधिराज शाहपुरेश आनन्दित रहो।

रजिस्ट्री पत्र आपका गत दिन आया, समाचार विदित हुआ। सरदार जवाहरसिंह जी के विषय मे आपकी जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये। मैंने भी उनको कई बार मासिक के गड़ वड़ न करने के विषय में लिखा था कि ऐसा न करना चाहिये परन्तु वैसा ही हुआ। इसमें [१][4] एक बात विचारणीय है कि सरदार

---

१ देशहि० के रजिस्टर से।

२ यह स्त्री सीता बाई थी। पहले ईसाई थी, फिर अजमेर समाज ने शुद्ध की। इस के विषय के पत्र म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार में पृ० १७८, १७९, तथा १९३–१९५ तक हैं।

३ ये पंक्तिया प० मुन्नालाल जी के लम्बे पत्र से हम ने बनाई हैं। देखो म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १८८–१८९।

४ शाहपुरा से हमारे पास आई मूलपत्र की प्रतिलिपि में यह अक नहीं है। मूलपत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

जवाहरसिंह जी मेरे सम्बन्ध से बुलाये आए हैं। यह प्रथम कार्य हुआ है। यह [आगे] आप लोगो और जिसको [मैं] बुलाना चाहूंगा उन दोनो को अविश्वास का कारण होगा। अस्तु जैसा हुआ वैसा ही हो। और छात्रशाला का उद्योग निष्फल हुआ यह शोक की बात है। यहा [७] सात दिन से वर्षा होती है सब मारवाड़ में। फिर भी होने का सभव है। और अकाल का नाम उड़ गया। यहां सब प्रकार से प्रसन्नता है। यहां का समाचार पश्चात् लिखेंगे।

छीतरदत्त जी आदि और स० जवाहरसिंह जी को भी मेरा अशीर्वाद कहियेगा। वहां वर्षा हुई वा नही। सो समाचार लिखियेगा।

स० १९४० मि० भादवा शु० ५ गुरु दिन।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१२] पत्रांश (४१७) [४५०]

[श्रीयुत महाराजाधिराज शाहपुरेश ......][2]

. . ..

सब बातें ससार मे मिल जाती हैं, परन्तु ऐसे मनुष्य का मिलना असम्भव नही तो अति कठिन तो अवश्य है।...... ....

मिति भाद्रपद सुदी ५ बृहस्पतिवार सवत् १९४०।[3]

---

१. यह तिथि प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ३९ में नहीं है। वह प्रतिलिपिमात्र से छापा गया है जो ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में थी। ६ सितम्बर १८८३।

२. यह पत्र राजाधिराज श्री शाहपुराधीश को लिखा गया होगा। भाई ज्वाहरसिंह उन दिनों श्रीशाहपुराधीश के प्राईवेट सैक्रेटरी थे। प्रतीत होता है, नौकरी छोड़ते समय वह इस पत्र की नकल अपने साथ ले आये। ऊपर मुद्रित अश भाई ज्वाहरसिंह ने "रद्दे बुतलान" के पृ० ६८, ६९ पर छापा है।

३. ६ सितम्बर १८८३। इन ही के नाम का इसी तिथि का पत्र पूर्ण स० ४४९ पर छपा है। उस में यह अश नहीं है। कदाचित् यह दूसरा पत्र ही होगा। अथवा क्या भाई जवाहरसिंह ने इसे स्वय बना लिया?

[९]　　　　पत्र (४१८)　　　　[४९१]

ओम्

श्रीयुत वहारट कृष्ण जी आनन्दित रहो।

ज़यकर्ण जोधपुर में आये। उन से वहां का सब वर्त्तमान सुन के अत्यानन्द हुआ। परन्तु थोड़ी सी बातें लिखता हूं। अब निम्नलिखित बातें श्रीमान महाशयों के दृष्टिगोचर करा देना। अन्य किसी को नहीं।

१-प्रातःकालका भ्रमण करना सदैव हुआ करे। उसमें विच्छेद कभी न किया जाय

२—भोजन का जो समय दिनचर्या मे १० दश बजे से लेके ११ ग्यारह बजे के पूर्व २ करना लिखा है वैसा ही सदा रखना चाहिये।

३—सभा में बैठ कर जैसे दिनचर्या में लिखा है वैसे बराबर न्याय करना चाहिये। उस में आलस्य कुछ भी न हो।

४—जो उस रोग को नि शेष होने मे श्रीमानो को कुछ भी सन्देह रहा हो तो जो इन्दोर के डाकतर साहब का विचार किया है वह उत्तम है। वह डाकतर अनुमान से विदित होता है कि अच्छा है। परन्तु औषधी करते समय जो उन के नीचे डाकतर गणपतराव जी और डाकतर भवानीसिंह जी भी दोनों साथ रहे।

५—मुझ को निश्चय है कि यदि सर्वाधीश वाल्टर साहब से इस बात की समनि के लिये पूछेंगे तो वे समति अवश्य दे देंगे। पूछने की रीति यह है—(अब औषध हो गया और रोग भी निवृत्त हो गया परन्तु इस की परीक्षा के लिये अर्थात् अब यह रोग निशेष हो गया वा नहीं इन्दोर के डाकतर को बुलाकर परीक्षा कराना मैं चाहता हूं। इस में आप की क्या अनुमति है)। पूछते ही वे समति दे देंगे। जब उन की समति हो जाय तब उसी समय उस डाकतर साहिब गणपतराय और कविराज जी को उदयपुर में शीघ्र बुला लेना चाहिये।

६—यदि अब तक किंचित् उस रोग के निःशेष होने मे शका है तो उस का पथ्य थोड़ा समय पूर्ण रीति से रखना चाहिये विशेष कर ब्रह्मचर्य। और आगे के लिये भी सदा ऋतुगामी रहैं कि जिस से न कोई रोग आवै। और निरन्तर धर्मार्थ काम मोक्ष राजकार्य की उन्नति होकर आर्यावर्त देश की उन्न[ति] होकर सदा आनन्द बढ़ता रहे। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से ऐसा ही होवे।[1]

भाद्रपद शुक्ला ८ संवत् १९४०।[2]

---

१. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में था। इस की लिपि को ऋषि ने स्वहस्त से शोधा है। उस की प्रतिलिपि म० मामराज जी ने ५ जनवरी १९३३ को की। प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १२२-१२३ तथा १७३ पर भी छपा है।

२. ८ सितम्बर १८८३। जोधपुर से उदयपुर भेजा गया।

[२] पत्र (४१९) [४५२]

ओम्

॥ प्रसिद्ध समाचार ॥

श्रीमद्राजराजेश्वरमहाराजाधिराज श्री जोधपुरेश आनन्दित रहो।

अब मैं यहां बीस पच्चीस दिन रहना चाहता हूं यदि कोई नैमित्तिक प्रतिबन्ध न होगा। मैंने यह समझा है कि यहां आकर आपका धन व्यय व्यर्थ कराया क्योंकि मुझ से आप का उपकार कुछ भी नही हुआ। और आप की ओर से मेरी सेवा यथोचित होती रही। जब श्रीमान गुण-ज्ञाता हैं इसी लिये जब २ मुझ को अवकाश मिलता है तब २ पत्र द्वारा कुछ निवेदन कर देता हूं। उस मेरे निवेदन को देख सुन कर आप प्रसन्न होते हैं इसी लिये तीसरी बार लेख करने के लिये मुझ को समय मिला।[1]

१—जैसा राजकार्य आजकल आप कर रहे हैं वैसा ही यावत् शरीर रहे तावत् करते रहियेगा। इस को जहां तक हो सके वहां तक अधिक २ करते जावें कभी न छोड़े। क्योंकि न्याय से राज्य का पालन करना ही आप लोगो का परम धर्म है।

२—आप अपने पुत्र जो कि महाराजकुमार हैं उन को खाने पीने आदि से सकोचित मत रखियेगा। सदा पाव भर गाय के दूध मे मासा भर सोंठ को मिला छान थोड़ा सा गरम कर ठंढा करके ब्राह्मी औषधी के साथ पिलवाते रहिये जिस से महाराजकुमार के बुद्धि बल पराक्रम आयु और विद्या बढ़ती रहे।

३—जो एक रत्न आप के बन्धु महाराजे प्रतापसिंह जी हैं उन को कभी राज्यकार्य से पृथक् मत कीजियेगा। क्योंकि ऐसा पुरुष आप और राज का हितैषी दूसरा कोई नही दीखता।

४—इस देश मे वर्षा प्रायः न्यून होती है। इस के लिये यदि मेरे कहे अनुसार एक २ वर्ष मे १००००) दश हजार रुपयो का घृतादि का नित्यप्रति और वर्षा काल मे चार महीने तक अधिक होम करावेंगे वैसे प्रति वर्ष होता रहै तो सम्भव है कि देश मे रोग न्यून और वर्षा अधिक हुआ करै।

५—आप मे औदार्यादि प्रशंसनीय बहुत गुण हैं। इन को यदि राजनीति मे प्रवर्त रक्खें तो देश का सौभाग्य और श्रीमन्महाशयो की पृथिवी भर मे उत्तम कीर्ति फैल जावे।

---

१. पहला पत्र पूर्णसख्या ४३२ पर है। यह तीसरा पत्र है। दूसरा पत्र प्राप्त नहीं हो सका।

॥ गुप्त समाचार ॥

१—जो २ श्रीमानों के प्रशसनीय गुण कर्म स्वभाव हैं उन के कलंक नीचे लिखे हुए काम हैं।

२—एक वेश्या से जो कि नन्नी कहाती है उस से प्रेम। उसका अधिक संग और अनेक पत्नियो से न्यून प्रेम रखना आप जैसे महाराजों को सर्वथा अयोग्य है।

३—जैसे हडके कुत्ते के दांत वा लाल लगने से उस का दोष छूटना अति कठिन है। वैसे ही वेश्या मद्यपान चौपड कनकौवे आदि मे व्यर्थ काल खोना और खुशामदी लोगों का सग राजाओ के लिये महा विघ्नकारक, धन आयु कीर्ति और राज्य के नाश करने वाले होते हैं। मुझ को वडा आश्चर्य है कि आप वड़े बुद्धिमान् और शौर्यादि गुण युक्त होकर इन से पृथक् क्यो नही होते।

४—जैसे आप इस नन्नी रंडी के घर को जा ने उस की माता आदि रोगिणी कोदेखते हैं और जैसे एक किसी अपने नौकर मुसलमान के लड़के के विवाह मे घोड़े की लगाम पकड़ के पैदल चले थे वैसा निन्दाकारक काम करना आपको शोभा कभी नही देते। किन्तु इन के वदले जैसे महता विजयसिंह जी विमार थे जाकर देखते और जो अपने मारवाड़ के सरदार और भाई वेटे हैं जो कि राजा और राज्य की उन्नती चाहने वाले हों उन के पुत्रो के विवाह में पैदल चलना आदि करते रहैं तो सर्वदा प्रशंसा लाभ और उन्नती होती रहै।

५—जव २ मै किसी के मुख से अथवा समाचार पत्रों मे आप लोगों की निन्दा सुनता या देखता हू तव २ मुझ को वडा शोक होता है। यदि आप लोग ऐसे निन्दा के काम न करें तो क्यो निन्दा होवे। हम लोगों को अगरेज आदि के सामने शरमिन्दा क्यों होना पड़े। वड़े महाराज जो कि श्रीमानो के पिता जी थे यदि वे वहुविवाह पासवान् और वेश्या आदि को न रखते तो आप लोग भी कभी ऐसा काम न करते। ऐसे ही जैसे आप लोगो का व्यवहार महाराजकुमार आदि देखेंगे इनहीं मे झुकेंगे। क्योंकि मनुष्य को दूसरे का गुण लेना कठिन और दोष लेना सहज है।

६—आप महाराजकुमार की शिक्षा के लिये किसी मुसलमान वा ईसाई को मत रखियेगा। नही तो महाराजकुमार भी इन के दोष सीख लेंगे। और आप के सनातन राजनीति को न सीखेंगे। न वेदोक्त धर्म की ओर उनकी निष्ठा होगी। क्योंकि वाल्यावस्था में जैसा उपदेश होता है वही दृढ़ हो जाता है। उस का छूटना दुर्घट है।

७—महाराजकुमार के संस्कार सब वेदोक्त कराइयेगा। २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रख के प्रथम देवनगरी भाषा और पुनः संस्कृत विद्या जो कि सनातन आर्ष ग्रन्थ हैं जिनके पढ़ने में परिश्रम और समय कम होवे और महालाभ प्राप्त हो इन दोनो को पढे। पश्चात् यदि समय हो तो अंग्रेजी भी जो कि ग्रामर और फिलासफी के ग्रन्थ हैं पढाने चाहियें।

८—जैसे आपने गणेशपुरी[1] आदि जो कि केवल बुरी चाल चलन सिखलाने हारे हैं उनका दुराचार देखके उन का सदा त्याग रक्खा है वैसे वेश्या आदि मीठे ठगो से भी पृथक आप क्यो नही रहते। जैसे मुसलमान और ईसाई आदि के टोपी पैजामा मुडे जूते कोट पतलून् टोपी आदि के धारण से आप अपने उत्तम विचार से पृथक रहे हैं वैसे ही हजारह गुणो मे वेश्यासंग आदि मे आप अपने अमूल्य समय को मत खोवें। आप का शरीर ऐसे क्षुद्र काम और विषयासक्ति और आराम के लिये नही है किन्तु वड़े परिश्रम न्याय पुरुषार्थ से लाखह मनुष्यों के हितार्थ आप लोगों का शरीर है। देखिये आप मनुस्मृति के सप्तम अष्टम और नवम अध्यायों मे कि राजाओ के लिये क्या २ कर्तव्य और अकर्तव्य लिखा है। मुझ को निश्चय है कि आप इन करड़ी और कल्याणकारक वातो को सुन कर प्रसन्न होगे। अलमतिविस्तरेण महामान्यवर्येषु।[2]

---

[१४] पत्रांश (४२०) [४९३]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][3]

…एक कहार उनका [स्वामीजी का] ५५०) का असवाव लेकर भाग गया है।[4]
१३ सितम्बर ८३। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

१. गणेशपुरी शाक्त मतानुयायी तथा नन्ही रंडी का गुरु था और विष सम्बन्धी षड्यन्त्र में भी सम्मिलित था।

२. अनुमान से ८ सितम्बर १८८३ को यह पत्र भेजा गया होगा। मूलपत्र की प्रतिलिपि ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में थी। उसे ऋषि ने स्वहस्त से शोधा हुआ है। उसी से म० मामराज जी ने ३० दिसम्बर १९३२ को गुरुकुल काङ्गड़ी में जाकर प्रतिलिपि की। प० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार के पृ० ९२-९७ तक भी छपा है।

३. देशहि० के रजिस्टर से।

४. यह भी अभिप्रायमात्र है। इस पत्र का कमलनयन जी का २५-९-८३ का उत्तर म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १९१-१९३ तक छपा है।

[१९] पत्राभिप्राय (४२१) [४९४]

[कमलनयन मन्त्री आ० स० अजमेर][1]

सीता स्त्री के विषय में लिखते हैं।[2]

१५ सितम्बर १८८३। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

[८] पत्र (४२२) [४९५]

॥ ओ३म् ॥

वाबू विश्वेश्वरसिह जी आनदित रहो !

तुमने लिखा सो ठीक है। इस में चार समाज जो कि प्रयाग के निकट हैं उन से इस वात का नियम कराना चाहिये। हा मेरठ समाज कुछ उन तीन समाजों से दूर है। तथापि रेल से कुछ दूर नहीं। एक फरुखावाद, दूसरा मेरठ, तीसरा दानापुर और चौथा लखनऊ। इन चार समाजो के मन्त्रियों को इस हमारे पत्र की नकल के साथ लिख भेजो। दो वर्ष में एक वार पारी आवेगी। क्योंकि छ. २ महीने के पश्चात् किसी चार समाजो मे से जिसकी पारी हो वहां से धार्मिक उत्तम पुरुष आया करें। वह अन्तरङ्ग सभा की सम्मति से आवे। और वह हिसाव में [भी?] अच्छी तरह से समझता हो। तथापि धार्मिक और देशोन्नति में प्रीति रखने वाला हो। चाहे समाज धर्मार्थ वैदिक यन्त्रालय का कितना ही सहाय करे और वास्तव में समाजो ही के प्रताप से वैदिक यन्त्रालय वना है तथापि समाज से जो कोई पुरुष आवे उसके आने जाने और जब तक वहां रहे तवतक खाने पीने का खरच भी वैदिक यन्त्रालय से दिया जाय। और वर्ष २ में वैदिक यन्त्रालय का आय व्यय और पुस्तकों का जमा खर्च भी एक छोटे से पुस्तकाकार मे छप के स्वीकार पत्र के [साथ] सव सभासदो और सव आर्यसमाजो में भी भेजा जावे। इस से वहुत अच्छी वात रहेगी। और जो कुछ हिसाव में गलती दीखे वह वैदिक यन्त्रालय की प्रवन्धकर्तृ प्रयाग सभा को तद्द्वारा मुझको और पडित सुन्दरलाल जी को और उन चार समाजों को विदित किया जाय। उसका उचित प्रवन्ध करने के लिये प्रयाग की सभा को अपनी सम्मति पूर्वक मैं वा

---

१ देशहि० के रजिस्टर से।

२. देखो म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १९३, १९५। इस स्त्री के शुद्ध होने पर अजमेर के ईसाइयों में वहुत विप्लव हुआ था।

अन्य सब लिख भेजें। और वह सभा यथावत् प्रबन्ध किया करे। इससे निश्चय है कि प्रबन्ध अच्छे प्रकार चलेगा। और मुन्शी समर्थदान के २७ सत्ताईस तारीख अगष्ट का उत्तर यही है कि उन्होंने कापी मागी है और भीमसेन के पत्र की नकल भेजी थी और कापी आज ही भेजते। आज रविवार है रजिष्टरी नही होती। इसलिये कल भेजेंगे।

मिति भाद्र सुदी १५ रविवार सम्वत् १९४०।[1]

जोधपुर राज मारवाड़।[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[४९] पत्र (४२३) [४५६]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो !

आर्यराज वशावली के पत्र तुमने भेजे सो पहुंचे। उसी समय हम सत्यार्थप्रकाश १२ समुल्लास को भेजना चाहते थे। इसलिये हम शोध नही सके। और तुम इसका जोड़मात्र शोध लेना। जो राजाओं के आयु के वर्ष, मास, दिन हैं उनको वैसे ही रखना। क्योंकि अन्य पुस्तक से भी हमने इसको मिलाया है जो कि यहां जोधपुर में एक मुन्शो के पास था। और इसके साथ मोहनचन्द्रिका १९–२० किरण भेजते हैं। परन्तु यह भी अशुद्ध छपा है। इसलिये नीचे और ऊपर के जो जोड़ हैं वही शुद्ध कर लेना। आयु के वर्ष, मास, दिन नही। दिन वैसे ही रहने देना जैसे कि हैं। २७२ से लेके ३१९ तक १२ समुल्लास सत्यार्थप्रकाश का छापने के लिये भेजते है। जो जोधपुर के मुन्शी की पुस्तक से मिलाई हैं वह भी भेजते हैं।

मिती आ० वदी १ स० १९४०।[3]

जोधपुर राज मारवाड़ [दयानन्द सरस्वती][4]

---

१. १६ सितम्बर १८८३।

२ यह पत्र फर्रुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० २०४ पर भी छपी हुई प्रतिलिपि से छापा गया है। मूलपत्र श्री० नारायण स्वामी जी के सग्रह में सुरक्षित है।

३. १७ सितम्बर १८८३, सोमवार।

४. मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा। हमने यह पत्र आर्यधर्मेन्द्रजीवन से लेकर छापा था।

[६] पत्र (४२४) [४५७]

ओ३म्

चौधरी जालिम सिंह जी अनन्दित रहो।

पत्र आपका आया, समाचार विदित हुआ। आप के लिखने अनुसार उस का अपराध क्षमा करके बुला लेंगे वा कहीं अन्यत्र भेज देंगे।[1] परन्तु उस को आप भी समझा देना। और एक कहार की हम को जरूरी है। यदि मिल सके तो आप लिखिये। और आज भीमसेन के पास भी पत्र भेज दिया है। और हम अब यहां से शीघ्र अन्यत्र जावेंगे। और जब निश्चित जाने का दिन होगा तब आप के पास पत्र भेज देंगे॥[2]

सम्वत् १९४० मि० आश्विन कृ० ४ गुरुवार—।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

जोधपुर राजा मारवाड़।

---

[१९] पत्र (४२५) [४५८]

ओ३म्

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि आप को मैंने बहुत बार कहार के लिये लिखा था। तुम ने कुछ ध्यान नहीं दिया। उस का फल यह हुआ कि एक जाट जिले भरतपुर से दो कोश पूर्व की ओर ग्राम बिरोना साहबराम पोजदार का बेटा और कुन्दन का छोटा भाई कल्लू नाम वाला शाहपुरे में ऐसे ही रख लिया था। वह चोरी कर के भाग गया है। यदि भरतपुर में आप का विशेष संबंध हो तो उस के द्वारा उस चोर का निश्चय करवायिये। और फिर भी लिखते हैं कि कोई कहार तलाश करके भेजोगे तो अच्छा होगा।

---

१. भीमसेन को।

२. ये पत्र इस पते पर भेजे गये थे। चौधरी जालिमसिंह जी गाम रूपनी, जिले एटा थाने धूमरी० एटा०। इन पत्रों के उत्तर के लिये देखिए, म० मुंशीराम सम्पादित पत्र व्यवहार' पृष्ठ ९२-९५।

३ २० सितम्बर १८८३। इस पत्र की प्रतिलिपि हम ने बरेली से ली।

१—आवश्यक बात जिस पर आप को अवश्य ध्यान देना है सो यह कि जो कुछ नगद रुपये मेरे पास वा वैदिक यन्त्रालय मे वर्तमान खर्च से अधिक रहे। वह आप लोग निम्नलिखित छ महाशयो की सभा के प्रवन्ध में रहे । और जव २ उस मे से खर्च करने का आवश्यक होवे तव २ मैं वा वैदिक यन्त्रालय के लिये वही से खर्च के लिये जाया करे । और इस धन को ॥) सैकड़े व्याज पर जहां कि आप लोगो की सभा की और मेरी सम्मति हो वही रक्खा जावे । यदि आप लोग निम्नलिखित सब सभासद उचित समझें तो सेठ निर्भैराम जी के दुकान में जमा रहे। और वे ॥) आना सैकड़े व्याज भी देते हैं। परन्तु इस की सम्भाल सभा की ओर से एक मन्त्री और एक प्रधान होवे । और सभा उस धन की रक्षा और उन्नती मे सदा ध्यान रक्खे । क्योकि मै अपने पास शिवाय एक महीना भर के खर्च के अधिक नहीं रखना चाहता । जो अधिक हो वह सभा की सम्मति से लाला निर्भयराम जी के यहां जमा हुवा करे और खरच भी वहां ही से उठा करे । जव तक मेरा शरीर है तव तक तो कुछ चिन्ता नही परन्तु पश्चात् आप लोगों को अर्थात् सभा को परमार्थ के लिये वड़ा पुरुपार्थ करना होगा । कि जिस से आर्यावर्त की उन्नति मे ये सव पदार्थ लगा करें । और मेरे पश्चात् जो स्वीकारपत्र मे प्रधान और सभासद है वे सव इस सभा के सभासद गिने जांयगे। और उसी स्वीकार पत्र के नियम के अनुसार व्यय भी किया जायगा ।

॥ सभा का नाम ॥

आर्यहितैषिणी—

इस के सभासद

१—एक आप
२—दूसरा लाला जगन्नाथप्रसाद
३—लाला निर्भयराम
४—लाला कालीचरण
५—राव वहादुर पण्डित सुन्दरलाल
६—वावू आनदीलाल मन्त्री आर्यसमाज मेरठ
७—सातवा मै ।

इस सभा का दूसरा काम यह भी रहे कि छटे २ महीने कोई प्रतिष्ठित सभासद वा कोई योग्य पुरुष सभा को सम्मति से भेजा जावे। वह वैदिक यन्त्रालय के धन पुस्तक आदि की जांच पड़ताल करे। उस का सव हिसाव छोटे पुस्तकाकार मे छपवा के स्वीकारपत्र के सभापति आदि और मुख्य २ समाज के पास भेज

दिया जावे। और मध्य मे भी वैदिक यन्त्रालय की सभा से जो कि सात पुरुषो की वहां नियत हुई है पत्र द्वारा भी पूछ सके। इस के बिना देखिये अभी च० ४००—५००) रुपयों की हानि हुई है। और कुछ इधर उधर से ११५) और ३००) मैंने अपने हाथ से लाला रामसरणदास मेरठ में जमा किये थे वे गडबड़ मे रहे। इसी प्रकार ऐसे बहुत से व्यवहार हैं कि जिन के लिये यह सभा का प्रबन्ध होना आवश्यक है। और शरीर सब के अनित्य हैं। इस से यह काम शीघ्र होना चाहिये। पत्र पहुंचते ही इस का प्रत्युत्तर लिखें क्योंकि मैं यहां से अब शीघ्र जाने वाला हूं। परन्तु पांच ५ दिन पहले एक पत्र और भेजूगा। यदि इतने मे उत्तर यहा आजाय तो अच्छा है। और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिति आश्विन कृष्ण ४ स० १९४०।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]
जोधपुर राज मारवाड़

---

[१६] पत्र (४२६) [४५९]

[कमलनयन मन्त्री आ० स० अजमेर]

कहार की चोरी के विषय में।

२१ सितम्बर १८८३। जोधपुर[3]

दयानन्द सरस्वती

---

[५०] पत्र (४२७) [४६०]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो।

आज संस्कारविधि के पृष्ठ १ से ले के ४७ तक भेजते हैं। सम्भाल के छपवाना। और एक तीन पत्र का एक पत्र है। वह जिस प्रकार जोड़ा है उसी प्रकार छपेगा। वह गडबड न हो इस लिये जोडा है। इसीलिये तीनो का एक अंक रक्खा। और हमने भीतर प्रतीक के अंक पृष्ठांक अर्थात् फलाना मन्त्र वा फलाने

---

१ २० सितम्बर १८८३।

२ मूलपत्र लिफाफे सहित हमारे संग्रह में सुरक्षित है। सन् १९२७ में म० मामराज जी फरूखाबाद से खोज कर लाये थे।

३. देशहि० के रजिस्टर से।

कर्म फलाने पृष्ठ मे करना अपने लिखे पृष्ठों के अनुसार अक लिखे है। परन्तु लिखे और छपे एक से पृष्ठांक नहीं होगे। इसलिये छपे पृष्ठो के अनुसार वे पृष्ठांक बना लेने। और विषय सूचीपत्र भी छपे पीछे वनेगा। और एक सामग्री सूचीपत्र अर्थात् फलाने संस्कार में फलानी फलानी सामग्री सग्रह की जायगी, जैसा कि इस सस्कारविधि मे लिखा है। और अवकाश मिला तो सामग्री सूचीपत्र तो हम ही यहां से लिख भेजेंगे। अव हम यहां से अमावस्या के दिन रवाना हो के आश्विन सुदी ४ चौथ को मसूदे में पहुंच जायगे यदि वर्षा का प्रतिवन्ध नही हुआ। और जो प्रतिबन्ध हुआ तो तुमको चिट्ठी लिख देंगे। और सत्यार्थप्रकाश जो कि १३ समुल्लास ईसाइयो के विषय मे है वह यहां से चले पूर्व अथवा मसूदे पहुंचते समय भेज देंगे। और मुम्बई से टैप आया वा नही। और यदि नही आया तो प्रत्युत्तर भी आया वा नही।

मिति आश्विनबदी ८ सोमवार सम्वत् १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़।[2]

---

[६] पत्र (४२८) [४६१]

ओ३म्

ठाकुर नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आपका सभा की ओर से पडित नदकिशोर जी के विषय का मिति भा० सु० ९ लिखा आया समाचार विदित हुआ। पत्र के उत्तर मे विलंव इस लिये हुआ कि कुछ समाजो का अभिप्राय विचारणीय विशेष था इस लिये शिघ्रोत्तर नही दिया गया। इतने मे आर्य स० अजमेर की जैसी समति आई है कि उक्त पंडित जी को सब समाजो के उपदेशक नियत करना चाहिये वैसी ही सब समाजों की समति निश्चत जानो। मेरी भी समति यही है कि किसी एक समाज पर इनके मासिक का भार नही दिया जायगा। और यदि तुमारी सभा मे उन के सहाय करने का समय न हो तो कुछ चिंता नहीं। तुमारे समाज को इतना ही भार रहेगा कि जिस समय जैपुर से अन्य समाज को पडित जी जायेंगे तब रेल का खरच दूसरे समा[ज] तक का देना होगा। और जिस २ समाज में जायेंगे

---

१. २४ सितम्बर १८८३।

२ मूलपत्र परोपकारीणी सभा अजमेर में होगा।

और जितने दिन रहना होगा व्याख्यान देंगे और सभासदो को उचित समय में पढावेंगे भी, और मासिक इनका २०) रुपये रहेगा । क्योकि २ महीने तक अपने घर का खरच खायेंगे। दश महीने घूमने में उन का खरच खाने पीने में समाज की ओर का लगेगा। इनके मासिक मे से कुछ खरच न होगा किन्तु २२०) रुपये उन के घर के खरच के लिये समझना चाहिये । और एक वर्ष मे दो महीने की छुट्टी अर्थात् तुम्हारे समाज मे और अपने घर में रह के उपदेश वा पढ़ाया करें। छुट्टी चाहे तो दो महीने की इकट्ठी ले ले अथवा छ. २ महीने में एक २ महीने की। और इनके मासिक के लिये ऐसा प्रवन्ध किया जायगा कि प्रति मास उनके घर पे २०) रुपये पहुंचा करेंगे। चाहे किसी समाज की ओर से जाय वा हमारे पास से। इस का प्रवन्ध हम कर देंगे जैसा उचित समझेंगे। फिर इसमें कुछ शंका न रहेगी। जिस समाज से जिस समाज तक जाना होगा वह समाज रेल का व्यय और मार्ग मे खाने पीने का भी वही समाज दे दिया करेगा। इतना खरच उठाने में समाज कोई भी निर्वल नही है प्रत्युत सैंकड़ो रुपयो का खरच यदि ऐसे २ दश पडित भी हो तो भी समाज प्रवन्ध कर सकते हैं परन्तु जब समाज स्वयं समझ लेवेंगे कि पंडित जी एक वर्ष में सब समाजों मे एक फेरा लगा आवेंगे पश्चात् चाहे छोटे से छोटा समाज क्यों न हो इन का सत्य उत्साह और वक्तृत्व ऐसा है कि वड़े प्रसन्नता के साथ इनका खरच उठा लेंगे। और यदि ऐसे २ पडित और जैसे स्वामी सहजानन्द तथा आत्मानन्द सरस्वती जहां जाते हैं वहां प्राचीन समाज को आनन्द और नूतन समाज नियत होते जाते हैं। उपदेशक मडली के लिये मेरठ समाज तथा लाहौर समाज ने भी कुछ धन सचय किया है और महाराज राजाधिराज शाहपुरेश ने भी ३०) माहवारी नियत किये हैं परन्तु उस में यह नियम किया गया है कि दो उपदेशक हमारी ओर से रक्खे जायं। चाहे १५) १५) के दो चाहे एक २०) का वा १ एक १०) का रक्खा जावे। यह नियम भी पालन करना आवश्यक है । इस लिये इस पत्र को देखते ही इन सब वातों का स्वीकार हो तो प्रत्युत्तर शीघ्र भेजो। अव हम यहां से संवत् १९४० आश्विन वदी ३० अमावस्या के दिन चलके आश्विन सुदी ४ चौथ को अर्थात् ५ अकतूवर सन १८८३ को मसूदे पहुंच जायगे। यदि पडित जी को स्वीकार होगा तो मसूदे मे उन को बुला लेंगे। और सब समाजो में विदित कर दिया जायगा कि पं० गौरीशकर जी को वैदिक मत का उपदेशक नियत किया है। उस के सब नियमपूर्वक हो जायगा और दो महीने जैपुर के समाज में रहेंगे। उन दो महीनो के दश १०) रुपये जैपुर

का समाज दिया करे अर्थात् उन का २५) पच्चीस रुपये माहवारी बना रहेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

संवत १९४० मिति आ० वदी ८।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़।

---

[९] पत्र (४२९) [४६२]

ओ३म्

श्रीयुत शास्त्री छगनलाल जी तथा वृ[द्धिचन्द जी] आनन्दित रहो।

आज एक रजिस्ट्री पत्र श्री[राव साहव के] पास भी भेजा है। निश्चय है कि समय पर दोनों पहुंच जायेगा। आप को विदित किया जाता है कि हम यहां से संवत १९४० आश्विन वदी ३० अम्मावस्या सोमवार के दिन अर्थात अक्टूबर तारीख १ को इहां जोधपुर से चलकर बुद्ध अर्थात आश्विन सुदी २ तदनुसार अक्टूबर तारीख ३ को मुम्बई से नयेनगर को रात्रि में मेल आती है उसी मे आयेंगे। नयेनगर के स्टेशन पर उतरेंगे। इस लिये आप लोग नयेनगर को प्रतिपदा के दिन एक रथ, एक एक्का और एक असवाव की गाड़ी और जो हाथी अच्छा चलता हो तो हाथी भी भेज देना। और यदि हाथी भेजो तो एक्का मत भेजना। और घाटी के नीचे कि जहां तक बग्गी आती है वहां बग्गी भेज देना। [पहले] का सा प्रबन्ध न हो। किन्तु रेल आने के स[मय से] घटा दो घटा पहिले से सवारी आके रतु ······ और साथ दो सवार और दो चार आदमी पहरे वाले भेज देना। हम नये नगर से सीधे मसूदे चले जावेंगे। और जिस मकान में हमारा ठहरना हो वह भी शुद्ध कर और सब सामग्री कर रखना। और दो चतुर पुरुष सवारी के साथ नये नगर मे भेजना। उन मे से एक सवारी के पास रहे कि जो उक्त मिति की मुम्बई से आने वाली रेल के समय स्टेशन पर सवारी ले के खड़ा रहे। और एक········· मुगु की तत की रेल मे नयेनगर से रात्रि की रेल में बैठा और प्रात काल खार्ची स्टेशन पर आके स्टेशन मास्टर जो जोधपुर के सरदारमल मास्टर का भाई है उनसे कहदे कि आज स्वामी जी आवेंगे। और उनको

---

१ २४ सितम्बर १८८३। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

लेने के लिये [हम आये हैं।] इतना कहते ही उनको प्रीति में रख लेगा।·········
··· · ·वाके दिन उपस्थित रखो।

मिति आश्विन वदी ९ सोमवार सवत १६४०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़[2]

---

[१] पत्र (४३०) [४६३]

अजमेर

मास्तर झालावाड़ के राजराणा जी

झालावाड़ के अतालीक जो भाग गये उसका हाल संक्षेप से झालावाड़ से समाचार मंगवाया था सो हाल यह है कि लफटट लौंग[3] साहेब ३॥ साढ़े तीन वर्ष तक अतालीक रहे। जीती खर्च वा अजमेर खर्च श्री राजराणा साहेब बहादुर का अताली[क] के सपुर्द रहता था किन्तु नित्यप्रति के व्यय के लिए नगद रुपैये १७०००) राज की उसके पास था और रुपये १२०००) सेठ मूलचन्द्रजी वा गणे[श]दास आदि साहुकारो का पहिले से लेना था। और रुपैये २०००) हजार का जेवर श्री राजराणा साहेब का जो उसी रात धावाई हरलाल की मार्फत वास्ते देखने के मगाया यह सब लेकर अकेला रात की रेल मे अजमेर से चला गया साहब लोगों का कहना है कि उसका पता नही है कि वह कहा गया और अब वह कहां है।[4]

उपदेश

१—सदा पक्षपात छोड़ के अभ ·· · के साम्ने उपदान लेने की चेष्टा कभी न करनी चाहिये।

---

१. २४ सितम्बर १८८३। परन्तु वदी ९ को मगलवार और २५ सि० है।

२. कोष्ठों और विन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। इस पत्र का उत्तर प० छगनलाल ने आश्विन कृष्णा ११ सवत् १९४० को दिया। देखो प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ६७। मूलपत्र अथवा उसकी प्रतिलिपि परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

३ लौंग साहव का कुछ वृत्तान्त प० कमलनयन शर्मा मत्री आर्यस० अजमेर ने अपने पत्र ता० १७ जून १८८३ में श्री स्वामी जी को लिखा है। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्य० पृ० १६९ पर देखें।

४. मूललेख ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था, उसमें तिथि आदि नहीं लिखी है। प० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १४४ पर छपा है।

२—सेना मे सुशिक्षित अधिष्ठाता आर्य जनो को रखना।

३—छात्रशाला।

४—हास्य और वेश्यानृत्य पासवान् आदि से समागम कभी न करना।

५—आबू एजंट और सीमा के व्यवहार मे को गोल पासवान स्वार्थी राजद्रोही.मूर्ख को न रखना किन्तु बड़े विद्वान् धार्मिको को रक्खे।

६—सर्वदा उद्युक्त आलस्य रहित दीर्घ सूत्री कभी न हो।

७—कभी अर्थी प्रत्यर्थी से लोभादि मे फस कर अन्याय न करे न करावें यदि जिसका सत्य न्याय हो वह विना प्रसंग भेंट करे तो भी उन से कहे कि न्याय करना हमारा निज काम है इतने [पर] भी प्रसन्नता से देवें तो लेवे।

८—वेदविरोधी की जाल से प्रजा को बचावे।

९—सदा ऋतुगामी स्वदाररत हो इस से भिन्नो को मा बहिन और कन्या के सदृश माने।

१०—शरीर राज्य ऐश्वर्य विद्या धर्म को सर्वदा वढ़ा[या करे]

११—वेश्यागामी दुर्व्यसनी, दुष्ट व्यसनो का सग कभी न करे। सदा भ्रमण के लिए एक पुरुष और दूत

१२—धर्मार्थोंपरि

१३—गोविषय

१४—छापा खानादि

१५—किसी को अपना भेद कोई अपना छिद्र न जाने।

१६—जो धर्मदाय वा पारितोषिक दिया हो जिस लिये उसका उसी के अर्थ नियुक्त रखना

१७—किसी की अर्जी सुन कर निष्फल न करनी किन्तु उसका यथावत् विचार करके जीत हार तय करना ही चाहिये।

१८—सरदार और पण्डित ब्रजनाथ वा अन्य कोई योग्य पुरुषो को सीमा प्रवंध[क] करना चाहिये।

१९—जितनी पृथ्वी स्वराज्य की दूसरे राज्य मे दवी है उस के लिए अपील शीघ्र अवश्य होनी चाहिये।[1]

---

१. यह उपदेश श्री स्वामी जी ने पेन्सिल से लिखा है। प्रतीत होता है कि यह पहले पत्र (झालावाड वाले) के साथ सम्बद्ध है। मूललेख ठाकुर किशोर सिंह जी के सग्रह में था। म० मामराज जी ने ता० ३ जनवरी सन् १९३३ में प्रतिलिपि की। हमने उसी से शुद्ध छापा है। प० चमूपति जी सम्पादित पत्र व्यवहार पृ० १४५–१४७ पर कुछ अशुद्ध छपा है।

[६]　　　　　　　　पत्र (४३१)　　　　　　　　[४६४]

ओ३म्

श्रीयुत वहारट किसन जी आनंदित रहो

अव हम यहां जोधपुर से सम्वत् १९४० मिति आश्विन वदी ३० अमावास्या सोमवार को अर्थात् सन १८८३ तारीख १ अकतूवर को रवाना हो के जिले अजमेर राज मसूदा—मे तारीख ४ अक्तूवर आश्विन शुदि ३ तृतीया वृहस्पतिवार को पहुंचेंगे। और यही समाचार कविराज श्यामलदास जी को भी लिख भेजा है। और यहां का समाचार वहुतसा आपको पहुंच भी गया होगा। और पश्चात् मसूदे से लिखेंगे। और इस पत्र का उत्तर ठिकाना मसूदा जिले अजमेर राजपूताने में भेजियेगा।

मि आश्विन वदि १० वुध सम्वत१९४०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़

---

[५]　　　　　　　　पत्र (४३२)　　　　　　　　[४६५ [

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत कविराज स्यामलदास जी आनदित रहो—

अव हम यहा जोधपुर से संवत् १९४० मिति आश्विन वदी ३० अमावास्या सोमवार को अर्थात् सन् १८८३ तारीख १ अक्तूवर को रवाना हो के जिले अजमेर राज मसूदा में तारीख ४ अक्तूवर आश्विन सुदि ३ तृतीया वृहस्पतिवारको पहुंचेंगे। और यही ममाचार श्रीमानों के पास भी वाहरट किसन जी के द्वारा भेज दिया है। और यहां का समाचार आप को वहुत सा पहुंच भी गया होगा। और पश्चात् मसूदे से लिखेंगे। और (जयपत्तनस्य कार्यस्मरणं वर्तते न वास्मिन्कार्यसिद्धिकरणे विलवो नैव कर्तव्य इति।) और नेत्र अरुग्ण हो गये वा नही ? क्या

---

१ ता० २६ सितम्बर १८८३। मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के सग्रह में था। प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १७४ से लिया गया।

श्रीमान भी चित्तौड़ गढ़ मे पधारेंगे वा नही। और इस पत्र का उत्तर ठिकाना मसूदा जिले अजमेर राजपूताने मे भेजियेगा—

मिति आश्विन वदी १० सम्वत् १९४०।[1]

{ —————— }

जोधपुर राज मारवाड़[2]

---

[१७] पत्रांश (४३३) [४६६]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर][3]

पहली अकटूवर को जोधपुर से मसूदे जावेंगे।

२७ सितम्बर १८८३। जोधपुर दयानन्द सरस्वती

---

[४] पत्र (४३४) [४६७]

ओ३म्

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो।

(१) यहां ओषधी का एक पत्र जिस मे चोतिस ओषधियां हैं, जिस मे से कई परीक्षित और कई अपरीक्षित है, सो भेजते हैं। आप सम्भाल लीजिये और जो किसी मे शंका रहे तो पूछ लीजिये।

(२) आज सन्ध्या को उसी पूर्वोक्त काम के लिए मुन्शी जी को भेज दीजिए।

(३) एक चमड़े की बेग जो कि उस चोर ने दो ठिकाने से काट दी है यदि किसी कारीगर से एक दिन मे सुधरवा दें तो आप के पास भेज देवें। परन्तु विलम्ब एक दिन के सिवाय न हो तो, अर्थात् शनिवार को अवश्य मिल जाय। यदि ऐसा न हो सके तो आगे बनवा लेंगे।

---

१. २६ सितम्बर सन् १८८३।

२. मूलपत्र ठाकुर किशोरसिंह के सग्रह में था। प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४९ पर छपा है।

३. देशहि० के रजिस्टर से।

(४) यहां से पाली तक सवारी का प्रवन्ध जैसा आप ने किया हो वैसा किसी पुरुष द्वारा वा पत्र लेख से मुझ को आज विदित कर दें। सवारी का प्रवन्ध ऐसा होना चाहिये कि जैसे पहिले और तो सव सवारी ठीक थी परन्तु असवाव की गाड़ी के वैल विगार के थे, वहुत पीछे रह जाती थी। अव के ऐसा न होना चाहिये किन्तु सवारी और असवाव की गाड़ी वरावर चलें और वैल अच्छे जुतवाने चाहियें कि सवारी के वरावर चले जायें।

(५) अमरदान जी के मुख से सुना कि महाराजे प्रतापसिंह जी ने अमरदान जी से कहा कि हम वारह घण्टो मे पाली को पहुंचादेंगे सो आप पूछ के उत्तर लिखिये कि वह क्या सवारी होगी।

(६) जो मेरे साथ के मनुष्य और पुस्तकादि असवाव जावेंगे उस के साथ आप के सुपरीक्षित दो सवार और एक वा दो मेरे साथ। तथा असवाव के साथ पहरा अच्छा भेजना चाहिये जैसा कि आप के पूना जाने के पश्चात् मुरदावली और एक दो अच्छे सिपाही का पहरा यहां विना आठ दिन की वदली के रक्खा था, उस का प्रतिफल चोरी हुआ, इसलिये पहरा और सवार भेजना चाहिये, जो की होशियारी से पाली तक अच्छे प्रकार पहुचाए। यह मैंने आप को स्मरण दिलाने के लिये लिखा है। निश्चय है कि आप स्वय अच्छा प्रवन्ध करेंगे। इन सव वातों का प्रत्युत्तर आज ही मेरे पास भेज दीजिए॥

(७) और जो सन्ध्या का अनुवाद अग्रेजी का गुटका आप ले गए थे वह भिजवा ही दीजिए। अलमतिविस्तरेण वुद्धिमद्वर्येषु।

मिति आश्विनवदी ११ वृहस्पतिवार सम्वत् १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राजमारवाड़[2]

यह औषधियों का खरड़ा श्रीमान् योधपुराधीश और महाराजे प्रतापसिंह जी को भी दिखला देना।[3]

---

१ २७ सितम्वर १८८३।

२ मूलपत्र रावराजा जी के पास था। वहीं से इसकी प्रतिलिपि प्राप्त हुई थी।

३. इसी पत्र की प्रतिलिपि ठाकुर किशोरसिंह के सग्रह में थी। उसी से प० चमूपति जी ने पृ० १०३–४ तक यह पत्र छापा है। उस में तेतीस औषधिया ही लिखि हैं। हस्ताक्षर से नीचे का लेख तथा तिथि उस में नहीं है।

[५१] पत्र (४३५) [४६८]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

एक भूमिका का पृष्ठ और ३२० से लेके ३४४ तक तौरेत और जबूर का विषय सत्यार्थप्रकाश का भेजते हैं सम्भाल लेना। आश्विन वदी ८ सोमवार सम्वत् १९४० को संस्कार विधि के पृष्ठ १ से लेके ४७ तक भेजे हैं पहुंचे होगे और पहुंचने पर रसीद भेज देना। बाकी तुम्हारे पत्रो के उत्तर वा समाचार पश्चात् लिखेंगे।

मिति आश्विन १२ शनि सम्वत् १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राजमारवाड़.

---

[९] पत्र (४३६) [४६९]

ओइम्

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो

अब तक सवारी का आपने क्या प्रवन्ध किया? इसका हाल अब तक मैंने कुछ भी नहीं पाया। यदि आप से डाक का वन्दोवस्त न हो सके तो चार सवारी और बढ़ा देनी होगी। २ सांढियें, एक बड़ा रथ कि जिसमें मै अच्छी तरह बैठ के जासकू और एक रथ, अथवा हाथी, अर्थात् जितनी सवारी आती समय थीं उतनी ही होगी, तब निर्वाह होगा; क्योकि आज हरद्वार के पास के दो आदमी और आगए हैं। सब की गिनती यह है।

अर्थात् सब सवारी इस प्रकार से करेंगे तो अच्छा होगा। तीन रथ एक, सेजगाड़ी १. दो ऊट २, और एक हाथी १, अथवा ४ चौथा रथ, एक पहरा जिस में छः जवान और सतवां हवलदार और दो सवार। इसी प्रकार का पत्र मैंने आप के पास भेजा था। और तीन पत्र गत रविवार के दिन जिन को आज़ सात दिन हुए अमरदान के हाथ भेजे थे वे भी पहुंचे होंगे जिन में से एक श्रीमान् जोधपुराधीश, दूसरा महाराजे प्रतापसिंह जी और तीसरा आप के पास।

---

१. २९ सितम्बर १८८३। आर्यधर्मेन्द्रजीवन से लिया। मूलपत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

यह इसे लिए आप को चिताया था कि आप सहज मे प्रवन्ध करलें। और जब मुन्शी दामोदर दास आवे तब इन का प्रबन्ध सब करा दीजिये। और कल ४ बजे सन्ध्या के मेरे पास उपरिलिखित सवारी आदि आजायें कि जिन को मैं देख लू पश्चात् विदत किया जाय। क्योकि परसों यहां से यात्रा अवश्य होगी। और यह पत्र महाराजे प्रतापसिंह जी को भी सुना दीजिए। अलमतिविस्तरेण माननीयवरेषु ॥

मिती आश्विन वदी १३ शनौ सं० १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

---

[६] पत्रांश (४३७) [४७०]

प० छगनलाल द्विवेदी मसूदा... .....

....

आश्विन वदी १३ को वर्षा बहुत हुई।[2] इस कारण अभी ८-७ दिन नहीं आना होगा। और आने के पहले सूचना की जायगी।[3]

सभवतः ३० सितम्बर=आश्विन वदी १४

---

(१८) . पत्रांश (४३८) [४७१]

[कमलनयन मन्त्री आर्यस० अजमेर][3]

रजिस्ट्रि चिट्ठी के विषय में।

१ अक्तूबर १८८३ जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

---

१ २९ सितम्बर १८८३। मूल पत्र रावराजा तेजसिंह जी के पास जोधपुर में था।

२. २९ सितम्बर १८८३। ३ प० छगनलाल के आश्विन सुदी ४, सवत् १९४० अर्थात् ५ अकतूबर सन १८८३ के पत्र में अनूदित।

३. देशहि० के रजिस्टर से।

[१] **मनिआर्डर फार्मांश[1]** [४७२]

ऋषि दयानन्द सरस्वती के अन्तिम हस्ताक्षर

Acknowledgment

No. 307 Date 9/10/ 1883.

For Rs 13 As 6

Signature of the Payee } दयानन्द सरस्वती

Date of delivery ता० ११ अक्तूवर 188[3]

This acknowledgment will be signed either by the payee or
f the office of delivery, and will be returned to the
receipt for money paid but an owledgment
oney order obtained the

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-वैदिकधर्मपुनःसंस्थापक-वेदोद्धारक-
आर्षग्रन्थप्रचारक-नवभारतनिर्मातॄणां परमराजनीतिज्ञ-सहिष्णुप्रवर-
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनां प्रशिष्येण श्रीयोगि—
लक्ष्मणानन्दस्वामिनां शिष्येण अमृतसरवास्तव्य
श्रीचन्दनलालात्मजेन इतिहासविद् भगवद्दत्तेन
सम्पादितः
ऋषिदयानन्दसरस्वतीपत्रविज्ञापनसंग्रहः
समाप्तः।

---

१. मनिआर्डर फार्म का यह टुकडा महाशय मामराज जी ने रायबहादुर प० सुन्दरलाल जी (पोस्ट मास्टर जनरल) प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय के पुत्र प० देवीप्रसाद जी दीक्षित आगरे वालों से ता० २५ अप्रैल सन् १९२७ को बडे यत्न से प्राप्त किया था। इस टुकडे का ब्लाक चित्र प० घासीराम एम ए सम्पादित ऋषि के जीवनचरित्र में लगवा दिया गया था।

२. ऋषि के उपरोक्त हस्ताक्षर मनिआर्डर फार्म के टुकडे पर हैं। यह मनिआर्डर उनके शिष्य स्वामी ईश्वरानन्द सरस्वती ने नगर पानीपत से पुस्तकों के लिए जोधपुर भेजा था। देखो म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० २६।

मूल परिशिष्ट

[२१] विज्ञापनपत्रमिदम्[1] [४७३]

सब सज्जन लोगो को विदित हो कि प० स्वामी दयानन्दसरस्वती जी महाराज सवत १९३५[2] कार्तिक शुक्ल १३ गुरुवार को पुष्कर में आकर नाथजी के दरीचे अर्थात् जोधपुर के घाट पर ठहरे हैं। जिस जिस सज्जन को सनातन वेदोक्त धर्मविषय में कहना वा सुनना होवे सत्य पुरुष उक्त स्थान मे जाकर और समागम करके सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वेद और प्राचीन शास्त्रो के विषय मे सम्भाषण करें।

सब मनुष्यों को अत्यन्त आवश्यक है कि अति पुरुषार्थ से सत्यासत्य का निर्णय करके उससे सब मनुष्यों को जानकार करें। क्योंकि यह मनुष्य जन्म अति दुर्लभ, धर्म के सेवने और अधर्म के छोड़ने परमात्मा की भक्ति और परमानन्द भोगने के लिये है। इस लिये जो शुभ काम कल करना हो आज ही करें जिससे सब मगलकारी बना रहे ॥ इति॥

---

[१] कार्ड (४३९) [४७४]

जैसराज गोटीराम [जी आनन्दित रहो]।

मुनशी बखतावर सिंह · वार को[3] कलकत्ते रवाने हुए। जब [वह आप] के पास पहुंचें तो मेरा यह पत्र उनके [हवा]ले कीजिये।

मुनशी साहब—

एक रोयल प्रेस तो आप लेंहिगे परन्तु एक छोटा प्रेस भी जिस से प्रूफ उठाने का काम लिया जाता है अवश्य लेना चाहिये। और यह सब सामग्री

---

१ मासिक पत्र भारतसुदशाप्रवर्तक, फरुखाबाद, न० ३१ पृष्ठ १६, १७ जनवरी सन् १८८२ से लिया गया। प० लेखरामकृत—जी च के पृष्ठ ४१५ पर भी छपा है।

२ ७ नवम्बर सन् १८७८। भारतसुदशाप्रवर्तक में भूल से सवत् १९३८ छप गया है। देखो पत्र पूर्णस० १०५ व १०६।

- पृ० १०० पर विज्ञापन स० ८ छपा है। उसके पश्चात् इसकी स० ९ चाहिये। तिथिक्रम से इसे पूर्णस० १०५ के पश्चात् पढें। मूलपरिशिष्ट से पहले २० विज्ञापन छप चुके है। यह २१वा है।

- ३. बिन्दु वाला स्थान नष्ट हो गया है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है। बनारस से भेजा गया।

अमृत [बाजार] पत्रिका के सम्पादक की सम्मति से लीजियेगा क्योंकि वे इस विषय के जानकार हैं। चीज़ अच्छी और कीमत वाजिब दिलावेंगे। यहां एक बंगाली का प्रेस, टाइप के अक्षर, केस आदि सब चीज बिकाऊ है। हम दो एक दिन मे उनको देख भाल कर यदि वह अच्छे और काम के लायक होंगे तो ख[रीद लेंगे]

२३ दिस० ७९ ई०।[1] [दयानन्द सरस्वती][2]

[कार्ड पर उर्दू तथा देवनागरी मे निम्नलिखित पता है]

कलकत्ता अफीम का चौराहा जुगल किशो[र]

विलासराय की कोठी मे जैसराज गोटी राम के पास

---

[६२] पत्रांश (४४०) [४७५]

[मुंशी समर्थदान मुम्बई]

तुम सब काम उठाकर बनारस चले आओ।[3]

[लगभग ता० १७ जनवरी १८८० काशी]

---

[१] उर्दू पत्र (४४१) [४७६]

चौधरी लक्ष्मणदास जी आनन्दित रहो।[4]

बाद नमस्ते आ के आपने जो पापोश पेशतर भेजा था वह भी बड़ा था। यह तो निहायत वड़ा व चौड़ा है। देखिये इसमे आप का आठ आने पारसल व चार

---

१ मार्गशीर्ष सुदी १० सम्वत् १९३६ मगलवार।

२. यह कार्ड म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को स्वर्गीय लाला रामशरण दास जी रईस मेरठ शहर वालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र लाला परमात्माशरण जी के साथ खोज कर प्राप्त किया। मूलकार्ड हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

पूर्णसख्या १६० के पश्चात् पढें।

३ श्री प० कालूराम जी रामगढ के नाम मुंशी समर्थदान जी ने ता० २० जनवरी १८८० को मुम्बई से एक पत्र लिखा था। उसमें अगली सूचना है—स्वामी जीका पत्र आज आया है उन्होंने लिखा है कि "तुम सब काम उठाकर बनारस चले आओ।"

उक्त पत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्ण स० १६२ के पश्चात् पढें।

४. चौधरी लक्ष्मणदास अमृतसर निवासी के सम्बन्ध में पृ० १७७ पर टिप्पण २ देखो।

आने रजिस्ट्री मे फजूल सर्फ हुआ। अगर मालगाड़ी में आता तो शायद कम खर्च होता। पापोश तो हर जगह उमदा किसम के दस्तयाव हो सक्ते हैं। अब वदून हमारे मगवाये कोई चीज भेजने की तक्लीफ न उठाइयेगा। फकत। वाकी हाल वनारस का वदस्तूर है। होर कोई पडत शास्त्रार्थ के लिये मुस्तइद नही हुआ। जो कुछ आइन्दा हाल होगा लिखेंगे। फकत।

मुअर्खा २८ जनवरी सन् १८८०।

[दयान———[1]

---

[११] पत्र (४४२) [४७७]

मुशी वखतावर सिंह जी आनन्दित रहो[2]

कल एक पत्र आपके पास भेजा है पहुंचा होगा। आज यहां आर्यसमाज का आरभ होगा।[3] फिर दो दिन और व्याख्यान देंगे। बुधवार के रोज व्याख्यान देंगे वा न देंगे परतु रहेंगे यही। बृहस्पति[वार] के प्रात काल कान्हपुर कम्पू को जायगे।[4] खरबूजे यहा अब तक चले ही नही ठीक २। और जो चले हैं वे पूर्ववायू से फीके भी हैं जैसे कि काशी मे। रामाधार वाजपेयी से हमने कह दिया है कि जब अच्छे आने लगैं तब तुम्हारे पास भेज देंगे।

पडित इन्द्रनारायण के पास नीचे लिखे हुए पुस्तक भज देना—

ऋग्वेद का अक आठवा। दशवा	१ सत्यार्थप्रकाश
८ । १०	१ सस्कारविधि
यजुर्वेद का अंक। आठवां। दशवां। वारहवा	१ वर्णोच्चारण शिक्षा
८ । १० । १२ ।	१ सस्कृत वाक्य प्र०
वहां रह गये हैं सो सेठ सेवाराम कालूराम	१ भ्रान्ति निवारण
की दूकान मे भेजदेना कान्हपूर मे।	१ आर्योद्देश्यरत्नमाला

---

१. इस पत्र की उर्दू प्रतिलिपि म० मामराज जी ने मेरठ निवासी लाला रामशरण दास जी के पत्रों में से जुलाई सन् १९४५ में खोजी। प्रतिलिपि हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० १६३ के पश्चात् इसे पढें।

२. पत्र, लेखक ने लिखा है और श्री स्वामी जी ने अनेक स्थानों पर बढाया तथा शोधा भी है।

३. लखनऊ में।

४ अर्थात् १२ मई १८८० को जायेंगे।

और स्त्रैण ताद्धित के पत्रे यहा भीमसेन ने नही रखे हैं। और किस पत्रे मे कहां से आगे लिखा जायगा कि कौन पर्त्ती कहां तक लिखा गया और कहां से लिखना होगा वहां चिन्ह कर देना। जिस २ चिठी मे जो २ लिखे उस २ का ख्याल रखा करना। फिर दूसरी वख़्त वह विषय न लिखेंगे। पडित इद्रनारायण ने ५) रू० हमारे पास जमा किये। उनमे -)॥ टिकट का और ४॥।=)॥ पुस्तको के का दाम जमा हुआ -)॥ इस के आगे जो महसूल लगे सो उन से वसूल कर लेना। वा और जो रामाधार वाजपेयी के पास पुस्तक भेजें उनके साथ भेज देना तो रामाधार को लिख भेजना कि ये पुस्तक पंडित इन्द्र नारायण के पास शीघ्र भेज देवें।

और जो ब्रह्मचारी काशी मे रसोई करता था वह भाग उठा था सो यहां मिला हमारे पास है॥

भैरव कहार एक रूपया नरसिंह थापा को दिलाता है। सो भीमसेन उसके पास नेपाली रानी के स्थान मे जाके रसीद लेके १) रू० उसको देदे। और चपरासी को पहेचान करवादे। जब भैरव उसको रूपया दिलवावे तब उसके पास पहुंचा दिया करे॥

मिती वैसाख कृष्ण ३० स० १९३७।[1] { दयानन्द सरस्वती[2] }

---

[१२] पत्र (४४३) [४७८]

ओम्

मुशी बखतावर सिंह जी आनदित रहो।

दशमी [१०] जून का लिखा हुआ पत्र तुमारा आया वर्त्तमान विदित हुआ। क्या डेढ महीना हुआ जब मै चला था। तब व्यवहारभानु थोडा सा बाकी रहा था। क्या अबलक डेढ़ महीना हुआ बाकी ही पड़ा रहा है। और सधि विषय का भी एक ही फर्मा तैयार हुआ। व्यवहारभानु रहा खडित। सधिविषय का

---

१ ता० ९ मई सन् १८८० रविवार। लखनऊ से बनारस को भेजा गया।

२ ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को म० मामराज जी ने लाला रामशरण दास मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। जीवनचरितों में लखनऊ से कानपुर जाने का उल्लेख नहीं है। वह इस पत्र से सिद्ध है।

इसे पूर्णसं० १७९ के पश्चात् पढें।

एक ही फर्मा। अब कहो कोई ग्रथ पढ़ने के लायक हुआ ? अब जलदी व्यवहारभानु का बाकी फर्मा तैयार करके जहा २ भेजना है भेज दो। और वेदभाष्य का काम भी चलता रहे।

फौंडरी का वदोवस्त कर लिया अच्छा हुआ। अभयलाल व चुन्नी लाल का ढीलापन मै खूब जानता हू। जब किसी दूसरे साहूकार के यहा काम होगा तब वहा से उठा लिया जावेगा। और भीमसेन को भेजकर तीन अशर्फी और थोड़ा सा सोना है मगवालो। अथवा जो अरडीये[1] उस्में हिसाव किताव करें उनसे कहदो कि हम बाजार मे बेंचलेगे। तो बाबू अविनाशी लाल चौक[ख]मे वाले के साथ जो अपना सभासद आर्य स० है बेचलेना। और रुपया अलग ही जमा रखना खर्च मत करना। क्योंकि वह अरडीन उस्के ही लिये है। वेदभाष्य का फर्मा हमने देखा तुम भी मिला लो। ववई के फर्मे से आध अंगुल कम है सो जिल्द बाधने मे कैसा होगा। और जड़ मे आर्वल भी कम रहता है। इस लिये चारों ओर बराबर रहना चाहिये जैसा कि ववई के छापे मे है। परतु हां जब वैसा कागज इतना लंबा चौड़ा नही मिलता तो इसी मे छपवाना होगा। शिव प्रसाद का खडन हमने तैयार कर लिया है शोध के भेज देंगे। और उस्के टाटल पेज पर (रचिता) शब्द (रचित) अर्थात् (ता को त) करदो।

क्या दफ्तरी ने नौकरी छोड दी ? मुझ को मालूम होता है कि अब काम अच्छी तरह चलेगा और तुम चलाओगे। कल फर्रुखाबाद के कपू[2] मे भी शाखा समाज स्थापित हो गया है। जो जो पुस्तक जैसराज गोटीराम के नाम पर फरुखावाद भेजो वह कालूराम सेवाराम के नाम पर उसी दूकान पर कानपुर कम्पू में रेल पर भेज दिया करो। वहां से फर्रुखावाद चला आवेगा। और उनको चिट्ठी मे भी लिखदो कि तुम फर्रुखावाद भेज दिया करो। और जब फर्रुखावाद तक सूधा रेल हो जावे तब जैसराज गोटीराम की दूकान पर सूधा फर्रुखावाद ही भेज दिया करो।

मुन्शी इन्द्रमणि के पास रुपये भेजे या नही उनका जवाब लिखो। और न भेजा हो तो जितना उनने हिसाव करके लिखा हो भेज दो। जब हम नखलऊ में थे तब हमने लिखा था कि रामाधार वाजपेई के पास जो जो पुस्तकें वे लिखें भेज दिया करो। सो तुमने नही भेजी। शायद तुम काम काज में भूल गये होगे।

---

१ अरडीये या अरडीन उन कारीगरों का नाम है जो दुपट्टा व अरडी कपडा वनाते हैं। उन को ही देने के लिये यह रुपये अलग के अलग रखवाये गए थे। देखो पत्र पूर्णस० १८२।

२ फतेगढ में।

ऐसा न होना चाहिये। उनने तुमारी शिकायत लिखी है। वह कार्ड भी तुमारे पास भेजते हैं देख लेना। जब हम यहा से कही को जावेंगे तुमको इत्तला करेंगे।

और सधिविषय जो हमने शुद्ध कर लिखा है सो भी भेज देवेंगे। जैसी कि स्याही वेदभाष्य मे तुमने अब लगवाई है ऐसी ही लगती रहे। और अभी ये सब अंक आये है। भूल चूक देखके पीछे से लिखेंगे। और भीमसेन से व्यवहारभानु मे शुद्धाशुद्ध पत्र लिखवा के साथ छपवा के लगवादो। क्योंकि उसमे बहुदा शुद्ध अशुद्ध है। और वेदभाष्य के पत्रे जो कमती होते हैं वे टाटल पेज पर नोटिश लगवा दो कि इतना चौडा लम्बा कागज नही मिलता जो कि बवई के बराबर हो। इसलिये इसी प्रकार के कागज से छपा करेगा। हम आनन्द मे है आप आनन्द मे हूजिये। और समाज आदि का सब काम अच्छे प्रकार चले। भीमसेन से कहदो कि व्याख्यान अच्छे प्रकार दिया करे। और अपने पढ़ने पढ़ाने व शोधने मे होशियारी रखे। पडित सूबेराव जी और हरि पडित जी से हमारा नमस्ते कह देना। प० अमरनाथ का शरीर आरोग्य होगया है वा नही। वहां जो काररवाई जो कुछ हुआ करे आठवें दिन लिख भेजा करो। और हमको जब २ जरूरत होगी तब हम भी लिखेंगे। इति

ज्येष्ठ शुक्ल ६ स० १९३७।[1] { दयानन्द सरस्वती[2] }

---

[१३] पत्र (४४४) [४७९]

ओम्

[मुशी बख] तावर सिंह जी आनन्दित रहो।

हम कल यहां [से चल] कर बुध की रात को सकूराबाद स्टेसन से रेल में [सवार हो] कर मेरठ जायगे। वेदभाष्य जहां तहां भेजा ग[या होगा]

---

१ ता०१४ जून सन् १८८० सोमवार को फरुखाबाद से बनारस को भेजा। इस पत्र की आरभ की २½ पंक्ति दूसरे लेखक की है। शेष पत्र पं० गणेश प्रसाद शर्मा फरुखाबाद वालों के हाथ का लिखा हुआ है। हस्ताक्षर ऋषि के है।

२ जुलाई सन् १९४५ में म० मामराज जी न लाला रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पत्रों में से खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० १८१ के पश्चात् पढें।

और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छप के जहां तहा पहुचा वा नहीं। [अब हम] को चिठी पत्री भेजना हो तो मेरठ के पते से हमारे पास भेज[ना। हम] को यहा कार्य विशेप था इस लिये वेदभाष्य [और सन्धि] विषय के पत्रे नही पहुंचे। मेरठ में जाके वहां [से भेज देंगे ....

... .

.. ...

सो छापना और न हों तो जिस . हो लिख भेजना और सधि- विषय का अ . . यहा जो पत्रे हैं लिखवा लिये हैं। शोधके भेज देंगे। सस्कृतवाक्यप्रबोध का एक फर्मा जो वाकी रह गया है छाप कर ज[हां तक हो] जलदी भेज दो जो पठन पाठन में काम आवे। राजा शिवप्रसाद के उत्तर में तीन चार दिन का काम थ[ा] इतनी देर क्यों लगा [ई जो] वेदभाष्य अब तक किसी के पास नही भेजा। और [इस] अङ्क के साथ जिस २ के रूपैये आय [कर जो] वाकी [हैं] [उन सब के] पास चिठी पहुचाई जायगी

. ..

.की लेना हो सब हिसाब कर रखना और हम [पहले जो चि] ठी लिख चुके हैं उसी के माफिक सब काम करना।

मिती आषाढ वदी १३ सोमवार सवत १९३७॥[२]

(दयानन्द सरस्वती)[३]

---

[१४] पत्र (४४६) [४८०]

मुशी वखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

आप ने जो पुस्तक और पत्र भेजे सब पहुंचे हिसाव सहित चिठी भी . . यजुर्वेद के पत्रे तो कल वा परसौ तैयार करके भेजता हूं। और ऋग्वेद के पत्रे लिख रहे हैं। तथा यजुर्वेद के भी जितने तैयार होते जायगे भेजते जायगे। आपने लिखा कि तीनो अक बराबर निकालें उसमें फिर भी देर लगेगी। इस वास्ते [एक अङ्क] अभी निकाला जाय फिर

---

१. बिन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है।

२. फरुखाबाद से ता० ५ जुलाई सन् १८८० को भेजा गया।

३. फटे हुए पत्र के दो टुकडे म मामराज जी ने ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को लाला रामशरण दास जी मेरठ वालों के यहा से खोजे। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० १८४ के पश्चात् पढें।

'दोनो साथ निकालना ये [तो हमारी] सलाह है। और तुमरी सलाह · · · · नाथ जी को दो रूपैये देके पुस्तक पूर्ण [करालो। उन]से कह देना कि शीतलाघाट पर जो पडित जीवाराम [टीकारा]म रहते हैं उनके वास्ते मैंनपुरी से चिठी भेजी थी सो दी [वा नहीं] नही दी हो तो वहां जाके उनसे कहना कि स्वामी जी ने तुम से कहा है दोनो जने चले आवो अवश्य। हम मेरठ मे है। जो उनके पास खर्च न हो तो तुम मेरठ का टिकट दिवादो। यहां उनका काम है। उनने कहा था कि हम आपके पास आवेंगे सो क्यों नही आये। हमारे पास चले आवें। और गोपाल . यहां अच्छी तरह से है। इसका जवाव जैसा हो वैसा उनसे निश्चय कर तुम लिखो। और उनसे कहो वहुत रोज पढा, अव कुछ जीवका भी करनी चाहिये। लाला निर्भयराम को हमने लिख दिया है। वे कलकत्ता को चिठी लिखेंगे। तुमको जो चीज चाहती हो वहां से मगा लेना। परन्तु तुम एसा कि वहां किसी . ....र जन वा साहिव के पास रूपैये भेजकर मगवा लिया [करो और] भीमसेन रामप्रताप का पता अच्छी तरह जा [नता है · लिखो वह अच्छी चीज पहु ... रुपये निर्भयराम की दुकान से दिवा [दिया क] रेगा ओ वहुत जलदी तुमारा काम कर दिया करेगा। [तुम] वहुत हुशियारी [से] काम करते हो और भूल भी जाते हो। परन्तु आगे को ऐसा न होना चाहिये। क्योंकि विरोधी लोग इस मे न जाने क्या क्या कहैंगे। देखो सुन्दरलाल के तीन सौ रूपैये आये थे और तुमने रसीद अढाई सौ की छापी है। उनने हमको चिठी लिखी है सो अव तुम [अ] गले पद्रहवें अक मे तीन सौ का अक लिख कर यह भी लिख देना कि हमने पहले भूल से लिख दिया है। हम भी उनको चिठी भेजदेंगे। और भीमसेन से कहना कि किसी दूसरे पडित के पास न्याय दर्शन लगा के पूरा करले अधूरा न रक्खे। और किसी नौकर को पेशगी मत दिया करो। जो दी हो तो अगले महीने मे सपूर्ण वा आधी काट लेना। किसी से दवा मत करो। ये काशी के महा लुच्चे हैं। आपने वेदभाष्य छापा [होगा] ही परन्तु मूल से सस्कृत और भाषा के अन्तर . . .. इस लिये पद और सस्कृत के अ ·· ··· ये।

मिती आषाढ़ सुदी ११ रविवार सव[त् १९३७]'

---

१. १८ जुलाई सन् १८८० मेरठ से।

यहां के समाज की बड़ी उन्नति है। मै यहां वीस वा [पचीस] दिन तक रहूगा।[1] हरि पण्डित जी से कहना कि ब्राह्मी ओषधी के लिये हमने नैणीताल को लिखा है। अनुमान है कि आप के पास पहुंच जाय[गी]।[2]

---

[१९] - पत्र (४४६) [४८१]

मुशी वखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

कल कुछ पत्रे यजुर्वेद और ऋग्वेदके पहुचा दिये है पहुचे होंगे। वैयार करते जाते हैं जैसे वैयार होगे तेसेही पहुचाते जायगे। परन्तु तुमने तीन २ अङ्क का निकालना एक ही वखत अकस्मात् प्रारम्भ कर दिया है। जो हमको पहिल कहते तो पत्रे आगे से ही वैयार कर भेज देते। अव भी चार दिन आगे पीछे पौचा देंगे। काशी में से कोई लेखक जो कि संस्कृत की भापा वना जाने तो पद्रह रूपैये माहवारी कर भेज दो। व्याकरण भी पढ़ा हो। विहारी चौवे को पुस्तक न दो। जो वह दस रूपैये सैकड़े कमीसन पर ले तो दे दो। परन्तु पचीस रूपैगे से ले तो कमीसन देना। कम में नही। हां व्रजभूषण दास वाले दस रूपैये पर भी कमीसन लें [तो] उधार भी देदो।

और जगद्‌वा प्रसाद् वरेली के पास अव तक तुमने तीनों पुस्तक नही भेजे क्योकि उसने हमको परसो चिठी भेजी कि हमारे पास पुस्तक अभी नही आये। ऐसा क्यो करते हो कि जिसके दाम आये उसको उसी वखत पुस्तक भेज देना चाहिये। नही तो आगे को दाम कैसे आवेंगे कोई भी न भेजेगा। और जीवाराम टीकाराम की क्या खवर है। वे वहां है वा नहीं।

मिती आषाढ़ सुदी १३ मगलवार सवत् १९३७।[3]

(दयानन्द सरस्वती)[4]

---

१ यहा से आगे की तीन पक्तिया ऋषि ने स्वहस्त से लिखी हैं। हस्ताक्षर तथा बिन्दुओ वाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है। यह नैणीताल का पत्र पू०स० १८८ है।

२. म० मामराज जी ने २४ जुलाई सन् १९४५ को मेरठ निवासी ला० रामशरणदास जी के सहस्रों पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी के साथ खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० १८८ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढें।

३. २० जुलाई सन् १८८० को मेरठ से वनारस भेजा गया।

४ म० मामराज जी ने ला० रामशरणदास जी के पुराने कागजों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी तथा ला० श्यामलाल जी प्रधान आर्यसमाज मेरठ के साथ २३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

पूर्णस० १८८ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें।

[१६] पत्र (४४७) [४८२]

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज पत्रे वेदभाष्य अर्थात् ३०६ से ३२० तक यजुर्वेद के और ३०८ से ३२३ तक ऋग्वेद के तुमारे पास पहुंचाते हैं। एक चिट्ठी अलमोड़ा से वेदभाष्य के ग्राहक की हमारे पास आई है। तुमारे पास पहुचाते है। पच्चीस रुपैये मगा के पीछे पोथी भेजना और उनको उत्तर भी भेज देना कि आपने जो स्वामी जी के पास चिठी भेजी थी उनने हमारे पास भेजी। हम आप को इतलाह देते है कि पच्चीस रुपैये पहुचा देवें। पुस्तक आप के पास पहुंच जायगी। कल जो उर्दू मे हमने चिठी भेजी है उसी के अनुसार काम करो।

कुजरावाले का जो हाल था उसका जवाव भेज दिया है। अव हाल मे कुछ सुनने मे नही आता है। हमारा शरीर आनन्दित है। आप लोग आनन्दित होगें। हम मेरठ में शायत् दिन पन्द्रह तक ठहरेंगे।

मिती श्रा० वदी २ श० सवत १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]

---

(१७) पत्र (४४८) [४८३]

मुन्शी वखता[वर सिंह जी आ]नन्दित रहो

तुमने जो पारसल भेजा हमारे पास पहुंचा। जो तुमने लिखा कि पद्रहमा अक एक और सोलहवां सत्रहवा इकट्ठा निकालेंगे सो वहुत अच्छी वात है। चारों वर्षों के पृथक् २ चन्दा का विज्ञापन टाटल पेज पर छाप दो कि जिनने जितना दिया हो उतना छोड़ वाकि सव दाम भेज दें। और आर्यसमाज-थियोसोफीकल सुसायटी का विज्ञापनपत्र[3] लिख कर हम भेजते है। सो छपवा कर सव आर्यसमाजो मे दश २ और सुसायटीओ और करनेल ओलकाट साहेव को दो चार भिजवा दो।

---

१ २४ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से वनारस भेजा गया। शनिवार को श्रावण वदी ३ है।

२. म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को ला० रामशरण दास जी रईस मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी के साथ खोजा। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। पूर्णसं० १९२ के पश्चात् पढें।

३ देखो विशिष्टविज्ञापन पूर्णसख्या १९७। यह विज्ञापन यजुर्वेदभाष्य अक १६ के टाइटल पेज से लिया गया था।

और हमारे पास भी दश पांच भेज दो। और एक कार्ड हमारे पास आया है। तुमारे पास भेजते हैं चिठी के साथ। एक नई बात हुई है कि मुन्शी इन्द्रमणि जी को मुसलमानों ने वड़ा दिक किया है। यह बात किसी से कहने योग्य नहीं है। आगे इसका हम कुछ विचार करते हैं। सो आप के पास मे विदित करेंगे। वेद भाष्य के[पत्रे भी तैयार] हुए हैं। दो चार दिन मे भेजेंगे।

१४) रुपैये चौधरी देवीसिंह जी अ ' वाले जिले मेरठ के और—

१२) रुपैये बाबू गणेशी लाल वा विहारी लाल जी मेरठ वालो के और -

२१) रुपैये ठाकर शेरसिंह जी कर्णवास वाले के हमारे पास आये।

इनका नाम वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना।

मिति श्रावण वदी ६ मगलवार सवत १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]

---

[१८] पत्र (४४९) [४८४]

मुशी वखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आपके वहुत से आये। वेदभाष्य का पुस्तक भी पहुचा। हिसाव तुमने नहीं भेजा। सो पिछले महीने [के] आर्यदर्पण का और अव का भेजो। मेला चादापुर का जैसा हमने कहा था कि उर्दू आर नागरी पृथक् २ छापो सो क्यों नही छापा। तुमारे लेख से हमको कुछ सदेह होता है। क्या तुमने अपने नाम से छापने का विचार किया है। हमारी तो आज्ञा थी नहीं। अभी तो वहुत खर्च है। कुछ ठहर जाओ पीछे छापना। ये दो फरमे [के] पत्रे वेदभाष्य के दो दिन पीछे हम भेजते हैं। और वर्ष के अन्त मे यह छाप दिया करो कि जिस २ का जितना २ बाकी हो वे भेज देवें। और यह भी छाप दो सतरहवें अक के अत मे कि जिसका रूपैया आजतक नही आया है उसके पास अठारहवा अक नही आवेगा। और लेने के लिये जैसा होगा वैसा उपाय किया जायगा।

मिती श्रावण वदी ३० गुरु० सवत १९३७।[3]

---

१ २७ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से वनारस भेजा गया। पूर्णस० १९७ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें।

२ म० मामराज जी ने मेरठ से जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी के पुराने पत्रों में से खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

३ ५ अगस्त सन् १८८०। गुरुवार को श्रावण वदी १४ है।

हम कैई वखत लिख चुके । आप समझने क्यों नही । शायत् घवरा के देखतं होगे । अनाथ के पालन अर्थात लावारस के लिये वे पाच सौ रूपैये वावू दुर्गाप्रसाद जी ने दिये हैं । १०) रु० हमने । हम ये वात तीन वखत लिख चुके हैं ।[1]

दयानन्द सरस्वती
। मेरठ ।

---

[१२] पत्र (४५०) [४८५]

ओम्

मुशी वखतावर सिंह जी आनन्दित रहो ।

वेदभाष्य के ग्राहक पडित पुरुषोत्तमदास निवासी दिल्ली, घासीराम का कूचा, मकान वट्टामल नारिये के मे—इनका १२) रूपैये वावत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए, मिती भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा १, शनिवार को । यहा का नम्वर ६११ । भूमिका का पुस्तक उनके पास है । यजुर्वेद, ऋग्वेदों के अक भेज देना । और उनसे चौथे वर्ष का दाम लिखकर मगा लेना । शायत् नवर ६१० ठाकर वलवत सिंह जिला वुलन्दशहर परगणे शिकारपुर ग्राम चांदोख वाले के २५) वावत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुऐ । इसका हाल पिछले पत्र मे लिख चुके हैं । आपने अपने रजस्टर में जमा कर लिया होगा । १०) रुपैये चौवे गोपीनाथ जी शिमले वाले के वावत धर्मदाय के हमारे पास आये हैं । वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना । यह भी छपवा देना कि हाल मे स्वामी जी मेरठ मे है । इतना ही और नही । आर्य्यदर्पण मे यह भी छाप देना कि रमावाई के दो व्याख्यान मेरठ मे बहुत ही अच्छे हुए ।[2] सव लोगों ने सुनके प्रशसा की । आशा है कि स्त्री लोगों

---

१ ता० २४ जुलाई सन् १९८१ को म० मामराज जी ने मेरठ-निवासी ला० रामशरणदास तथा उनके पुत्र ला० वनारसीदास जी रईस कोर्ट वालों के सहस्रों पत्रों में से खोजा । मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है । पूर्णसं० १९७ के पश्चात क्रमपूर्वक पढें ।

२. रमावाई के लिये पू०सं० १९९, २०४, ४९० देखें ।

में उपदेश करेंगी तो बड़ी उन्नति की बात है। इसका हाल आगे लिखा जायगा। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती श्रावण सुदी ३ सोमवार सवत् १९३७।[1]

[दयानन्दसरस्वती][2]

---

[२] कार्ड (४५१) [४८६]

[ठाकुर] शेर सिंह जी आनन्दित रहो।

[पत्र] आप का आया वर्त्तमान विदित हुआ। लेखक तो हम को चाहिये। बिहारी को यहा भेज दो। जो वह हमारा सब काम कर सकेगा अपने पास रखलेंगे। अथवा समाज के योग्य होगा समाज में रखदेंगे। २१) रूपैये जो तुम दे गये थे उनमे से २०) की रसीद तो तुमारे पास पहुच गई है। और एक रूपैया लिखने मे भूल गये हैं। उसकी यही रसीद समझो। हमने अपने रजस्टर मे २१) ही रूपैये जमा किये हैं।

मिती श्रावण सुदी ६ सवत् १९३७।[3] मु० (मेरठ)

प० भीमसेन शर्मा—

नमस्ते आपके पास स्वामी जी की रसीद भेजता हूं। बारह मुद्रा की जगह २१) की रसीद छाप दो। इस को मुझे वापिस दो। आगे को ऐसी भूल न करो।[4]

[दयानन्द सरस्वती][5]

---

१. ९ अगस्त सन् १८८०।

२. म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में मेरठ निवासी ला० रामशरण-दास जी के पुराने पत्रों में से खोजा। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

पूर्णस० १९७ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें।

३ १२ अगस्त सन् १८८०। तिथि और हस्ताक्षर के मध्य के रिक्त स्थान पर का लेख उसी कार्ड पर प० भीमसेन के नाम ठा० शेरसिंह ने लिखा है। पूर्णस० ३२६ भी देखें।

४. कार्ड पर पता इस प्रकार श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है—ठाकुर सेरसिंह कर्णवास परगणे डिभाई (जिले बुलन्दशहर)। मेरठ की मुहर में १३ अगस्त है और बुलन्दशहर की मुहरमें १४ अगस्त छपा है। पूर्णस० १९८ के पश्चात् पढ़ें।

५ म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में मेरठ निवासी लाला रामशरणदास जी के पत्रों में से खोजा। जो उनके पास वैदिक यन्त्रालय बनारस से दूसरे पत्रो के साथ आया था। देखो पूर्णस० २६७, ४४५। मूल कार्ड हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

[प्रथम] स्वीकारपत्र

[१] [४८७]

ओ३म्

(१) मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निम्नलिखित नियमानुसार वक्ष्यमाण अष्टादश सज्जन आर्यपुरुषो की सभा को—वस्त्र, पुस्तक, धन और यन्त्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हू। और उस को परोपकार और सत्कार्य मे लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्यकारी हो। जो यह एक सभा जिस का नाम परोपकारिणी सभा है उस के निम्नलिखित अष्टादश सज्जन सभासद हैं। और उन मे से इस सभा के प्रधान लाला मूलराज एम०ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर—प्रधान आर्यसमाज लाहौर। और मत्री लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ है।

नाम सभासद	निवास स्थान
१—लाला मूलराज एम०ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर लाहौर .	लुधियाना
२—पडित सुन्दरलाल इन्स्पैक्टर डिपार्टमैंट इलाहाबाद	आगरा
३—राजा जैकृष्णदास सी०एस०आई० डिप्टी कलक्टर	मुरादाबाद
४—मुन्शी इन्द्रमणि प्रधान आर्यसमाज मुरादाबाद	,,
५—बाबू दुर्गाप्रशाद कोषाध्यक्ष आर्यसमाज फर्रुखाबाद .	फर्रुखाबाद
६—लाला जगन्नाथप्रसाद फर्रुखाबाद	,,
७—सेठ निर्भयराम प्रधान आर्यसमाज फर्रुखाबाद ..	बिसाऊ(राजपू०)
८—लाला कालीचरण रामचरण मत्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद	फर्रुखाबाद
९—लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ	मेरठ
१०—बाबू छेदीलाल गुमाश्ता कमसरयट मेरठ .	कानपुर
११—लाला साईंदास मंत्री आर्यसमाज लाहौर	लाहौर
१२—लाला डाक्टर बिहारीलाल असिस्टैंट सिविल सरजन...	,,
१३—बाबू माधोलाल मत्री आर्यसमाज दानापुर .	दानापुर
१४—लाला पंडित गोपालराव हरिदेशमुख प्रधान आर्यसमाज बम्बई ..	पूना
१५—लाला जज महादेव गोविन्द रानाडे .	,,

१६—एस० एच० कर्नल आलकाट साहब बहादुर प्रधान थियोसोफीकल सोसायटी अमरीका .. अमरीका

१७—एच० पी० मेडम ब्लेवेट्स्की मन्त्री थियोसोफीकल सोसायटी अमरीका ”

१८—पडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर सस्कृत यूनिवर्सिटी औक्सफोर्ड लडन . बंबई

(१) उक्त सभा जैसे कि वर्तमानकाल मे सभा के नियमानुसार व आपत्काल में मेरी और मेरे समस्त पदार्थो की नियम [से] यथावत रक्षा करके सर्व हितकारी कार्यों मे लगाती है वैसे मेरे (पश्चात्) अर्थात मेरी मृत्यु से पीछे भी लगाया करें।

प्रथम—वेद और वेदाङ्ग वा सत्य शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उन की व्याख्या करने कराने, पढने पढाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने आदि में।

द्वितीय—वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा मे अर्थात् उपदेशक मडली नियत करके देश देशान्तर वा द्वीप द्वीपान्तर मे भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में।

तृतीय—आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यो के सरक्षण पोषण और शिक्षा मे व्यय करे और करावे।

(२) जैसे मेरी विद्यमानता मे यह सभा सब प्रवन्ध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे वा छठे महीने किसी सभासद् को वैदिक यंत्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के लिये भेजा करे। और वह सभासद् जाकर समस्त आय व्यय और सचय आदि की जांच पडताल कर और उन के तले अपने हस्ताक्षर लिख दे, और उस विषय का एक एक पत्र प्रति सभासद् के पास भेजे। और जो उस के प्रवन्ध मे कुछ हानि लाभ देखे उस की सूचना भी अपने परामर्श सहित प्रत्येक सभासद् के पास लिख भेजे। पश्चात् प्रत्येक सभासद् को उचित है कि अपनी अपनी सम्मति प्रधान के पास भेजदे और प्रधान सब की सम्मति से यथोचित प्रवन्ध करे और कोई सभासद् इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे।

(३) इस सभा को उचित है किन्तु आवश्यक है कि जैसा यह परम धर्म और परमार्थ का कार्य है उस को वैसे ही उत्साह पुरुषार्थ गम्भीरता और उदारता से करे।

(४) मेरे पीछे उक्त अष्टादश आर्यजनो की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय, अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को

है और रहे । यदि उक्त सभासदों मे से कोई इन नियमो से विरुद्ध स्वार्थ के वश हो कर वा कोई अन्य जन अपना अधिकार जमावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाये ।

(५) जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्तमान समय मे मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति का अधिकार है वैसे ही मेरे मृतक शरीर का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उस को गाड़े, न जल मे बहावें, न जगल मे फेंकने दें केवल चदन की चिता बनावें । और जो यह सभव न हो तो दो मन चदन, चार मन घी, पांच सेर कर्पूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि सस्कारविधि मे लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेद मत्रों से होम करके भस्म करें । इस से भिन्न तथा कुछ भी वेद विरुद्ध क्रिया न करें । और जो सभाजन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो वही पूर्वोक्त क्रिया करदे । और जितना धन उस मे लगे उतना सभा से ले लें और सभा उसको दे दे ।

(६) अपनी विद्यमानता मे मै और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद को पृथक करके उस का प्रतिनिधि किसी अन्य योग्य सामाजिक आर्यपुरुष को नियत कर सकती है परन्तु [कोई सभासद सभा से तब तक पृथक् न किया जाय जब तक उसके कार्य मे अन्यथा व्यवहार] न पाया जाये ।

(७) मेरे सदृश यह सभा सदव इस स्वीकार पत्र की व्याख्या वा उसके नियम और प्रतिज्ञाओ के पालने वा किसी सभासद् के पृथक् और उस के स्थान मे अन्य सभासद् के नियत करने वा मेरे विपत् और आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न मे वह उद्योग करे जो समस्त सभासदों को सम्मति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावे । और जो सम्मति मे परस्पर विरोध हो तो बहु पक्षानुसार प्रबन्ध करे और प्रधान की सम्मति को सदैव द्विगुण जाने ।

(८) किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासदों को अपराध की परीक्षा करके पृथक् न करसके जबतक पहिले तीन के प्रतिनिधि नियत न करले ।

(९) यदि सभा मे से कोई पुरुष मर जाये वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्म को त्याग कर विरुद्ध चलने लगे तो इस सभा के प्रधान को उचित है कि सब सभासदो की सम्मति से पृथक करके उस के स्थान मे किसी अन्य योग्य वेदोक्त धर्मयुक्त आर्यपुरुष को नियत कर दे । परन्तु जबतक नित्य कार्य के अनन्तर नवीन कार्य का आरम्भ न हो ।

(१०) इस सभा को सर्वथा प्रबन्ध करने और नवीन युक्ति निकालने का अधिकार है। परन्तु जो सभा को अपने परामर्श और विचार पर पूरा २ निश्चय

और विश्वास न हो तो पत्र द्वारा समय नियत करके सम्पूर्ण आर्यसमाजों से सम्मति ले ले और बहु पक्षानुसार उचित प्रबन्ध करले ।

(११) प्रबन्ध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा किसी सभासद को पृथक् वा नियत करना वा आय व्यय और सचय का जांच पडताल करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वार्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा प्रधान छपवा कर विदित करदे ।

(१२) इस स्वीकार पत्र सबधी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्याधिकारियो की कचहडी में निवेदन न किया जाय । यह सभा अपने आप न्यायव्यवस्था करले । परन्तु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो तो राज्यगृह मे निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले ।

(१३) यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्यजन को पारितोपिक अर्थात् पेंशन देना चाहूं और उसकी लिखित पढ़त कराकर रजिस्ट्री करादूं तो सभा को उचित है कि उसको मानै और दे ।

(१४) विशेप लाभ, उन्नति, परोपकार और सर्वहितकारी कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों के न्यूनाधिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है वैसे ही किया करे ।

हस्ताक्षर दयानन्दसरस्वती व खत-शास्त्री[1]

गवाह—मुन्नालाल खलफ लाला किशनसहाय साकिन मेरठ बकलम खुद उर्दू

गवाह—मुन्शीसिंह वल्द वशीधर साकिन मेरठ अंग्रेजी

गवाह—सुजानसिंह वल्द रामसुखदास कौम सरावगी साकिन मेरठ व खत-हिन्दी ।

यह वसीयत नामा है । १६ अगस्त १८८०[2] ई० द० नागरी वसीयतनाम हाजा, यह कागज सादा है ।

Presented for registration in the office of the Sub-Registrar of Meerut on Monday the 16th August 1880 between the hours of 3 and 4 P M

(Sd) MUKAND LAL, ह० दयानन्द सरस्वती
Sub-Registrar

---

१ पूर्णस० १९८ के पश्चात् पढें । द्वितीय अथवा अन्तिम स्वीकारपत्र का सकेत पूणस० ३६३ तथा उसके टिप्पण में देखें । पूर्णस० १९५, १९९, २०८, २११ भी देखें ।

२, मिति श्रावण सुदी ११ सोमवार सवत् १९३७ । मेरठ शहर ।

Execution admitted by Swami Dayanand Saraswati who is personally known to the registering officer.
16th August 1880
(Sd) MUKAND LAL, Sub-Registrar — ह० दयानन्द सरस्वती[1]

---

[२०] पत्र (४५३) [४८८]

[मु० बखतावर सिंह ......]

.. ..

....न लिखा और ऋ[ग्वेद के
टाइटल पर मु]न्शी जी का हाल छपवा दिया सो क्यों।[2] ऐसे छ-
[पवाने से] फसाद होने का सभव होता है ।
.... ार नही है । आगे ऐसा काम कभी न करना । और जो
मैंने कहा था कि
.. ..से दाम उधार हैं उन सब का हिसाव छा-
[पदो सो तो] कुछ भी न किया किन्तु विज्ञापन ही वि-
[ज्ञापन] छपवा डाले। नही छापने के योग्य वातें छापी।
मुन्शी जी का वृथा छापा ।[2] अब जिन लो-
[गों ने] दाम नही दिया है और एक महीने तक न दें उन के पा
[स अगले अ]क न भेजो । और उन को उन के हिसाव [का]
नोटिस देओ तथा आ-
[गे से] एक वेद के ६४ पृष्ठ अर्थात् दो दो अक एक २
. ... पहले महीने ऋग्वेद और दूसरे मे यजुर्वेद

---

१. इस स्वीकार पत्र की प्रतिलिपि के लिए ता० १९।५।४५ को ॥) का स्टाम्प लेकर वाबू हरवन्श सिंह वकील मन्त्री आर्यसमाज मेरठ ने दफ्तर रजिस्ट्री में पेश किया। नकल ता० ७ जून १९४५ को मिली। उसे म० मामराज जी ने वाबू श्यामलाल अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज से ता० २२ जुलाई १९४५ को प्राप्त किया। देखो दफ्तर रजिस्ट्री मेरठ शहर में तितम्मा न० ५ सफे ४० जिल्द—अलिफ-रजिस्टर न० ३ [सन् १८८०] में ।

२. "मुशी इन्द्रमणि जी के मुकद्में का वृत्तान्त"—ऋग्वेदभाष्य अक १६-१७ के टाइटल पर देखो। तथा इस के सम्बन्ध में पत्र पूर्णस० २०५ भी देखें ।

......वा दो मैं ने... ....

मि० भा० क० १४ सं० ... . .।[1]

[चन्द्रा] लोक वा कोई काव्यालकार सूत्र ग्रंथ हो तो भेज देना।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

सत्यार्थप्रकाश[3] भेजने के लिये तुमने कागद छप-
वा कर भेजे थे वे लगाकर हमने पुस्तक स[त्यार्थ-]
प्रकाश के भेजवा दिये। अब तुम्ही पूछ[ते हो]
कि क्या नाम थे। बड़े शोक का विषय है [कि तु-]
म्हे इस का उत्तर क्या दें। क्या तुम ने नाम[ठिका-]
ना आदि हिसाब रजस्टर मे बिना ही लिखे [भेजे]
थे। ऐसी अचेतनता से क्या काम [चलेगा][3]।

---

[२१] पत्र (४५४) [४८९]

मुशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

दो एक दिन मे तुम्हारे पास वसियत नामा की नकल भी भेज देंगे। अब हम पत्र भेजने हैं। इस महीने में ६४ पत्रे ऋग्वेद के अक में भेजो। और अगले महीने मे ६४ पत्रे यजुर्वेद के अंक मे भेजना। और जब पत्रों की दरकार हो तब दो तीन महीना पहिले से कहना कि हम तैयार करके भेज दिया करें। भीमसेन से कहो वही इस वात की याद रक्खेगा।

मेला चान्दापुर का वहा क्या अचार होगा। हमने कहा है जिस २ जगह सौ २ और जितनी २ पुस्तकें जहां २ जाती हैं वहा २ भेजदो। अभी तक क्यों नही भेजी। चिठी के देखते ही १० वेदभाष्य और ५ भूमिका उन्ही के साथ १०० पुस्तक चांदापुर की मेरठ आर्यसमाज मे भेज दो। हमने कहा था कि समर्थदान

---

१. ३ सितम्बर १८८०। शुक्रवार।

२. यह पत्र वहुत फट चुका है। विषय से मु० वखतावर सिंह के नाम का ही निश्चित होता है। तिथि और हस्ताक्षर का टुकडा सर्वथा पृथक है, परन्तु लेख आदि से इसी पत्र का अंग प्रतीत होता है।

३. उक्त पत्र की पीठ पर ही हस्ताक्षर से नीचे वाला लेख है। पत्र के टुकडे म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहा से खोज कर लाये। ये टुकडे अब हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णसं० २०२ के पश्चात् पढें।

से सब हिसाब[1] समझ लो और तुमने कहा था कि हमने समझ लिया। अब कहते हो कि हमको ठीक २ मालूम नही होता है। [य]ह क्या बात है, पहिले से क्यों नही समझ रक्खा। अब जैसे हो वैसे ठीक ठाक करो। वह समय तो गया अब कहने से क्या होता है कि गडबड़ है, ठिकाना नही लगता है। जो हमने पहिले लिखा है कि आर्यदर्पण मे कितने कागज लगे है और उसका हिसाब तथा एक रीम मे कितने रुपैये लगते हैं कितने उसमे कागज होते हैं। और यत्रालय का सब हिसाब एक नकशे मे लिखो। जितना रुपैया वहां जमा हो, जितना खर्च भया हो जितना कागज लगता हो उसका दाम और भाव सब लिखो। वेदभाष्य के दाम का रुपैया कितना जमा हुआ और कितना बाकी है। और सब पुस्तको का दाम जमा और बाकी। सब यन्त्रालय की कुरसी आदि जितनी चीजें है उन सब का ठीक ठीक जांच परताल कर साफ लिखो। क्योकि इस वसियतनामे के जो सभासद हैं उनके सुपुर्द हमने अ[पना] सब हिसाब किताब कर दिया है। वे कहते हैं कि हम ठीक २ विना जाने क्या हिसाब करें। इससे तुमको लिखा जाता है कि सब यन्त्रालय का हिसाब ठीक २ करके भेज दो।

यजुर्वेद का सातवा अध्याय बनता है। हम यहा शायत ७ दिन रहेगे। फि[र] जहां जायगे वहा से खबर दी जायगी। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होगे।

मिती भाद्र सुदी ४ बुधवार संवत् १९३७ ॥[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]

———

१ मुशी समर्थदान का लिखा हुआ मुम्बई के वेदभाष्य के हिसाब का एक परचा मिति चैत्र वदी ६ स० १९३६ से मिति ज्येष्ठ सुदी २ स० १९३६ तक का है जिसमें ६२१) रु० की आय, तथा ५७५॥-)॥ व्यय और ४६।=)॥ रोकड बाकी लिखी है, इस परचे में मोहनलाल विष्णुलाल का हिसाब भी है। देखो पत्र पू०स० १९९। पत्रों के साथ ही यह परचा म० मामराज जी को मेरठ से मिला है।

२ ता० ८ सितम्बर सन् १८८०, मेरठ से। मूलपत्र चार स्थान में फटा हुआ है।

३ म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में लाला रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पुराने कागजों में से खोज कर लाये। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० २०३ के पश्चात् पढें।

[२२] पत्र (४९९) [४९०]

ओम्

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

कल [पत्र] आप का आया हिसाब देखा गया। परन्तु तु[मने लि]खा कि इस महीने मे ४=॥) रुपैये का टि[कट] आ[या] यह तो सभव नही होता। हमारा ‥ ‥ भेजा है कागज आदि का हिसाब क्यो नहीं लि[खा] सेठ निर्भयराम की दुकान पर जो २००) रूपैय भेजे [थे] उनका क्या हुआ। बड़े आश्चर्य की बात है कि पुस्तकों की बिक्री बहुत कम होती है। हम पहिले लिख चुके हैं कि जो २ पुस्तकें छपती जाय वे जहां २ जितनी २ भेजी जाती हैं उसी वखत भेज दिया करो। मैं जानता हू कि मेलाचान्दापुर अभी तक न भेजा गया होगा। और तुम ने जो उत्तर लिखा वह अकिंचन है। इसका ठीक उत्तर यही है कि आगे को ऐसा न करना [चा]हिये। और श्यामजी कृष्णवर्म्मा के पास [उनका] ठीक २ पता लिख कर सब अक दोनो वेद[ो के] तथा वर्णोच्चारणशिक्षा सस्कृतवाक्यप्रबोध [और] व्यवहारभानु ये पत्र के देखते ही भेज दो। हम मेरठ से १२ गुरुवार को ४ बजे की रेल मे मुजफ्फरनगर जायगे। तुम भी अपने मामा को चिठी लिखना हो लिखो, उनको जो शका हो निवृत कर जाय। वहा हम को जाना कुछ आवश्यक तो न था परन्तु मेरठ से डिप्टी कलक्टर राय बद्री प्रसाद वहां गये हैं। उन्होंने बुलाया है। उनके सबब से वहा के [और] लोगो की भी प्रीति है क्योकि वे वहां के हाकिम [हैं] और रमाबाई का हाल इतना ही है। व्याकरण [काव्याल]कार पढी है। सस्कृत भी अ[च्छा बोलती है, व्याख्या]न भी अच्छा देती है और बडी बुद्धिमती है। [परन्तु कुछ] अकथनीय अनुचित दोष है। इससे यहा के स[भास]दों की उपेक्षा हुई है। हमने तो उसको बहुत समझाया है। जो उसका भाग्य होगा और सुधर जायगी तो इस में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा होगी और उसके उपदेश से स्त्री उपकार भी बडा होगा। यह रमा का हाल कही छपवा न देना। नही तो उसकी दुर्दशा हो[गी]। हम आनदित हैं। आप लोग आनंदित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रवि सवत् १९३७।[1]

फिरोजपुर के आर्य्यसमाज मे १४ और १५ अक दोनो वेदभाष्यों के उनके पास नही पहुचे हैं। जलदी भेज दो। और फिरोजपुर के कातचद के ८) रु० बाबत

---

१ -१२ सितम्बर १८८० मेरठ से बनारस को।

वेदभाष्य के हमारे पास आगये । और ८) रु० फीरोजपुर समाज के भी आगये । और रजस्टर अच्छी तरह दुरूस्त कर रक्खो । और ग्राहकों के नवर भी हमारे पास लिख भेजो । हम अपने रजस्टर से मिला लेंगे ।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]

---

[५] पत्र (४५६) [४२१]

पण्डित भीमसेन आन[दित रहो]

ह रजस्टरी भेजी है पहुची होगी । यजुर्वेद पष्ठाध्याय के आरम्भ से २० पृष्ठ भेजते हैं सो ले[ना][3] । एक अक मे कितने पृष्ठ लगते हैं सो लिखना । और ऋग्वेद के पृष्ठ के छपने को वाको हैं सो भी लिखना । जो आगे के लिये पृष्ठ तैयार कर रक्खें । अलकार विषय से जो चन्द्रालोक के पत्रे [जो] भेलम मे पास थे वे भेज देओ । और सर्वदर्शनसग्रह पुस्तको मे हम छोड आये हैं । जो वह मिले वही अथवा किसी दूकान से लेकर और भेज देओ । और जैनमत [की] पुस्तक जिसमे [वेदादिशास्त्र] ों का खडन और .. . .
सपादन कर भेज देओ ।
रजिस्टरी की वातो को यथायोग्य होशिआरी से करना ।[4]

एक २ अक मे कितने २ पृष्ठ लगते हैं सो भी लि [खो]
जहा शारीर [क] भाष्य मे जैनो का मत दिखलाया है उसका
और जो २ वहा श्लोक लिखे हो [वह] लिख भेजने
आगे सिवाय वेदभाष्य और व्याकरणादि पुस्तको . .. .
.. . छपने पावे अन्य कुछ भी नही . ...
.. ..

---

१ म० मामराज जी ने ला० श्यामलाल जी अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज के साथ ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के सहस्रों पत्रों में से २३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा । फटा हुआ मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है । कोष्ठों में हमने पूर्ति की है ।

२ पूर्णस० २०७ के पश्चात् पढें ।

३ यजुर्वेद के २० पृष्ठों की रजिस्टरी इस पत्र के साथ नहीं पहुची । वह पीछे से पहुची । उसकी पहुच प० भीमसेन ने अपने पत्र आश्विन शुक्ला १२, शुक्र में स्वीकार की है ।

४ यहा तक का पत्र पृष्ठ की एक ओर किसी लेखक का लिखा हुआ है । अगला सारा लेख पृष्ठ की दूसरी ओर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है ।

हर महिने मे कान्ताप्रसाद का मासिक
में लिखते आये हैं और अब लिखते हैं [कि का]
न्तप्रसाद हमारा नौकर है और अत्यन्त झूठ यह
मैं अपने पास से आपकी ओर जमा कर दे
कान्ताप्रसाद से कहना कि तुम कुछ भी चिन्ता [वा उ]
च्चाटन मत करना । वैसे सब को धीरज [दे]
ते रहना कि जिस से कोई भाग न उठे। और [अ-]
त्युत्साह से काम किया करें। 'जिस २ ने जितना [का-]
म शरकारी और जितना २ बाहर का किया [है उस]
का निश्चय उस २ से पूछ के कर लेना आवश्यक है । मु[शी]
जी से भी कह देना जो तुझ से पूछें तो हिसाब स ...
. 'रक्खो और १ महिना वा डेढ़ महिना तक
.. हो वैसे ही किया करो इतने समय में हिसाब .
.. .. और मकान का किराया बराबर मावारि भि[जवादो]
.. . 'नारायणसिंह वहां हैं वा कलक[त्ते चले गये
वा नही] ... . । कर शरकारी क.. . .

हरि पडित [जीको ब्राह्मी] ओषधी भेजी थी पहुंची वा नही ।[1]

[आश्विन शुक्ला १, सवत् १९३७][2]

दयानन्द सरस्वती

---

१. प० भीमसेन अपने आश्विन शुक्ला ७ रविवार के पत्र में लिखता है— "आश्विन शु० १ का लिखा पत्र आप का आया ।" उस पत्र में प० भीमसेन ने इसी पत्रस्थ वातों का उत्तर दिया है। प० भीमसेन के पत्र परिशिष्ट में देखें। अत उस पत्र के आधार पर श्रीस्वामी जी के इस पत्र की तिथि निश्चित करके लिखी गई है। इस पत्र की तिथि वाली पक्तिया तथा और भी कई पंक्तिया या पक्तियों के अश फट चुके हैं। कुछ नष्ट शब्दों की पूर्ति कोष्ठों में की गई है। मूलपत्र के टुकडे म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ मे ला० रामशरणदास जी मेरठ वालो के यहा से खोजे। ये अब हमारे सग्रह में सुरक्षित है।

२. ५ अकतूबर १८८० मगलवार। पूर्णस० २११ के पश्चात् पढें।

[६] पत्र (४५७) [४९

पण्डित भीमसेन आनन्दित र[हो]
फर्रुखाबाद से तोताराम और लाला स[न्नू]
लाल गये है। बाबू दुर्गाप्रसाद के मक[ान पर]
हम ने रजस्टर[भेज दिये थे उन ·· के ·····अ]
नुसार सन्नूलाल से [मिला ··कर ·······]
हिसाब करेंगें। मुन्शी जी से भी [कहना कि]
उन को ठीक २ सब हिसाब दें औ[र मु]
न्शी जी को भी चिट्ठी लिखते है [कि हिसा-]
ब और सब वस्तु तथा छापेर[वाने का]
और भी जो कुछ व्यवहार हो [वह पांच सात]
रोज के भीतर उन से समझ लें [और तोता]
राम और तुम तथा और हू को[ई ·····मि-]
ले तो कुछ दे कर [और रख]
कर तुम लोग पुस्तकें [गिन कर · ·]
स से ि · ·· · · ·· ·
देना क्योकि तुम्हे चु[न्नीलाल-अभय]
राम के पास का व्यवहा[र] और [कलक-]
त्ते से जो वस्तु आती है तथा और
ि नीआ का हिसाब बहुत मालूम है। तु[म्हारे]
पढ़ने मे दश पांच रोज हानि हो [सो भी]
[मह]न करना और उक्त [दोनो]
पुरुष] जब पहुंचे। तभी से डाकखाने को नोटिस
देओ कि डांक सब पडित भी-
म सेन के नाम से आवें चिट्ठी पत्री [जो]
नागरी मे होगी सो तुम बांचा करना [औ]
र अगरेजी वा फारसी की सन्नू [लाल वां]
चेंगे। मुन्शी जी की जो हो [सो उन्हे दे]
दिया करना [हिसाब की जब तक पड़ताल]
समाप्त न हो ले तब तक सब चिट्ठियां
तुम्हारे ही नाम से आया करें ।

·· आर्य्यदर्प्पण के इस महीने की २४
[तारीख तक · ······ · · ·]
··· ·· ···· · आ · ·
····· · यह वहुत अनुचित है हमा-
रा काम वन्द होता है अभी तक कितना
·· · व्याकरण छप जाता
[· ···ह]ानी सो हुई।
[और पुस्]तक जो शिरकारी वैदिक
यन्त्रालय में हैं उन का हिसा-
व भेजते हैं।
· तुम्हारे पास भी फुटक-
[र ··] से हो-
[गा · लेओ।
वस्तु सव अच्छी प्रकार सह्मार
लेना और तोल माप कर लेना।
पडत]ाल-कुञ्जी अपने पास रखना।
[जब] कहीं जाओ तव सन्नूलाल
[या] तोताराम को दे जाया करना,।
अव यह काम वहुत परिश्रम
औ[र] होशिआरी का है सो अ-
च्छी प्रकार समझना।
[कि]मधिकलेखनेनेत्यलम्।
[मि ·· ······· ·· १

[दयानन्द सरस्वती][2]

---

१ इस पत्र की तिथि प्रसग और अन्य पत्रों के अनुसार अकतूबर १५ से २१ सन् १८८० तक की कोई तिथि है।

२ फटा हुआ पत्र म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के पत्रों में से खोजा। पत्र के नष्ट अशों की पूर्ति कोष्ठों में हमने की है। मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है। पूर्णस० २१३ के पश्चात् पढ़ें।

[२३] पत्रांश (४५८) [४९३]

[मुंशी बखतावर सिंह शाहजहांपुर]

तुम आगरे में आकर स्वामी जी को हिसाब समझादो।[1]

२२ नवम्बर १८८० अलीगढ़ (कोयल) से[2]

---

[५] उर्दू पत्र (४५९) [४९४]

शादीराम [प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय बनारस]

रजिस्टर मैं ने रवाना किया। जो गलती हैं ठीक है। अब तुम तकाजा करो और चिट्ठी छपवा लो बिल के तौर पर। और वेदभाष्य के साथ रवाना करो। और दो चार दिन मे पुस्तकों के रजिस्टर सब रवाना कर देंगे। और सेठ भवानी राम मारवाड़ी मिरजापुर का जिसका रिशता लाला निर्भयराम फरुखाबाद वालों से है उसको पूछकर पण्डित सुन्दर लाल के हुक्म से उन से रुपया लेलो।

पण्डित भागराम लाला प्रसादी लाल वहां आते हैं, वे आप से मिलेंगे।[3]

---

१ इसका सकेत पूर्णसं० २८६ के पत्र में पृ० २७९ पर है।

२ यह रजिस्ट्री चिट्ठी ठाकुर मुकुन्द सिंह भूपाल सिंह अपने आममुख्तार से श्री स्वामी जी ने स्वयं भिजवाई थी। देखो पूर्णसं० ४४५। पूर्णसं० २९१ के पश्चात् पढ़ें।

३ लगभग २४ जनवरी १८८१ को लिखवाया गया। एक पीले मटियाले बड़े कागज पर इस और अगले तीन पत्रों पूर्णसं० ४९५ से ४९७ का पूर्वरूप उर्दू में लिखवाया गया है। प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी के पास आगरा में कोई उर्दू पढ़ा पुरुष बैठा था। स्वामी जी का लेखक किसी काम में लगा होगा। उस से ये पत्र शीघ्रता में लिखवाए गए। पत्रों में कई शब्द छूटे हुए हैं। उन्हें पत्र लिखते समय लेखक ने पूरा किया होगा। उनकी पूर्ति हमने कोष्ठों में की है। मुम्बई के तीनो पत्र पुन देवनागरी में इसी लेखक ने श्री स्वामी जी के भाषा-लेखक को लिखवाए होंगे। पूर्णसं० २४२ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें। मूल कागज म० मामराज जी अक्टूबर सन् १९२६ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से लाये थे। अब वह हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[४] पत्र (४६०) [४९५]

सेवकलाल कृष्णदास [मंत्री आर्यसमाज मुम्बई]

आपने जो पत्र और जैनो की सूची [भेजी] सो देखी। जब तक देखो सो देखो और जो सूचीपत्र बने बनालो। जब पत्र भेजें, भेज देना। हम को देखने का अवकाश कम है। तुम देखो। हम खण्डन मण्डन और सिद्धान्त के जानने [को देखेंगे।]

जो आप लोगो की ओर से पण्डित गिरजाशंकर दुवे जी,[1] रतनसी श्याम जी[2] हमारे पास आए। उनसे सब हाल मालूम हुआ। मगर मैं उन के साथ जल्दी नही आसकता क्योंकि यहा आर्यसमाज नया हुआ है। और मुशी बखतावर सिंह ने प्रेस मे गड़बड़ [की है।] २८ को मेरे व्याख्यान होना है आर्यसमाज मे है। जो कहीं मै राजपूताना की ओर चला उदयपुर तक [तो] मैं नही आऊंगा तो एक मास पर विदित करूगा। सब से नमस्ते कह देना। यहां से जिस ' 'उनके आने पर ही मालूम [होगा] भुज को छोड़कर बड़ा देश मे [जाना है] और यह दोनो आप के पास एक दिन ठहरेंगे। यहा का वर्तमान उन से विदित होगा। और यहा एक गोरक्षणी [सभा][3] के नियम छपा। और जो मुझे जा[नते] हैं उन से नमस्ते कह देना।

---

[१] पत्र (४६१) [४९६]

राणा जालमसिंह[4] [कच्छ-दरबार]

जो आप ने मेरे बुलाने के लिए दोनो कवि[जी और श्याम जी भेजे] उस को मैं इस समय आप के अनुकूल न कर सका। इस समय विशेष बात सब

---

१. म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार, पृ० २६६, २६७ पर लिखा है कि यह महाशय धन सहित श्री स्वामी जी के पास निमन्त्रणार्थ भेजा गया। वह पत्र १८ जनवरी १८८१ (१८८० अशुद्ध है) का लिखा हुआ है।

२. इस पत्र को पूर्णसं० २४२ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें।

३. गोरक्षणी सभा की स्थापना देखो पत्र पूर्णसं० २३८ में।

४. ये महाशय कच्छ दरबार के थे। देखो म० मुशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० २६५ पर मुम्बई आर्यसमाज के मन्त्री श्री सेवकलाल कृष्णदास का पत्र।

यह पत्र सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में ही भेजा गया होगा। पूर्णसं० २४२ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढ़ें।

उन से विदित होगी। आपत्ति मे धैर्य से बुद्धिमत्ता के साथ आपत्ति का निवारण करना आप्तो का काम है।

जो आप ने विदेश जाने का विचार किया वह यही हो सकता है। वहां कुछ प्रयोजन नही।

---

[१२] पत्र (४६२) [४१७]

राव बहादुर गोपालरावहरि देशमुख[1]
महादेव गोविन्द रानडे

आप देश के परम हितैषी हैं। हिन्दी जैसे सब देश पर दृष्टि रखते हैं। विशेष कृपादृष्टि कच्छ भुज देश पर भी कीजिये।

जिसे यथोचित सुशिक्षा हो सत्य सत्य करेंगे यह भी आशा है क्योंकि इस समय रावसाहब नाबालग हैं।

जो मै कही इस समय आता तो आप सब मिलते। परन्तु फिर मुझ को यह विदित न था यहां व्याख्यान [होते हैं] और और भी कुछ काम हैं। [अतः] कैसे आ सकता हू। जो मै राजपूताना की ओर आया और समय देखा जब आना होगा। आप को सूचना हो जावेगी। मैं जदीद (=नवीन) स्थान पर जाऊं तो ठीक है। उस अहाता का भी याद करोगे।

---

१. यह पत्र सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में ही मुम्बई भेजा गया होगा। पूर्णसख्या २४२ के पश्चात् क्रमपूर्वक पढें।

[९] पत्र (४६३) [४९८]

लाला रामशरण दास जी आनन्दित रहो।

हमने एक कार्ड भेजा था आपके पास पहुंचा होगा।

आपने आगरे से कागज मगवा लिये वा नही क्योंकि उस कागज को आपको भी पहिले देखना चाहिये। लाला गिरधर लाल जी ९ ता० मई [१८८१][1] को तुम्हारे पास आने को लिखते हैं सो आप भी उनसे पत्र द्वारा निश्चय करलें। और उसी दिन की इतला वखतावर सिंह को भी करदें कि अमुक मिति को इस काम का आरम्भ होगा। कि जिससे वह भी नियत समय पर उपस्थित हो जावे। और अब छापाखाना प्रयाग मे आ गया। सब काम दुरुस्ती से चलने लगा। अब आप लाला शादीराम को भी वहां से वुला लीजिये। क्योकि अब पडित सुन्दरलाल जी वहा का सब प्रबन्ध कर लेंगे। उन बिचारे ने यथाशक्ति ऐसे समय पर काम दिया। सो बहुत कुछ अच्छा किया। और हम भी शादी० को लिख भेजेंगे। यहा से हम कुछ दिनों में अजमेर को जावेंगे। सबसे हमारा नमस्ते कह दीजिये॥ और यहा जयपुर के लोगों के भाग्य मन्द हैं। कुछ भी धर्म की उन्नति वा कहने सुनने को उद्यत नही होते। सन्धिविषय छप गया अब आप लोग पढ़ने पढ़ाने का आरम्भ क्यो नही करते। और नामिक भी अब छपकर आता है।[2]

[द० स०] (जयपुर)

---

[१९] पत्रांश (४६४) [४९९]

[प० मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर]

१८ ता० अगस्त को रायपुर [ब्यावर के निकट] जायेंगे।[3]

---

१ पत्र में तिथी-सवत् कुछ नहीं है। प्रकरण तथा अनुमान से प्रतीत होता है कि वैशाख शुक्ल ५ सवत् १९३८ मगलवार ता० ३ मई १८८१ को मेरठ भेजा गया होगा।

२ यह पत्र स्वर्गीय ला० रामशरण दास जी रईस मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से म० मामराज जी तथा लाला जी के पोते बाबू परमात्माशरण तथा श्री पुरुषोत्तमप्रसाद जी ने जुलाई सन् १९४५ में खोजा। मूलपत्र उन्हीं के यहा सुरक्षित है। पूर्णसं० २५९ के पश्चात् पढें।

३. प० मुन्नालाल को यह पत्र १७ अगस्त १८८१ को मिला। सभवत. १५ या १६ को मसूदा से लिखा गया होगा। देशहितैषी के रजिष्टर से लिया गया।

पूर्णसख्या २६८ के पश्चात् पढें। प०मुन्नालाल के नाम का यह सब से पहला पत्र है।

[१] पत्र (४६९) [५००]

मेरठ आर्य्यसमाज मत्री आनन्दीलाल जी आनन्दित रहो ।

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुए । बडे शोक की बात है कि बखतावर सिंह के मामला के कागजातो की सफाई कब करोगे । जो करना हो तो जैसा तुम लोगो को मालूम हो वैसा शीघ्र कर डालो । उस कागजात के विना छापेखाने मे भी बहुत हर्कत है ।[1]

छ सात महीने तो हो चुके फिर कब इस झगडे को निपटाओगे । और जो के रूपसिंह डाक्तर सिमले ने रुपैये भेजे थे वे रजिष्टर मे जमा कर लिये हैं वा नही । थियोसोफिष्ट मे जो नोटिस चतुर्भुज का छपा है । सो बुरा है । हम उसका प्रत्युत्तर छपवाना नही चाहते क्योकि वह अयोग्य और अविद्वान् है । परन्तु जो तुम्हारी समझ मे आवे सो तुम उसका उत्तर छपवादो । पडित भीमसेन वहां आर्य समाज मे रखने योग्य नही है ।। सब से हमारा नमस्ते कह देना । आजकल हम जिला अजमेर नयानगर अजमेरी दरवाजे तार बगले मे निवास करते हैं ।।

आश्विन वदी ४ रविवार ।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

और थियोसोफिष्ट मे जो हमारे वेदभाष्य का नोटिस छपता है उसके अन्त मे शादीराम का नाम लिखा जाता है । सो अब दयाराम मेनेजर प्रयाग लिखना चाहिये । सो तुम मम्बई थियोसोफिष्ट को लिखदेना ।[3]

---

१ कागजात के लिये पूर्णसं० ४४५ देखें ।

२ सवत् १९३८ । ११ सितम्बर १८८१ नयानगर से मेरठ को भेजा गया ।

३ म० मामराज जी ने २३ जुलाई सन् १९४५ को ला० रामशरण दास रइस मेरठ वालों के पुराने सहस्रों पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण तथा ला० श्यामलाल जी प्रधान आर्यसमाज के साथ खोजा । मूलपत्र हमारे सग्रह में सुरक्षित है ।

पूर्णसं० २६८ के पश्चात् क्रम से पढ़ें ।

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन।



पत्र-सग्रह मे हमारे सहायक ऋषि-भक्त महाशय मामराज जी

लेखक द्वारा सम्पादित अथवा रचित अन्य ग्रन्थ

१ ऋषि दयानन्द का स्वरचित (लिखित वा कथित) जीवनचरित।
• ऋग्मन्त्र व्याख्या।
३ ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, चारभाग (अप्राप्य)।
४ गुरुदत्त लेखावली-हिन्दी अनुवाद, सहकारी अनुवादक श्री सतराम बी०ए०। (अप्राप्य)
५ अथर्ववेदीय पचपटलिका।
६ ऋग्वेद पर व्याख्यान।
७. माण्डूकी शिक्षा।
८. बार्हस्पत्य सूत्र की भूमिका।
९ आथर्वण ज्योतिष।
१०. वाल्मीकीय रामायण (पश्चिमोत्तर पाठ) बालकाण्ड, तथा अरण्य काण्ड का भाग।
११. उद्गीथाचार्य रचित ऋग्वेद भाष्य-दशम मण्डल का कुछ भाग।
१२. वैदिक कोष की भूमिका।
१३. वैदिक वाङ्मय का इतिहास-तीन भाग।
प्रथम भाग—वेदों की शाखाएं।
द्वितीय भाग—वेदों के भाष्यकार।
तृतीय भाग—ब्राह्मण ग्रन्थ।
१४. भारतवर्ष का इतिहास। मूल्य १५) (द्वितीय संस्करण यन्त्रस्थ)।

लेख

१ वैजवाप गृह्यसूत्र संकलनम्।
२ शाकपूणि का निरुक्त और निघण्टु।
३ शूद्रक-अग्निमित्र-इन्द्राणीगुप्त।
४. साहसांक विक्रम और चन्द्रगुप्त विक्रम की एकता।
५. Date of Visvarupa
६. प्राचीन चरित ग्रन्थ

62

ट्रस्ट के प्रकाशित ग्रन्थ

१. सन्ध्योपासनविधिः (भाषार्थमात्र) महर्षिदयानन्द कृत (प्रार्थना-अग्निहोत्रमन्त्र सहित) ...)।। प्रति ४) सैकड़ा

२. आर्योद्देश्यरत्नमाला महर्षिदयानन्द कृत (रत्नसूची तथा टिप्पणी सहित) ...)।। प्रति २।।) सैकड़ा

३. पञ्चमहायज्ञविधिः (महर्षिदयानन्दकृत) ... -) प्रति

४. व्यवहारभानुः (महर्षिदयानन्दकृत टिप्पणी तथा विषयसूची सहित)-)।।

५. आर्याभिविनयः सजिल्द (महर्षिदयानन्दकृत) . ।-) प्रति

६. वैदिक एन्थोलोजी (Vedic Anthology) (वेद के कुछ सक्तो का अंग्रेजी में अनुवाद) ... १।।।)

७. वाक्यपदीय भर्तृहरिकृत (व्याकरण का प्राचीन-ग्रन्थ) प्रथम काण्ड ३) द्वितीय काण्ड भा० १)... १।।)

८. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन (सम्पादक श्री० पं० भगवद्दत्त जी) बड़े आकार के ६०० पृष्ठो का अपूर्वसंग्रह सजिल्द मूल्य लागतमात्र ५।।।)

९. महर्षि दयानन्दकृत यजुर्वेदभाष्य (श्री० पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासुकृत विवरणसहित) ऋषिभाष्य की पुष्टि में अपूर्व संग्रह लगभग १५० पृष्ठ की भूमिका सहित—बड़े आकार के १०५० पृ० प्रथम भाग सजिल्द मूल्य लागत मात्र ... ६।)

१० वेद और निरुक्त (वेदार्थप्रक्रिया विषय में अत्यन्त उपयोगी) लेखक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु ... ।≡)

११ निरुक्तकार और वेद में इतिहास (यास्क के इतिहास का स्वरूप) लेखक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु ... ।=)

१२ "क्या वैदिक ऋषि मन्त्ररचयिता थे" (एक गवेषणा पूर्ण लेख) लेखक श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ... ।-)

१३ ऋग्वेद की दानस्तुतियां (एक नवीन गवेषणा) लेखक श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ... ≡)

यन्त्रस्थ ग्रन्थ

१ ऋग्वेद की मन्त्र संख्या । २ वेद में देवापि और शन्तनु ।

३ त्वाष्ट्री सरण्यू के आख्यान का वास्तविक स्वरूप ।

मिलने का पता

ला० रामलाल कपूर एण्ड सन्ज़ पेपर मर्चेण्ट अनारकली लाहौर ।

सूचना—१ उपरिलिखित पुस्तकों का मूल्य गोदाम के अन्दर का है ।

२. १५ प्रतिशत कमीशन के नियम—

पञ्चमहायज्ञविधि १०० लेने पर, व्यवहारभा० ५०, आर्याभिविनय २५, वेदनिरुक्तादि ट्रै० पर २५, २५ लेने पर, वै० ऐन्थो० वाक्यपदीय, पत्रव्यवहार और यजुर्वेदभाष्य ५, ५प्रति लेने पर ।।